ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन

संपादक— भगवद्दत्त बी, ए.

स्वामी दयानंद सरस्वती

जन्म सन् १८२४ ई०

निधन ३० अक्टूबर सन् १८८३ ई० मंगलवार (दीपावली)

श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट ग्रन्थमाला १०

ओ३म्

ऋषि दयानन्द सरस्वती
के
पत्र और विज्ञापन

(परिष्कृत तथा परिवर्धित संस्करण)

वैदिक वाङ्मय का इतिहास आदि ग्रन्थों के रचयिता,
बृहद् भारतवर्ष का इतिहास (१५ भाग) के सम्पादक
विविध लुप्त संस्कृत ग्रन्थों के उद्धारक
दयानन्द महाविद्यालय लाहौर के
भूतपूर्व अनुसन्धानाध्यक्ष तथा
महिलाविद्यापीठ लाहौर
के संस्थापक
श्री पं० भगवद्दत्त जी बी. ए.
द्वारा
सम्पादित

---:o:---

श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट, गुरु बाज़ार, अमृतसर
द्वारा
प्रकाशित

---:o:---

मुद्रक—सुरेन्द्रकुमार कपूर, पञ्चनद प्रेस लिमिटिड अमृतसर

द्वितीय संस्करण
१००० प्रति

विक्रम संवत् २०१२
सन् १९५५ ई०

मूल्य
सजिल्द ७)

ट्रस्ट का उद्देश्य

प्राचीन वैदिक साहित्य का अन्वेषण

रक्षा तथा प्रचार

ओ३म्

प्रकाशकीय वक्तव्य

महापुरुषों के रचित ग्रन्थ जहां उनकी अपूर्व योग्यता, भावना और प्राणिमात्र के लिये हितचिन्तना के परिचायक होते हैं, वहां उनके जीवनवृत्त उनके महापुरुषत्व तक पहुँचने के सभी उपायों का प्रकाशन करते हैं। उनके सामान्य व्यवहार तथा वार्त्तालापादि, विशेषकर उनके पत्रव्यवहार हमें उनके व्यक्तिगत जीवन के प्रायः सभी अङ्गों के अत्यन्त समीप तक ले जाने में सहायक होते हैं और अपने उद्देश्य वा सिद्धान्तों की पूर्त्ति के लिये उनके द्वारा किये भगीरथ प्रयत्नों को जानता के समक्ष रख देते हैं। उनकी कृतियों को छोड़ कर शेष सब साधन उनके जीवन के पश्चात् ही जनता द्वारा संगृहीत हुआ करते हैं, यह एक प्रायिक नियम है। यह भी निर्विवाद है कि इन सब में महापुरुषों की कृतियां उनके सिद्धान्तों वा धारणाओं की मुख्य प्रकाशक होती हैं। शेष सब उनके जीवनकाल के पश्चात् संगृहीत होने तथा उन सारी परिस्थितियों के ओझल हो जाने से, जिन में कि उक्त प्रयत्न जीवनवृत्त वा पत्रव्यवहारादि किये जाते हैं, गौणतया ही प्रकाशक मानने पड़ते हैं। पुनरपि उनके भावों को समझने में ये अत्यन्त सहायक होते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती युगनिर्माता हुए, जहां उनकी कृतियां हमें प्राचीन विशुद्ध संस्कृति सभ्यता और साहित्य का वास्तविक दिग्दर्शन कराती हैं, वहां उनके पूना के व्याख्यान तथा पत्र-व्यवहारादि से हमें मानवसमाज के हित से प्रेरित होकर किये गये उनके भगीरथ प्रयत्नों को समझने में अत्यन्त सहायता मिलती है।

हमें उन सभी महानुभावों के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये, जिन्होंने ऋषि दयानन्द के पत्रों को सुरक्षित रखा। उन्हें संगृहीत करने में घोर प्रयत्न किये तथा प्रकाशन में लाये। ऐसे महानुभाव में धर्मवीर श्री० पं० लेखराम जी तथा महात्मा मुंशीराम जी (पश्चात् श्री० पू० स्वामी श्रद्धानन्द जी) मुख्य कहे जा सकते हैं, जिनके द्वारा इस कार्य का उपक्रम हुआ॥

आर्यजनता के समादरणीय वैदिकसाहित्य के अनेक अमूल्य रत्नों को भारतीय जनता के समक्ष लानेवाले, सामान्यतया पञ्जाब में, विशेषतया आर्यसमाज में वैदिक अनुसन्धान के प्रवर्त्तक वा उन्नति पर पहुँचाने वाले, प्राचीन भारतीय इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान् श्री० पं० भगवद्दत्त जी ने निरन्तर अनेक वर्षों के घोर प्रयत्न से ऋषि के इन पत्रों का संग्रह किया, तथा कराया। उनके इस पवित्र कार्य के लिये आर्यजनता इनकी सदा ऋणी रहेगी। इन्हों ने जहां अपना बहुत सा अमूल्य समय इस में लगाया, वहां पत्रों के संग्रह में निज का धन भी बहुत सा व्यय किया। अनेक स्थानों में स्वयं जा कर तथा पत्रव्यवहारादि द्वारा अनेक पत्र प्राप्त किये। श्री० पं० जी अध्यक्षता में खतौली जिला मुजफ्फरनगर निवासी आर्यसमाज तथा ऋषि में परम निष्ठावान् आर्यसज्जन म० मामराज जी ने वर्षों इन पत्रों के संग्रह करने में घोर कष्ट सहन किया। जिसके साक्षी वे ही हो सकते हैं जिन्हों ने कि इन्हें प्रत्यक्षरूप में यह कार्य करते देखा है। ऋषि के पत्रव्यवहार वा ऋषि जीवन की सामग्री प्राप्त करने में इन के हृदय में एक प्रचण्ड अग्नि सी धधकती रहती है। यदि वे अपना जीवन इसी पवित्र

कार्य में लगा सकें तो आर्यजनता का महान् उपकार हो सकता है। श्री० पं० के सहायक रूप में इस कार्य के लिये अत्यन्त ही उपयोगी हैं।

श्री० पं० जी ने जिस योग्यता और परिश्रम से यह कार्य किया है तथा जिस गहराई से अपनी भूमिका में ऋषि दयानन्द के भावों को जनता के समक्ष रखने का यत्न किया है (खेद है कि यह विचारधारा अधूरी रह गई) यह उन्हीं का काम था। चाहे प्रकाशक उनके किन्हीं सम्पादकीय विचारों के साथ सहमत न भी हों, क्योंकि प्रत्येक सम्पादक अपने विचार रखने में स्वतन्त्र होता है, तथापि हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि पं० जी के हृदय में प्राचीन भारतीय संस्कृति सभ्यता साहित्य तथा प्राचीन मर्यादाओं की रक्षा के प्रति एक अग्नि सी धधक रही है, जिस पर कि भारत का बहुत सा भविष्य निर्भर है।

सं० १६२६ तक ऋषि का सारा पत्रव्यवहार तथा सम्भाषण संस्कृत में ही था। बहुत सा पत्रव्यवहार वह दूसरों को बोल कर लिखवाते वा लिखने को कह दिया करते थे और हस्ताक्षर कर देते थे, ऐसी अवस्था में निस्संदेह इन पत्रों की प्रमाणिकता ऋषिकृत सत्यार्थप्रकाशादि के समान नहीं हो सकती, तथापि इन से अनेक परमावश्यक गम्भीर विषयों तथा सिद्धान्तों पर प्रकाश अवश्य पड़ता है, जो अत्यन्त मूल्यवान् है।

यह भी विदित रहे कि श्री० पं० जी इस बहुमूल्य संग्रह को कर चुके थे और इसके प्रकाशन की चिन्ता में थे। युद्ध की परिस्थिति में कागज़ मिलना भी कठिन हो रहा था। ऐसी अवस्था में श्री० पं० जी की इच्छा पर ट्रस्ट ने इस बहुमूल्य ग्रन्थ को अपनी ओर से प्रकाशित करने का निश्चय किया और श्री० पं० जी ने यह ग्रन्थ ट्रस्ट को दे देने की महती कृपा की। और उन्होंने ऋषि के पत्रव्यवहार के संग्रह करने में हुए, केवल मार्गव्यय वा पत्रव्यवहारादि का व्ययमात्र ही ट्रस्ट से लिया, उनकी इस सारी महती उदारता के लिये ट्रस्ट उनका अत्यन्त अनुगृहीत है।

श्री० पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक ने विषय-सूची तय्यार करके इस ग्रन्थ की उपयोगिता को और भी बढ़ा दिया है, जिसके लिये प्रकाशक उनके अनुगृहीत हैं॥

इन से अतिरिक्त इस पवित्र कार्य में सहयोग देने वाले सभी महानुभावों का धन्यवाद सम्पादक महोदय अपनी भूमिका में कर चुके हैं। ट्रस्ट की ओर से हम भी उन सब के ऋणी हैं।

इस प्रकार इस ग्रन्थ के प्रकाशित करने कराने में जो ट्रस्ट का लगभग ६०००) छः सहस्र रुपया व्यय हुआ है, इस में किसी भी अन्य व्यक्ति का किञ्चिन्मात्र भी सम्बन्ध नहीं॥

अन्त में आर्यजनता से हम यही निवेदन करेंगे कि वह ऋषि दयानन्द के भावों को गहराई से जानने के लिये इस ग्रन्थ से महान् लाभ उठा सकती है॥

इस ग्रन्थ की इतनी मांग है कि सम्भव है हमें शीघ्र ही इसका दूसरा ही संस्करण छपाना पड़े॥

निवेदक—

ब्रह्मदत्त जिज्ञासु

प्रधान रामलाल कपूर ट्रस्ट

गुरु बाज़ार, अमृतसर

द्वितीय संस्करण की विशेषता

ऋषि दयानन्द सरस्वती के ५०० पत्र और विज्ञापनों का बृहत् संग्रह श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट (लाहौर) ने सन् १९४५ के अन्त में प्रकाशित किया था। उसकी लगभग २०० प्रतियां ही बाहर निकल सकीं (५० भेंट में दी गई, १५० बिकीं), कि शेष ८०० प्रतियां १३ अगस्त सन् १९४७ को (देशविभाजन काल में) लाहौर (पैसा अखबार) में ट्रस्ट की पुस्तकों के समस्त संग्रह (स्टाक) के साथ भस्मसात् कर दी गईं।

इस अग्निकाण्ड से ट्रस्ट की लगभग १५००० पन्द्रह सहस्र रुपयों की हानि हुई। ऐसी अवस्था में इस प्रकार के बृहद् ग्रन्थों का पुनः प्रकाशन करना प्रायः असम्भव सा ही था, परन्तु ट्रस्ट के अधिकारियों के अदम्य उत्साह के कारण उसके प्रकाशनों को पुनः प्रकाशित करने की व्यवस्था की गई। छोटी मोटी ८,१० पुस्तकों के प्रकाशन के अनन्तर इस महान् ग्रन्थ के पुनः प्रकाशन का विचार किया गया।

इस बार द्वितीय संस्करण को प्रथम संस्करण की अपेक्षा सुन्दर और श्रेष्ठ बनाने के लिये पर्याप्त श्रम किया गया, परन्तु मेरी लगभग डेढ़ वर्ष से सतत रहने वाली अस्वस्थता के कारण इसमें कुछ विघ्न होना स्वाभविक था। इतना होने पर भी यह संस्करण पूर्वपेक्षया पर्याप्त सुन्दर और श्रेष्ठ बना है। इस संस्करण में ३४४ पत्र, विज्ञापन, पत्रांश, पत्रसारांश, विज्ञापनांश तथा पत्र, विज्ञापन और पारसल आदि की सूचनाएँ नवीन संगृहीत की गईं। इस प्रकार इस संस्करण म पूर्व संस्करण की पूर्ण संख्या ५०० से बढ़कर ८४४ हो गई। इसी से इस संस्करण पर किये गये परिश्रम और इसकी उपयोगिता तथा श्रेष्ठता का अनुमान सहज में लगाया जा सकता है।

अनुसन्धान की भारी आवश्यकता

इस पत्र और विज्ञापन संग्रह में दो स्थानों पर लेखक द्वारा दी गई क्रमिक पत्र संख्या का क्रम (सिलसिला) मिलता है[1]। उसके अनुसार प्रथम क्रम (सिलसिले) में ६ मास और ९ दिन में ७६२ पत्र ऋषि ने लिखे थे। द्वितीय क्रम (सिलसिले) में ३ मास में २०६ पत्र ऋषि ने लिखे। इन ९ मास

---

१. प्रथम—पृष्ठ ६५ में (पूर्ण संख्या ८५) ता० २५।७।१८७८ को जो पत्र ऋषि दयानन्द ने लिखा उस पर क्रमिक पत्र संख्या बांई ओर २१६ पड़ी है। यह क्रमिक संख्या २१६ से प्रारम्भ होकर पृष्ठ १३० में (पूर्ण संख्या १४३) ता० २।२।१८७९ के पत्र पर पड़ी १००७ संख्या तक चलती है। इस प्रकार इन ६ मास और ६ दिन में ७६२ पत्र लिखे गये। उन में से केवल ५५ पत्र उपलब्ध हुए, जो छपे हैं, ७३७ पत्र उपलब्ध नहीं हुए। द्वितीय—पृष्ठ २६० में (पूर्ण संख्या ३०७) ता० ८।१२।१८८० के पत्र पर क्रमिक पत्र संख्या १० उपलब्ध होती है। पृष्ठ २६८ (पूर्ण संख्या ३२२) पर पुनः १० संख्या है, जो कि निश्चय ही १०० के स्थान में भूल से १० हो गई है (यही भूल आगे की क्रमिक संख्या में भी है) पृष्ठ २८१ में (पूर्ण संख्या ३४१) ता० ७।३।१८८१ के पत्र पर क्रमिक संख्या ११५ पड़ी है, उसे २१५ समझना चाहिये। इस प्रकार ३ मास में २०६ पत्र लिखे गये, उनमें से केवल ३५ प्राप्त हुए हैं और १७१ प्राप्त नहीं हुए।

और ९ दिन में लिखे गये (७९२+२०६=) ९९८ पत्रों में से इस पत्र व्यवहार में केवल (५५+३५=) ९० पत्र छपे हैं, अर्थात् ९९८ में से अभी तक केवल ९० पत्र मिले हैं, ९०८ उपलब्ध नहीं हुए।

ऋषि दयानन्द का नियम पूर्वक पत्रव्यवहार सं० १९३० के अन्त से प्रारम्भ होता है, और वह आश्विन बदी ३० सं० १९४० तक चलता रहा। जब ऋषि दयानन्द ने केवल ९½ मास में ९९८ पत्र निश्चित रूप से लिखे, तब लगभग ९½ वर्षों में ऋषि ने कितने सहस्र पत्र लिखे होंगे, इसका अनुमान सहज ही में लगाय जा सकता है। इसी प्रकार ऋषि दयानन्द ने इस सुदीर्घ काल में सैकड़ों विज्ञापन प्रकाशित किये होंगे, परन्तु उन में से विज्ञापन, विज्ञापनांश तथा विज्ञापन सूचना आदि सब मिलाकर केवल ४६ की प्राप्त हुए। इन उपलब्ध पत्र और विज्ञापनों से ऋषि के उन अनेक महत्त्वपूर्ण कार्यों, उनके दिव्य चरित और व्यक्तित्व का बोध होता है, जिन पर अन्य किसी भी दिशा से कुछ भी प्रकाश नहीं पड़ता। यदि कहीं ऋषि के ये सम्पूर्ण पत्र और विज्ञापन उपलब्ध हो जाते, तो न जाने कितना दिव्य प्रकाश ऋषि के उदात्तकार्यों, तथा उनके चरित और व्यक्तित्व पर पड़ता। इसके लिखने की कुछ आवश्यकता नहीं।

अभी भी समय है, यदि ऋषि के इन पत्रों और विज्ञापनों के अनुसन्धान के लिये आर्य-समाजें, प्रतिनिधि-सभाएँ, सार्वदेशिक-सभा तथा श्रीमती परोपकारिणी सभा कुछ कार्य करे तो पुराने आर्यों के घरों से अभी भी शतशः पत्र उपलब्ध हो सकते हैं।

इस संस्करण में मैंने वहुत सी नई टिप्पणियां जोड़ी हैं, उनके आगे मैंने अपने नाम का संकेत कर दिया है। तथा जहां पूर्वलिखित टिप्पणियों में कुछ अंश बढ़ाया है उसे [ ] कोष्ठ के अन्दर रक्खा है।

आशा है, पाठकों को ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापनों के संग्रह का यह नूतन परिबृंहित और अनेकविध नई टिप्पणियों से समलंकृत संस्करण अधिक रुचिकर तथा लाभप्रद होगा। ऐसे विशालकाय ग्रन्थ का इतना परिबृंहित संस्करण प्रकाशित करने और वह भी ऐसे महार्घ (मंहगई के) काल में जब कि जनता की स्वाध्याय की रुचि तथा क्रयशक्ति दिन प्रतिदिन क्षीण होती जा रही है, अत्यन्त साहस का कार्य है। अतः इस साहसपूर्ण तथा महोपयोगी कार्य के लिये श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट के समस्त अधिकारी आर्य जगत् के धन्यवाद के पात्र हैं।

कृतज्ञता-प्रकाशन

श्री महाशय मामराज जी समय समय पर अपने पत्रों द्वारा अनेक उपयोगी सुझाव देते रहे, और इस कार्य को यथासम्भव सर्वाङ्ग पूर्ण बनाने के लिये सर्वदा उत्साहित करते रहे। इतना ही नहीं, इस ग्रन्थ के मुद्रण के प्रारम्भ तथा अन्त में दो बार रायपुर (मध्यप्रदेश) से अपने व्यय से काशी आकर अनेकविध परामर्श दिये। यदि आप का इतना सहयोग न होता तो मैं इस काल में सततरुग्ण रहते हुए इतना कार्य कदापि नहीं कर सकता था। अतः मैं उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूं।

मेरे मित्र राजस्थानीय इतिहास के विशेषज्ञ श्री ठा० जगदीशसिंह जी गहलोत जोधपुर निवासी ने ऋषि के पत्रों में निर्दिष्ट राजस्थान के अनेक व्यक्तियों का संक्षिप्त परिचय लिखकर भेजा था। उसे परिशिष्ट में लगाने का संकल्प था, परन्तु ग्रन्थ के आकार के बहुत बढ़ जाने के कारण अनेक परिशिष्टों के साथ उसे भी इस संस्करण में नहीं छाप सके, इसका हमें खेद है।

कोटा (राजस्थान) निवासी श्री माननीय राजबहादुरसिंह जी भूतपूर्व शिक्षा इंस्पेक्टर ने मेरी प्रार्थना पर श्री पं० चमूपति जी द्वारा प्रकाशित ऋषि के पत्रव्यवहार को 'श्री ठाकुर किशोरसिंह जी'[1] पटियालावालों के संग्रह से पुनः मिलाकर तथा शोधकर भेजा। उनके इस महान् परिश्रम के लिये मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ।

मोतीझील, काशी
फा०शु० ११ सं० २०११

विदुषां वशंवदः—
युधिष्ठिर मीमांसक

१. श्री ठा० किशोरसिंह जी के इस संग्रह के विषय में श्री माननीय राजबहादुरसिंह जी ने ता० ११-११-५४ के पत्र में इस प्रकार लिखा है—

"किशोरसिंह जी पटियाला वालों की पुत्री ठिकाना कोठारी (कोटा-राज्य) के कविराज दुर्गादास जी के छोटे भाई को ब्याही है। ठा० किशोरसिंह जी ने मरते समय बहुत सी पुस्तकें और यह पत्रव्यवहार जिसे उन्होंने तरतीब देकर रक्खा था, अपने दामाद को सुरक्षित रखने को दे दिया था। वह इस समय जागीर कोठारी जो कोटा शहर से लगी हुई है के पुस्तकालय में सुरक्षित है।"

नाम-सूची

उन महानुभावों की जिन्हें पत्र लिखे गए

क्रम संख्या	उपलब्धपत्र	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पूर्ण संख्या
१	४	अङ्गद शास्त्री	शाहजहांपुर, अम्बागढ़	१८५,१८६, ८००, ८०२
२	१७	अज्ञात नाम	विविध स्थानों को	६,१६,१५७,१५८, ४१६, ४२४, ५५०,६१४, ६१५, ६४५, ६४७, ७२७,७८४,८१६,८२१,८२२,८३५
३	१	अन्तिम हस्ताक्षर	जोधपुर	६०५,
४	१	अबोधनिवारण की अशुद्धि	काशी	२६६,
५	२	अब्दुल्ला मौलवी	मेरठ	१००,८२८
६	१	अशुद्धभाषा का नमूना	काशी	७८०
७	१	'आकृष्णेन रजसा' मन्त्र का अर्थ	बम्बई	६०६
८	१	आक्षेपखण्डन-सूचना	,,	६०७
९	३	आतमाराम जी जैन पण्डित	गुजरांवाला	२९०,२२९२,३२३
१०	१	आनन्दविजय	,,	३२३
११	२	आनन्दीलाल जी मन्त्री आर्य-समाज	मेरठ	३६४,४७२,
१२	४	आय समाज लाहौर के अधिकारी	लाहौर	४३,४६,४८१,४८३
१३	१३	आलकाट करनल साहब	अमेरिका आदि	७९,८६,१५०,१६५,१७८, २२८, २५८,३४४, ३६५, ६२४, ६३४, ८३६,८३७
१४	६	इन्द्रमणि जी मुन्शी	मुरादाबाद	२११,२६७,२९८,३०१,३०२,३०६
१५	२	ईश्वरानन्द स्वामी	प्रयाग	५०२,७६७
१६	१	औषधि-पत्र	जोधपुर	६००
१७	१	कन्हैयालाल जी चौबे	जलालाबाद	३५०
१८	१२	कमलनयनजी मन्त्री आ० स०	अजमेर	५३९,५४६,५५५,५६२,५७५,५८१ ५८२,५८७,५९८,६०४,७४४,७४५

टिप्पणी—एक पत्र के प्रारम्भ में जहां कई व्यक्तियों का नाम लिखा है, वे इस सूची में अलग २ लिखे गये हैं। यु.मी.

क्रम संख्या	उपलब्धपत्र	नाम	पत्र पहुँच का	पूर्ण संख्या
१९	३१	कालीचरण-रामचरण जी मन्त्री आ० स०	फर्रुखाबाद	२६६,३०७, ३१७, ३३०, ३३४, ३३५, ३३६, ३३८, ३४६, ३५४, ३८४,३९२, ४०५, ४१३, ४१५, ४१६, ४१८, ४२६, ४३२, ४३४, ४३७, ४५५, ४६६, ५१३, ५३५, ६६३,६७८,७०८,७१६,७२८,७४६
२०	३	कालूरामजी शर्मा योगी	रामगढ़ चूरू (राज्य जयपुर)	२७,६१,४८५
२१	४	किशनसहायजी	मेरठ	१०३,८२९,८३०(१,२)
२२	८	किशन (कृष्ण) सिंहजी बारट मन्त्री महाराणा सज्जनसिंह, उदयपुर।	उदयपुर	४६३,५४६, ५५१, ५५७, ५६०,५८०५६६,७६४,
२३	८	कृपारामजी स्वामी, जंगल-विभाग	देहरादून	१४३,१६२,२७०,३०४,३४८ ३९१,४६०,६५५
२४	१	कृष्णलाल साह	अल्मोड़ा	३८६
२५	५	केशवलाल निर्भयराम	बम्बई	२०,२३,२२६,६२६,८४४
२६	३	खाडेराव पाण्डुरंग	खण्डुवा	७११,७१२,७१३
२७	२	गङ्गादत्त जी चौबे पण्डित (सहपाठी श्री स्वामी जी)	मथुरा	२,३,
२८	२	गणेशदास एण्ड कम्पनी	काशी	७४०,७४६
२९	२	गणेशप्रसाद पण्डित	फर्रुखाबाद	३१०,३११
३०	१	गण्डासिंह जी सरदार	रोपड़	१२८
३१	१	गदाधरप्रसादसिंह	विलासपुर	४२२
३२	२०	गोपालराव हरि देशमुख रायबहादुर जज	अहमदाबाद पूना, बम्बई	१३,१४,१५,१६,१७,१८,३६,५४ ५५,५६,१२६,३२८,६०६,६१०, ६२५,६५३,६५४,७६५,७६८,७८२
३३	६	गोपालराव हरि पण्डित इंस्पैक्टर आफ स्कूलज़	फर्रुखाबाद	२२७,२३६,३४१,४३८ ५०६,६८५
३४	१	गोपालनन्द स्वामी परमहंस	जयपुर	७६४

क्रम संख्या	उपलब्धपत्र	नाम	पत्र पहुँच का स्थान	पूर्ण संख्या
३५	१	चिदानन्द साधु	सोरों	८०१
३६	१	चीफ़ कमिश्नर	बनारस (?)	२१६
३७	१	चूरू के सेठोंके सरपंच	चूरू (राज्य जयपुर)	३५५
३८	७	छगनलाल द्विवेदी श्रीमाली	मसूदा	३६५,४४०, ४५०, ५०५, ५९४, ६०३, ७७०
३९	१	छेदीलाल जी रायबहादुर (कानपुर निवासी)	मेरठ	३६०
४०	१	जगन्नाथ बाबू	बिलासपुर	४२२
४१	१	जगन्नाथ पण्डित बरेली वाले	अम्बगढ़	८०३
४२	१	जन्मचरित	बम्बई	६३०
४३	१	जयपुर के पण्डित	जयपुर	७९५
४४	१	जवाहर	रावलपिण्डी	८१७
४५	१३	जवाहरसिंह सरदार मन्त्री आर्यसमाज	लाहौर शाहपुरा	३५३,३६२,४७३,४७४,४७६,४८६ ४६४,५०४,५२६,७३६,७५८,७५६ ७७८,
४६	६	जालिमसिंह जी चौधरी ठाकुर रईस	रूपधनी(एटा)	३४५,३४६,४८४,४६१,५७४,५८५
४७	१	जालिमसिंह राणा कच्छ दरबार	कच्छभुज	३२७
४८	१	जीवनगिरि स्वामी	हरिद्वार	१५५
४९	४	जीवनदास लाल	लहौर	६६,७०,७४,४०४
५०	१	जी० वाईज़ एलवर्ट्स	वैडन (जर्मनी)	२७३
५१	१	जीवाराम टीकाराम	काशी	२४१
५२	१	जैसराम गोटीराम	कलकत्ता	२०८
५३	१	जोशीलाल जी कल्याण जी		७३७
५४	१	जोसेफ कुक साहब	बम्बई	३७६
५५	१०	ज्वालादत्त पण्डित लेखक तथा प्रूफ शोधक	काशी	२३२,३१२,३१६,६३८,६३६,६७० ६७२,६७४,६७५,६७७
५६	३	टिप्पणी		१४७,३६९,४८६ (सूचना)

क्रम संख्या	उपलब्धपत्र	नाम	पत्र पहुँच. का स्थान	पूर्ण संख्या
५७	४	ठाकरदास जी जैनी	गुजरांवाला	२५५,२७५,२६०,४१२
५८	१	डी.रे० ए० राजा पाकसा	मदुरा (लंका)	४७६
५९	८	तार	विधिस्थानोंको	१३१,१३६,६३५,७१८,७५२,७५३ ८०४,८०८
६०	६	तेजसिंह रावराजा	जोधपुर	५०७,५११,५१६,५९०,५९९,६०२
६१	१	थियोसोफिस्ट के सम्पादक	बम्बई	२१४
६२	४	दयाराम वर्मा मास्टर मन्त्री आ० स०	मुलतान	८७,९५,३१४,३६८
६३	१४	दयाराम पण्डित प्रबन्ध-कर्त्ता वैदिक यन्त्रालय	प्रयाग	३६८,४०६,६८८,६८९,६९०,६९१ ६९२, ६९३, ६९४, ६९५, ६९६, ६९९,७००,७०७
६४	१	दिनचर्या के नियम महाराणा सज्जनसिंह	उदयपुर	४५९
६५	१	दीनानाथ गांगोली बाबू	दार्जीलिंग	३९
६६	१	दुर्गाचरण जी	मुरादाबाद	५३१
६७	१८	दुर्गाप्रसाद जी सेठ (राय बहादुर)	फर्रुखाबाद	२७२, २७६, २८० २८९, ३१६, ३५८, ३५९, ४०९, ४३६, ४६१, ४६७,४७०, ४७७, ४८२, ५४२,५५६,५८६,७५६
६८		देशहितैषी अजमेर	अजमेर	(देखो मुन्नलाल नाम)
६९	१	द्वारकाप्रसाद जी	ऐतमादपुर (आगरा)	३१५
७०	१	धर्मशी भाई	बम्बई	८०७
७१	८	नन्दकिशोरसिंह जी ठाकुर सभासद राज्यपरिषद्	जयपुर	४०१·४१०, ५०६, ५४४, ५६६, ५९२,७०६,७४८
७२	८			
७३	१	नाथुराम	बम्बई	२२
७४	१	नारायण किशन जी मुंशी	गुजरांवाला	३०२
७५	१४	नाहरसिंह जी महाराजाधि-राज शाहपुराधीश	शाहपुरा (मेवाड़)	३९४,४२१,४३५,५०३,५२२, ५१३ ५२७,५३३, ५४५, ५४७, ५७७, ५७८,७१५,७३८
७६	१	नियोग का मसविदा	मेरठ	२६८
७७	६	निर्भयराम जी सेठ मारवाड़ी बिसाउ निवासी	फर्रुखाबाद	२४५,३३१,३३९,३४७, ३५६,६६४
७८	९	निवास सूचना पं० स्वा० दयानन्द सरस्वती		३२,३५,३६,४२,४४,४५,५०;५२ ६२

क्रमसंख्या	उपलब्धपत्र	नाम	पत्र पहुँच का स्थान	नाम संख्या
७९	१	नीलकण्ठ शास्त्री	प्रयाग	८०५
८०	४७	पारसल (पुस्तक आदि के)	विविध स्थानको	३३१,५५०,६०९,६१७,६२६,६४२ ६४४,६४६,६४८,६५७,६५९,६६० ६६१:६७३,६७५,६८०,६८२,६८३ ६८६,६८७,६८८,६८९;६९८,७०२ ७०३,७०६,७०७,७०८, ७१५, ७१६,७२०,७२१,७२२,७२३,७२६ ७२९,७४१,७४८,७५०,७५१;७७२ ७७३,७७७,७७८,७८७,७८९,७९०
८१	१	पीटर डैविसन	स्काटलैण्ड	६२८
८२	१	पूर्णानन्द स्वामी	बम्बई	२२
८३	२	पोहलोराम जी लाला मन्त्री आ० स०	गुजरांवाला	७३,८०,२८८
८४	१	प्यारेलाल जी	लाहौर	१३७
८५	२	प्यारेलाल जी मुंशी	चांदापुर	८१४,८१५
८६	२	प्रतापसिंह जी महाराजा मंत्री	जोधपुर	५३८,५८९
८७	१	प्रभुदयाल जी खत्री	रावलपिण्डी	८१७
८८	२	प्राणजीवन लाल काहनदास	बम्बई	४५३,८४३
८९	५	प्रश्न-उत्तर सम्बन्धी	अनेकस्थानों पर	७९५,७९६,८१०,८३८,८३९
९०	१	फतेहसिंह जी राजराणा	देलवाड़ा(मेवाड़)	७१९
९१	१	फर्रुखाबाद के पौराणिक पण्डित	फर्रुखाबाद	८३८
९२	१	फ्रेयर	बम्बई	४१७
९३	४१	बख्तावरसिंह प्रबन्धकर्ता वै० यं०, सम्पादक आर्यदर्पण	काशी शाहजहांपुर	१४०, २३३,२३४,२३५,२३६ २३७,२४०,२४२,२४३,२४७ २४८,२५१,२५२,२५३,२५७,२६० २६१,२६५,२६९,२७१,२७४,२७७ २७८,२८६,२९७,३२१,३२४,३२९ ३३२,३३७,६४०,६४१,६४२,६४४ ६४६,६४८,६४९,६५०;६५१,६५७ ६५८
९४	१	बलदास[1] जी	लाहौर	७४
९५	१	बलदेवसिंह शर्मा	?	११
९६	१	बलदेवसिंह	देहरादून	६५६

१. सम्भवतः यह नाम बल्लभदास हो। बल्लभदास के नाम पत्र पूर्ण सं० २०९ का भी है।

क्रमसंख्या	१	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	नाम संख्या
९७	१	बल्लभदास जी	लाहौर	२०९
९८	३	बहादुरसिंह जी राव मसूदा नरेश	मसूदा (अजमेर)	४३६,५२४,५९३
९९	१	बालकराम बाजपेयी	अजमेर	५६९
१००	३	बिहारीलाल जी पण्डित	जयपुर	४९०,४९६,५७२
१०१	१	बिहारीलाल	इन्दौर	७७६
१०२	२	बैचरभाई	अहमदाबाद	१६,१७
१०३	११	ब्लेवट्स्की मैडम	अमेरिकादि	७९,१७९,२१४,२५८,२९९,३४४ ३९५,३९६,६३४,८३६,८३७
१०४	२	भगवती माई	हरियाना (पं०)	४५६,४६४
१०५	१	भागराम पण्डित	अजमेर	७८५
१०६	१	भागवत अशुद्धिपत्र		७९८
१०७		भारतमित्र सम्पादक	कलकत्ता	(देखो मनोहरदास खत्री नाम)
१०८	१	भारतसुदशाप्रवर्तक संपादक	फर्रुखबाद	५५३
१०९	११	भीमसेन पण्डित लेखक तथा प्रूफ शोधक	काशी, प्रयाग	२५४,२८२,२८४,२८५,२९१,२९३ ४४१,६६०,६६१,७०९,७८८
११०	२	भूपालसिंह ठाकुर (रिसालदार) रईस	ऐख (अलिगढ़)	८९,१२४
१११	२	भोलानाथ जी	अहमदाबाद	१६,१७
११२	१	मजिस्ट्रेट काशी	काशी	२०७
११३	१	मथुरादास जी	मियांमीर	७९१
११४	१	मनसुखराम जी	अमृतसर	४९
११५	१	मनोहरलाल जी मुंशी	पटना	२२१
११६	२	मनिआर्डर-सूचना	बम्बई	७३२,७५७
११७	५	मनोहरदास खत्री सम्पा० भारतमित्र	कलकत्ता	५५२,५५९,५६१,७०१,७६१
११८	१	मन्त्री-आर्यसमाज	शाहजहांपुर	१६९
११९	१	,, ,, ,,	अमृतसर	१७०
१२०	१	,, ,, ,,	सर्वत्र	४०१

क्रम संख्या	उपलब्धपत्र	नाम	पत्र पहुँच का स्थान	पूर्ण संख्या
१२१	३	महादेव गोविन्द रानडे	पूना	३२८,६५३,६५४
१२२	२	महीपतिराम शर्मा	अहमदाबाद	१६,१७
१२३	२५	माधोलाल (प्रसाद) जी मन्त्री आ० स०	दानापुर (पटना)	६५,६६.७७,७८,८५,९१,९३,१०२ १०६,११२,१२३,१४९,१६०, १६४ १६८,१९३,१९५,१९९,२०४,२०५ २८३,६११,६१२,६१९,६३१
१२४	१	मुख्तियारनामा	अलीगढ़	१७३
१२५	११	मुन्नालाल पण्डित सं० देश-हितैषी	अजमेर	३,६९३६६,३७८,३९०,४३०,४३३ ४६८,५२८,५३६,५५४,५७६
१२६	१	मुकुन्दसिंह ठाकुर	छलेसर (अलीगढ़)	६१८
१२७	५	मुहम्मद कासिम अली मौलमी, देवबन्दी	रुड़की	९२,८२४,८२५,८२६,८२७
१२८	२५	मूलराज जी एम. ए. राय-बहादुर	गुजरात तथा लाहौर	७४,८८,९०,९४,९६,९७,९८,१०१ २२२,२५९,२६२,२८१,३०३, ३०८,३१८,३४०,३५७,३७१,३७३ ४०३,६१६,६१७,६५२,६५९,७०२ ८१
१२९	१	मोहनलाल जी प्रधान आ०स०	लाहौर	८१
१३०	२	मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या मन्त्री परोपकारिणी सभा	उदयपुर	४८८,७४२
१३१	१	यजुर्वेदभाष्य समाप्ति सूचना		४५८
१३२	४	यशवन्तसिंह जी राठौर महाराजा जोधपुर नरेश	जोधपुर	५५८,५६७,५७९,५८८
१३३	१	रघुनाथसिंह ठाकुर	जयपुर	४९५
१३४	१	रङ्गाचार्य	वृन्दावन	५
१३५	२	रणजीतसिंह ठाकुर जागीरदार	अचरौल (जयपुर)	११५,७९९
१३६	२	रमाबाई पण्डिता	कलकत्ता	२३८,२५०
१३७	१	रमादत्त त्रिपाठी	नैनीताल	७७४
१३८	१	रसीद (वेदभाष्य के चन्दे की)	मथुरा	३०५
१३९	१	राजराणा जी झालावाड़ नरेश	झालावाड़	५९५
१४०	१३	रामशरणदास जी सेठ मन्त्री प्रथम परोपकारिणी सभा	मेरठ	१४१,२८७,३४२,३५१, ३७५, ६६२,६६५,६६६,६७९,६८१, ६८६,७०२,७३४,

क्रम संख्या	उपलब्धपत्र	नाम	पत्र पहुंच का स्थान	पृष्ठसंख्या
१४१	१	रामसनेहियों के महन्त	शाहपुरा	७६७
१४२	२५	रामाधार वाजपेयी ट्रेजरी क्लर्क	लखनऊ	२४,२८,२६,३०,३१,३४,३८, ४७ ५७,५८,६०.६३,६६,१०८,११३, ११६,१२०,१२४,१८४,(१),१८४ (२), २००,२८०,३८५,७०५
१४३	१	रामानन्द ब्रह्मचारी (लेखक) स्वामी जी	फर्रुखाबाद	५२४
१४४	१	रिवाड़ी के पण्डित	रिवाड़ी	८३४
१४५	१२	रूपसिंह जी सर्दार (ट्रेजरी क्लार्क)	कोहाट(गुजरांवाला)	२४६,३७०,३७३,३७७,२८२, ४०७,४२३.४३१,४५१,४५७, ४७५,५४०
१४६	१	लक्ष्मण शास्त्री	बम्बई	२२
१४७	१	लक्ष्मणदास जी चौधरी (स्वामी लक्ष्मणानन्द जी)	अमृतसर	२१७
१४८	५	लालजी वैजनाथ	बम्बई	२२,५३४,७३१,७५७,७६३
१४९	२	लीलाधर हरिदास सेठ प्रधान आ० स०	बम्बई	१२२,४६२
१५०	३	लेफ्टिनेण्ट गवर्नर पंजाब	लाहौर	२१५,६०८,८१६
१५१	१	वनमाली सिंह (लेखक स्वामी जी)	काशी	२६
१५२	५०	विज्ञापन पत्र	अनेकत्र	१,४.८,६,१०,२५,५१,६७, ६८, ७१,७२,७५.७६,८२,८४, १०४, १०५,११०,१३२,१४२,१६१, १७४,१८७,१६४;२०१.२०२,२०३ २१०,२२०,२५६,२६४,३८८,३६६ ४००,४११,४६७,५२६ ६३२,६३३ ६३७,६५१, ८०८,८११,८१२, ८१३, ८२०, ८२३ ८२३,८४२
१५३	१	विनयमाधव		४८
१५४	१	विपत्तीपत्र-अशुद्धि-संशोधन		५३
१५५	२	विरजानन्द जी स्वामी (स्वामी जी के गुरु)	मथुरा	७६२,७६३
१५६	१	विशुद्धानन्द स्वामी	हरिद्वार	१५४
१५७	१	विश्वनाथ जी	जयपुर	७३६
१५८	८	विश्वेश्वरसिंह बाबू (वैदिक यन्त्रालय)	नैनीताल प्रयाग	२४६,५१५,५३२,५३७, ५४३, ५६५,५७३,५८३

क्रम संख्या	उपलब्ध पत्र	नाम	पत्र पहुँच का स्थान	पूर्ण संख्या
१५९	१	वृद्धिचन्द जी	गसूदा (अजमेर)	५६४
१६०	२	वेदभाष्यसम्बन्धीपत्र रजिस्ट्रार पंजाब यूनिवर्सिटी	लाहौर	४०,४१
१६१	२	व्यास जी जयकृष्ण वैद्य	बम्बई	८०६,८०७
१६२	१२	शादीराम जी रईस मेरठवाले प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रालय	काशी	२६५,३०९,३१३,३२५,३३० ३३३ ६७३,६७६,६८०,६८२,६८३,६८४
१६३	१	शालिग्राम पण्डित मन्त्री आ० स०	बिलासपुर (सी.पी.)	४२२
१६४	१	शिवनारायण बाबू	मेरठ	३८१
१६५	२	शिवप्रसाद जी राजा	काशी	२३०,२३१
१६६	१	शिवसहाय जी गौड़ मन्त्री आ० स०	कानपुर	७
१६७	३	शुकदेवप्रसाद जी	नसीराबाद	२१८,७७६,८३३
१६८	२	शुद्धि अशुद्धि पत्र	काशी	६७४,६८४
१६९	२	शेरसिंह जी ठाकुर	करणवास	२६१,५१८
१७०	२१	श्यामजी कृष्ण वर्मा पण्डित प्रबन्धकर्ता वेदभाष्य तथा प्रो० आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी	बम्बई लन्दन	८२,१०९,१११,११९, १२५,१२७, १३०,१३३,१३४,१३५,१३८,१३९ १४४,१४५,१४६,१७७,२४४,२७९ ६१३,६२६,६२७
१७१	११	श्यामलदास जी कविराज	उदयपुर	३६७,५०८,५१६,५२०,५२१,५९७ ६९७,६९८,७४३,७६३,७८१
१७२	६	श्यामसुन्दरदास जी साहु	मुरादाबाद	३००,४६३.४६६,५१७,५३१,६६७
१७३	१	श्राद्ध पर लेख	बम्बई	२२६
१७४	२	श्रीप्रसाद जी बाबू मोहतिम बन्दोबस्त	जयपुर	२१९,२२४
१७५	६	सज्जनसिंह जी महाराणा मेवाड़ाधीश	उदयपुर	३८३,४५९,५६३,७१७,७३५,७६०
१७६	१	सबलसिंह ठाकुर	उदयपुर	५४८
१७७	१	सम्बद्गिरि स्वामी	रावलपिण्डी	८१८
१७८	८७	समर्थदान जी मुन्शी प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय	मुम्बई, नेठवा ग्राम (चूरु) प्रयाग अजमेर	११७.१२६,१४८,१५१,१५२१५३, १५९,१६३,१६६,१६७,१७१,१७२ १७५,१७६,१८०,१८१,१८२,१८३ १८४(१), १८८;१८९,१९०, १९१ १९२,१९६,१९७,१९८,२०६,२१२ २२५,३५२,४२०,४२५,४२६,४२७

क्रम संख्या	उपलब्ध पत्र	नाम	पत्र पहुँच का स्थान	पूर्ण संख्या
				४२८,४४२,४४३.४४४,४४५,४४७ ४४८,४४६,४५४,४६२,४६५,४७१ ४८०,४८६,४८७,४६८,५०० ५०१,५१०,५२५.५३०,५४१ ५६४ ५६८,५७०,५७१,५८४,५६१,६०१ ७१४,७२०,७२१,७२२,७२३,७२६ ७२६,७३३,७४१,७४५,७४७,७५० ७५१,७७२,७७३,७७५,७७७,७८० ७८३, ७८७, ७८६, ७६०,८३१,
१७६	२	सहजानन्द स्वामी	?	७६६,७७१
१८०	१	सही करने का पत्र गोरक्षार्थ	सर्वत्र	३८७
१८१	३	साईंदास जी	लाहौर	७४,८१,७८६
१८२	२	सिद्धकरण जैन साधु	मसूदा	८३६,८४०
१८३	१	सिनेट मिस्टर, सम्पा० पयोनियर	प्रयाग	२२३
१८४	१	सुखदेवगिरि स्वामी	हरिद्वार	१५६
१८५	१०	सुन्दरलाल पण्डित पोस्ट-मास्टर जनरल, मुख्य प्रबन्धकर्त्ता वैदिकयन्त्रालय	प्रयाग	३७६,३८६,३६७,४०८, ४१४, ४४६.५१२,६४३,७०४,७१०
१८६	१६	सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री आ० स०	बम्बई	२८३,३२६,३४३,३७४,४५२,४६६ ६६८,६६६,६८७,७२४,७२५, ७३०;७३२,७५५;७६६; ८४१
१८७	१	सेवाराम मुन्शी नहर जिलेदार	मेरठ	१०७
१८८	१	स्मिथ मिस्टर	बम्बई	४१७
१८६	२	स्वीकारपत्र	मेरठ, उदयपुर	२६४,४७८
१६०	१	हरिवंशलाल मुन्शी स्टार प्रेस	काशी	१२
१६१	६	हरिश्चन्द्र चिन्तामणि प्रबन्ध-कर्त्ता वेदभाष्य	बम्बई	२१,३२,६४,११८,१२४, ६२०, ६२१,६२२,६२३
१६२	१	हिसाब के कागजात (बख्तावरसिंह के)	फर्रुखाबाद	३६१

———

ऋषि दयानन्द के स्वरचित ग्रन्थों
के विषय में
विवरण-संग्रह
[युधिष्ठिर मीमांसक, मोतीझील, काशी]

अनुभ्रमोच्छेदन—तैयार हो गया है, ज्वालादत्त के नाम से छपेगा २४६[1] (भीमसेन के नाम से छपा) छप चुका है २८५ ॥

अष्टाध्यायीभाष्य—बनाने और छपवाने का विज्ञापन ८८। १००० ग्राहक होने पर छपेगा ९५। तैयार होने लगा है १०३। आरम्भ हो गया है १०५। चार अध्याय अभी तैयार हुए हैं १४०, १४१। शीघ्र छपने वाला है १८० ॥

आत्मचरित—२१। देवनागरी और अंग्रेजी में करवा कर भेजेंगे १५९। थोड़ा सा लिखकर भेजा है १५९। उनका समाचार (पत्रों) में छापने का समय आ गया है १५९। असंभव बातें नहीं लिखीं १६५। यही एक काम होता तो लिखवाकर भिजवा देते १६९ ॥

आर्याभिविनय—बनने की तैयारी है २५। २ अध्याय बन गये ४ आगे बनने हैं २८ ॥

आर्योद्देश्यरत्नमाला— आजकल में तैयार हो जाएगा ६४ ॥

कुरान हिन्दी—पूरा तैयार है, छापा नहीं गया १४०, १४१। जितना शोधा जाये भेजदें १८१ ॥

गोकरुणानिधि—छप गई २८५। अंग्रेजी अनुवाद के विषय में—शीघ्र भेजें २८०। विलम्ब क्यों हुआ २९१। समय निकालना चाहिये ३०४। बम्बई में और लोगों से [अंग्रेजी] बनवानी पड़ी ३२६ ॥

गौतम अहल्या की कथा—३५८। (संक्षेप में पृ० ३७) ॥

जालन्धर की बहस— ३३० ॥

पञ्चमहायज्ञविधि—(संध्याभाष्य) प्रथम सं०—तैयार होने को चहै है २५। छपवाया गया है २७ ॥

पञ्चमहायज्ञविधि—द्वितीय संस्करण—यह संस्करण संशोधित और परिवर्धित है ७७। तैयार हो गई है ७८ ॥

पोपलीला—३३०। एक पुस्तक भेजा है ३४० ॥

प्रतिमा पूजन विचार—(विज्ञापन रूप में) ५ ॥

प्रश्नोत्तर हलधर—९०, मूल्य ≈)

---

१. यह संख्या पृष्ठों की है।

प्रश्नोत्तर उदयपुर—मौलवी से, लिखे जाते हैं ३६२ ॥

प्रश्नोत्तरी (जगन्नाथ कृत) का उत्तर—भेज चुके ३३६ । विस्तार से लिख के भेजते हैं ३४४। (टिप्पणी देखो ३४४ टि० ३) ॥

भ्रमोच्छेदन—जब तक प्रकाशित न हो किसी को न दिखाना १९२ । शिवप्रसाद का खण्डन तैयार कर लिया है १९० । २४ जून को भेजा था १९५ । आठ दिन में छप सकता था १९५ । कहां कहां भेजना १९२ । जहां तहां पहुँचा वा नहीं १९४ ॥

मेला चांदपुर—उर्दू में ७ । १२,$^{४}_{१८७८}$ से पूर्व छपा था ९० । उर्दू हिन्दी में अलग २ क्यों नहीं छापा ? २१४ । उर्दू हिन्दी में सम्मिलित सितम्बर १८८० में छपा था ॥

वेद-भाष्य—के लिये शेयर बेचना २९ । आरम्भ भाद्र शु० १ सं० १९३३ से हुआ ३३ । अपूर्वता का विज्ञापन ३३ । भाद्र शु० सं० १९३३ से मार्ग० शु० १५ (३॥ मास में) दस हज़ार श्लोक प्रमाण बना ३५ । दो तीन घण्टे में २४ गायत्री या १२ त्रिष्टुप् या १० जगती छन्दवाले मन्त्रों का भाष्य बनता है ४०७ ॥ मैक्समूलर और मोनियर विलियम के पास भेजा जाता था १५० ॥

अंग्रेज़ी अनुवाद—१५५,१५७,१५८ ॥

अशुद्धि--छापना अशुद्ध न हो २२९। भाषा बहुत कांट छांट रक्खी है २६७। नमूने के तौर पर लिखकर भेजते हैं २६३, २७६। पद छूटना भाषा बनाने और शुद्ध लिखने वाले की भूल है ३६० । पद की गणना रामानन्द और दूसरे पण्डित से गिनाये थे,कोई पद रह गया होगा ३९४ । (भीमसेनने) कई के अर्थ छोड़ दिये, कई पद अन्वय में छोड़ दिये, कई आगे पीछे कर दिये ३९६ । ज्वालादत्त पोपलीला न घुसेड़ दे ४३२ । ज्वालादत्त नई (संस्कृत से भिन्न) भाषा बनाता है, गोलमाल देवता शब्द रख दिया ४३४ । पदार्थ कुछ और है और भाषा कुछ ही बनाई गई आदि ४५६ ॥

नमूने का अंक—शीघ्र निकलेगा ३२ । पौष वदी ४ सं० १९३९ तक छप गया ४० ॥

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका—नवम्बर सन १८७६ के मध्य तक बन गई थी (नोट) ३९ । संस्कृत और हिन्दी मिलाकर ८ हज़ार श्लोक प्रमाण है ३९ । लगभग (छपना) समाप्ति को आ रही है ६६ ॥

ऋग्वेदभाष्य—माघ वदी १३ गुरु १९३४ तक १० सूक्त तक बना ८५ । ८६ सूक्त ६ मन्त्र से आगे १११ [सूक्त] मन्त्र तक भेजते हैं २०४ । छठा मण्डल पूरा हो गया ४५६ । बाकी १ वर्ष में पूरा हो जायगा ४५६ ॥

यजुर्वेदभाष्य—माघ वदी १३ गुरु १९३४ तक १ अध्याय बन गया ८५ । सातवां अध्याय बनता है २२९ । ७ वें अध्याय के २३ वें मन्त्र का भाष्य हो रहा है २३४ । ८ वां अध्याय पूरा होने को आया २४६ । अ० १३ मं० ४७-५२ जहां जहां मांस भक्षण था ठीक कर दिया ३९६ । कोई रह गया हो तो काट देना ३९६ । मार्ग कृ० १ सं० १९३९ को समाप्त हुआ ३६८ ॥

साम, **अथर्व** } **वेदभाष्य**—१, १½ वर्ष लगेगा ४५७ ॥

वेदविरुद्धमतखण्डन—छप गया २५। मया निर्मितः ९९॥

वेदान्तिध्वान्त-निवारण—मया निर्मितः ९९॥

व्यवहारभानु—भीमसेन से शुद्धाशुद्धपत्र लिखवाकर लगवा दो १९०। (सामान्य १८९,१९५)॥

शिक्षापत्रीध्वान्त-निवारण—शिक्षा की पुस्तक छपी की नहीं ? २४। गुजराती भाषा व्याख्या हो गई २८॥

संस्कारविधि—प्रथम सं०—बनने की तैयारी हो रही है २५। शीघ्र बनेगी २७,२८। बनाने के लिये पण्डित की खोज हो रही है ३०। मांसादि का वर्णन तत्तद्ग्रन्थों का मत जताने के लिये है ९४॥

संस्कारविधि—द्वितीय सं०—बना सोधकर भेज देंगे ४३३। अमावस्या (भाद्र १९४०) तक बन चुकेगी ४५७। छपने के लिये १-४७ पृष्ठ भेजे हैं ४७१, ४८१॥

संस्कृतवाक्यप्रबोध—काशी के पण्डितों का आक्षेप २२१। के एक ठिकाने अशुद्ध भी छपा है २२१। अशुद्ध छपने के कारण २२१। मिथ्या आक्षेपों का उत्तर २२२। छपने में एक अशुद्धि ३९९॥

सत्यार्थप्रकाश—प्रथम सं०—सितम्बर १८७४ तक लिखकर समाप्त हो गया था (देखो टिप्पणी) २२। १३वां समु० कुरान मत समीक्षा और १४ वां० समु० गौरण्ड मत समीक्षा था २२। हस्तलेख के १४ समु० के अन्त में लिखा विज्ञापन २०। कुरान के अध्याय (१३ समु०) का शोधन २४। बाइबल का अध्याय (१४ समु०) छापने के आज्ञा २४। (१३,१४ समु० समु० के शोधने में देरी होने से न छप सके)। १२० पृष्ठ तक छप गया २४,२८। अभी (१२० पृ०) एक एक रुपये में मिलता है २५। स० प्र० कितने अध्याय छपा २४। दूसरा भाग (समु० १३,१४०) नहीं छापा गया, विचार था ७९। मृत पितरों का श्राद्ध वा तर्पण लिखने का शोधने वालों की भूल से छप गया था ९४॥

सत्यार्थप्रकाश—द्वितीय सं०—छपने को भेजा—५. पृ० भूमिका, १-३२ पृष्ठ प्रथम समु० ३५८। ३२-५७ पृ० तक कल भेजेगें ३६५। पृष्ठ २४८—२७८ (?) तक ४५७। आर्यराज वंशावली ४५८। २७२ से ३१९ पृ० तक १२ समु ४६१। १३ वा समु० भेजेंगे ४७१। ३२०—३४४ तक तौरेत और जबूर का विषय ४८१। (अल्लोपनिषद् समीक्षा ५५२) छापना आरम्भ करो ३६१। (आश्विन कृष्ण पक्ष संवत् १९३९ को छपना आरम्भ हुआ, देखो स० प्र० द्वि० सं० में मुंशी समर्थदान का निवेदन)। ५ पृ० भूमिका और सत्यार्थ प्र० के छपे फारम पहुंच गये ३७८। स० प्र० द्वि० सं० सम्भवतः आश्विन सु० ३ सं० १९३९ तक लिखा जा चुका था, इसमें प्रमाण-एक फारम में कितने पृष्ठ लगते हैं लिखो, तब अनुमान करके लिखेगें स० प्र० में इतने फारम होंगे ३६६॥

भाषा-संशोधन—तुम (समर्थदान) शोध लिया करो ३६५। कोई अनुचित हो शब्द निकाल देना ४५५॥

टिप्पणी—जहां जहां उचित समझो नोट दे दो ३६०, ३६३। नोट पर किसी का नाम मत दो ३६३॥

संशोधन का नाम—टाइटल पेज पर तुम्हारा (समर्थदान का) नाम रहना चाहिए ३६३ ॥

सत्यासत्य-विवेक—(स्काट के साथ शास्त्रार्थ) जब छपेगा १६० । मूल्य ।) २६४ (प्रथम सं० उर्दू में छपा) ॥

वेदाङ्ग-प्रकाश—भीमसेन को कहो व्याकरण की पुस्तक शीघ्र लिखकर शुद्ध कर तैयार कर दे ३३० । अपना लिखवाया और तुम्हारा शोधा पुस्तक भी मंगा लिया करेंगे २६७ । हमने भीमसेन के शोधे पुस्तक देखे तो बहुत भूल निकलती है ३३४ ॥

पठन-पाठन—रामानन्द का पढ़ना ३०५ । पढ़वाना ३५६ । राजकीय पाठशाला में लगा दिये ३९० ॥

वर्णोच्चारण-शिक्षा—पेश्तर शिक्षा की पुस्तक छपवाई जावे १७८ ॥

संधिविषय—शीघ्र शीघ्र छपना १८९ । छपना आरम्भ न हुआ होगा १९५ । संधिविषय के पत्रे भी शोधे जाते हैं १९६ ॥ संधिविषय की तरह अशुद्ध न होने पाये २६७ । जो हमने शुद्ध कर लिया है भेज देंगे १९० । शुद्धाशुद्धि पत्र २६७ । कामत ।।) रक्खो २६२ ॥

नामिक—संशोधन में अशुद्धियां २७५ । शुद्धि अशुद्धि पत्र २७६ । नवीन रचना की जरूरत नहीं । २६३ ॥

आख्यातिक—कितना छप गया ३१७ । ज्वालादत्त ने बनाना आरम्भ किया ३६०,३६१ । ज्वालादत्त से न बन सके तो यहां भेज दो, भीमसेन से बनवायेंगे ३६०,३६१ ॥

पारिभाषिक—८,१० दिन में तैयार कराकर भेजेंगे ३६३ । भूमिका सहित ४३ पृ० भेजे है ३६५ ॥

सौवर—हमने भेजा था, छापते होंगे ३६३ ॥

उणादि-कोष—सुगम संस्कृत में वृत्ति बनाई, तैयार हो गया, सूचीपत्र बाकी हैं ३७७ । उणादि पाणिनि मुनि रचित २०, २६ ॥

निघण्टु—सूचिपत्र सहित तुम्हारे पास भेज दिया ३७८ ॥

अव्ययार्थ—छपे बहुत दिन हो गये ३४४ ॥

निरुक्त ब्राह्मण आदि के प्रसिद्ध शब्दों की सूची—बनाकर भेजेंगे, निघण्टु की सूची के अन्त में छापना ३७८ ॥

पाणिनि के ग्रन्थ—अष्टाध्यायी, धातुपाठ गण, उणादि गण, शिक्षा और प्रातिपादिकगण २० ॥

आलङ्कारिक कथा—प्रजापति और उसकी दुहिता ३७ । गौतम और अहल्या ३७ । इन्द्र और वृत्रासुर ३८ ॥

ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के लेखकों के विषय में उनकी सम्मति

भीमसेन—निष्कपट है २६५ । व्याकरणादि शास्त्रों को पढ़ा है उतना ही पाण्डित्य है, अन्यत्र बालक है ३०० । भाषा बहुत ढीली बनाता है ३१७ । भीमसेन के शोधेभये पुस्तकों में भूल बहुत निकलती है ३३४ । भीमसेनको अत्यन्त अयोग्यता के कारण सब दिन के लिये निकाल दिया

३८४। भीमसेन वकवृत्ति है ३९६। भीमसेन काम के अयोग्य है ३९८। आर्यसमाज में रखने योग्य नहीं २९९। दूसरे पण्डित से न्याय दर्शन पूरा करले १९९॥

ज्वालादत्त—शोधने में बहुत गलती रहती है २६३। ये दोनों भी (भीम० ज्वा०) एक से हैं कामचोर हैं ३५८। व्याकरण का अभ्यास कम है ३६०,३६१। वैसा ही उस (भीम०) से विलक्षण दम्भी क्रोधी हठी और स्वार्थसाधनतत्पर ज्वालादत्त भी है। मेरी समझ में भीमसेन का छोटा भाई ज्वालादत्त है, ३९६। घर पै जाके दशगात्रादि मृतक कर्म कराके मुर्दाविधान खाया करेगा ४०७। पहिले जैसी भाषा नहीं बनाता ४५५। अब भाषा अच्छी नहीं बनाता, घास काटता है, पदार्थ कुछ और है, भाषा बनाई कुछ और ही ४५६॥

अन्य पण्डित आदि का उल्लेख—दिनेशराम १९। स्वामी पूर्णानन्द ३१। सहजानन्द ३९३। लक्ष्मण शास्त्री ३६। रामानन्द ४१५,४१६। शिवदयालु ४५२। रामनाथ २३०,२३३, ३६२। आत्मानन्द ३०७॥

कतिपय आवश्यक विषयों पर ऋषि दयानन्द का उल्लेख

थियोसिफिकल सोसायटी—के विषय में—९१,९२,९३,९५,१०२,१०४,१०५,१३१,१४२,१४३, १४४, १६६, १७४ १७५,२०६,२०८,२०९,२५४,२५९,२८२,२९८,३१९,३२६,३२८,४३९,४४०॥

संस्कृत पाठशाला—फर्रुखाबाद ४। काशी १८,१९॥

राजकुमार पाठशाला—३१६, ४२८, ४५०॥

शिल्पशिक्षा—के लिये जर्मनी से पत्र व्यवहार–२१४, २१६,२३१, २३७, २५९॥

गोरक्षा आन्दोलन और उस के लिए सही कराना—३११,३१२,३१३,३१४,३२९, ३५१, ३५२,३५३,३५४,३५७,३८३,४४६॥

संस्कृत और आर्य भाषा—संस्कृत से ही देश का कल्याण होगा २१। अल्कट आदि ने संस्कृत पढ़ना आरम्भ किया कि नहीं १३४। सं० पाठ० खोलने को सुनकर प्रसन्नता हुई १४०, १४१। अधिक करके संस्कृत की उन्नति पर ध्यान रखना चाहिए २८९। संस्कृत कम उर्दू फारसी, अंग्रेजी अधिक है २९०। संस्कृत की उन्नति होनी चाहिए २९१,२९२। संस्कृत मातृभाषा है २९८। अंग्रेजी फारसी में धन व्यर्थ जाता है ३७६। संस्कृत विरुद्ध भाषाओं की उन्नति नहीं करनी चाहिए ३७१। तुम्हारी पाठशाला में अलिफ बे और कैट बैट की भर्मार है जो आर्यसमाज का कर्त्तव्य नहीं ४०५। राजकुमारों को आर्ष-ग्रन्थ और संस्कृत पढ़ानी चाहिए ४६४। वेदभाष्य के लिफाफे पर देव नागरी क्यों नहीं लिखी गई ११०। संस्कृत और मध्य देश की भाषा (हिन्दी) के लिये सही करके भिजवाई जावें २१८,३५३॥

प्राचीन आर्ष ग्रन्थ छपवाये जावें—४५०। क्या सब आवश्यक ग्रन्थ तैयार हैं? १४०,१४१॥

आर्य राजा—(जो उस समय थे) ४०॥

आर्य-समाज की स्थापना—बम्बई में चैत्र सुदी ५ शनिवार सायं काल ५½ बजे सं० १९३१* पृष्ठ २६।

जातपात—आजकल आर्य शुद्ध हुओं के साथ व्यवहार न करेंगे २८७॥

पत्रों में उद्धृत पुस्तकें—ऋग्वेद को दो जिल्द भेंट कीं २३। कामसूत्र १११। काव्यप्रकाश, सर्वदर्शनसंग्रह, जैन बौद्ध मत के ग्रन्थ २४२। चन्द्रालोक २४०। सर्वदर्शन २४०। जैनियों के ग्रन्थों के विषय में २७३। पूना के व्याख्यान छपवाते हैं २.॥

प्रामाणिक ग्रन्थ की सूची—१॥

स्वामी जी के फोटो—मेरठ में उतारा १२६। रामानन्द को देना ४१५॥

मुक्ति—नित्य सुखरूप जो मोक्ष ३६ (मार्ग शु० १५ सं० १९३३)। पुनरावृत्ति ३४७ (फर्रुखाबाद के इतिहास के पृष्ठ १३४ के साथ तुलना करो)॥

विधवा—सम्पत्ति का अधिकार २१३। नियोग २१३। पुनर्विवाह २१८। नियोग का मसविदा २१६। जो तैयार किया २२४॥

वैदिक-यन्त्रालय—आर्य प्रकाश नाम १८१। वै० यन्त्रा० नाम रक्खा १८३। बाहर का काम छापने के लिये नहीं है, सत्य ग्रन्थों के प्रकाश के लिये बनाया है, बाहर के काम से हानि होती है। बाहर का काम बन्द कर दो, नहीं तो दण्ड देंगे इत्यादि ३६१,४१३,४१६,४२४॥

वसीयतनामा—२१७, ३८६॥

श्रौताग्निहोत्र आरम्भ करना—४११,४१२,४२८॥

राजाओं की नीति की आलोचना—३३२

समाधि और ब्रह्मानन्द को छोड़ कर—वेदभाष्य करना २७७।

सब काम वेदभाष्यादि छोड़ देंगे—२८०॥

अनद्यतन का लक्षण—४०॥

माता पिता की सेवा—दुराचारी होने पर भी अन्न वस्त्र से ३६७॥

---

* यह गुजराती संवत् है। उत्तरभारतीय सं० १९३२।

संशोधन पत्रम्

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	१५	०स्थितिबन्धन	०स्थितिनिबन्धनी
,,	२१	कुछ नहीं	कुछ भी नहीं
१२	३३	व्यासजीका अन्य	व्यासजी का वा अन्य
१७	१३	से जनाता है	से योगी जानता है
२१	१५	शौचादि	शौचादिक
,,	२५	अच्छे २	और अच्छे २
,,	२६	कोई का नहीं	कोई का[र्य]नहीं
२२	५	परस्त्रीगमन	परस्त्रीगमन
,,	७	जिस्से लोक	जिस्से यह लोक
२४	३	शोधन	शाधने
,,	२५	शिक्षापत्री	शिक्षापत्रीध्वान्त-निवारण
३१	१९	शीघ्र काम	शीघ्र यह काम
,,	२३	१७३३	१९३३
३७	४	तद्रेतसः	यद्रेतसः
३८	२८	इतरामु	इतरासु
३९	१६	वृत्रपन	वृत्रपना
५८	७	हम इन्द्र	हम केवल इन्द्र
६३	१४	३०	३२
६४	५	भाद्रसुदी	भाद्रपद सुदी
६७	३४	४.सोमवार	४.सोमवार १५ सितम्बर १८७७
६८	२०	१६ अक्टूबर	१५ अक्टूबर
,,	२९	पूर्ण संख्या ५१	पूर्ण संख्या ५४
७०	२३	ने इसका	ने इन सब का
७१	३३	पूर्ण संख्या ४८	पूर्ण संख्या ५१
७२	१२	आनन्द	सानन्द
७२	३२	पूर्ण संख्या ४८	पूर्ण संख्या ५१
७४	२९	१३ सितम्बर	१३ दिसम्बर
८३	११	लग गये	लग सकें

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८५	२५	पूर्णसंख्या ६४	पूर्णसंख्या ६३
८७	८	में से एक	में से कई एक
८९	२८	पूर्ण संख्या ७६	पूर्ण संख्या ७५
११०	२९	पूर्ण संख्या ११४	पूर्ण संख्या ११३
१११	११	देने का	देने की
११२	२९	१-१०-७८	१५-१०-७८
११९	४९के नीचे		२८ अक्टूबर १८७६ दिल्ली
१२७	२८	माग कृष्ण	माघ कृष्ण
१२९	२	कराने द्वारा	कराने हारा
१३२	२६	पूर्ण पत्र संख्या १४० के	पूर्ण संख्या १४६ के पत्र के
१३९	३१	१५८ और १६२	१५९ और १६३
१४५	२५	पूर्ण संख्या १७	पूर्ण संख्या १६८
,,	२९	पूर्ण संख्या १५७	पूर्ण सं० १६८
१५९	२२	[२०] [१८४]	[२०(१)][१८४(१)
१६०	९से आगे........		[२०( ][१८४(२)
१७५	२९	पं० घासीराम जीवन चरित	पं० घासीराम सम्पा० जीवनचरित
१७९	११	मिस्टबाल	मिस्टर बाल
१८२	३२	पूर्णसंख्या २४५	पूर्ण संख्या २४६
१९३	२०	उसकी	इनकी
,,	२१	ला०हितमनीलाल	पुरो० मुन्नीलाल
,,	२६	कृष्ण ८	कृष्ण ८ बुधवार
१९९	३०	पूर्ण सं० २४५	पूर्ण सं० २४६
२०२	३१	पूर्ण संख्या २५१	पूर्ण सं० २५२
२०३	२८	पूर्ण सं० ,,	,, ,, ,,
२०४	२९	पूर्ण संख्या २६३	पूर्ण संख्या २६४
२०८	३३	पूर्ण सं० २५७	पूर्ण संख्या २५६
२१०	१७	१२ अठारह	१८ अठारह
२१७	१०	बाहरमुद्रा	बारह मुद्रा
२७३	३	सूची [भेजी][2]	सूची [भेजी][1]

३३०	३२	पूर्ण संख्या २९९	पूर्ण संख्या १६७ तथा २९९
३६२	१९	२२॥)	२२॥-)
३७१	१६	आर्यराजराज पुरुषों	आर्य राजपुरुषों
३७८	८	३६६	४६६
३८३	१	वहनिश्चित	वह विचार निश्चित
४०२	४	[गीता २।]	[गीता २। ३४]
४१२	४	उसको	उनको
४१४	२५	जोगपुर	जोधपुर
४३१	२१	२४ जून	२१ जून
,,	२९	कृष्ण ४ रवि	कृष्ण १ बृहस्पतिवार
४३६	१८	आ० व० १	आ० व० ११
४३७	६	अग्निहोत	अग्निहोत्र
४६०	४	विषय का	इस विषय का
४४२	२५	वदी ११	वदी १२
,,	२४	६. ३० जुलाई	६. ३१ जुलाई
४६९ ४७०	३४ २६	संख्या ५८०	संख्या ५८१

अथ

भूमिका

पत्र-संग्रह का विचार

मेरा जन्म अमृतसर के एक आर्यसामाजिक कुल में हुआ। बाल्यकाल था, और स्कूल में पढ़ने के दिन थे। संवत् १९६४ में स्वर्गीय लाला लाजपतराय विरचित—**महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती और उनकी तालीम**—नामक उर्दू ग्रन्थ पढ़ा। ऋषि सम्बन्धी कुछ बातें ज्ञात हुईं। घर में भी बहुधा ऋषि सम्बन्धी बातें होती रहती थीं। संवत् १९६८ के अन्त में **पण्डित लेखरामकृत** ऋषि जीवन चरित पढ़ा। यह भी उर्दू भाषा में लिखा गया था। इस के पाठ से भगवान् दयानन्द सरस्वती की महत्ता मेरे हृदय पर विशेष अङ्कित हुई। संवत् १९६९ में मैंने ऋषि-शिष्य योगी लक्ष्मणानन्द स्वामी जी से योगमार्ग का उपदेश लिया। वे ऋषि दयानन्द सरस्वती जी की अनेक जीवन-घटनायें सुनाया करते थे। उन से मेरे मन में ऋषि की भक्ति बहुत बढ़ी। संवत् १९७० में महात्मा मुन्शीराम जी सम्पादित ऋषि का पत्रव्यवहार पढ़ा। इस में ऋषि के भेजे हुये पत्र अल्प संख्या में थे और ऋषि के नाम आए पत्र अत्यधिक। ये मेरे कालिज-अध्ययन के दिन थे। तब तक मेरे हृदय पर यह सत्य अङ्कित हो गया था कि गत कई शताब्दियों में इस भूतल पर ऋषि दयानन्द सरस्वती एक अलौकिक पुरुष हुए हैं। उन के लिखे एक-एक शब्द का सुरक्षित करना आवश्यक है। मेरे मन में यह बात दृढ़ हो गई कि ऋषि के पत्रों को एकत्र करना चाहिये। इन्हीं के पाठ से ऋषि-जीवन का वास्तविक स्वरूप स्फुट होगा।

पत्र-संग्रह का आरम्भ हुआ

संवत् १९७२ के पूर्वभाग में मैंने बी०ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। तब मैं व्याख्यान देना आरम्भ कर चुका था। यत्र-तत्र ऋषि जीवन की घटनायें सुनाया करता था। उन्हीं दिनों लाहौर में सरदार रूपसिंह जी ने मेरे कई व्याख्यान सुने। एक व्याख्यान के पश्चात् वे स्वयं मुझ से मिले। उन्होंने यह हर्षप्रद समाचार दिया कि उन के पास ऋषि के कुछ पत्र हैं। मेरी प्रार्थना पर उन्होंने वे पत्र मुझे दे दिये।

दैवयोग की बात है। साप्ताहिक उर्दू पत्र **प्रकाश** के सम्पादक महाशय कृष्ण जी के पास भी कुछ ऋषि-पत्र मुद्रित होने को आये। आगरे के आर्य अनाथालय के प्रबन्धकर्त्ता ने वे पत्र भेजे थे। कोई अनाथ बालक अनाथालय में प्रविष्ट हुआ था। उस के पास एक बस्ते में ये पत्र थे। पत्र लिखे गये थे बाबू विश्वेश्वरसिंह के नाम। वे ऋषि के भक्त थे और कभी वैदिक यन्त्रालय प्रयाग की भी सेवा करते थे। भाग्यचक्र ने उन्हीं के पुत्र पौत्र या किसी सम्बन्धी बालक को उस अनाथालय में भेजा।

उस परिवार की इस आपत्ति में भी ऋषि के पत्र सुरक्षित रहे और म० कृष्ण जी द्वारा मुझे उन की प्रतिलिपियां मिलीं। मथुरा में ऋषिजन्म शताब्दी पर संवत् १९८१ में ये पत्र प्रदर्शित हुऐ थे। अब ये पत्र श्री नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित हैं।

संभवतः संवत् १९७४ में मेरा परिचय प्रयाग के बाबू गजाधर प्रसाद जी से हुआ। बाबू जी के हृदय में आर्यसमाज के प्रति अटूट श्रद्धा थी जो अब तक वैसी ही है। उन के निमन्त्रन पर मैं बरेली पहुंचा। बरेली में वे मुझे श्री विष्णुलाल एम० ए० के पास ले गये। विष्णुलाल जी ने मुझे चौधरी जालिम सिंह के पत्रों की प्रतिलिपयां करा दीं।

उन दिनों मुरादाबाद आर्यसमाज के मंत्री बाबू शिवनारायण जी थे। उन्होंने साहू श्यामसुन्दर जी के नाम के पत्र भेजे। प्रतिलिपियां करके मूलपत्र मैंने लौटा दिये।

कालेज दल आर्यसमाज पञ्जाब के नेता स्वर्गीय श्री लाला हंसराज जी भी पत्रों के काम में बड़ी रुचि रखते थे। उन्होंने रावराजा तेजसिंह जी को पत्र लिख कर जोधपुर के पत्र मंगवाये। प्रतिलिपि कर के वे पत्र भी लौटा दिये गये।

प्रथमभाग-प्रकाशन

उपरि-अर्जित सामग्री से ऋषि के पत्र और विज्ञापन का प्रथम भाग कार्त्तिक संवत् १९७५ अथवा अक्टूबर १९१८ में मुद्रित किया गया। इस भाग में ८२ पत्र और विज्ञापन थे। परन्तु पत्र संख्या ६३ और ६४ दो पत्र नहीं थे। अब वे पूर्ण संख्या १९५ पर एक पत्र के रूप में छपे हैं। अतः इस भाग में ८१ पत्र थे। उपर्युक्त प्रथम भाग पर निम्नलिखित वक्तव्य था—

कुछ पत्रों के सम्बन्ध में।

ये पत्र संख्या में बहुत अधिक हैं। अतः कई भागों में निकलेंगे। पुस्तक की भूमिका अन्त में ही लिखी जायगी। सम्प्रति आर्यजनता से यही निवेदन है कि वह मुझे नये पत्रों के संग्रह करने में सहायता दे। आर्य्यसमाज के कई महान् व्यक्ति और उत्साही महाशय मेरी बहुत सहायता कर रहे हैं। उन सब के परिश्रम का फल है कि मैं इतने पत्र संग्रह कर चुका हूं। उन सब के शुभ नाम धन्यवाद-पूर्वक भूमिका के अन्त में आ ही जाएंगे। परन्तु मैं चाहता हूं कि ऐसे सज्जनों की संख्या अधिक हो। पत्रान्वेषणार्थ मेरे पत्रों का कई आर्य्य पुरुषों ने तत्काल उत्तर दिया है परन्तु अनेक लोग चुप भी रहे हैं। वे समझते हैं कि काम कदाचित् मेरा अपना है। यह उन की भूल है। ऋषि के एक एक अक्षर का सुरक्षित करना सब आर्य्यों का विशेष कर्त्तव्य है। यह ऋषि ऋण से उऋण होने का एक प्रकार है। मुझे पूरा पता है कि अनेक लोगों के घर में ऋषि के कई शिक्षाप्रद-पत्र विद्यमान् हैं। उनको निःसंकोच उन्हें प्रकाशित करवा देना चाहिये। आवश्यक पत्रों की प्रतिकृतियां भी मैं साथ दूंगा। पाठक ऐसी ही एक प्रतिकृति इस भाग के आरम्भ में पाएंगे। यह पत्र ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है। इसके रखने से जहां अन्य बातों का प्रकाश होगा वहां ऋषि का हस्ताक्षरयुक्त लेख प्रत्येक आर्य्य घर में पहुंच जायगा। जितनी शीघ्रता से इस भाग का प्रचार होगा उतने अधिक उत्साह से आगामी काम चलेगा। इस भाग में बहुत से पूर्व-प्रकाशित पत्र भी आ गये हैं, और संग्रह में यह आवश्यक ही

था, पर आगे नवीन पत्रों की संख्या अधिक होगी। कागज आदि के अत्यन्त महंगा होने पर भी पुस्तक का मूल्य यथासम्भव न्यून रखा गया है। परन्तु प्रतिकृति के तय्यार कराने में व्यय अधिक आया था अतः इतना रखना पड़ा।

ऋषि के पत्रों के साथ २ मैं उनकी फोटो भी एकत्र कर रहा हूं। पांच छः स्थलों पर उन की फोटो ली गई थी उनमें से कई एक तो छप चुकी हैं। एक सर्वथा नया चित्र मुझे रायबहादुर संसारचन्द्रजी से मिला है। दृश्य उसका अत्यन्त रोचक है। महाराज भूमि पर आसन लगाये विराजमान हैं। सामने पुस्तक पड़ा है। उस का पाठ हो रहा है, इत्यादि। ऐसे चित्रों का संग्रह करना मैं आवश्यक समझता हूं। अतएव यदि किसी सज्जन के पास ऋषि का यथार्थ फोटो हो तो वे मुझे सूचित करें। अमरीका वाला चित्र भी उन्हीं रंगों में छपवाया जायगा। अगले भाग के सम्बन्ध में यह कहना शेष है कि उसमें लखनऊ के पं० रामाधार वाजपेई, दानापुर के बाबू माधो लाल, सुप्रसिद्ध राय बहादुर श्री मूलराजजी एम० ए० इत्यादि के नाम लिखे गये अनेक पत्र होंगे। इत्योम्।

स्थान लाहौर
कार्त्तिक व० ५ वीर दयानन्दाब्द ३५

भगवद्दत्त

द्वितीयभाग-प्रकाशन

दूसरा भाग संवत् १९७६ में मुद्रित हुआ। उस में बाबू माधोलाल दानापुर; ला० मूलराज एम० ए० गुजरात तथा गुजरांवाला आदि; पं० रामाधार वाजपेई लखनऊ को लिखे गये पत्र तथा कुछ फुटकल पत्र और विज्ञापन आदि छापे गये। ये पत्र संवत् १९७५ और १९७६ में एकत्र किये गये थे। इस भाग में संख्या ८३ से १३८ तक पत्र और विज्ञापन थे। नियोग का मसव्विदा नामक लेख पर कोई संख्या नहीं दी गई थी। भाग प्रथम में महाराजा श्री प्रतापसिंह जी के नाम का संख्या ५५ का पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित से लिया गया था। पं० लेखराम जी ने उस की तिथि आश्विन बदी ३ शनिवार सम्वत् १९४० (२२ सितम्बर सन १८८३) दी थी। जीवनचरित में इस पत्र का थोड़ा सा भाग ही छपा था। फिर यह पूरा पत्र जोधपुर से श्री रावराजा तेजसिंह जी द्वारा प्राप्त हुआ। वह द्वितीय भाग में संख्या ८७ पर छापा गया। मूल पत्र में तिथि—आ० ब० ३ शनि सं० १९४०—थी। यहां अ० से आषाढ़ अभिप्रेत था। पं० लेखराम जी अथवा उनके सम्पादक ने आश्विन बनाने में भूल की।

इस प्रकार दूसरे भाग तक पत्र और विज्ञापनों की संख्या १३७ थी। इस भाग के साथ निम्न लिखित वक्तव्य छापा गया था—

कुछ पत्रों के सम्बन्ध में।

ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन प्रथम भाग में की गई प्रतिज्ञानुसार यह दूसरा भाग अब जनता के सामने धरा जाता है। इस में भी कई अत्यन्तोपयोगी पत्र दिये गये हैं। कुछ पत्रों

की अङ्गरेजी बड़ी अशुद्ध थी। वह मूलवत् रहने दी गई है। प्रतीत होता है उन दिनों ऋषि के समीप कोई अतीव साधारण अङ्गरेजी पढ़ा लिखा लेखक था इन पत्रों का मैंने भाषानुवाद कर दिया है।

इस भाग में तीन लेख बड़े महत्त्व के हैं। एक वेदभाष्य का विज्ञापन सं० १३७, दूसरा उचित वक्ता की समीक्षा सं० १३८ और तीसरा नियोग का मसव्विदा सं० १३९। उचित वक्ता का लेख मैंने क्यों यहां छापा है? इसका स्पष्ट उत्तर यही है कि पत्र संख्या २७, भाग प्रथमानुसार श्री महाराज ने स्वयं लिखा है "और मैं भी उस प्रश्नोत्तरी के विरुद्ध विषय के उत्तर में सम्मत हूं" अर्थात् इस लेख से वे सहमत थे। मेरे विचारानुसार यह उत्तर उन्होंने स्वयं लिखवाया था। इस बात को किसी अगले भाग में जब कि समस्त पत्रों की एक विस्तृत भूमिका लिखी जायगी मैं प्रमाणित करूंगा। अब रहा नियोग का मसव्विदा। पत्र १११ में श्री स्वामी जी श्री मूलराज जी एम० ए० को इसी के विषय में लिख रहे हैं। इस का मूल श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी को मेरठ से मिला था। उन्हों ने इसे "प्रकाश" में छपवा दिया था। वहीं से मैंने ले लिया है। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने मुझे कहा था कि इस के छपने में अशुद्धियां रह गई थीं, सो आशा है वह आगे कभी दूर हो जायंगी।

नवीन पत्रों के संग्रह करने का यत्न कर रहा हूं। पर्याप्त संख्या में प्राप्त कर लेने पर उन्हें भी प्रकाशित कर दूंगा। आशा है परमात्मा की कृपा से लोग ऋषि के शुद्ध हृदय का दर्शन इन पत्रों से भले प्रकार करेंगे।

शीघ्रता के कारण छपने में कोई ५, ७ साधारण अशुद्धियां रह गई हैं, पाठक उन्हें स्वयं सुधार लें। हां पृ० २१ पर पंक्ति ८ में "कलम" के स्थान में "फलम" पढ़ें।

स्थान लाहौर
मार्गशीर्ष, शुक्ला ६ शुक्र
दयानन्दाब्द, ३७ — भगवद्दत्त

तृतीयभाग-प्रकाशन

संवत् १९७६ से १९८३ तक पत्रों की उपलब्धि का काम अत्यन्त शिथिल रहा। इस काल में और इससे पूर्व भी हम ने अनेक व्यक्तियों और आर्यसमाजों को पत्र लिखे। परन्तु सफलता के दर्शन न हुये। लगभग सब स्थानों से यही उत्तर आता था कि पत्र नहीं हैं। इन उत्तरों के तीन उदाहरण नीचे उद्धृत किये जाते हैं।

१—पहला उदाहरण पं० प्रभुदयाल जी के उत्तर का है। ये महाशय संवत् १९३३ में लखनऊ में श्री स्वामीजी से मिले थे। तदनन्तर इन्होंने पांच दर्शनों पर भाषा-भाष्य रचे। मीमांसा-दर्शन विषयक एक पत्र इन्होंने श्री स्वामी जी को भेजा। वह म० मुन्शी राम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ४०२ पर छपा है। ये तेरही ग्राम ज़िला बांदा में रहते थे। इन का उत्तर जो मुझे प्राप्त हुआ, निम्नलिखित है। सन् १९१७ में प्रभूतानन्द नाम धारण करके वे संन्यासी हो गये।

तेरही ता० २—१०—१७

श्रीमान महाशय नमस्ते !

आप का पत्र ता० २—९—१७ का कल्ह यहां ता० १—१०—१७ को एक मास व्यतीत होने पर प्राप्त हुआ है।···

जो पत्र मि० चै० सु० १३ सं० १९४० में मैंने स्वामी दयानन्द जी महाराज की सेवा में भेजा था उस में मैंने मीमांसा में बलिदान विषयक जो हिंसा परक लेख मिलता है उसके यथार्थ वा मिथ्या होने और मन्तव्य वा अमन्तव्य होने के विषय में प्रश्न किया था उसका उत्तर स्वामी जी ने भेजा था। जो पत्र आया था उसका पता नहीं लगता। पास नहीं है परन्तु पत्र के लेख का स्मरण है। उत्तर में श्री स्वामी [जी ने] आशीर्वाद के अनन्तर यह लिखा था कि—

'मीमांसा के मूल शब्दों में हिंसाविधि का अर्थ नहीं है। यह भाष्यकार और वृत्तिकार की भूल है जो हिंसापरक अर्थ किया है। हम को वेदभाष्य करने आदि कार्यों से अवकाश नहीं मिलता। यही कारण है कि आप के पत्र का उत्तर इस समय दस बजे रात्रि को लिखता हूँ।

ऐसा उत्तर संक्षेप लेख से दिया था।··· ··· ··· ··· ···

आपका हितैषी

प्रभूतानन्द

२—थियोसाफिकल समाज की प्रधाना श्रीमती एनी बेसेण्ट ने निम्नलिखित उत्तर दिया

Bombay,

21-8-18

Dear Sir,

I have no correspondence between Swamiji and Col. Olcott and Mme Blavatsky. I am sorry to be unable to help you.

Sincerely,

ANNLE BESANT.

३—तीसरा उत्तर परलोकगत न्यायाध्यक्ष श्री महादेव गोविन्द रानाडे जी की धर्मपत्नी की ओर से है—

591 Sadashiv Peth

Poona city

13-11-18

Dear Sir,

I am desired by my sister Mrs. Ramabai Sahele Ranade to acknowledge receipt of your letter of the 4th Int. and to say that she regrets there are no records regarding the matter you refer to in fact there is no collection refering to that period.

Yours truly,

K. M. Kelkar.

अनेक स्थानों से मेरे पोस्ट कार्ड और लिफ़ाफ़े लौट आते थे। वे व्यक्ति तब इस लोक में नहीं थे—

कभी-कभी कहीं से पत्र आ जाता था कि पत्र मिल सकेंगे। इस का एक उदाहरण मेरठ से आए हुए निम्नलिखित पत्र से मिलेगा।

श्रीमान्—

......,स्वामी जी के पत्र मुखतलिफ़ बस्तों में रक्खे हैं। जब आप पहले आये थे तब मैं उन बस्तों को देख कर ही चुका था और करीब १ महीने के लगा था। सो इस समय गर्मी अधिक है देखने का समय नहीं। एक दो खत तो एक दो बस्तों से निकाले हैं और फिर किसी वक्त जब मौका होगा निकाल रक्खूँगा॥

धनपतिराय

कई वर्ष अतिवाहित हो गये। मेरठ का यह अमूल्य संग्रह हस्तगत नहीं हो सका। श्री ला० धनपतिराय जी के पिता ला० रामशरण मेरठ के प्रसिद्ध रईस थे। वे परोपकारिणी सभा के प्रथम मन्त्री और ऋषि के अनन्य भक्त थे। मुं० बख़तावर सिंह प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रालय काशी ने जब हिसाब की गड़बड़ की तो श्री स्वामी जी ने तत्सम्बन्धी सब पत्रादि उन्हें भेज दिये। ला० रामशरण दासजी का श्री स्वामी जी के जीवन काल में ही अकस्मात् निधन हो गया।[1]

वे सब पत्रादि उन के घर पर रहे। उनकी सर्व सम्पत्ति कोर्ट आफ़ वार्ड्स में चली गई। सब पदार्थ बन्द पड़े रहे। यह सामग्री न तो पं० लेखराम जी को प्राप्त हुई और न श्री देवेन्द्र बाबू को।

संवत् १९८३ मास आषाढ़ में महाशय मामराज जी (ज़िला मुज़फ्फर नगर अन्तर्गत कसबा खतौली निवासी) दयानन्द कालेज लाहौर के पुस्तकालय में मुझ से मिले। उनका मेरा परिचय संवत् १९७५ में आर्यसमाज मन्दिर मेरठ नगर में हुआ था। वहां मेरे साथ पण्डित रामगोपाल जी शास्त्री भी थे। म० मामराज जी की ऋषिभक्ति से मैं उनकी ओर आकर्षित हो चुका था। उन्हें ही उपयुक्त व्यक्ति समझ कर मैंने उनसे कहा कि वे मेरठ में ठहर कर ला० धनपतिराय जी से पत्र लेने का पूर्ण यत्न करें। आषाढ़ शुक्ला १० संवत् १९८३ के दिन मैंने उन्हें ला० धनपतिराय जी के नाम पत्र दिया।

म० मामराज जी श्रावण शुक्ला ६ संवत् १९८३ को मेरठ पहुंचे। लगभग डेढ़ मास के अनथक परिश्रम के पश्चात् ला० धनपतिराय जी ने खोजकर आश्विन कृष्णा द्वादशी को ऋषि के पत्रों का एक संग्रह उन्हें सौंपा। इस पुण्यदायक महत्कार्य में मेरठ के महाशय राजाराम, ला० दीवानसिंह, बा० बद्रीप्रसाद, बा० रत्नलाल, बा० मोतीलाल, मास्टर विश्वम्भर दयाल, बा० भैरोदयाल, चौधरी जयदेव सिंह, डा० अयोध्या प्रसाद जी आदि सज्जनों ने समय समय पर बड़ी सहायता की।

इन्हीं दिनों म० मामराज ने मेरठ के मास्टर आनन्दी लाल आदि के और भी कई घर ढूंढे। परन्तु पत्र-सामग्री अन्य किसी घर से हस्तगत न हुई। मेरठ निवासी श्री पं० घासी राम जी एम०ए० के पास श्री देवेन्द्र बाबू का पर्याप्त संग्रह आ चुका था। उस में से उन्होंने महती कृपा करके दो मूलपत्र (पूर्ण संख्या २६ और ३९) तथा १६ नवीन पत्रों की प्रतिलिपियां जो उन के पास थीं, उदारता

१. देखो म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार में श्री स्वामी जी के नाम भाई जवाहरसिंह लाहौर का ११ मई १८८३ का पत्र पृ०; १३०—१३५ तक।

पूर्वक प्रदान कीं। यह सब सामग्री आश्विन शुक्ला २ संवत् १९८३ शुक्रवार को म० मामराज जी मेरे पास ले आए। जयपुर के पत्रों की प्रतिलिपि भी स्वर्गीय महामहोपाध्याय पं० शिवदत्त जी दाधिमथ की प्रेरणा से ठाकुर नन्दकिशोर सिंह जी ने मेरे पास भेज दी थी।

म० मामराज जी पुनः खोज पर निकले। कर्नल आलकाट और मैडम के नाम लिखे गये दो अत्यन्त आवश्यक पत्रों की प्रतिलिपियां उन्होंने मुरादाबाद के ठाकुर चेतनदेव से लीं। ये प्रतिलिपियां उनके पिता ठाकुर शङ्करसिंह उपनाम भूपजी मन्त्री आ० स० मुरादाबाद के काल से उन के घर में सुरक्षित चली आ रही थीं। इस सब सामग्री से पत्रों का तृतीय भाग, ३-१-२७ को प्रकाशित किया गया। उस की भूमिका निम्नलिखित थी—

पाठकों से निवेदन।

ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन का यह तीसरा भाग जनता के प्रति भेंट किया जाता है। इसमें जो पत्र छापे गये हैं, वे एक दो को छोड़ कर, पहली बार ही प्रकाशित किये जाते हैं। बहुत से पत्र श्री स्वामी जी के अनन्य भक्त सेठ रामशरणदास जी रईस मेरठ के सुपुत्र ला० धनपतिराय जी रईस मेरठ ने प्रदान किये हैं। कुछ पत्र पं० घासीराम जी एम० ए० ने दिये हैं। ये पत्र उन के पास बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय के संग्रह में आये थे। मेरठ से ये सब पत्र महाशय मामराज जी बड़े पुरुषार्थ से मेरे पास लाये थे। इन सब महानुभावों का मैं हृदय से कृतज्ञ हूं। अभी और भी पत्र मिल रहे हैं। वे चतुर्थ भाग में छापे जायेंगे। पाठक उनकी प्रतीक्षा करें। विस्तृत भूमिका अन्त में ही लिखी जायगी।

लाहौर
३-१-२७

भगवद्दत्त

तीसरे भाग में पत्रों की संख्या १४० से १८७ तक थी। अतः दो न्यून करके सारे १८५ पत्र तब तक छापे गये थे।

चतुर्थभाग-प्रकाशन

इस के पश्चात् भक्त ईश्वरदास जी एम० ए० लाहौर ने मुझे पूर्णसंख्या ५३ का एक पत्र दिया। अमृतसर में श्री रुद्रदत्त जी ने पूर्णसंख्या ४९ का आधा फटा पत्र दिया। मार्गशीर्ष शुक्ला ३ बुधवार संवत् १९८३ को म० मामराज जी अनेक नगरों से होते हुये फ़रुखाबाद पहुंचे। फरुखाबाद वह स्थान है जिससे श्री स्वामी जी का विशेष सम्बन्ध रहा। ऋषि के काल के पं० गणेशप्रसाद जी तब जीवित थे। वे ही आरम्भ से आर्यसमाज के लेखक का सब काम करते थे। उन्होंने अपने पास की सारी सामग्री म० मामराज जी को दिखाई और उसकी प्रतिलिपि करने की सुविधा दी। उनके पास ३८ पत्र थे। इन में से सात पत्रों की आंशिक प्रतिलिपियां हमें पं० घासीराम जी से मिल चुकी थीं। इसके पश्चात् श्री कालीचरण रामचरण जी के पुत्र बाबू शिवनारायण जी अग्रवाल प्रधान आर्यसमाज ने समाज की सब सामग्री देखने की उन्हें पूर्ण सुविधा दी। उसमें से ऋषि के पत्र, ऋषि जीवन सम्बन्धी उपयोगी सामग्री तथा पुराने रजिस्टरों में से पत्रों के आने जाने की तिथियां ली गईं। आर्यसमाज के इतिहास के लिये भी बहुत सी आवश्यक सामग्री वहां से कई मास तक खोजने पर मिली।

फरुखाबाद के राजा दुर्गाप्रसाद जी अग्रवाल ऋषि के बड़े भक्त थे। उनके घर की खोज आवश्यक थी। म० मामराज जी ने उनके पुत्र श्री बाबू भारतेन्दु जी से पत्रों की पुरानी रद्दी देखने की आज्ञा ली। एक बृहत्कोष्ठागार पचासों वर्षों के लाखों पुराने पत्रों से भरा पड़ा था। उनमें से एक एक का देखना कोई साधारण काम न था। म० मामराज जी के कई मास के परिश्रम से उसमें से अनेक उपयोगी पत्र मिले। इनमें से सात ऋषि के भेजे हुये पत्र थे। यह एक आश्चर्यजनक अन्वेषण था। म० मामराज जी के अतिरिक्त दूसरा व्यक्ति नहीं था, जो इतने धैर्य से यह काम करता। ऋषि-जीवन की अनेक घटनायें इन्हीं पत्रों से मिली हैं। ईश्वर ने अपनी अपार दया से इस संग्रह की रक्षा की और मामराज जी द्वारा वह अपूर्व-संग्रह संसार के सामने आया।

फरुखाबाद में ला० जगन्नाथ जी अग्रवाल तथा बाबू सूर्यप्रसाद और श्री नारायण दास जी मुख्तार के घर भी खोजे गये। परन्तु ऋषि के पत्र वहां से नहीं मिले। फरुखाबाद के ये सब पत्र चतुर्थभाग में संख्या १८८ से २४६ तक छपे थे।

पूर्णसंख्या ८९ का ऐखवासी ठाकुर भूपालसिंह के नाम का पत्र म० मामराज जी ने प्रसिद्ध आर्य-कवि पं० नाथूराम जी शर्मा शङ्कर से प्राप्त किया था। कवि जी को यह पत्र किसी पंसारी की रद्दी में से मिला था। पूर्ण संख्या २११ के पत्र की प्रतिलिपि मुरादाबाद से मुंशी इन्द्रमणि जी के पौत्र ला० भगवत सहाय जी से ली गई। पूर्ण संख्या ३१५ का पत्र ऐतमादपुर वासी ला० द्वारकाप्रसाद जी से म० मामराज जी ने प्राप्त किया। पूर्ण संख्या ३२२ तथा ला० मूलराज जी एम० ए० के नाम के पत्र उन्हीं के घर से हमें मिले। श्री लाला जी पुराने पत्रों के मुट्ठे मेरे सामने धर देते थे, और मैं एक एक कार्ड और लिफाफा देखता था। बहुत दिन लगाकर मैंने वह सारा संग्रह देखा। उस में से पांच पत्र प्राप्त हुए।

इस सब सामग्री से पत्रों का चतुर्थ भाग ६-७-२७ को प्रकाशित किया गया। उसकी भूमिका निम्नलिखित थी—

पाठकों से निवेदन

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन का यह चतुर्थभाग जनता के प्रति भेंट किया जाता है। इसमें जो पत्र छापे गये हैं, वे एक दो को छोड़ कर, पहली बार ही प्रकाशित किये जाते हैं। इनमें से अधिकांश पत्र फरुखाबाद से प्राप्त किये गये हैं। इन के प्राप्त करने का श्रेय महाशय मामराज जी को है। उन्होंने निरन्तर कई मास फरुखाबाद में वास करके लाखों पुराने रद्दी पत्रों में से ये पत्र निकाले हैं। फरुखाबाद समाज के पुराने सभासद पं० गणेशप्रसाद जी ने भी इस कार्य में विशेष सहायता दी है। उनका मैं आभारी हूं। पत्रों की खोज के लिये १२०) रु० श्रीमान् जस्टिस बखशी टेकचन्द जी ने दिये थे। उनका मैं बड़ा कृतज्ञ हूं। पर पत्रों की खोज पर १२०) रु० तो क्या ५००) रु० से भी अधिक व्यय अभी तक हो चुका है। आगे भी निरन्तर हो रहा है। मेरे लिये इतना व्यय करना बड़ा कठिन है। क्या कोई आर्य सज्जन इस विषय में सहायता करेंगे। पांचवां भाग शीघ्र ही अजमेर से छपेगा। विस्तृत भूमिका अन्त में ही लिखी जायगी।

लाहौर ६-७-२७ भगवद्दत्त

तदनन्तर पत्रसंग्रह की प्रगति

इस के पश्चात् पत्रसंग्रह का काम मन्थरगति से होता रहा।

शाहपुरा राज मेवाड़ से श्री राजाधिराज श्रीनाहरसिंह जी की आज्ञा से पं० भगवान्स्वरूप जी ने भाद्रपद वदी ७ संवत् १९८५ के अपने पत्र के साथ श्री राजाधिराज के नाम लिखे गये ११ पत्रों की प्रतिलिपियां हमें भेजीं।

संवत् १९९० में म० मामराज जी ने गुरुकुल काङ्गड़ी से ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह की और देहरादून से स्वामी कृपाराम जी के कुछ पत्रों की प्रतिलिपियां कीं।

अजमेर के प्रसिद्ध आर्यधर्मप्रचारक पं० रामसहाय जी ने ज्येष्ठ वदी १० संवत् १९९० (सन १९—५—३३) को अपने पत्र के साथ ३ बहुमूल्य प्रत्र हमारे पास भेजे (पूर्ण संख्या २२, २७, ६१)।

बहुत दिन अतीत हुए जब अद्वितीय राजनीतिज्ञ तथा सुप्रसिद्ध देशभक्त श्री भाईपरमानन्द जी, एम० ए० ने मुझसे कहा था कि पं० श्यामजी कृष्णवर्मा के नाम लिखे गये श्री स्वामी जी के अनेक पत्र एक राना महाशय के पास फ्रांस में सुरक्षित थे। मैंने उनकी प्राप्ति का यत्न किया, पर असफल रहा। इतने में प्रयाग विश्वविद्यालय के अध्यापक श्री धीरेन्द्रवर्मा एम० ए० डी० लिट ने जनवरी सन १९३७ के साप्ताहिक आर्यमित्र में निम्नलिखित टिप्पण छपवाया—

स्वामी जी के कुछ नये पत्र

गत वर्ष में पढ़ाई के सिलसिले में पेरिस में था। वहां मुझे मालूम हुआ कि एक प्रसिद्ध गुजराती व्यापारी राना महोदय के पास स्वर्गीय पं० श्यामजी कृष्णवर्मा की निजी पुस्तकें आदि हैं और उनमें स्वामीजी के भी कुछ पत्र हैं। राना महोदय से मिलकर मैंने इन पत्रों को प्राप्त करने का यत्न किया और इसमें मुझे सफलता हुई।

सब मिलाकर ये २६ पत्र हैं। ये सब १८७७-७९ ईसवी के लिखे हुए हैं। इनमें तीन पत्र तो आद्योपान्त स्वामी जी के हाथ के लिखे हैं और शेष दूसरों के हाथ से लिखवाए हुये हैं। किन्तु एक को छोड़ कर प्रत्येक में स्वामीजी के हस्ताक्षर हैं। कुछ पत्रों में स्वामीजी ने एक दो पंक्तियें अपने हाथ से भी बढ़ादी हैं। स्वामी जी के हाथ के लिखे पत्रों में दो हिन्दी में हैं और एक संस्कृत में। शेष पत्रों में १५ हिन्दी में, ६ अङ्गरेजी में तथा २ संस्कृत में हैं। इन पत्रों में १६ पत्र पं० श्यामजीकृष्ण वर्मा को लिखे गये हैं। १ मूलराज जी (लाहौर) को, १ वल्लभदास जी (लाहौर) को, ५ गोपालराव हरिदेशमुख जी को, २ हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी (बम्बई) को और १ हेनरी आलकट तथा मैडम ब्लावाट्स्की को।

अधिकांश पत्र छोटे छोटे प्रबन्ध सम्बन्धी विषय वाले हैं, जिस में प्रायः वेदभाष्य की छपाई आदि के सम्बन्ध में चर्चा की गई है। किन्तु इन से भी स्वामीजी की इन तीन वर्षों की यात्रा क्रम का पता चलता है। दो तीन पत्रों में कुछ सिद्धान्तों का विवेचन मिलता है। उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने वाले अंश तो प्रायः प्रत्येक पत्र में मिल जाते हैं। फिर उनके हस्ताक्षर और हस्तलेख ऐतिहासिक महत्व रखते ही हैं।

मेरी इच्छा है कि यह अमूल्य सामग्री किसी ऐसी संस्था में रखदी जावे जहां यह सुरक्षित रह सके और साथ ही आर्य बन्धुओं तथा हिन्दी प्रेमियों की पहुंच के अन्दर भी रहे। मैं अत्यन्त बाधित होऊंगा यदि कोई सज्जन मुझे ऐसी संस्थाओं के पते भेज सकें जहां इन उद्देश्यों की पूर्ति हो सके।

८ बैंक रोड, इलाहाबाद।

धीरेन्द्र वर्मा
एम० ए० डी० लिट्
(पेरिस)

संवत् १९९२ में स्वर्गीय पं० चमूपति जी एम० ए० ने ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह को गुरुकुल काङ्गड़ी हरद्वार से प्रकाशित किया। यह संग्रह अत्यन्त अपूर्व है। हम लिख चुके हैं कि इससे पूर्व ही अर्थात् संवत् १९९० में म० मामराज जी श्री स्वामी जी के इन पत्रों की प्रतिलिपि कर लाए थे।

संवत् १९९६ में मैं प्रयाग गया। पं० वाचस्पति जी एम० ए० मेरे साथ थे। हम दोनों ने प्रो० धीरेन्द्रवर्मा जी के निवास पर जाकर उन के संग्रह के अधिकांश पत्रों की प्रतिलिपि की। संवत् २००० में श्री महेशप्रसाद जी साधु ने उस संग्रह के शेष पत्रों की प्रतिलिपियां हमारे पास भेजीं। अभी गत मास में ही पत्र पूर्ण संख्या ३७५ की एक और प्रतिलिपि अध्यापक धीरेन्द्रवर्मा जी ने हमारे पास भेजी।

परोपकारिणी सभा अजमेर का संग्रह

श्री स्वामी जी के देहत्याग पर परोपकारिणी सभा ने निश्चय किया कि श्री स्वामी जी का प्रामाणिक जीवनचरित सम्पादित तथा प्रकाशित कराया जाये। यह काम पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्डिया उपमंत्री सभा को सौंपा गया। उन्होंने तद्विषयक कुछ सामग्री उपलब्ध की।[1] हमें खोज करने पर भी उस सामग्री का कुछ पता नहीं लगा।

परोपकारिणी सभा के मन्त्री, ऋषिभक्त, वयोवृद्ध दीवान बहादुर श्री हरबिलास जी शारदा को मैंने अनेक बार लिखा कि वे उन समस्त पत्रों की प्रतिलिपियां भेजें, जो उन के पास हैं और अभी तक प्रकाशित नहीं हुए। तदनुसार सन १९४३ मास सितम्बर में उन्होंने ऐसे सब पत्रों की प्रतिलिपियां मेरे पास भेजीं। वे सब पत्र इस संस्करण में यथास्थान छप गए हैं।

कुछ और नये पत्र

अभी मास आषाढ़ संवत् २००२ में इन पत्रों का मुद्रण समाप्त हो रहा था। म० मामराज जी गत छः मास से मेरे पास थे। मैंने उन से कई वार कहा कि मेरठ के ला० रामशरणदास जी के घर पर पड़े हुए सब बस्ते एक वार उन्हें स्वयं देख लेने चाहियें। संभव है कि ला० धनपतराय जी पूरे रूप से उन्हें न देख सके हों। म० मामराज जी मेरठ पहुंचे। उन्होंने ३१—७—४५को मुझे पत्र लिखा कि उसी पुराने स्थान से उन्होंने १५ पत्र और खोज लिए हैं।

हमारे संग्रह में एक कागज पर उर्दू में कुछ लेख था। ध्यानपूर्वक पढ़ने पर पता लगा कि श्री स्वामी जी ने उस पर कुछ पत्र लिखवाए थे। वे ही पूर्व रूप में उर्दू में उस पत्र पर थे। इन सब पत्रों को हम ने परिशिष्ट में छाप दिया है।

१—देखो :—म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार की भूमिका पृ० ८ और ९।

संपूर्ण उपलब्ध पत्रों के नवीन संस्करण का आयोजन

आरम्भ में जैसे जैसे पत्र प्राप्त होते जाते थे वैसे वैसे ही रक्षा के विचार से मुद्रित कर दिये जाते थे। अगली खोज चलती रहती थी। पर्याप्त सामग्री एकत्र हो जाने पर यह निश्चय किया गया कि ऋषि का प्रामाणिक जीवनचरित लिखने के लिये इन सब पत्रों और विज्ञापनादि का तिथि क्रमानुसार सम्पादन अत्यावश्यक है। तदनुसार मास श्रावण संवत् १९८४ से पत्रों के इस संस्करण का आयोजन आरम्भ कर दिया गया था। पुराने सब पत्र तिथि क्रम से जोड़े गए।

तिथिक्रमानुसार पत्रसम्पादन का प्रथम अपूर्वलाभ

उस समय प्रथम वार यह ज्ञात हुआ कि जीवन चरितों में तिथियों की अनेक अशुद्धियां हो गई हैं। पत्रस्थ तिथि स्थानी ज० से जनवरी का अभिप्राय था। और कई लेखकों ने जून समझा।[1] इसी प्रकार आ० अर्थात् आषाढ़ को आश्विन अथवा आश्विन को आषाढ़ समझा गया।[2] मा० अर्थात् मार्गशीर्ष से माघ समझा गया अथवा इस के विपरीत्।[3] ऐसी अशुद्धियां इस संस्करण की टिप्पणियों में प्रदर्शित की गई हैं।

द्वितीय अपूर्व लाभ

दूसरा महान् लाभ यह हुआ कि जीवनचरितों में दी गई श्री स्वामी जी के अनेक स्थानों पर पहुंचने और वहां से प्रस्थान की तिथियां अशुद्ध प्रमाणित हुईं और यह विदित हुआ कि जीवनचरितों में कई स्थानों पर पहुंचने का उल्लेख भी नहीं है। यथा—

	पत्र संख्या	पत्र की तिथि	घटना	भूल या अभाव
१	२	भा. शु. ६ सं. १९२७ =१ सि० १८७६	स्वामी जी फरुखाबाद में थे।	पं. लेखराम कृत जीवनचरित में यह घटना नहीं है।
२	२६	पौ. सु. २ सं. १९३३ = दि. १७-१८७६	देहली पहुंचे।	पं. लेख. जी. च. में दिसम्बर का अन्त है, तिथि नहीं है। पं. घासी जी. में तिथि नहीं।
३	२४,२६	सन ६-२-७७ १३-२-७७	सन १५-२-७७ को मेरठ से चल कर सहारनपुर पहुंचे।	पं. लेख. और घासी. जी. च. में ४ फरवरी को मेरठ से चलकर सहारनपुर गये।
४	२७,२८	२८-२-७७ ९-३-७७	११ मार्च को सहारनपुर से चले।	लेख. जी. च. में नहीं। घासी. जी. च. में है।

१- पत्र पूर्णसंख्या २३६ पर टिप्पण २।

२ पत्र पूर्णसंख्या ४१६ पर टिप्पण २।

३ पत्र पूर्णसंख्या ३५६ पर टिप्पण १।

	पत्र संख्या	पत्र की तिथि	घटना	भूल या अभाव
५	३९	२१ जु. १८७७	१२ जुलाई को लाहौर से अमृतसर पहुंचे।	लेख. जी. च. में ५ जुलाई को पहुंचे। इसी प्रकार घासी. जी. च. में भी अशुद्ध है।
६	४० नोट नं. २	...	१४ मई १८७७ को पञ्जाब गवर्नर से लाहौर में मिले।	लेख. जी. च. में नहीं। घासी. जी. च. पृ. ४१४ पर अशुद्धि है।
७	४९	११-१०-१८७७	१५ अक्तूबर १८७७ को जालन्धर से अमृतसरपहुँचे।	लेख. जी. च. में नहीं है। घासी. जी. च. में नहीं है। दोनों में १७ को जालन्धर से चलना लिखा है।
८	५७	२७ दि. १८७७	२७ दि. को जेहलम पहुँचे।	लेख. तथा घासी. जी. च. दोनों अशुद्ध। देखो टि. पृ. ८६।
९	८२	१५ जु. १८७८	१५ जुलाई को अमृतसर में थे।	लेख. जी. च. तथा घासी. जी. च. दोनों में ११ जु. तक ही अमृतसर में रहना लिखा है।
१०	१०९	७ अक्टू. १८७८	३ अक्टू० को दिल्ली पहुँचे।	लेख. तथा घासी. के अनुसार ९ अकटूबर को दिल्ली पहुंचे।
११	१९५	...	२० नवम्बर १८७९ को काशी में थे।	लेख. २७ नवम्बर को काशी पहुंचे। घासी. में तिथि नहीं।
१२	२९६, ३००, ३३४, ३४८	...	अलीगढ़ पहुँचने का वृत्तान्त।	यह वृत्तान्त किसी जीवन चरित में नही है।
१३	३७३	...	१६ दिसम्बर को इन्दौर पहुँचने की सूचना।	लेखराम (पृ. ५५५) घासी. (पृ. ६५५)–दोनों में २१ दिसम्बर १८८१ को इन्दौर पहुंचे।
१४	५२५	...	३१ मई जोधपुर पहुँचे।	लेखराम, २९ मई को जोधपुर पहुंचे
१५	५४२, ५४५	...	२६ जून १८८३ को महाराज जोधपुर श्री स्वामी जी से मिले।	लेखराम तथा घासीराम १४ जून को महाराजा उन से मिले।

अशुद्धियों की यह संक्षिप्त सी सूची है। प्रामाणिक जीवन चरित में सब अशुद्धियां स्पष्ट की जायेंगी।

तृतीय अपूर्व लाभ

अनेक पत्रों में न तिथि, न संवत् और न स्थान ही लिखा गया है। पत्रों को तिथिक्रमानुसार लगाने से ही ऐसे पत्र यथास्थान रखे जा सके हैं। प्रकरण ने भी इस विषय में पूर्ण सहायता दी है। इस से प्रामाणिक जीवनचरित लिखने में सुविधा होगी।

चतुर्थ लाभ

अनेक पत्रों के अन्त में लेखकों की भूल से वदी, सुदी, मास अथवा संवत् अशुद्ध लिखा गया है। ऐसी असावधानी अब भी अनेक लोगों से हो जाती है। तिथिक्रमानुसार पत्रों के छापने से ऐसी सब अशुद्धियां दूर हो गई हैं। उन के कतिपय उदाहरण नीचे दिये जाते हैं:—

	पत्र पूर्ण संख्या	पत्रस्थ अशुद्ध तिथि वा संवत्	यथार्थ तिथि वा संवत्
१	१६	चैत वदी ९	ज्येष्ठ वदी ९
२	११२	३१ अकटूबर	१३ अकटूबर
३	१५६	वैशाख सुदी २	वैशाख वदी २
४	१६०	१०-४-७८	१०-४-७९
५	२३८	आषाढ़ सुदी ६ संवत् १९३६	आषाढ़ वदी ६ संवत् १९३७
६	२४२	एप्रिल	जुलाई
७	३३०	सन् १८८०	१८८१
८	३४८	सन् १८८०	१८८१
९	३४९	७ मार्च	७ एप्रिल
१०	३६५	शु० ११	सुदी १०
११	३९९,४०७,४८८	संवत् १९३८	संवत् १९३९
१२	५०३,५०५,५०९	संवत् १९३९	संवत् १९४०

पंचम लाभ

श्री स्वामी जी कई ऐसे नगरों में गये जिनका जीवनचरितों में उल्लेख नहीं है। पत्रों के तिथि-क्रमानुसार लगने से ही जीवनचरितों की ऐसी त्रुटियां दूर हुई हैं। प्रामाणिक जीवन चरित में अब ऐसी भूलें नहीं रहेंगी।

पत्रों में अयोग्य लेखकों के कारण भाषा और लेख की अनेक अशुद्धियां

पाठक देखेंगे कि महात्मा मुंशीराम जी, पं० चमूपति जी और स्व सम्पादित पहले भागों के सदृश हम ने लेखकों द्वारा की गई सब अशुद्धियां इस बृहत् पत्र-संग्रह में भी मूलवत् ही रहने दी हैं। श्री

स्वामी जी को पत्र लिखने अथवा लिखे गये पत्रों को पूरा शोधने का समय प्रायः नहीं मिलता था। धनाभाव के कारण उन को श्रेष्ठ लेखक नहीं मिल सके। इस के अतिरिक्त उस युग का मतवाद भी अच्छे लेखकों की प्राप्ति के मार्ग में बाधक था। यही कारण है कि इन पत्रों में लेख की अनेक अशुद्धियां हैं। हम ने पत्रों को मुद्रित करते हुए यत्र-तत्र विरामादि तो दे दिए हैं; परन्तु लेख मूलवत् ही रहने दिया है। श्री स्वामी जी ऐसे प्रखर पण्डित को कैसी महती कठिनता में ऐसे अल्पबुद्धि लेखकों के साथ अपना महान कार्य करना पड़ा, यह इन अशुद्धियों से ही ज्ञात हो जायगा।

कृत्रिम पत्र

जात-पात तोड़ने की आड़ में वेदमत के नाश करने वालों का एक दल लाहौर में है। उसके प्रमुख सदस्यों के नाम सुप्रसिद्ध हैं। उन्हीं में से किसी वा किन्हीं के परामर्श से हिन्दी-प्रताप कानपुर में ऋषि के नाम से दो पत्र छापे गये। दूसरा पत्र १९ दिसम्बर सन् १९२६ को छपवाया गया था। इन दोनों पत्रों की भाषा श्री स्वामी जी की भाषा से सर्वथा भिन्न और वर्तमान काल की है। पत्रों का विषय श्री स्वामी जी के सिद्धान्तों से सर्वथा विपरीत है। पत्रों में ऐतिहासिक सत्यता के विपरीत कल्पना है। यथा दूसरा पत्र १९४० विक्रमी कार्तिक वदि प्रथमा (=१७ अकटूबर सन् १८८३, बुधवार) को अजमेर से लिखा हुआ छापा गया है। उस दिन श्री स्वामी जी महाराज अजमेर में नहीं थे। उन दिनों श्री स्वामी जी की अवस्था इतनी निर्बल थी कि वे बोलते भी नहीं थे। इस लिये जिस दल ने ये पत्र बनाये हैं, निश्चित होता है कि श्री स्वामी जी के इतिहास के विषय में उनका ज्ञान कुछ भी नहीं था। पूर्वप्रदर्शित अनेक असत्यों के कारण इस दल के लोगों की मनोवृत्ति स्वयं स्पष्ट हो जाती है। इस प्रकार के कृत्रिम पत्रों से आर्यसमाज के हितैषी महाशयों को सदा सावधान रहना चाहिए। दुःख का विषय है कि सहस्रों आर्यसमाजी इस दल के सहायक हैं।

इन कृत्रिम पत्रों को प्रथम वार छपवाने वाला एक पंडित अर्जुनदेव (गढ़वाली) कहा जाता है।[१] वह व्यक्ति पंडित विश्वबन्धु एम० ए० शास्त्री का कभी शिष्य रहा है। पंडित विश्वबन्धु वह ही व्यक्ति है, जिस ने वेद सम्बन्धी पाश्चात्य मत की दूषित और अनृत सरणि का अवलम्बन करके अनेक भोले भाले आर्यसमाजियों को आर्यसंस्कृति का विरोधी बनाया और जो दयानन्द कालिज लाहौर में से ऋषि दयानन्द सरस्वती की रही सही भावनाओं की मृत्यु का एक निमित्त बना। इन्हीं महाशय को संस्कृत का पण्डित मान कर और इन के मिथ्याकथन पर विश्वास करके दयानन्द कालेज की प्रबन्धकर्तृसभा के अधिकांश सदस्य आर्यविश्वासों से च्युत हुए।

संवत् १९९० की अजमेर निर्वाण-अर्धशताब्दी के समय पं० विश्वबन्धु और लाला मूलराज ने एक दशप्रश्नी पुस्तिका छपवाई थी। उस में भी श्री स्वामी जी के विरुद्ध कई बातें लिखी गई थीं। पूछे जाने पर पं० विश्वबन्धु जी ने लिखा कि उनका इस पुस्तिका से कोई सम्बन्ध नहीं है। **ईश्वर सहायता से हमने इसी पुस्तिका के सम्बन्ध में राय मूलराज जी आदि तथा पं० विश्वबन्धु जी के**

१. ७ मार्च १९२७ को हम और म० मामराज कानपुर में प्रताप-कार्यालक में गये। वहां परलोक-गत श्री गणेशशङ्कर विद्यार्थी से इन कूट अर्थात् जाली पत्रों के सम्बन्ध की सारी सामग्री ले आए थे।

हाथ का लिखा हुआ पत्र प्रकाशित कर दिया। तब जनता पर पं० विश्वबन्धु का घृणित असत्य प्रकट हुआ। उन्हीं पं० विश्वबन्धु के साथी लोग श्री स्वामी जी के नाम पर अपनी मिथ्या रचनायें करें, इस में क्या आश्चर्य है।

ऋषि दयानन्द सरस्वती का सर्वप्रथम लेख

पं० लेखराम जी लिखते हैं—

"स्वामी जी सम्वत् १९२० वैशाख के अन्त में मथुरा में शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् आगरा की ओर गए।"[१]

"लगभग दो वर्ष तक आगरा में रहे। इस काल में समय २ पर पत्र द्वारा अथवा स्वयं मिल कर स्वामी विरजानन्द जी से अपने सन्देह निवृत्त कर लिया करते थे।"[२]

श्री स्वामी जी स्वयं लिखते हैं—

"फिर मथुरा से आगरा नगर में दो वर्ष तक स्थिति किई। ... ... जहां २ मुझ को शंका रह जाती थी उन का स्वामी जी से उत्तर यथावत् पाया।"[३]

आर्षग्रन्थों के महत्त्व को स्थापित करने वाले प्रज्ञाचक्षु विरजानन्द और स्वामी दयानन्द सरस्वती का यह पत्रव्यवहार कितना अमूल्य होगा, इस का अनुमान विज्ञ पाठक स्वयं कर सकते हैं। पर दुःख है, वह पत्रव्यवहार किसी ने सुरक्षित नहीं किया।

उस के कुछ पश्चात् श्री स्वामी जी ने भागवत खण्डन आरम्भ किया। पं० लेखराम जी लिखते हैं—"उसी समय का लिखा हुआ एक भडवा भागवत का पुस्तक पण्डित छगनलाल वृद्धिचन्द जी से मुझे मिला है। जिस के अन्त में संवत् १९२३ दूसरा ज्येष्ठ तिथि वदी ९ (७ जून १८६६ बृहस्पतिवार) लिखा है।"[४]

प्रतीत होता है, यही भागवत खण्डन पुस्तक फिर छपवाया गया। पं० लेखराम जी के अनुसार 'हरिद्वार के कुम्भ मेला पर मध्य मार्च सन १८६७ से सहस्रों की संख्या में वितरण भी किया।'[५] पं० लेखराम जी पुनः लिखते हैं—

"पाखण्ड खण्डन—यह पुस्तक ७ पृष्ठ संस्कृत भाषा में स्वामी जी ने ... ...रचा।........... अजमेर से लौट कर सम्वत् १९२३ के अन्त में स्थान आगरा ज्वाला प्रकाश प्रेस में पण्डित ज्वालाप्रसाद भार्गव के प्रबन्ध से कई सहस्र प्रतियां छपवाईं। और वैशाख सम्वत् १९२४ के कुम्भ पर निःशुल्क बाँटा गया।"[६]

यह पुस्तक उन का सर्वप्रथम उपलब्ध लेख है। इस का आरम्भ और अन्त नीचे मुद्रित किया जाता है —

---

१. जीवन चरित, पृ० २६।

२. जीवनचरित, पृ० ३१।

३. इसी ग्रन्थ का विज्ञापन, पूर्णसंख्या ७, पृ० २४।

४. जीवनचरित, पृ० ४५।

५. जीवनचरित, पृ० ५१।

६. जीवनचरित, पृ० ७६०।

भागवत खण्डन

श्रीमद्भागवतं पुराणं किमस्ति । कुतः सन्देहः ॥ द्वे भागवते श्रूयेते । एकं देवीभागवतं द्वितीयं कृष्णभागवतञ्च ।[१] अतो जायते सन्देहोऽनयोः किमस्तिव्यासकृतमिति ॥ देवीभागवतं श्रीमद्भागवतमस्ति व्यासकृतञ्च नान्यत् ॥ कुत एतत् । शुद्धत्वाद्वेदादिभ्यः अविरुद्धत्वाच्च । अत एव देवीभागवतस्य श्रीमद्भागवतसञ्ज्ञा नान्यस्य च भागवतस्य । कुत एतदशुद्धत्वात् प्रमत्तगीतत्वाच्च । किञ्च तत् ।..................................
....

ये तु पाषण्डिमतविश्वासिनस्तेऽपि पाषण्डिनः ।

पाषण्डिनो विकर्म्मस्थान् वैडालव्रतिकान् शठान् । हैतुकान् बकवृत्तींश्च वाङ्मात्रेणापि नार्चयेदित्याह मनुः ॥ अत एव वाङ्मात्रेणापि पाषण्डिभिस्सह व्यवहारो न कर्त्तव्यः ॥ **पाषाणादिमूर्त्तिपूजनं पाषण्डिमतमेव** ॥ कुत एतत् ॥ वेदादिभ्यो विरोधात्,
यद्वाचानभ्युदितं येन वागभ्युद्यते ॥ तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥
यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम् ॥ तदेव० ॥२॥
यत्प्राणेन न प्राणते येन प्राणः प्रणीयते ॥ तदेव ॥३॥

इत्यादि श्रुतिभ्यः ॥ अत एव पाषाणादिकर्त्रिम [कृत्रिम] मूर्त्तिपूजनं वृथैव ॥ अव्यक्तं व्यक्तमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ॥ इति भगवद्गीतावचनात् ॥ किं बहुना लेखनेनैतावतैव सज्जनैर्वेदितव्यं विदित्वाचरणीयमेव ॥

दयानन्दसरस्वत्याख्येन स्वामिना निर्मितमिदं पत्रं वेदितव्यं विद्वद्भिरिति शुभं भवतु वक्तृभ्यश्श्रोतृभ्यश्च । वेदोपवेदवेदांग-मनुस्मृति-महाभारत-हरिवंश-पुराणानां वाल्मीकिनिर्मितस्य रामायणस्य चाध्यापनमध्ययनं कर्त्तव्यं कारयितव्यञ्च ॥ एतेषामेव श्रवणं कर्त्तव्यमिति ॥

इस लेख का कुछ पाठ हमने स्थूलाक्षरों में मुद्रित किया है । उस से ज्ञात होता है कि संवत १९२३ के आरम्भ से पहले ही श्री स्वामी जी मूर्तिपूजा का खण्डन करने लग पड़े थे । इस विषय में उन्होंने श्री स्वामी विरजानन्द जी की सम्मति अवश्य ली होगी । वस्तुतः वे मथुरावास के दिनों में भी मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं रखते थे ।[२] इसका खुला खण्डन उन्होंने आगरा-वास से आरम्भ किया ।

१. कृष्णभागवत का खण्डन स्वामी विरजानन्द जी भी करते थे । पूना व्याख्यान में श्री स्वामी जी कहते हैं—"विरजानन्द स्वामी ......भागवत आदि पुराणों का तो बहुत ही तिरस्कार करते थे ।"

२. श्री स्वामी जी के सहाध्यायी पं० युगलकिशोर जी कहते हैं कि "एक दिन विद्यार्थी अवस्था में ही हम से स्पष्ट कह दिया कि मूर्तिपूजा, कण्ठी, तिलक, छाप सब वर्जित हैं ।" जीवनचरित पृ० २७ ॥

हां संवत् १९२३ के आरम्भ तक श्रीमद्भागवत के अतिरिक्त वे दूसरे पुराणों को परम्परागत विश्वास के कारण श्रवणमात्र से ही प्रामाणिक मानते थे। पूर्वमुद्रित लेख से यह स्पष्ट ही है।

वर्तमान पुराणों का परित्याग क्यों किया गया

इस के कुछ दिन पश्चात् ही श्री स्वामी जी ने वर्तमान पुराणों का खण्डन भी आरम्भ कर दिया। संवत् १९२६ में प्रामाणिक ग्रन्थों का जो विज्ञापन (पूर्ण संख्या १) कानपुर में दिया गया, उस में पुराणों का नाम नहीं है। इस पवित्र भारतभूमि पर जो भी धर्माचार्य मूर्तिपूजा के खण्डन में अग्रसर होगा, उसे पुराणों का परित्याग करना ही पड़ेगा। पुराणों में 'घुणाक्षरन्याय' से कई बातें सच्ची मान कर भी ऋषि दयानन्द सरस्वती को इन का खण्डन करना पड़ा।[1] पुराण ही मूर्तिपूजा का मूल है। स्वामी जी की असाधारण दृष्टि और उनके सूक्ष्म अध्ययन ने सहसा देख लिया कि मूर्तिपूजा और वेदविरुद्ध समस्त सम्प्रदायों का मूल, वर्तमान पुराण ग्रन्थ-ही हैं। उस समय श्री स्वामी जी ऋषि पदवी की ओर जा रहे थे। उन्हें यह ज्ञान बहुत आरम्भ में हो गया। उन का सब से पहला उपलब्ध लेख इसी लिए महत्त्व का है कि इस से हमें विदित होता है कि ऋषि के जीवन में विचार-धारा का विकास कैसे हुआ।

जब श्री स्वामी जी मथुरा से पढ़ कर निकले तो वे कतिपय पुराणों को मानते थे। इन पुराणों का अध्ययन करने और उनका वेद से गम्भीर सन्तोलन करने पर उन्हें पता लगा कि वर्तमान पुराण ऋषियों से प्रयुक्त किये गये पुराण शब्द के अन्तर्गत नहीं आ सकते। इन वर्तमान पुराणों का संकलन गत दो तीन सहस्र वर्ष में ही हुआ है। अतः इन में अधिकांश बातें वेद विरुद्ध दिखाई दीं। उस काल में पण्डित लोग इन वेद-विरुद्ध बातों को पुराणों से ही सिद्ध करते थे। स्वामी दयानन्द सरस्वती इस बात को नहीं सह सके। और उन्होंने इन पुराणों का सर्वथा परित्याग कर दिया। इस विषय में भी उनका श्री विरजानन्द जी से विचार विनिमय हुआ ही होगा, पर नहीं कह सकते किस रूप में।

पत्र कितनी भाषाओं में लिखे गए

ऋषि दयानन्द सरस्वती संस्कृत और आर्यभाषा के ही पण्डित थे। गुजराती उन की मातृभाषा थी। उर्दू और अंग्रेजी से वे सर्वथा अनभिज्ञ थे। पर मिलते हैं उन के पत्र इन पांच भाषाओं में ही। उन के संस्कृत पत्र और विज्ञापन प्रायः शुद्ध रूप में हैं। संवत् १९२९ तक तो उन सारा पत्रव्यवहार और सम्भाषण निश्चित ही संस्कृत में था। तत्पश्चात् संवत् १९३० में कलकत्ते से आकर उन्होंने आर्य-भाषा में भी बोलना आरम्भ कर दिया। आर्यभाषा के पत्र उस समय से आरम्भ हो गये होंगे। जो लोग संस्कृत अथवा आर्यभाषा नहीं जानते थे, उनके पत्रों का उत्तर भी श्री स्वामी जी आर्यभाषा में ही बोलते अथवा लिखवाते थे। फिर वह उत्तर उर्दू अथवा अंग्रेजी में अनूदिदित हो कर भेजा जाता था। कर्नल आल्काट तथा मैडेम ब्लेवेट्स्की के पत्र अंग्रेजी में अनुवाद करके भेजे जाते थे। गुजराती भाषा का एक ही पत्र इस संग्रह में पूर्णसंख्या ४१२ पर छपा है। वह पत्र श्री स्वामी जी की अनुमति से ही लिखा गया है। संभव है वह गुजराती भाषा भी श्री स्वामी जी की ही हो।

---

१. सत्यार्थप्रकाश एकादश समुल्लास—पुराणखण्डनप्रकरण।

पत्र और विज्ञापनों में ऋषि के उज्ज्वल विचार

१—भारत की भाषा संस्कृत

अनेक पत्रों तथा विज्ञापनों में यह विषय अत्यन्त स्पष्ट मिलता है। उन पत्रों का तथा उनके अन्तर्गत वचनों का क्रमशः प्रदर्शन नीचे किया जाता है—

पूर्णसंख्या [१] वेदों का पढ़ना द्वितीय सत्य है।

[१२] इस आर्य-विद्यालय से·········आर्यावर्त्त देश की उन्नति होगी।

[१३] (क) संस्कृत विद्या की ऋषि मुनियों की रीति से प्रवृत्ति करना।

(ख) सनातन संस्कृत विद्या का उद्धार।

(ग) आर्यावर्त्त देश की स्वाभाविक सनातन विद्या संस्कृत ही है।······उसी से इस देश का कल्याण होगा। अन्य भाषा से नहीं।

[३६] यदि वेद का ज्ञान सारे देश में फैला दिया जाय तो भारत में से अज्ञानान्धकार··· ··· एक दिन नष्ट हो जायगा।

[६४] वेदभाष्य का अनुवाद अंग्रेज़ी अथवा प्रान्तीय भाषा में नहीं होना चाहिए।······ यदि अंग्रेज़ी अथवा उर्दू में वेदभाष्य का अनुवाद किया जायगा तो संस्कृत पढ़ने के प्रति जनता का उत्साह मन्द हो जायगा।

[७५] (क) संस्कृत विद्या की उन्नति करनी चाहिए।

(ख) प्राचीन आर्षग्रन्थों के ज्ञान के विना किसी को संस्कृत विद्या का यथार्थ फल नहीं हो सकता।

[१४२] ··· जैसा ··· आर्यसमाजों के सभासद करते और कराना चाहते हैं कि संस्कृत विद्या के जानने वाले स्वदेशियों की बढ़ती के अभिलाषी···।

[१४९] मुझे यह सुन कर बहुत प्रसन्नता हुई है कि आप आर्य्य-संस्कृतपाठशाला का यत्न कर रहे हैं। १६ मार्च १८७९।

[१५१] उन्होंने (ब्लेवेट्स्की और अल्काट ने) संस्कृत पढ़ने का आरम्भ किया है वा नहीं। २६ मार्च १८७९।

[१६३] आप के संस्कृत पाठशाला खोलने का विचार सुन कर मुझे बहुत हर्ष है। २४ एप्रिल १८७९।

[१७९] कल्पना करो कि इन सब का सन्तोषजनक प्रबन्ध हो भी जाय; परन्तु इससे सब से बड़ी हानि यह होगी कि मेरे वेदभाष्य के अंग्रेज़ी अनुवाद के प्रकाशित होने पर भारतीय आर्य संस्कृत और भाषा को पढ़ना छोड़ देंगे, जिसे कि वे आर्य वेदभाष्य को समझने के लिए आजकल उत्साह के साथ पढ़ रहे हैं। और यही मेरा मुख्य उद्देश्य है।

[३५४] इस पाठशाला में अधिक करके संस्कृत की उन्नति पर ध्यान रहना चाहिये। और इसमें केवल लड़के ही पढ़ते हैं अथवा हमारे रईस लोगों में से भी कोई पढ़ता है ?

[३५६] आप लोगों की पाठशाला में आर्यभाषा संस्कृत का प्रचार बहुत कम और अन्य भाषा अर्थात् अंग्रेज़ी व उर्दू फारसी अधिक पढ़ाई जाती है। इससे वह अभीष्ट जिसके लिए यह शाला खोली गई है, सिद्ध होता नहीं दीखता। वरन् आपका यह हजारह मुद्रा का व्यय संस्कृत की ओर से निष्फल होता भासता है।……… आप लोग देखते हैं कि बहुत काल से आर्यावर्त में संस्कृतविद्या का अभाव हो रहा है, वरन् संस्कृत रूपी मातृभाषा की जगह अंग्रेज़ी लोगों की मातृभाषा हो चली है।………हमारी अति प्राचीन मातृभाषा संस्कृत जिसका सहायक वर्तमान में कोई नहीं है……।

[३५८]……संस्कृत की उन्नति होनी, सो इस पर अच्छे प्रकार ध्यान रहे।

[३५९] इस पाठशाला में मुख्य संस्कृत जो मातृभाषा है उसको ही वृद्धि देना चाहिए।

[४९९] तुम्हारी पाठशाला में अलिफ बे और कैट बैट का धर्मार है, जो कि आर्यसमाजों को विशेष कर्तव्य नहीं है।

[४५९] ७-सदा सनातन वेद शास्त्र, आर्यराज, राजपुरुषों की नीति पर निश्चित रह कर उनकी उन्नति तन मन धन से सदा किया करें। इन से विरुद्ध भाषाओं की प्रवृत्ति वा उन्नति न करें वा करावें। किन्तु जितना दूसरे राज्य के सम्बन्ध में, यदि वे इस भाषा को न समझ सकें, उतने ही के लिए उन उन भाषाओं का यत्न रखें, जो वह प्रबल राज्य हो।

पूर्वोद्धृत वचनों में संस्कृत के प्रति ऋषि दयानन्द सरस्वती के उद्गारों का स्पष्ट चित्र दृष्टिगोचर होता है। श्री स्वामी जी के अनुसार—

(क) संस्कृत भारत की मातृभाषा है। अथवा आर्यावर्त की स्वाभाविक सनातन विद्या संस्कृत ही है।

(ख) संस्कृत पढ़ कर सब आर्यावर्तीय लोगों को आर्षग्रन्थों का अभ्यास करना चाहिये।

(ग) वर्तमान काल में संस्कृत के अतिरिक्त अंग्रेज़ी आदि भाषाओं पर आर्यसमाज का धन व्यय नहीं होना चाहिए।

(घ) आर्य राजाओं को संस्कृत की ही उन्नति करनी चाहिए। उन्हें अपने राज्यों में संस्कृत से विभिन्न भाषाओं का आदर मान न करना चाहिए।

(ङ) संस्कृत से ही भारत और मनुष्य-मात्र का कल्याण होगा।

(च) अंग्रेज़ी लोगों की मातृभाषा हो चली है। इस का प्रतिकार करना चाहिए।

आर्यसंस्कृति के इस सर्वथा विद्वेषी भयानक काल में, आर्य-संस्कृति के अनन्य भक्त ऋषि दयानन्द सरस्वती के संस्कृतभाषा सम्बन्धी ये उद्दाम विचार अत्यन्त स्पष्ट हैं। इन विचारों में एक अपरिमित शक्ति, एक प्रबल प्रवाह, और एक अनुपम रस है। इन्हीं गम्भीर और पूर्ण सत्य विचारों की छाया ऋषि दयानन्द सरस्वती रचित ग्रन्थों में भी दृष्टिगत होती है। भारत और भारतीय संस्कृति के उद्धार के निमित्त ये सत्य विचार वर्तमान भारत के किसी भी सुधारक या नेता को नहीं सूझे॥ इन विचारों को श्री मोहनदास कर्मचन्द गांधी और श्री जवाहरलाल भी प्रकट नहीं कर सके। वे ऐसा

करें भी कैसे। वे तो संस्कृतभाषा के वैभव से अनभिज्ञ हैं, और वेद-विद्या-विहीन हैं। वे भारतीय तत्त्व को नहीं समझते।

श्री गान्धी जी ने एक दो स्थानों पर लिखा है कि प्रत्येक हिन्दू को संस्कृत पढ़नी चाहिये। परन्तु यह उनका कथन मात्र ही रहा है। उनका स्वीकृत किया हुआ उत्तराधिकारी श्री जवाहरलाल संस्कृत-ज्ञान-शून्य है। उनके अधिकांश अन्य साथी भी संस्कृत से विमुख हैं। इस के साथ यह भी विचारणीय है कि जो भाषा व्यवहार में नहीं आती वह मृतप्राय हो जाती है। इस लिए व्यवहार में "हिन्दुस्तानी भाषा" को प्रचरित करने वाले श्री गान्धी जी संस्कृत को मृतप्राय हो बनावेंगे। उनका कहना कथनमात्र रहेगा। यदि वे सत्य से थोड़ा सा भी प्रेम रखते हैं तो उन्हें निज हठ छोड़ कर यह मानना चाहिए कि भारतीयों के लिए संस्कृत पढ़ना ही आवश्यक नहीं, प्रत्युत संस्कृत को शिष्ट-व्यवहार की भाषा बनाना भी आवश्यक है। अतः श्री गान्धी जी को ऋषि दयानन्द सरस्वती का अनुकरण करना चाहिए।

ऐसी अवस्था में अंग्रेजी शिक्षा प्रभावित पाश्चात्य विचार का उच्छिष्टभोजी, भारतीय इतिहास और संस्कृति का अणुमात्र-ज्ञान न रखने वाला एक भोला भारतीय नव-युवक प्रश्न करता है—

(प्रश्न) क्या भारत की भाषा कभी संस्कृत भी रही है।

(उत्तर) सतयुग में भूतल के सब मनुष्यों की भाषा संस्कृत थी। वह संस्कारहीन नहीं थी। व्याकरण आगम के महान् पण्डित भर्तृहरि ने वाक्यपदीय के प्रथम काण्ड के अन्त में स्वोपज्ञ वृत्ति में लिखा है—श्रूयते पुराकल्पे स्वशरीरज्योतिषां मनुष्याणांय थैव-अनृतादिभिरसंकीर्णा वागासीत तथा सर्वैरपभ्रंशैः। गत जलप्लावन के पश्चात् और इस सतयुग के आरम्भ में प्रथम उपदेशकर्ता तथा वक्ता श्री ब्रह्मा जी ने वेद और समस्त शास्त्रों का उपदेश कर दिया। शास्त्रों का उपदेश संस्कृत में था। वे शास्त्र सम्पूर्ण उपयोगी ज्ञान का भण्डार थे। उनकी शब्दराशि विपुल थी। संसार की समस्त भाषाएँ उसी विपुल शब्दराशियुक्त संस्कृत का प्राकृत अथवा अपभ्रंश रूपमात्र हैं। ब्रह्मा जी=आदम (आत्मभू) द्वारा उपदिष्ट ज्ञान मनुष्य मात्र का एकमात्र आश्रय था। तब सारी सृष्टि ब्राह्मणरूप थी। प्राकृत और अपभ्रंश भाषाएँ सतयुग के पश्चात् त्रेता से बनने लगीं।[१]

भाषा-परिवर्तन विषयक योरुपीय मत कि बोलियों (dialects) से भाषा (Eanguage) बनती है सर्वत्र लागू नहीं होता। यह इतिहास विरुद्ध है। इसके विपरीत संकुचित हो हो कर भाषाओं से बोलियां बनीं, यह तथ्य भारतीय इतिहास से सिद्ध है। संस्कृत भाषा से ह्रास होते-होते हैं पंजाबी आदि बोलियां बनी यह निर्विवाद है।

द्वापरान्त अर्थात् भारतयुद्ध-काल में भारतयुद्ध में भाग लेने वाले राजगण भी जब वेदविद्या-युक्त थे, तब संस्कृत की बात ही क्या। देखिए—

सर्वे वेदविदः शूराः सर्वे सुचरितव्रताः। उद्योगपर्व १४६। ६॥

वेदाध्ययनसंपन्नाः सर्वे युद्धाभिनन्दिनः। भीष्मपर्व १। ४॥

कलियुग के कई सौ वर्ष जाने पर भी भारत की भाषा संस्कृत ही थी। आचार्य यास्क,

---

१. इस विषय का सप्रमाण विस्तृत वर्णन हमारे रचे भारतवर्ष का बृहद इतिहास भाग प्रथम में है।

जो भारत युद्ध के ३०–५० वर्ष पश्चात् हुआ संस्कृत को ही भाषा अर्थात् बोल चाल की भाषा लिखता है—

इवेति भाषायां च अन्वध्यायं च । निरुक्त १ । ४ ॥

नूनमिति विचिकित्सार्थीयो भाषायाम् । उभयम् अन्वध्यायं विचिकित्सार्थीयश्च पदपूरणश्च । निरुक्त १ । ५ ॥

आचार्य पाणिनि भी जो भारतयुद्ध के २५० वर्ष पश्चात् हुआ, संस्कृत को ही भाषा लिखता है—

भाषायां सदवसश्रुवः । ३ । २ । १०८

सख्यशिश्वीति भाषायाम् । ४ । १ । ६२ ॥

भारत-युद्ध के लगभग १३०० वर्ष पश्चात् भारत भूमि पर तथागत बुद्ध और जैन तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी का प्रादुर्भाव हुआ। इन आचार्यों ने सर्वप्रथम प्राकृत का आश्रय विशेष लिया। यह बात सकारण थी। अधिकांश विद्वान् लोग इन की बात न सुनते थे। अतः इन आचार्यों ने निम्नश्रेणी के मूर्ख लोगों को अपना सन्देश देना आरम्भ किया[1]। वह सन्देश स्वभावतः प्राकृत में था[1]। परन्तु इन आचार्यों के उत्तराधिकारी भी प्राकृत को सदा के लिए अपना नहीं सके। उन्हें भी कालान्तर में संस्कृत का ही आश्रय लेना पड़ा। संस्कृत के इस पुनरुद्धार का युग शुङ्ग और गुप्त महाराजाओं का युग था। इन में से श्री चन्द्रगुप्त-विक्रमादित्य साहसाङ्क ने तो भारत को पुनः संस्कृतभाषा-भाषी बना दिया। इसका साक्ष्य भोजराज के निम्नलिखित वचन में मिलता है—

काले श्रीसाहसाङ्कस्य के न संस्कृतवादिनः । सरस्वतीकण्ठाभरण अलंकार।

इन सम्राटों के शिलालेख भी काव्यमयी संस्कृत में हैं। इस से प्रमाणित होता है कि तब संस्कृत का प्रचार एक वार पुनः बहुत वृद्धि को प्राप्त हो गया था।

गुप्त सम्राटों के काल से लेकर दिल्लीपति महाराज पृथ्वीराज के काल तक के शतशः ताम्रपत्र उत्तर भारत में मिल चुके हैं। उन सब की भाषा संस्कृत ही है। गुप्तों से स्थाण्वीश्वरपति महाराज हर्षवर्धन तक संस्कृत भाषा का पूरा प्राबल्य था। प्राकृत और अपभ्रंश भाषाएं प्रचलित तो थीं, पर साम्राज्य संस्कृत का ही था। चीनी यात्री ह्युनत्सांग को, जो हर्षवर्धन के काल में भारत-भ्रमण कर रहा था, नालन्दा में रह कर संस्कृताध्ययन करना पड़ा। उसके कुछ काल पश्चात् चीनी यात्री इत्सिंग भारत में आया। उसने तत्कालीन संस्कृत अध्ययनाध्यापन-प्रणाली का एक स्पष्ट चित्र अपने ग्रन्थ में खींचा है। उसके चिर-अनन्तर अर्थात् पृथ्वीराज के काल तक भी संस्कृत ही भारत की भाषा रही।

फिर भारत पर मुसलमानों का आक्रमण आरम्भ हुआ। ये लोग प्रायः विद्याद्वेषी रहे हैं। इन्हों ने ही सिकन्दरियां का योरुप-विख्यात पुस्तकालय जलाया था। इन्हों ने उत्तर भारत के अनेक

---

१. छठी शताब्दी विक्रम के जैन आचार्य श्री हरिभद्र सूरी ने एक पुराना पद्य दशवैकालिक टीका पृ० १०१ पर उद्धृत किया है—

बाल स्त्री-मूढ-मूर्खाणां नृणां चारित्रकाङ्क्षिणाम् । अनुग्रहार्थं तत्त्वज्ञैः सिद्धान्तः प्राकृतः स्मृतः ॥

अर्थात् बाल, स्त्री और मूढ़ों के लिए जैन सिद्धान्त प्राकृत में दिया गया।

पुस्तक-भण्डार नष्ट किए। उस समय भारतीय जातीयता रुग्णावस्था में थी। कोई योग्य चिकित्सक उस रोग का निदान और औषध करने वाला नहीं हुआ। अतः बहुत काल तक तो दिल्ली आदि का ही प्रदेश और फिर मुगलकाल से देश का अधिकांश भाग मुसलमानों के अधीन होगया, पर आर्य-संस्कृति की थोड़ी सी रक्षा यहां के ब्राह्मण और क्षत्रिय आदि करते ही रहे। उस दयनीय काल में फारसी का प्रचार बहुत बड़ा। उस दुःखद अवस्था को देख कर वीराग्रगण्य श्री गुरुगोविन्दसिंह जी ने भी निम्नलिखित पद में निराशा ही प्रकट की—

म्लेच्छ भाख जब सब पढ़ गए।
सुमारग छोड़ कुमारग पए॥

गत दो सौ वर्ष से अंग्रेज़ी शासन भारत पर होने लगा। उसका प्रभाव दिन-दिन अधिक हुआ। मुसलमानी शासन ने तो राजनीतिक दासता ही दी थी, पर अंग्रेजी शासन ने मानसिक-दासता भी उत्पन्न की। आर्यजाति का रोग बढ़ता ही गया। ऐसी दीन-हीन दशा में अंग्रेज़ी-शासन-काल में संस्कृत भाषा पर सब से अधिक कुठाराघात हुआ। इसी महान् विपत्ति-काल में जिस बात को राजा राममोहन राय,श्री केशवचन्द्र सेन,श्री गोपाल कृष्ण गोखले आदि भी न समझ पाए और जिसे श्री मोहनदास कर्मचन्द गान्धी और श्री जवाहरलाल अब भी अनुभव नहीं कर रहे,वही बात,हां भारतीय रोग की चिकित्सा का वही एक मूल-मन्त्र ईश्वर ने एक ऐसे व्यक्ति के लिए रख छोड़ा था, जिस पर अंग्रेजी भाषा का अणुमात्र प्रभाव नहीं पड़ा था। उसी महापुरुष और भारतीय सामाजिक, मानसिक और राजनीतिक दुःसाध्य रोग के सच्चे चिकित्सक दयानन्द सरस्वती ने पुनः यह बात जगाई, उसी बाल ब्रह्मचारी ने पुनः अपना सिंहनाद किया कि भारत की एकमात्र भाषा संस्कृत ही है।

(प्रश्न) यह सब सत्य है, पर इतनी समस्या अवश्य है कि संस्कृत नाटकों में देवियों के कथोपकथन प्राकृत में क्यों लिखे गए हैं। भारतयुद्ध-काल से बहुत पूर्व के भारत मुनि ने भी रूपक के वर्णन में यही मत स्वीकार किया है।

(उत्तर) जिस प्रकार वर्त्तमान काल में इङ्गलैण्ड देश की साहित्यिक भाषा एक विशेष प्रकार की अंग्रेजी है, जिसे वहां का केवल शिष्ट-समाज ही बोलता है, और जन-साधारण की व्यवहार की भाषा गोराशाही अंग्रेजी कहाती है, ठीक उसी प्रकार त्रेता युग से भारत में संस्कृत भाषा की दशा रही है। भारत की अधिक जनता शिष्ट थी, अतः यहां साहित्यिक संस्कृत का बहुत प्रचार था, परन्तु निम्न श्रेणी के लोग और प्रायः देवियां उच्चकोटि की शिष्ट-भाषा नहीं बोल सकती थीं। अधिकांश कन्याओं का विवाह लगभग पन्द्रह, सोलह वर्ष की अवस्था में हो जाता था। इस कारण उनका अध्ययन थोड़ा रहता था। रूपकों में भी अप्सराओं की भाषा संस्कृत ही रखी गई है सुलभा, मैत्रेयी और गार्गी आदि सदृश अल्पसंख्यक देवियां साहित्यिक संकृत बोलती थीं। इसीलिए भारतीय नाटककारों ने उन के लिए भी संस्कृत भाषाका स्थान रखा है। पदवाक्यप्रमाणज्ञ भवभूति-विरचित उत्तररामचरित में आत्रेयी और वासन्ती तथा उन्हीं के मालतीमाधव में कामन्दकी आदि देवियां संस्कृत बोलती हैं। परन्तु अन्य देवियां साहित्यिक संस्कृत भाषण में इतनी कृतश्रमा न होती थीं। अल्प अध्ययन के कारण उनका संस्कृत शब्दों का उच्चारण दोषयुक्त हो जाता था। उनकी यही

अपरिमार्जित और उच्चारण-दोषबहुला संस्कृतभाषा ही प्राकृतभाषा बनी। इसी लिए पुरातन नाटकों में निम्नश्रेणी के लोगों की और प्रायः स्त्रियों की भाषा प्राकृत रही है।

संस्कृत नाटकों में स्त्रियों आदि की भाषा प्राकृत होने का एक और भी कारण है। भारतीय नाटक नट और नटियों द्वारा ही खेले जाते थे। स्त्री पात्राओं का अभिनय स्त्रियां ही करती थीं। नट श्रेणी की स्त्रियां अर्थात् नटियां शिष्ट संस्कृत में कृताभ्यासा न होती थीं। वे बाल्यावस्था से ही गृहकार्य के अतिरिक्त अभिनय का काम करने लग पड़ती थीं। अतः उच्च संस्कृताध्ययन की न तो उनकी रुचि रहती थी और न उन्हें उसकी अधिक सुविधा थी। संस्कृत-भाषण करते हुए वे अशुद्धियां न करें, इस लिए भी सामान्य रूप से स्त्री-पात्रों की भाषा प्राकृत ही हो गई। जब नटियों में से आत्रेयी आदि का अभिनय करने वाली संस्कृत-भाषा-भाषण-समर्थ नटियां खोजी अथवा शिक्षित की जाती थीं, तो पर्याप्त कष्ट होता था। अतः संस्कृत नाटकों में आत्रेयी आदि सदृश स्त्रीपात्राएँ न्यून हैं। इतने पर भी यह निश्चित है कि जन-साधारण और देवियां भी संस्कृत समझने में पूर्ण समर्थ थीं। अतः भारत की एकमात्र भाषा संस्कृत ही रही है, इसमें किंचित् भी सन्देह नहीं। इङ्गलेण्ड में लाखों श्रमजीवी और ग्रामीण स्त्रियां गोराशाही अंग्रेजी ही बोलते हैं, पर इङ्गलेण्ड की भाषा अंग्रेजी ही है, ऐसा कहने में कोई संकोच नहीं। फिर भारत की भाषा संस्कृत थी, ऐसा कहने में कोई संकोच क्यों करे।

(प्रश्न) योरुप के भाषा-अनुशीलन-कर्ताओं का मत है कि संस्कृत तथा वेद-वाक् से पूर्व एक अन्य अति-प्राचीन भाषा थी, जिस से पुरानी फारसी, ग्रीक और संस्कृत आदि भाषाएँ निकली हैं। फिर कैसे माना जाए कि सतयुग में संस्कृत सारे भूमण्डल पर के मनुष्यों की भाषा थी।

(उत्तर) यह मत पक्षपात युक्त है। वेद वाक् तो आकाशी ऋषियों और देवों (प्राणों, मरुतों, अग्नि और विद्युत् आदि शक्तियों) द्वारा उस समय उत्पन्न हो चुकी थी, जब न पृथ्वी सृजी गई थी और न उस पर रहने वाले मनुष्य। वही दैवी वाक् मनुष्य और ऋषियों की उत्पत्ति के समय ऋषियों में ईश्वर-प्रेरणा से प्रविष्ट हुई। ऋषियों ने उस श्रुति को सुना। तब उस दैवी वाक् का सब को उपदेश दिया गया। इस विषय की विस्तृत व्याख्या और विकास-मतानुयाईयों के सम्पूर्ण कुतर्कों का खण्ड अन्यत्र करेंगे।'

(प्रश्न) भारत में संस्कृत तथा आर्षग्रन्थ प्रचार की जो उद्दाम तरङ्ग ऋषि दयानन्द सरस्वती ने उत्पन्न की थी, उसे ऋषि-स्थापित आर्यसमाज स्थिर क्यों नहीं रख सका।

(उत्तर) आर्यसमाज के प्रारम्भिक काल के जो कार्यकर्ता थे, उन्हें तो संस्कृत-महत्त्व का कुछ ज्ञान था। पं० गोपलराव हरि देशमुख जज, पं० गोपालराव फरुखाबादी, पं० गुरुदत्त, ला० हंसराज और ला० मुंशीराम आदि कार्यकर्ताओं ने संस्कृत का अभ्यास किया।

इन में से पहले दो महाशय संस्कृत के अच्छे पण्डित थे। पं० गुरुदत्त के संस्कृत-प्रेम की कोई सीमा न थी। ला० हंसराज और ला० मुंशीराम ने संस्कृत का थोड़ा २ अभ्यास किया। इन से अतिरिक्त इनके कुछ उत्तरकालीन आर्य्य प्रचारक स्वामी अच्युतानन्द, स्वामी दर्शनानन्द

---

१. इस के लिये हमारा वैदिक वाङ्मय का इतिहास प्रथम भाग 'वेद और उसकी शाखाएँ का प्रथम' अध्याय देखें। इसका नूतन परिवर्धित संस्करण छप रहा है।

पण्डित गणपति शर्मा, पं० आर्य्यमुनि, पं० शिवशंकर काव्यतीर्थ और पं० रुद्रदत्त जी आदि संस्कृत के अच्छे पण्डित थे। परन्तु ये महाशय आर्यसमाज की संस्थाओं और समाजों आदि के प्रबन्धक न थे। पञ्जाब के कालेज अथवा गुरुकुल दल में ला० हंसराज और ला० मुंशीराम जी के पश्चात् जितने भी प्रबन्धक और अधिकारी हुए अथवा हैं, वे सब अंग्रेजी-प्रभाव-प्रभावित संस्कृत-ज्ञान-शून्य धनार्थी लोग हैं। यदि इन में कुछ दिन के लिए कभी कोई संस्कृतज्ञ, ऋषिभक्त हुआ भी है, तो उसे घुणाक्षरन्याय का फल समझना चाहिये। इन अंग्रेजी और उर्दू के उच्छिष्टभोजी लोगों को संस्कृत से क्या प्रेम हो सकता है। संयुक्त प्रान्त आदि में भी आर्यसमाज के कार्य प्रबन्धकों की प्रायः यही अवस्था है। इसीलिए दुःख से कहना पड़ता है कि अपने अनुगामियों के विश्वास-शून्य होने के कारण ऋषि की उत्पन्न की की हुई तरंग का वेग मन्द सा पड़ रहा हैं।

(प्रश्न) कालेज दल तो अपने अंग्रेज़ी स्कूलों के जाल के कारण उसी में फंसा हुआ संस्कृत का प्रेम खो बैठा था, क्या गुरुकुल दल भी वैसा ही हो गया है ?

(उत्तर) हां, गुरुकुल दल भी अब वैसा ही हो रहा है। जिस प्रकार दयानन्द कालेज प्रबन्धकर्तृसभा के अनेक प्रधान और सदस्य संस्कृत न जानने के कारण संस्कृत-प्रेम से वस्तुतः रिक्त हुए हैं, वैसे ही बहुत दिन से अब गुरुकुल दल की भी अवस्था हो रही है। गुरुकुल दल में से महात्मा मुंशीराम जी का धक्का समाप्त हो चुका है। गुरुकुल दल की सभा में संस्कृत-ज्ञान रखने वाले जो दो चार सदस्य हैं, उनकी बात कोई सुनता नहीं। इस का फल स्पष्ट है। गुरुकुल की पाठप्रणाली पूरी सफल नहीं हो सकी। गुरुकुल के अनेक सञ्चालकों को गुरुकुल में विश्वास न रहा था। उन्होंने अपने पुत्र, पौत्र, वहां नहीं पढ़ाये। गुरुकुल के अनेक उपाध्याय अपने पुत्रों को अंग्रेज़ी कालेजों में पढ़ाते रहे हैं। और अब तो ऐसे लोगों की संख्या इस दल में वृद्धि पर ही है। आचार्य रामदेव जी यद्यपि संस्कृत के पण्डित न थे, पर इनकी अटूट ऋषि-भक्ति के दिन भी अब गये। अब तो गुरुकुल दल भी अपने स्कूलों द्वारा पाश्चात्य सभ्यता की जड़ों को दृढ़ करने का एक साधनमात्र बन गया है।

(प्रश्न) ऐसी निराशामयी निशा में, अन्धकार की इस घोर रात्रि में, स्वार्थ की इस प्रवृद्धा रजनी में क्या कहीं त्याग, उत्साह और ज्ञान की आशारश्मि दृष्टिगत हो सकती है ? क्या संस्कृत-भाषा पुनर्जीवित हो जाएगी ?

(उत्तर) हां आशारश्मि दिखती है। पर उस के सूर्य का उदय भागीरथ-प्रयत्न के अनन्तर ही होगा। संस्कृत पुनर्जीवित होगी, ऐसा हमारा अटल विश्वास है। ऋषि के चरणचिन्हों पर चलते हुए इस जन्म का गत भाग हम ने इसी निमित्त अर्पण किया है। हमारा निश्चय है कि संस्कृत भारत की भाषा है, और भारत इसे अपनायेगा। दासता की शृङ्खला में शृङ्खलित भारतीय अंग्रेज़ी और हिन्दुस्तानी का चाहे कितना ही पक्ष कर लें, पर एक बार तो आर्य-वैभव दृष्टिगोचर होगा और शीघ्र होगा। इस के लिये निम्नलिखित उपाय करने होंगे।

१. प्रत्येक आर्यसमाज के सब अधिकारी श्रेष्ठ संस्कृत-ज्ञान-युक्त होने चाहियें।

२. आर्यसमाजों का लेख आदि का सब काम संस्कृत-मिश्रित आर्यभाषा में होना चाहिये।

३. आर्यप्रतिनिधि सभाओं के समस्त सदस्यों को संस्कृत बोलने का अभ्यास होना चाहिये।

४. सार्वदेशिक सभा के सब सदस्य संस्कृत के विद्वान् होने चाहियें।

५. आर्यसमाज का उपदेशक मण्डल संस्कृत और आर्षग्रन्थों का प्रौढ़ पण्डित होना चाहिये।

६. पूर्वोक्त पांच बातों को चलाने के लिये परोपकारिणी सभा अथवा सार्वदेशिक सभा को संस्कृत और आर्षविद्या की कुछ परीक्षाएँ चलानी पड़ेंगी। विशेष परिक्षाओं में उत्तीर्ण भाई ही आर्यसमाजों के अधिकारी आदि बनेंगे। इस से वृथा कलह भी थोड़ी सी शान्त हो जायगी और पदलिप्सु लोग आर्यसमाज के सेवक रह सकेंगे, अधिकारी नहीं।

७. आर्यसमाज को वे सब संस्थाएँ तत्काल बन्द कर देनी चाहियें, जो छः घण्टे के अध्यापन में ३ या ४ घण्टे संस्कृत और आर्ष ग्रन्थ नहीं पढ़ातीं।

८. यदि वर्तमान अधिकारी ऐसी संस्थाओं को बन्द न करें, तो किसी भी आर्य-पुरुष को ऐसी संस्था को भविष्य में एक कौड़ी भी दान न देना चाहिये।

९. आर्यसमाज और समस्त भारतीय आर्यों को यह राजनीतिक अन्दोलन करना चाहिये कि भारत की भाषा संस्कृत है।

१०. परोपकारिणी सभा को वैदिक यन्त्रालय में अन्य सब मुद्रण काम बन्द करके आर्ष-ग्रन्थ और श्री स्वामी जी के ग्रन्थ ही छापने चाहियें। इन ग्रन्थों का मूल्य अत्यल्प रखना चाहिए।

११. भारत में न्यून से न्यून एक सहस्र संस्कृत पुस्तकालय स्थापित होने चाहिएँ। उनमें संस्कृत के समस्त ग्रन्थ संगृहीत होने चाहिएँ। जो जो नए ग्रन्थ छपते जाएँ वे भी तत्काल वहां मंगाये जाएँ।

१२. आर्यसमाज और आर्यमात्र की शिक्षा के लिये केवल संस्कृत विद्यालय ही खोलने चाहिएँ। पुरातन काल में यह काम आर्य राजाओं की सहायता से होता था। उन के दान के शासन पत्र इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं। अब यह काम भारतीय जनता को करना होगा।

१३. भारत के देशी राज्यों की जहां और त्रुटियां दूर करनी होंगी वहां उन राज्यों में से अंग्रेजी भाषा के प्रभुत्व को दूर कराना भी एक आवश्यक अभीष्ट हो रहा है। इन राज्यों के कार्यालयों में सब व्यवहार संस्कृत और आर्यभाषा में कराने चाहियें। इन में आयुर्वेद के ही आतुरालय होने चाहियें। वहां सैकड़ों लोग आयुर्वेद पढ़ने के लिये भी संस्कृत पढ़ेंगे[१]।

१४. इस सतयुग के आदि में श्री ब्रह्मा जी ने संकृत में ही समस्त विद्याओं का उपदेश दिया। उन सब विद्याओं का अब भी उद्धार हो सकता है। इस के लिये वैदिक अनुसन्धान के अनेक बृहत् केन्द्र स्थापित होने चाहियें। उनके अध्यक्ष और कार्यकर्ता वेद, वेदाङ्ग, दर्शन, इतिहास, प्राचीन और नवीन भूगोल तथा पश्चिमीय लेखकों द्वारा उत्पन्न किए गए सब पूर्व-पक्षों के विशेषज्ञ होने चाहिएँ।

१५. लाखों रुपये व्यय करके भारत के उन घरों की खोज करनी चाहिए जहाँ अब भी

---

१. अब ये देशी-राज्य भारत-शासन में विलीन हो चुके हैं। अतः सम्पूर्ण भारत में समान उपाय ही वर्तने चाहिएं। भारत-शासन आयुर्वेद के प्रति उपेक्षादृष्टि कर रहा है। यह इसके तत्सम्बन्धी संचालकों के महान् अज्ञान का निदर्शनमात्र है।

अलभ्य हस्तलिखित संस्कृत ग्रन्थ सुरक्षित हैं। उन ग्रन्थों को एकत्र और सुसम्पादित करके शीघ्र मुद्रित करना चाहिए।

१६. भारतीय जनता को किसी ऐसे व्यक्ति को अपना धार्मिक या राजनीतिक नेता नहीं बनाना चाहिए जो संस्कृतविद्या-सम्पन्न आर्यशास्त्र-प्रवीण और आस्तिक अर्थात् वेद-विश्वासी न हो। ब्रह्मा जी, कपिल, सनत्कुमार, कृष्णद्वैपायन वेदव्यास, उद्योतकर, कुमारिल भट्ट, शङ्कराचार्य, दयानन्द सरस्वती आदि हमारे धार्मिक नेता हुए हैं। ब्रह्माजी, स्वायंभुव मनु, वैवस्वत मनु, इक्ष्वाकु, ययाति, मान्धाता, भरत चक्रवर्ती, दाशरथि राम, देवकीपुत्र कृष्ण, समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, और दयानन्द सरस्वती आदि हमारे राजनीतिक नेता हो चुके हैं। ये सब महात्मा, महानुभाव संस्कृत के पण्डित थे। वे ही आर्यावर्त के यथार्थ पथ-प्रदर्शक थे।

१७. उत्तर भारत की प्रान्तीय-भाषाओं यथा—पञ्जाबी, मारवाड़ी, गुजराती, मराठी और बंगाली आदि में जो अर्बी, फारसी और अंग्रेज़ी आदि के व्यर्थ शब्द सम्मिलित हो गये हैं, उन्हें प्रयोग में नहीं लाना चाहिए। उदाहरणार्थ—अगर, रब्ब, बरकत, काफी, बिल्कुल, मगर, लेकिन, टाईम, लैकचर आदि शब्दों का बहिष्करण होना चाहिये।

(प्रश्न) विदेशी भाषाओं के जो शब्द हमारी व्यावहारिक भाषाओं का अङ्ग बन गए हैं, उन्हें बाहर निकालना व्यर्थ है। अब तो वे हमारे हो गये हैं।

(उत्तर) जिस प्रकार नख और केश हमारे शरीर के अङ्ग सङ्ग होते हैं और हमारे शरीर में ही वृद्धि को प्राप्त होते हैं, तथापि उन्हें निरर्थक समझ कर हम समय समय पर उनका छेदन कराते रहते हैं, इसी प्रकार भारतीय दासता के काल में अपनी भाषा में मिले हुए विदेशी शब्दों का बहिष्कार बुरा ही नहीं, प्रत्युत पुण्य का कार्य है। जब हमारे पास यदि, ईश्वर, प्रथम, पर्याप्त, सर्वथा, परन्तु, समय और व्याख्यान आदि शब्द विद्यमान हैं, तो हम विदेशी अपभ्रंश के शब्दों का प्रयोग क्यों करें। हां, जो शब्द अभी वर्त्तमान संस्कृत वाङ्मय में उपलब्ध नहीं हुए, उनके स्थान में विदेशी शब्दों का प्रयोग कुछ काल के लिए कर लिया जाए तो इतनी हानि नहीं है। तनिक विचारो, यदि हम आर्य लोग संस्कृत शब्दों का अधिक प्रयोग नहीं करेंगे, तो और कौन करेगा। संस्कृत शब्दों का प्रयोग न करना तो मानव-जाति-द्रोह और भारत-देश-द्रोह करना है।

(प्रश्न) अनेक कथित आर्यसमाजी और श्री जवाहरलाल जी आदि कांग्रेस-पक्ष वाले कहते हैं कि आर्यभाषा में संस्कृत शब्दों की भरमार नहीं करनी चाहिये। क्या उनका कथन भी सङ्गत नहीं।

(उत्तर) हां, उन का कथन भी सङ्गत नहीं। उनका कथन तो भ्रान्तिपूर्ण है। उनके ऐसे कथन का कारण है, उनका पाश्चात्य-शिक्षा की दासता में पलना। क्या संस्कृत आर्यजाति की भाषा नहीं है, क्या संस्कृत से भारत की सब भाषाएँ नहीं निकली हैं, क्या संस्कृत इस देश से सहस्रों वर्ष से सम्बद्ध नहीं रही है, क्या संस्कृत की इस दीन-हीन दशा में भी बीस सहस्र संस्कृत ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हो रहे, क्या पुरातन रीति पर चलने वाले समस्त आर्य-परिवारों में विवाह सम्बन्धी साहे चिट्ठी अब भी संस्कृत में नहीं भेजी जातीं, क्या संस्कृत भाषा के स्रोत वेद-मन्त्रों द्वारा ही सब आर्यों के

संस्कार आदि नहीं होते[1], फिर जवाहरलाल जी आदि अंग्रेज़ी-मात्र पढ़े लिखे लोगों की संस्कृत से उदासीनता अज्ञानमात्र ही है। संस्कृत शब्द ही संसार-मात्र की भाषाओं के मूल शब्द हैं, अतः म्लेच्छ = अव्यक्त तथा अपभ्रंश शब्दों के स्थान में संस्कृत शब्दों का प्रयोग स्वर्ग का देने वाला है।

१८. व्यवहार और व्यापार में संस्कृत के उन शब्दों का जो कभी प्रयोग में आते थे, और अब विस्मरण से हो रहे हैं, पुनः प्रयोग आरम्भ करना चाहिए। धारा १४ में उल्लिखित अनुसन्धान केन्द्रों को ऐसे शब्दों की सूचियां समय २ पर प्रकाशित करनी चाहिएँ।

इत्यादि कतिपय बातें यहां दिग्दर्शनमात्र लिख दी हैं। भारतीय उत्थान के इस अभूतपूर्व काम के लिये भगीरथ-प्रयत्न करना पड़ेगा। पर प्रयत्न यदि एक बार हो जाये, तो फल अत्यन्त श्रेष्ठ होगा। दो सौ वर्ष तक भारत पर राज्य करने के अनन्तर अंग्रेज़ी शासक विस्मित होंगे कि उनका शासन निष्फल कर दिया गया है। उस समय संसार कहेगा कि ऋषि दयानन्द सरस्वती के अद्वितीय धक्के ने भारत को पुनः खड़ा कर दिया।

(प्रश्न) आर्यसमाजों के सदस्य और अधिकारीवर्ग संस्कृत पढ़ें, इस का कहां विधान है।

(उत्तर) पूर्व पृ० १८ पर पूर्ण संख्या ३५४ के ऋषिपत्र से एक वचन दिया गया है। उस में ऋषि कहते हैं—पाठशाला में "हमारे रईस लोगों में से कोई पढ़ता है।" इस का स्पष्ट तात्पर्य यही है कि आर्यसमाज के सदस्य और अधिकारी वर्ग संस्कृत अवश्य पढ़ें। इस से भी अधिक भावपूर्ण लेख उन के एक और पत्र में मिलता है—

"सन्धिविषय छप गया। अब आप लोग पढ़ने पढ़ाने का आरम्भ क्यों नहीं करते। और नामिक भी अब छपकर आता है।" (पूर्णसंख्या ३५१)।

यह पत्र परोपकारिणी सभा के प्रथम मन्त्री ला० रामशरणदास जी रईस मेरठ को भेजा गया था। ऋषि दयानन्द सरस्वती की यह उत्कट इच्छा थी कि आर्यसमाज के लोग संस्कृत का पठन पाठन आरम्भ कर दें।

(प्रश्न) यह बात इस काल में असम्भव दिखाई देती है।

(उत्तर) त्याग और तपस्या के विना कोई जाति अपने अस्तित्व को स्थिर नहीं रख सकती। यदि आर्यजाति सजीव रहना चाहती है, यदि आर्यसंस्कृति की संसार को अब भी आवश्यकता है, यदि ईश्वरीय-ज्ञान वेद का संसार में प्रचार अभीष्ट है, यदि ऋषि ऋण से उऋण होने का दृढ़ संकल्प आर्यमात्र के हृदय में निहित है तो इस कथित-असम्भव को भी सम्भव करना ही होगा।

मनुष्य में आलस्य का भाव अधिक है, अतः स्वयं आलस्य युक्त होने के कारण वह समझता है कि अमुक कार्य असम्भव है। पर यदि आलस्य का परित्याग करके उचित और निरन्तर परिश्रम किया जायगा तो निश्चय ही सिद्धि हस्तामलकवत् होगी।

---

१. अभी २ गांधी जी ने एक विवाह अपने बनाए हुए 'हिन्दुस्तानी' वचनों द्वारा करवाया है। (ट्रिब्यून, लाहौर, अगस्त २१, सन् १९४५) इस से बढ़ कर वैदिक पद्धति की अवहेलना और नहीं हो सकती। आर्य मर्यादाओं के नाश का जो काम कभी मुगल राजा औरंगजेब भी न कर सका, वही काम अब गांधी जी पूरा करना चाहते हैं। परन्तु ऐसा कदापि न हो सकेगा। वे कहते है कि 'इस समय एक ही वर्ण अतिशूद्र अथवा हरिजन रहे।' (ट्रिब्यून, सितम्बर २०, १९४५)।

२. वेदमहत्त्व और वेदभाष्य

ऋषि दयानन्द सरस्वती वेद को संसार का सब से बड़ा निधि समझते थे। उन के काल में वेद और वैदिक शिक्षा भारत से लुप्त सी हो रही थी। इस त्रुटि को दूर करने के लिए ऋषि ने अनेक संस्कृत पाठशालाएँ स्थापित कराई। इन में वेदाध्यापन अनिवार्य था (पूर्ण सं० ९), परन्तु उनका वेद-प्रचार का काम पाठशालाओं तक ही सीमित नहीं रहा।

वेदभाष्य का सूत्रपात—पत्र पूर्ण संख्या १७ पूना से लिखा गया है। उस की तिथि सम्वत् १९३२ श्रावण शुक्ला ८ मंगल लिखी है। इस पत्र में सब से प्रथम वेदभाष्य का उल्लेख है। तभी श्री महादेव गोविन्द रानडे आदि सज्जनों ने वेदभाष्य के निमित्त धन एकत्र करने का प्रयास किया।

इस संग्रह के अनेक पत्रों से ज्ञात होगा कि श्री स्वामी जी का अधिकांश समय वेदभाष्य के कार्य में ही व्यतीत होता था। यह काम उनके जीवन का मुख्य ध्येय बन गया था[१]। इस से अधिक प्रिय और पुनीत कर्म उनकी दृष्टि में और कोई नहीं था। वे चाहते थे कि मनुष्यमात्र वेद के अध्ययन में प्रवृत्त हो जाएँ। वेदज्ञान के सम्बन्ध में फैलाई गई भ्रान्तियां संसार से दूर हों। विज्ञापन पूर्ण संख्या २५ इसी महान् उद्देश्य से दिया गया था।

पहले ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका छपी। फिर ऋग्वेदभाष्य छपना आरम्भ हुआ। लाहौर से ६ जून १८७७ पूर्ण संख्या ३६ के पत्र में श्री स्वामी जी पं० गोपालरावहरि देशमुख को लिखते हैं—"मैं आप के परामर्श के अनुकूल करने का इच्छुक हूँ और जैसा आप चाहते हैं, मैं शुक्ल यजुर्वेद का भाष्य आरम्भ करूंगा।" १४ मई १८७७ को श्री स्वामी जी ने पंजाब सरकार को वेदभाष्य की सहायता के लिए एक पत्र लिखा था[२]। यह पत्र अस्वीकार होना ही था। अगस्त में श्री स्वामी जी ने सरकारी पत्र का खण्डन किया[३]।

(प्रश्न) सरकार ने श्री स्वामी जी को सहायता क्यों नहीं दी।

(उत्तर) १. सरकार यह नहीं चाहती थी कि श्री स्वामी जी के मार्ग से भारत का उत्थान हो।

२. यदि श्री स्वामी जी की वेदभाष्य-सारणि सत्य मान ली जाती तो इङ्गलैण्ड के अन्दर संस्कृताध्यापन का जो प्रकार चलाया जा रहा था, वह असत्य सिद्ध होता। उस समय सरकार को निश्चय हो जाता कि पाश्चात्य भाषा-विज्ञान निर्मूल है।

३. मैकाले प्रदर्शित सरकारी नीति के पोषकजन भारतीय युवकों के दास बनने का जो मार्ग निकाल रहे थे, वह निष्प्रयोजन हो जाता। तब रामकृष्णगोपाल भण्डारकर, राजेन्द्रलाल मित्र आदि लोग पाश्चात्य लेखकों का उच्छिष्ट खाकर भारतीय परम्परा के खण्डन में प्रवृत्त न होते और वेद को पौरुषेय और कुछ ही सहस्र वर्ष पहले का बना हुआ न बताते।

उस काल की सरकार ने समझ लिया था कि दयानन्द सरस्वती का मार्ग भारतीय हृदय में आर्यगौरव का, आर्य-मान का भाव उत्पन्न कर देगा, अतः सरकार ने ऋषि दयानन्द सरस्वती को कोई सहायता न दी। परन्तु इतना धन्यवाद का स्थान है कि सरकार ने उस समय ऋषि के मार्ग में इस से अधिक कोई रोड़ा नहीं अटकाया।

---

१. पत्र पूर्ण संख्या ३४८, ४२१, ४५४, ५४४ ॥ २. (पत्र-सूचना) पूर्ण संख्या ६०८। ३. पूर्ण संख्या ४१।

फरुखाबाद से सहायता—वेदभाष्य के काम के लिए सरकार से सहायता प्राप्त न होने पर ऋषि निराश नहीं हुए। उन का काम शनैः २ वृद्धि को प्राप्त हो रहा था। तीसरी और चौथी अक्तूबर १८७९ को फरुखाबाद समाज ने एक सहस्र रुपया वेदभाष्य और यन्त्रालयादि की सहायता में दिया[1]। पुनः फरुखाबादस्थ सज्जनों ने एक भारी सहायता वेदभाष्य के लिये दी[2]। फरुखाबादस्थ आर्यजनों की इस दूरदर्शिता के लिये विद्वन्मण्डल उन का चिरऋणी रहेगा।

लगभग २५ सितम्बर १८८० को श्री स्वामी जी लिखते हैं—

"मैं जानता हूं बहुत घूमने में हर्ज होगा[3]।"

ऋषि अनुभव कर रहे थे कि अधिक घूमने से उनके वेदभाष्यादि के काम में बाधा पड़ती है। तदनुसार ऋषि ने शीघ्र ही अपना प्रचार-क्रम बदला। वे एक २ स्थान में अधिक दिन वास करने लगे। यदि उनका देहान्त इतना शीघ्र न होता तो संवत् १९४३ तक चारों वेदों का भाष्य पूरा हो जाता। ऋषि भाद्र वदी ५ सं० १९४० को मुंशी समर्थदान को लिखते हैं—

"परमेश्वर की कृपा से १ वर्ष में सब ऋग्वेदभाष्य पूरा हो जायगा और एक वा डेढ़ वर्ष साम और अथर्व में लगेगा। (पत्र पूर्णसंख्या ५७०)

परन्तु ऋषि के अकस्मात् दिवंगत हो जाने से यह महान् काम अधूरा ही रह गया।

(प्रश्न) आर्यसमाज का इस विषय में अब क्या कर्तव्य है।

(उत्तर) आर्यसमाज में तो अब घर घर में वेदभाष्यकार हो रहे हैं। पं० क्षेमकरणदास, पं० तुलसीराम, पं० आर्यमुनि, पं० शिवशंकर काव्यतीर्थ, पं० राजाराम, पं० हरिशंकर, पं० जयदेव, पं० द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री और पं० बुद्धदेव जी ने वेदों अथवा वेद के अंशों पर अपने २ भाष्य रचे हैं। मास्टर दुर्गाप्रसाद जी ने अंग्रेजी में ऋग्वेद के एक बड़े भाग का अनुवाद निकाला था। इन सब के भाष्यों में अनेक उपादेय बातें मिलती हैं। इन के परिश्रमसे भावी कार्य में बहुत लाभ होगा। परन्तु पूर्ण सुविधाएँ न होने से इन सब ही के काम में त्रुटियां भी भारी रही हैं। इन महानुभावों का पहला काम यह था कि वेदों तथा ऋषि दयानन्द सरस्वती की भाष्यशैली पर जो आक्षेप पाश्चात्य पद्धति के लेखकों ने किए हैं, उनका परिहार करते। ऐसा करते हुये इन की विद्या परिमार्जित हो जाती। तब इन का परिश्रम भी अधिक मूल्यवान होता। इन महाशयों ने वैदिक वाङ्मय का पूरा अवगाहन भी नहीं किया। आर्यसमाज ने इन्हें पूरी आर्थिक सहायता नहीं दी।

अब आर्यसमाज का यही मुख्य कर्तव्य है कि लाखों रुपये एकत्र करके अपने अनुसन्धालयों द्वारा वेदों पर किये गए नूतन आक्षेपों के उत्तर दिलवाये। उस के पश्चात् ऋषि के भाष्य की पूर्ति हो सकेगी। दुःख से कहना पड़ता है कि पूर्ण विद्वान वेदभाष्य कर सकने वाले पण्डितों की प्राप्ति के लिये भी आज विज्ञापन दिये जाते हैं। पुष्प अपनी सुगन्धि से स्वयं पहचाना जाता है। पुष्प के पास लोग चलकर जाते हैं। इस प्रकार वेदभाष्य कर सकने वाले के पास लोगों को स्वयं जाना पड़ेगा। परन्तु अभी भारतीयों की मनोवृत्ति ऐसी नहीं बनी है। यही कारण है कि इस काम में यथार्थ सफलता नहीं हो रही।

---

१. भारतसुदशाप्रवर्तक, अक्टूबर सन् १८७६, पृ० ७। तथा पत्र पूर्णसंख्या १६१ तथा ३३४।

२. देखो पत्र पूर्णसंख्या २५१।

३. पत्र पूर्ण संख्या २८०।

वेद-प्रचार—वेद का प्रचार तो पहले की अपेक्षा अब कुछ अधिक हो रहा है, परन्तु ध्येय बहुत दूर है। हम उस से लाखों कोस परे हैं। मूल वेद और ऋषिकृत वेदभाष्य की लाखों प्रतियां प्रतिवर्ष भारत में बिकनी चाहियें। अभी तक तो एक वर्ष में मूल वेद की तीन चार सहस्र प्रतियां भी भारत में नहीं बिकती हैं। लोग अन्य सब पदार्थों पर धन व्यय कर सकते हैं, पर वेद पर धन व्यय नहीं करते। ऋषि दयानन्द सरस्वती प्रणीत सत्यार्थप्रकाश की लाखों प्रतियां अब तक बिक चुकी हैं, परन्तु ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका की, जो ऋषि की एक अपूर्व रचना है, बीस सहस्र से अधिक प्रतियां आज तक नहीं बिकीं। आर्यसमाज के लिए यह भी गम्भीर विचार का एक विषय है।

(प्रश्न) गांधी जी लिखते हैं—"मैं केवल वेद को ही अपौरुषेय नहीं मानता हूं। मैं तो बाइबल, कुरान और जिन्दावस्ता को भी वेदों की तरह ईश्वरप्रेरणा का फल मानता हूं।"
(नवजीवन, ७ अक्तूबर सन् १९२९ सत्यनिर्णय, पृ० ५१ पर उद्धृत।)

(उत्तर) श्री गांधी जी तो अपने अन्दर भी हजरत मूहम्मद और हजरत ईसा ऐसी ईश्वर-प्रेरणा मानते हैं। वे भले ही ऐसा मानें और बाइबल और कुरान को ईश्वर-प्रेरणा का फल अथवा अपने को ईश्वर-दूत समझें, परन्तु वैदिक विद्वान ऐसा नहीं मान सकते। गान्धी जी की अनुभव की हुई ईश्वर प्रेरणाएँ प्रायः परस्पर विरुद्ध और प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सर्वथा विपरीत पड़ती हैं। पीछे से वे कह देते हैं कि उन से हिमालय-सदृश महती भूल हुई है। यह अच्छी ईश्वर-प्रेरणा है कि उस में स्पष्ट ही विरोध और भूल हो। यह भी स्पष्ट है कि बाइबल, कुरान और गांधी जी के विचारों में शतशः परस्पर विरुद्ध है बातें हैं। अतः वे सब ईश्वर प्रेरणा नहीं हो सकती हैं। इतनी बात से ही पाठक समझ सकते हैं कि श्री गांधी जी को इस विषय का कुछ भी ज्ञान नहीं है। यदि उन्हें ज्ञान होता तो वे ऐसी असम्बद्ध बातें न करते। देखो वेद संसार की किसी भी और कभी भी बोली जाने वाली भाषा में नहीं हैं। उनकी वेद से क्या तुलना हो सकती है। इस लिये संसार में जो वेद का स्थान है वह अन्य किसी ज्ञान का नहीं है। गांधीजी का वेद सम्बन्धी यह विचार बाललीलामात्र ही है।

(प्रश्न) क्या गांधी जी अपने को पैगम्बर अथवा ईश्वर-दूत समझते हैं।

(उत्तर) स्पष्ट तो वे ऐसा नहीं कहते, पर जब वे बहुधा ऐसा लिखते हैं कि उनको ईश्वर-प्रेरणा होती है, तो अन्दर से वे अपने को पैगम्बर ही समझते हैं। वे अपने को वेदों से बहुत ऊँचा समझते हैं और इसी लिए वैदिक आज्ञाओं का तिरस्कार करते हैं।

(प्रश्न) पाश्चात्य भाषा-शास्त्री तो सिद्ध करते हैं कि वेद भी एक बोली गई भाषा में है।

(उत्तर) वे भी कोरी निराधार कल्पना ही करते हैं। उन्हें आर्य इतिहास का ज्ञान नहीं है। यदि उन्हें सहस्रों वर्ष के आर्य इतिहास का ज्ञान होता, तो वे ऐसी असत्य कल्पनाएँ न करते।

यह विषय अत्यन्त जटिल और विस्तृत है, अतः इसका यहां वर्णन नहीं हो सकता। परन्तु इस विषय का विस्तृत उल्लेख हमने अपने अपने भारतवर्ष के इतिहास में कर दिया है।

३. आर्ष-ग्रन्थ और आर्य-संस्कृति

आर्ष-ग्रन्थों के सम्बन्ध में तो आर्यसमाज बहुत उदासीन है। आर्यसमाज ने अनेक गुरुकुल चलाए, पर आर्ष-ग्रन्थों द्वारा साङ्गोपाङ्ग वेद-शिक्षा का प्रबन्ध कभी भी नहीं किया। यह सत्य है कि

आर्ष-ग्रन्थों के श्रेष्ठ अध्यापकों का इस समय अभाव सा है, परन्तु श्रेष्ठ अध्यापक विपुल धन-व्यय से ही बनेंगे। उन्हें, यदि वे गृहस्थ हैं, और सारा जीवन वेद के अध्ययन में अर्पण कर रहे हैं तो वेतन ३०० या ४०० रुपये मासिक से न्यून नहीं देना होगा। फिर उन्हें स्वतन्त्र स्वाध्याय के लिये समय भी बहुत मिलना चाहिये। वे तो सारे दिन में दो घण्टे ही अध्यापन कार्य करेंगे।

(प्रश्न) इतना धन कहां से आएगा।

(उत्तर) हम पहले ही लिख चुके हैं कि आर्यसमाज को प्रधानता से अंग्रेजी शिक्षा देने वाली सब संस्थाएं बन्द करनी पड़ेंगी। उनका सारा रुपया अथवा जिस शक्ति से उनके लिये रुपया आता था, वह रुपया और वह शक्ति संस्कृत विद्यालयों के सञ्चालन में लगानी होगी। ऐसे विद्यालय एक-एक प्रान्त में एक दो से अधिक नहीं होने चाहियें। फिर सब काम चल सकेगा। वेद और आर्ष-ग्रन्थों का भूरि प्रचार होगा।

(प्रश्न) प्रत्येक नगर या ग्राम के आर्य-समाज की यह इच्छा होती है कि उनके अधिकार में भी कोई संस्था रहे।

(उत्तर) यह इच्छा स्वार्थवश हुई है। अनेक लोग उन संस्थाओं के सञ्चालक बन कर अपना स्वार्थ पूरा करते हैं। उनको ऋषि दयानन्द सरस्वती के ध्येय का कोई ध्यान नहीं। और कई भोले लोग तो देखा देखी ऐसा कर रहे हैं। उन का दोष अधिक नहीं। आर्य-समाज को अपनी पूर्ण रुचि वेदादि शास्त्रों की ओर ही करनी पड़ेगी। ऋषि दयानन्द सरस्वती ने अपने स्वीकारपत्र में यह स्पष्ट लिखा है कि परोपकारिणी सभा को आर्ष-ग्रन्थों का प्रकाशन करना चाहिये'। इस विषय में इस सभा ने अभी तक कोई स्तुत्य कार्य नहीं किया। ऋषि दयानन्द सरस्वती सदा आर्ष-ग्रन्थों को पढ़ते रहते थे। उन्हें उनकी आवश्यकता प्रतीत होती थी। पर परोपकारिणी सभा के अधिकांश सदस्य इस विषय में कोरे हैं, उन्हें अब कौन समझाए।

(प्रश्न) संस्कृति किसे कहते हैं।

(उत्तर) किसी जाती के सर्वोच्च और दिव्य-पुरुषों के सर्वपुनीत और श्रेष्ठतम विचार वा उन का ज्ञान-समूह जब मनुष्यों में व्यवहार में आता है तो उसे संस्कृति कहते हैं। संसार और आर्य-जाति का श्रेष्ठतम ज्ञान वेद है। वह ज्ञान मनुष्य के मस्तिष्क की उपज नहीं। वह सर्वज्ञ सर्वात्मा ईश्वर का ज्ञान है और शब्द, अर्थ, सम्बन्ध रूप से अनादि है। उसका ज्ञान प्रत्येक मनुष्य को होना चाहिये। इस समय उस ज्ञान की प्रतिनिधि आर्यजाति है।

वेद ज्ञान से उतर कर आर्ष-ज्ञान का स्थान है। ऋषि अर्थात् 'क्रान्तदर्शी' त्रिकालज्ञ लोग ईश्वर तो नहीं, पर मनुष्यों से सर्वथा ऊपर होते हैं। वात्स्यायन मुनि न्यायभाष्य में लिखते हैं—

ऋष्यार्यम्लेच्छानां

अर्थात् ऋषि, आर्य और म्लेच्छों का। इससे ज्ञात होता है कि इस भूतल पर ऋषि एक पृथक् ही श्रेणी हैं। वे आर्य और म्लेच्छों से बहुत उच्च हैं। ऐसे ऋषि ब्रह्मा, सनक, सनन्दन सनत्कुमार, स्वायम्भुव मनु, कपिल और हिरण्यगर्भ आदि इस सतयुग के आरम्भ से होते आये हैं।

---

१. तथा देखो, पत्र पूर्ण संख्या ५६३, उपदेश ५।

उन्होंने भी वेद से ही सारे ज्ञान लिये। उनकी योगज शक्ति उनकी सहायक थी। उन ऋषियों ने वेद के आश्रय पर जो ज्ञान और व्यवहार मनुष्यमात्र को सिखाया, वही वस्तुतः संसार की वास्तविक संस्कृति है। उसी संस्कृति का पुनरुद्धार करने वाले भगवान् दयानन्द सरस्वती थे।

(प्रश्न) श्री जवाहरलाल जी कहते हैं—अब पुरानी बातों को, पुरानी संस्कृति को छोड़ो। अब एक नई संस्कृति उत्पन्न की जाएगी।

(उत्तर) वे अपने अल्पज्ञान के कारण ही ऐसा कहते हैं। उन्होंने केवल पाश्चात्य-विचार का ही थोड़ा सा अध्ययन किया है। प्राचीन भारतीय इतिहास जो यहां की संस्कृति का परिचायक है, उन्होंने नहीं पढ़ा। वे तो आर्यों को भारत का आदि वासी ही नहीं समझते। उन्हें वेद के महत्व का अणुमात्र भी ज्ञान नहीं है। अतः उनका ऐसा कथन विद्वानों के सम्मुख उपहासास्पद है। जवाहरलाल जी ने आज तक एक भी स्वोपज्ञ विचार प्रकट नहीं किया। उन्हों ने तो सोवियट रूस आदि का ही अनुकरण करके कुछ बातें कही हैं। मौलिक विचार रखने के अभाव में वे नवीन संस्कृति उत्पन्न करने का स्वप्न लेते हैं।

वस्तुतः संस्कृति वैदिक ही है और शेष नाममात्र की संस्कृतियां अथवा उस का अपभ्रंश हैं।

जवाहरलाल जी ने तो अपनी कन्या को भी इङ्गलैंड में रखकर केवल अङ्गरेजी का ही अधिक अभ्यास कराया है। न वे आप संस्कृत पढ़े और न उन्होंने अपनी एकमात्र कन्या को संस्कृत पढ़ाई! वे संस्कृत के प्रति अपने कर्तव्य को अथवा संस्कृत के आनन्द को क्या जान सकते हैं। मनु ने सत्य कहा है—

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति।
तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते॥

यह पुरानी भारतीय संस्कृति ही है जो संसार को फिर शान्ति दे सकती है, जो मानव के शरीर और मन को नीरोग कर सकती है, तथा जो वास्तविक दासता से मनुष्य को निकाल सकती है। जिन लोगों का मन कलुषित पाश्चात्य विचारों की दासता में जकड़ा हुआ है, वे प्राचीन भारतीय संस्कृति को क्या समझेंगे।

(प्रश्न) आर्य संस्कृति यदि संसार-उपकारिणी होती, तो उसका ह्रास क्यों होता। प्रतीत होता है कि इस संस्कृति की कोई उपादेयता नहीं थी, अतः यह क्षीण हो गई। अब यह जाग्रत नहीं होगी।

(उत्तर) यह बात हास्यास्पद है। क्या तुम कभी रोगी नहीं हुए। क्या स्वास्थ्य अनुपकारी होता है कि रोग आ जाता है। नहीं। हम किसी ज्ञात अथवा अज्ञात भूल से स्वास्थ्य खो बैठते हैं। परन्तु रोगी होने पर हम चिकित्सा अवश्य करते हैं। क्या तुम रोगी होने पर अपनी चिकित्सा नहीं करते। इसी प्रकार सत्य समझो कि अनेक कारणों से आर्यसंस्कृति रोगग्रस्त हो गई थी। इसका रोग साध्य है, असाध्य नहीं। अतः संस्कृति के समझने वालों का यह प्रधान कर्त्तव्य है कि वे इस संस्कृति को रोगमुक्त करें। ऋषि दयानन्द सरस्वती का जन्म ही इस बात के लिए हुआ था। यदि इस अज्ञानान्धकार के युग में ऋषि ऐसा एक सतयुगीन पुरुष जन्म धारण कर सकता है, तो निश्चय है कि उसके चलाए हुए मार्ग को समझ कर और सहस्रों व्यक्ति भी उसी काम में लगेंगे। ऋषि कृपा से सैकड़ों

लोग इस काम में लग रहे हैं। अतः यह संस्कृति निश्चित ही फिर फैलेगी। इसी बात का परिणाम है कि गांधी जी और जवाहरलाल जी की निर्मूल बातों का खण्डन करने के लिए हम कृत-संकल्प हुए हैं।

(प्रश्न) आर्य संस्कृति में आर्षग्रन्थों का इतना आदर क्यों है।

(उत्तर) ऋषियों का ज्ञान बाह्य इन्द्रियों की सीमाओं से परे हो जाता है। वे क्रान्तदर्शी और प्रायः त्रिकालज्ञ हो जाते हैं। उनका सारा उपदेश मानव के हितार्थ होता है। वह वेद का व्याख्यानमात्र ही होता है। उस में भ्रान्ति नहीं होती। वह इस लोक और परलोक से सम्बन्ध रखता है। वर्तमान मनुष्य का विचार अनुभव और प्रयोग का फल है। इसी लिए उसमें पदे पदे भ्रान्ति है। परन्तु ऋषि इससे ऊपर हैं। जो कोई आर्य संस्कृति को पहचानेगा, उसे ऋषि दयानन्द सरस्वती के कथन की सत्यता ज्ञात हो जाएगी। ऋषियों के पश्चात् मुनियों के ग्रन्थ हैं। मुनियों के ग्रन्थ उपादेय तो होते हैं परन्तु उनमें यत्रतत्र भूल रह सकती है। वे क्रान्तदर्शी नहीं होते। इसके पश्चात् मनुष्य-रचित ग्रन्थों का स्थान है। वर्तमान सारा संसार केवल इन्हीं के आश्रय पर चलता है, अतः दुःख पा रहा है।

(प्रश्न) वेद और आर्ष-ग्रन्थों का मान गत २० वर्ष में भारत में बहुत ही न्यून हो गया है। इस का क्या कारण है।

(उत्तर) इस का एक कारण अंग्रेजी शिक्षा है। आज भाषा साहित्य पर भी अंग्रेजी की गहरी छाप पड़ चुकी है। अंग्रेजी अथवा भाषा का कोई ग्रन्थ उठाओ, उस में आप को कहीं न कहीं यह भाव अवश्य मिलेगा कि मनुष्य उन्नति कर रहा है। वह पहले युगों में थोड़ा उन्नत था और अब दिन दिन अधिक उन्नति कर रहा है। प्रारम्भ से इस विचार में पले हुए लोग सत्य से बहुत दूर हो गये हैं। इसी लिए उन के हृदय में पुरातन ज्ञान का आदर न्यून हो रहा है।

इस का एक दूसरा कारण है गान्धी-वाद। आर्यजाति सदा से शब्दप्रमाण को मानने वाली रही है। गांधी जी ने अंग्रेजी शिक्षा से प्रभावित होने के कारण शब्द-प्रमाण की अवहेलना की है। गान्धी जी विकास-सिद्धान्त को मानने वाले हैं। वे लिखते हैं—

सम्पूर्ण अन्य बातों की तरह मजहबी विचार भी उसी विकास-सिद्धान्त के अधीन हैं, जो कि इस सृष्टि की हर एक वस्तु पर लागू हैं। (यङ्ग इण्डिया, ४ सितम्बर सन् १९२४।)

इस असत्य को मानने के कारण ही गान्धी जी ने अनेक भूलें की हैं। सामूहिक रूप से तो संसार वस्तुतः ह्रास की ओर ही जा रहा है। गत दो सौ वर्ष में जो कतिपय यन्त्र बने हैं, ये पुरातन-ज्ञान का एक अंशमात्र भी नहीं है। इन्हें देख सुन कर केवल पाश्चात्य शिक्षा में पला व्यक्ति आश्चर्य-चकित हो जाता है। वह विकास-सिद्धान्त को मानने लगता है। उसे संसार के सहस्रों वर्ष पुराने ज्ञान का पता ही नहीं है। वह युग युग के ह्रास से सर्वथा अपरिचित है। यही हेतु है कि प्राचीन ज्ञान को न जानने के कारण गान्धी जी ने उसकी प्रामाणिकता नष्ट करने का पूरा प्रयत्न किया है। जब आर्य लोग आर्य इतिहास को भले प्रकार पढ़ेंगे, तो उन्हें गांधी जी का मत सर्वथा निःसार प्रतीत होगा। वे समझेंगे कि गान्धी जी ने यह भारी अनिष्ट किया था। साधारण व्यवहार तो मनुष्य बुद्धि से चल सकता है, पर उच्च सत्य के जानने में मनुष्यबुद्धि प्रमाण नहीं है। वह तो वेद और आर्षज्ञान द्वारा जाना जा सकता है।

शब्द-प्रमाण को मानने का भाव आर्यसमाज में भी कुछ अल्प हुआ है। उसका कारण है श्री विश्वबन्धु जी ऐसे व्यक्तियों का आर्यसमाज की संस्थाओं में घुसे रहना। अपनी बुद्धि को ही प्रमाण मानने वाले बाबू लोग आर्यसमाज की निर्बलता का कारण बने हुए हैं। ऋषि दयानन्द सरस्वती के आदर्श को समझने वाले व्यक्तियों को इन से सावधान रहना चाहिए।

४. अंग्रेजी शिक्षा की शालाएं खोलने के विरोधी ऋषि दयानन्द सरस्वती

पूर्वमुद्रित वचनों में पूर्णसंख्या ३५६ तथा ४९९ के कतिपय वाक्य ध्यान देने योग्य है। इन के साथ निम्नलिखित वचनों पर भी ध्यान देना चाहिए—

[३५६] अंग्रेजी का प्रचार तो जगह २ सम्राट् की ओर से जिन की यह मातृभाषा है भले प्रकार हो रहा है। अब इस की वृद्धि में हम तुम को इतनी आवश्यकता नहीं दीखती। और न सम्राट् के समान कुछ कर सकते हैं।

[३५९] जैसे मिशन स्कूलों में लड़के अपने अन्य स्वार्थ सिद्धि के लिए बाईबल सुन लेते हैं और कुछ ध्यान नहीं देते, वैसे जो संस्कृत सुन लिया तो क्या लाभ होगा।

अंग्रेजी शिक्षा की शालाओं का इस से अधिक बलवत्तर विरोध और क्या होगा। आर्य-सामाजिक लोगों को इस पर ध्यान देना चाहिए।

(प्रश्न) जिस प्रकार की शिक्षा के ऋषि दयानन्द सरस्वती इतने विरोधी थे, वही शिक्षा आर्य-समाज ने क्यों अपनाई।

(उत्तर) यह दुर्भाग्य का विषय है कि ऋषि के निधन के पश्चात् उनकी पवित्र स्मृति में आर्यसमाज लाहौर, पञ्जाब ने वही काम किया, कि जिसका विरोध ऋषि तीव्र शब्दों में करते रहे। उसी कुकल्पना का फल आज प्रत्यक्ष दिखाई देता है। ऋषि दयानन्द सरस्वती की स्मृति में स्थापित की गई संस्था में ही वेद और आर्ष–ग्रन्थों के अनेक विरोधी काम करते हैं। जब कोई सच्चा आर्यपुरुष इस पर आपत्ति उठाता है, तो अनेक कथित-आर्यसमाजी जो प्रच्छन्न बौद्ध हैं और जो प्रबन्धक बने बैठे हैं, उसका मुख बन्द करने का यत्न करते हैं।

(प्रश्न) क्या भारत की भावी शिक्षा संस्कृत माध्यम द्वारा होगी।

हां, होगी पर इस के लिए आर्यों का सारी राजनीतिक शक्ति अपने हाथों में लेनी होगी। उन्हें "इण्डियन नैशनल कांग्रेस" को या तो समाप्त करना पड़ेगा या इस की मनोवृत्ति भारतीय बनानी होगी।

(प्रश्न) क्या कांग्रेस की मनोवृत्ति भारतीय नहीं है ?

(उत्तर) नहीं है, सर्वथा नहीं है। कांग्रेस वालों ने ही "नैशनल" शिक्षा के नाम से अंग्रेज़ी शिक्षा की शालाएँ खोली थीं। श्री गान्धी जी विद्यामन्दिर योजना की आड़ में साक्षात् अर्बी फारसी का प्रचार कर रहे हैं। सन् १९४२ में पं० जवाहर लाल ने एक विदेशी पत्रकार से कहा था कि भारत में अंग्रेज़ी तो बनी ही रहेगी। ये बातें प्रमाणित करती हैं कि जब कांग्रेस के नेताओं की नीति अभारतीय है तो कांग्रेस की नीति भी वैसी ही होगी।

(प्रश्न) अब तो भारत में ये स्कूल ही चलेंगे। छात्र और छात्राओं में जो विलासिता का

भाव इस वर्तमान शिक्षा ने, कार्लमार्क्स के सिद्धान्तों ने और पश्चिम तथा विशेष कर रूस के संसर्ग ने उत्पन्न कर दिया है वह ही प्रबल रहेगा।

(उत्तर) यह सत्य है कि इस शिक्षा ने युवक और युवतियों को विलासिता के कराल गाल में अत्यधिक धकेला है। हम देखते हैं कि इसी बात के परिणाम स्वरूप अनेक बी० ए० एम० ए० युवतियां प्रतिवर्ष आत्मघात कर रही हैं। परन्तु यह तो सब कोई जानता है कि यह मार्ग मृत्यु का मार्ग है। आर्यसमाज को तो इस मार्ग से बहुत परे रहना चाहिए। कन्याओं के स्कूल और कालेज खोल कर, जहां आधे से अधिक अध्यापकवर्ग कार्लमार्क्सवादी कम्यूनिस्टों का है आर्यसमाज ने एक अकथनीय अघ किया है वह ऋषिमार्ग से पतित हुआ है।

(प्रश्न) ऋषि दयानन्द सरस्वती वर्तमान स्कूलों के सम्बन्ध में क्या आदेश करते।

(उत्तर) ऋषि के भाव उन के एक पत्र से जाने जा सकते हैं। वे पत्र पूर्णसंख्या ४६१ में लिखते—

"पाठशाला में संस्कृत पढ़ के कितने विद्यार्थी समर्थ हुए। अथवा अंग्रेजी फारसी में ही व्यर्थ धन जाता है। सो लिखो। **'जो व्यर्थ ही हो तो क्यों पाठशाला रखी जाय।'** पृ० ३७६

इस पत्र से स्पष्ट ज्ञात होता है कि ऋषि प्रधानतया अंग्रेजी शिक्षा देने वाली देने वाली शालाएँ खोलने के घोर विरोधी थे। ऋषि वर्तमान समस्त स्कूलों और कालेजों को बन्द करा देते। श्रेष्ठ फल के अभाव में जब ऋषि ने अपनी खोली या खुलवाई अनेक शालाएँ बन्द कर दीं, तो वे इन स्कूलों के बन्द कराने में लेश भर भी संकोच न करते। आर्यसमाज उन के मार्ग से सर्वथा विपरीत जा रहा है।

(प्रश्न) स्कूल और कालेज संचालक आर्यसमाजी तो बड़े २ लम्बे व्याख्यान देते हैं कि स्कूलों द्वारा आर्यसमाजों का बड़ा प्रचार हुआ है। क्या यह सत्य नहीं ?

(उत्तर) इन स्कूलों और कालजों में से घुणाक्षरन्याय से कभी २ कोई अच्छा संस्कृत विद्वान् तथा आर्यसंस्कृति का अनन्य सेवक उत्पन्न हुआ है। अधिकांश लोग तो पाश्चात्य विचारों के दास ही उत्पन्न हुए हैं। अतः इन स्कूलों की प्रशंसा में व्याख्यान देना अपनी दास-मनोवृत्ति का प्रकाश करना है।

प्यारे भारतीयों, ऋषियों की सन्तानों, राम और कृष्ण के नाम लेवाओ, मत इधर उधर भटको। मार्ग तो एक ऋषि दयानन्द सरस्वती का ही बताया हुआ है। यह मार्ग यद्यपि कठिन, अंग्रेजी शासन के बन्दी-गृहों में जाने की अपेक्षा शतगुण अधिक कठिन है, पर है यही एक मार्ग। इसके लिए कटिबद्ध होना पड़ेगा।

९ ऋषि दयानन्द सरस्वती और देशी रियासतें

ऋषि दयानन्द सरस्वती जान चुके थे कि अंग्रेजी शिक्षा के कुप्रभावों के कारण देशी राज्यों में से आर्य आदर्श लुप्त हो चुके हैं। वे रियासतों के प्रबन्धकों की त्रुटियाँ बहुत भले प्रकार जानते थे, पर वे चाहते थे कि—

(क) आर्य राजा संस्कृत पढ़कर प्राचीन आदर्श को पुनर्जीवित करें।

(ख) आर्य राजाओं के समस्त राज्य-संचालक संस्कृत पठित और इसी आदर्श के मानने वाले हों।

(ग) राज वर्ग के बालक आरम्भ से आर्य शिक्षा प्राप्त करें और अंग्रेजी आदर्श न सीखें।

(घ) रियासतों में मनु का धर्मशास्त्र प्रचलित हो और नया कनून न चले।

(ङ) रियासतें आर्य संस्कृति की रक्षक बनें।

(च) रियासतें नष्ट न हो जायें। उनका अस्तित्व बना रहे। उन में प्रजातन्त्र का वर्तमान निकृष्ट रूप प्रचलित न हो, प्रत्युत मनु-प्रदर्शित राज-नियम ही चलें।

(छ) राजवर्ग व्यसनी न हों और पितृवत् प्रजा पालन करें।

(ज) रियासतों में गोरक्षा का पूरा ध्यान रखा जाये। रियासतों का सब कार्य संस्कृत और आर्यभाषा में हो।

(झ) क्षत्रिवग में प्राचीन क्षात्र आदर्श स्थिर रहें और यज्ञ याग बहुत हों।

इत्यादि अनेक बातें हैं जो इन पत्रों से जानी जा सकती हैं। आर्यसमाज ने इस ओर अणुमात्र भी ध्यान नहीं दिया।

६. ऋषि दयानन्द सरस्वती और राज्य व्यवस्था

भारत की गहरी निद्रा के पश्चात् ऋषि दयानन्द सरस्वती पहले पुरुष थे जिन्हें भारत में देशोन्नति और स्वराज्य का यथार्थ ध्यान आया। उन के प्रत्येक तीसरे चौथे पत्र में देशोन्नति का शब्द दिखाई देता है। स्वराज्य का शब्द भी पहले पहल उन्होंने ही प्रयुक्त किया। उन्होंने स्वराज्य का उपाय भी आरम्भ किया। उनका स्वराज्य संसार पर सांस्कृतिक विजय द्वारा आता। वे इस विजय में अटल विश्वास रखते थे। वे इस महान् कार्य के योग्य थे। भारत का स्वराज्य लाकर ऋषि संसार की राज्य व्यवस्था को ठीक करते। उन के देहान्त को आज ६२ वर्ष हो गये। आर्यसंस्कृति को सजीव रूप में जानने वाला अभी दूसरा व्यक्ति भारत में नहीं जन्मा। आर्यसमाज ऋषि के इस काम को नहीं चला सका। आर्यसमाज संसार का सांस्कृतिक विजय तो क्या करता, उस के अपने अन्दर ऐसे बहुसंख्यक लोग हो गये हैं जिन पर अंग्रेज़ी शिक्षा के कारण वर्तमान संस्कृतियों का गहरा प्रभाव पड़ चुका है। आर्यसमाज के लिये यह विषय विचारणीय है।

इसी प्रकार पत्रों में ऋषि ने और अनेक उज्ज्वल विचार लिखे हैं। पाठक उन से स्वयं लाभ उठायें। समयाभाव से हम उन पर प्रकाश नहीं डाल सके।

पत्रों के प्रकाशन में श्री मामराज जी का पूरा सहयोग रहा है। मेरे पुत्र श्री सत्यश्रवा एम० ए० ने कई वर्ष तक इस काम में सहायता दी है। श्री गुरुदेव जी विद्यालङ्कार ने प्रेस कापी के कई स्थान लिखे हैं। श्री पूज्य हरविलास जी सारडा मन्त्री परोपकारिणी सभा ने तो बहुत ही सहायता की है और परामर्श दिये हैं। श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु और श्री पण्डित युधिष्ठिर जी मी० ने भी असाधारण सहायता की है। परिशिष्ट[1] के पत्रों के लिये मेरठ निवासी ला० रामशरण दास के पौत्रों ने विशेष सहायता की है। उन में से ला० परमात्माशरण जी ने बहुत समय लगा कर पुराने

---

१. प्रथम संस्करण में कुछ पत्र परिशिष्ट में छपे दे, उन की ओर यह संकेत है। वे पत्र इस संस्करण में यथा स्थान जोड़ दिये गये हैं। यु० मी०।

कागज ढूंढे हैं। अनेक महानुभावों ने गत तीस वर्ष में समय समय पर इस कार्य में सहायता दी है। उन में से अनेक के नाम पहले लिखे जा चुके हैं। इन सब मित्रों और महानुभावों का मैं हार्दिक कृतज्ञ हूँ। मैं उन्हें शतशः धन्यवाद देता हूँ। उन की सहायता के विना यह महान् कार्य इस रूप में कभी प्रकाशित न होता।

श्री प्रो० धीरेन्द्रवर्मा एम० ए० प्रयाग, श्री० प्रो० महेशप्रसाद जी साधु बनारस, श्री पं० वाचस्पति एम० ए० लाहौर तथा कविराज सूरमचन्द बी० ए० लाहौर का धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने पत्रों की प्रतिलिपियों के प्रदान में अथवा संशोधन में भारी सहायता की है। तथा बाबू ओम्प्रकाश बी० ए० खातौली निवासी और ला० उग्रसेन जी ने भी श्री मामराज को बहुत सुविधाएँ दी है। उन का भी बहुत २ धन्यवाद है।

इन सब के साथ श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट के प्रबन्धक श्री बाबू रूपलाल जी श्री ला० ज्ञानचन्द जी और श्री ला० हंसराज जी ने तो सहायता और उदारता में कोई न्यूनता नहीं रहने दी। ला० हंसराज जी ने प्रेस की ओर से मुद्रण में असाधारण सावधानता दिखाई है। इन महानुभावों का मैं जितना धन्यवाद करूं थोड़ा है। युद्ध के गत महार्घ दिनों में सहस्रों रुपये का व्यय करके इस ग्रन्थ को मुद्रण कराना इन्हीं का मुख्य काम था।

ईडर राज्य के दीवान, वेदभक्त, स्वाध्यायशील, आर्य हृदय रखने वाले श्री ला० जगन्नाथ जी भण्डारी, एम० ए० हमें अत्यधिक सहायता दे रहे हैं। उन की आर्थिक सहायता के विना हमारा अनुसन्धान कार्य मन्थर गति से चलता। यदि गत दो वर्ष में हम अधिक कार्य कर पाये हैं, तो यह उन्हीं की उदार सहायता का फल है। हम उन के बहुत ऋणी हैं। यह ग्रन्थ उन्हीं को समर्पित है।

आश्चर्य का विषय है कि श्री दीवान जी उसी राज्य के प्रधान मन्त्री हैं, जो शूरवीर ऋषि भक्त महाराजा श्री प्रतापसिंह जी के कुल में हैं।

ईश्वर करे अज्ञान में पड़ा संसार इस ग्रन्थ से लाभ उठाये।

माडल टाऊन (लाहौर)
९ दिसम्बर १९४५ भगवद्दत्त
रविवार

* ओ३म् *

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन

[१] विज्ञापनपत्रम्[1] [१]

श्रीरस्तु ॥ ऋग्वेदः १ यजुर्वेदः २ सामवेदः ३ अथर्ववेदः ४। एतेषु चतुर्षु वेदेषु कर्मोपासनाज्ञान-काण्डानां निश्चयोस्ति ॥ तत्र संध्यावन्दनादिरश्वमेधान्तः कर्मकाण्डो वेदितव्यः। यमादिः समाध्यन्त उपासनाकाण्डश्च बोद्धव्यः। निष्कर्मादिः परब्रह्मसाक्षात्कारांतो ज्ञानकाण्डो ज्ञातव्यः[2] ॥

आयुर्वेदः ५ तत्र चिकित्सा विद्यास्ति॥ तत्र चरकसुश्रुतौ द्वौ ग्रन्थौ सत्यौ विज्ञातव्यौ ॥

धनुर्वेदः ६ तत्र शस्त्रास्त्रविद्यास्ति ॥

गांधर्ववेदः ७ तत्र गानविद्यास्ति ॥

अर्थवेदः ८ तत्र शिल्पविद्यास्ति ॥

एते चत्वारो वेदानामुपवेदा यथासंख्यं वेदितव्याः ॥

शिक्षा वेदस्था ९ तत्र वर्णोच्चारणविधिरस्ति॥

कल्पः १० तत्र वेदमन्त्राणामनुष्ठानविधिरस्ति॥

व्याकरणम् ११ तत्र शब्दार्थसम्बन्धानां निश्चयोस्ति। तत्र द्वौ ग्रन्थावष्टाध्यायीव्याकरणमहा-भाष्याख्यौ सत्यौ वेदितव्यौ ॥

निरुक्तम् १२ तत्र वेदमन्त्राणां निरुक्तयः सन्ति ॥

---

१ पं० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ५६७-५६८ पर उद्धृत । इस से पहले जीवन चरित्र में निम्नलिखित पंक्तियां हैं—

"पं० हृदयनारायण वकील ने बयान किया कि एक विज्ञापन स्वामी जी की आज्ञा से मैं ने प्रमाणिक पुस्तकों का संस्कृत में छपवाया था। यह संस्कृत में स्वयं स्वामी जी ने लिख कर दिया था। जब छप कर आया तो उस की छापे की अशुद्धियों को स्वामी जी ने स्वयं शोधा था। और कहा कि देखो मूर्ख ने छापने में कितनी अशुद्धियां कर दीं। एक प्रति स्वामी जी की शोधी हुई हमारे पास विद्यमान है । शेष उस समय बांट दी थीं। वह आप को देता हूं," इति ।

२ चारों वेदों में ज्ञान, कर्म और उपासना इन तीन विद्याओं का वर्णन होने से चारों वेदों को 'त्रयी' या 'त्रयी विद्या' भी कहते हैं। वेद शब्द विद्या का पर्यायवाची है। इसलिए चारों वेदों के लिए ब्राह्मणग्रन्थों में 'त्रीन् वेदान्' आदि प्रयोग भी उपलब्ध होते हैं। यु० मी०।

छन्दः १३ तत्र गायत्र्यादिछन्दसां लक्षणानि सन्ति ॥

ज्योतिषम् १४ तत्र भूतभविष्यद्वर्तमानानां ज्ञानमस्ति । तत्रैका भृगुसंहिता[1] सत्या वेदितव्या ॥

एतानि षट् वेदङ्गानि वेदितव्यानि ॥ इमाश्चतुर्दशविद्याश्च[2] ॥

ईशकेनकठप्रश्नमुण्डकमाण्डूक्यतैत्तिरी[य]ऐतरेयछान्दोग्यबृहदारण्यकश्वेताश्वतरकैवल्योपनिषदो द्वादश १५ अत्र ब्रह्मविद्यैवास्ति ॥

शारीरकसूत्राणि १६ तत्रोपनिषन्मन्त्राणां व्याख्यानमस्ति ॥

कात्यायनादीनि सूत्राणि १७ तत्र निषेकादिश्मशानान्तानां संस्काराणां व्याख्यानमस्ति ॥

योगभाष्यम् १८ तत्रोपासनाया ज्ञानस्य च साधनानि सन्ति ॥

वाकोवाक्यमेको ग्रन्थः १९ तत्र वेदानुकूला तर्कविद्यास्ति[3] ॥

मनुस्मृतिः २० तत्र वर्णाश्रमधर्माणां व्याख्यानमस्ति ॥ वर्णसंकरधर्माणाञ्च ।

महाभारतम् २१ तत्र शिष्टानां जनानां लक्षणानि सन्ति ॥ दुष्टानां जनानाञ्च ।

एतान्येकविंशति शास्त्राणि सत्यानि वेदितव्यानि ॥

एतेष्वेकविंशतिशास्त्रेष्वपि व्याकरण-वेद-शिष्टाचारविरुद्धम् यद्वचनं तदप्यसत् । एतेभ्य एकविंशतिशास्त्रेभ्यो ये भिन्ना ग्रन्थाः सन्ति ते सर्वे गप्पाष्टकाख्या वेदितव्याः । गपृ[3] मिथ्यापरिभाषणे । तस्मात्पः प्रत्ययः ॥ गपयते[4] यत्तद्गप्पम् ॥

अष्टौ गप्पानि यत्र स्युर्गप्पाष्टकं तद्विदुर्बुधाः ।
अष्टौ सत्यानि यत्रैव तत्सत्याष्टकमुच्यते ।

कान्यष्टौ गप्पानीत्यत्राह--

मनुष्यकृताः सर्वे ब्रह्मवैवर्तपुराणादयो ग्रन्थाः प्रथमम् गप्पम् १ ।

---

१ ऋषि दयानन्द के प्रारम्भिक पत्रों, विज्ञापनों तथा भागवतखण्डन आदि कतिपय पुस्तिकाओं (ट्रैक्टों) में कुछ ऐसी भी बातें उपलब्ध होती हैं, जिन्हें ऋषि दयानन्द ने उत्तरकाल में त्याज्य समझा । तदनुसार यहां प्रामाणिक ग्रन्थों में उल्लिखित भृगुसंहिता को भी ऋषि दयानन्द ने उत्तर काल में अनार्ष तथा त्याज्य ग्रन्थ समझा (देखो सत्यार्थप्रकाश समु० ३)। ऋषि दयानन्द के अन्तिम रूप से निर्धारित सिद्धान्तों और मन्तव्यों के ज्ञान के लिए द्वितीय बार संशोधित सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ ही मुख्यतया प्रमाण है । यु० मी० ।

२ अन्यत्र चौदह विद्या इस प्रकार गिनी गई हैं— "अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः । पुराणं धर्मशास्त्राणि विद्या ह्येताश्चतुर्दश ॥ (वि० पु० पू० ६१ । ७८ ॥ वायु पुराण ६१ । ७८) अर्थात्—६ वेदाङ्ग, ४ वेद, १ मीमांसादर्शन, १ न्यायशास्त्र, १ पुराण (ऐतिह्य), १ धर्मशास्त्र, ये चौदह विद्याएं हैं । इन्हीं में आयुर्वेद धनुर्वेद गान्धर्ववेद और अर्थशास्त्र जोड़ने से १८ विद्याएँ हो जाती हैं । (द्र० वायु पुराण ६१।७६) । यु० मी०

३ वाकोवाक्यम्—उक्तिप्रत्युक्तिरूपं तर्कशास्त्रम् । गौतमधर्मसूत्र मस्करी भाष्य ८ । ६ मैसूरसंस्करण । यु० मी० ।

४ अगले वाक्य में 'गपयते' प्रयोग उपलब्ध होने से प्रतीत होता है कि यहां मुद्रण दोष से 'गप' अदन्त धातु के स्थान में 'गपृ' ऋकारान्त छप गया है । अदन्त मानने से ही 'गपयते' में उपधा को वृद्धि नहीं होती । धातुपाठ में यह धातु साक्षात् पठित नहीं है, परन्तु इस प्रकरण के **'बहुलमेतन्निदर्शनम्'** इस गण सूत्र से प्रयोग के अनुसार स्वीकार की जाती है । यु० मी० ।

पाषाणादिपूजनं देवबुद्ध्या द्वितीयं गप्पम् २।

शैवशाक्तवैष्णवगाणपत्यादयः संप्रदायास्तृतीयं गप्पम् ३।

तन्त्रग्रन्थोक्तो वाममार्गश्चतुर्थं गप्पम् ४।

भङ्गादिनशाकरणम् पञ्चमं गप्पम् ५।

परस्त्रीगमनं षष्ठं गप्पम् ६।

चौरीति सप्तमं गप्पम् ७।

कपटच्छलाभिमानानृतभाषणमष्टमम् गप्पम् [८]।

एतान्यष्टौ गप्पानि त्यक्तव्यानि ॥

कान्यष्टौ सत्यानीत्याह--

ऋग्वेदादीन्येकविंशतिशास्त्राणि परमेश्वरर्षिरचितानि प्रथमं सत्यम् १॥

ब्रह्मचर्याश्रमेण गुरुसेवास्वधर्मानुष्ठानपूर्वकं वेदानां पठनं द्वितीयं सत्यम् २॥

वेदोक्तवर्णाश्रमस्वधर्मसन्ध्यावन्दनाग्निहोत्राद्यनुष्ठानं तृतीयं सत्यम् ३॥

यथोक्तदारादिगमनम् पञ्चमहायज्ञानुष्ठानमृतुकालस्वदारोपगमनं श्रौतस्मार्ताचाराद्यनुष्ठानम्॥ चतुर्थं सत्यम् ४॥

शमदमतपश्चरणयमादिसमाध्यन्तोपासनासत्संगपूर्वकं वानप्रस्थाश्रमानुष्ठानं पञ्चमं सत्यम् ५॥

विचारविवेकवैराग्यपराविद्याभ्याससंन्यासग्रहणपूर्वकं सर्वकर्मफलत्यागाद्यनुष्ठानं षष्ठं सत्यम् ६

ज्ञानविज्ञानाभ्यां सर्वानर्थजन्ममरणहर्षशोककामक्रोधलोभमोहसंगदोषत्यागानुष्ठानं सप्तमं सत्यम् ७॥

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशतमोरजःसत्त्वसर्वक्लेशनिवृत्तिः पञ्चमहाभूतातीतमोक्षस्वरूपस्वाराज्यप्राप्तिः अष्टमं सत्यम् ८॥

ऐतान्यष्टौ सत्यानि ग्रहीतव्यानि॥ इति॥

दयानन्दसरस्वत्याख्येनेदम्पत्रं रचितम्, तदेतत्सज्जनैर्वेदितव्यम्॥

शोलेतूर में छपा।'

——:o:——

१. यह विज्ञापन कानपुर में दिया गया था। वहीं के शोलेतूर यन्त्रालय में छपा।

इस विज्ञापन का उल्लेख कानपुर के उर्दू के समाचार पत्र शोलेतूर के २७ जुलाई १८६९ के अङ्क भाग १० संख्या ३० में है। इस से ज्ञात होता है कि यह विज्ञापन २० जुलाई के समीप अथवा **आषाढ़ सं० १९२६ के अन्त में** छपा होगा।

काशी का प्रसिद्ध शास्त्रार्थ इस विज्ञापन के पश्चात् मङ्गलवार १६ नवम्बर सन् १८६९ में हुआ। छलकपटदर्पण के कर्ता ने अशुद्ध विज्ञापन छाप कर अपने स्वभावानुकूल ऋषि पर अनेक मिथ्या कटाक्ष किए हैं।

प्रमाणिक ग्रन्थों की जो सूची इस विज्ञापन में दी गई है, ठीक उसी प्रकार की एक सूची ऋषि दयानन्द सरस्वती ने बनारस संस्कृत कालेज के प्रिंसिपल डाक्टर रुडल्फ हार्नले को काशी शास्त्रार्थ से कुछ दिन पहले अपने हाथ से लिख कर दी थी। देखो The Arya Samaj, by L. Lajpat Rai दूसरा संस्करण, लाहौर, पृ० ४६।

[१] **पत्र (१)** [२]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्री श्रेष्ठोपमायोग्यस्य गङ्गादत्तशर्म्मणे दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशीर्वादो विदितो भवत्वत्र शं वर्त्तते तत्राप्यस्तु । भवत्पत्रमागतं तत्रस्थो वृत्तान्तोऽपि विदितः ॥ भवान् बुद्धिमान् भूत्वा पत्रं तु प्रेषितवान् परन्तु स्वयं च पत्रप्रेषणवन्नागत इदम्महदाश्चर्यम् ॥ इदम्पत्रं दृष्ट्वैव शीघ्रमागन्तव्यमागत्य यस्मिन्दिने भवानत्र पाठशालायाम्पाठनारम्भं करिष्यति तस्मिन्नेव दिने एकमासस्य विचारितस्य तु प्रेषणं गृहम्प्रति कार्यमिति निश्चयो वेदितव्यो नात्र कार्या विचारणा ॥ इयं शङ्कापि भवता न कार्या जीविका तत्र भवेद्वा नेति ॥ इदानीन्तु प्रतिदिनम्मुद्रैका जीविकास्त्यत्र परन्तु यदा यदा भवतो गुणप्रकाशो भविष्यति तदा तदाधिकाधिका जीविका निश्चिता भविष्यतीति विज्ञेयम् ॥ इदानीन्तु भवतात्रैव स्थितिः कार्या पुनरन्यत्र वात्रैवाजीविका निश्चिता स्थास्यति, न जाने भवेदाजीविका न वेति गमने कृते सति मयीति भवतो ह शङ्कापि मा भूत् ॥ अत्रागमने कृते सति भवति सर्वं शोभनं भविष्यति ॥ परन्तु भवतात्रागमने क्षणमात्रोऽपि विलम्बो न कार्यः । किम्बहुना लेखेनाभिज्ञेषु ॥ संवत् १९२७ भाद्रपद शुक्लपक्षषष्ठ्यां बृहस्पतिवासरे[२] लिखितमिदम्पत्रं विदितम्भवतु[३] ।

——:o:——

[२] **पत्रसारांश[४]** [३]

[पं० गङ्गादत्त जी]

हम वृन्दावन अवश्य आवेंगे[५] ।

---

१. मथुरा निवासी पं० गङ्गादत्त चौबे श्री स्वामी जी का सहाध्यायी था । इस पत्र द्वारा श्री स्वामी जी ने फर्रुखाबादस्थ ला० पन्नीलाल वाली पाठशाला में पढ़ाने के लिए उसे बुलाया है । इस पत्र के फर्रुखाबाद से भेजने का संकेत पं० लेखराम कृत महर्षि दयानन्द के उर्दू जीवनचरित के पृ० २१६ पंक्ति २ में है ।

२. १ सितम्बर १८७० । यह पत्र फर्रुखाबाद से मथुरा भेजा गया ।

३. पं० गङ्गादत्त के पौत्र पं० विदुरदत्त तान्त्रिक छत्ता बाज़ार मथुरा में रहते हैं । उन के घर में यह मूल पत्र अब भी सुरक्षित है । उसी मूल पत्र से श्री महाशय मामराज जी ने भाद्र वदी १२ संवत् १९८५ को अपनी लेखनी से इस की प्रतिलिपि की ।

पं० गङ्गादत्त को श्री स्वामी जी ने मार्ग व्यय के लिए रुपये भी भेजे थे । जब पं० गङ्गादत्त फर्रुखाबाद न गया, तो उसने १०) रु० वनमाली पण्डित को लौटा दिए । उन की रसीद ला० मामराज जी को पं० गङ्गादत्त के बस्तों में से मिली । वह निम्नलिखित है—

"जो दयानन्द सरस्वती स्वामी ने दश रुपये १०) भेजे गङ्गादत्त जी के रस्ता खर्च को सो नयनसुख के मारफत युगल जी की चिठी को लिखो देख, गङ्गादत्त जी से भर पाए, कलाधर तथा वनमाली नै ।

अत्र साक्षी दामोदरः" ॥

४ श्री स्वामी जी के पूर्व पत्र के उत्तर में पं० गङ्गादत्त चौबे ने पहले उन्हें मथुरा वृन्दावन आकर मूर्तिपूजा खण्डन करने को लिखा था । उस के उत्तर में स्वामी जी ने जो पत्र लिखा, उसका उपर्युक्त सारांश पं० लेखराम संकलित जी० च० पृष्ठ २१६ में लिखा है । मूल पत्र संस्कृत में रहा होगा । यु० मी० ।

५ यह पत्र सम्भवतः सं० १९२७ आश्विन मास में लिखा गया होगा । यु० मी० ।

[२] विज्ञापनपत्रमिदम् [४]

एक पण्डित ताराचरण तर्करत्न नामक भाटपाड़ा[2] ग्राम के निवासी हैं। जो कि ग्राम हुगली के पार है। उस ग्राम में उनकी जन्म भूमि है, परन्तु आजकल श्रीयुक्त काशीराज महाराज के पास रहते हैं। सम्वत् १९२९ में वे अपनी जन्मभूमि में गये थे। वहाँ से कलिकाता में भी गये थे और किसी स्थान में ठहरे थे।

---

१. यह विज्ञापनपत्र प्रतिमा पूजन विचार के नाम से १८×२२ के आठ पृष्ठ वाले आकार के २८ पृष्ठों पर श्री स्वामीजी ने स्वयं छपवा दिया था। इस के आरम्भ के १३ पृष्ठों पर हुगली शास्त्रार्थ छपा है और उस से आगे प्रतिमा पूजन पर विचार किया है। उस का मुख्य पृष्ठ निम्नलिखित प्रकार का है—

प्रतिमा पूजन विचार ॥

श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामी और ताराचरण तर्करत्न का शास्त्रार्थ जोकि हुगली में हुआ था।

उसे बाबू हरिश्चद्र की आज्ञा से बनारस लाइट छापेखाने में गोपीनाथ पाठकने मुद्रित किया सम्वत् १९३०॥

Beneras
Printed At "The Light Press"
1873

इस विज्ञापन का पूर्वांश अर्थात् हुगली शास्त्रार्थ पं० लेखराम कृत जीवनचरित के पृ० २०१-२०८ पर तथा देवेन्द्र बाबू और पं० घासीराम रचित जीवन चरित के पृ० २३६-२३८ पर छपा है। दोनों स्थानों में यह विज्ञापन अपने शुद्ध रूप में नहीं है। दोनों ने इस का संक्षेप दिया है। पं० लेखराम ने देवेन्द्र बाबू की अपेक्षा मूल का अधिक रक्षण किया है। इसकी मूल मुद्रित प्रति म० मामराज फर्रुखाबाद से संवत् १९८३ में लाए थे। वह मूल प्रति अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

हम ने विराम आदि चिह्न तो दिए हैं, परन्तु मूल पाठ सुरक्षित रखा है। हां मुद्रण में रही मात्रा आदि की अशुद्धि दूर कर दी है।

इस हुगली शास्त्रार्थ की पुस्तक अथवा विज्ञापन पर पं० लेखराम जी का निम्नलिखित विवरण है—

"संवत् १९२९* में यह शास्त्रार्थ संस्कृत भाषा में हुआ †। उसी समय उसका अनुवाद बंगला भाषा में मुद्रित किया गया। और बहुत ही शीघ्र संवत् १९३० लाइट प्रैस बनारस में १८ [२८] पृष्ठ का बा० हरिश्चन्द्र ‡ एक मूर्तिपूजक हिन्दू ने जो कि गोकुलिया गोस्वामी मत में था, उसे शब्दशः आर्यभाषा में छपवा कर मुद्रित किया। आज तक (सन् १८९७) पांच बार छप चुका है, परन्तु पृथक् पुस्तक [अर्थात् हुगली शास्त्रार्थ] विक्रयार्थ नहीं मिलता।" जीवन चरित्र पृष्ठ० ७९१।

२. हुगली ग्राम हुगली नदी के दाहिने तट पर है और भाटपाड़ा ग्राम नदी के बाएँ तट पर लगभग ४ मील दूर दक्षिण पूर्व की ओर है। यु० मी०।

---

* ऋषि दयानन्द हुगली चैत्र सुदि ४ संवत् १९३० को गये थे। अतः यहां सं० १९३० चाहिये। सं० १९२९ भूल से छपा होगा। यु० मी०।

† ऋषि दयानन्द ने यह शास्त्रार्थ का सारांश भी संस्कृत भाषा में ही लिखा होगा, क्योंकि उस समय तक वे सम्भाषण भी संस्कृत में ही करते थे। यु० मी०। ‡ ये प्रसिद्ध भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं। यु० मी०।

जिन के स्थान में मैं ठहरा था उनका नाम श्री युक्त राजा ज्योतीन्द्र मोहन ठाकुर तथा श्रीयुक्त राजा शौरिन्द्र मोहन ठाकुर है। उनके पास तीन बार जा जा के ताराचरण ने प्रतिज्ञा की थी कि हम आज अवश्य शास्त्रार्थ करने को चलेंगे। ऐसे ही तीन दिन तक कहते रहे, परन्तु एक बेर भी न आये। इस्से बुद्धिमान् लोगों ने उनकी बात झूठी ही जान ली। मैं कलिकाता से हुगली में आया[1] और श्रीयुक्त वृन्दावनचन्द्र मण्डल जी के बाग में ठहरा था। सो एक दिन उन्होंने अपने स्थान में सभा की। उसमें मैं भी वक्तृत्व करने के वास्ते गया था तथा बहुत पुरुष सुनने को आये थे। उनसे मैं अपना अभिप्राय कहता था। वे सब लोग सुनते थे। उसी समय में ताराचरण पण्डित जी भी वहां आये। तब उन से वृन्द्रावनचन्द्रादिकों ने कहा कि आप सभा में आइये जो इच्छा हो सो कहिये, परन्तु सभा के बीच में पण्डित ताराचरण नहीं आये किन्तु ऊपर जाकर दूर से गर्जते थे।

वहां भी उन्होंने जान लिया कि पण्डित जी कहते तो हैं परन्तु समीप क्यों नहीं जाते। इस्से जैसे वे ताराचरण जी थे वैसे ही उन्होंने जान लिये। फिर जब नव घण्टा बज गया तब लोगों ने मेरे से कहा कि अब समय दश घण्टा का है। उठना चाहिये। बहुत रात आगई।

फिर मैं और सब सभास्थ लोग उठे। उठके अपने अपने स्थान में चले गये। फिर मैं बाग में चला आया। उसके दूसरे दिन वृन्दावनचन्द्र मण्डल जी ने मेरे से कहा कि उस वक्त ताराचरण भी आए थे। तब मैंने उनसे कहा कि सभा में क्यों नहीं आये। उन्होंने कहा कि वे तो बड़ा अभिमान करते हैं। तब मैंने उनसे कहा जो अभिमान कर्ता है सो पण्डित नहीं होता किन्तु वह काम मूर्ख का ही है। और जो पण्डित होता है सो तो कभी अपने मुख से अपनी बड़ाई नहीं कर्त्ता। जो ताराचरण पण्डित जी अभिमान में डूबे ही जाते होवैं तब तो उनको मेरे पास एक बार ले आइये। फिर वे अभिमानसमुद्र में डूबने से बच जायं तो अच्छा हो। तब वृन्दाबनचन्द्रादिकों ने कहा कि आप बाग में चलिये और जैसी आप की इच्छा हो वैसा शास्त्रार्थ कीजिये। पण्डित जी की कुछ इच्छा न देखी। तब वृन्दावनचन्द्र से मैंने कहा कि आप उनसे कहें कि कुछ चिन्ता आप न करैं। स्वामी जी ने हमसे कह दिया है कि पण्डितजी प्रसन्नता से आवैं। मैं किसी से विरोध नहीं रक्खता। तब तो पण्डित जी ने कहा कि हम चलेंगे।

सो मङ्गलवार[2] की सन्ध्या समय में बहुत लोग नगर से शास्त्रार्थ सुनने को आये।

वृन्दावनचन्द्र भी बहुत लोगों के साथ आये। तथा पाठशालाओं के अध्यक्ष श्री भूदेव मुकुर्ज्या आये। तथा श्री हरिहर तर्कसिद्धान्त पण्डित भी आये। उसके पीछे पण्डित ताराचरण जी सशिष्य तथा अपने ग्राम निवासिओं के साथ आये (जोकि उनके पक्षपाती थे)। ये सब लोग आके सभा के स्थान में इकट्ठे भये। तब मैं भी उस स्थान में आया। फिर सब यथायोग्य बैठे। तब ताराचरणजी ने प्रतिज्ञा की कि हम प्रतिमा का स्थापनपक्ष लेते हैं। फिर मैंने कहा कि जो आपकी इच्छा हो सो लीजिये मैं तो इस बात का खण्डन ही करूंगा।

---

१. ऋषि दयानन्द हुगली में चैत्र शुदि ४ सं० १९३० को पधारे थे। यु० मी०।

२. चैत्र शु० ११ संवत् १९३० (८ एप्रिल १८७३)।

तब उन्ने मुझ से कहा कि इस संवाद में वाद होना ठीक है वा जल्प अथवा वितण्डा। उनसे मैंने कहा कि वाद ही होना उचित है। क्योंकि जल्प और वितण्डा सज्जनों को करना कभी उचित नहीं। वाद गोतमोक्त लेना। तब उनों ने भी स्वीकार किया। फिर दूसरी यह प्रतिज्ञा उस समय में की गई कि ४ चार वेद तथा ४ चार उपवेद, ६ छः वेदों के अङ्ग और छः दर्शन मुनियों के किये तथा मुनि और ऋषियों के किये छः शास्त्रों के व्याख्यान उन्हों के वचन प्रमाण से ही कहना। अन्य कोई का प्रमाण नहीं, अर्थात् जो कुछ खण्डन वा मण्डन करना सो उन्हीं के अक्षरों से ही करना अन्यथा नहीं। तब उन ने भी स्वीकार किया। मैंने भी।

(जहाँ २ तर्करत्न शब्द आवै वहाँ २ ताराचरण पण्डित जी को जान लेना। और जहाँ २ स्वामी शब्द आवै वहाँ २ दयानन्द सरस्वती स्वामी जी को जान लेना)।

तर्करत्न--पातञ्जलसूत्रम् (चित्तस्य आलम्बने स्थूल आभोगो वितर्क इति व्यासवचनम्) तर्करत्न के हाथ में पुस्तक भी थी। उस को देखा तब भी मिथ्या ही उन्ने लिखा,[1] क्योंकि योगशास्त्र पढ़ा होय तब उस शास्त्र को जान सक्ता है। तर्करत्न ने पढ़ा तो था नहीं। इस्से उन्ने अशुद्ध लिखा। जो पढ़ा भया होता है सो ऐसा भ्रष्ट कभी नहीं लिखता।

देखना चाहिये कि ऐसा पातञ्जल शास्त्र में सूत्र ही नहीं है। किन्तु ऐसा सूत्र तो है—

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसःस्थितिनिबन्धनी इति । सो इस सूत्र के व्याख्यान में **नासिकाग्रे धारयत** इत्यादिक वहाँ लिखा है। यह तो उन ने जाना भी नहीं। इससे उन का लिखना भ्रष्ट है। फिर लिखते हैं कि इति व्यासवचनम्। इस प्रकार का वचन व्यास जी ने कहीं योगशास्त्र की व्याख्या में नहीं लिखा। इस्से यह भी उनका वचन भ्रष्ट ही है। फिर यह लिखा कि—

(स्वरूपे साक्षाद्वती प्रज्ञा आभोगः, स च स्थूलविषयत्वात् स्थूल इत्यादि) यह भी उनका लिखना अशुद्ध ही है, क्योंकि प्रतिज्ञा तो ऐसी पूर्व की गई थी कि वेदादिक शास्त्र वचनों से ही प्रतिमापूजन का स्थापन हम करेंगे और वचन फिर लिखा वाचस्पति का। इस्से तर्करत्न की प्रतिज्ञाहानि हो गई। प्रतिज्ञा की हानि होने से उनका पराजय हो गया। क्योंकि--**प्रतिज्ञाहानिः प्रतिज्ञान्तर** मित्यादिक **निग्रहस्थान** होते हैं। यद्यपि हम को जय तथा पराजय की इच्छा कभी नहीं है तथापि गोतम मुनि जी ने इस प्रकार के २६ निग्रहस्थान लिखे हैं।

निग्रहस्थान सब पराजय के स्थान ही होते हैं। और पहिले प्रतिज्ञा की थी कि जल्प और वितण्डा न करेंगे। फिर जाति-साधन से प्रतिमा का स्थापन करने लगे, क्योंकि प्रतिमा भी स्थूल साधर्म्य से आती है।

स्वामी—यावान् जागरितावस्थाविषयः तावान् सर्वः स्थूलः कुत इत्यादि। मैंने उन को ज्ञापक से जना दिया कि ये गृहस्थ हैं इन की अप्रतिष्ठा न हो जाय। तदपि उन ने कुछ नहीं जाना। जानैं तो तब, जब कुछ शास्त्र पढ़ा हो अथवा बुद्धि शुद्ध हो। साधर्म्यवैधर्म्योत्कर्षापकर्षेत्यादिक २४ चौबीस प्रकार का शास्त्रार्थ जाति के विषय में गोतम मुनि जी ने लिखा है। इसके नहीं जानने से जल्प और वितण्डा तर्करत्न ने किये। क्योंकि--

---

१. इस प्रकरण से प्रकट होता है कि यह शास्त्रार्थ लिखित हुआ था। यु० मी०।

यथोक्तोपपन्नश्छलजातिनिग्रहस्थानसाधनोपालम्भो जल्पः ॥ १ ॥ **सप्रतिपक्षस्थापनाहीनो वितण्डा । २ ।** जैसा कि इन सूत्रों का अभिप्राय है वैसा ही तर्करत्न जी ने प्रतिमापूजन का स्थापन करने में जल्प और वितण्डा ही किया।

इस्से दूसरी बेर प्रतिज्ञा हानि उनने की। द्वितीय पराजय उनका हुआ ॥ **यदुक्तं भवता तेनैव प्रतिमापूजमेव सिध्यत्येव तस्याः स्थूलत्वात्**, इसमें तीन बेर एव शब्द लिखने से यह जाना गया कि ताराचरण जी को संस्कृत का यथावत् बोध भी नहीं है। इस्से तर्करत्न जी अभिमान में डूबे जाते हैं। क्योंकि हम बड़े पण्डित हैं। इस प्रकार का जो स्वमुख से कहना है सोई विद्याहीनता को जनाता है। फिर लोकान्त[र]स्थ शब्द से मैंने उन को जनाया कि जो चतुर्भुज को आप लेते हो सो तो वैकुण्ठ में सुने जाते हैं। उप अर्थात् समीप आसना अर्थात् स्थिति सो मनुष्य लोक में रहने वाला कैसे कर सकेगा। कभी नहीं। और जो पाषाणादिक की मूर्ति शिल्पी की रची भई सो तो विष्णु है नहीं, तब भी पण्डित जी कुछ नहीं समझे। क्योंकि जो कुछ विद्या पढ़ी होती अथवा सत्पुरुषों का संग किया होता तो समझ जाते। सो तो कभी किया नहीं। इस्से ताराचरण जी उस बात को न समझ सके।

फिर एक कहीं से सुनी सुनाई ब्राह्मण की श्रुति बिना प्रसंग से पढ़ी। सो यह हैं--(**अथ स यदा पितॄनावाहयति पितृलोकेन तेन सम्पन्नो महीयते**) इस श्रुति से लोकान्तरस्थ की भी उपासना आती है, इस अभिप्राय से देखना चाहिये। इस श्रुति में उपासना लेशमात्र नहीं आती, क्योंकि यह श्रुति जिस योगी को अणिमादिक सिद्धि हो गई हैं वह सिद्ध जिस २ लोक में जाने की इच्छा कर्त्ता है उस २ लोक को उसी समय प्राप्त होता है। सो जब पितृलोक में जाने की इच्छा कर्त्ता है, पितृलोक को प्राप्त होके आनन्द कर्त्ता है। क्योंकि (**तेन पितृलोकेन महीयते**) इत्युक्तत्वात्। ऐसे इच्छामात्र से ही ब्रह्मलोकादिक में विहार कर्त्ता है। इस्से इस श्रुति में मर कर उस लोक में जाता है अथवा पितरों की उपासना इस लोक में कर्त्ता है इस अभिप्राय के नहीं होने से ताराचरण जी का कहना मिथ्या ही है। इस्से क्या आया कि अर्थान्तर का जो कहना है सो निग्रहस्थान ही है। निग्रहस्थान के होने से पराजय हो गया।

स्वामी—सर्वः स्थूल इत्यनेनेत्यादि देहान्तरगतस्य प्राप्तित्वादिति दिव्ययोगदेहप्राप्तित्वाद्योगिनो न तु प्राकृतदेहस्य माहात्म्यमिदमित्यर्थस्य जागरूकत्वात् देहान्तर अर्थात् जो दिव्ययोग सिद्धियों से प्राप्त होता है। उस देह से यह बात होती है। और जो अयोगी का देह नाम शरीर उस्से कभी यह बात नहीं होती।

तर्करत्नः—प्रथमतः अस्माभिरित्यादि दूषण अथवा भूषण का ज्ञान तो विद्या होने से होता है। अन्यथा नहीं। क्योंकि दूषण तो आपके वचनों में है। परन्तु आपने नहीं जाने। यह आपके बुद्धि का दोष है। जो आपने प्रत्यक्ष दिखाये दूषणों को भी नहीं जाना, ऐसे दूषणों को तो बालक भी जान सक्ता है। **तन्मध्ये प्रतिमापि वर्त्तते इत्येवेत्यादि।** आप देख लीजिये कि हम वाद ही करेंगे जल्प और वितण्डा कभी नहीं। फिर बार बार स्थूलत्व साधर्म्य से ही प्रतिमापूजन स्थापन किया चाहते हो। सो अपनी प्रतिज्ञा को आप ही नाश कर्ते हैं। और फिर चाहते हो कि हमारा विजय

होवै। सो कभी नहीं हो सक्ता है। क्योंकि विजय तो पूर्ण विद्या और सत्य भाषण कहने से होता है। सो आप में एक भी नहीं। इससे आप विजय की इच्छा कभी मत करो। किन्तु आप को अपने पराजय की इच्छा करनी उचित है। किञ्च जो आप लोगों की इच्छा होवै तो वेदादिक सत्य शास्त्रों को अर्थ ज्ञान सहित पढ़ना चाहिये। जब आप लोग यथावत् सत्य शास्त्रों को पढ़ेंगे तथा पढ़ावेंगे तब फिर आप लोगों का पराजय कभी न होगा। किन्तु सर्वत्र विजय ही होगा। अन्यथा नहीं। दृष्टान्तत्वेनेत्यादि छान्दोग्य दहरविद्यायामित्यादि चेति। उस श्रुति का एक अंश भी दार्ष्टान्त में नहीं मिलने से वह आप का कहना मिथ्या ही है। सो मैंने कह दिया पहिले उससे जान लेना। यह किसने कहा कि जीवता पुरुष को उपासना का अधिकार नहीं है। सो यह आपका कहना मिथ्या ही है। क्योंकि ब्रह्मविद्या का और पाषाणादिक मूर्तिपूजन का क्या प्रसङ्ग है, कुछ भी नहीं। इस्से वह भी अर्थान्तर है। अर्थान्तर के होने से निग्रहस्थान अर्थात् पराजय स्थान आप का है। सो आप यथावत् विचार करके जान लेवैं।

(तर्करत्नः)—प्रथमतः अस्माभिः यत् भवत्पक्ष इत्यादि तत्र प्रतिमापि वर्त्तते इत्येवेति। आप जान लेवैं कि साधर्म्य हेतु प्रमाण से ही बोलते हैं।

इससे आपके कहे जितने दूषण हैं वे सब आप के ऊपर ही आ गये। क्योंकि आप अपनी प्रतिज्ञा अर्थात् वाद ही हम करेंगे ऐसा प्रथमतः कह चुके हैं। फिर जल्प और वितण्डा ही बारंबार करते हैं। इससे अपना पराजय आप ही कर चुके। क्योंकि आप को जो विद्या और बुद्धि होती तो कभी ऐसी भ्रष्ट बात न कर्त्ते। और निग्रहस्थान में बारंबार न आते। आपको संस्कृतभाषण करने का भी यथावत् ज्ञान नहीं है। क्योंकि प्रथमतः अस्माभिः यत् ऐसा भ्रष्ट असंबद्ध भाषण कभी न कर्त्ते। किञ्च प्रथमतोऽस्माभिर्यत् ऐसा श्रेष्ठ और संबद्धसंस्कृत ही कहते। दृष्टान्ते सर्वविषयाणां साम्यप्रयोजनं नास्तीति। यह भी आप का कहना भ्रष्ट ही है। क्योंकि मैंने कब ऐसा कहा था कि सब प्रकार से दृष्टान्त मिलता है। वह श्रुति एक अंश से [भी] आप के अभिप्राय में मिलती नहीं। इससे मैंने कहा कि इस श्रुति का पढ़ना आपको मिथ्या ही है ऐसा ही आप का कहना सब भ्रष्ट है।

(स्वामी)—भवत्पक्ष इत्यादि तत्र प्रतिमापि वर्त्तत्ते यह आप का जो कहना है सो प्रतिज्ञान्तर ही है। क्योंकि स्थूलत्व तुल्य जो प्रतिमा में और गर्दभादिकों में है। इस हेतु से ही प्रतिमा पूजन का स्थापन करा चाहते हो। सो फिर भी जल्प और वितण्डा ही आती है, वाद नहीं। इससे बारंबार आपका पराजय होता गया। फिर भी आप को बुद्धि वा लज्जा न आई। यह बड़ा आश्चर्य जानना चाहिये कि अभिमान तो पण्डितता का करैं और काम करैं अपण्डित का।

(तर्करत्नः)—प्रतिमापि वर्त्तते इत्यादि अयं तु प्रकृतविषयस्य साधकः, न तु प्रतिज्ञान्तरं इत्यादि। प्रकृत विषय यही है कि प्रतिमा पूजन का स्थापन, सो स्थापन वाद से और वेदादिक सत्य शास्त्रों के प्रमाण से ही करना। फिर उस प्रतिज्ञा को छोड़ के जल्प तथा वितण्डा और मिथ्या कल्पित वचन ये वाचस्पत्यादिकों के, उनसे स्थापन करने में लग गये। अहो इत्याश्चर्यं कि ताराचरण जी की बुद्धि विद्या के बिना बहुत छोटी है। जो प्रतिज्ञा करके शीघ्र ही भूल जाती है। यह आपका दोष नहीं किन्तु आपकी बुद्धि का दोष है। और आपके काम क्रोध अविद्या लोभ मोह भय विषयासक्त्यादिक

दोषों का दोष है । तर्करत्न जी यह आप देख लीजिये कि कितने बड़े २ दोष आप में हैं । प्रथम तो प्रतिमापूजन का स्थापन पक्ष लेके फिर जब कुछ भी स्थापन न हो सका तब **उपासनामात्रमेव भ्रममूलम्** अपने आप ही खंडन प्रतिमापूजन का करने लगे कि भ्रम मूल अर्थात् प्रतिमापूजन मिथ्या ही है । इससे आपके पक्ष का आपने ही खण्डन कर दिया । फिर मिथ्या ग्रन्थ जो पञ्चदशी उस के प्रमाण देने लग गये । और जो प्रथम वेदादिक जो २० बीस सनातन ऋषि मुनियों के किये मूल और व्याख्यान तथा परमेश्वर के किये ४ चार वेद इन के प्रमाण से बोलेंगे सो आपकी प्रतिज्ञा मिथ्या हो गयी । प्रतिज्ञा के मिथ्या होने से आप का पराजय भी हो गया । फिर **भ्रान्तिरस्माकं न दूषणीया** यह भी पहले आपका कहना है सो कोई भी पण्डित न कहेगा कि भ्रान्ति भूषण होता है । यह तो आपकी भ्रान्त बुद्धि का ही वैभव है । और जे सज्जन लोग हैं वे तो भ्रान्ति को दूषण ही जानते हैं । तथा **भ्रमः खलु द्विविधः** इत्यादि यह पञ्चदशी का वचन है यह भी प्रतिज्ञा से विरुद्ध ही है, क्योंकि वेदादिक शास्त्रों में इस की गणना नहीं है । पाषाणादिक की रचित मूर्त्ति में देवबुद्धि का जो कर्त्ता है सो दीप प्रभा में मणिभ्रम की नांई ही है क्योंकि दीप तो कभी मणि न होगा और मणि तो सदा मणि ही रहेगा । सो आपने मुख से तो कहा परन्तु हृदय में शून्यता के होने से कुछ भी नहीं जाना । ऐसा ही आपका सब कथन भ्रष्ट है । आपको जो कुछ भी ज्ञान होय तब तो जान सकते अन्यथा नहीं । तर्करत्न जी ने आगे २ जो २ कुछ कहा है सो २ सब भ्रष्ट ही है । बुद्धिमान् लोग विचार लेवैं । ताराचरण जी इस प्रकार के मनुष्य हैं कि कोई बुद्धिमान [के] सामने जैसा बालक । और भाषण वा श्रवण करने के योग्य भी नहीं, क्योंकि जिस को बुद्धि और विद्या होती है सोई कहने वा श्रवण में समर्थ होता है । सो तर्करत्न जी [में] न बुद्धि है और न कुछ विद्या है । इस्से न कहने और सुनने में समर्थ हो सकते हैं । इन का नाम जो तर्करत्न कोई ने रक्खा है सो अयोग्य ही रक्खा है । क्योंकि **अविज्ञाते तत्त्वेऽर्थे कारणोपपत्तितस्तत्त्वज्ञानार्थमूहस्तर्कः** यह गौतम मुनि जी का सूत्र है । इस का यह अभिप्राय है कि जिस पदार्थ का तत्त्वज्ञान अर्थात् जिस का यथावत् स्वरूप ज्ञान न होवै उस के ज्ञान के वास्ते कारण अर्थात् हेतु और प्रत्यक्षादि प्रमाणों की उपपत्ति अर्थात् यथावत् युक्ति से ऊह नाम वितर्क अर्थात् विविध विचार और युक्तिपूर्वक विविध वाक्य कहना विनय पूर्वक श्रेष्ठों से उसको कहते हैं तर्क, सो इस का लेशमात्र सम्बन्ध भी ताराचरण जी में नहीं होने से तर्करत्न तो नाम अनर्थक है । किन्तु इनके कथन में थोड़े से दोष मैंने देखाये हैं । जैसा कि समुद्र के आगे एक बिन्दु । किन्तु उनके भाषण में केवल दोष ही हैं गुण एक भी नहीं । सो विद्वान् लोग विचार कर लेवैं । वेई ये ताराचरणजी हैं कि जब काशी नगर के पण्डितों से आनन्द बाग में सभा भई थी उसमें बहुत विशुद्धानन्द स्वामी तथा बाल शास्त्री इत्यादिक पण्डित आये थे उनके सामने डेढ़ पहर तक एक बात में मौन करके बैठे रहे थे । दूसरी बात भी मुख से नहीं निकली थी । और जो उन का कुछ भी सामर्थ्य होता तो अन्य पण्डित लोग क्यों शास्त्रार्थ कर्त्ते ! जब उनने "उपासनामात्रमेव भ्रममूलम्" [कहा तब] उसी वक्त श्री भूदेव मुख्यर्ज्या आदिक श्रेष्ठ लोग उठ गये कि पण्डित आये तो प्रतिमा पूजन का स्थापन करने को, किन्तु वह अपना आप खण्डन कर चुके । ये पण्डित कुछ भी नहीं जानते हैं, ऐसा कह के उठ के चले गये । फिर अन्य पुरुषों से उन्होंने कहा कि पण्डित हार गया ।

स्वामी--श्रीमत्कथनेनैव प्रतिमापूजनविघातो जात एवेति शिष्टा विचारयन्तु। ताराचरण जी से मैंने कहा कि आपके कहने से ही प्रतिमा पूजन का विघात अर्थात् खण्डन हो गया और मैं तो खण्डन कर्ता ही हूँ।

फिर पण्डित जी चुप होके ऊपर के स्थान में चले गये। उसके पीछे मैं भी ऊपर जाने को चला। तब पण्डित सीढ़ि में मिले। मैंने उनका हाथ पकड़ लिया और कहा कि ऊपर आओ। फिर ऊपर जाके सब वृन्दाबनचन्द्रादिकों के सामने उन पण्डित ताराचरण से मैंने कहा कि आप ऐसा बखेड़ा क्यों करते फिरते हैं। तब वे बोले कि मैं तो काकभाषा का खण्डन करता हूं और सत्य शास्त्र पढ़ने तथा पढ़ाने का उपदेश भी करता हूं और पाषाणादिक मूर्त्ति पूजन भी मिथ्या ही जानता हूं परन्तु मैं जो सत्य सत्य कहूं तो मेरी आजीविका नष्ट हो जाय तथा काशीराज महाराज जो सुनैं तो मुझ को निकाल बाहर कर देवैं। इस्से मैं सत्य सत्य नहीं कह सकता हूं। जैसे कि आप सत्य सत्य कहते हैं। देखना चाहिए कि इस प्रकार के मनुष्यों से जगत् का उपकार तो कुछ नहीं बनता किन्तु अनुपकार ही सदा बनता है। बिना सत्य सत्य उपदेश के उपकार कभी नहीं हो सकता। इतना मेरे को अवकाश नहीं है कि मिथ्यावादिपुरुषों के साथ सम्भाषण किया करै। जो जो मैंने लिखा है इस में इसी से सज्जन लोग जान लेवैं।[1]

[प्रतिमापूजन-विचार]

इस के आगे जिन शब्दों के अर्थ के नहीं जानने से टीकाकारों को भ्रम हो गया है तथा नवीन ग्रन्थ बनाने वाले और कहने वाले तथा सुनने वाले को भी भ्रम होता है उन शब्दों का शास्त्र रीति तथा प्रमाण और युक्ति से जो ठीक ठीक अर्थ हैं उन्हों का प्रकाश संक्षेप से लिखा जाता है। प्रथम तो एक प्रतिमा शब्द है। **प्रतिमीयते यया सा प्रतिमा** अर्थात् प्रतिमानम्। जिस्से प्रमाण अर्थात् परिमाण किया जाय उस को कहना प्रतिमा, जैसे कि छटांक, आध पाव, पावसेर, सेर, पसेरी इत्यादिक और यज्ञ के चमसादिक पात्र, क्योंकि इन से पदार्थों के परिमाण किये जाते हैं। इस्से इन्हों का ही नाम है प्रतिमा। यही अर्थ मनु भगवान् ने मनुस्मृति लिखा है—

तुलामानं प्रतीमानं सर्वं च स्यात् सुलक्षितम्।
षट्सु षट्सु च मासेषु पुनरेव परीक्षयेत्॥

पक्ष पक्ष में वा मास मास में अथवा छटवें २ मास तुला की राजा परीक्षा करै। क्योंकि तराजू की दण्ढी में भीतर छिद्र कर के पारा उस में डाल देते हैं। जब कोई पदार्थ को तौल के लेने लगते हैं तब दंडी को पीछे नमा देते हैं। फिर पारा पीछे जाने से चीज अधिक आती है। और जब देने के समय में दण्डी आगे नमा देते हैं उस्से चीज थोड़ी जाती है। इस्से तुला की परीक्षा अवश्य करनी चाहिये तथा प्रतिमान अर्थात् प्रतिमा की भी परीक्षा अवश्य करै राजा, जिस्से कि अधिक न्यून प्रतिमा अर्थात् दुकान के बांट जितने हैं उन्हों का ही नाम है प्रतिमा, इसी वास्ते प्रतिमा के भेद [क] अर्थात् घाट बाढ़ तौलने वाले के ऊपर दण्ड लिखा है—

१. यहां पर शास्त्रार्थ समाप्त हो जाता है। इससे आगे प्रतिमापूजन की विस्तत आलोचना है।

संक्रमध्वजयष्टीनां प्रतिमानां च भेदकः ।
प्रतिकुर्याच्च तत्सर्वं पञ्च दद्याच्छतानि च ॥

यह मनु जी का श्लोक है । इस का अभिप्राय है कि संक्रम अर्थात् रथ, उस रथ के ध्वजा की यष्टि जिस के ऊपर ध्वजा बाँधी जाती है और प्रतिमा छटाँक आदिक बटखरे इन तीनों को तोड़ डालै वा अधिक न्यून कर देवै उन को उस्से राजा बनवा लेवै और जैसा जिस का ऐश्वर्य उस के योग्य दण्ड करै । जो दरिद्र होवै तो उस्से ५०० पाँच सै पैसा राजा दण्ड लेवै । जो कुछ धनाढ्य होवै तो ५०० सै रुपैया उस्से दण्ड लेवै । और जो बहुत धनाढ्य होवै उस्से ५०० सै अशर्फी दण्ड लेवै रथादिकों को उसी के हाथ सें बनवा लेवै । इस्से सज्जन लोग बटखरा तथा चमसादिक यज्ञ के पात्र उन्हों को ही प्रतिमा शब्द से निश्चित जानैं ।

दूसरा पुराण शब्द है । **पुराभवं पुराभवा वा पुराभवश्च इति पुराणं पुराणी पुराणः ।** जो पुराणा पदार्थ होवै उस को कहते हैं पुराण । सो सदा विशेषण वाची ही रहता है, तथा पुरातन प्राचीन और प्राक्तन आदिक शब्द सब हैं । तथा इनों के विरोधी विशेषण वाची नूतन नवीन अद्यतन अर्वाचीन आदिक शब्द हैं । जे विशेषण वाची शब्द होते हैं वे सब परस्पर व्यावर्तक होते हैं, जैसे कि यह चीज़ पुरानी है तथा यह चीज़ नवीन है । पुराण शब्द जो है सो नवीन शब्द की व्यावृत्ति कर देता है यह पदार्थ पुराना है अर्थात् नया नहीं और यह पदार्थ नया है अर्थात् पुराना नहीं । जहाँ जहाँ वेदादिकों में पुराणादिक शब्द आते हैं वहाँ वहाँ इन अर्थों के वाचक ही आते हैं अन्यथा नहीं । ऐसा ही अर्थ गौतम मुनि जी के किये सूत्रों के ऊपर जो वात्स्यायन मुनि का किया भाष्य उसमें लिखा है—

वहाँ ब्राह्मण पुस्तक जे शतपथादिक, उनों का ही नाम पुराण है । तथा शङ्कराचार्य जी ने भी शारीरक भाष्य में और उपनिषद्भाष्य में ब्राह्मण और ब्रह्मविद्या का ही पुराण शब्द से ग्रहण किया है । जो देखा चाहै सो उन शास्त्रों में देख लेवै । वह इस प्रकार से कहा है कि जहाँ जहाँ प्रश्न और उत्तर पूर्वक कथा होवै उसका नाम इतिहास है और जहाँ जहाँ वंश कथा होवै ब्राह्मण पुस्तकों में, उस नाम पुराण है । और ऐसे जो कहते हैं कि १८ अठारह ग्रन्थों का नाम पुराण है, यह बात तो अत्यन्त अयुक्त है । क्योंकि उस बात का वेदादिक सत्यशास्त्रों में प्रमाण कहीं नहीं है और कथा भी इनों में अयुक्त ही है । इनों का नाम कोई पुराण रक्खै तो इनों से पूछना चाहिये कि वेद क्या नवीन हो सकते हैं ? सब ग्रन्थों से वेद ही पुराने हैं । और यह बात कहते हैं कि अश्वमेध की जो पूर्ति हो जाय उसके १० में दिन पुराण की कथा यजमान सुनै । सो तो ठीक ठीक है कि ब्राह्मण पुस्तक की कथा सुनै । और जो ऐसा कहे कि ब्रह्मवैवर्तादिकों की क्यों नहीं सुनै, इस्से पूछना चाहिये कि सत्ययुग त्रेता और द्वापर में जब जब अश्वमेध भये थे तब तब किस की कथा सुनी थी । क्योंकि उस वक्त व्यास जी का जन्म भी नहीं भया था । तब पुराण कहां थे । और जो ऐसा कहै कि व्यास जी युग युग में थे । यह बात भी उसकी मिथ्या है क्योंकि अब तक युधिष्ठिरादिकों का निशान दिल्ली आदिकों में देख पड़ता है । उसी वक्त व्यास जी और व्यास जी की माता आदिक वर्तमान थे । इस्से यह भी उसका कहना मिथ्या ही है । पुराण जितने हैं ब्रह्मवैवर्त्तादिक वे सब सम्प्रदायी लोगों ने अपने २ मतलब के वास्ते बना लिए हैं । व्यास जी का अन्य ऋषि मुनियों का किया एक भी पुराण नहीं है । क्योंकि वे बड़े विद्वान थे और धर्मात्मा । उनका वचन सत्य ही है । तथा छः दर्शनों में उनों के सत्य वचन देखने में आते हैं, मिथ्या

एक भी नहीं और पुराणों में मिथ्या कथा तथा परस्पर विरोध ही है और जैसे वे सम्प्रदायी लोग हैं वैसे ही उनके बनाये पुराण भी सब नष्ट हैं। सो सज्जनों को ऐसा ही जानना उचित है अन्यथा नहीं।

तीसरा देवालय और चौथा देवपूजा शब्द है। देवालय, देवायतन, देवागार तथा देवमन्दिर इत्यादिक सब नाम यज्ञशालाओं के ही हैं क्योंकि जिस स्थान में देवपूजा होवै उसके नाम हैं देवालयादिक। और देव संज्ञा है परमेश्वर की, तथा परमेश्वर की आज्ञा जो वेद उसके मन्त्रों की भी देव संज्ञा है। देव जो होता है सोई देवता है। यह बात पूर्वमीमांसी शास्त्र में विस्तार से लिखी है। जिस को देखने की इच्छा हो वह उस शास्त्र में देख ले। विस्तार से लिखी है। जो कि शास्त्र कर्मकाण्ड के ऊपर है वे जैमिनि मुनि के किये सूत्र हैं। यहां तक उसमें लिखा है कि ब्रह्मा विष्णु महादेवादिक देव जे देवलोक में रहते हैं उनका भी पूजन कभी न करना चाहिए एक परमेश्वर के बिना। सो उस में इस प्रकार से निषेध किया है कि (**यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्**) यह यजुर्वेद की श्रुति है ब्रह्मादिक जे देव वे जब यज्ञ कर्त्ते हैं तब उनों से अन्य कौन देव हैं जे कि उन के यज्ञों में आके भाग लेवैं। सो उनों से आगे कोई देव नहीं है। और जो कोई मानेगा तो उस के मत में अनवस्था दोष आवेगा। इस्से परमेश्वर और वेदों के मन्त्र उनों को ही देव और देवता मानना उचित है, अन्य कोई को नहीं। **अग्निर्देवतेत्यादिक** जो यजुर्वेद में लिखा है सो अग्नि आदिक सब नाम परमेश्वर के ही हैं क्योंकि देवता शब्द के विशेषण देने से, इसमें मनुस्मृति का प्रमाण है।

आत्मैव देवताः सर्वाः सर्वमात्मन्यवस्थितम्।
आत्मा हि जनयत्येषां कर्मयोगं शरीरिणाम् ॥१॥
प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि।
रुक्माभं स्वप्नधीगम्यं विद्यात्तं पुरुषं परम् ॥२॥
एतमग्निं वदन्त्येके मनुमेके प्रजापतिम्।
इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥३॥

इन श्लोकों से आत्मा जो परमेश्वर उसी का देवता नाम है। और अग्न्यादिक जितने नाम हैं, वे भी परमेश्वर के ही हैं। परन्तु जहां जहां ऐसा प्रकरण हो कि उपासना स्तुति प्रार्थना तथा इस प्रकार के विशेषण वहां २ परमेश्वर का ही ग्रहण होता है अन्यत्र नहीं। किन्तु **सर्वमात्मन्यवस्थितम्** सिवाय परमेश्वर के कोई में सब जगत् नहीं ठहर सक्ता और **प्रशासितारं सर्वेषामित्यादिक** विशेषणों से परमेश्वर का ही ग्रहण होता है अन्य का नहीं। क्योंकि सब का शासन करने वाला बिना परमेश्वर से कोई नहीं। तथा सूक्ष्म से भी अत्यन्त सूक्ष्म और पर पुरुष परमेश्वर से भिन्न ऐसा कोई नहीं हो सकता है। निरुक्त में भी यह लिखा है कि (**यत्र देवतोच्यते तत्र तल्लिङ्गो मन्त्रः**) जहां जहां देवता शब्द आवै तहां तहां उस नाम वाले मन्त्र को ही लेना। जैसे कि अग्निर्देवता इसमें अग्नि शब्द आया सो जिस मन्त्र में अग्नि शब्द होवै उस मन्त्र का ही ग्रहण करना। **अग्निमीडे पुरोहितमिति** यह मन्त्र ही देवता हैं, अन्य कोई नहीं। इस्से क्या आया कि परमेश्वर और वेदों के मन्त्र तो देव और देवता हैं। जिस स्थान में होम, परमेश्वर का विचार ध्यान और समाधि करैं उसके नाम है देवालयादिक। इसमें मनुस्मृति का प्रमाण भी है—

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिसेवनम् ॥१॥

स्वाध्यायेनार्चयेतर्षीन् होमैर्देवान् यथाविधि।
पितॄन् श्राद्धैर्नॄनन्नैर्भूतानि बलिकर्म्मणा ॥

इन श्लोकों से क्या आया कि होम जो है सोई देवपूजा है अन्य कोई नहीं। और होमस्थान जितने हैं वे ही देवालयादिक शब्दों से लिये जाते हैं। पूजा नाम सत्कार क्योंकि अतिथिपूजनम् होमैर्देवानर्चयेत् अतिथियों का पूजन नाम सत्कार करना तथा देव परमेश्वर और मन्त्र इन्हों का सत्कार इसका नाम है पूजा अन्य का नहीं। और पाषाणादि मूर्त्ति स्थान देवालयादिक शब्दों से कभी नहीं लेना। तथा घण्टानादादि पूजा शब्द से कभी नहीं लेना। देवल और देवलक शब्द का यह अर्थ है कि—

यद्वित्तं यज्ञशीलानां देवस्वं तद्विदुर्बुधाः।
अयज्वनां तु यद्वित्तमासुरस्वं प्रचक्षते ॥१॥

यह मनु का श्लोक है। इसका यह अभिप्राय है कि जिन्हों का यज्ञ करने का शील अर्थात् स्वभाव होवै उसका सब धन यज्ञ के वास्ते ही होता है अर्थात् देवार्थ धन है। (यद्देवं तदेव देवस्वम्) अर्थात् होम के लिए जो धन होवै उसका नाम देवस्व है सो भिक्षा अथवा प्रतिग्रह करके यज्ञ के नाम से धन लेके यज्ञ तो करै नहीं और उस धन से अपना व्यवहार करै इसका नाम है देवल। सो इसकी शास्त्र में निन्दा लिखी है। देव पितृकार्य में उसको निमन्त्रण कभी न करना चाहिये। ऐसा उसका निषेध लिखा है। और जो यज्ञ के धन की चोरी कर्त्ता है वह होता है देवलक (कुत्सितो देवलो देवलकः कुत्सिते इत्यनेन कन् प्रत्ययः) देवलक तो अत्यन्त निन्दित है।

एक यह अन्धकार लोगों का देखना चाहिये कि विद्वान् भोजनीयः सत्कर्त्तव्यश्चेति विद्वान् को भोजन कराना चाहिये और उसका सत्कार भी करना चाहिये। इस्से कोई की ऐसी बुद्धि न होगी कि पाषाणादिक मूर्ति को भोजन कराना वा उसका सत्कार करना चाहिये। वह भी बात ऐसी ही है। एक बात वे लोग कहते हैं कि पाषाणादिक तो देव नहीं हैं, परन्तु भाव से वे देव हो जाते हैं। उनसे पूछना चाहिये कि भाव सत्य होता है वा मिथ्या। जो वे कहें कि भाव सत्य होता है फिर उन से पूछना चाहिए कि कोई भी मनुष्य दुःख का भाव नहीं कर्त्ता फिर उसको क्यों दुःख है और सुख का भाव सब मनुष्य सदा चाहते हैं फिर उनको सुख सदा क्यों नहीं होता। फिर वे कहते हैं कि यह बात तो कर्म से होती है। अच्छा तो आपका भाव कुछ भी नहीं ठहरा अर्थात् मिथ्या ही हुआ, सत्य नहीं हुआ। आप से मैं पूछता हूँ कि अग्नि में जल का भाव करके हाथ डाले तो क्या वह न जल जायगा किन्तु जल ही जायगा। इस्से क्या आया कि पाषाण को पाषाण ही मानना और देव को देव मानना चाहिये अन्यथा नहीं। इस्से जो जैसा पदार्थ है वैसा ही उसको सज्जन लोग मानै। काश्यादिक स्थान-गंगादिक तीर्थ, एकादशी आदिक व्रत, राम शिव कृष्णादिक नामस्मरण तथा तोबा शब्द वा यीसू के विश्वास से पापों का छूटना और मुक्ति का होना, तिलक छाप माला धारण तथा शैव शाक्त गाणपत्य वैष्णव क्रिश्चन और महम्मदी और नान्हक कबीर आदिक सम्प्रदाय इन्हों से पाप सब छूट जाते हैं और मुक्ति भी होती है, यह अन्यथा बुद्धि ही है, क्योंकि इस प्रकार के सुनने और मिथ्या निश्चय के होने से सब लोग पापों में प्रवृत्त हो जाते हैं, कोई न भी होगा, कभी कोई मनुष्य पाप करने में भय नहीं करते हैं जैसे—

अन्यक्षेत्रे कृतं पापं काशीक्षेत्रे विनश्यति ।
काशीक्षेत्रे कृतं पापं पञ्चक्रोश्यां विनश्यति ॥१॥
पञ्चक्रोश्यां कृतं पापमन्तर्गृह्यां विनश्यति ।
अन्तर्गृह्यां कृतं पापमविमुक्ते विनश्यति ॥२॥
अविमुक्ते कृतं पापं स्मरणादेव नश्यति ।
काश्यां तु मरणान्मुक्तिर्नात्र कार्या विचारणा ॥३॥

इत्यादिक श्लोक काशीखण्डादिकों में लिखे हैं। **काश्यां मरणान्मुक्तिः** कोई पुरुष इसको श्रुति कहता है। सो यह वचन उसका मिथ्या ही है, क्योंकि चारों वेदों के बीच में कहीं नहीं है। कोई ने मिथ्या जाबालोपनिषद् रच लिया है किन्तु अथर्ववेद के संहिता में तथा कोई वेद के ब्राह्मण में इस प्रकार की श्रुति है नहीं। इस्से यह श्रुति तो कभी हो नहीं सक्ती, किन्तु कोई ने मिथ्या कल्पना करली है। जैसे कि अन्यक्षेत्रे कृतं पापं इत्यादि श्लोक मिथ्या बना लिये हैं। इस प्रकार के श्लोकों को सुनने से मनुष्यों की बुद्धि भ्रष्ट होने से सदा पाप में प्रवृत्त हो जाते हैं। इस्से सब सज्जन लोगों को निश्चित जानना चाहिये कि जितने जितने इस प्रकार के माहात्म्य लिखे हैं वे सब मिथ्या ही हैं। इनों से मनुष्यों का बड़ा अनुपकार होता है। जो कोई धर्मात्मा बुद्धिमान् राजा होवै तो इन पुस्तकों का पठन पाठन सुनना सुनाना बन्द करदे और वेदादि सत्य शास्त्रों की यथावत् प्रवृत्ति करा देवै। तब इस उपद्रव की यथावत् शान्ति होने से सब मनुष्य शिष्ट हो जायँ अन्यथा नहीं।

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धनी ॥ [यो० समा० ३५]

इस सूत्र के भाष्य में लिखा है कि **एतेन चन्द्रादित्यग्रहमणिप्रदीपरत्नादिषु प्रवृत्तिरुत्पन्ना विषयवत्येव वेदितव्येति।** इससे प्रतिमापूजन कभी नहीं आसक्ता क्योंकि इनों में देवबुद्धि करना नहीं लिखा। किन्तु जैसे वे जड़ हैं वैसे ही योगी लोग उनको जानते हैं और बाह्यमुख जो वृत्ति उसको भीतर मुख करने के वास्ते योगशास्त्र की प्रवृत्ति है। बाहर के पदार्थ का ध्यान करना योगी लोग को नहीं लिखा। क्योंकि जितने सावयव पदार्थ हैं उनमें कभी चित्त की स्थिरता नहीं होती। और जो होवै तो मूर्तिमान् धन पुत्र दारादिक के ध्यान में सब संसार लगा ही है, परन्तु चित्त की स्थिरता कोई की भी नहीं होती। इस वास्ते यह सूत्र लिखा—

'**विशोका वा ज्योतिष्मती** [यो० समा० ३६] इसका यह भाष्य है—

प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धनीत्यनुवर्तते। हृदयपुण्डरीके धारयतो या बुद्धिसंवित् बुद्धिसत्त्वं हि भास्वरमाकाशकल्पन्तत्र स्थितिवैशारद्यात् प्रवृत्तिः सूर्येन्दुग्रहमणिप्रभारूपाकारेण विकल्पते। तथास्मितायां समापन्नं चित्तं निस्तरङ्गमहोदधिकल्पं शान्तमनन्तमस्मितामात्रं भवति। यत्रेदमुक्तम्--तमणुमात्रमात्मानमनुविद्यास्मीति एवं तावत् संप्रजानीत इति। एषा द्वयी विशोका विषयवती, अस्मितामात्रा च प्रवृत्तिर्ज्योतिष्मतीत्युच्यते यया योगिनश्चित्तं स्थितिपदं लभत इति।

इसमें देखना चाहिये कि हृदय में धारणा चित्त की लिखी। इस्से निर्मल प्रकाशस्वरूप चित्त होता है। जैसा सूक्ष्म विभु आकाश है वैसी ही योगी की बुद्धि होती है। तत्र नाम अपने हृदय में विशाल स्थिति के होने से बुद्धि की जो शुद्ध प्रवृत्ति सोई बुद्धि सूर्य चन्द्र ग्रह मणि इनों की जैसी प्रभा,

वैसे ही योगी की बुद्धि समाधि में होती है। तथा अस्मिता मात्रा अर्थात् यही मेरा स्वरूप है ऐसा साक्षात्कार स्वरूप का ज्ञान बुद्धि को जब होता है, तब चित्त निस्तरङ्ग अर्थात् निष्कम्प समुद्र की नाईं एक रस व्यापक होता है। तथा शान्त निरुपद्रव अनन्त अर्थात् जिसकी सीमा न होवै यही मेरा स्वरूप है अर्थात् मेरा आत्मा है सो विगत अर्थात् शोक रहित जो प्रवृत्ति वही विषयवती प्रवृत्ति कहाती है। उसी को अस्मितामात्र प्रवृत्ति कहते हैं। तथा ज्योतिष्मती भी उसी को कहते हैं। योगी का जो चित्त है सोई चन्द्रादित्य आदिक स्वरूप हो जाता है।

सू० स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा ॥ [यो० समा० ३८]

भाष्य—**स्वप्नज्ञानालम्बनं निद्राज्ञानालम्बनं वा तदाकारं योगिनश्चित्तं स्थितिपदं लभत इति।** जैसे स्वप्नावस्था में चित्त ज्ञानस्वरूप होके पूर्वानुभूत संस्कारों को यथावत् देखता है तथा निद्रा अर्थात् सुषुप्ति में आनन्दस्वरूप ज्ञानवान् चित्त होता है ऐसा ही जागृतावस्था में जब योगी ध्यान कर्त्ता है, इस प्रकार आलम्ब से तब योगी का चित्त स्थिर हो जाता है।

सू० यथाभिमतध्यानाद्वा ॥ [यो० समा० ३९]

भाष्य०—**यदेवाभिमतं तदेव ध्यायेत् तत्र लब्धस्थितिकमन्यत्रापि स्थितिपदं लभत इति। नासिकाग्रे धारयतो या गन्धसंवित्।** इस्से लेके निद्राज्ञानालम्बनं वा यहां तक शरीर में जितने चित्त के स्थिर करने के वास्ते स्थान लिखे हैं इनों में से कोई स्थान में योगी चित्त को धारण करै। जिस स्थान में अपनी अभिमति उस में चित्त को ठहरावै।

सू० देशबन्धश्चित्तस्य धारणा। [योग० विभू० १]

भाष्य०—**नाभिचक्रे हृदयेपुण्डरीके मूर्ध्नि ज्योतिषि नासिकाग्रे जिह्वाग्र इत्येवमादिषु देवेषु बाह्ये वा विषये चित्तस्य वृत्तिमात्रेण बन्धइति। बन्धो धारणा।** नाभि हृदय मूर्द्धा ज्योति अर्थात् नेत्र नासिकाग्र जिह्वाग्र इत्यादिक देशों के बीच में चित्त को योगी धारण करै तथा बाह्य विषय जैसा कि ओङ्कार वा गायत्री मन्त्र इनमें चित्त लगावे हृदय से। क्योंकि **तज्जपस्तदर्थभावनम्।** [स० पाद २८] यह सूत्र है योग का। इसका योगी जप अर्थात् चित्त से पुनः पुनः आवृत्ति करै और इसका अर्थ जो ईश्वर उसको हृदय में विचारै।

सू० तस्य वाचकः प्रणवः। [स० २७]

ओङ्कार का वाच्य ईश्वर है और उसका वाचक ओङ्कार है। बाह्य विषय से इनको ही लेना और कोई को नहीं। क्योंकि अन्य का प्रमाण कहीं नहीं।

सू० तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् [योग० विभू० २]

भाष्य०—**तस्मिन्देशे ध्येयालम्बनस्य प्रत्ययस्यैकतानता सदृशः प्रवाहः प्रत्ययान्तेरणापरामृष्टो ध्यानम्।**

तिन देशों में अर्थात् नाभि आदिकों में ध्येय जो आत्मा उस आलम्बन की और चित्त की एकतानता अर्थात् परस्पर दोनों की एकता चित्त आत्मा से भिन्न न रहै तथा आत्मा चित्त से पृथक् न रहैं उसका नाम है सदृशप्रवाह, जब चित्त प्रत्येकचेतन से ही युक्त रहै अन्य प्रत्यय कोई पदार्थान्तर का स्मरण न रहै तब जानना कि ध्यान ठीक हुआ।

सू० तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः [यो० विभू० ३]

जब ध्याता, ध्यान और ध्येय इन तीनों का पृथक् भाव न रहै तब जानना कि समाधि सिद्ध होगई।

सू० त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्यः। [यो० वि० ७]

यमादिक पाँच अङ्गों से धारणा ध्यान और समाधि ये तीन अन्तरङ्ग हैं और यमादिक वहिरङ्ग हैं।

सू० भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात्। [विभू० २६]

चन्द्रे ताराव्यूहज्ञानम् ॥२७॥

ध्रुवे तद्गतिज्ञानम् ॥२८॥

नाभिचक्रे कायव्यूहज्ञानम् ॥२९॥

मूर्द्धज्योतिषि सिद्धदर्शनम् ॥३२॥

प्रातिभाद्वा सर्वम् ॥३३॥

इत्यादिक सूत्रों से यह प्रसिद्ध जाना जाता है कि धारणादिक तीन अङ्ग आभ्यन्तर के हैं सो हृदय में ही योगी परमाणु पर्यन्त [जितने] पदार्थ हैं उनको योग ज्ञान से जानता है। बाहर के पदार्थों से किंचिन्मात्र भी ध्यान में सम्बन्ध योगी नहीं रखता। किन्तु आत्मा से ही ध्यान का सम्बन्ध है और से नहीं। इस विषय में जो कोई अन्यथा कहै सो उसका कहना सब सज्जन लोग मिथ्या ही जानैं। क्योंकि—

सू० योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥ [समा० २]

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ॥ [समा० ३]

जब योगी चित्तवृत्तियों को निरोध कर्त्ता है, बाहर और भीतर से उसी वक्त द्रष्टा जो आत्मा उस के चेतन स्वरूप में ही स्थित हो जाती है अन्यत्र नहीं।

सू० विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रुपप्रतिष्ठम् ॥ [समा० ८]

विपरीत ज्ञान जो होता है उसी को मिथ्या-ज्ञान कहते हैं। उसको तो योगी छोड़ के ही होता है अन्यथा कभी नहीं। इस्से क्या आया कि कोई योगशास्त्र से पाषाणादिक मूर्त्ति का पूजन कहे सो मिथ्या ही कहता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

श्लोक :--

दयाया आनन्दो विलसति परः स्वात्मविदितः
सरस्वत्यस्यान्ते निवसति मुदा सत्यवचना।
तदाख्यातिर्यस्य प्रकटितगुणा राष्ट्रिशरणा
स को दान्तः शान्तो विदितविदितो वेद्यविदितः ॥१॥

श्रीदयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचितमिदमिति विज्ञेयम् ॥[1]

---

१. हुगली शास्त्रार्थ तथा प्रतिमापूजन विचार का एक संक्षिप्त रूप "शास्त्रार्थ हुगली" के नाम से आर्यदर्पण के निम्नलिखित अङ्कों में छपा है—फरवरी १८८०, पृ० ३५—४२। मार्च १८८० पृ० ५०—५३। जून १८८० पृ० १२५—१२७। [आर्यदर्पण मासिक पत्र हिन्दी उर्दू दोनों लिपियों में मुंशी बख्तावरसिंह द्वारा शाहजहांपुर से प्रकाशित होता था। यु० मी०]

[१] पत्र-सारांश–(२) [५]

[रङ्गाचार्य, वृन्दावन]

आप कहते हैं कि मूर्ति-पूजा, कण्ठी तिलक वेद से सिद्ध हैं, सो कृपया अब उन्हें सिद्ध करके दिखलाइये।[1]

---

[१] पत्र-सारांश[2]–(३) [६]

विशुद्धानन्द निकल गया। इस में जो सत्य सत्य कारण होय सो शीघ्र लिख भेजना। वृन्दावन सेठ जी के बाग में पूर्व निकट मलूकदास जी का बाग ठिकाना लिफाफा के ऊपर लिख दीजिए। हम को अनुमान से ज्ञात है कि युगल किशोर से पढ़ाया नहीं गया होगा। अथवा और कुछ कारण हुआ होगा। जो ऐसे ऐसे विद्यार्थी चले जायेंगे तो पढ़ाने वाले की त्रुटि गिनी जाएगी। इसका हाल शीघ्र लिखो। और कौन क्या क्या पढ़ता है सो भी लिखना, जो जैसा वर्तमान होय। संवत् १९३०[3]

[चैत्र वदी ४ शनि संवत् १९३०][3]

---

[१] पत्र (४) [७]

स्वामी दयानन्द की आशीष पहुँचे। आगे सुदी ७ का लिखा पत्र पहुँचा। समाचार भी विदित हुआ। यहाँ एक मास तक तो हमारी स्थिति होगी। सो जानना। यहाँ की पाठशाला का प्रबन्ध बहुत अच्छा है। एक छः शास्त्रों का पढ़ाने वाला बहुत उत्तम अध्यापक रक्खा गया है। वैसा ही एक वैयाकरण स्थापन किया गया है। दशाश्वमेध पर स्थान लिया गया है, बहुत उत्तम। इसमें पाठशाला पूर्णमासी के पीछे बैठेगी। केदारघाट का स्थान अच्छा नहीं था। इससे अब हमारे पास बाग[4] में

---

१. यह पत्र फाल्गुन शु० ११ सं० १९३० (२६ फरवरी सन् १८७४) के एक दो दिन पश्चात् लिखा गया होगा। इसी तिथि को स्वामी जी महाराज वृन्दावन पधारे थे। उपर्युक्त पत्रसारांश पं० देवेन्द्रनाथ सङ्कलित जी०च० पृष्ठ २६१ पर उद्धृत है। यु० मी०।

२. नहीं कह सकते कि यह पत्र किस को लिखा गया था, और मूल संस्कृत में था अथवा आर्यभाषा में। जीवनचरित से इतना निश्चित होता है कि पत्र में कासगंज जिला ऐटा की पाठशाला का उल्लेख है। अतः वहीं के किसी अधिकारी को लिखा गया होगा।

३. पं० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ७८४ पर उद्धृत। इसके सम्बन्ध में पत्र से पहले पं० लेखराम जी ने लिखा है—"इस पाठशाला के सम्बन्ध में स्वामीजी की ७ मार्च १८७४ की चिट्ठी वृन्दावन से लिखी हुई थी। उसका संक्षिप्त अभिप्राय नीचे है।" इति।

४. सर्यू प्रसाद बनिया का बाग। देखो पं० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ७८१ साधु ज्वाहरदास जी का कथन।

यह पत्र कानपुर निवासी बाबू शिवसहाय गौड़ ब्राह्मण को लिखा गया था। यह व्यक्ति श्री स्वामी जी

पाठशाला है। अच्छे २ विद्यार्थी भी पढ़ते हैं। सो जानना। आगे तुम पत्र देखते ही रुपया और पुस्तक जल्दी भेजदो। विलम्ब क्षण मात्र भी मत करना। और दिनेशराम को एक महाभाष्य पुस्तक देकर और सब पुस्तक यहाँ भेजदो। और जो दिनेशराम न दे तो फिर देखा जायगा। तुम अपने पास के पुस्तक और रुपया यह हुण्डी कराके शीघ्र भेजदो। आगे गोपाल वा अन्य को पढ़ने की इच्छा होवे सो चला आवे। ब्रह्मचारी लक्ष्मीनारायण यहाँ अब तक नहीं आया। और न कोई तुम्हारा पुत्र। किन्तु पत्र आया इस का यह उत्तर जानना। और सब यहाँ आनन्द मङ्गल है। और पं० युगलकिशोर मेहता गोपालदत्त और दिनेशराम आदि को भी हमारा प्रत्यभिवादन कह देना।

संवत् १९३१ मिति ज्येष्ठ सुदी १३ शुक्रवार। [२९ मई १८७४ काशी[1]]

---

[३] [विज्ञापन सारांश] [८]

जो कोई मुझ से किसी धर्मसम्बन्धी विषय पर शास्त्रार्थ करना चाहे वह, नियत समय पर मेरे स्थल पर आकर कर सकता है।[1]

---

[४] विज्ञापन पत्र[2] [९]

एक समाचार सबको विदित हो कि आप का आर्य्य-विद्यालय काशी में संवत् १९३० पौष मास तदनुसार दिसम्बर सन् १८७३ में केदार घाट पर जिसका आरम्भ हुआ था वही अब मित्रपुर भैरवी मुहल्ला, मिश्र दुर्गाप्रसाद के स्थान में संवत् १९३१ मिति आषाढ़ सुदी ५ शुक्रवार १९ जून सन् १८७४ प्रातःकाल ७ बजे से उपरान्त आरम्भ होगा। इसका प्रबन्ध अब अच्छे प्रकार होगा। प्रातः सात बजे से पठन और पाठन होगा दस ग्यारह तक और फिर एक बजे से पाँच बजे तक। इसमें अध्यापक गणेश श्रोत्रियजी रहेंगे। सो पूर्वमीमांसा, वैशेषिक, न्याय, पातञ्जल, सांख्य, वेदान्त दर्शन, ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक दश उपनिषद्,

---

का प्रमाण पत्र ले कर काशी की पाठशाला के लिए भिन्न २ नगरों में धन एकत्र कर रहा था। जब वह फर्रुखाबाद में था, तब उसे यह पत्र लिखा गया। देखो पं० लेखराम कृत जीवनचरित पृ० ७८७।

संवत् १९३६ तदनुसार सन् १८८० में यही श्री शिवसहाय मिश्र जी आर्यसमाज कानपुर के मन्त्री थे। देखो भारत सुदशा प्रवर्तक मार्च १८८० पृ० ८।

१. विज्ञापन का उक्त सारांश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० २७६, पर उद्धृत है। यह विज्ञापन आषाढ़ बदी २ सं० १९३१ (१ जुलाई सन् १८७४) को प्रयाग पहुँचने के दो तीन दिन पश्चात् बांटा गया था। यु०मी०।

२. कविवचन सुधा (हिन्दी मासिक पत्रिका काशी) आषाढ़ सुदी ६ शनि संवत् १९३१ तदनुसार २० जून १८७४ में प्रथम मुद्रित हुआ। वहां से विहारबन्धु भाग २ अङ्क २१ आषाढ़ सुदी १४ संवत् १९३१ तदनुसार २८ जून १८७४ में छपा। विहारबन्धु से पं० लेखराम जी ने लिया। जीवन चरित पृ० ७८८, ७८९। पं० लेखराम कृत जीवन चरित में अंग्रेज़ी तिथि के देने में जो अशुद्धि हुई है, वह हमने दूर कर दी है। पं० घासी रामकृत जीवन चरित पृ० २७१ पर भी तिथि की थोड़ी सी अशुद्धि रही है, पाठक उसे ठीक करलें।

मनुस्मृति, कात्यायन और पारस्कर कृत गृह्यसूत्र, इनको पढ़ाया जायगा। थोड़े समय के पीछे चार वेद, चार उपवेद तथा ज्योतिष के ग्रन्थ भी पढ़ाये जायेंगे और एक उपवैयाकरण रहेगा। वह अष्टाध्यायी, धातुपाठगण आदिगण[1], शिक्षा और प्रातिपदिक गणपाठ यह पाँच पाणिनि मुनिकृत और पतञ्जलि मुनिकृत भाष्य, पिङ्गलमुनिकृत छन्दोग्रन्थ, यास्कमुनिकृत निरुक्त, निघण्टु और काव्यालङ्कार सूत्रभाष्य इन सब को पढ़ना होगा। जिनको पढ़ने की इच्छा होवे सो आकर पढ़ें। जो विद्या और श्रेष्ठाचार की परीक्षा में उत्तम होगा उसकी परीक्षा के पीछे पारितोषिक यथायोग्य मिलेगा। सो परीक्षा मास मास में होगी। इसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य सब पढ़ेंगे वेद पर्य्यन्त। और शूद्र मन्त्र भाग को छोड़के सब शास्त्र पढ़ेंगे। फिर जब जब इस आर्य विद्यालय के लिए अधिकाधिक चन्दा होगा, तब तब अध्यापक और विद्यार्थी लोगों को भी बढ़ाया जायगा। इस की रक्षा और वृद्धि के लिए एक आर्यसभा स्थापित हुई है और एक आर्य-प्रकाश पत्र भी निकलेगा मास मास में। इन तीनों बातों की प्रवृत्ति के लिए बहुत भद्र लोग प्रवृत्त हुए हैं और बहुत प्रवृत्त होंगे। इससे ही आर्यावर्त्त देश की उन्नति होगी। इस विद्यालय में यथावत् शिक्षा दी जावेगी, जिससे कि सब उत्तम व्यवहार युक्त होवें।

हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वती

---

[५] [विज्ञापन[2]] [१०]

इस्से यह मेरा विज्ञापन[3] है आर्यावर्त्त देश का राजा इंगरेज बहादुर से कि संस्कृत विद्या की ऋषि मुनियों की रीति से प्रवृत्ति करायै। इस्से राजा और प्रजा को अनन्त सुख लाभ होगा। और जितने आर्यावर्त्त वासी सज्जन लोग हैं उनसे भी मेरा यह कहना है कि इस सनातन संस्कृत विद्या का उद्धार अवश्य करें ऋषि मुनियों की रीति से तो अत्यन्त आनन्द होगा। और जो यह संस्कृतविद्या लोप हो जायगी तो सब मनुष्यों की बहुत हानि होगी। इसमें कुछ सन्देह नहीं।

---

१. यहां मूल विज्ञापन में कदाचित् 'उणादिगण' शब्द के स्थान में 'आदिगण' छपा है। देखो उपदेशमञ्जरी १० वां व्याख्यान पाणिनि मुनि कृत ग्रन्थ वर्णन—'इन महामुनि ने पांच पुस्तकें बनाई हैं—१ शिक्षा २ उणादिगण, ३ धातुपाठ, ४ प्रातिपदिक गण ५ अष्टाध्यायी।' पूर्ण संख्या १३ के पत्र में भी 'पाणिनि मुनि रचित उणादिगण सूत्र' शब्द का व्यवहार हुआ है। उपर्युक्त विज्ञापन तथा उपदेशमञ्जरी में लिङ्गानुशासन का नाम छूटा है। संस्कारविधिस्थ वेदारम्भान्तर्गत पठनपाठन विधि में पाणिनि मुनि कृत ग्रन्थों में लिङ्गानुशासन की भी गणना की है। यु० मी०।

२. राजा जयकृष्णदास जी ने सत्यार्थप्रकाश का पहला संस्करण मुद्रित कराया था। यद्यपि श्री स्वामी जी ने १४ समुल्लास ही लिखवाए थे, तथापि छपे केवल १२ समुल्लास ही थे। उपर्युक्त लेख हस्तलिखित प्रति के चौदहवें समुल्लास के अन्त में (पृष्ठ ४८५, ४८६, ४९३–४९५ तक) हैं।

[सत्यार्थ प्रकाश की इस हस्तलिखित प्रति के विशेष परिचय के लिए देखो वेदवाणी वर्ष ३ अंक ६ में [पृष्ठ १८-२१] श्री पं० मामराज जी का "प्रथमसत्यार्थ प्रकाश के हस्तलेख का परिचय" शीर्षक लेख तथा पं० युधिष्ठिरजी मीमांसक कृत "ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास", परिशिष्ट ४ (पृष्ठ ७१–७४)। यु० मी०]।

मैंने अपने घर में कुछ वेद का पाठ और विद्या भी पढ़ी। फिर नर्मदा तट में दर्शन शास्त्रों को पढ़ा। फिर मथुरा में श्री स्वामी विरजानन्द सरस्वती दण्डी जी से पूर्ण व्याकरणादिक विद्याभ्यास किया जो कि बड़े विद्वान् थे। उनके पास रह के सब शंका समाधान किये। फिर मथुरा से आगरा नगर में दो वर्ष तक स्थिति किई। वहां ऋषि मुनियों के सनातन पुस्तक और नवीन पुस्तक भी बहुत मिले। उनको विचारा। फिर ग्वालेर में स्थिति किई। वहां भी जो २ पुस्तक मिला उनका विचार किया। ऐसे ही देश देशान्तर में भ्रमण किया। जहां २ जो २ पुस्तक मिला उनका विचार किया। जहां २ मुझ को शंका रह जाती थी उनका स्वामी जी से उत्तर यथावत् पाया। फिर पुस्तकों को देख के एकान्त में जाके विचार किया। अपने हृदय में शंका और समाधान किये। सो यह ठीक २ निश्चय हृदय में भया कि वेद और सनातन ऋषि मुनियों के शास्त्र सत्य हैं। क्योंकि—इन में कोई असंभव वा अयुक्त कथा नहीं है। जो कुछ है उन शास्त्रों में सो सत्य पदार्थ विद्या और सब मनुष्यों के वास्ते हितोपदेश हैं। और इनके पढ़ने से विना मनुष्य को सत्य २ ज्ञान कभी न होगा। इस्से इनको अवश्य सब मनुष्यों को पढ़ना चाहिये। और जिनको दूर छोड़ने कहा कि न इन को पढ़ें न पढ़ावें न इनको देखे, क्योंकि इनको देखने से वा सुनने से मनुष्य की बुद्धि बिगड़ जाती है। इस्से इन ग्रन्थों को संसार में रहने भी न दें तो बहुत उपकार होय। सब मनुष्यों को यह व्यवहार करना उचित है कि पहर रात्रि रहे तब उठे। उठ के शौचादि क्रिया करे। फिर कुछ भ्रमण शुद्ध देश में करे। जहाँ २ शुद्ध वायु हो एकान्त में जाके गायत्री मन्त्रादिकों के अर्थ से परमेश्वर की स्तुति करे। फिर प्रार्थना करे कि "हे परमेश्वर आप की कृपा से हम पवित्र होके और धर्म में तथा अच्छे गुण ग्रहणों में तत्पर होवैं। परन्तु आपकी कृपा से ही जो अच्छा होता है सो होता है। सो आप ऐसी सब जीवों पर कृपा कीजिये कि सब जीव आपकी आज्ञा सद्गुण ग्रहण और आपके स्वरूप में ही विश्वासादि गुण युक्त होके स्थिर होवैं। फिर उपासना कि—सब इन्द्रिय प्राण और जीवात्मा को एकत्र स्थिर करके परमेश्वर में स्थिर समाधिस्थ होके अनन्त जो परमेश्वर का आनन्द उसमें मग्न हो जाय। फिर चिरकाल ऐसे परमेश्वर का ध्यान [करें।]

....

परन्तु आर्यावर्त्त देश पर मुझ को बहुत पश्चाताप है क्योंकि इस देश में प्रथम बहुत सुखों और विद्याओं की उन्नति थी। बहुत ऋषि मुनि बड़े २ विद्वान इस देश में भये थे जिन के अच्छे २ काम और अच्छे२ विद्यापुस्तक अब तक चले आते हैं। अच्छे २ राजधर्म के चलाने वाले राजा भी हुए हैं जिनों ने कभी पक्षपात,कोई काम नहीं किया है किन्तु सदा धर्म न्याय में ही प्रवृत्त भये हैं। सो देश इस वक्त ऐसा बिगड़ा है कि इतना बिगाड़ कोई देश में नहीं देखने में आता है। सो हमारी प्रार्थना सब आर्यावर्त्त वासी राजा और प्रजा से है कि उक्त बुरे कामों को छोड़ के अच्छे कामों में प्रवृत्त होवैं। और जो कोई अन्य देशीय राजा आर्यावर्त्त में है उस्से भी मेरी प्रार्थना यह है कि इस देश में सनातन ऋषि मुनियों के किये उक्त ग्रन्थ और ऋषि मुनियों की गई वेदों की व्याख्या उसी रीति से वेदों का यथावत् अर्थ ज्ञान और उनमें उक्त जे व्यवहारों के नियम उनकी प्रवृत्ति यथावत् करावै। इसी से ही यह देश सुधरेगा अन्यथा नहीं। और भी यह है सत्य विद्या और सत्य व्यवहार सब देशों में प्रवृत्त होना चाहिये। परन्तु आर्यावर्त्त देश की स्वाभाविक सनातन विद्या संस्कृत ही है जो कि उक्त प्रकार से प्रथम कही, उसी से इस देश का कल्याण होगा, अन्य देश भाषा से नहीं। अन्य देश भाषा तो जितना

प्रयोजन, उतनी ही पढ़नी चाहिये। और विद्या स्थान में संस्कृत ही रखना चाहिए। राजा का मूर्ख होना तो बहुत बुरा है परन्तु प्रजा का भी मूर्ख रहना बुरा है। किन्तु मूर्खों के ऊपर राज्य करने से राजा की शोभा नहीं। किन्तु प्रजा को विद्या युक्त धर्मात्मा और चतुर करके उन पर राज्य करने में राजा और प्रजा की शोभा और सुखों की उन्नति होती है। ऐसा कानून राजा और प्रजा को चलाना और मानना चाहिये जिस्से द्यूत चोरी परस्त्रीगमन और मिथ्या साक्षी और बाल्यावस्था में विवाह और विद्या का लोप न होने पावे। फिर राजा और प्रजा उस कानून को धर्म माने और उस पर ही सब चलैं। परन्तु ऐसा वह कानूनन होय जिस्से लोक और परलोक दोनों शुद्ध होवैं। वह कानून धर्म से कुछ भी विरुद्ध न होवे क्योंकि धर्म नाम है न्याय का और न्याय नाम है पक्षपात का छोड़ना उनका ज्ञान सब मनुष्यों को यथावत् होना चाहिये। धर्म का रक्षक विद्या ही है क्योंकि विद्या से ही धर्म और अधर्म का बोध होता है। उन से सब मनुष्यों को हिताहित का बोध होता है अन्यथा नहीं। सो मैं परमेश्वर से अत्यन्त प्रार्थना कर्ता हूँ कि हे परमेश्वर हे सच्चिदानन्द अनन्त स्वरूप हे नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव हे न्यायकारिन् हे सर्वशक्तिमन हे अज हे अमृत हे अन्तर्यामिन हे सर्वजगदुत्पादक हे सर्वजगद्धारक हे करुणानिधे! सब जगत् के ऊपर ऐसी कृपा करें जिस्से कि सम्पूर्ण विद्या का लाभ वेदादिक सत्य शास्त्रों का ऋषि मुनियों की रीति से होगा। परन्तु सर्वत्र धर्म व्यवहार में परमेश्वर की प्रार्थना सब को करनी उचित है। इसी से सब उत्तम ला[भ] मनुष्यों को होते है।[1]

ओ३म शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा। शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः॥ नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम् ॥ ऋतमवादिषं सत्यमवादिषं तन्मामावीत्तद्वक्तारमावीदावीन् मामावीद् वक्तारम्॥ ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

इति श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिकृते सत्यार्थप्रकाशे सुभाषाविरचिते
चतुर्दशस्समुल्लासस्सम्पूर्णः ॥१४॥[2]

---

१. प्रथम संस्करण के सत्यार्थप्रकाश के लिए जो प्रेस कापी लिखी गई थी, उस में १३ वां समुल्लास कुरानमत समीक्षा का था और १४वां समुल्लास ईसाई मत अथवा "गौरण्डमत" समीक्षा का था। ईसाई मत समीक्षा के अन्त में यह उपर्युक्त विज्ञापन था। उसका कुछ अत्यन्त उपयोगी अंश हम ने यहां छाप दिया है।

कुरान मत समीक्षा और बाईबल समीक्षा दोनों लिखी जा चुकी थीं, इस का उल्लेख पूर्ण संख्या ११ (पृष्ठ २४) में देखिये। वह पत्र २३ जनवरी सन् १८७५ का है।

तेरहवें समुल्लास अर्थात् कुरान मत समीक्षा के सम्बन्ध में श्री स्वामी जी का लिखवाया हुआ निम्नलिखित विवरण है। इसे अत्युपयोगी और ऐतिहासिक दृष्टि से बहुमूल्य समझ कर आगे देते हैं —

"जितना हमने लिखा इस का यथावत् सज्जन लोग विचार करें, पक्षपात छोड़ के तो जैसा हमने लिखा वैसा ही उन को निश्चय होगा। यह कुरान के विषय में जो लिखा गया है सो पटना शहर ठिकाना गुड़हट्टा में रहने वाले मुन्शी मनोहर लाल जी जो अरबी में भी पण्डित हैं उनके सहाय से और निश्चय करके कुरान के विषय में हमने लिखा है।" इति।

२. यह सारा लेख संवत् १९३१ के मध्य अथवा सितम्बर १८७४ में लिखाया गया।

[१]　　पत्र (५)　　[११]

बलदेवसिंह शर्मा

आजकल दयानन्द स्वामी यहां पर ठहरे हैं। उनको तुम्हारी बड़ी जरूरत है और तुम्हारे बिना इनको बहुत क्लेश है। इसलिये स्वामी जी की आज्ञानुसार तथा राजा साहब की सम्मति से तुमको लिखा जाता है कि तुम इस पत्र को देखते ही जल्द चले आओ। और कुछ विलम्ब मत करो। क्योंकि स्वामी जी दो चार दिनमें दक्षिण में जायेंगे।

ता० २६ सितम्बर सन् १८७४
असूज बदी १ शनिवार सम्वत् १९३१ वि०।[२]　　} ज्वाला प्रसाद (प्रयाग)[१]

———

[१]　　पत्र [६]　　[१२]

स्वस्तिश्रीमच्छ्रेष्ठोपमायोग्य लाला हरिवंश लाल आदि को दयानन्द सरस्वती स्वामी की आशिष पहुंचे। या आगे मंडनराम पण्डित और बलदेवदत्त स्वामी जी के शिष्य का आशीर्वाद यथोचित पहुंचे। यहां कुशल आनन्द है। आप लोगों का कुशल आनन्द चाहिये। आगे पौष बदि ५ सम्वत् १९३१ (२८ दिसम्बर सन १८७४) को अहमदाबाद से राजकोट काठियावाड़ में गये। वहाँ दस बारह वक्तृत्व भये। लोग सुन के बड़े प्रसन्न भये। राजकोट में एक राजकुमार पाठशाला है। सो इस में राजकुमार लोग पढ़ते हैं। कई राजकुमार वक्तृत्व में आते रहे। सुन के बहुत प्रसन्न भये। एक दिन मास्टर लोग स्वामी जी को राजकुमार पाठशाला में ले गये। स्वामी जी ने वहाँ भी वक्तृत्व किया। राजकुमार लोग सब बहुत प्रसन्न भये। फिर स्वामी जी ने राजकुमार लोगों को बहुत शिक्षा की। फिर राजकुमार पाठशाला के प्रिन्सिपल साहब ने स्वामी जी से कई बातें पूछीं। स्वामी जी ने सब का उत्तर दिया। साहब भी बहुत प्रसन्न हुए। स्वामी जी को दो जिल्द ऋग्वेद के पुस्तक नज़र किये।

पौष सुदि ११ संवत् १९३१ सोमवार (१८ जनवरी १८७५) को राजकोट से अहमदाबाद को चले। पूर्णमासी बृहस्पतिवार (२१ जनवरी सन् १८७५) को अहमदाबाद में आये। पांच सात दिन रहेंगे। फिर मुम्बई की तरफ जायेंगे। बड़ोदा में नहीं जायेंगे। बड़ोदा में गड़बड़ मची है। अंग्रेज़ लोग फौज़ लेके चढ़ गये, राजा को कैद कर लिया। राजा के ऊपर विष का फरेब लगा के[३]।

आगे सत्यार्थ-प्रकाश कितने अध्याय तक छपा? जितना छपा[४] हो तितना राजा जयकृष्णदास के पास भेज दो। जल्दी छापो, यहां बहुत से लोग लेने को कहते हैं। इसके बिना बहुत हरकत है और

---

१. श्री ज्वालाप्रसाद जी राजा जयकृष्णदास जी के पुत्र थे। श्री स्वामी जी की आज्ञा से ही यह पत्र लिखा गया था। पत्र किस स्थान को लिखा गया, यह ज्ञात नहीं हो सका।

२. पं० लेखराम कृत जीवनचरित पृ० २२३ से लिया गया।

३. इस समय कर्नल फेअ्रर बड़ोदा में रेजिडेण्ट था। इसी को विष देने का दोष महाराजा बड़ोदा पर लगाया गया था। इस समय भारत का गवर्नर लार्ड नार्थ ब्रुक था यु० मी०।

४. इस समय सत्यार्थप्रकाश (प्रथमावृत्ति) हरिवंशलाल बनारस के स्टार प्रेस में छप रहा था। यु०मी०।

शिक्षा की पुस्तक छपी कि नहीं।[1] आगे शुभ हो।

संवत् १९३१ मिति माघ वदि २ शनिवार (२३ जनवरी सन् १८७५)

आगे मुरादाबाद में कुरान के खण्डन का अध्याय शोधन के वास्ते गया रहा। सो शोध के आप के पास आया कि नहीं? जो ना आया हो तो राजा जयकृष्णदास जी को खत लिखो। जल्दी छापने के वास्ते भेज देवें, और बायबिल का अध्याय सब शोध करके छाप [दो,] दो महीने में छापने के वास्ते जो आपने लिखा है। सो दो महीने में सब पुस्तक छाप दो। शुद्ध करके, अशुद्ध न होने पाये। और पाठशाला की व्यवस्था आप लोगों के ऊपर है? जैसे चले वैसे चलाये जाओ। हम लोग और स्वामी जी अति प्रसन्न हैं। स्वामी जी का आशीर्वाद सब लोगों से कह देना। जवाब इस पता से लिखना।

मुम्बई में ठिकाना बालकेश्वर के समीप ठाकुर श्रीनारायण जी के नाम से भेज देना। हम को मिल जाएगा[2]।

---

[१][3] पत्र (७) [१३]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यो गोपालरावहरिदेशमुखाभिधेभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमिहास्ति तत्राप्यस्तुतमाम्। अग्रे भाषया वृत्तम्। आगे आपने जो दवाइत और छतरी भेजा सो हमारे पास आगई। और प्रार्थना समाज में जो गान की चोपड़ी[4] है सो हमारे पास नहीं आई। आगे यहां वक्तृत्व भी होने वाला है। वक्तृत्व के वास्ते स्थान भी बन रहा है। और आर्य्यसमाज का भी प्रयत्न अच्छा हो रहा है। आप अहमदाबाद में आर्य्यसमाज का ढील न करैं। उसका यत्न किहीं रहैं। और आपके पुत्र के हाथ ४ पुस्तक सत्यार्थ-प्रकाश के १२० पृष्ठ तक छप गये हैं सो आप के पास भेजे हैं। पहुँचे कि नहीं। १ आपके वास्ते। १ भोलानाथ जी के वास्ते। १ महीपतिराम जी के वास्ते। १ वेचरभाई के वास्ते। जो न पहुँचे होंय तो पत्र भेज के मंगा लीजिये। अब तक आप लोगों ने आर्य्यसमाज का प्रारम्भ किया [वा] नहीं। जो न किया होय तो जल्दी करैं। और अच्छे काम में देर नहीं लगाना चाहिये। और देखिये कि आर्य्यसमाज नाम रखने से उस पर किसी प्रकार का दोष नहीं आता। क्योंकि उस में ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना और सब उत्तम व्यवहार करने में आवैंगे। सो आर्य्य नाम श्रेष्ठ का जो समाज। और प्रार्थना समाज नाम रखने से अनेक दोष आते हैं। प्रार्थना क्रिया, उसका समाज क्या होगा। तथा स्तुति उपासना और सदुपदेशादि व्यवहार

---

१. शिक्षापत्री संवत् १९३१ सहस्य = पौष मास वद्य ११, (३ जनवरी १८७५) रविवार को समाप्त हुई।

२. यह पत्र पं० लेखराम कृत उर्दू जीवन चरित पृ० २३३।२३४ से देवनागरी में प्रतिलिपि किया गया है। मूल पत्र पं० लेखराम जी के संग्रह से नष्ट हो गया प्रतीत होता है। उर्दू प्रतिलिपि में दो चार शब्द ही बदले गए हैं, शेष पत्र मूलवत् ही है। [यह पत्र अहमदाबाद से भेजा गया था।]

३. गोपालराव हरिदेशमुख जज अहमदाबादके नाम लिखे गए १—६ पत्रों की प्रतिलिपि श्री मामराज जी मेरठ निवासी पं० घासी राम एम. ए. के पास से अक्टूबर सन् २६ में लाए थे। पं० जी के पास ये प्रतिलिपियां ऋषि भक्त श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय के संग्रह में आई थीं।

४. गुजराती भाषा में चोपड़ी शब्द पुस्तक का वाचक है।

भी किये जाते हैं सो नामार्थ से विरुद्ध होता है। इस्से हम लोग कूँ नाम ऐसा रखना चाहिये कि जिस्से दोष न आवै। सो आर्यसमाज ही नाम रखना उचित है। प्रार्थनासमाजादि नहीं। सो आर्य्यसमाज प्रारम्भ होने का विलम्ब करना उचित नहीं। जल्दी करना चाहिए। इसीसे सब का हित होगा, अन्यथा नहीं। आप कुछ फिकिर न करैं। यहां निषेकादि अन्त्येष्टी पर्यंत संस्कार की चोपड़ी बनाने की तयारी हो रही हैं। और स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने के वास्ते वेदमंत्रों से चोपड़ी बनने की तयारी है[1]। और नियमों की भी और संध्या भाष्य की पुस्तक छप के तय्यार होने चहै है। दो चार दिन में तयार हो जायगा। सो आपके वास्ते भेज देवैंगे। मण्डनराव बलदेवदत्त का नमस्कार यथोचित पहुँचे। आगे वेदविरुद्धमतखण्डन[2] की पुस्तक जितनी मंगानी होय उतनी मंगा लीजिये। फिर नहीं मिलैगी। और सत्यार्थप्रकाश का भाग अभी एक २ रुपये मिलता है। सो जितना मंगाना होय मंगा लीजिये। और वहां का हाल सब लिखना। गान की चोपड़ी हमारे पास भेज दीजियेगा। इस पत्र का प्रत्युत्तर जलदी भेज दीजियेगा।

सं० १९३१ मिति फाल्गुन बद्य २ इंदुवार[3]।

---

[२] पत्र (८) [१४१]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतगोपालरावहरिदेशमुखाभिधेभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमिहास्ति तत्राप्यस्तुतमाम्। आगे पत्र आपका आया। समाचार सब मालूम भया। गान आदि पुस्तक ४, छाता १, दवात १, सब हमारे पास पहुंच गये। आगे मुम्बई में कोट के मैदान में सद्गृहस्थ लोगों ने मण्डप रचा है। उसमें एकान्तरे वक्तृत्व प्रश्नोत्तर की सभा होती है। मुंबई के पण्डित लोगों ने कहा कि स्वामी जी को व्याकरण में अच्छा अभ्यास नहीं है। इस बात को सुनके एक दिन व्याकरण की सभा किया। उसमें पण्डित लोग आये। व्याकरण में प्रश्नोत्तर होने लगा। पण्डितों की धूड़ उड़ गयी। पण्डित लोग चुप हो गये। फिर सभा के लोगों ने पण्डितों से कबूल करा लिया। पण्डित लोगों ने कबूल कर लिया कि स्वामी जी को बहुत अच्छा व्याकरण आता है। फिर पण्डित लोगों से कहा कि व्याकरण का २ प्रश्न हम आप लोगों को लिखा देते हैं। उसका प्रमाण पूर्वक उत्तर लिख ल्याइये। उस दिन से सब लोगों को बहुत विश्वास हो गया है। मुम्बई में आर्यसमाज

---

१. अर्थात् आर्याभिविनय।

२. वेदविरुद्धमत खण्डन के अन्त में उसका रचना-काल निम्नलिखित है—

शशिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे कार्तिकस्यासिते दले। अमायां भौमवारे च ग्रन्थोऽयम्पूर्तिमागतः॥ १ ॥—

[अर्थात् संवत् १९३१ कार्तिक बद्य ३० मंगलवार (८ दिसम्बर १८७४)। वेदविरुद्धमतखण्डन का उपर्युक्त लेखन काल गुजराती पञ्चाङ्ग के अनुसार है। वेदविरुद्धमतखण्डन का उपर्युक्त संस्करण गुजराती अनुवाद सहित छपा था। यह गुजराती अनुवाद श्री पं० श्यामजी कृष्णवर्मा ने किया था। देखो ऋ. द. के ग्रन्थों का इतिहास पृष्ठ ६४]

३. २२ फरवरी १८७५। यह पत्र मुम्बई से लिखा गया है। यु० मी०।

होने की तयारी है। और इन्दुप्रकाश के सम्पादक विष्णुशास्त्री के पास आप लोगों में से कोई ने "आकृष्णेनेति" मन्त्र के अर्थ हमारा उनके पर[1] निश्चय के अर्थ पत्र भेजा होगा। उस पर उसने जो कुछ लिखा, सो सब मिथ्या ही है। और यह विष्णु शास्त्री धूर्त्त विद्याहीन हठी दुराग्रही मिथ्याचारी है। इसमें सन्देह नहीं। क्योंकि उस विष्णु शास्त्री के विषय एक बानगी लिखते हैं कि ऐसी मूर्खता कोई विद्यार्थी भी नहीं करेगा। "**ऋ गतिप्रापणयोः।**" इस धातु से रथ शब्द सिद्ध हुआ है। "**रमु क्रीडायाम्**" इस धातु से नहीं। इस्से यह अर्थ निर्युक्तिक और निर्मूल है। इस अंधा की भीतर और बाहर की दोनों फूट गई आंख। **पाणिनिमुनि रचित उणादिगणसूत्र प्रमाण हनिकुषिनीरमिकाशिभ्यः क्थन्**[2]**। हथः। कुष्ठः। नीथः। रथः। काष्ठम्॥ यास्को निरुक्तकारः—"रथो रंहतेर्गतिकर्मणः**[3] **इत्यत्र "रममाणोऽस्मिंस्तिष्ठतीति वेति।"** इस से रमु धातु से ही रथ शब्द सिद्ध होने से '**रमणीयो रथो रमतेऽस्मिन्निति वा**' अत एव विष्णुशास्त्री का कहना व्यर्थ ही हुआ। और उसको सभा के लिये निमंत्रण भी दिला है। परन्तु वहां काय को आवेगा। वह तो झूठा झूठा घर से बैठा बकेगा। जिसने उसके पास पत्र भेजा सो भी व्यर्थ किया। क्योंकि ऐसे मिथ्यावादी मूर्ख के कहने का क्या ठिकाना। इसका खण्डन सभा में हमने सब को सुना दिया तथा लिख भी दिया है। परन्तु वह धूर्त्त अपने पत्र में छापेगा नहीं। और जो छापेगा तो उसका आप लोग लिखना कि हमारा किया समाधान और उनका खण्डन छापै। जो विष्णु शास्त्री न छापेंगे तो फेर अन्यत्र छपाया जायगा। आप लोग इन नष्ट बुद्धि वाले पक्षपातियों को पूछते हो निश्चय करने को, सो सायणाचार्यादिकों को ही यथावत् वेदार्थ का बोध नहीं है तो उसके पीछे चलने वालों का यथावत् ज्ञान कहां से होगा। इसी लिये इन धूर्त्तों को मध्यस्थ हम नहीं करते। क्योंकि इन पण्डितों की बुद्धि अविद्या लोभादि दोषों से नष्ट हो गई है। और सब अहमदाबाद के पण्डितों से उन्नीस वा बीस तथा वैसे ही सब पण्डितों का स्वभाव जानना। तथा हमारा नाम सुनते ही विपरीत उलटे चलते हैं। सो जिस पण्डित से पूंछोगे वह झूठा ही कहैगा। इन पण्डितों को वेदार्थ ज्ञान का लेशमात्र भी ज्ञान नहीं है। पुस्तक आपने भेजे। सो आगये। आर्यसमाज का स्थापन शीघ्र करोगे तो अच्छा है।

सम्वत् १९३१ मिति फाल्गुन शुद्ध ९ मंगलवार[4]।

पत्र (९) [१.९]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतगोपालरावहरिदेशमुखादिभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमिहास्ति तत्राप्यस्तुतमाम्। आगे **मुम्बई में चैत्र शुद्ध ५ शनिवार**[5] **के दिन संध्या के साढें पांच बजते आर्यसमाज का आनन्द पूर्वक आरभ हुआ**[6]। ईश्वरानुग्रह से बहुत

---

१. 'उन के पर' अर्थात् उन के पास। यु० मी०। २. उणा० २।२॥

३. निरुक्त ९।११॥ ४. १६ मार्च १८७५ [यह पत्र बम्बई से लिखा गया है]।

५. बम्बई आर्यसमाज की स्थापना चैत्र शुक्ला ५ शनिवार सं० १९३२ (१० अप्रैल १८७५) को हुई थी, यह उपर्युक्त लेख से स्पष्ट है। ऋषि दयानन्द के जीवन चरित्र लेखक पं० लेखरामजी पं० देवेन्द्रनाथजी आदि

अच्छा हुआ। आप लोग भी वहां आरम्भ कर दीजिये। विलम्ब मत कीजिये। नासिक में भी होने वाला है। अब आर्य्य-समाजार्थ[नियम]और संस्कारविधान का पुस्तक वेदमन्त्रों से बनेगा शीघ्र। इन्दुप्रकाश वाले विष्णुशास्त्री सुधारे वाला तो नहीं, किन्तु कुधारे वाला मालूम पड़ता है। उसका प्रत्युत्तर करके उसके पास भेजा था, परन्तु उसने नहीं छापा। इससे पक्षपाती भी दीखता है। अब वह अन्यत्र छपवाया जायगा। संध्योपासनादि पञ्चमहायज्ञविधान का भाष्य सहित पुस्तक यहां छपवाया गया है। सो १० पुस्तक आपके पास भेजा जाता है। यथायोग्य उत्तम पुरुषों को बांट देना। उन नियमों[1] में दो नियम बढ़े हैं। सो एक विवाहादि उत्साह किंवा मृत्यु, अथवा प्रसन्नता समय जो कुछ दान पुण्य करना उसमें से श्रद्धानुकूल आर्य्यसमाजके लिये अवश्य देना चाहिये। और दूसरा नियम यह है, जब तक नौकरी करने वाला तथा नौकर रखने वाला आर्य्यसमाजस्थ मिले तब तक अन्य को [न] रखना और न राखना। और यथायोग्य व्यवहार दोनों रखें। प्रीतिपूर्वक काम करें और करावें। डाकतर माणिकजी ने आर्य्यसमाज होने के लिए स्थान दिया है, परन्तु संकुचित है। सो अब बहुत बढ़ेंगे मिंबर। तब दूसरा नया बनेगा, किंवा कोई ले लिया जायगा। अत्यन्त आनन्द की बात है कि आप लोगोंके ध्यान में स्वदेशहित की बात निश्चित हुई है। परमात्मा के अनुग्रह से उन्नति नित्य इसकी होय।

संवत् १९३१ मिति चैत्र शुद्ध ६ रविवार।[2]

आपके पुत्र के हाथ संध्यादि भाष्य के पुस्तक १०।

———

ने यही तिथि लिखी है। इस तिथि की पुष्टि बम्बई आर्यसमाज की प्रारम्भिक ११ मास की मुद्रित संक्षिप्त कार्यवाही से भी होती है। यह कार्यवाही २०×३०=३२ आकार ३२ पृष्ठों में छपी है। (बाह्य टाइटल पेज पृथक् हैं)। इस कार्यवाही के प्रथम पृष्ठ पर अन्दर का टाइटल है। द्वितीय पृष्ठ खालीहै और तृतीय पृष्ठ पर स्थूलाक्षरों में "**श्री आर्यसमाज स्थापना सं०१९३१ना चैत्रशुद्ध शनिबार**"स्पष्ट लिखा है (यहां सं० १९३१ गुजराती पञ्चाङ्गानुसार है)। इस कार्यवाही के मुख पृष्ठ पर मुद्रण काल "संवत् १९३२ ना माहा वद० ॥ सन् १८७६" (अर्थात् सं० १९३२ माघ वदि) छपा है। आर्यसमाज स्थापना दिवस के सम्बन्ध में इस समय जितनी भी पुरानी सामग्री(रेकार्ड) मिलती है उस में यह सब से पुरानी और विश्वसनीय है। हमें यह कार्यवाही उक्त आर्यसमाज के कार्यकर्ता श्री पं० पद्मदत्त जी की कृपा से २८ अक्टूबर १९५२ को बम्बई में देखने को प्राप्त हुई। सन् १९३९ के अनन्तर से आर्यसार्वदेशिक सभा द्वारा "चैत्र शुक्ला १" को आर्यसमाज स्थापना दिवस मनाने की जो प्रति वर्ष घोषणा होती है उस का एक मात्र आधार बम्बई आर्यसमाज मन्दिर पर लगा हुआ शिलालेख हैं। इस भवन का निर्माण आर्यसमाज स्थापना के ७ वर्ष के अनन्तर हुआ था यह उसी पर लगे अन्य शिलालेखों से स्पष्ट है। हमारे विचार में आर्यसमाज स्थापना दिवस वाला शिलालेख भवन निर्माण काल वाले शिलालेखों से भी अर्वाचीन है। इसलिये उक्त आर्यसमाज स्थापना दिवस वाला शिलालेख सर्वथा भ्रान्ति पूर्ण और अशुद्ध है। अत: उस शिलालेख और उसके आधार पर सन् १९३९ के अनन्तर सार्वदेशिक सभा द्वारा घोषित आर्यसमाज की स्थापना तिथि में संशोधन होना अत्यन्त आवश्यक हैं। यु०मी०

१. राजकोट में समाज की स्थापना के समय २६ नियम बनाये थे। उन्हीं की ओर यह संकेत है। यु०मी०

२. ११ अप्रैल १८७४। यहां सं० १९३२ चाहिए, क्योंकि बम्बई से लिखे अगले सभी पत्रों में उत्तर भारतीय पचाङ्ग के अनुसार ही व्यवहार किया है। यु० मी०।

[४] पत्र (१०) [१६]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतगोपालरावदेशमुख-भोलानाथमहीपतिरामशर्मभ्यो हि श्रीयुतबैचराख्यादिभ्यश्च दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम् । शमिहास्ति तत्रत्यं चाशास्महे। आगे आपका पत्र आया । देख के अत्यानन्द हुआ । यहां के आर्य्यसमाज अच्छी तरह चलता है । प्रतिदिन उन्नति ही होती जाती है । और ईश्वरकृपा से नित्य नित्य बढ़ता ही जायगा ।

आर्याभिविनय के २ अध्याय तो बन गये । और चार आगे बनने के हैं । आगे संस्कारविधान पुस्तक भी अवश्य शीघ्र ही बनेगा । आर्यसमाज के नियम और उसकी व्याख्या पुस्तक छपता है । फिर आपके पास भी भेजेंगे । सत्यार्थप्रकाश के भी १३ फार्म[1] छप के आ गये हैं । आपके पुत्र के हाथ भेजे जांयगे । ज्येष्ठ वद्य १५[2] के पूर्व व पश्चात् पूना को हमारा जाने का विचार है । सो जिसको लिखने का योग्य होय, उसको आप लिखना । बडोदे को जब आप लिखेंगे, तब आवेंगे । वहाँ भी आप लोगों को आर्यसमाज उस समाज का नाम प्रसिद्ध चलाना चाहिये । उसमें बड़ा फायदा है । विचार से यही ठीक दिखता है । फिर जैसी इच्छा होय वैसा करो । परन्तु स्वदेशादि सब मनुष्यों का निर्विघ्न हित आर्यसमाज से यथार्थ होगा । अत्रेऽस्त्यत्रातीवानन्दस्तत्रत्योऽप्येवमेवास्त्वीश्वरानुग्रहेणेति । किं बहुना लेखेन बहुज्ञेषु । संवत् १९३२ मिति चैत्र वद्य ९ शनिवार ।[3]

और शिक्षापत्रि के खण्डन पुस्तक की गुजराती भाषा व्याख्या[4] भी हो गई है । उसके तीन वा चार फार्म होंगे । १५ वा १६ रुपैये फार्म के हिसाब से ५० वा ६० रुपैये लगेंगे । सो वहाँ छपाओगे वा मुम्बई में । परन्तु जो मुम्बई में छपेगा तो अच्छा होगा । इसका उत्तर शीघ्र भेज देना ।[5]

---

[५] पत्र (११) [१७]

श्रीरस्तु

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतगोपालरावहरिदेशमुख-भोलानाथ-महीपतिराम वैचरभायाख्यादिभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम् । शमिहास्ति तत्रत्यं नित्यमा-

---

१. पूर्ण संख्या १२ के पत्र में १२० पृष्ठ छपने का उल्लेख है । अतः यहां १३ फार्म के स्थान में १५ फार्म (१५×८=१२०) होना चाहिए । यु० मी० । २. यहां ३० चाहिए । १५ सकेत पूर्णिमा का होता है ।

३. चैत्रवद्य ६ को बुधवार था । वैशाखवद्य ६ को शुक्रवार था । ज्येष्ठ वद्य ६ को शनिवार था अर्थात् २६ मई १८७५ । उसके पश्चात् श्री स्वामी जी पूना गए । अतः इस पत्र की प्रतिलिपि में ज्येष्ठ के स्थान में चैत्र भूल से लिखा गया है । आर्याभिविनय ग्रन्थ संवत १९३२ चैत्र सुदि १० गुरुवार तदनुसार १५ एप्रिल १८७५ को बनना आरम्भ हुआ । यह पत्र उसके पश्चात् ही लिखा गया है । इस पत्र में ज्येष्ठ बदी १५ के समीप पूना को प्रस्थान करने का विचार प्रकट किया गया है । अतः इस पत्र की ज्येष्ठ तिथि ही ठीक है ।

४. शिक्षापत्रीध्वान्तनिवारण का उपर्युक्त गुजराती अनुवाद श्याम जी कृष्णवर्मा ने किया था । देखो ऋ. द. के ग्रन्थों का इतिहास पृष्ठ ६७ । यु० मी० ।

५. यह पत्र बम्बई से लिखा गया है । यु० मी० ।

शास्महे। आगे पूना में महादेव गोविन्द रानडे, माधवराव मोरेश्वर कुण्टे तथा लस्कर में गंगाराम भाऊ आदि पुरुषों ने अच्छी प्रकार व्याख्यानादि प्रबन्ध पूर्वक कराये। और व्याख्यन छपवाते भी हैं।[1] तथा वेदभाष्य बनवाने के लिये पण्डित रखने के वास्ते कुछ फण्ड जमा किया है। और कुछ करने का भी है। तथा आर्यसमाज स्थापन अवश्य करना। इस लिए दो वक्त सभा होके व्यवस्थापक मण्डली निश्चित हो गई है। और एक सभा करने वाले हैं। उसमें प्रधान, मन्त्री और कोषाध्यक्षादिक निश्चित करके आर्यसमाज का आरम्भ करने वाले हैं। सो शीघ्र ही होगा ऐसा मालूम पड़ता है। अन्य सब वर्त्तमान "ज्ञानप्रकाश" समाचार से आप लोगों ने देखा ही होगा। आगे हम यहां से सतारे को जाने वाले हैं दो एक दिन में। अथवा बडोदे की ओर आने वाले हैं। सो जब यहाँ से वा सतारे को जाके मुम्बई की ओर चलेंगे तब एक आद दिन दादरे के रेलघ[र] पर ठहर के उधर आने का विचार है। सो दादरे से आपके पास तार द्वारा खबर देने में आवेगी। फेर जैसी आप खबर देंगे कि प्रथम बड़ोदे को ही आना किंवा सुरत और भरूच को होके बडोदे को आना, वैसा किया जायेगा। आगे एक पण्डित रखने के लिये महादेव गोविन्द आदि ने ५० रुपैयों का निश्चय किया है। तथा मथुरादास लौजी और छबिलदास लल्लू भाई आदि आर्यसमाज के सभासदों ने भी वेदभाष्य होने के लिये २०००० रुपैये जमा करने के लिये सेर[2] १०० रुपैयों का खड़ा करके १०००० रुपैये तक तो सेर[2] भर गये हैं। और बहुत शीघ्र वे लोग बीस हजार ही रुपैये जमा कर लेंगे, ऐसा मालूम पड़ता है। एक पण्डित के लिये राजा जयकृष्णदास जी ने स्वीकार किया ही है। तथा यहाँ महादेव गोविन्द आदि की तथा हमारी भी इच्छा है कि एक पण्डित के रखने के लिये ५० रुपैयों का प्रबन्ध आप लोगों की ओर से होय तो अच्छा है। फेर जैसी आप लोगों को इच्छा होय वै[सा] कीजिये। आगे हम बहुत आनन्द में हैं ईश्वरानुग्रह से। तथा आप लोग अत्यन्त आनन्द में रहना। आगे अन्य सब लोगों से हमारा आशीर्वाद कह देना।

संवत् १९३२ श्रावण शुद्ध ८ मंगला[3]

यहां[4] के पण्डित लोग सामने तो कोई भी नहीं आये, किन्तु दूर से बड़बड़ किया और करते भी हैं सो जानना।

———

[६] पत्र (१२) [१८]

श्रीयुक्तास्सन्तु।

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतगोपालरावदेशमुखशर्म्मभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमिहास्ति तत्रत्यं च नित्यमाशास्महे। आगे पूना और सातारा का वर्त्तमान वर्त्तमान पत्रों से सुन लिया होगा। एक नवीन बात यह है कि पूना में आर्य्यसमाज स्थापन होगया

---

१. आर्यभाषा में केवल १५ व्याख्यान ही मिलते हैं, परन्तु देवेन्द्र बाबू और पं० घासीराम कृत जीवनचरितानुसार ५० व्याख्यान छपे थे।

२. अर्थात् 'शेयर'।

३. १० अगस्त १८७५, शुक्ल ८ को सोमवार है। अतः मूल में शुक्ला ६ चाहिये।

४. यह पत्र पूना से लिखा गया है।।

है। आगे आर्य्यसमाज स्थापनार्थ दो सभा पूना में हुई थी। सो तो समाचार पत्रों से जाना होगा। परन्तु हम सतारे से आये तब यह निश्चित हुआ कि महादेव गोविंद रानडे प्रधान, केशवराव गोडबोले मन्त्री। जितने प्रार्थनासमाज के सभासद थे वे सब और अन्य बावा गोकुले तथा काशिनाथ गाडगील एवं गंगाराम भाऊ आदि लश्करस्थ ६० वा ७० सब सभासद हुवे हैं। और अन्य भी बहुत होने वाले हैं। तथा सतारे से भी कल्याणराव खजांची हेडमास्तर आदि तथा कृष्णराव विठ्ठल विंचुरकर जज्ज आदि उसी वक्त मेरे सामने आरम्भ करने वाले थे। परन्तु हमने कहा कि शीघ्रता मत करो। सो कुछ दिनके पीछे करने वाले हैं। आगे राणी का पुत्र[1] आ के जब तक कलकत्ते की ओर न जायगा, तब तक मुम्बई में रहने का विचार है। फेर सुरत, भरूच, बड़ोदे की ओर आने का विचार है। मुम्बई के समाज की अच्छी प्रकार उन्नति होती जाती है। तथा पांच हजार रुपैये पर्यंत वेदभाष्य बनाने के लिये इकट्ठा कर लिये हैं। और आगे होते जाते हैं। सो २०००० वा २५००० करने वाले हैं। सो मालूम होता है कि कर लेंगे। एक पण्डित का खोज हो रहा है संस्कार की पुस्तक बनाने के लिये। सो अब तक मिला नहीं है। सो वहां कोई ऐसा पण्डित होय तो भेज देओ। ४०, ५० वा ३० पर्य्यन्त मासिक का बने तो भेज देना। आगे आप लोगों को ईश्वर प्रसन्न रक्खे। हम भी तदनुग्रह से प्रसन्न हैं। आगे भोलानाथ साराभाई, बैचरदास अम्बाईदास तथा महीपतराम आदि को हमारा अशीर्वाद कहना।

संवत् १९३२ मिति आश्विन बद्य २ शनि।[2]

———

१. अर्थात् एडवर्ड सप्तम।

२. उत्तर भारतीय पञ्चाङ्ग के अनुसार आश्विन वदि २ (१७ सितम्बर १८७५) को शुक्रवार था, शनिवार नहीं था ; तथा उस समय श्री स्वामी जी महाराज सतारा नगर में थे। पत्र में सतारा से लौट आने का वर्णन है। अतः यह तिथि किसी प्रकार ठीक नहीं हो सकती। यदि आश्विन बदी २ को गुजराती पञ्चाङ्ग के अनुसार मानें तो उस दिन शनिवार पड़ता है, तदनुसार यह पत्र १६ अक्टूबर १८७५ (उत्तर भारतीय पञ्चाङ्गनुसार कार्तिक बदि २) को ही लिखा गया होगा। यहां संवत् का निर्देश उत्तर भारतीय पञ्चाङ्गानुसार है (गु० पञ्चाङ्गानुसार सं० १९३१ था, वहां चैत्रशुक्ला १ के स्थान में कार्तिक शु० १ से संवत् बदलता है) और महीने का निर्देश गुजराती पञ्चाङ्गानुसार अर्थात् दोनों का साङ्कार्य हो गया है।

श्री पं० देवेन्द्रनाथ जी द्वारा संकलित जी०च० पृष्ठ ३५८ के अनुसार स्वामी जी महाराज २३ अक्टूबर १८७५ (कार्तिक वदि ९–गु० पंञ्चाङ्गानुसार आश्विन वदि ९) को सतारा से पूना लौटे, परन्तु इस पत्र से स्पष्ट है कि श्री स्वामी जी महाराज १६ अक्टूबर से पूर्व ही सतारा से लौट आए थे। अतः २३ अक्टूबर को सतारा से पूना लौटना निश्चय ही अशुद्ध है।

सतारा से पूना लौटने और वहां से बम्बई जाने की वास्तविक तिथियां ज्ञात न होने से यह पत्र पूना से लिखा गया या बम्बई से, यह भी अनिश्चित है। पत्र में पूना और बम्बई के वृत्त का ऐसी अस्पष्ट भाषा में वर्णन है कि उस से भी किसी निर्णय पर नहीं पहुंचा जा सकता। "………तब तक मुम्बई में रहने का विचार है" यह निर्देश पूना से पत्र लिखने पर भी किया जा सकता है। अतः यदि यह पत्र पूना से लिखा गया हो तो जीवन-चरित्र की सतारा से पूना लौटने की २३ अक्टूबर तिथि कदाचित् पूना से बम्बई लौटने की होगी, भ्रम से अस्थान में जुड़ गई होगी। और यदि यह पत्र बम्बई से लिखा गया हो तो स्वामी जी १६ अक्टूबर से पूर्व ही बम्बई पहुंच गये होंगे। यु० मी०।

पत्र-सूचना (१-३) [१९-२१]

[१] ... ... (१९)
[१] केशवलाल निर्भराम, मुम्बई।[1] (२०)
[१] हरिश्चन्द्र चिन्तामणि, मुम्बई।[1] (२१)

———

[१] पत्र (१३) [२२]

[2]स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपम-

युक्तेभ्यः श्रीयुतलालजी लक्ष्मणशास्त्रि-पूर्णानन्द-नाथुरामादिभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्त[माम् श]मिहास्ति तत्र भवदीयं च नित्य[माशा] स्मेह[...चि]ठी मैंने भेजी है एक ....[दू]सरी केशवलाल नि[र्भय-राम]:... ... ...[ती]सरी हरिश्चन्द्र चिन्ता[मणि] और यह चौथी चिठी भेजी जाती है। सब ग्रन्थों का हिसाव एक के पास रहना अच्छा है। सेठ हनुमंतराम पित्ती जी के पास से रु० ७५) वा १५०) ले के लक्ष्मणशास्त्री जी को आर्य्याभिविनय की छपाई में दिये होंगे तथा लिखे प्रमाणे केशवलाल निर्भयराम जी के पास पुस्तक १००० रख दिये होंगे। जो अब तक यह काम न किया होय तो पत्र देखते ही शीघ्र करना पीछे दूसरा काम करना। आगे आर्य्याभिविनय के पुस्तक ५०० प्रयाग में पण्डित सुन्दर लाल जी के पास पोस्[त]मास्तर जनरल की कचेरी के ठिकाने से केशवलाल जी से कहके शीघ्र भेजवा देना। और जो लक्ष्मणशास्त्री जी ने अब तक पुस्तक वहाँ न रक्खे होंय तो आप श्रम करके केश[व]ला० पास पु० १०००... ... ...अ रु० १५०) हनुमंत[राम पित्ती]... तथा केशवला० को.........[प्र]याग में उक्त ठिकाने पुस्तक...[आ]र्याभि० भेजवा देना। इतना काम [शी]घ्र करना क्यों[कि]... इस देश में उसके गाहक बहु[त हैं]...इस्से विलम्ब करने में हानि है। शीघ्र काम करने में लाभ है। सब आर्य्य-समाज के सभासदों को मेरा आशीर्वाद अति प्रेम से कहना। यहाँ परमानन्द है। सं० [१९३३] आषाढ़ वद ९ शुक्रवार।[3]

———

[२] पत्र-सूचना (४)[4] [२३]

[केशवलाल निर्भयराम मुम्बई]
संस्कारविधि के मुद्रण सम्बन्ध में १ नवम्बर १८७६ [कार्तिक शु० १५ बुद्ध सं० १७३३]।

---

१. देखो पूर्ण संख्या २२ का पत्र।

२. राजस्थान प्रतिनिधि सभा के महोपदेशक श्री पं० रामसहाय जी ने यह मूल पत्र हमें भेजा था। पं० कालूराम जी के शिष्य स्वामी स्वरूपानन्द जी से उन्हें यह हस्तगत हुआ। अब यह हमारे संग्रह में संख्या १ पर सुरक्षित है। **पीले रङ्ग के कागज़ पर दोनों ओर श्री स्वामी जी के हाथ का लिखा हुआ है।** फटे हुए स्थानों पर हम ने बिन्दु दे दिए हैं।

३. १६ जून १८७६। उस समय श्री स्वामी जी काशी में थे।

४. लखनऊ अथवा शाहजहांपुर से मुम्बई को भेजा गया। इस पत्र का संकेत केशोलाल निर्भयराम के श्री स्वामी जी के नाम लिखे गए ता० ६ नवम्बर १८७६ के पत्र में है।

[१] पत्र (१४) [२४]

BREILLY[१]
18 NOV. 1876[२]

FROM

Dayanand Saraswati
Bareilly

To.

Babu Ramadhara Bajpai
Hd. Clerk Govt. Tele: Office
Lucknow.

Dear Sir,

The first copy of the Veda Bhashya will shortly issue so you must try with your whole heart and soul to secure as many subscribers as you can in your town.

My Babu will start for Benares on Monday to have the tract published atonce and distribute among the subscribers.--On his way down he will stop at your town for a day. I have instructed to take his quarters at the PATSHALA, if Gangesh Swami is there; please inform him about it.

As for my doings here and at Shajahanpur, I think, you have already heard from Gangesh Swami, the rest you can hear from my Babu. I don't think there is any necessity of detailing it here.

Hoping you are in the enjoyment of perfect health.

My blessings to all of you .

Yours ffly
दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

बरेली १८ नवं० १८७६[२]

दयानन्द सरस्वती बरेली से

बाबू रामाधार वाजपेयी
हेड क्लर्क सरकारी तार घर लखनऊ।

प्रिय महाशय!

वेदभाष्य का प्रथमाङ्क शीघ्र निकलेगा, सो आप को अपने नगर में जितने ग्राहक आप बना सकते हैं, बनाने के लिए पूर्ण तन, मन से यत्न करना चाहिये।

---

१. मूल पत्र से प्रतिलिपि किया गया। मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है। यह संग्रह हमें श्री पं० रासबिहारी जी तिवारी प्रधान आर्यसमाज की कृपा से सन् १९१८ में हमें प्रतिलिपि करने के लिए प्राप्त हुआ था।

२. मार्गशीर्ष शुक्ला २ शनिवार सं० १९३३। यु० मी०।

ट्रैक्ट को तत्काल छपवाने और ग्राहकों में बटवाने के लिये मेरा बाबू सोमवार को बनारस की ओर चलेगा।[1] और नीचे को जाते हुये वह आप के नगर में एक दिन के लिये ठहरेगा। मैंने उसे कह दिया है कि यदि गंगेश स्वामी[2] वहीं हों तो वह पाठशाला में उतरे। कृपया उन्हें यह कह दें।

शाहजहांपुर और यहां के मेरे कार्य के सम्बन्ध में, मेरा विचार है, आप पहले ही गंगेश स्वामी से सुन चुके होंगे। शेष आप मेरे बाबू से सुन सकते हैं। मेरा विचार है कि उस के यहाँ विस्तार करने की कोई आवश्यकता नहीं।

आशा है आप पूर्ण स्वास्थ्य का आनन्द ले रहे होंगे।

मेरा आप सब को आशीर्वाद।

आपका विश्वसनीय

दयानन्द सरस्वती

———

[६] [२५]

ओम् नमः सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय

॥ विज्ञापनपत्रमिदम् ॥

॥ श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामीकृतम् ॥

॥ वेदभाष्यप्रचारार्थं विज्ञेयम् ॥

इदं वेदभाष्यं संस्कृतार्य्यभाषाभ्यां भूषितं क्रियते।
कालरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे भाद्रमासे सिते दले।
प्रतिपद्यादित्यवारे भाष्यारम्भः कृतो मया॥ १ ॥[3]

तदिदमिदानीं[4] पर्य्यन्तं दशसहस्रश्लोकप्रमितं तु सिद्धं जातम्। तच्चेदं प्रसहमग्रेऽग्रे न्यूनान्न्यूनं पञ्चाशच्छ्लोकप्रमितं नवीनं रच्यत एवमधिकादधिकं शतश्लोकप्रमाणं च। तच्च

---

१. अर्थात् २० नवम्बर १८७६ मार्गशीर्ष शुक्ला ४. सं० १९३३।

२. ये महाशय एक वृद्ध सूक्ष्म-काय सन्यासी थे। लखनऊ में इन्होंने एक संस्कृत पाठशाला खुलवा रखी थी। ये यह अच्छे विद्वान्। श्री स्वामी जी से इन का प्रेम हो गया था। श्री स्वामी जी के देहावसान के पीछे भी लग भग दो वर्ष तक जीते रहे।

३. २० अगस्त १८७६ को वेदभाष्य बनना आरम्भ हुआ।

[यह काल ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के प्रारम्भ करने का है। भूमिका के लेखन का प्रारम्भ अयोध्या के सरयू बाग में चौधरी गुरुचरण लाल के मन्दिर में हुआ था। देखो देवेन्द्रनाथ संकलित जी० च० पृष्ठ ३७५ तथा ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास पृष्ठ ९६। यु० मी०।]

४. अर्थात् मार्गशीर्ष शुक्ला १५ सं० १७३३ (१ दिसम्बर १८७६) देखो भाषानुवाद पृष्ठ ३५। सम्भवतः बरेली में लिखा गया। यु० मी०।

वाराणस्यां लाजरसकंपन्याख्यस्य यंत्रालये प्रतिमासं मासिकपुस्तकवद्यन्त्रितं कार्य्यते मासिकस्य मूल्यमेतावत् ।-) इदं द्वादशमासानां मिलित्वैतावद्भवति ३॥।) इदं राजमार्ग-वेतनदानेन सहैतावन्मात्रं ४॥) वार्षिकं जायते । अस्य वेदभाष्यस्य ग्रहणेच्छा यस्य भवेत् स लाजरसकंपन्याख्यस्य वा भाष्यकर्त्तुः श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिनः समीपं वार्षिकं धनं ४॥) प्रेषयेत्तस्य समीपमेकवर्षपर्य्यन्तं प्रतिमासं मासिकपुस्तकं पोष्टाख्यराजमार्गप्रबन्धे-नावश्यमागमिष्यति ॥ पुनर्ग्राहकैर्वार्षिकं देयं चैवमेव पुनःपुनर्ज्ञेयम् । योस्य वार्षिकं मूल्यं प्रेषयिष्यति तन्नामलेखपूर्वकं मासिकपुस्तकपृष्ठोपरि यन्त्रयित्वैकवारं प्रसिद्धं भविष्यतीदमेव तस्य विश्वासार्थं भविष्यति मद्धनं तेन भाष्यकर्त्रा वा यन्त्रणकर्त्रा प्राप्तं चेति ॥ अत्रान्यथा यः कुर्यात्तस्य समाधाता स एव भविष्यति ॥ सर्वशक्तिमदीश्वरानुग्रहेणात्र व्ययसयः कदाचिन्नैव भविष्यतीति विज्ञायतेऽस्माभिः। एकरौप्यमुद्रया श्लोकसहस्रद्वयप्रमितं न्यूनान्न्यूनमुत्तमपत्राक्षर-ललितदर्शनं हृद्यं पुस्तकं ग्राहकाः प्राप्स्यंत्येव। इदं वेदभाष्यमपूर्वं भवति। कुतः। महाविदुषामार्य्या-णां पूर्वजानां यथावद्वेदार्थविदामाप्तानामात्मकामानां धर्म्मात्मनां सर्वलोकोपकारबुद्धीनां श्रोत्रि-याणां ब्रह्मनिष्ठानां परमयोगिनां ब्रह्मादिव्यासपर्य्यन्तानां मुन्यृषीणामेषां कृतीनां सनातनानां वेदाङ्गानामैतरेयशतपथसामगोपथब्राह्मणपूर्वमीमांसादिशास्त्रोपवेदोपनिशच्छाखान्तरमूलवेदादि-सत्यशास्त्राणां वचनप्रमाणसंग्रहलेखयोजनेन प्रत्यक्षादिप्रमाणयुक्त्या च सहैव रच्यते ह्यतः । वेदानां यः सत्यार्थः सोऽनेन भाष्येण सर्वेषां सज्जनानां मनुष्याणामात्मसु सम्यक् प्रकाशी-भविष्यति । पुनरनर्थव्याख्यानानि यानि वेदानामुपरिवर्त्तन्ते तन्निवृत्तिरनेन च तत्प्रयुक्तभ्रमजालोपि लयं गमिष्यत्यवश्यमतश्च । ततो सत्यव्यवहारत्यागात् सत्याचारग्रहण-प्रवृत्तिभ्यां मनुष्याणां महान् सुखलाभो निश्चितो भविष्यति वेदेश्वरयोः सत्यार्थसाम्राज्यप्रका-शश्चातः ॥ सत्यधर्मार्थकाममोक्षाणां यथावत् सिद्धेश्चेत्यादयोऽस्य भाष्यस्यापूर्वत्वे हेतवो विज्ञेयाः ॥ एतदर्थं सत्यविद्याप्रियैर्विद्वद्भिः सत्यार्थजिज्ञासुभिर्मनुष्योपकारसत्यविद्योन्नतिं चिकीर्षुभी राजादिनृवर्य्यैरस्मिन्महति सर्वोपकारके कार्ये मासिकपुस्तकग्रहणेनान्यप्रकारेण च सर्वैर्यथाशक्त्या सहायः कार्य इति विज्ञाप्यते ॥

॥ विज्ञापनपत्र ॥

॥ भाषार्थ ॥

सो यह दयानन्द सरस्वती स्वामी जी ने प्रसिद्ध किया है । इस का यह प्रयोजन है कि चारों वेदों का भाष्य करने का आरम्भ मैंने किया है । सो सब सज्जन लोगों को विदित हो कि यह भाष्य

संस्कृत और आर्य भाषा जो कि काशी प्रयाग आदि मध्य देश की है, इन दोनों भाषाओं में बनाया जाता है। इस में संस्कृत भाषा भी सुगम रीति की लिखी जाती है। और वैसी आर्य भाषा भी सुगम लिखी जाती है। संस्कृत ऐसा सरल है कि जिसको साधारण संस्कृत को पढ़ने वाला भी वेदों का अर्थ समझ ले। तथा भाषा का पढ़ने वाला भी सहज में समझ लेगा। संवत् १९३३ भाद्रमास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा[1] के दिन इस भाष्य का आरम्भ किया है। सो संवत् १९३३ मार्गशिर शुक्ल पौर्णमासी[2] पर्यन्त दश हजार श्लोकों[3] के प्रमाण भाष्य बन गया है। और कम से कम ५० श्लोक और अधिक से अधिक १०० श्लोक पर्य्यन्त प्रति दिन भाष्य को रचते जाते हैं। इस भाष्य को काशी जी में लाजरस कम्पनी के छापेखाने में छपवाते हैं। सो छापने का प्रवन्ध इस प्रकार से किया है कि मासिक पुस्तक की नाईं छपता जायगा। इस का मासिक जो एक अंक होता है उस का मूल्य ।=) पाँच आना है। सो बारह महिनों का मिलके ३।।।) पौने चार रुपैये होते हैं। सो डाक का खर्च महिने महिने में =) एक आने का टिकट लगेगा सो मिलके एक वर्ष का ४।।) साढ़े चार रुपये होते हैं। सो जिस किसी को इस पुस्तक के लेने की इच्छा हो वह लाजरस कम्पनी के पास एक वर्ष का मूल्य भेज दे। अथवा स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के पास भेज दे। उस के पास महिने महिने में एक वर्ष पर्यन्त पोष्ट मार्ग से अर्थात् सरकारी डाक के प्रवन्ध से मासिक पुस्तक अवश्य पहुँचेगा। पुनः एक वर्ष के पीछे फिर भी दूसरे वर्ष का इसी प्रकार जमा करना होगा। और गाहकों के पास इसी प्रकार से मास मास में पुस्तक पहुँचा करेगा। सो जिस महिने में जो गाहक मूल्य भेजेगा उस महिने के अथवा दूसरे महिने के अङ्क में उस का नाम लेख पूर्वक उस धन की पहुँच मासिक पुस्तक के पृष्ठ के ऊपर छपा के उस लेख द्वारा सर्वत्र प्रसिद्ध कर दिया जायगा। सो एक वर्ष में एक का नाम एक बार ही छपेगा। पुनः दूसरे वर्ष में भी इसी प्रकार से होगा। उस लेख को गाहक लोग अपने पास रख लें। और यह निश्चय जान लें कि मेरा धन उस के पास पहुँच गया। और जो पुस्तक देने वाला वा गाहक इस में अन्यथा करेगा वह इस बात को पूरी करने वाला होगा। सो हम लोग निश्चय जानते हैं कि जो सर्वशक्तिमान् परमात्मा है उस की कृपा से इस काम में विपरीतता कभी न होगी। सो गाहक लोगों को एक रुपैये में २००० दो हजार श्लोक मिलेंगे। सो इस में कागज और अक्षर अच्छे रहेंगे जो बाँचने वाले और देखने वाले जिसको देख और बाँच के प्रसन्न हों। सो यह वेदभाष्य अपूर्व होता है। अर्थात् अत्यन्त उत्तम बनता है क्योंकि इस में अप्रमाण वा कपोल कल्पित लेख नहीं होता। जे बड़े विद्वान् आर्यावर्त्तवासी प्रथम हो गये हैं, जे वेदों के अर्थ को यथावत् जानते थे, जे कि सत्यवादी जितेन्द्रिय और धर्मात्मा थे तथा जिन की बुद्धि में सब लोगों का उपकार करना ही रहता था, जे कि वेदों में परम विद्वान थे और जिनकी निष्ठा एक अद्वितीय ब्रह्म में थी, जे ब्रह्मा से लेके व्यास जी पर्यन्त मुनि जे कि मननशील थे, और ऋषि जे कि वेद मन्त्रों के अर्थों को यथावत् जानने वाले थे, उनके किये सनातन जे ग्रन्थ हैं शिक्षा कल्प व्याकरण निघण्टु निरुक्त छन्द और ज्योतिष ए वेदों के छः अङ्ग कहाते हैं तथा ऐतरेय शतपथ साम और गोपथ ए चारों वेदों के चार ब्राह्मण कहाते हैं तथा पूर्वमीमांसा वैशेषिक न्याय

१. २० अगस्त १८७६। यु० मी०। २. प्रथम दिसम्बर १८७६।

३. ग्रन्थ परिमाण बताने केलिये ३२ अक्षर का एक श्लोक मानकर गिनती करने की प्राचीन परिपाटी है।

योग सांख्य और वेदान्त ए छः शास्त्र कहाते हैं और चार उपवेद हैं आयुर्वेद जो वैद्यक शास्त्र है धनुर्वेद जो राजविद्या है गान्धर्ववेद जो गान शास्त्र है और अर्थ वेद जो शिल्पशास्त्र है ए चार उपवेद कहाते हैं तथा केन कठ प्रश्न मुण्डक माण्डूक्य तैत्तिरीय ऐतरेय[1] और मैत्रेयी ए दश उपनिषद् कहाती हैं। ११२७ ग्यारह सै सत्ताईस वेदों की शाखा जे कि वेदों के ऊपर मुनि और ऋषियों के किये व्याख्यान हैं इनमें से जितनी शाखा मिलती हैं और मूल वेद जे ऋक् यजुः साम और अथर्व वेद इनकी जे चार मन्त्र संहिता हैं ए ईश्वर कृत सनातन चार वेद कहाते हैं शिक्षा से लेके शाखान्तर पर्यन्त वेद के जे सत्यार्थ युक्त व्याख्यान हैं जे कि ब्रह्मा से लेके व्यास जी पर्यन्त ऋषि और मुनियों के किये हैं उन सनातन सत्य ग्रन्थों के वचनों का लेख प्रमाण से सहित और मूल वेदों के भी प्रमाणों से सहित यह वेद भाष्य रचा जाता है । और प्रत्यक्षादि प्रमाणों की योजना भी इस में लिखी जाती है। इस कारण से यह वेद भाष्य अपूर्व होता है। और इस वेदभाष्य से वेदों का जो सत्य अर्थ वह सब सज्जन लोगों के आत्माओं में यथावत् प्रकाशित होगा। तथा वेदों के ऊपर लोगों ने मिथ्या जे व्याख्यान किये हैं उन की निवृत्ति भी इस भाष्य से अवश्य होगी। और जो उन व्याख्यानों के देखने से मिथ्या जाल जगत् में प्रवर्त्तमान है सो भी इस भाष्य से नष्ट अवश्य हो जायगा। इस कारण से भी यह वेदभाष्य अपूर्व होता है क्योंकि जब वेदों का सत्य अर्थ सब को विदित होगा तब मनुष्य लोग असत्य व्यवहार को छोड़ के सत्य का ग्रहण और सत्य में ही प्रवृत्त होंगे। इस के होने से मनुष्यों को सुख की प्राप्ति अवश्य होगी। तथा वेद का सत्य अर्थ रूप जो राज्य और परमेश्वर का यथावत् प्रकाश रूप जो अखंड राज्य है सो भी इस भाष्य के होने से जगत् में यथावत् प्रकाशित होगा। इस निमित्त से भी यह वेदभाष्य परमोत्तम होता है । और जब इस वेदभाष्य को यथावत् विचार के उस के कहे प्रमाण से जे मनुष्य आचरण करेंगे उन को सत्य धर्म सत्य अर्थ सत्य काम और नित्य सुख रूप जो मोक्ष इन चारों पदार्थों की सिद्धि यथावत् प्राप्त होगी। इस में कुछ सन्देह नहीं। बहुत लिखना बुद्धिमानों के लिये अवश्य नहीं किन्तु इस वेदभाष्य को जब देखेंगे तब उनको ए सब बात देखने में आवेंहीगी । और वेदों की भूमिका जो बनाई है उस को भी देखने से सज्जन लोगों के हृदयकमल अत्यन्त आनन्दित होंगे। जिस से इन की प्रवृत्ति यथावत् हो इसलिये यह विज्ञापन किया जाता है कि जे सत्य विद्या के प्रेमी विद्वान् हैं तथा जे सत्य अर्थ के जानने की इच्छा करने वाले हैं तथा सब मनुष्यों को सत्य विद्या से सुख प्राप्त हो और सब मनुष्यों की बढ़ती हो इस उपकार की इच्छा करने वाले जे मनुष्य हैं उन राजाओं से लेके जे भृत्य पर्यन्त और जे ऐश्वर्य युक्त और उत्तम मनुष्य हैं जो सब मनुष्यों का उपकार करने वाला वेदभाष्य का होना यह बड़ा कृत्य है इस में जितना जिस का सामर्थ्य हो उतना सहाय करना सब को उचित है। सो सहाय दो प्रकार से होगा एक तो मासिक पुस्तकों के ग्रहण करने से और दूसरा इस के बनने और छपवाने में धन और पण्डितों के रखने में सहाय देने से होगा । यही सब सज्जनों से विज्ञापन है कि अत्यन्त प्रीति से इस कार्य में दो प्रकार का सहाय सदा करें ॥

भाष्यस्यापूर्वत्वे दृष्टान्ताः संक्षेपतोऽन्येपि लिख्यन्ते । तत्र सत्येष्वार्षेषु सनातन-ग्रन्थेषु रूपकाद्यलङ्कारेण सत्यविद्याप्रकाशिकाः प्रमाणयुक्तिसिद्धा अनुत्तमा बह्व्यः कथा

---

१. यहां बृहदारण्यक और छान्दोग्य स्पष्ट ही रह गई प्रतीत होती हैं।

लिखिताः सन्ति। तासां मध्यादिग्दर्शनवत्काश्चित्कथा अत्र वेदभाष्यभूमिकायां मयोल्लिखिताः। यासामज्ञानादाधुनिकपुराणग्रन्थेषु भ्रान्त्या मनुष्यैस्ता अन्यथैव लिखिता उपदिष्यन्ते श्रूयन्ते च। तत्परीक्षार्थं संक्षेपतोऽत्र विज्ञापनपत्रेपि काश्चिल्लिख्यन्ते। तद्यथा। प्रजापतिर्वै स्वां दुहितरमभ्यध्यायद्दिवमित्यन्य आहुरुषसमित्यन्ये तामृश्यो भूत्वा रोहितं भूतामभ्यैत्तस्य तद्रेतसः प्रथममुददीप्यत तदसावादित्योऽभवत्। एतरेयब्रा० पंचिका ३ अध्याय ३॥ प्रजापतिः सविता। शतप० काण्डे १० अध्याय २॥ तत्र पिता दुहितुर्गर्भं दधाति पर्जन्यः पृथिव्याः॥ निरु० अध्याय ४ खं० २१॥ द्यौर्मे पिता जनिता नाभिरत्र बन्धुर्मे माता पृथिवी महीयम्। उत्तानयोश्चम्वो ३ र्योनिरन्तरत्रा पिता दुहितुर्गर्भमाधात्॥ निरु० अध्याय ४ खण्ड २१॥ शासद्वह्निर्दुहितुर्नप्त्यङ्गाद्विद्वां ऋतस्य दीधितिं सपर्यन्॥ पिता यत्र दुहितुः सेकमृञ्जन्त्सं शग्म्येन मनसा दधन्वे॥ ऋग्मंत्रद्वयमिदम्॥ ज्योतिर्भाग आदित्यः॥ निरु०। अ० १२। खंड १॥

॥ भाषार्थ ॥

इस भाष्य के अपूर्व होने में तीन कथा दृष्टान्त के लिये इस विज्ञापन पत्र में संक्षेप से लिखते हैं। उनमें से एक यह कथा है कि जिसको श्रीमद्भागवतादि नवीन ग्रन्थों में बहुत विपरीत करके लिखी है। जिस कथा को वेद विरोधी मत वाले नहीं जानके लोगों को मिथ्या बहका के अपने चेले कर लेते हैं। और जे वेद मत वाले हैं वे भी सत्य कथाओं के नहीं जानने से और मिथ्या कथाओं को सुनके भ्रान्त होके उनके चेले हो जाते हैं। सो देखो चित्त देके कि कितना बड़ा भ्रम मनुष्यों को अज्ञान से हुआ है। (प्रजापतिर्वै०) प्रजापति नाम है सूर्य का, क्योंकि सब प्रजा का जो पालन होना उसका मुख्य हेतु सूर्य ही है। उसकी दो कन्या हैं। एक द्यौः अर्थात् प्रकाश और दूसरी उषा जो चार घड़ी रात्रि रहने से प्रातः काल पूर्व दिशा में किंचित्प्रकाश होता है क्योंकि जो जिससे उत्पन्न होता वह उसका सन्तान कहाता है। सो इन दोनों का पिता की नाईं सूर्य है। और उन दोनों को सूर्य की कन्या की नाईं समझना उषा जो सूर्य की कन्या उस में पिता जो सूर्य उसने अपना किरण रूप वीर्य को डाला। उन दोनों के समागम से यह जो आदित्य अर्थात् प्रकाशमय दिन है यह एक पुत्र उत्पन्न होता है॥१॥ तथा इसी प्रकार से पर्ज्जन्य जो मेघ है सो पिता स्थानी है और पृथिवी उसकी कन्या स्थानी है क्योंकि जल से पृथिवी की उत्पत्ति होती है। इससे ए दोनों पिता पुत्रवत् हैं सो अपनी कन्या जो पृथिवी उसमें मेघ जो पिता वह वृष्टिद्वारा जल रूप वीर्य को डालता है। इन दोनों के परस्पर समागम से गर्भ धारण होने से अन्न ओषधि और वृक्षादि अनेक पुत्र उत्पन्न होते हैं। यह पिता और दुहिता की रूपकालंकार कथा से उत्तम विद्या का अत्यन्त प्रकाश होता है। इस उत्तम कथा को बिगाड़ के अज्ञानी लोगों ने बुरी प्रकार से लिखी है॥२॥ दूसरी यह कथा है जिसको बहुत प्रकार से लोगों ने पुराणों में बिगाड़ के लिखी है॥

इन्द्रागच्छेति गौरावस्कन्दिन्नहल्यायै जारेति तद्यान्येवास्यचरणानि तैरेवैनमेतत्प्रमुमोदयिषति। रेतः सोमः। शतपथ० कांड ३ अ० ३॥ रात्रिरादित्यस्योदयेन्तर्धीयते

नि० अ० १२ खं० ११ ॥ सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्व इत्यपि निगमो भवति। सोपि गौरुच्यते। नि० अ० २ खं० ६ ॥ जार आ भगम्। जार इव भगमादित्योत्र जार उच्यते। रात्रेर्जरयिता। नि० अ० ३ खं० १६ ॥ एष एवेन्द्रो य एष तपति। श० कां० १ अ० ६ ॥

॥ भाषार्थ ॥

इसको इस प्रकार से बिगाड़ी है। इन्द्र जो देव लोक का राजा था वह गोतम ऋषि की अहल्या जो स्त्री उससे व्यभिचार करता था। इस बात को गोतम ने जब जाना तब इन्द्र को शाप दिया कि तेरे शरीर में हजार भग हों और अहल्या को शाप दिया कि तूं शिला हो जा। इस शाप का मोक्षण राम के पांव की धूल के स्पर्श से होगा। सो इसी कथा को विद्याहीन लोगों ने इस प्रकार से बिगाड़ी है। यह ऐसी कथा है कि इन्द्र नाम है सूर्य का तथा चन्द्रमा का नाम गोतम है और रात्रि का नाम अहल्या है क्योंकि अहर् नाम है दिन का, सो लय होता है जिसमें, इस कारण से रात्री का नाम अहल्या है। जैसे स्त्री और पुरुष का जोड़ा होता है इसी प्रकार रात्रि और चन्द्रमा का रूपकालंकार किया है। इस रात्रि का जार[1] सूर्य है, क्योंकि जिस देश में रात्रि है उसमें सूर्य का किरण रूप जो वीर्य है वहां उसके गिरने से रात्रि अन्तर्धान अर्थात् निवृत्त हो जाती है। इससे सूर्य का नाम अहल्या का जार है। रात्रि की उमर को सूर्य ही बिगाड़ता है। अर्थात् उसकी हानि कर्त्ता है इससे सूर्य्य रात्रि का जार कहाता है। और चन्द्रमा अपनी स्त्री जो रात्रि है उससे सब संसार को आनन्द करता है। इस अत्यन्त श्रेष्ठ कथा को लोगों ने विगाड़ के अन्यथा ही लिखी है ॥ २ ॥ तथा तीसरी यह कथा है जो इन्द्र और वृत्रासुर के युद्ध की कहानी है ॥

तद्यथा ॥ अहन्नहिं पर्वते शिश्रियाणं त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्यं ततक्ष ॥ वाश्रा इव धेनवः स्यन्दमाना अंजः समुद्रमवजग्मुरापः । ऋग्वेद अष्टक १ अध्याय २ वर्ग ३७। इत्यादय एतद्विषया वेदेषु बहवो मंत्राः सन्ति। अद्रिरित्यादिषु मेघस्य त्रिंशन्नामसु—वराहः। अहिः। वृत्रः। असुर इति चत्वारि नामानि यास्कमुनिकृतनिघंटोः प्रथमाध्याये लिखितानि ॥ इन्द्रशत्रु-रिन्द्रोस्य शमयिता वा शातयिता वा तस्मादिन्द्रशत्रुस्तत्को वृत्रो मेघ इति नैरुक्तास्त्वाष्ट्रोऽसुर इत्यैतिहासिकाः । वृत्रं जघ्निवानपववार तद्वृत्रो वृणोतेर्वा वर्त्ततेर्वा वर्द्धतेर्वा। यद्वृणोत्तद्वृत्रस्य वृत्रत्वमिति विज्ञायते । निरुक्त अध्याय २ खण्ड १६, १७।

वृत्रो ह वा इदꣳ सर्वं वृत्वा शिष्ये। यदिदमन्तरेण द्यावापृथिवी स यदिदꣳ सर्वं वृत्वा शिश्ये तस्माद्वृत्रो नाम॥४॥तमिन्द्रो जघान स हतः पूतिः सर्वत एवापोभिः प्रसुस्राव सर्वत इव ह्ययꣳ समुद्रस्तस्मादु हैका आपो बीभत्सां चक्रिरे ता उपर्युपर्यति पुप्लुविरे त इमे दर्भास्ता हैता अनापूयिता आपोस्ति वा इतरासु सꣳसृष्टमिव यदेना वृत्रः पूतिरभिप्रास्रवत्तदेवासामेताभ्यां पवित्राभ्यामपहन्त्यथ मेध्याभिरेवाद्भिः प्रोक्षति तस्माद्वा एताभ्यामुत्पुनाति शतपथ कांड १ अ० १

१. रात्रि का नाश करने वाला (जॄष् वयोहानौ)। यु० मी०।

तिस्र एव देवता इति नैरुक्ताः । अग्निः पृथिवीस्थानो वायुर्वेन्द्रो वान्तरिक्षस्थानः सूर्यो द्युस्थान इति निरु० अ० ७ खण्ड ५ ।

॥ भाषार्थ ॥

(अहन्नहिं०) यह ऋग्वेद का मन्त्र है इत्यादि इस विद्या के निरूपण करने वाले और भी बहुत मन्त्र हैं । इन्द्र नाम है सूर्य का सो निघण्टु में लिखे हैं । इन दोनों का रूपकालङ्कार से युद्ध की नाईं वर्णन किया है । जब त्वष्टा जो सूर्य है अर्थात् मेघ और सब चीजों का काटने वाला है वह जब मेघ को अपनी किरण रूप वज्र से काटता है तब वह वृत्रासुर जो मेघ है सो पर्वत और भूमि का आश्रय लेता है । पुनः उसका शरीर रूप जो जल है सो समुद्र को प्राप्त होता है । पुनरपि सूर्य की किरण से उसके शरीर का खण्ड २ होता है । सो वायु के साथ आकाश में ऊपर चढ़ता है। फिर भी बादल रूप सेना को जोड़ के सूर्य की सेना जो किरण रूप है उसको रोकता है। पुनः सूर्य भी अपनी किरण रूप सेना से उसका हनन कर्त्ता है, पुनः वह मेघ पृथिवी में गिर पढ़ता है । पुनरपि उठ के इसी प्रकार युद्ध कर्त्ता है (इन्द्रशत्रुः) इन्द्र शत्रु है । जिसका ऐसा जो मेघ उसका छेदन करनें वाला सूर्य ही है । इससे सूर्य का नाम त्वष्टा है । उसके पुत्र की नाईं मेघ है क्योंकि मेघ की उत्पत्ति सूर्य के निमित्त से ही होती है । इससे मेघ का नाम त्वष्टा है और असुर भी नाम है । वृत्र नाम मेघ का इस कारण से है कि सूर्य के प्रकाश को आवरण कर्त्ता है और सूर्य से ही वृद्धि को प्राप्त होता है । यही मेघ में वृत्रपन है । सो जब आकाश में वृद्धि को प्राप्त होता है तब सब को आवरण करके आकाश और पृथिवी के बीच में सोता है। पुनः जब सूर्य इस मेघ को हनन करके पृथिवी में गिरा देता है तब पृथिवी को आच्छादित करके पृथिवी में सोता है । पुनरपि उसी प्रकार ऊपर को चढ़ता है। इसी प्रकार से सूर्य और मेघ के रूपकालङ्कार से परमोत्तम जो मेघ विद्या है उसका इस कथा से परमेश्वर ने इसके अनुसार मुनि और ऋषियों ने भी उपदेश किया है। इसको यथावत् नहीं जान के बालकों की नाईं विपरीत कथा मनुष्यों ने रच लीं हैं। ऐसी अनेक कथा रूपकादि अलङ्कारों से वेदादि सत्य शास्त्रों में लिखी हैं । उन में से कई एक कथा वेद की भूमिका में सज्जनों को जानने के लिये लिखी है । तथा वेदों की उत्पत्ति किस प्रकार से है, वेद नित्य हैं वा अनित्य हैं, वेद ईश्वर ने बनाये हैं वा अन्य ने, वेदों में सब विद्या हैं वा नहीं इत्यादि बहुत कथा भूमिका में लिखी हैं । जब भूमिका छपके सज्जनों के दृष्टि गोचर होगी तब वेद शास्त्र का महत्त्व जो बड़ापन तथा सत्यपना भी सब मनुष्यों को यथावत् विदित हो जायगा । सो भूमिका[1] के श्लोक न्यून से न्यून संस्कृत और आर्यभाषा के मिल के आठ ८ हजार हुये हैं । इसमें सब विषय विस्तार पूर्वक लिखे हैं । सो इस को छपवा के हम लोग प्रसिद्ध किया चाहते हैं । इसलिये सब सज्जन लोगों को यही विज्ञापन है कि अत्यन्त उत्साह से पूर्वोक्त दो प्रकार का सहाय इस उत्तम काम में यथावत् देवें ॥ ओं नमः सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय ॥ यही परमेश्वर स्वकृपा से सब का सहायक हो ॥

———

१. अर्थात् नवम्बर १८७६ के मध्य तक भूमिका बन चुकी थी । इस से ज्ञात होता है कि भूमिका के बनने में लगभग पौने तीन मास लगे ।

[१] पत्र (१५) [२६]

ओम्

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमा० वनमालीसिंह योग्य इतो स्वामी दया० आशीर्वाद । पौष शुदी २ रविवार को हम दिल्ली पैंहुच गये हैं । सो आपको लिखा जाता है कि विज्ञापनपत्र हजार १००० और वेदभाष्य पुस्तक १००० चिट्ठी देखते ही भेजो । और बाकी पुस्तक लाजरस कम्पिनी मैं रहनै दो । भ्वां सैं उठाना नहीं । पत्र देखते ही २००० पुस्तक और चिट्ठियां देशावर सैं हमारे नाम की आई थी, और जो वेदभाष्य देखकर सूचीपत्र बनाया था, उस को वी लेते आना क्योंकि तुम को हमारे पास रहना होगा । और जो कुछ किराया रेल का होगा सो इहां सैं दे दीया जाइगा । अगर जो पुस्तक लाजरस कम्पिनी ने रमाने करि दी हो तो वी आपु हमारे पास चले आना । अग्रे किमधिकम् ।

पौष शुद्धी ४ भौमे सं० १९३३ ।[1]

———

[१] पत्र (१६) [२७]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायोग्येभ्यः श्रीयुतपण्डितकालूराम शर्म्मभ्यो[2] दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम् । शमत्रास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमाशास्महे ।। आगे प्रेत की गिनती जिस समय प्राण छूटे उसी समय से मानना और अद्यतन शब्द से आगामिनी अर्द्धरात्री पर्यंत काल का ग्रहण होता है । इसी रीति अर्द्धरात्रि से दिवसारंभ जानना । और वेदोक्त मार्ग को कितने पुरुष स्वीकार करते हैं सो इसका परिगणन नहीं कर सक्ते । असंख्यों में से दो चार लिख देते हैं जैसे महाराज इन्दोर के और बडोदा के और कपूर्थला के विक्रमासिंह महाराज, राजा जयकृष्णदास, ठाकर मुकुन्दसिंह

---

१. १६ दिसम्बर सन् १८७६ । यह पत्र देहली से काशी को लिखा गया था । मूल पत्र गुलाबी रंग के बारीक कागज पर लिखा हुआ है ।

यह पत्र श्री देवेन्द्र बाबू के संग्रह में था । इस पर उन की संख्या c 74 पड़ी है । श्री पं० बासी-राम जी मेरठ निवासी से म० मामराज जी अक्तूबर १९२६ में मूल पत्र ले आए थे। अब यह हमारे संग्रह में संख्या २ पर सुरक्षित है ।

वनमालीसिंह श्री स्वामी जी का बाबू अर्थात अङ्गरेजी आदि लिखने वाला क्लर्क प्रतीत होता है । [इस से स्वामीजी महाराज ने अंग्रेजी पढ़ना भी प्रारम्भ किया था । देखो पं० देवेन्द्रनाथजी संकलित जी०च० पृष्ठ ३७७]

२. पं० कालूराम जी रामगढ़ (सीकर) रियासत जयपुर निवासी थे । इन की योग में अच्छी गति थी। इन को तन्द्रावस्था में श्री स्वामी जी के दर्शन हुए । उसी समय से इन्हों ने श्री स्वामी जी को गुरु धारण कर लिया । बहुत काल पश्चात् फिर श्री स्वामी जी के दर्शन को गए। इन्हीं के उपदेश से रामगढ़ के आस पास के लोग आर्य धर्म में श्रद्धावान् हुए । इन्हीं के कारण मुं० समर्थदान ऐसा भक्त श्री स्वामी जी की सेवकाई करने लगा । ज्येष्ठ सु० १० संवत् १९५७ को अपनी इच्छा से शरीर त्याग गए।

तथा लाला लक्ष्मी नारायण बरेली के इत्यादि बहुत जान लेना ॥ और मैं अब नहीं आ सक्ता परन्तु कधी अनोदक होगा तो जरूर आऊंगा। अनुमान है कि यहां से मेरठ की ओर जाना होगा।

संवत् १९३३ माघ कृष्ण ४ बुधवार।'

---

[२] पत्र(१७) [२८]

Meerutt,
6/2/77[२]

My dear Sir,[३]

I am very happy to acknowledge the receipt of your letter date unknown, and feel much pleasure to learn from your writing that you have procured good many subscribe[rs for] Veda Bhasya. Please infrom all those subscribers *who are ready to buy monthly tract, to send their subscription money to Benares to the address of Messrs E. J.* Lazarus & Co. Medical Hall Press Benares. *The Bigyapan Pattra's or notices are not intended to be sold for price, but only to improve the number of subscribers for Veda Bhasya,* so please *show and give* them to all of your friends and neighbours who are expected to be subscribers for Veda Bhasya. E. J. Lazarus & Co. will acknowledge receipt for the money which is to be sent to him, but all subscribers must send their respective *correct addresses for reciving their copies from him* (Massrs. E. J. Lazarus & Co.)

I hope you will keep continue trying your utmost in increasing the No. of subscribers. Hoping you are alright with your family. I am to stay here up to 15th inst. and then will leave this for Saharanpore. An early answer will ever oblige. Annual subscription for Veda-Bhasya is 4/8/- only

Yours well wisher
Swami Dayanand Saraswati
(Sd.) **दयानन्द सरस्वती**

Please let me know *the total No. of subscribers* already collected by you in Lucknow. I have written five copies in my list against your name

---

१. ३ जनवरी १८७७ को देहली से भेजा गया। मूल पत्र हमारे पास श्री पं० रामसहाय जी ने भेजा था। पं० कालूराम जी के शिष्य स्वामी स्वरूपानन्द जी से उन्हें यह पत्र मिला था। यह गुलाबी रंग के बारीक हाथी मार्का कागज़ पर लिखा हुआ है। अब यह पत्र हमारे संग्रह में संख्या ३ पर सुरक्षित है।

२. फाल्गुन कृष्ण ६, मंगलवार, सं० १९३३। यु० मी०।

३. यह पत्र पं० रामाधार वाजपेयी लखनऊ को लिखा गया था। मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित हैं। यु० मी०।

for furnish. you with five copies and others can get more on advancing their annual subscription Rs. 4/8/- only.'

Sd. Swamee D. Nand Sarusswatti.

दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

मेरठ

६–२–७७[२]

मेरे प्रिय महाशय !

आप के अज्ञात तारीख के पत्र की रसीद की स्वीकृति बताने में मुझे बड़ा आनन्द है, और आप के लेख से यह जान कर बड़ा हर्ष है कि आपने वेदभाष्य के लिये बहुत से ग्राहक बना लिये हैं । कृपया उन सब ग्राहकों को जो मासिक अङ्क खरीदना चाहते हैं यह बता दें कि वे अपना चन्दा बनारस में मैसर्ज ई० जे० लजारस और कम्पनी, मैडिकल हाल प्रेस, बनारस के पते पर भेज दें । विज्ञापन पत्र मूल्य पर बेचने के लिये नहीं हैं, परन्तु वेदभाष्य की ग्राहक संख्या बढ़ाने मात्र के लिये हैं । सो अपने उन मित्रों और पड़ौसियों को दिखा वा दे दें कि जिन के वेदभाष्य के ग्राहक बनने की सम्भावना है । ई० जे० लजारस और कम्पनी, जो रुपया उन्हें भेजा जायगा, उस की रसीद भेजेंगे । परन्तु सब ग्राहकों को उन से (मैसर्ज ई० जे० लजारस और कम्पनी से) अङ्क प्राप्त करने के लिये अपना २ शुद्ध पता भेजना चाहिये ।

मैं आशा करता हूँ कि ग्राहक संख्या बढ़ाने में आप अपना पूर्ण यत्न करते रहेंगे । आशा है आप सपरिवार आनन्द में होंगे । मैं यहाँ १५ तारीख तक रहूँगा और फिर यहाँ से सहारनपुर को जाऊंगा, शीघ्र उत्तर कृतार्थ करेगा । वेदभाष्य का वार्षिक चन्दा ४।।) मात्र है ।

आपका शुभचिन्तक

ह० दयानन्द सरस्वती

कृपया कुल ग्राहक संख्या जो आप ने लखनऊ से अभी तक एकत्र की है मुझे लिखें । मैंने अपनी सूची में आपके नाम पर भेजने को पाँच प्रतियाँ लिखी हैं और अन्य लोग वार्षिक चन्दा ४।।) भेजने पर और ले सकते हैं ।

दयानन्द सरस्वती

——

१. पूर्व पत्र के साथ ही यह पुनर्लेख मिलता है ।

२. फाल्गुन कृष्ण ६, मंगलवार सं० १९३३ । यु० मी० ।

[३] पत्र (१८) [२९]

MEERUTT.
13/2/77[1]

My dear sir,[2]

I reced :—yours dated 9th inst. and in its reply I feel much pleasure to send you herewith ten more copies of Bigiapan-Patters as you wished to be distributed there.

Well done, my dear, why you not do so? Let Sanskar Biddhee come from Bombay, as soon expected, and then not only one, but ten or fifteen copies will be sent to you without fail.

I will leave Meerutt on the 15th of this month for Saharanpore and so your answer should reach me there and not here. Hoping you are well with your family.

Yours well wisher
Swamee Dayanand Sarusswatti
(Sd.) दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

मेरे प्रिय महाशय ! मेरठ, १३-२-७७[1]

आप का पत्र तारीख ९ का मिला। उसके उत्तर में, जैसा आप ने वहाँ बांटने को चाहा था, मैं विज्ञापन पत्र की १० दश और प्रतियां भेजने में बहुत प्रसन्न हूँ।

मेरे प्रिय आपने बहुत अच्छा किया, भला आप ऐसा क्यों न करेंगे ? जैसा कि शीघ्र आशा है, संस्कारविधि मुम्बई से आ जाय और तब एक नहीं, परन्तु दश या पन्द्रह प्रतियाँ बिना देरी आप को भेजी जायेंगी।

मैं इस मास की १५ तारीख को मेरठ से सहारनपुर जाऊंगा और इस लिये आप का पत्र मुझे वहाँ मिलना चाहिये और यहाँ नहीं। आशा है आप सपरिवार आनन्द में होंगे।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

———

१. फाल्गुन कृष्ण ३०, मङ्गलवार, सं० १९३३। यु० मी०।

२. यह पत्र पं० रामाधार वाजपेयी लखनऊ को लिखा गया था। मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

[४] पत्र (१२) [३०]

Saharun-pore.
28/2/77.[1]

My dear Pundit

I am very glad to inform you that I will now visit the Chandapore Religious Fair situating in Rohelcund Shajahanpore District, where, I have been repeatedly invited by the Fair-Proprietors and others. The fair has been founded for assembling and collecting all the Religious Philosophers of India to enquire from, what is the God's true Religion to be followed for Salvation. I will leave Saharanpore by the 11th march and reach the fair-place on the 15th and so you are expected to join the Fair which will stop for a week (being postponed from 3 days to a week) with all your friends, who wish to come there. The fair will be most interesting and worthy to be seen and a great many Pundits, Moulvees and Padrees from all parts of India will attend and beautify it indeed. Hoping you are well with your children. Have you now recd./full required copies from Benares. An early answer will ever oblige.

yours will wisher
Swami Dayanand Sarusswati
(Sd.) दयानन्द सरस्वती

To

Pdt. Ramadhar Bajpayee,
Lucknow.

[भाषानुवाद]

सहारनपुर
२८-२-७७[1]

मेरे प्रिय पण्डित !

मैं आपको यह बताने में बड़ा प्रसन्न हूं कि मैं अब चान्दापुर धार्मिक मेले में जाऊंगा, जो कि रुहेलखण्ड जिला शाहजहांपुर में है, और जहां कि मेले के अध्यक्षों और दूसरों से मैं बारम्बार निमन्त्रित किया गया हूं। यह मेला आर्य्यावर्त के सब धार्मिक दार्शनिकों को एकत्र करने के लिये

१. चैत्र कृष्ण १, बुधवार, सं० १९३३। मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

बुलाया गया है, और उन से पूछा जायगा कि मुक्ति प्राप्त करने के लिये परमात्मा का सत्य धर्म्म कौन सा है ? मैं ११ मार्च को सहारनपुर से चलूंगा और मेला स्थान पर १५ को पहुंचूंगा और इसलिये आप को भी अपने सब मित्रों के साथ जो आना चाहते हैं, मेले में आना चाहिये, जो कि एक सप्ताह तक रहेगा (३ दिन से एक सप्ताह के लिये हो गया है)। मेला बड़ा रुचिकर और देखने योग्य होगा और बहुत से पण्डित, मौलवी और पादरी भारत के सब भागों से आयेंगे और निश्चय ही इसे सुशोभित करेंगे। आशा है आप स्वसन्तान सहित आनन्द में होंगे। क्या आप को अब बनारस से अभीष्ट प्रतियां मिल गई हैं ? शीघ्र उत्तर कृतार्थ करेगा।

आपका शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

---

[९] पत्र (२०) [३१]

Saharan-pore.
9/3/77[1]

My dear Pundit,

I am in receipt of your letter D/6/3/77 and in its reply I am happy to infrom you that the five more copies of Veda Bhashya have been sent to you with my permission and Messrs E. J. Lazarus is not in mistake this while. Please distribute them among the subscribers about whom you had written to me some days ago. I will reach Chanda-pur Fair on the 15th inst. which will now continue to stop for a whole week from 19th inst. Please let me know how many Sanskar Biddhis you require and address me after the 11th Chandapore Fair and not Saharanpore which I will leave for, on the said date Please accept best Asheer-bad and see the Fair, if possble.

Yours well wisher
(Sd.) Swami Dyanand Sarusswati
दयानन्द सरस्वती

P. S. You can send the subscription money for the five more copies you *recd.* twice, to the Medical Hall Press Benares, with addresses.

१. चैत्र कृष्ण १०, शुक्रवार, सं०१९३३। मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

[भाषानुवाद]

सहारनपुर
९-३-७७[१]

मेरे प्रिय पण्डित !

आप का ६-३-७७ का पत्र मिला और उसके उत्तर में मैं यह प्रसन्नता से लिखता हूँ कि आप को वेदभाष्य की पांच और प्रतियां भेज दी गई हैं और अब के मैसर्ज ई० जे० लजारस ने अशुद्धि नहीं की। कृपया उन्हें उन ग्राहकों में बांट दीजिये जिन के विषय में आपने कुछ दिन पहले मुझे लिखा था। मैं इस मास की १५ तारीख को चाँदापुर पहुँचूँगा जो कि अब १९ तारीख से लेकर पूरा एक सप्ताह रहेगा। कृपया लिखें कि आप को कितनी संस्कारविधियों की आवश्यकता है और ११ के पीछे मुझे चाँदापुर मेले के पते से लिखें और सहारनपुर नहीं, जहाँ से मैं उक्त तारीख को चला जाऊंगा। कृपया मेरा हार्दिक आशीर्वाद स्वीकार करें और यदि सम्भव हो तो मेला देखें।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

पु० नि० जो पाँच अधिक प्रतियाँ आप को दुबारा पहुँच गई हैं उनका चन्दा पता सहित मैडिकल हाल प्रेस बनारस को भेज दें।

———

[२] पत्र (२१) [३२]

LOODHIANA
16th April 1877.[२]

My dear Baboo,

I am extremely happy to read yours of the 12th inst. and am over [glad][३] to learn the delightful intention of Mr. Shamji to visit England for three ye[ars]. In my opinion this is the exampled opportunity for him [to][४] grasp it without fail which will prove mutually best indeed for both countrymen for their success in many ways. Your Inducement to him in this respect will be considered as first rate and he will be crowned with high honours by all educated people both in England and India for his

१. चैत्र कृष्ण १०, शुक्रवार, सं० १८३३। यु० मी०।

२. वैशाख शुक्ल ३. सोमवार संवत् १९३४। मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

३ कोष्ठगत पाठ फटा हुआ है।

४. यह शब्द मूल में नहीं है।

such a praiseworthy attempt, when returned successfully. Will he take his wife with him? Why his father-in-law Saith Chhabil Dass does not coincide with, and join your common opinion? Please give me further information again on this matter and I am very glad to express my best opinion this time that Mr. Shamji would not be considered a wise man if he turned his foot backward from this illustrious undertaking.

Now I will leave Loodhiana for Lahore on 19th of April 77 and will stop there in the garden of Ratun Chand Darhiwala. Please send all your letters to the above address till further information.

Accept my best ashirbad.

Swami Dyanand Saraswati.

To Baboo Harish Chander Chintamani Bombay.[1]

[भाषानुवाद]

लुधियाना

१६ अप्रैल १८७७[2]

Sd. दयानन्द सरस्वती

मेरे प्रिय बाबू

मैं आपका १२ ता० का पत्र पढ़ कर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और महाशय शाम जी की तीन वर्ष के लिए इङ्गलैण्ड जाने की इच्छा को जान कर असीम आनन्द हुआ। मेरी सम्मति में यह शुभ सुअवसर है जिससे अवश्य लाभ उठाना चाहिए, जो वस्तुतः यह विचार दोनों देशवासियों की कई प्रकार की सफलताओं के लिए सर्वोत्तम सिद्ध होगा। इस विषय में आपकी प्रेरणा सर्वोत्तम होगी और जब सफल होकर लौटेगा तो अपने इस प्रशंसनीय प्रयत्न के लिए इङ्गलैण्ड और भारत दोनों देशों की शिक्षित जनता द्वारा अत्यन्त सम्मानित होगा। क्या वे अपनी पत्नी भी साथ ले जावेंगे। उनके श्वसुर छबिलदास जी की इस सम्मति से सहमत और सहयोगी क्यों नहीं हैं; कृपया इस विषय में आगे मुझे सूचित करें और इस समय अपनी सम्मति व्यक्त करता हुआ मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ कि शाम जी यदि इसे स्वीकार नहीं करेंगे तो यह उनकी बुद्धिमत्ता न होगी।

मैं १८ एप्रिल ७७ को लुधियाना से लाहौर को प्रस्थान करूंगा और वहां रतन चन्द दाढ़ी (?) वाला के बाग में ठहरूंगा। कृपया अगली सूचना मिलने तक सब पत्र उपर्युक्त पते पर भेजें।

मेरा शुभ आशीर्वाद स्वीकार करें

स्वामी दयानन्द सरस्वती

सेवा में श्री बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि बम्बई।[1]

---

१. बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणि मुम्बई आर्यसमाज के प्रधान तथा वेदभाष्य के प्रबन्धक थे।

२. वैशाख शुक्ल ३, सोमवार, सं० १९३४।

[१] **निवास सूचना-विज्ञापन** [३३]

विदित हो कि सं० १९३४ वैशाख महिने में देश पंजाब लुधियाना वा अमृतसर में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[1]

---

[६] **पत्र (२२)** [३४]

LAHORE
15TH MAY 1877[2]

My dear Pundit.[3]

I duly received your both letters and understood all the particulars stated therein. The reason I could not answer you was that the books required by you were not ready in my hand to despatch and so I waited to receive them all the while till this date.

I have got now some of them, however, though in very limited number and can send you a few copies whatever I have with me, on your informing me how many books of *Suttiarth-Perkash* and *Aryabhi-Binoi*[4] etc. will suffice you, to be sold for ready payment because I also stand in need of money in my visiting places and at least fifty copies are required for Lahore and Amritsar.

Please send me an estimate of books, necessarily required for your *Sabha* and then I will send you some copies indeed.

May *Permatma* bless your object of establishing *Satya-Niroopan-Sabha,* which is expected to bring forth good fruit for the public. Hoping you are well with your friends. Accept my Asheerbad.

Yours well wisher
Pundit Swami Dayanand Sarusswatti
Sd/ दयानन्द सरस्वती

---

१. ऋ० भाष्य भूमिका, अङ्क (१) संवत् १९३४।

२. ज्येष्ठ शुक्ल २, मंगल, संवत् १९३४।

३. श्री स्वामी जी के मूल भाषा पत्र का अंग्रेजी उलथा करने वाला अवश्य ही कोई बंगाली था। मूल अंग्रेजी पत्र लखनऊ आ० स० के संग्रह में सुरक्षित है। यह पत्र बा० रामाधार वाजपेयी, लखनऊ को लिखा गया था।

४. इस प्रकार का लेख भी अंग्रेजी उलथाकार की बंगला मनोवृत्ति को प्रकट करता है।

[भाषानुवाद]

लाहौर
१५ मई, १८७७[1]

मेरे प्रिय पण्डित !

मुझे आप के दोनों पत्र समय पर प्राप्त हुए और उन में लिखा सब समाचार विदित हुआ। मेरे उत्तर न देने का कारण यह है कि आप से मांगी गई पुस्तकें मेरे पास भेजने को तय्यार न थीं और इस लिये मैं आज तक उन की प्राप्ति की प्रतीक्षा में रहा।

मुझे अब उन में से कुछ मिल गई हैं। आप का पता आने पर कि सत्यार्थप्रकाश और आर्याभिविनय की कितनी पुस्तकें आप के लिये पर्याप्त होंगी, मैं उन्हीं में से कुछ प्रतियां आप को भेज सकता हूं। आप उन का मूल्य तत्काल प्राप्त करें, क्योंकि मुझे भी नये स्थानों में जाने के लिये धन की आवश्यकता है और न्यून से न्यून लाहौर और अमृतसर के लिये पचास प्रतियां चाहियें।

कृपया जितनी पुस्तकें आप की सभा के लिये अत्यावश्यक हैं, उन की गणना का अनुमान मुझे भेजें और तब निस्सन्देह मैं आप को कुछ प्रतियां भेजूंगा।

परमात्मा आप के 'सत्य-निरूपण-सभा' के स्थापन के उद्देश्य को फलीभूत करें। इससे जनता के बड़े लाभ की आशा है। आशा है आप स्वमित्रों सहित आनन्द में होंगे। मेरा आशीर्वाद स्वीकार करें।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

---

[२] निवास-सूचना-विज्ञापन [३५]

विदित हो कि सं० १९३४ ज्येष्ठ महिने में पञ्जाब देश के लाहौर नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[2]

---

[७] पत्रम् (२३) [३६]

LAHORE 6th JUNE 1877[3]

Dear Sir,[4]

I am exceedingly glad to read yours of the 30th ult. which refreshed my soul very much. Your boldness in virtuous path is beyond

---

१. ज्येष्ठ शुक्ल २, मंगल, सं० १९३४। यु० मी०।
२. ऋ० भाष्यभूमिका, अङ्क (२) संवत् १९३४।
३. ज्येष्ठ द्वि० वदी १०, बुध, संवत् १९३४। मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।
४. यह पत्र पं० गोपालरावहरि देशमुख जी को लिखा गया था।

measure and your exertions in Indian's welfare are unspeakable. By the laws of nature you are deserving good reward from heaven, your prosperity will grow higher and higher rapidly.

I am willing to follow your advice, and ready to translate white Yajur Veda as you wish.[1] But in this case I will stand in need of two Pandits more and the printing Charges will also get increased for the double issue of the work every month. Therefore you can yourslf think over the matter properly and inform me then of your final opinion on the matter so that I may employ two writers more and begin to translate the work with certainity. I have every reason to believe that the darkness of ignorant India—which has reduced the people to such low condition in which they seem and still careless will one day be banished away, if the sun of civilization shone over and the true knowledge of Vedas, diffused over the country.

Noble and high spirited person like you and your companion only can be expected to undertake this mighty work for the public good and though such souls are few in number but their rarity is better than their abundance.

I wish that Shamji Krishna Varma should come to me for some time before starting for Oxford. I wish to give him some of the most important hints on Vedas which are necessarily required for him. He must not care for his expenses or anything else and I will furnish him with all necessities indeed. In my opinion his going to England is very useful for him but let me know what is your opinion about the matters. I will also write directly to him. I have got no copy of Maha Nirwana Tantra with me but it is procurable from Calcutta. Hoping you are well. Please let me know Shamji K. Varma's answer about my enquiry and accept my Asheerbad.

Yours well wisher

Pandit S. Dayanand Saraswati.

---

१. इस पत्र से प्रतीत होता है कि ऋग्वेदभाष्य के मुद्रण के साथ साथ शुक्ल यजुर्वेद भाष्य का मुद्रण पं० गोपालरावहरि देशमुख के प्रस्ताव से ही हुआ था।

[भाषानुवाद]

लाहौर ६ जून १८७७[1]

प्रिय महोदय !

मैं आपका गत ३० ता० का पत्र पढ़ कर बहुत प्रसन्न हुआ और मेरी आत्मा को शान्ति मिली। सन्मार्ग में आप की निर्भीकता अपरिमेय है तथा आप के प्रयत्न भारत के कल्याण की दृष्टि से अकथनीय हैं। प्रकृति के नियमों के अनुसार आप पुरस्करणीय हैं, शीघ्र ही आप की समृद्धि उत्तरोत्तर बढ़ेगी।

मैं आपकी सम्मति के अनुसार चलने के लिए सहमत हूँ और जैसी कि आपकी इच्छा है, शुक्ल यजुर्वेद का भाष्य करने को तैयार हूँ[2]। किन्तु ऐसी स्थिति में मुझे दो अन्य पण्डितों की आवश्यकता होगी और प्रतिमास कार्य के द्विगुणित हो जाने से मुद्रण व्यय भी बढ़ जायगा। अतः आप स्वयं इस विषय पर उचित रूप से विचार करलें और अपनी अन्तिम सम्मति से मुझे सूचित करें जिससे मैं दो लेखक और रख सकूं जिस से निश्चित रूप से भाष्य का कार्य आरम्भ हो जावे। मेरा पूर्ण विश्वास है कि यदि देश में सभ्यता का सूर्य चमके और वेदों का सत्य ज्ञान फैले तो अज्ञानी भारत का अन्धकार जिसने जनता को ऐसी अधोगति में डाल दिया है, एक दिन अवश्य दूर हो जायगा।

आप और आपके साथियों जैसे भद्र और उच्च भावना वाले पुरुषों के सहयोग से ही जनहित के लिए इस महान् कार्य को हाथ में लेने की आशा की जा सकती है और यद्यपि ऐसी आशाएँ संख्या में कम हैं परन्तु उनकी न्यूनता उनकी अधिकता से अच्छी है

मैं चाहता हूँ कि औक्सफोर्ड के लिए प्रस्थान करने से पहले शाम जी कृष्ण वर्मा थोड़े समय के लिए मेरे पास आ जावें। मैं वेदों के विषय में उनको कुछ अत्यन्त महत्त्व पूर्ण संकेत देना चाहता हूँ जो उनके लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। उन्हें व्यय या अन्य किसी वस्तु की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। मैं उनकी सब आवश्यकताओं की पूर्ति कर दूँगा। मेरी सम्मति में उनका इङ्गलैण्ड जाना उनके लिए बहुत उपयोगी है, परन्तु इस विषय में आप अपनी सम्मति से मुझे सूचित करें। मैं सीधा उनके पास भी पत्र लिखूँगा। मेरे पास महानिर्वाण तन्त्र की कोई प्रति नहीं है, किन्तु यह कलकत्ता से प्राप्य है। आशा है आप कुशल होंगे। कृपया मेरे प्रश्नों के विषय में शाम जी कृष्ण वर्मा के उत्तर से अवगत करावें और आशीर्वाद स्वीकार करें।

आपका शुभचिन्तक

पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती

---

[३] निवास-सूचना-विज्ञापन [३७]

विदित हो कि सं० १९३४ दूसरे ज्येष्ठ महिने में पञ्जाब देश के लाहौर नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[3]

---

१. ज्येष्ठ द्वि० वदि १०, बुधवार, १९३४। २. देखो-पृष्ठ ५०, टि० १।

३. ऋ० भाष्य भूमिका, अङ्क (३) संवत् १९३४।

[७] पत्र (२४) [३८]

LAHORE

8th JNNE 1877[1]

My dear Pandit[2]

Please let me know whether you require some more copies of *Sanskar-Bidhi* or *Suttiarth-Parkash* for your *Sabha* as you requested once before. Have you recovered the price of twenty *Sanskar-Bidhis* and have you sold all of them to the people ?

The other books are not ready with me but when come to hand, you will be informed at once. Successful lectures are going on here every day and with good consequence. Hoping you are well with your children. Accept my *Asheerbad*.

Yours well wisher

Pundit Swami Dayanand Sarusswatti

Sd/ दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

लाहौर

८ जून १८७७[1]

मेरे प्रिय पण्डित[2] !

कृपया मुझे बताएँ कि जैसा आप ने पूर्व एक बार लिखा था, क्या आप अपनी सभा के लिये संस्कारविधि या सत्यार्थप्रकाश की कुछ और प्रतियाँ चाहते हैं ? क्या आपने बीस संस्कार-विधियों का मूल्य प्राप्त कर लिया है और क्या आप ने वे सब लोगों को बेच दी हैं।

दूसरे पुस्तक मेरे पास तय्यार नहीं हैं, पर जब आ जायेंगे, तो आप को तत्काल सूचना दी जायगी। यहां प्रति दिन व्याख्यान बड़ी सफलता से हो रहे हैं । उनका परिणाम अच्छा होगा। आशा है आप स्वसन्तान सहित अच्छे हैं। मेरा आशीर्वाद स्वीकार करें ।

आप का शुभचिन्तक

ह० दयानन्द सरस्वती

---

१. ज्येष्ठ द्वि० वदी १२, शुक्र संवत् १९३४।

२. पण्डित रामाधार वाजपेयी को लिखा गया था। यह मूल पत्र लखनऊ आर्य समाज के संग्रह में सुरक्षित है ।

[१] पत्र (२५) [३९]

My dear Baboo Umritsar 21st. July 1877.[1]

Your letter of the 17th instant duly come to hand. I was really glad to learn from it that by the mercy of Supreme Being you are in enjoyment of perfect health. According to your request and wishes I herewith send a pattern of the Veda's monthly commentaries also a copy of prospectus of the same for your information. The subscription for the current year has been fixed Rs. 4–8–0 only including postage, but for the future years, the amount of subscription will be increased or decreased according to the size of the work. I'll be very glad to inform you now and then all about my gradual progress in my undertakings and regular movement from place to place without fail. Hoping you are well and rejoicing. Please accept my best *asheerbad* I have intended to stop at Umritsur up to the end of August, and have arrived here since the 12th inst. from Lahore.[2]

Your well wisher
Pandit Swami Dayanand Sarusswatti.
Sd/दयानन्द सरस्वती

P. S.

Address me Umritsur in the garden of Mohmed Jan Raees of the station.

Five parts for the five past months have already been published up to the end of June and the year for the work commences from February 1877.[3]

To

Baboo Deena Nauth Gangooly.[4]

Darjeeling.

---

१. आषाढ़ शुक्ल ११ शनि संवत् १९३४ ।

२. पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ३२१ और देवेन्द्र बाबू तथा पं० घासीराम कृत जीवन चरित पृ० ४२६ पर लिखा है कि श्री स्वामी जी ५ जुलाई को अमृतसर पहुँचे। इस पत्र से ज्ञात होता है कि श्री स्वामी जी १२ जुलाई को अमृतसर पहुँचे।

३. श्री देवेन्द्र बाबू के संग्रह में यह मूल पत्र विद्यमान था। म० मामराज अक्तूबर सन् १९२६ में वह मूल पत्र पं० घासीराम जी से लाये थे। हम ने उसी से इस की प्रतिलिपि स्वयं की थी। मूल पत्र अब हमारे संग्रह में संख्या ४ पर सुरक्षित है। (इस पत्र के विषय में दीनानाथ का पत्र परिशिष्ट में देखें।)

४. बाबू दीनानाथ का पूरा पता ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका प्रथमावृत्ति अङ्क ६, संवत् १९३४ के हरे रंग के अन्तिम पृष्ठ पर ग्राहक संख्या ४६५ पर इस प्रकार है—

इंजिनियर इन चीफ़स आफ़िस एन० बी० स्टेट रेलवे। सैदपुर, वाया [via] राजमहल और पार्वतीपुर।

[भाषानुवाद]

अमृतसर २१ जुलाई १८७७[1]

मेरे प्रिय बाबू।

आपका १७ ता० का पत्र ठीक समय पर हस्तगत हुआ। मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि परमेश्वर की कृपा से आप पूर्ण स्वस्थ हैं। आपकी प्रार्थना और इच्छा के अनुसार मैं इसके साथ वेद के मासिक भाष्य का नमूना और उसके नियमों की एक प्रति आपके सूचनार्थ भेज रहा हूँ। चालू वर्ष के लिए चन्दा डाक व्यय सहित केवल ४ रु० ८ आ० निश्चित किया गया है, किन्तु आगामी वर्षों के लिए पत्रिका के आकार के अनुसार चन्दे की रकम घटा या बढ़ा दी जायगी। मैं आपको अपने कार्य की क्रमशः वृद्धि तथा अपने नियमित पर्यटन के विषय में समय समय पर अवश्य सूचित करता रहूँगा। मैं आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ और आनन्दित होंगे। कृपया मेरा शुभाशीर्वाद स्वीकार करें। मैंने अगस्त के अन्त तक अमृतसर में ठहरने का विचार किया है। और इसी मास की १२ ता० को लाहौर से यहाँ पहुँचा हूँ।

आपका शुभचिन्तक,

ह० दयानन्द सरस्वती

पुनश्च—

मेरा पता—शहर के रईस मुहम्मद जान का बगीचा अमृतसर। जून के अन्त तक गत ५ महिनों के पाँच भाग प्रकाशित हो चुके हैं और पत्रिका का वर्षारम्भ फरवरी १८७७ से होता है।

सेवा में—बाबू दीनानाथ गांगोली, दार्जिलिङ्ग।

---

[१] पत्र (२६) [४०]

[वेदभाष्य सम्बन्धी पत्र]

मन्त्री आर्य समाज लाहौर की ओर से[2]

डाक्टर जी. डबल्यू. लाइटनर एम. ए. बार. ऐट. ला.

रजिस्ट्रार पञ्जाब यूनिवर्सिटी कालेज,

सिमला को

श्रीमन्!

पञ्जाब सरकार ने आपके यूनिवर्सिटी कालेज की सैनेट को पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य के गुणों को जानने के लिये एक पत्र भेजा था। उसका परिणाम जानने के लिए दक्षिण में

१. आषाढ़ शुक्ल ११, शनिवार, संवत् १९३४। पृष्ठ ५३ की टि० २, ३, ४ भी देखें। यु० मी०।

२. १४ मई १८७७ सोमवार को लगभग १० बजे श्री स्वामी जी पञ्जाब के लैफटिनैण्ट गवर्नर से मिले। देखो लैफटिनैण्ट गवर्नर के निजी मन्त्री मि० जे० ग्रिफ़िथ का १२ मई का श्री स्वामी जी के नाम का पत्र।

मुम्बई और पूना की, पश्चिमोत्तर प्रान्त में मुरादाबाद और शाहजहांपुर की और पञ्जाब में लाहौर और अमृतसर की आर्य समाजें अत्यधिक उत्सुक थीं। जूंही मैसर्ज़ ग्रिफिथ और टानि तथा लाहौर के कुछ पण्डितों की दी हुई सम्मतियाँ प्रकाश में आईं, तभी आर्य समाज लाहौर ने, अभिमानी समझे जाने के भय में पड़ कर भी, अपना यह कर्तव्य समझा कि आप को ऐसी सूचना दी जाए, जैसी इसकी सम्मति में, सैनेट ऐसी विद्वत् सभा को अधिक ठीक और परिपक्व निर्णय पर पहुंचने के योग्य बना दे। वह विद्वत्सभा वह सब कुछ सुन ले, जो उस भावी कार्य के अनुकूल या विरुद्ध कहा जा सकता है।

स्वामी दयानन्द ने स्वयं भी इस विषय पर एक लेख लिखा है। समाज उसे स्वामी दयानन्द सरस्वती के आलोचकों के समस्त आक्षेपों का सन्तोषदायक उत्तर समझता है। वह मूल लेख भी साथ ही भेजा जाता है।[1]

प्रतीत होता है कि महाभारत-काल से पहले, जिसे यूरोपियन काल-गणना के अनुसार तथा बहुत न्यून गिनती से भी ईसा के संवत् से ६०० या ७०० वर्ष पहले सरलता से धरा जा सकता है, भारत में वेदों का पठन पाठन नियम से होता था और उन पर भाष्य रचे जाते थे। उस समय ऐसे गुरुकुल वा विद्यालय थे, जिन में केवल वेद ही अध्ययनाध्यापन में आते थे, और भाष्य, कोष तथा व्याकरण लिखे जाते थे। ये ग्रन्थ इस लिए रचे जाते थे कि वेदमन्त्रों का व्याख्यान और स्पष्टीकरण हो। इन में से कई ग्रन्थ, काल के अनेक विनाशों के होने पर भी हम तक पहुंच पाए हैं। ये ग्रन्थ यद्यपि अलभ्य हैं, पर सर्वथा अप्राप्य नहीं हुए। इन में सब से अग्रणी ब्राह्मण, निरुक्त, निघण्टु और पाणिनि का व्याकरण आदि हैं। अत एव यही ग्रन्थ वेदों के सब से पुरातन और विश्वसनीय भाष्य और व्याकरण हैं। क्योंकि जब महाभारत का महासंग्राम हुआ तो उसने हिन्दू समाज को उसकी जड़ तक हिला दिया। उस समय अध्ययन की अपेक्षा लोगों को अपने प्राणों की चिन्ता अधिक थी उस युद्ध में सारा उत्तर भारत एक अथवा दूसरे पक्ष की ओर हुआ।

उसी दिन गवर्नर से वार्तालाप के अनन्तर स्वामी जी ने अपने वेदभाष्य के सहायतार्थ पञ्जाब सरकार को एक पत्र लिखा था। पत्र के साथ ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेदभाष्य का नमूना भी भेजा गया था।

पञ्जाब सरकार ने वे ग्रन्थ सम्मति के लिए यूनिवर्सिटी कालेज की सैनेट के पास भेज दिए। तब पञ्जाब यूनिवर्सिटी कालेज के रजिस्ट्रार ने स्वामी जी के भाष्य पर कुछ भारतीय और कुछ अंग्रेज अध्यापकों की सम्मतियां मंगाईं। वे सम्मितियां स्वभावतः श्री स्वामी जी के विपरीत थीं। उन सम्मतियों की आलोचना करने वाला यह उपरिलिखित पत्र जो अंग्रेजी से हमारे द्वारा भाषा में किया गया है लाहौर समाज की ओर से रजिस्ट्रार महोदय को लिखा गया। इस पत्र के साथ श्री स्वामी जी का लिखा हुआ उत्तर भाषा में भी था। उसका भावानुवाद भी अंग्रेजी में भेजा गया। वह आगे पूर्ण संख्या ४१ पर छपा है।

यह पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृष्ठ ८०२–८०५ पर उर्दू में छपा है। हमने यह भाषानुवाद मूल अंग्रेजी पत्र से किया है। वह मूल पत्र निम्नलिखित पुस्तक में छपा है—Essays on Swami Dayanand Saraswati and the Arya Samaj, compiled and Edited by Lala Jiwan Das Pensioner, Lahore, 1902. यह पुस्तक हमारे संग्रह मे सुरक्षित है।

१. यह पूर्ण संख्या ४१ पर छपा है। यु० मी०।

तब न केवल युद्ध के काल में प्रत्युत उस के शताब्दियाँ पश्चात् वेद घोर लुप्तावस्था में रहे। अधिक शान्तिप्रद कालों के लौटने पर वैदिक विद्या पुनर्जीवित हुई। नए विद्यालय उठे और नए भाष्य निकल पड़े। इन्होंने पुराने ऋषियों की व्याख्याओं को तिलाञ्जलि दी और अपने युग की प्रवृत्तियों के अधिक अनुकूल व्याख्याएँ कीं। तथापि इस से निकृष्ट समय भी आने वाला था। बौद्ध धर्म भारत में सर्वोपरि हो गया। वेदों के विद्वान् पकड़े और मारे जाते थे। उन की धार्मिक पुस्तकें जलाई जाती थीं और नष्ट की जाती थीं। ब्राह्मणों ने अभी बौद्धों को देश से निकाला ही था, अभी उन्हों ने अपना प्रभुत्व पुनः प्राप्त किया ही था, जब उन्हें एक अधिक भयानक शत्रु से सामना करना पड़ा। महाभारत के युद्ध ने और बौद्ध धर्म के विस्तार ने जो बात आंशिक रूप में की थी, देश पर मुसलमानों के अधिकार ने वह सर्वथा पूर्ण कर दी। सारी विद्या, सारा वाङ्मय और सारी सच्ची वैदिक विद्वत्ता समाप्त हो गई। इन्हीं उत्तर समयों में सायण, महीधर, उव्वट और रावण के भाष्य हुए। इन से लाभ के स्थान में हानि अधिक हुई। सर्व साधारण लोगों पर इनके भाष्यों का इतना प्रभाव हो गया है कि पुराने भाष्यों को निरर्थक समझा जाता है और उन्हें कभी ही कोई देखता है।

तथापि कुछ दूरी पर एक उज्ज्वल भविष्य होने वाला था।[ईसा की]गत शताब्दी के अन्तिम दिनों में संस्कृत भाषा और वाङ्मय ने कोलब्रुक, जोन्स और कारी (Carey) ऐसे प्रसिद्ध विद्वानों के ध्यान को पुनः अपनी ओर खेंचा। उनके दिए हुए धक्के ने भाषा-विज्ञान में ही आश्चर्य नहीं किया, वाप्प, बर्नफ श्लेगल, विलसन, वेबर और मैक्समूलर सदृश चमकते हुए प्राच्य विद्या विशारदों की एक विशेष पंक्ति को ही उत्पन्न नहीं किया, और हमें एक राजेन्द्रलाल मित्र ही नहीं दिया, परन्तु हम आशा करते हैं, वह धक्का अवश्य ही स्वामी दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य के रूप में परिणित होगा। परन्तु इस बात का बड़ा शोक है कि योरोपियन विद्वानों को अपनी अत्यधिक सामग्री के लिये एतद्देशीय पण्डितों पर आश्रित रहना पड़ता है। वे पण्डित ऐसे हैं जिन का अधिक से अधिक ज्ञान भी गहरा नहीं है। और इन में से भी जो सब से अधिक ज्ञानवान् हैं, सायण और महीधर से अधिक बड़े नाम नहीं जानते। यही कारण है कि वैदिक विद्वत्ता ने अपेक्षाकृत धीमी उन्नति की है और योरोप में वेदों की शिक्षा के सम्बन्ध में अशुद्ध विचार फैले हुए हैं।

प्रति वर्ष, प्रति मास, और दिन दिन हमारे महान् देश के प्राचीन साहित्य और सभ्यता पर निस्सन्देह अधिक प्रकाश पड़ रहा है। यद्यपि इस साहित्य के लिए योरोप में प्राच्य-विद्या के विद्वानों के सम्मिलित यत्नों द्वारा बहुत कुछ पहले ही किया गया है, परन्तु इससे भी अधिक अभी किया जाना शेष है। हमें विश्वास है, एक समय आयगा जब उपस्थित वेदभाष्य वैदिक विद्वत्ता के प्रासाद का मूलाधार समझा जायगा। वेदों की उलटी व्याख्या करने वाले भाष्यकारों द्वारा योरोपियन विद्वान् जिस प्रकार उलटा समझे हैं, उससे यह सर्वथा आश्चर्य नहीं होता कि वे कुछ काल के लिए इस विचार की अवहेलना करें कि वेद एक ही सद्ब्रह्म की उपासना सिखाते हैं। परन्तु हमारी धारणा है कि स्वामी दयानन्द ने जो धक्का अब दिया है, वह अधिक गम्भीर अन्वेषण को प्रोत्साहन देगा और सत्य को प्रकाश में लायगा। तथापि इस देश के पण्डितों की अपेक्षा योरोपियन विद्वानों से अधिक आशाएँ की जाती हैं। पण्डितों का यह स्वार्थ है कि जब तक वे कर सकें तब तक मूर्तिपूजा और उसकी विधियों

को स्थिर रक्खें। समाज इस समय ऐसी ही आशा कर सकता है कि बढ़ता हुआ प्रकाश किसी दिन अन्धकार को दूर करेगा और सब को सचेत करेगा।

योरोप में वैदिक विद्वत्ता सम्प्रति भी थोड़ी है, इसके अधिक प्रमाण अपेक्षित नहीं। योरोप के सब से बड़े वैदिक विद्वान् दृढ़ता से कहते हैं कि अब भी अनेक मन्त्र हैं कि जिनका कोई अर्थ नहीं निकलता। योरोप में अब तक जितना हुआ है वह शब्दों के अर्थों का अनुमान मात्र करने से अधिक नहीं है। इन से कोई सुसम्बद्ध विचार (मन्त्रों से) नहीं निकाले जा सकते। योरोप के सात प्रमुख प्राच्य विद्या-विशारदों के एक मन्त्र के निम्नलिखित अनुवाद, जो मूलार्थ से अत्यधिक भिन्न हैं उच्चस्वर से प्रमाणित करते हैं कि योरोप में वेदार्थ ज्ञान अभी स्थूल रूप में ही है।

उत ब्रुवन्तु नो निदो निरन्यतश्चिदारत।
दधाना इन्द्र इद् दुवः ॥ ५ ॥
उत नः सुभगां अरिर्वोचेयुर्दस्म कृष्टयः
स्यामेन्द्रस्य शर्मणि ॥ ६ ॥[1]

देखो—ऋग्वेद संहिता की मैक्समूलर की भूमिका पृ० २२—२४।

१. चाहे हमारे शत्रु कहते हैं, किसी और स्थान को चले जाओ तुम जो केवल इन्द्र की पूजा करते हो—

२. अथवा चाहे हे बलशालिन्, सारे लोग हमें भगवान् कहें, हम सदा इन्द्र की रक्षा में रहें।

इन मन्त्रों के सामान्य भाव के सम्बन्ध में मैंने विचारा कि कोई सन्देह ही नहीं हो सकता। यद्यपि इस में एक शब्द अर्थात् 'अरिः' व्याख्या योग्य है। फिर भी अनेक प्रकार की व्याख्याएँ जो विविध विद्वानों ने की हैं, विलक्षण हैं। प्रथम यदि हम सायण को देखें, तो वह अर्थ करता है—

१. हमारे पुरोहित इन्द्र की स्तुति करें। हे शत्रुओ, इस स्थान से चले जाओ और दूसरे स्थान से भी। हमारे पुरोहित (इन्द्र की स्तुति करें) वही जो सदा इन्द्र की स्तुति करते रहते हैं।

२. हे शत्रुओं के नाशक, शत्रु हमें धनवान् कहे, कितना अधिक मित्र लोग! हम इन्द्र की प्रसन्नता में हों।

प्रोफेसर विलसन ने सायण का पूरा अनुकरण नहीं किया। परन्तु उसने अनुवाद किया—

१. हमारा पुरोहित उत्सुकता से उस की स्तुति करता हुआ बोले, ऐ गालियाँ निकालने वालो यहाँ से चले जाओ और प्रत्येक दूसरे स्थान से (जहाँ वह पूजा जाता है)।

२. हे शत्रुओं के नाशक, हमारे शत्रु कहें कि हम समृद्ध हैं। लोग हमें (बधाई दें)। हम सदा उस आनन्द में वास करें जो इन्द्र की (अनुकूलता से मिलता है)।

लैंगलाएस ने अनुवाद किया—........................[2]

स्टीवन्सन ने अनुवाद किया—

१. इन्द्र की स्तुति में सब लोग पुनः सम्मिलित हो जायें। तुम दुष्ट और घृणा करने वाले सब यहाँ से चले जाओ और प्रत्येक दूसरे स्थान से, जब कि हम इन्द्र सम्बन्धी कृत्य को करते हैं।

---

१. ऋग्वेद १।४।५, ६॥

२. लैटिन भाषा में होने के कारण इस का अनुवाद नहीं दिया गया।

२. हे शत्रु-नाशक (तेरी कृपा से) हमारे शत्रु भी हमारे साथ जो हम धनों के स्वामी हैं शान्ति से बोलें। तब क्या आश्चर्य है कि यदि दूसरे आदमी ऐसा करते हैं। हम सदा उस आनन्द को भोगें जो इन्द्र के आशीर्वाद से उपजता है।

प्रोफेसर बैनफी अनुवाद करता है--

१. और घृणा करने वाले कहें, वे हर एक दूसरे से अस्वीकृत किये गये हैं, अतः वे इन्द्र का उत्सव करते हैं।

२. और शत्रु और देश हमें प्रसन्न घोषित करें, हे नाशक यदि हम इन्द्र की रक्षा में हैं।

प्रोफेसर राथ ने 'अन्यतः' का ठीक अर्थ लिया है अर्थात् भिन्न स्थान को। और इस लिये उसने उस वचन का यही अर्थ किया होगा किसी दूसरे स्थान को गति करो अर्थात् उसी अर्थ में, जैसा भाव मैंने लिया है। तथापि कुछ काल पश्चात् S. V. ar उसने अपने आप को ठीक किया, और उन्हीं शब्दों का यह अनुवाद प्रस्तावित किया--"तुम किसी अन्य पदार्थ को भुला दो।"

प्रोफेसर **बोल्लेनसन** (ओरियण्ट एण्ड आक्सिडेण्ट वाल्यूम १, पृ० ४६२) ने किसी सीमा तक प्रोफेसर राथ के दूसरे अनुवाद का अनुसरण किया और प्रोफेसर बैनफी के अनुवाद को ठीक न समझ कर यह दिखाने का यत्न किया कि "वह अन्य पदार्थ जो भुलाया गया है" कुछ अनिश्चित पदार्थ नहीं है, परन्तु इन्द्र के अतिरिक्त दूसरे सारे देवताओं की पूजा है।

यह है वेदार्थ की [योरुप में] अनिश्चित अवस्था जिसने प्रोफेसर मैक्समूलर को ऋग्वेद संहिता के प्राक्कथन में यह लिखने पर विवश किया है कि उसका अनुवाद अनेक स्थानों में शुद्धि योग्य है और शीघ्र या कालान्तर में इस का स्थान एक नए अनुवाद को लेना पड़ेगा।

और कि भारत में वैदिक विद्वत्ता इस से भी अधिक स्वल्प है, यह इसी बात से जाना जा सकता है कि स्वामी दयानन्द के बारंबार के आह्वानों पर भी एक पण्डित भी अभी तक ऐसा प्रकट नहीं हुआ जो वेदों से यह सिद्ध करे कि उन में मूर्ति पूजा पाई जाती है, यद्यपि वे सब इस बात को कह तो देते हैं। ऐसी अवस्था का यही कारण कहा जा सकता है कि इस देश में वेद अपितु उन के थोड़े २ भाग ही अर्थज्ञान के बिना कण्ठस्थमात्र किए जाते हैं। इस के विपरीत स्वामी दयानन्द न केवल अपनी वाग्मिता से, न केवल अपने तर्क के असाधारण बल से अपने श्रोता गणों के मनों में विश्वास उत्पन्न करा देता है, प्रत्युत अपने वेदभाष्य में शब्दों के इतिहास को खोलता हैं, प्रत्येक बात की व्याख्या करता है कि जिस से वह अपने अर्थ पर पहुँचा है और शब्दों के जो अर्थ करता है उनकी पुष्टि में वेदों, ब्राह्मणों, निघण्टु और पाणिनि के व्याकरण से प्रमाण देता है। संक्षेप में कह सकते हैं कि अपनी महती विद्वत्ता की योग्यता से, अपनी धैर्य युक्त गवेषणा से, अपने काम के लिए असीम प्रेम के द्वारा वह मानव-पुस्तकालय के इस सब से पुराने ग्रन्थ में जीवन-प्राण का संचार कर रहा है। वह उन कठिनाइयों को प्रकट करता है, जिन्होंने अब तक उस [वेद] की स्वतन्त्र उन्नति को रोक रखा है। वह भाषा विज्ञान की सामान्य रूप से और भारतीय भाषा-विज्ञान की विशेष रूप से अचिन्त्य सेवा कर रहा है। उस के वेदभाष्य के एक हजार से ऊपर ग्राहक अब तक बन गए हैं। और ग्राहकों की संख्या प्रति दिन उन्नति पर है। इन बातों का विचार करके और इस बात को जान कर, जैसा कि पंजाब सरकार और भारत में दूसरी प्रान्तीय सरकारें जानती हैं कि वेदों ने भारतीय इतिहास

के सब उत्तरवर्ती युगों पर कैसा प्रबल प्रभाव डाला है, और उन का भारतीय वाङ्मय की प्रत्येक शाखा के साथ कैसा घनिष्ठ सम्बन्ध है, और उन के धार्मिक और सदाचार के विचारों ने भारतीय जाति के हृदयों में कितनी गहरी जड़ पकड़ी है, तथा उन के सनातन प्रमाणों से भारतीय जीवन के जनता सम्बन्धी और व्यक्तिगत सब काम नियमित किए जाते हैं, यह सब जान कर समाज विश्वास रखता है कि सरकार ऐसे महाशयों की दी हुई सम्मतियों के अनुकूल नहीं चलेगी कि जो अन्य गुणों के रखते हुए भी, समाज की नम्र दृष्टि में, वैदिक विद्वान् होने की प्रतिष्ठा नहीं रखते।

अन्ततः समाज आज्ञा चाहता है कि उन मुख्य कारणों को संक्षेप से दोहराए कि जिन के आधार पर वह स्वामी दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य की पंजाब सरकार द्वारा संरक्षकता चाहता है, और आशा प्रकट करता है कि सरकार देश की दूसरी सब प्रान्तीय सरकारों को प्रेरित करे कि वे भी एक महान् सुधारक और विद्वान के इस पुण्य और परोपकारयुक्त उद्देश्य के प्रोत्साहन में इस के साथ सम्मिलित हों।

(१) कि भारतीय भाषा-विज्ञान यदि यह स्वाभाविक गति पर चले, तो अवश्य ही वेदों के स्वाध्याय से प्रारम्भ होगा। अतः उन के ज्ञान का प्रचार अत्यधिक अभीष्ट है।

(२) कि इस वेदभाष्य के प्रकाश ने गवेषणा का भाव उत्पन्न कर दिया है। इस को प्रोत्साहन देना श्रेष्ठ है।

(३) कि आशा की जाती है कि वेदों के सच्चे ज्ञान के प्रचार द्वारा हिन्दू मन मिथ्या विश्वास और गहरे गड़े हुए पक्षपात से मुक्त होगा।

(४) कि स्वामी दयानन्द का भाष्य उन सब से अधिक विश्वसनीय प्रमाणों पर समाधारित है कि जिन को योरोपीय विद्वान् भी प्रामाणिक स्वीकार करते हैं, परन्तु जिन्हें वे अभी तक पूर्णतया प्रयोग में नहीं लाए।

(५) कि वर्तमान परिस्थितियों में स्वार्थी ब्राह्मणों अथवा भ्रान्त समझने वाले योरोपियनों से निष्पक्ष सम्मतियों की आशा नहीं हो सकती।

अतः पूरा अवसर मिलना चाहिए।

मैं हूँ.......................

लाहौर
२५ अगस्त १८७७

जीवनदास[1]
मन्त्री आर्यसमाज

———

१. पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ८०५ पर इस के स्थान में यह लिखा है—
हम हैं.............................
जीवन दास वा सारदा प्रसाद भट्टाचार्य इत्यादि।

[१] पत्र (२७)[1] [४१]

मुझे वकील हिन्द और यूनीवर्स्टी कालिज पंजाब के [प्रकाशित][2] पत्रों से ज्ञात हुआ कि कई एक साहबों ने मद्रचित वेद भाष्य पर प्रतिकूल अनुमति दी है। इसलिए मैं उनकी शंकाओं का उत्तर क्रम से निवेदन करता हूं।

प्रथम उन शंकाओं का उत्तर है जो मिस्टर आर ग्रिफ़िथ एम. ए. प्रिंसिपल बनारस कालिज ने की हैं। पांच हज़ार वर्ष के लगभग से वेद विद्या जाती रही। महाभारत से पहले इस देश में सब विद्या ठीक २ प्रचरित थीं। परन्तु पीछे से पढ़ने पढ़ाने के ग्रन्थ और रीति बिल्कुल बदल गई। तब से अब तक वही अशुद्ध प्रणाली प्रचरित है। यद्यपि कहीं २ के लोग वेदादिक सत्य ग्रन्थों को कंठ कर लेते हैं परन्तु उसके शब्दार्थ को कोई भी नहीं जानता। न ऐसे कोई व्याकरणादिक ग्रन्थ अर्थ सहित पढ़ाये जाते है जिन से वेदों का अर्थ हो सके। आधुनिक जो महीधर आदि के बनाए हुए वेद भाष्य देखने में आते है वे महाभ्रष्ट और अन्धकार के बढ़ाने वाले हैं। उनके देखने वालों को मद्रचित भाष्य ठीक समझ में नहीं आता। मेरा भाष्य शुद्ध वेदार्थ बोधक और प्राचीन भाष्यों के ठीक अनुकूल है। वह तभी समझ में आवेगा जब लोग प्राचीन भाष्यादिक ग्रन्थों की सहायता स्वीकार करेंगे। मैंने प्रत्येक मन्त्र का अर्थ सत्य प्रतीत होने के अर्थ बहु प्राचीन आप्त व्याख्यानकारों का प्रमाण बहुत स्पष्ट पतेवार लिख दिया है। यदि ग्रिफ़िथ साहब ने प्राचीन भाष्य वा मेरे लिखे प्रमाणों और उदाहरणों को पढ़ा होता तो कभी उन की ऐसी विरुद्ध सम्मति न होती जैसी कि उन्हों ने हाल में दी है। उवट सायण महीधर रावण आदि के रचे हुए भाष्य प्राचीन भाष्यों से सर्वथा विपरीत हैं। केवल इन्हीं भाष्यों का उलथा अंगरेज़ी में विलसन और माक्समूलर आदि प्रोफेसरों ने किया है। इसलिए मैं इन के भाष्यों को भी शुद्ध और न्यायकारी नहीं कह सकता। इन्हीं ग्रन्थों के कारण ग्रिफ़िथ साहब आदि लोग भी सन्देह मार्ग में पड़े हैं और मुझ को यह कह कर दूषित करते हैं कि स्वामी जी ने अर्थ पलट कर अपने प्रयोजन के सिद्धार्थ दूसरे ही अर्थ नियत किये हैं। परन्तु उन का यह तर्क सर्वथा निर्मूल है। मैंने सर्वत्र ऐतरेय और शतपथ नामक ब्राह्मण ग्रन्थ और निरुक्त तथा पाणिनीय व्याकरणादिक सत्य ग्रन्थों का प्रमाण देकर प्रत्येक मन्त्र का सत्य २ अर्थ लिखा है। यदि ग्रिफ़िथ साहिब उस को देखते तो कभी ऐसा न लिखते। विचार करता हूँ कि उनने मेरा भाष्य बिना ही देखे भाले अपनी मनमानी अनुमति प्रकाशित कर दी है।

मैं नहीं समझ सकता हूँ कि ग्रिफ़िथ साहब मेरा श्रम वृथा क्यों समझते हैं, जब कि मेरे भाष्य के लेने वाले हजार से अधिक बड़े २ सत्पुरुष हैं और प्रत्यह नवीन जनों के निवेदन पत्र मेरी पुस्तक लेने के विषय में बराबर चले आते हैं। मेरे ग्राहकों में से बहुत से अच्छे २ संस्कृतज्ञ और बहुतेरे अंगरेज़ी और संस्कृत में पूरे २ विद्वान् हैं। ग्रिफ़िथ साहब का यह अंतिम लेख कि वेदों की ऋचाओं से

१. हमने यह पत्र दयानन्द दिग्विजयार्क, द्वितीयाङ्क पृ० ८२—८८ से लिया है। प्रतीत होता है दिग्विजयार्क के रचयिता पं० गोपाल शास्त्री ने इसका अंग्रेजी से ही भाषा में उलथा किया था। हम ने इस की अंग्रेजी अनुवाद से कुछ तुलना कर ली है। कहीं २ हमने अनुवाद में शोधन भी किया है। शोक है कि श्री स्वामी जी का मूल पत्र लाहौर आर्यसमाज की असावधानी के कारण नष्ट हो गया।

२. कोष्ठगत पाठ अंग्रेजी अनुवाद से लिया गया है।

बहुत से देवताओं के नाम प्रकाशित होते हैं सो उन की यह बात मुझ को तब प्यारी लगे और विद्वानों के समीप प्रामाणिक ठहरे जब वे उस मतलब की कोई ऋचा मुझ को लिख भेजें—

पूर्वलिखित की पुष्टि में निम्नलिखित उद्धरण दिये जाते हैं--

(a) ऐच. टी. कोलब्रुक रचित 'दी वेदाज़' से[१]

(b) चार्ल्स कोलमैन रचित "माईथालोजी आफ दी हिन्दूज़" से[२]

(c) पादरी गैरट के अनूदित "भगवद्गीता" के परिशिष्ट से[३]

(d) मैक्समूलर रचित "हिस्टरी आफ ऐन्शएट संस्कृत लिटरेचर" पृ० ५६७ से[४]

ऋग्वेद में जो प्रथम मंत्र है उसमें अग्नि शब्द आया है। उसका उल्था सी. एच. टानी साहब एम. ए. प्रिन्सिपल प्रेसीडेन्सी कालिज कलकत्ता ने आग के अर्थ में अपने उस प्रथमोक्त ध्यान

---

१. यद्यपि वेदों को शीघ्र दृष्टि से देखने से देवताओं के नाम उतने दीख पड़ते हैं जितने कि स्तुति करने वालों के हैं, परन्तु पुराने व्याख्यान ग्रन्थों के अनुसार कि जो ठीक आर्य धर्म के विषयक हैं वे अनेक नाम देवता वा मनुष्यों और वस्तुओं के नहीं ठहर सकते अर्थात् वे सब तीन देवताओं ही के नाम से सम्बन्ध रखते हैं और फिर वे तीनों नामों की देवता भी पृथक् २ नहीं है अर्थात् वे तीनों नाम एक ही परमेश्वर के हैं। निघण्टु अर्थात् वेदों के शब्दकोष के अन्त में तीन नामावली देवताओं की है। उनमें से पहिली में अग्नि के, दूसरी में वायु के, तीसरी में सूर्य के पर्याय वाची नाम हैं।

निरुक्त के अन्त भाग में जिस में केवल देवताओं का वृत्तान्त है, यह दो बार कथन किया गया है कि देवता केवल तीन हैं (तिस्र एव देवताः) इन से अधिकतर अनुमान सिद्धान्त यह निकलता है कि केवल एक ही देवता है। यह बात वेद के अनेक वाक्यों से भी सिद्ध होती है और यही आशय निरुक्त और वेद के प्रमाण के अनुसार अति सुगम और संक्षेप रीति से ऋग्वेद के सूची पत्र में वर्णन किया है। इस से यह निर्णय होता है कि आर्यों के पुराने धर्म मार्ग की पुस्तकें केवल एक ही ब्रह्म को गाती हैं और सूत्रों से भी ऐसा ही सिद्ध होता है।

२. वेदों से ज्ञात होता है कि आर्य ऋषियों का धर्म मार्ग केवल एक बड़े ब्रह्म के पूजन और श्रद्धा वा भक्ति में था जिस को वे सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञ और सर्वव्यापक जानते थे और जिसके सम्बन्धी गुणों को वे अत्यन्त पूजनीय वाक्यों में प्रगट करते थे और वे सम्बन्धित गुण उस की तीन प्रकार की शक्तियां हैं। उनमें से प्रथम उत्पादक, दूसरी पालक, तीसरी संहारक नाम से वर्णन की जाती हैं।

३. इन अति सत्य ध्यानों से हमें पूर्ण विश्वास होता है कि चारों वेद एक ब्रह्म को गाते हैं जो सर्वशक्तिमान् अनन्त चिर स्थायी स्वयंभू संसार का द्योतक और पालक है। मैं इसके संग एक और ऋचा लिखता हूँ जिससे एक ही ब्रह्म निश्चित होता है। इस से हम आपकी शंका निवृत्ति करते हैं जानिये कि आर्य लोग स्वाभाविक बुद्धि से सदैव अद्वैत सेवी अर्थात् केवल एक ईश्वर को ही मानते थे।

४. उसी उक्त ऋचा का एक चरण यह है जिससे निस्सन्देह केवल एक ही ब्रह्म का निरूपण होता है— यद्यपि हम उस को अनेक नाम से आवाहन करते हैं। ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त १६४ की ४६वीं ऋचा को देखो स्पष्ट लिखा है कि उसी एक परब्रह्म को ज्ञानवान् इन्द्र मित्र वरुण और अग्नि के नाम से पुकारते हैं। कोई कहते हैं कि वह आकाश में सपक्ष गरुत्मान् है और कोई २ बुद्धिमान् उसी के अग्नि यम मातरिश्वा आदि अनेक नाम मानते हैं॥

से किया है कि अग्नि भी एक पदार्थ प्रतिष्ठा का वेद में है, परन्तु अग्नि को तत्त्व मान कर किसी प्राचीन ऋषि मुनि ने पूजन वा आवाहन नहीं किया और अग्नि शब्द का जो स्वाभाविक अर्थ आग का है वह केवल उन वाक्यों में लिया जाता है जिन में लौकिक सम्बन्धी बातें हैं परन्तु ऐसे वाक्यों में जहाँ ईश्वर की स्तुति प्रार्थना निवेदन आदि का प्रसंग होता है वहां अग्नि शब्द का अर्थ परमेश्वर का घटित किया जाता है यह अर्थ कुछ मैंने मिथ्या कल्पित नहीं किया। इस प्रकार के युक्तार्थ ब्राह्मण और निरुक्त नामी ग्रन्थों में बराबर वर्णन हो आए हैं।

अन्त पर टानी साहब की जो यह सम्मति है कि मैंने जो भाष्य बनाया है वह इस कारण से रचा है कि सायण और अंगरेज़ी उल्थाकारों के भाष्य कट जावें अर्थात् अशुद्ध ठहरें, सो इस विषय में मैं कभी दूषित नहीं हो सकता हूँ। यदि सायण ने भूल की है और अंगरेज़ों ने उसको अपना मार्ग प्रदर्शक जान कर अंगीकार कर लिया तो भले ही करें, परन्तु मैं जान बूझ कर कभी भूल का काम नहीं कर सकता। परन्तु मिथ्या मत बहुत काल तक नहीं ठहर सकता, केवल सत्य ही ठहरता है और असत्य सत्यता के सन्मुख शीघ्र धुमैला हो जाता है। पण्डित गुरुप्रसाद हेड पण्डित ओरियंटल कालिज लाहौर ने यह बात कह कर कि स्वामी जी के भाष्य में कोई अशुद्धि छापे की कहे सो नहीं है, मेरे प्रत्येक आशय को दूषित ठहराया है। तथापि मैं उन को धन्यवाद देता हूँ। उनने मेरे भाष्य के छापने वाले का विश्वास माना, यह क्या थोड़ी बात है। परन्तु मैं कहता हूँ कि उसका भी दोष वे मेरा ही जानें, परन्तु थोड़ा मुंह खोल कर कहें तो कैफ़ियत् खुले नहीं तो क्या जान पड़े। और जो वे मुझे दूसरे स्थल पर यह दोष लगाते हैं कि अपने ही पंथ का प्रचार किया चाहता है सो मैं ऐसी बातों को सुन अति पश्चात्ताप से कहता और समझता हूं कि वे वेद विद्या से नितान्त अजान हैं। यदि उन्होंने प्राचीन भाष्यों का अवलोकन किया होता तो कभी ऐसा न कहते।

और तीसरा कलंक जो वे मुझे यह लगाते हैं कि इन्द्र मित्र और त्वष्टा आदि शब्दों के अर्थ स्वामी जी ने अपनी ओर से गढ़े हैं सो उनकी इस शंका के उत्तर में मैं उनको वेदभाष्य के विज्ञापन[1] का प्रमाण देता हूँ और एक प्रति साथ ही इस उत्तर के ऐसी लगाये देता हूं कि जिस में उन शब्दों का यथावत् वर्णन है। फिर भी इन सब बातों के परिणाम में मुझे निस्सन्देह हो यही कहना पड़ता है कि उन में पुरातन संस्कृत विद्या अत्यन्त ही कम है।

चौथा दोष जो वे मेरे व्याकरण में यह आरोपण करते हैं कि परस्मैपद के स्थान में आत्मनेपद लिखा है सो अब मैं इस बात का निश्चय कराने को कि स्वयं पण्डितजी व्याकरण का ज्ञान नहीं रखते कैयट [के भाष्य प्रदीप] और नागेश, रामाश्रम आचार्य, अनुभूतिसरूप आचार्य आदि के ग्रन्थों के कई एक प्रामाणिक उदाहरण पृथक् लिखता हूं।[2] वे मेरे विदधीमहि[3] के प्रयोग को सर्वथा युक्त समझते हैं। वदामहे[4] के शुद्ध प्रयोग के लिये मैंने पाणिनीय व्याकरण के प्रथमाध्याय के

---

१. यह विज्ञापन इसी ग्रन्थ में पूर्णाङ्क २४ पर छपा है। यु० मी०।

२. इससे आगे का कुछ पाठ दयानन्द दिग्विजयार्क में छूट गया है।

३. वेदानां यथार्थं भाष्यं वयं विदधीमहि—ऋग्वेदा० भा० भूमिका ईश्वरप्रार्थनाविषय।

४. एवं प्राप्ते वदामहे—ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका वेदोत्पत्तिविषय।

तीसरे पाद के ४७ वें सूत्र का प्रमाण दिया है। और उन स्थलों की नकल भी हूबहू उन को भेज सकता हूँ जिस से मेरा किया प्रयोग कैसा शुद्ध है यह प्रतीति यथेच्छ हो जावेगी। परन्तु विना व्याकरण बोध क्योंकर उनके समझ में आवे।

[सब प्रमाण मूल भाषा लेख के साथ नष्ट हो गए।]

पाँचवीं शंका उनको मेरे एक छन्द के प्रयोग पर उपस्थित हुई है। वह अत्यन्त हास्यजनक है। जो मैं उसका इस संक्षिप्त उत्तर में कुछ वर्णन करूं तो असार विस्तार होगा। रहा उनका समाधान सो उसके लिये पैङ्गल सूत्र और उसके भाष्यकार हलायुधभट्ट का एक स्पष्ट प्रमाण पृथक् लिखता हूँ ! देख शान्त होवें।

[वह प्रमाण मूल भाषा लेख के साथ ही नष्ट हो गया।]

ज्ञात होता है कि पण्डित हृषीकेश भट्टाचार्य द्वितीय पण्डित ओरियंटल कालिज लाहौर सर्वत्र पण्डित गुरुप्रसाद जी के ही अनुगामी हुए हैं। इससे उन की शंकाओं का उत्तर वही समझना चाहिए जो पीछे लिख आए हैं। (उपचक्रे[1]) शब्द में उनकी शंका एक पृथक् है। सो उन्हें यह बात सुझाने को कि मेरा अर्थ बहुत ही निर्मल है मैं उन्हें केवल पाणिनीय व्याकरण के प्रथमाध्याय के तीसरे पाद के ३० वें सूत्र का प्रमाण देता हूँ। उसको देख तुष्ट होवें।

अब रहे पण्डित भगवान दास असिस्टेण्ट प्रोफेसर संस्कृत गवर्नमेण्ट कालिज लाहौर। सो उनकी कोई नवीन शंका नहीं है। इसलिए जो मैंने ऊपर कहा वही बहुत है। वे भी तुष्ट होवें इति।

अन्त[2] में मुझे प्रतीत होता है कि इन विरुद्ध लेखों का सारा बल देश के विद्यालयों में मेरे वेदभाष्य के लगाए जाने के विपरीत है। परन्तु मेरे आलोचक भारी भूल कर रहे हैं। मेरा वेदभाष्य महाभारत के पूर्व के भाष्यों के प्रमाणों को देने के कारण और योरोपीय विद्वानों के विचारों के विरुद्ध होने के कारण गवेषणा का एक ऐसा भाव उत्पन्न कर देगा कि जिससे सत्य प्रकट हो जायगा और हमारे विद्यालयों में सदाचार के भाव को उन्नत करेगा। और इसी कारण सरकार की संरक्षता का अधिकारी है।

———

[४,५] निवास-सूचना-विज्ञापन [४२]

विदित हो कि सं० १९३४ आधे आषाढ़ से श्रावण मास के अन्त पर्यन्त पञ्जाब देश के अमृतसर नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[3]

१. यथा पिता स्वसन्तति·················सर्वमनुष्यार्थं वेदोपदेशमुपचक्रे ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका वेदोत्पत्तिविषय।

२. यहां से अन्त तक का पाठ दिग्विजयार्क में नहीं है। हमने इस का अंग्रेजी से अनुवाद किया है।

३. ऋ० भाष्यभूमिका, अङ्क (४, ५) संवत् १९३४।

(१) पत्र (२८) (४३)

आर्य्यसमाज[१] के सब सभासदों को स्वामी जी का आशीर्वाद पहुँचे। आगे सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की कृपा से प्रतिदिन अमृतसर आर्य्यसमाज का उत्साह वृद्धि को प्राप्त होता जाता है। १०० नियम का पुस्तक, (आर्य्योद्देश्यरत्नमाला) भी आज कल छप के जिल्द बन्ध के तैयार हो जावेगा। पांच सौ पुस्तक लाहौर और पचास पुस्तक गुरुदासपुर को भेजे जावेंगे। और सम्वत् १९३४ भाद्र सुदी ६, गुरुवार ता० १३ सितम्बर सन् १८७७ प्रातःकाल ९½ की रेल में जालन्धर को जाना होगा, सो जानना। जो वेदभाष्य पर विरुद्ध सम्मति के उत्तर के पत्र[२] छपवा कर मुम्बई आदि में भेज दिये जावेंगे, तथा समाचार पत्रों में छपवा दिए जांए, तो बहुत अच्छी बात होगी। आगे आप लोगों की जैसी इच्छा हो वैसा कीजियेगा। सं० १९३४, मिति भाद्रपद सुदी ३, सोमवार, ता० १० सितम्बर सन् १८७७।[३]

दयानन्द सरस्वती

---

[६] निवास-सूचना-विज्ञापन [४४]

विदित हो कि सं०१९३४ भाद्र मास के अन्त पर्यन्त पञ्जाब देश के जलंधर नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[४]

---

[७] निवास-सूचना-विज्ञापन [४५]

विदित हो कि सं० १९३४ आश्विन मास के अन्त पर्यन्त पंजाब देश के लाहौर वा रावलपिंडी नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[५]

---

(२) पत्र (२९) [४६]

आर्य्यसमाज लाहौर के सब सभासदों को नमस्ते विदित हो।[६] आगे अमृतसर से जाकर

---

१. आर्य्यसमाज लाहौर।

२. इस का अंग्रेजी से भाषा में किया, हमारा अनुवाद पूर्ण सं० ४०, ४१ पर छपा है।

३. पं० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३२६ पर उद्धृत। मूलपत्र लुप्त हो चुका है। [यह पत्र अमृतसर से लिखा गया था।]

४. ऋ० भाष्यभूमिका, अङ्क (६) संवत् १९३४।

५. ऋ० भाष्यभूमिका, अङ्क (७) संवत् १९३४।

६. पं० लेखराम कृत जीवनचरित्र पृ० ३४१ पर उद्धृत। मूल पत्र अब लुप्त हो चुका है।

जालन्धर में पहुंचे गये। सरदार सुचेतसिंह जी[1] के बाग में ठहरा हूं। आगे जो जो विशेष व्यवहार होगा सो लिखा जायगा। आगे सरदार विक्रमांसिंह[1] जी बहुत अच्छे पुरुष हैं। वेदभाष्य का छठा अंक आ गया वा नहीं। मोहर लगाकर मोहर को अमृतसर भेज देना। सम्वत १९३४ मिति भाद्र सुदी[2] शनिवार, ता० १५ सितम्बर सन् १८७७।

जालन्धर — दयानन्द सरस्वती

---

[८] पत्र (३०) [४७]

Jullundher
2nd October 1877[3]

My dear Pandit

I believe you might have received one hundred copies of Aryodesh Ratun Malla from Umrit-Sar which according to my permission had been sent to your address by Munsookh Rai of Arya Samaj.

Please acknowledge them, if received duly and inform me of your sound health.

Daily lectures are given here and hope they will end with fair result. I will stop here about 9 or 10 days more and then visit next place or perhaps Lahore once more.

---

१. इनका वंश-वृक्ष निम्नलिखित है।

महाराज निहालसिंह (कपूरथला रियासत के राजा

एक माता — दूसरी माता

राजा रणधीरसिंह — स० सुचेतसिंह (दोनों भाई) स० विक्रमांसिंह

राजा खड़कसिंह — टिक्का प्रतापसिंह

राजा जगजीतसिंह — टिक्का जगजीतसिंह

कंवर मनजीतसिंह

कपूरथला की राजगद्दी राजा रणधीरसिंह के कुल में रही। स० सुचेतसिंह और स० विक्रमांसिंह दोनों भाई दूसरी माता के पुत्र थे। वे भी पीछे राजा की उपाधि से युक्त हुए। श्री स्वामी जी उन्हीं के पास जालन्धर में ठहरे थे।

२. सुदी ८ चाहिए। पं० लेखरामकृत जीवन चरित में सुदी नहीं है।

३. [आश्विन कृष्ण १०, मङ्गल, सं० १९३४।] मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ में सुरक्षित है।

You can address me Jullundher city to the care of Sirdar Bikraman Singh of Kapoorthala wala. Please accept my *Asheerbad*. The said copies are to be sold at one and half annas each.

Yours well wisher
Pandit Swami Dayanand Sarusswatti
Sd. दयानन्द सरस्वती

Vedas Bhomika has now come to its end nearly and the text is to be commenced soon.

[भाषानुवाद]

जालन्धर
२ अक्तूबर १८७७[1]

मेरे प्रिय पण्डित !

मैं विश्वास करता हूं कि अमृतसर से आर्य्योद्देश्यरत्नमाला की एक सौ प्रतियां आप ने प्राप्त की होंगी, जो कि मेरी आज्ञानुसार आर्य्य समाज के मनसुखराय ने आप के पते पर भेजी हैं।

कृपया उन्हें स्वीकार करें, यदि वे समय पर मिलें और अपने अच्छे स्वास्थ्य से मुझे सूचित करें।

यहां व्याख्यान प्रतिदिन होते हैं और आशा है कि अच्छे परिणाम के साथ समाप्त होंगे मैं यहां ९ या १० दिन तक और ठहरूंगा और पुनः अगला स्थान देखूंगा या कदाचित् फिर लाहौर जाऊं।

आप मुझे कपूरथला के सरदार विक्रमासिंह द्वारा जालन्धर नगर के पते से लिख सकते हैं। कृपया मेरा आशीर्वाद स्वीकार करें। पूर्वोक्त प्रतियां प्रति पुस्तक डेढ़ आना के दर से बेचनी हैं।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

वेदभाष्यभूमिका अब लगभग समाप्ति को आ रही है और वेद शीघ्र ही आरम्भ किया जायगा।

———

१. आश्विन कृष्ण १०, मंगल, सं० १९३४।

(१) [४८]

पत्रसारांश (३१)

[विनय माधव जी आनन्द रहो]

१२ सितम्बर से यहां हैं[1] ....

५. अक्तूबर १८७७ जालन्धर[2]

---

[१] [४९]

पत्र (३२)

[उर्दू पत्र][3]

लाला मनसुख र[ाय जी आनन्दित रहो]
बाद आशीर्वाद के वाजे हो[कि यहां खैरीयत है]
हाल यह है कि अब हम तार[के द्वारा सूचना नहीं देंगे]
पीर[4] को प्रातः काल यानी सुबह को [$7\frac{1}{2}$ चलकर $10\frac{1}{2}$ बजे]
अमृतसर के स्टेशन पर पहुँ[चेंगे। और अगले]
रोज़ यानी तारीख़ १६ माह हाल [को......... की तरफ]
रवाना हो जावेंगे। अगर मौक[ा मिला तो एक]
व्याख्यान भी देंगे। व[... ...]
जो कुछ हाल किताबों की निसबत को [... ...]
ज़ुबानी कह दिया जावेगा। अ[ौर ... ...]
से ग़लती से बावानारायणसिंह जी [... ...]
में[5] भूल हुई है और नारा[यण सिंह जी]के नाम
का[... ...] आ गया हो तो ...हज़ा के साथ
असौल होता है। मकान का बन्दोबस्त वासते एक
शब और निस्फ रोज़ अव्वल के कर लेना
[चा] हिए। एक रोज़ से ज़्या[दा] ... ...
... ...
[... ...][6] वग़ैरा की गुफ़तगू ज़ुबानी होगी। सब
[सभासदों से आशी]र्वाद कह देना। बाक़ी खैरीयत है। ज़्यादा
आशीर्वाद।

---

१. पं० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३४१ पर यही अभिप्राय लिखा है। महाशय विनयमाधव कौन थे, इस का हमें ज्ञान नहीं हो सका। [पूर्ण संख्या ४३ के पत्र में १३ सितम्बर को जालन्धर जाने का उल्लेख है। जीवनचरित्रों में भी १३ सितम्बर को जालन्धर पहुँचना लिखा है। अतः सम्भव है यहां १३ के स्थान में भूल से १२ लिखा गया होगा। यु. मी.।] २. आश्विन कृष्ण १४, शुक्रवार, सं० १९३४।

३. अमृतसर निवासी पं० रुद्रदत्त जी ने यह पत्र अक्तूबर १९२६ में हमें दिया था। इस का आधा भाग लुप्त हो चुका था। शेष भी बहुत जीर्णावस्था में है। हम ने इस के जीर्णभाग जोड़ दिये हैं। इस के एक ओर उर्दू और दूसरी ओर उर्दू और अगरेज़ी दोनों हैं। उर्दू भाग हाशियों पर भी लिखा हुआ है। लुप्त अंश की पूर्ति कहीं २ कोष्ठों में की गई है। ४. सोमवार।

५. यहां से पृष्ठ की दूसरी ओर का लेख आरम्भ होता है। इस पंक्ति का पूर्वार्ध पत्र फट जाने से लुप्त हो चुका है। यह पत्र **जालन्धर** से अमृतसर को लिखा गया है।

६. यहां से आगे का लेख हाशिये पर है।

११ अक्तूबर १८७७ सन ईस्वी[1]

राकम

[स्वामी]जी महाराज

[अंग्रेजी भाग]

I will start for Umr[itsar ... ... on]
the 15th inst. by m[orning train]
at 7–30 A, M. and [will reach there]
at about 10–30 [A. M. ... ...]
Please keep a h[ouse there for]
my short stay of [a night and half day]
[sure]ly, for the occ[assion ... Accept]
my best ashee[rbad. ... ...]

Sd. दयानन्द स[रस्वती][2]

---

[८] निवास-सूचना-विज्ञापन [५०]

विदित हो कि सं० १९३४ आश्विन मास के अन्त पर्य्यन्त पञ्जाब देश के लाहौर वा रावलपिण्डी नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[3]

---

[७] विज्ञापन[4] [५१]

सबको विदित हो कि प्रथम वर्ष पूरा होने पर आ गया, और चारों वेद की भूमिका भी पूरी हो गई केवल थोड़ी सी छपने को बाकी है। अगले वर्ष से मंत्रभाष्य ही छपा करेगा इस विषय में विशेष प्रकाश करना यह है जितने २ पृष्ठों के मासिक पुस्तक अब निकलते हैं उतने २ ही ऋग् और

---

१. आश्विन शुक्ल ५, बृहस्पतिवार सं० १९३४॥१६ अक्तूबर आश्विन शुक्ल ९ सोमवार को अमृतसर पहुंचे। पं० लेखराम जी ने विजयादशमी से अगले दिन अर्थात् १७ अक्तूबर १८७७ को लाहौर पहुंचना लिखा है (पृ० ३१७)। पं० घासीराम जी ने एक अशुद्धि अधिक की है। वे लिखते हैं—"जालन्धर से १७ अक्टूबर सन् १८७७ ई० को महाराज लाहौर पधारे।" इस पत्र से और जीवनचरितों के लेख से निश्चित होता है कि १५ का आधा दिन १६ और १७ की प्रातः तक श्री स्वामी जी अमृतसर रहे।

२. जीर्ण आधा मूलपत्र अब हमारे संग्रह में संख्या ५ पर सुरक्षित है।

३. ऋ० भाष्य भूमिका, अंक (८) संवत् १९३४।

४. यह विज्ञापन श्री स्वामी जी महाराज का लिखाया हुआ प्रतीत होता है। यह ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के ९ वे अंक के आदि में एक स्लिप पर छपा है। इस विज्ञापन का उल्लेख मार्गशीर्ष कृष्ण ८ बुधवार १९३४ पूर्ण संख्या ५१ [पृष्ठ ७१, ७२] में है। अतः यह विज्ञापन कार्तिक १९३४ के अन्त में लिखा गया होगा। यु०मी०।

यजुः इन दोनों वेदों के मंत्रभाष्य प्रतिमास दो अंक छपवाने का विचार है इसलिए ये भाष्यकार उक्त विषय में सब गाहकों की सम्मति जानना चाहता है कि कौन २ गाहक लोग दो २ और कौन २ एक २ अंक लेंगे और जिस २ गाहक ने अब तक चन्दा नहीं भेजा है उन सभों को उचित है कि अब रुपये भेजने में क्षणमात्र विलम्ब न करें, किन्तु दिसम्बर पूर्व २ जरूर २ भेज देवें और आगे के वर्ष में मासिक दो अंकों का जो कुछ नियत होगा उस का विज्ञापन पौष वा माघ मास में दिया जावेगा, परन्तु आगे सब गाहकों को वार्षिक चन्दा माघ वा फालगुन में जमा करना होगा और अब वेदभाष्य बनाने का क्रम ऐसा रक्खा गया है कि सब अभिप्राय सब को सुगमता से खुल जावेगा। सो क्रम यह है कि एक मूलमंत्र की भूमिका, दूसरा मंत्र, तीसरा पदपाठ, चौथा पदार्थ और प्रमाण,पांचवा अन्वय और छठा भावार्थ ये क्रम से पृथक् २ लिखे जायंगे जिसमें सब को निर्भ्रमता से उक्त विषय विदित होते जायंगे। यह विज्ञापन इसलिये है कि इस को देख के अपनी २ प्रसन्नता से स्वामी जी वा लाजरस कम्पनी बनारस के पास पत्र भेज के अपना २ अभिप्राय विदित करें।

———

[९] निवास-सूचना-विज्ञापन [५२]

विदित हो कि सं० १९३४ कार्तिक मास के अन्त पर्यन्त पञ्जाब देश के लाहौर वा रावलपिंडी नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।*

———

[१] (विपक्षी-पत्र अशुद्धि-संशोधन) [५३]

ओम्†

ओं श्री गणेशाय नमः। अथाज्ञमतभञ्जनं[1] ‡ प्रारभ्यते।

रावलपिण्ड्यधिवासी[2] लक्ष्मीरामाभिधो[3] द्विजः कश्चित्। द्विजो विद्वान्।

नत्वा गणपत्यादीनज्ञमतस्य खण्डनं[4] कुरुते ॥१॥

तावन्मध्यस्थस्वामिसंपद्गिरिसंमत्या[5] सम्मुखमस्मद्विवादो भवतानंगीकृतोतः पत्रोल्लेखने वयं प्रवृत्ताः स्म। हे विद्वन यत्त्वयोक्तं[6] शतपथब्राह्मणादिभागः पुराणमुच्यतेतो अष्टादशपुराणानि[न]पुराण-शब्दाभिधेयानि इति। तदसत्। प्रमाणाभावात्। यतः पूर्वमीमाँसायामुक्तं–"वेदेषु ब्राह्मणं विध्यर्थवाद-

---

* ऋ० भाष्य भूमिका, अंक (६) संवत् १९३४।

† **संवत् १९३४ के मध्य** में स्वामी दयानन्द सरस्वती रावलपिण्डी में थे। वहां एक पण्डित लखिराम रहता था। उस ने स्वामी जी को नीले रंग के फुलसकेप के पूरे ६ पृष्ठों पर एक पत्र शास्त्रार्थ के लिए लिखा। श्री स्वामी जी ने उसी पत्र पर स्वलेखनी से उस की अशुद्धियां आदि निकालीं। कहीं २ उत्तर के लिए उपयोगी टिप्पणी भी लिख दी। वह संशोधित मूल पत्र **भक्त ईश्वरदास जी एम० ए० ने मुझे दिया था।** मैंने उसी मूल पत्र का कुछ भाग ऊपर छाप कर नीचे श्री स्वामी जी का संशोधन छापा है। तुलना करो पं० लेखराम कृत जीवन चरित्र पृ० ३४६, ३४७। इस का मूल अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

‡ यहां जिन पर संख्या दी गई है, उनका क्रमशः संशोधन आगे दर्शाया गया है। यु० मी०।

भूतं, मन्त्रस्तु कर्माङ्गभूतद्रव्यदेवतास्मारकः इत्यत्र ब्राह्मणस्य वेदत्व[८]मवसीयते । अत एव शतपथादीनां बहुषु वाक्येषु "अनुस्वारस्य ँ छन्द[९]सीति, सूत्रेण ँकारादेशो दृश्यते। तथा च छन्दःशब्देन[१०] वेद एवोच्यते तत्रैव तद्दर्शनात् नान्यत्र[११]। वेदे तु छन्दो लक्षणाभावेनापि छन्दः शब्दप्रयोगात्। तथा च पूर्वमीमाँसासूत्रम् "[१२]स्यादाम्नायधर्मित्वाच्छन्दसि नियमः, इति । [१२]छन्दोवत् सूत्राणि इति च। [१२]छन्दा ँसि जज्ञिरे तस्मादिति श्रुतेश्च ॥

..........ओंकारादिषु छन्दोलक्षणाभावे षि[१३]...... ..वेद एव ँकार[१४]प्रयोगः नतु छन्दोमात्रे ......अथ च अष्टाध्यायीसूत्रम्[१५] 'हृग्रहोर्भश्छन्दसीति सूत्रे छन्दो वेद एवोच्यते...... [१६]ब्राह्मणानि[१७]तिहासान्...............अथर्वसहितायां इतिहास[१८]श्च पुराणञ्च...... ....ऋच[१८]: सामानि छन्दाँसि पुराणम्............चतुर्थमितिहासः पुरा[१९]णं पञ्चमं वेदानां वेदं........अत्र पुराणशब्दस्य नपुंसकत्वेन[२०] नो इतिहासादीनां विशेषणत्वं.....इतिहासपुराणाभ्यां[२१] वेदं समुपबृंहयेत्........अधीयंते पुराणं ये धर्मशास्त्राण्यथेति चेति[२२]........आख्यानानितिहा[२३]सांश्च पुराणान्यखि[२४]लानि चेति........ भेषजमिति[२५]श्रुते मनु[२६]स्मृते प्रामाण्यं...............अर्धजरति[२७]न्यायस्याप्रामाण्यात्... ....अन्यच्च नारायणोपनिषदि[२८] पाषाणमणिसु[२९]वर्णमयविग्रहेषु पूजापुनर्भोगकरीति स्पष्टार्थः..............के ते पितरः। सोम्यासः सोम्याः सोमपा[३०] इत्यर्थः।

(१) [श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का संशोधन] (५०)

१ असभ्यकथन। २ अर्थ से अशुद्ध। ३ लक्षि०। ४ एक मात्रा अधिक होने से श्लोक शुद्ध नहीं। २७ मात्रा होने में २८ मात्रा करना अशुद्ध है। ५ संपत्गिरि जी का मध्यस्थ होना असम्भव है, विद्या कम होने से। ६ यत्त्वयोक्तं। ७ इस की टीका में। ८ वेदव्याख्यानत्वम्। ९ अपाणिनीयम्। १० शब्देन। ११ अशुद्ध है एवार होने से। १२ पण्डित इन का अर्थ नहीं जानते। १३ पि। १४ अशुद्ध है। १५ नहीं है। हृग्रहोर्भश्छन्दसीति। १६ पण्डित इन का अर्थ नहीं जानते। १७ ब्राह्मणानीतिहा०। १८ पण्डितों ने इस का, और इस का अर्थ नहीं जाना है। १९ पण्डितों ने इस का भी अर्थ नहीं जाना है। २० यह बात अशुद्ध है। २१ —२२ पण्डितों ने इस का अर्थ नहीं जाना है। २३ --नीति०। २४ --णानि खि-। २५ श्रुतेः। २६ --स्मृतेः। २७ --जरतीयन्या०। २८ इसमें कहीं नहीं है। २९ पाषाणलोहमणिमृन्मया। ३० सोम्या।

---

[८] पत्र (३३) [५४]

Rawalpindi
*28th November, 1877.**

Dear Pandit

The accompanying is a specimen of my Veda Bhashya (which is to be commenced and published soon) showing the style and made of dividing the interpretations of the texts into peculiar ways for the fecility of its

* [मार्गशीर्ष कृष्ण ८, बुधवार, सं० १९३४] मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र जी वर्मा के संग्रह में सुरक्षित है।

readers. I will do my best to disclose all the most difficult points into plain Sanskrit and Devanagari so that even the boys of insufficient knowledge will be able to understand them without any help.

Please see it yourself first and then circulate it in Ahmedabad and Bombay etc., for approval of the people.

I hope you loose no time in doing so and in communicating your final opinion to me either to keep the style or change into another better one.

The work of text Bhashya has been set up and is under my pen every day so the delay in answer expressive of your and others opinions like that of Moreshwar Kunte is not advisable. Address me Rawalpindi to the care of Post Master only. I have also given a notice[1] on my Veda's Bhoomika Part No. 9 for the present month regarding the two issues of Rig and Yaju from the next year 1878 for learning the subscribers wishes for their acceptance and another notice for fixing subscription etc., and as settled will be published again in the next month. Please reply my other letter too and accept my best Asheerbad. I am very glad to hear that you visit Bombay A. Samaj every fortnight and deliver a beautiful lecture there on different subjects with the view of public interest. Hoping you are well and rejoicing.

Your well wisher
Pt. Swami Dayanand Saraswatti.
दयानन्द सरस्वती

To

R. R. Gopal Rao, Hari,
D. Mukh, Torman.

[भाषानुवाद]

रावलपिण्डी
२८ नवम्बर १८७७[2]

प्रिय पण्डित !

साथ में वेदभाष्य का (जो शीघ्र ही आरम्भ तथा प्रकाशित होने वाला है) नमूना भेज रहा हूँ जिसमें पाठकों की सुविधा के लिए वेदों के भाष्य के विभाग की पद्धति विचित्र ढङ्ग से दिखलाई गई है। सभी कठिन स्थलों को सरल संस्कृत तथा देवनागरी में खोलने का शक्ति भर यत्न करूंगा। जिससे

१. यह नोटिस (=विज्ञापन) पूर्ण संख्या ४८ पर छपा है। यु० मी० ।
२. मार्गशीर्ष कृष्ण ८, बुधवार, सं० १९३४। यु० मी० ।

अल्प ज्ञान वाले बच्चे भी बिना किसी सहायता के उसे समझ सकेंगे । कृपा करके पहले इसे स्वयं देखिए, फिर इसे जनता की सम्मति और अनुमोदन के लिए अहमदाबाद और बम्बई आदि में प्रचारित कीजिए । मैं आशा करता हूँ कि आप ऐसा करने और इस पद्धति को रखने या इसे और अच्छी बनाने के लिए परिवर्तन के विषय में अपनी अन्तिम सम्मति देने में विलम्ब न करेंगे ।

वेदभाष्य का कार्य आरम्भ हो चुका है और प्रतिदिन लेखन कार्य चल रहा है अतः आप तथा मोरेश्वर कण्टे जैसे अन्य व्यक्तियों के सम्मति सूचक उत्तर में विलम्ब उचित नहीं । मेरा पता--'द्वारा पोस्ट मास्टर रावलपिण्डी' केवल इतना ही लिखिए । अगले वर्ष १८७८ से ऋग और यजुः दो अङ्क निकालने के विषय में ग्राहकों की स्वीकृत्यर्थ इच्छा जानने के लिए इस मास की अपनी भूमिका भाग ९ में एक सूचना[1] निकाली है और दूसरी सूचना चन्दा निश्चित करने के लिए, जैसा निश्चित होगा पुनः अगले मास में प्रकाशित की जायगी । कृपया मेरे अन्य पत्र का भी उत्तर दीजिए और आशीर्वाद स्वीकार कीजिए। मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि आप बम्बई आर्यसमाज में हर पक्ष में जाकर जनता की हित की दृष्टि से विभिन्न विषयों पर सुन्दर व्याख्यान देते हैं। आशा है आप आनन्द सकुशल होंगे।

आपका शुभचिन्तक

ह० दयानन्द सरस्वती

सेवा में--आर आर गोपाल राव, हरि देशमुख, तोरमाण

---

[९] पत्र [३४] [९९]

Rawalpindi

6th December, 1877.[2]

Dear Pandit,

Yours of the 30th ultimo, is to hand. To correct Proof-sheets in Hindi must be considered my own duty, and I will do that twice or thrice with my own hand every month.

You will have no difficulty at all in conducting this part of the business but do other things which are performable by you only. I think Baboo H. Chinta Mani is well qualified and clever enough to superintend the work, but tell me first, what you like to do in this case. I have not given contract of the work to Dr. Lazauras for any fixed length of period, but his charges have been settled as follow—

(Monthly account for 3100 copies)

He charges for printing and paper at Rs. 6/11/6 per page……… ………Rs. 161/14/-

---

१. यह सूचना (विज्ञापन) पूर्ण संख्या ४८ पर छपी है । यु० मी० ।

२. [मार्गशीर्ष शुक्ल २, बृहस्पतिवार, सं० १९३४ ।] मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा के संग्रह में सुरक्षित है ।

For printing the covers including folding and stiching at Rs. 15/-/- the 1000............Rs. 46/8/-

For office allowance and agency Rs. 30/-/- per month.

The list of subscriptions paid and unpaid with full particulars you will get afterwards at the close of the current year.

I will issue Yajoor Yeda too; if God wished. At what rate per ream the papers like that of my Sanskar Vidhi is procurable in Bombay? Hoping you are well and rejoicing. My asheerbad to you. Address me still Rawalpindi.

Yours well wisher,
Pt. Swami Dayanada Sarswatti.
Sd. दयानन्द सरस्वती

To

R. B. Gopal H. Desh Mookh Sarma.

P. S.

What will be the printing rate of such size of copies in equal number, as Dr. Lazauras prints at present, in Bombay, if I supply paper on my own cost separately.

If you find the printing cheaper done by contract, let the work be published in Bombay and there is no objection at all from my side.

[भाषानुवाद]

रावलपिण्डी
६ दिसम्बर १८७७[1]

प्रिय पण्डित !

आपका गत ३० ता० का पत्र हस्तगत हुआ। हिन्दी के प्रूफ शोधना मेरा ही कार्य समझना चाहिये और मैं उसे प्रतिमास दो तीन बार अपने हाथ से करूंगा। आपको यह कार्य करने में कोई कठिनाई न होगी परन्तु आप कुछ दूसरे कार्य भी कीजिए जिन्हें आप ही कर सकते हैं। मेरे विचार में बाबू ह० चिन्तामणि बहुत योग्य और कार्य के निरीक्षण में चतुर हैं, परन्तु पहले आप मुझे यह बतलाइये कि आप इस विषय में क्या करना चाहते हैं। मैंने डा० लाजरस को किसी निश्चित अवधि के लिये ग्रन्थ का ठेका नहीं दिया है। किन्तु चार्ज निम्न प्रकार से तय हुआ है।

(३१०० प्रतियों का मासिक व्यय)

वे छपाई और कागज के लिये ६ ॥≡)॥ प्रति पृष्ठ चार्ज करते हैं- ——१६१ ।॥=)।
टाइटल पेज की छपाई मोड़ाई और सिलाई सहित १५ प्रति सहस्र की दर से ४६ ॥)
दफ़्तर व्यय और एजेंसी के ३०) प्रति मास

---

१. मार्गशीर्ष शुक्ल २, बृहस्पतिवार सं० १९३४। यु० मी०।

प्राप्त और अप्राप्त चन्दे की लिस्ट पूर्ण विवरण सहित चालू वर्ष के अन्त में आप के पास भेज दी जायगी।

यदि ईश्वर की इच्छा हुई तो मैं यजुर्वेद भी प्रकाशित करूंगा। मेरी संस्कारविधि के प्रकार का कागज बम्बई में प्रति रीम किस भाव से मिल सकता है। आशा है आप सकुशल होंगे। आप को मेरा आशीर्वाद। अभी मुझे पत्र रावलपिण्डी के पते पर ही लिखें।

आपका शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

सेवा में--गोपाल हरि देश मुख शर्मा

पुनश्च--यदि मैं कागज पृथक् अपना दूँ तो बम्बई में वैसे ही आकार और उतनी ही संख्या में प्रतियों की जितनी कि आजकल डा० लाजरस छापते हैं, छपाई की दर क्या होगी। यदि आपको छपाई ठेके द्वारा उससे सस्ती पड़े तो ग्रन्थ को बम्बई में ही छपने दीजिये। इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं।

[१.०] **पत्र (३५)** [५६]

Rawalpindi
13th December, 1877[1]

Dear Pandit Ji,

In continuation of my yesterday's letter, I again inform you about something more which I remembered afterwards.

I want to have a sample of the paper which to be used and selected for the Veda-Bhashya and also you shauld bear in mind that the said Bhashya must be published in three different types according to my Ms. *i.e.,* M. large, round and small bands.

Please write to Baroda subscribers to pay up their subscriptions without further delay.

Yours well wisher
Pt. Swami Dyanand Sarusswati
दयानन्द सरस्वती

To

R. B. Gopal Rao H. Desh Mookh. Sarma.

[भाषानुवाद]

रावलपिण्डी
१३ सितम्बर १८७७[1]

प्रिय पण्डित जी

अपने कल वाले पत्र के सिलसिले में कुछ अन्य बातों के विषय में आप को पुनः सूचित करना चाहता हूँ। जिसका मुझे बाद में स्मरण आया।

---

१. [मार्गशीर्ष शुक्ल ८, बृहस्पतिवार, संवत् १९३४।] मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्रजी वर्मा के संग्रह में सुरक्षित है।

वेदभाष्य के लिए जिस कागज का प्रयोग निश्चित हुआ है मैं उसका नमूना देखना चाहता हूँ। आपको यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि उक्त भाष्य मेरे हस्तलेखों के अनुसार अर्थात् 'एम लार्ज राउण्ड' और 'स्माल' इन विभिन्न टाइपों में अवश्य प्रकाशित हो।

कृपया बड़ौदा के ग्राहकों को लिख दें कि वे और देर किये बिना अपना चन्दा भेज दे।

आपका शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

सेवा में--आर० वी० गोपाल राव हरि देशमुख शर्मा

———

[१] पत्र (३६) [५७]

Jehlum
27 Decr. 1877.[1]

Dear Pandit Jee.

I recd/ your delightful letter of the 22nd inst, this morning and am extremely glad to read all the particulars stated therin.

I have arrived at Jehlum to-day the 27th[2] current and intend to stop here about a fortnight at least. You can remit the money to me freely according to my above shown address, remarking to the care of Post Master only but please don't send me tickets as you did before, because I find some difficulty in changing or getting money for them. Better send currency Notes or money-order, which are both safest ways indeed. Hoping you are well and rejoicing—

yours well wisher
Pandit Swami Dayanand Sarusswati
Sd. दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

जेहलम
२७ दिसम्बर १८७७[1]

प्रिय पण्डित जी !

आप का २२ तारीख का आनन्ददायक पत्र आज प्रातः काल मिला और उसकी सब बातों को पढ़कर मुझे अत्यन्त आनन्द हुआ।

मैं आज २७ तारीख को जेहलम पहुंचा हूं और कम से कम यहां पन्द्रह दिन तक रहने का

---

१. [पौष कृष्ण ८, बृहस्पतिवार, सं० १९३४।] पं० रामाधार वाजपेयी को लिखा गया। मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

२. पं० लेखराम कृत जीवन चरित पृ० ३४९ पर लिखा है कि श्री स्वामी जी ३० दिसम्बर को जेहलम

विचार रखता हूँ । आप मुझे उपरिलिखित पते पर केवल पोस्ट मास्टर द्वारा लिख कर खुले तौर पर रुपया भेज सकते हैं, परन्तु पूर्ववत् मुझे टिकट न भेजें, क्योंकि उनके बदलवाने या उनके स्थान में रुपया लेने में मुझे कष्ट होता है। अच्छा है कि करेन्सी नोट या मनीआर्डर भेजें जो निश्चय ही दोनों अत्यन्त सुरक्षित प्रकार हैं। आशा है, आप अच्छे और प्रसन्न होंगे।

आपका शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

———

[१०] पत्र (३७) [५८]

Jehlum
28/12/77.[1]

Dear Pandit Jee,

Please tell me how many copies of Sandhio-Pasan you wish to have for sale in Lucknow? These are the best copies with good translation in *Deva-Nagri Bhashya* paragraph by paragraph one after the other Orderly in improved and enlarged edition. The average price per copy has not been fixed as yet, because the said book is still under Press, but on its coming out, every thing will be settled and decided with good will.

However I can suggest you so much that the price would be under half rupee per copy. And this would be an excellent work for the Arya-people indeed.

It is raining here since yesterday evening, so heavily that in the *Kothi* where I am sitting now and writing this letter to you, is all leaking over, except a few hand of floor inside.

Hoping you are well and rejoicing.

Yours well wisher
Pandit Swami Dayanand Sarusswatti
Sd/ दयानन्दसरस्वती

पहुंचे। इसी का अनुकरण करते हुए पं० घासीराम जी ने महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र पृ० ४५० पर लिखा है कि "३० दिसम्बर १८७७ को महाराज रावलपिण्डी से गुजरात जाने के विचार से शिकरम पर सवार होकर ३१ दिसम्बर को जेहलम रेल्वे स्टेशन पर पहुंचे।" पं० लेखराम जी तो सामग्री के अभाव से ठीक तिथि नहीं जान सके, परन्तु इस पत्र के मुद्रित हो जाने पर भी पं० घासीराम जी ने इस का प्रयोग करके तिथि को ठीक नहीं किया।

१. [पौष कृष्ण ६, शुक्रवार, सं० १९३४।] मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

[भाषानुवाद]

जेहलम
२८-१२-७७[1]

प्रिय पण्डित जी !

कृपया मुझे बतायें कि लखनऊ में विक्री के लिये आप सन्ध्योपासन की कितनी प्रतियाँ चाहते हैं ? यह सर्वोत्तम प्रतियाँ हैं। अनुवाद अच्छा है। और एक के पीछे प्रत्येक दूसरे वाक्य का क्रमशः देवनागरी में भाष्य है। यह संस्करण संशोधित और परिवर्धित है।

प्रति पुस्तक का अनुमान से मूल्य अभी नहीं रखा गया, क्योंकि पूर्वोक्त पुस्तक अभी यन्त्रालय में है, पर इस के निकलने पर प्रत्येक बात शुभ भाव से स्थिर और निश्चित की जायगी।

फिर भी मैं आपको इतना बता सकता हूं कि मूल्य प्रति पुस्तक आठ आने से न्यून होगा, और यह निस्सन्देह आर्यों के लिये अत्युत्तम पुस्तक होगा। कल सायंकाल से यहाँ इतने वेग से वर्षा हो रही है कि जिस कोठी में अब बैठा हूँ और आप को यह पत्र लिख रहा हूं; अन्दर दो चार हाथ छोड़ कर सब स्थानों से चू रही है।

आशा है आप अच्छे और प्रसन्न होंगे।

आपका शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

[१.१] पत्र (३८) [५९]

Jehlum
4th January 1878[2]

Dear Pandit Jee

The Sandhio Pasan Panch Maha Juggya Bidhi with easy translation in Bhasha, is now ready in its completion for use and you will soon get 100, one hundred copies of it from Benares Press within a short time.

The price per copy has been published on their covers and If you wish to have more of them, you can be furnished with, in required number on your further request. I believe you would have recd/ my other letters also in due time. Hoping you are well with your children and family.

Yours well wisher
Pandit Swami Dd. Sarusswatti
Sd/ दयानन्द सरस्वती

Address me Jhelum city to the care of Post Master only.

---

१. पौष कृष्ण ६, शुक्रवार, सं० १९३४। यु० मी०।

२. [पौष शुक्ल १, शुक्रवार, सं० १९३४।] पं० रामाधार वाजपेयी को लिखा गया मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

[भाषानुवाद]

जेहलम
४ जनवरी, १८७८[1]

प्रिय पण्डित जी !

सन्ध्योपासन पञ्चमहायज्ञविधि भाषा में सरलार्थ युक्त अब काम आने के लिए तय्यार हो गई है, और आप को इस की १०० एक सौ प्रति शीघ्र ही बनारस प्रेस से पहुँचेगी।

मूल्य प्रति पुस्तक का उस के मुखपृष्ठ पर छाप दिया गया है, और यदि आप को अधिक की आवश्यकता हो, तो आगे पत्र आने पर अभीष्ट संख्या में भेजी जा सकती है। मैं विश्वास करता हूँ कि मेरे दूसरे पत्र भी आप को उचित समय पर मिल गये होंगे। आशा है आप सपरिवार कुशल सहित होंगे।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

मुझे केवल इस पते से लिखें—द्वारा पोस्टमास्टर जेहलम नगर।

———

[१.२] पत्र (३२) [६०]

Jehlum
6th January 1878[2]

Dear Pandit Jee

Received your letter of the 3rd. inst. enclosing a currency Note for Rs. 10 ten only which I accepted with thanks. Nothing is new here worthy to be stated, but I hope sincerely that an Arya-Samaj will also be made here within a short time. Hoping you are well with your children. Please accept my best *Asheerbad,*

Yours well wisher
Pandit Swami Dd. Saruswatti
Sd. दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

जेहलम
६ जनवरी, १८७८[2]

प्रिय पण्डित जी !

आपका ३ तारीख का पत्र जिस में १० रुपये का कर्रन्सी नोट था, मिला। उसका धन्यवाद पूर्वक स्वीकार किया। यहां लिखने योग्य कोई नया समाचार नहीं है। परन्तु मैं शुद्ध हृदय से आशा

१. पौष शुक्ल १, शुक्रवार, सं० १९३४। यु० मी०।

२. [पौष शुक्ल ३, रविवार सं० १९३४।] पं० रामाधार वाजपेयी को लिखा गया। मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

करता हूँ कि थोड़े ही काल में यहाँ भी एक आर्य्यसमाज बनाया जायगा। आशा है आप स्वसन्तान सहित कुशलपूर्वक होंगे। कृपया मेरा हार्दिक आशीर्वाद स्वीकार करें।

आप का शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र(४०) [६१]

सुखस्वरूप पण्डित कालूराम जी प्रसन्न रहो।

कुशल पत्र आपका मि० पौ० कृ० ७ का हमारे पास पहुँचा। पढ़ कर मन आनन्द हुआ। अगले वर्ष अर्थात् सम्वत् १९३५ से दो २ अङ्क ऋक् और यजु प्रति मास में आपके और समर्थदान के नाम भेजे जावेंगे। हम धन्यवाद देते हैं कि आप लोग ऐसी प्रीति से वेदभाष्य का सहाय करना चाहते हैं। परमात्मा आपका कल्याण करेगा। पुस्तक सन्ध्योपासना भाषा टीका सहित बहुत उत्तम छपवाया है। २५ पच्चीस जिल्दें आपके पास बनारस यन्त्रालय से शीघ्र पहुंचेगी। रसीद भेज देना। आगे जो पुस्तक नवीन होंगी भेजी जायगी। सत्य[ार्थ] प्रकाश का दूसरा भाग नहीं छापा गया है विचार था परन्तु छपा नहीं। रावलपिण्डी में आर्य समाज हो गया। **इस स्थान (जेहलम) में भी होने की आशा है।** पञ्जाब में बहुत ठिकाने समाज बन गये हैं। वेद धर्म की बड़ी उन्नति है॥ शीत और पाला बहुत पड़ता है। वर्षा भी खूब हो चुकी है। अग्रे किं बहुना। समर्थदान आदि को आशीर्वाद पहुँचे। इति० मि० पौ० शु० ४[1]। ता० ७ जनवरी स० ७८ ई०।

ह० दयानन्द सरस्वती

पता--जेहलम वा गुजरात के डाक खाने की मार्फत स्वामी जी के पास पहुँचे। इतना ही लिखना काफी होगा।[2]

---

[१०] निवास-सूचना-विज्ञापन [६२]

विदित हो कि सं० १९३४ पौष मास के अन्त पर्यन्त पञ्जाब देश के वजीराबाद नगर में पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी निवास करेंगे।[3]

---

१. संवत् १९३४ जेहलम से।

२. यह पत्र हमारी प्रार्थना पर पं० रामसहाय जी महोपदेशक आ० प्र० स० अजमेर ने ता० २२-५-३३ को दो और पत्रों सहित हमारे पास भेजा था। मूलपत्र अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. ऋ० भाष्यभूमिका, अंक (१०) संवत् १९३४। [ऋ० भाष्यभूमिका तथा वेदभाष्य के अंक नियत समय पर नहीं निकलते थे, अतः आगे से उन पर दी गई सूचना देना अनावश्यक समझा गया।]

[१.३] पत्र(४१.) [६३]

Gujrat
14 January 1878[१]

Dear Pandit Jee

Your welcome note of the 9th inst. duly came to hand and I uuderstood all what you stated therein.

Your good wishes for learning the Veda Bhashya's subscription for the current year will soon be fulfilled. The only delay is that with the consent of the Bombay people I am now making some better arrangements for the Bhasya's publication both in paper and type. All this will soon be finished with united efforts of us and a notice will be given in the 11th or 12th part of the Veda Bhashya for the public information on the matter. The subscription for this year is surely to be fixed with some reduction and the people would be able to buy one or both numbers of the Rig and Yaju easily.

I dare say, that all the subscribers for this year would be fully satisfied to find good paper and fine order of interpretation, which are very necessarily required to discover the real sense of the Mantras. On my returning from the Punjab, I will tell you whether and what time I will be able to visit Lucknow but it would be done so sooner or later once again certainly. Hoping you are well and rejoicing. Accept my best *Asheerbad* and beleive me your ever well wisher.

Pandit Swami Dd. Sarusswati
Sd /·दयानन्द सरस्वती

[भाषानुवाद]

गुजरात
१४ जनवरी, १८७८[१]

प्रिय पण्डित जी !

आपका ९ तारीख का शुभ समाचार उचित समय पर मिला और आपका लिखा सब विषय समझा।

१. [पौष शुक्ल १०, सोमवार, सं० १९३४ ।] पं० रामाधार वाजपेयी को लिखा गया। मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

प्रचलित वर्ष के लिये वेदभाष्य का चन्दा जानने की आपकी शुद्ध भावना शीघ्र पूर्ण की जायगी। देरी केवल इस बात की है कि मुम्बई के लोगों की सम्मति से मैं अब भाष्य के छपने का, कागज और टाइप दोनों की दृष्टि से, अच्छा प्रबन्ध कर रहा हूँ। हम सब के इकट्ठे परिश्रम से यह सब शीघ्र समाप्त होगा, और इस विषय पर जनता के ज्ञान के लिये वेदभाष्य के ११ वें वा १२ वें अंक में एक विज्ञापन दिया जायगा। इस वर्ष का चन्दा निस्सन्देह कुछ घटा कर रखा जायगा, और लोग सरलता से ऋग् या यजुः के एक या दो अंक खरीद सकेंगे।

मैं निश्चय से कहता हूँ कि इस वर्ष के सब ग्राहक अच्छा कागज़ और भाष्य का सुन्दर क्रम देख कर, जो मन्त्रों के यथार्थ अर्थ जानने के लिये बड़ा आवश्यक है, पूर्ण सन्तुष्ट होंगे। पंजाब से लौट कर मैं आपको लिखूंगा कि क्या मैं लखनऊ देख सकूंगा और कब देख सकूंगा, पर यह आगे या पीछे एक बार फिर निश्चय ही होगा। आशा है आप अच्छे और आनन्द में होंगे। मेरा हार्दिक आशीर्वाद स्वीकार करें और मुझे जानें—

अपना शुभचिन्तक
ह० दयानन्द सरस्वती

---

[३] पत्र [४२] [६४]

Gujrat,
16th January, 1878.[1]

Dear Baboo,

With the consent and united opinion of Moonshi Inder Mani (a famous learned of Arabic and Persian) and other experienced persons of N. W. provinces, I feel necessity to inform you that the Veda-Bhashya must not be translated into English or Vernacular before reaching its completion because if translated into English or Urdu then it will weaken the hearts of the people to study Sanskrit, thinking that they would be able to gain their object either by English or Urdu without caring for Sanskrit and Bhasha. Under such circumstances, we need not try to translate the work into English or Urdu which instead of producing any good result, will bring forth something bad in the end.

Let the Bhashya first be reached its completion in pure Sanskrit and Bhasha only, afterwards, if it would be thought proper to translate into other languages, you all would get liberty to work according to your wishes with the view of public benefit in the world,

---

१. [पौष शुक्ल १२ बुधवार, सं० १९३४।] मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र जी वर्मा के संग्रह में सुरक्षित।

Now better bookshop to send me sample of paper selected and suggested by Mr. Sham Ji Krishana Verma some time ago to be procurable at Rs. 16 per ream in Bombay. Settle the matter soon get agreement of the printers for working according to their words and mutual fixed terms which all should be entered on the stamped paper without longer delay.

If Sham Ji Krishna Verma can work for me, I am very glad to engage him in my work even on extra pay and without caring for Rs. 10 or Rs. 15 more or less in the monthly account. Ask him if he likes to do so and hold a committee of your friends for proposing some better scheme about the Veda Bhashya's publication if possible.

The first year ended and the 2nd is to be commenced from February, so I wish to fix subscription on receipt of your settlement with the printers etc., and tell me what subscription should be kept for both the Vedas according to their printing expenses. The buyers will be unwilling to pay high subscription if the translation be added and enlarged along with the Sanskrit one.

Gujrat, Futtehgurh and Wazeerabad have been blessed with Arya Samajees in December last and January 1878. Address me Gujrat city to the care of Post Master only and accept my Asheerbad.

Yours Well Wisher
Pt. Swami Dayanand Sarswatti.
दयानन्द सरस्वती

To

B.H. Chinta Mani,
Bombay.

[भाषानुवाद]

गुजरात
१६ जनवरी १८७८[1]

प्रिय बाबू

मुन्शी इन्द्रमणि (अरबी तथा फारसी के प्रसिद्ध विद्वान्) और उत्तर पश्चिम प्रान्त के अनुभवी व्यक्तियों की संयुक्त सम्मति और स्वीकृति से मैं आपको सूचना देने की आवश्यकता अनुभव करता हूँ कि सम्पूर्ण होने से पूर्व वेदभाष्य का अनुवाद अंग्रेजी या वर्नाक्यूलर में नहीं करना चाहिए। क्योंकि यदि अंग्रेजी या उर्दू में अनुवाद किया गया तो इस से लोग संस्कृत और भाषा

१. पौष शुक्ल १२, बुधवार, सं० १९३४। यु० मी०।

के अध्ययन में निरुत्साह हो जावेंगे, क्योंकि वे सोचेंगे संस्कृत और भाषा के बिना ही अंग्रेजी वा उर्दू के द्वारा ही हम अपना उद्देश्य प्राप्त कर लेंगे। ऐसी स्थिति में हमें ग्रन्थ के अंग्रेजी या उर्दू में अनुवाद करने के प्रयत्न की आवश्यकता नहीं। जिस से सुपरिणाम के स्थान पर अन्त में दुष्परिणाम प्राप्त हो। पहले केवल शुद्ध संस्कृत और भाषा में पूर्ण हो जाने दीजिए, पश्चात् अन्य भाषाओं में अनुवाद करना आवश्यक समझा गया तो आप सब अपनी इच्छानुसार संसार में जनहित की दृष्टि से कार्य करने में स्वतन्त्र होंगे।

कुछ समय पूर्व शाम जी कृष्ण वर्मा ने मुझे कागज का नमूना भेजने के लिए एक नई अच्छी दुकान बम्बई में चुनी तथा बताई है। जहाँ से १६ रुपया प्रति रिम के हिसाब से मिलेगा।

इस मामले को आप शीघ्र तय कर लीजिए। और छापने वालों के साथ उनके तथा पारस्परिक निश्चय के अनुसार जो शीघ्र ही स्टाम्पकागज पर लिखे होने चाहिए समझौता कर लीजिए।

यदि शाम जी कृष्ण वर्मा मेरे कार्य में लग गए तो मैं मासिक व्यय में १०, १५ रुपयों वा न्यूनाधिक पर न विचार कर अतिरिक्त वेतन पर भी अपने काम पर प्रसन्नता पूर्वक लगा लूंगा। उन्हें पूछ लीजिएगा कि क्या वे ऐसा करना चाहते हैं और यदि सम्भव हो सके तो अपने मित्रों की एक सभा बुलाइये जो वेद भाष्य के प्रकाशन के विषय में कोई और अच्छी योजना प्रस्तुत करे।

प्रथम वर्ष समाप्त हुआ और अब द्वितीय वर्ष फरवरी से आरम्भ होने वाला है। अतः मैं छापने वालों के साथ समझौते की प्राप्ति के पश्चात् चन्दा निश्चित करना चाहता हूँ और बतलाइये कि छपाई व्यय के अनुसार दोनों वेदों के अङ्कों के लिए क्या चन्दा रक्खा जावे।

यदि अनुवाद संस्कृत भाग के साथ जोड़ कर बढ़ा दिया जाय तो सम्भव है गाहक लोग अधिक चन्दा न देना चाहेंगे।

गुजरात फतेहगढ़ और वजीराबाद में गत दिसम्बर और जनवरी सन् १८७८ में कुछ लोग आर्यसमाजी हो गए हैं। मेरा पता द्वारा "पोस्टमास्टर गुजरात सिटी" केवल इतना ही है और आशीर्वाद स्वीकार करें।

आपका शुभचिन्तक
दयानन्द सरस्वती

सेवा में—
बी-एच-चिन्तामणि
बम्बई

———

[१] पत्र-सारांश—(४३) [६५]

[माधोलाल][1]

पञ्जाब के हाता में बहुत से शहरों में समाज कायम हो चुका है। और बराबर तादाद बढ़ती हुई चली जायगी। मेरा आशीर्वाद ग्रहण करो और अपनी हालत से हमेशा वाकिफ रक्खो।

गुजरात
२० जनवरी १८७८।[2]

———

[२] पत्रांश (४४) [६६]

[माधोलाल][3]

पंजाब से लौट कर जब मैं बंगाल हाता में आऊँगा तुम्हारी मुलाकात से जरूर खुशी उठाऊँगा। तुम्हारी कोशिश और इच्छा अपने देसी भाइयों की उन्नति में देख कर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। सकल सृष्टि का कर्ता आप को स्वस्थ और हरा भरा रखे। तुम्हारी यह इच्छा देख कर कि तुम अपने देश की अवस्था उत्तम करने का यत्न करते हो मुझे ऐसा आनन्द हुआ कि वर्णन नहीं कर सकता। इस में कुछ सन्देह नहीं कि तुम इस जीवन में इसके फल को चखोगे। तुम सब को मेरा आशीर्वाद।

दयानन्द सरस्वती

गुजरात
२८ जनवरी १८७८[4]

———

[८] विज्ञापन[5] [६७]

सब सज्जनों को विदित हो कि आगे भूमिका के अङ्क नम्बर १२।१३ और १४ छपने को बाकी रहे हैं। सो फाल्गुण चैत्र और वैशाख में छप चुकेंगे। इसके आगे ज्येष्ठ महीने से लेकर अंक १ ऋग् और अंक १ यजुर्वेद के मन्त्रभाष्य के छपा करेंगे। इसमें एक २ अङ्क का एक वर्ष में रुपैये डाक

---

१. पं० लेखरामकृत जीवनचरित्र पृष्ठ० ३५७, ३५८ पर इतना अंश उद्धृत है।

२. माघ कृष्ण २, रविवार, सं० १९३४। यु० मी०।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३५८ पर इतना अंश छपा है। उस में लिखा है कि पत्र के पूर्व भाग में "पुस्तकें भेजने का उल्लेख है।"

४. पौष वदी १० सोम, संवत् १९३४। यही पत्र स्वामी सत्यानन्द जी कृत जीवनचरित पर भी कुछ आगे पीछे करके छापा गया है। वहां पौष सु० १५ सं० १९३४ तिथि दी है। यह तिथि अशुद्ध दी गई है। हमने विक्रम संवत् की ठीक तिथि दी है।

५. ऋ० भाष्यभूमिका अंक ११ के अन्त में छपा।

महसूल सहित ४) चार २ रहेंगे। जो एक ऋग्वेद का अंक लिया चाहें सो ४) रु० लाजरस कंपनी काशी वा स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के पास भेज देवें और जो कोई यजुर्वेद का ही १ अंक लिया चाहें सो ४) रु० गत वर्ष के और ४) रु० अगले वर्ष के भेज देवें। उनको आरम्भ से आज पर्यन्त और विक्रम के संवत् १९३५ के माघ पर्यन्त प्रति मास एक २ अंक मिलता जायगा। और जो दोनों वेद को लिया चाहें वे ८ रु० भेज देवें। परन्तु जो ऋग्वेद का अंक लेते हैं और दूसरे यजुर्वेद का भी भूमिका सहित लिया चाहें वे १२) रु० आगे के वर्ष के भेज देवें। ऐसे ही जो २ एक वेद के नवीन ग्राहक हों वे भी ८) रु० दोनों वर्ष के भेजें। और जो भूमिका एक तथा मन्त्रभाष्य दोनों लेवें, वे ११)[1] रु० भेज देवें। और जो दो भूमिका सहित दोनों अंक लिया चाहें वे दोनों वर्ष के १६) रु० भेजें। और जो केवल भूमिका मात्र लिया चाहें वे ४॥।-) रु० देकर लेवें।[2]

ऋग्वेद के १० सूक्त पर्यन्त और यजुर्वेद के १ अध्याय पर्यन्त का भाष्य संवत् १९३४ मि० माघ वदि १३ गुरुवार तक बन चुका है।[3]

और भूमिका भी बन कर तैयार हो गई। आगे प्रतिदिन मन्त्रभाष्य बनाया जाता है।[4]

———

[२] **दूसरा विज्ञापन**[5] [६८]

जिन ग्राहकों ने पुस्तक लेके अब तक दाम नहीं भेजे हैं उन को उचित है कि शीघ्र भेज देवें। नहीं तो उन के पास दाम लेने के लिये पत्र वा मनुष्य भेज के लिया जायगा। और उसका मार्ग खर्च भी उन से लिया जायगा। इससे उचित है कि वे शीघ्र भेज देवें। आगे जैसा काग़ज़ भाष्य में अब लगाया जाता है, इस से भी उत्तम मन्त्रभाष्य में लगाया जायगा।

———

[१] पत्र (४६) [६९]

लाला जीवनदास[6]

आज की तारीख मुलतान से भी एक चिट्ठी डाक्टर जसवन्त राय साहब की आगई है। उस ओर जरूर जाना पड़ेगा।

गुजरांवाला
९ फरवरी १८७८[7]

———

१. यहां १२) रु० होने चाहियें। यु० मी०।
२. इस और अगले पूर्ण संख्या ६८ विज्ञापन का संकेत पूर्ण संख्या ६४ के पत्र में है।
३. ३१ जनवरी १८७८। तुलना करो पृ० ३३ पूर्ण संख्या २५।
४. यह अन्तिम भाग छपने को पीछे भेजा गया होगा।
५. यह विज्ञापन पिछले विज्ञापन के साथ ही ऋ० भा० भू० अंक ११ के अन्त में छपा है। यु० मी०
६. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृष्ठ ३६५।
७. माघ शु० ७ शनिवार सं० १९३४।

[२] **पत्रांश (४६)** [७०]

लाला जीवनदास[1]..................................

इस स्थान में प्रतिदिन व्याख्यान होता है अभी तक कोई विशेष बात लिखने योग्य नजर नहीं आती है फिर थोड़े काल में लिखा जावेगा। आज ६ बजे से पादरी लोगों से बहस होगी।

१९ फरवरी १८७८[2]

दयानन्द सरस्वती
गुजराँवाला

---

[१०] ॥ विज्ञापन[3] ॥ [७१]

एक विज्ञापन जो गत मास के अंक ११ में मंत्रभाष्य के नियम विषय में दिया गया था उस में कुछ भाष्यभूमिका के नियम बदल दिए गए थे, परन्तु उससे बहुधा सज्जनों को भ्रम होकर वे लोग इस भाष्यकार के आशय से विरुद्ध कुछ का कुछ ही समझ गये थे अर्थात् यह जाना कि यजुर्वेद की भूमिका पृथक् दूसरी होगी इस शङ्का के निवारण करने के अर्थ यह विज्ञापन फिर दिया जाता है कि भूमिका चारों वेदों की एक ही है जो कि छपकर १२ अङ्कों में ग्राहकों के पास पहुँच चुकी और बाकी रही हुई आगे वैशाख तक छप कर सम्पूर्ण हो जावेगी। इसी एक भूमिका को कदाचित् कोई नवीन वा पुराना ग्राहक फिर लिया चाहें अपने किसी दूसरे विचार से अथवा दोनों वेदों में अलग २ लगाने को तो उनके लिए मोल का नियम आगे को बदल दिया गया है दूसरी भूमिका नवीन कोई नहीं बनती है। बाकी नियम जैसे अङ्क ११ के विज्ञापन में छपे हैं वैसे ही ठीक २ समझ लेना॥

---

[११] नोटिस[4] [७२]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि इसके आगे अर्थात् सं० १९३५ ज्येष्ठ महीने से ले के वेदभाष्य उत्तम कागज और अक्षरों से युक्त मुम्बई में छपा करेगा। हमारी ओर से इस काम के प्रबन्ध करने वाले प्रधान आर्य्यसमाज के रा० रा० बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी स्थापित किये गये हैं उनका ठिकाना मुम्बई बाहर कोटघर नम्बर ६ मेडो स्ट्रीट फोर्ट का है। वहाँ से सब ग्राहकों के पास पूर्व लिखित ठिकानों में यथोचित काल में प्रति मास अङ्क पहुँचते रहेंगे और जो अङ्क ११वें में नोटिस दिया गया था कि भूमिका के अङ्क नम्बर १२।१३ और चौदह १४ वाँ छपने को बाकी रहे हैं सो अनुमान अधिक होने से अङ्क १५वें में भूमिका पूरी होगी। सो अगले महिने में अङ्क १ ऋग्वेद

---

१. पं० लेखराम कृत जीवन चरित्र पृ० ३६२ पर उद्धृत।

२. फाल्गुन कृ० २ सं० १९३४।

३. यह विज्ञापन ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के १२वें अङ्क के अन्त में है। सम्भवतः यह फाल्गुन सं० १९३४ में लिखा गया था। यु० मी०।

४. यह विज्ञापन ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका अङ्क १३ के अन्त में छपा है। सम्भवतः यह विज्ञापन चैत्र १९३५ में लिखा गया था। यु० मी०।

के मन्त्रभाष्य और अङ्क १५ वाँ भूमिका का दोनों साथ छपेंगे आषाढ़ से लेके १ ऋक् और १ यजुर्वेद का मन्त्र भाष्य साथ २ प्रति मास बराबर छपा करेंगे जो कोई केवल भूमिका मात्र लेंगे वे रु० ५) देके ले सकते हैं। और जो मन्त्रभाष्य दो लेंगे और भूमिका १ वे दोनों वर्ष के लिये ११) देंगे जिन्होंने सं० १९३४ का वार्षिक मूल्य दिया है और दो मन्त्रभाष्य लेंगे वे सम्वत् १९३५ का रु० ७) और जो एक लेंगे वे ४) देंगे और जो नवीन ग्राहक होंगे वे इन दोनों वर्षों का एक पुस्तक का मूल्य आठ ८) रु० और दोनों का रु० ११) देंगे ॥ और यह भी जानना चाहिये कि चारों वेद की भूमिका एक ही है ॥ आगे मुम्बई उक्त बाबू जी और स्वामी जी के पास पत्र भेजने से नवीन गाहकों को वेदभाष्य मिला करेगा और इन दोनों में से एक के पास दाम भी भेजना होगा ॥

---

[१] पत्रांश–(४७) [७३]

लाला पोह्लोराम जी[1] ....

....

मुलतान में समाज होने वाला है। सो जानोगे। व्याख्यान प्रतिदिन हुआ करता है। नवीन समाचार कुछ नहीं है। सब सभासदों को नमस्ते।

२९ मार्च १८७८[2] दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (४८) [७४]

श्रीयुत मूलराज, जीवनदास, साईंदास, बलदास जी आनन्द रहो।[3]

आगे रामरखा से पत्र मिल सकेंगे तो भेज दिये जायेंगे वा नवीन लिखवा कर भेज देंगे। परन्तु जैसे आज पर्य्यन्त नहीं छपे, वैसे हो तो परिश्रम व्यर्थ है। जैसी अन्तरंग सभा के नियमों का झमेला आज तक पूरा नहीं हुआ है, ऐसा न हो। इस लिखने का प्रयोजन यह है कि जो काम जिस समय करना चाहिये, वह उस समय में होने से सफल हो जाता है, इसलिये समय पर काम करना बुद्धिमानों का लक्षण है। यहाँ बहुत आनन्द में हम लोग हैं। आशा है कि आप लोग भी आनन्द में होंगे।

एक काम यह आवश्यक है कि इस मुन्शी से यह काम ठीक २ नहीं हो सकता। इस लिए एक मुन्शी अंग्रेजी फारसी और नागरी भाषा का पढ़ा हुआ, हिसाब नकशा निकालना भी जानता हो, जो ऐसा न मिल सके तो अंग्रेजी, फारसी, उर्दू तो ठीक जानता हो कि चिट्ठी पत्र ठीक २ पढ़ और लिख सके, वह आलसी न हो और जिसका स्वभाव किसी प्रकार बुरा न हो, उसका मासिक २५) रु० से

---

१. पं लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३६९ पर उद्धृत। यह पत्र गुजरांवाला के मन्त्री लाला पोह्लोराम के नाम है।

२. चैत्र कृष्ण ११ शुक्रवार सं० १९३४। यह पत्र मुलतान से भेजा गया। यु० मी०।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३७० पर उद्धृत।

अधिक न होना चाहिये। उस को आप चारों जने ध्यान से २५) रु० और बीस दोनों के बीच में निश्चित करके मुझ को लिखिये। यहाँ व्याख्यान नित्य होते हैं। समाज होने का भी कुछ २ सम्भव है। मिति चैत्र ११ सम्वत् १९३४, शनिवार,[1] ता० २४ मार्च १८७८।

दयानन्द सरस्वती[2]

---

[१२] विज्ञापनपत्र [७५]

आगे यह विचार किया जाता है कि, संस्कृत विद्या की उन्नति करनी चाहिये; सो बिना व्याकरण के नहीं हो सकती जो आजकल कौमुदी, चन्द्रिका, सारस्वत, मुग्धबोध और आशुबोध आदि ग्रन्थ प्रचलित हैं, इनसे न तो ठीक ठीक बोध और न वैदिक विषय का ज्ञान यथावत होता है; वेद और प्राचीन आर्ष ग्रन्थों के ज्ञान से विना किसी को संस्कृत विद्या का यथार्थ फल नहीं हो सकता और इसके विना मनुष्य जन्म का साफल्य होना दुर्घट है॥ इसलिए जो सनातन प्रतिष्ठित पाणिनीय अष्टाध्यायी महाभाष्यनामक व्याकरण है, उसमें अष्टाध्यायी सुगम संस्कृत और आर्यभाषा में वृत्ति बनाने की इच्छा है; जैसे वेदभाष्य प्रतिमास २४ पृष्ठों में १ अङ्क छपावता है, इसी प्रकार ४९ पृष्ठों[3] का अङ्क मुम्बई में छपवाया जाय तो बहुत सुगमता से सब लोगों को महालाभ हो सकता है, इसमें हजारों रुपयों का खर्च और बड़ा भारी परिश्रम है॥ इसका मासिक मूल्य जो प्रथम दें उनसे ।।=) आने के हिसाब से ७।।) रुपये लिए जायें उधार लेने वालों से ।।।=) के हिसाब से ११।) लिये जायें, विद्योत्साही सब सज्जनों की सम्मति प्रथम मैं जाना चाहता हूँ, सो सब लोग अपना अपना अभिप्राय जनावें[4] इति॥

---

१. चैत्र कृ० ११ शनिवार को द्वादशी भी थी। यहां २४ मार्च के स्थान में ३० मार्च होना चाहिये। २४ मार्च को चैत्र कृ० ६ रविवार था। पत्र मुलतान से भेजा गया था। यु० मी०।

२. यह पत्र मुलतान से भेजा गया। यु० मी०।

३. यहां '४८ पृष्ठ' चाहिये।

४. यह विज्ञापन ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका अङ्क १५, १६ के अन्तिम पृष्ठों पर छपा है और सम्भवतः चैत्र संवत् १९३५ के अन्त में लिखा गया था। तब स्वामी दयानन्द सरस्वती लाहौर में थे। पंजाब छोड़ने के अनन्तर उन्हों ने वृत्ति बनानी आरम्भ कर दी थी। वृत्ति की समाप्ति अनुमानतः सं० १९३६ तक हो गई। परन्तु ग्राहकों के अभाव से यह अब तक अप्रकाशित पड़ी है। हमने इसका अधिकांश भाग पढ़ा है, और कह सकते हैं कि ग्रन्थ अपूर्व है। इसी के आधार पर पीछे वेदांगप्रकाश बना। इस वृत्ति का सम्पादन हमने आरम्भ किया था। तदुपरान्त डा० रघुवीर एम. ए. ने इस के दो अध्याय सम्पादित किये। तीसरे और चौथे अध्याय का सम्पादन पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी ने (सन् १९३७–१९३९) किया। चतुर्थ अध्याय अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ। प्रतीत होता है कि श्री स्वामी जी ने वृत्ति के चार अध्याय ही शोधे थे।

[१३]　　　　विज्ञापन पत्र[1]　　　　[७६]

सब को विदित हो कि, चार वेदों की भूमिका पूरी हो गई है। इस अङ्क १५ और १६ में समाप्ति हुई, इसकी जिल्द जिसको इच्छा हो, बंधवाले, जो एक वेद लेते हैं, उनके पास आषाढ़ में ऋग्वेद का अङ्क नहीं आवेगा; क्योंकि ये दो अङ्क आये हैं, इसके आगे श्रावण से लेकर एक लेने वालों के पास एक एक और दो लेने वालों के पास दो दो ऋग्वेद के और यजुर्वेद के अङ्क आया करेंगे, धीरज करो कि, मुम्बई में बहुत अच्छा काम चलेगा। यह पहिला महिना था, इसलिये थोड़ी देर हो गई है, आगे बराबर मितिवार पहुंचा करेंगे इति॥

---

[३]　　　　पत्र (४९)　　　　[७७]

बाबू माधोलाल जी आनन्द रहो ![2]

आपका कुशल पत्र तारीख २४ वीं गत मास का उचित समय पर हमारे पास पहुँचा, विषय लिखा सो प्रकट हुआ। आपके इच्छा के अनुसार कल्ह की तारीख ३१ मार्च को दो छपे हुए आर्य्यसमाज के मुख्य दश उद्देश्य अर्थात् नियमों के भेज चुके हैं और आज एक कापी उक्त समाज के उपनियमों की भी भेजते हैं सो निश्चय होता है कि दोनों कापियाँ नियम और उपनियमों की आप के पास अवश्य पहुँचेगी। रसीद शीघ्र भेज दीजिये। और इन नियमों को ठीक २ समझ कर वेद की आज्ञानुसार सब के हित में प्रवर्त्त होना चाहिये, विशेष करके अपने आर्य्यावर्त्त देश के सुधारने में अत्यन्त श्रद्धा और प्रेम भक्ति सब के परस्पर सुख के अर्थ तथा उनके क्लेशों के मेटने में सत्य व्यवहार और उत्कण्ठा के साथ अपने ही शरीर के सुख दुखों के समान जान कर सर्वदा यत्न और उपाय करना चाहिए। सब के साथ हित करने का ही नाम परमधर्म्म है। इसी प्रकार वेद में बराबर आज्ञा पाई जाती है जिसका हमारे प्राचीन ऋषि मुनि आदि यथावत् पालन करते और अपनी सन्तानों को विद्या और धर्म के अनुकूल सत्य उपदेश से अनेक प्रकार के सुखों की वृद्धि अर्थात् उन्नति करते चले आये हैं। केवल इसी देश से विद्या और सुख सारे भूगोल में फैला है क्योंकि वेद ईश्वर की सब सत्य विद्याओं का कोश और अनादि है। बाकी सब व्यवहार तथा ईश्वर की उपासना आदि के विषय हमारी पुस्तकों और उपनियम आदि के देखने से समझ लेना उचित है। आपको हिन्दूसतसभा के स्थान में आर्य्य समाज नाम रखना चाहिये क्योंकि आर्य्य नाम हमारा और आर्य्यावर्त्त नाम हमारे देश का सनातन वेदोक्त है।

आर्य्य के अर्थ श्रेष्ठ और विद्वान् धर्मात्मा को हिन्दू शब्द यवन आदि ईर्शक लोगों का बिगाड़ा और बदला हुआ है जिस का अर्थ गुलाम काफर और काला आदमी आदि विचार कर

---

१. यह विज्ञापन भी पूर्व विज्ञापन पूर्ण संख्या ७६ के साथ ही ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका अङ्क १५,१६ के अन्त में छपा था। यु० मी०।

२. यह पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३६६ पर पूरा छपा है। हम ने इसे मूल पत्र से छापा है। यह मूल पत्र दानापुर समाज में सुरक्षित है। इस से प्रतीत होता है कि पं० लेखराम जी ने अनेक मूलपत्रों की प्रतिलिपियां ही ली थीं। मूल पत्र अपने लिए वे अपने साथ नहीं ला सके होंगे। हमारा पाठ मूल के सर्वथा अनुकूल है।

नाम अपनी सभा का आर्य्य समाज दानापुर रख कर वेदोक्त धर्मों पर और सब सभासदों में परस्पर नमस्ते कहना चाहिए सलाम व बन्दगी नहीं। इति। ता० १ अप्रैल सन १८७८ ई०।[1]

द: दयानन्द सरस्वती

---

[४]   पत्र (५०)   [७८]

बाबू माधोलाल जी आनन्द रहो!

पत्र आप का ता: ७ अप्रैल का पास हमारे पहुँचा। विषय मालूम हुआ नीचे लिखी हुई पुस्तकें आप के पास भेजी जाती हैं। इनको क्रमपूर्वक समझ कर रसीद हमारे पास शीघ्र भेजिये लाहौर के पते से—

१—सत्यार्थप्रकाश	२॥)	१—आर्योद्देश्यरत्नमाला	‒)॥
१—संस्कारविधि	१॥≈)	१—मेले चाँदापुर की उर्दू में	‒)।
१—आर्य्याभिविनय	॥)	१—प्रश्नोत्तर हलधर	‒)
१—सन्ध्योपासन	।≈)		
७—कुल्ल दाम पुस्तक	५≡)॥।		
डाकमहसूल	।‒)॥।		
महसूल डाक सहित कुल्ल दाम	५॥‒)॥।		

पाँच रुपये नौ आने और नौ पाई हुए। बड़ी प्रसन्नता[2] की बात हुई कि आप अपनी सभा का नाम आर्य्यसमाज रक्खा है। अब आप की दृष्टि देश के सुधार पर होनी चाहिये[2]। अग्रे किमधिकम्। इति। ता० १२ अप्रैल सन् १८७८ ई०[3]।

ह: दयानन्द सरस्वती

---

[१]   पत्र (५१)   [७९]

स्वस्ति श्रीयुतानवद्यगुणालङ्कृतेभ्यः सनातनसत्यधर्म्मप्रियेभ्यः पाखण्डमतनिवृत्तचित्तेभ्योऽद्वैतेश्वरोपासनमिच्छुभ्यो बन्धुवर्गेभ्यो महाशयेभ्यः श्रीयुतहेनरी एस् ओलकाटाख्यप्रधानादिभ्यः श्रीमन्मेडम एच् पी विलावस्टक्याख्यमन्त्रिसहितेभ्यः थीयोसोफीकलसोसाईस्त्याख्यसभासद्भ्यो दयानन्दसरस्वतिस्वामिन आशिषो भवन्तुतमाम्॥

---

१. चैत्र कृष्ण १४ सोमवार सं० १९३४। यह पत्र मुलतान से भेजा गया। यु० मी०।

२. 'प्रसन्नता'—से ले कर 'चाहिये' तक भाग पं० लेखरामकृत जीवन चरित के पृ० ३७० पर छपा है। पं० लेखराम जी ने इस की प्रतिलिपि ही की होगी। मूल पत्र दानापुर समाज के संग्रह में अब भी सुरक्षित है। वहीं से लेकर हमने इसे छापा था।

३. चैत्र शु० १० शुक्रवार स० १९३५। यह पत्र मुलतान से भेजा गया। यु० मी०।

शमत्रास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमाशासे ॥

यच्छ्रीमद्भिः श्रीमन्महाशयमूलजीठाकरशीहरिश्चन्द्रचिन्तामणितुलसीरामयादवज्याभिधानानां द्वारा पत्रं मन्निकटे संप्रेषितं तद्दृष्ट्वाऽत्यन्त आनन्दो जातः ॥

अहो अनन्तधन्यवादार्हैकस्य सर्वशक्तिमतः सर्वत्रैकरसव्यापकस्य सच्चिदानन्दानन्ताखण्डाजनिर्विकाराविनाशन्यायदयाविज्ञानादिगुणाकरस्य सृष्टिस्थितिप्रलयमुख्यनिमित्तस्य सत्यगुणकर्म्मस्वभावस्य निर्भ्रमाखिलप्रियस्य जगदीश्वरस्य कृपया पञ्चसहस्रावधिसंवत्सरप्रमितव्यतीतात् कालान्महाभाग्योदयेनासमक्षव्यवहाराणामस्मत्प्रियाणां पातालदेशे निवसतां युष्माकमार्य्यावर्त्तनिवासिनामस्माकं च पुनः परस्परं प्रीत्युद्भवोपकारपत्रव्यवहारप्रश्नोत्तरकरणसमय आगतः । मया श्रीमद्भिः सहातिप्रेम्णा पत्रव्यवहारः कर्तुं स्वीक्रियते। अतः परं भवद्भिर्यथेष्टं पत्रप्रेषणं श्रीयुतमूलजी ठाकरश्याख्यहरिश्चन्द्रचिन्तामण्यादिद्वारा मन्निकटे कार्य्यम् । अहमपि तद्द्वारा श्रीमतां समीपे प्रत्युत्तरपत्रं प्रेषयिष्यामि । यावन्मम सामर्थ्यमस्ति तावदहं साहाय्यमपि दास्यामि । भवतां यादृशं कृश्चीनाख्यादिसंप्रदायेषु मतं वर्त्तते तत्र ममापि तादृशमेवास्ति । यथेश्वर एकोऽस्ति तथा सर्वैर्मनुष्यैरेकेनैव मतेन भवितव्यम् । तच्चैकेश्वरोपासनाकरणाज्ञापालनसर्वोपकारं सनातनवेदविद्याप्रतिपादितमाप्तविद्वत्सेवितं प्रत्यक्षादिप्रमाणसिद्धं सृष्टिक्रमाविरुद्धं न्यायपक्षपातरहितधर्म्मयुक्तमात्मप्रीतिकरं सर्वमताविरुद्धं सत्यभाषणादिलक्षणोज्ज्वलं सर्वेषां सुखदं सर्वमनुष्यैः सेवनीयं विज्ञेयम् ॥ अतो भिन्नानि यानि क्षुद्राशयछलाविद्यास्वार्थसाधनाधर्म्मयुक्तैर्मनुष्यैरीश्वरजन्ममृतकजीवनकुष्ठादिरोगनिवारणपर्वतोत्त्थापनचन्द्रखण्डकरणादिचरित्रसहितानि प्रचारितानि सन्ति तानि सर्वाण्यधर्म्ममयानि परस्परं विरोधोपयोगेन सर्वसुखनाशकत्वात् सकलदुःखोत्पादकानि सन्तीति निश्चयो मे । कदैवं परमेश्वरस्य कृपया मनुष्याणां प्रयत्नेनैषां नाशो भूत्वाऽऽर्य्यैः परम्परया सेवितमेकं सत्यधर्म्ममतं सर्वेषां मनुष्याणां मध्ये निश्चितं भविष्यतीति परमात्मानं प्रार्थयामि । यदा श्रीमतां पत्रमागतं तदाहं पञ्चालदेशमध्यवर्त्तिलवपुरे न्यवात्सम् ॥ अत्राप्यार्य्यसमाजस्था बहवो विद्वांसः श्रीमतां पत्रमवलोक्यातीवाऽऽनन्दिता जाताः । नाहं सततमेकस्मिन् स्थाने निवसामि तस्मात् पूर्वोक्तद्वारैव पत्रप्रेषणेन भद्रं भविष्यति॥ यद्यपि बहुकार्य्यवशान्ममावकाशो न विद्यते तथापि भवादृशानां सत्यधर्म्मवर्धने प्रवर्त्तितशरीरात्ममनसां सर्वप्रियकरणे कृतैकनिष्ठानां सत्यधर्म्मोन्नत्या सर्वमनुष्यप्रियस्य कर्तॄणां दृढोत्साहयुक्तानां श्रीमतामभीष्टकरणाय मयावश्यं समयो रक्षणीय इति निश्चित्य परोपकाराय भवन्तो मया सहाहं च श्रीमद्भिः सह सुखेन पत्रव्यवहारं कुर्य्यामित्यलमतिविस्तरलेखेन बुद्धिमद्वरेषु ॥

श्रीमन्महाराजविक्रमस्य पञ्चत्रिंशदुत्तरे एकोनविंशतितमे १९३५ संवत्सरे वैशाख-कृष्णपक्ष ५ पञ्चम्यामादित्यवासरे पत्रमिदं लिखितमिति वेदितव्यम् ॥[1]

(दयानन्द सरस्वती)

---

१. हैनरी एस. अल्काट ने अपना पहला पत्र १८ फरवरी सन् १८७८ को अमरीका से लिखा । उसी का उत्तर इस पत्र में है । २१ एप्रिल १८७८ । यह पत्र लाहौर से भेजा गया ।

[१] पत्र (९२) [८०]

मन्त्री और सभासद आनन्द रहो ![1]

प्रकट हो कि अब हम ११ जुलाई[2] सन् १८७८ बृहस्पतिवार को यहाँ से पूर्व की ओर प्रस्थान करेंगे, और जालन्धर, लुध्याना आदि नगरों में मिलते हुए आगे को चले जावेंगे। सम्भव है कि दो चार दिन के लिए अम्बाला ठहर जावें। अब हमारा और आप लोगों का मिलाप केवल पत्र द्वारा ही हो सकेगा। इसलिये आप सदा पत्र भेजते रहना, तथा हम भी भेजा करेंगे। अब आप को लिखते हैं कि प्रतिदिन समाज की उन्नति करते रहो क्योंकि यह बड़ा काम आप लोगों ने उठा लिया है, इसके परिणाम पर्य्यन्त पहुँचाने ही में सुख और लाभ है। यहाँ का समाज प्रतिदिन उन्नति पर है और कई प्रतिष्ठित पुरुष सभासद हो गये हैं। यहाँ के पण्डितों ने शास्त्रार्थ के लिये सलाह की थी, सो वे सभा में न तो कुछ बोले न कुछ बात का उत्तर दिया। केवल मुख दिखला कर चले गये। और यहाँ के लोगों ने जो कई पोपों की ओर थे, हाकिम से आर्य्यसमाज की चुगली खाई थी, जिसका परिणाम सत्य के प्रताप से यह हुआ कि अब कोई आर्य्यसमाज की ओर आँख उठा कर भी नहीं देखता। सब सभासदों को नमस्ते

२६ जून सन १८७८।[3]

दयानन्द सरस्वती अमृतसर।

---

[४] पत्र (९३) [८१]

ला० मोहनलाल प्रधान वा ला० साईंदास मन्त्री आनन्दित रहो।[4]

विदित हो कि परसों कई चिट्ठियां अमरीका की आई हैं। जिन में ६ चिट्ठियां पढ़ी गईं। एक दाखला, एक नमूना, एक डिप्लोमा है। इसलिये कि जितने समाजों में प्रधान मन्त्री आदि हैं सब की संख्या लिखी जावे। संख्या ४ की चिट्ठी आर्य्य लोगों के नाम है। जिस का विषय यह है कि आर्यसमाज थियासोफिकल सोसायटी के साथ लगाया गया। और इस का यह नाम स्थिर हुआ है कि "थियासोफिकल सोसायटी आफ आर्य समाज आफ दि इण्डिया"। और यहां यह नाम रखा जावे कि आर्यवर्तीय आर्य-समाज आफ थियासोफिकल सोसायटी और मुहर भी समाज की खुदवानी चाहिये। अच्छे होश्यार मन्त्री और प्रधान लिख कर डिप्लोमा में लिखना चाहिये। और सोसायटी के नियमादि भी आते हैं। और सब समाजों में पत्र लिख भेजो कि सब अच्छे २ बुद्धिमान् प्रधान और मन्त्री की संख्या लिख भेजें। और यदि कोई अङ्गरेजी वाला बाबू कमलनयन साहब अब के

---

१. यह पत्र आर्यसमाज गुजरांवाला के मन्त्री और सभासदों के नाम लिखा गया था। हमने इसे श्रीमान् पं० लेखराम जी रचित जीवन चरित्र पृष्ठ ३३४ से लिया है।

२. पूर्ण सं० ८१ तथा ८२ से पता चलता है कि श्री स्वामी जी महाराज १५ जुलाई तक अमृतसर में विद्यमान थे। यु० मी०।

३. आषाढ़ कृष्ण ११ बुधवार सं० १९३५। यु० मी०।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० २८५ पर उद्धृत।

शनि को आवें तो सब की नकल कर ले जावें। अभी हम १५ ता० तक और ठहरेंगे। और ला० मूलराज जी पर यह भी प्रकट हो कि दिन परीक्षा के निकट हैं। बहुत इस ओर ध्यान न दें। परीक्षा में यत्न करें। और ४ हजार[1] वर्ष के पश्चात् अमरीका से आज सम्बन्ध हुआ है इस को धन्य समझो। और धन्य है। और खूब यत्न करो। जिस से समाज में विघ्न हो उस को रखने से कुछ लाभ नहीं है।

९ जुलाई ७८ अमृतसर। आषाढ़ सुदी १० संवत् १९३५।

दयानन्द सरस्वती

---

[१]　　　　पत्र (५४)　　　　[८२]

श्री श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो[2]

विदित हो कि हमने सुना है कि आपका इरादा संस्कृत पढ़ाने के लिये इङ्गलैण्ड जाने का है सो यह विचार बहुत अच्छा है परन्तु आपको पहिले भी लिखा था और अब भी लिखते हैं कि जो हमारे पास रह कर वेद और शास्त्र के मुख्य २ विषय देख लेते तो अच्छा होता। अब आपको उचित है कि जब वहां जावें, जो आपने अध्ययन किया है उसी में वार्तालाप करें और कह देवें कि मैं कुल वेद शास्त्र नहीं पढ़ा, किन्तु मैं तो आर्य्यावर्त देश का एक छोटा विद्यार्थी हूँ, और कोई बात का काम ऐसा न हो कि जिससे अपने देश का ह्रास होवे, क्योंकि वे लोग संस्कृत पढ़ाने वाले की अत्यन्त इच्छा रखते हैं। इसलिये आपके पास सब तरह के पुरुष मिलने और बातचीत करने के कारण आवेंगे सो जो कुछ उन के मध्य में आप कहें, समझ कर कहवें, और इस चिट्ठी का उत्तर हमारे पास भेज देवें, और भी मोहन लाल विष्णुलाल पंडितजी को हमारा आशीर्वाद कह दीजिये, हम बहुत आनन्द में हैं।

हस्ताक्षर
१५ जुलाई १८७८[3]　　}　　दयानन्द सरस्वती
अमृतसर[3]

और पाद्री लोगों से भी बचे रहें और अमरीका की चिट्ठी का नागरी में तर्जमा करके भेजा करें। इससे काम जल्दी चलेगा और उनके पास आर्य्य समाज बम्बई और पंजाब के नियमोपनियम का अंग्रेजी में तर्जमा करके भेज दीजिये। जो कुछ आप बदलना मुनासिब समझें, बदल भी देवें और हम को इत्तला दे दें॥

---

१. यहां '५ हजार' चाहिये। देखो पूर्व मुद्रित पूर्ण संख्या ७६ का पत्र, पृष्ठ ६१। यु०मी०।

२. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के पास है।

३. श्रावण वदी १ सोम सं० १९३५। पं० लेखरामजी (पृ० ३२१) तथा उनका अनुसरण करने वाले पं० घासीराम जी (पृ० ४८०) ने ११ जुलाई तक ही अमृतसर में ठहरना लिखा है। इस पत्र से निश्चित होता है कि श्री स्वामी जी १५ जुलाई तक तो अमृतसर में ही थे।

[१४] ॥ विज्ञापनम्[1] ॥ [८३]

सबको विदित हो कि जो जो बातें वेदों की और उनके अनुकूल हैं उनको मैं मानता हूं विरुद्ध बातों को नहीं ॥ इससे जो जो मेरे बनाये सत्यार्थप्रकाश वा संस्कारविधि आदि ग्रंथों में गृह्यसूत्र वा मनुस्मृति आदि पुस्तकों के वचन बहुत से लिखे हैं ॥ वे उन उन ग्रंथों के मतों को जनाने के लिये लिखे हैं उनमें से वेदार्थ के अनुकूल का साक्षिवत् प्रमाण और विरुद्ध का अप्रमाण मानता हूँ जो जो बात वेदार्थ से निकलती हैं उन सब को प्रमाण करता हूं क्योंकि वेद ईश्वर वाक्य होने से सर्वथा मुझको मान्य है ॥ और जो जो ब्रह्माजी से लेकर जैमिनि मुनिपर्य्यंत महात्माओं के बनाये वेदार्थानुकूल ग्रंथ हैं, उनको भी मैं साक्षी के समान मानता हूं। और जो सत्यार्थप्रकाश के ४२ पृष्ठ और २५ पंक्ति में पित्रादिकों में से जो कोई जीता हो उसका तर्पण न करै और जितने मर गये हैं उनका तो अवश्य करे ॥ तथा पृष्ठ ४७ पंक्ति २१ मरे भये पित्रादिकों का तर्पण और श्राद्ध करता है इत्यादि तर्पण और श्राद्ध के विषय में जो छापा गया है सो लिखने और शोधने वालों की भूल से छप गया है। इस के स्थान में ऐसा समझना चाहिये कि जीवितों की श्रद्धा से सेवा करके नित्य तृप्त करते रहना यह पुत्रादि का परम धर्म है और जो जो मर गये हों उनका नहीं करना क्योंकि न तो कोई मनुष्य मरे हुए जीव के पास किसी पदार्थ को पहुँचा सकता और न मरा हुआ जीव पुत्रादि के दिये पदार्थों को ग्रहण कर सकता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि जीते पिता आदि की प्रीति से सेवा करने का नाम तर्पण और श्राद्ध है अन्य नहीं। इस विषय में वेदमंत्रादि का प्रमाण भूमिका के ११ अंक के पृष्ठ २५१ से लेके १२ अंक के २६७ पृष्ठ तक छपा है वहां देख लेना ॥

---

[१५] ॥ विज्ञापनम्[2] ॥ [८४]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि अब वेदभाष्य के दो दो अंक मुंबई में छपा करेंगे और सब ग्राहकों के पास बराबर प्रतिमास में पहुंचा करेंगे, मुंबई में हमारी ओर से रा० रा० बाबू हरिचन्द्र चिंतामणि जी इस काम में प्रधान ठहराये गये हैं, उनका ठिकाना कोट मुम्बई है ॥ और निम्नलिखित नाम ठिकाने पर मूल्य भेजने से सब पुस्तक मिल सकते हैं प्रयाग में पंडित सुन्दरलाल रामनारायण पोस्टमास्टर जनरेल्स आफिस ॥ लाहौर में लाला बल्लभदास बिहारीलाल मंत्री आर्य्यसमाज गली

---

१. यह विज्ञापन ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के अंक १ और २ के टाइटल के पृष्ठ पर छपा है। इस से यही विदित होता है कि ऋषि ने इसे सं० १९३५ मास श्रावण के प्रारम्भ में लिखा होगा। [यद्यपि विज्ञापन के अन्त में स्वामी जी के हस्ताक्षर नहीं हैं तथापि यह विज्ञापन उनकी ओर से ही है, यह इस विज्ञापन की प्रारम्भिक पंक्तियों से स्पष्ट है।]

२. यह विज्ञापन भी ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य अंक १ और २ के टाइटल के पृष्ठ पर छपा है। इससे यही विदित होता है कि ऋषि ने इसे सं० १९३५ मास श्रावण के प्रारम्भ में लिखा होगा। यद्यपि इस विज्ञापन पर भी स्वामी जी महाराज के हस्ताक्षर नहीं हैं तथापि इस विज्ञापन की दूसरी पंक्ति के 'हमारी ओर से' पदों से स्पष्ट है कि यह विज्ञापन स्वामी जी महाराज की ओर से ही दिया गया था। यु० मी०।

वच्छोवालियां ॥ अमृतसर में बाबू ज्ञानसिंह की दुकान पर हाल दरवाज़े क्रिश्चिन स्टोर के पास के ठिकाने ॥ और स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के पास पत्र और उसका मूल्य भेजने से वेदभाष्य और अन्य पुस्तकें भी स्वामी की बनाई मिलती हैं ॥ जो ग्राहक वर्ष के आरम्भ वा पहिले वेदभाष्य का वार्षिक मूल्य दे देगा, उसको प्रत्येक वेद के वर्त्तमान के ४) और गतवर्ष के ४।।) देना होगा, और जो पुराना ग्राहक है, रुपये प्रथम नहीं भेजेगा तो उसने गतवर्ष के ५) और वर्त्तमान वर्ष के ४) प्रत्येक वेदभाष्य पर देना होगा ॥ और जो नवीन ग्राहक होंगे, और प्रथम मूल्य देके पीछे पुस्तक लेंगे उनसे गतवर्ष के प्रत्येक वेद पर ४।।) साढे चार २ और वर्त्तमान वर्ष का ४) चार २ लिये जायंगे जो केवल भूमिका लेगा वह ५) देकर ले सकता है ॥ अब इस महीने से लेकर ऋग्वेद और यजुर्वेद के मन्त्रभाष्य प्रतिमास में छपा करेंगे ॥ जिन ग्राहक ने दाम नहीं भेजे हैं उनको उचित है कि वेदभाष्य का चंदा शीघ्र भेज देवें ॥

---

[९] पत्र (९९) [८९]

नं० २१६[1]

बाबू माधवलाल जी आनन्द रहो !

विदित हो कि चिट्ठी आपकी आई बहुत हर्ष हुआ । आप पाणिनीयाष्टाध्यायी भाष्य के ग्राहकों का सूचीपत्र बना कर भेज दीजिये, क्योंकि जो इस में खर्च होगा वह तो आप को ज्ञात ही होगा । १७०० ग्राहक[2] जब हो जायेंगे तब आरम्भ करेंगे । सब सभासदों को नमस्ते ॥

रुड़की जिले सहारनपुर २५ जुलाई ७८[3]

दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (९६) [८६]

स्वस्तिश्रीमद्वर्य्यगुणाढ्येभ्यः सर्वहितं चिकीर्षुभ्यो विद्वदाचारसहितेभ्य एकेश्वरोपासनातत्परेभ्यस्तेनोक्तवेदविद्याप्रीत्युत्पन्नेभ्यः प्रियवरेभ्यः पातालदेशनिवासिभ्योऽस्मद्बन्धुवर्गेभ्य आर्य्यसमाजैकसिद्धांतप्रकाशथियोसोफीकलाख्यसभापतिभ्यः श्रीयुतहेनरी एस औलकौटसंज्ञकप्रधानादिभ्यस्तत्रत्यसर्वसभासद्भ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भवन्तुतमाम् । अत्रत्यं शमीश्वरानुग्रहतो वर्त्तते तत्र भवदीयं च नित्यमाशासे ॥ मया श्रीमत्प्रेषितानि पत्राणि सर्वाण्यार्य्यसमाजप्रधानश्रीयुतहरिश्चन्द्रचिन्तामणिद्वारा प्राप्तानि तत्रत्यं वृत्तान्तं विदित्वा ममात्रत्यानामार्य्यसमाजप्रधानमन्त्रिसभासदां चात्यन्त आह्लादो जात इति । एतदुत्तमकार्यप्रवृत्तावीश्वराय सहस्रशो धन्यवादा देयाः । येनाद्वितीयेन सर्वशक्तिमताऽखिलजगत्स्वा-

१. इस ग्रन्थ में छपे हुए सब पत्रों में से यह पहला पत्र है जिस पर पत्र संख्या लिखी हुई है । यह संख्या कब से लिखी जानी आरम्भ हुई, इस का जानना अभीष्ट है । मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है ।

२. सम्भव है यहां १००० का लेखकप्रमाद से १७०० बन गया होगा । यु० मी० ।

३. श्रावण कृष्ण ११ बृहस्पतिवार सं० १९३५ । यु० मी० ।

मिना सर्वजगज्जनकधारकेण परमात्मना बहुकालात्पाखण्डमतदुष्टोपदेशभावितपरस्परावरोधान्धकारसहितमनसां भवदादीनामस्मदादीनां च भूगोलस्थानां सर्वेषां मनुष्याणामुपरि पूर्णकृपान्यायौ विधाय पुनस्तद्दुःखनिमित्तकपटारूढमतविच्छेदनाय स्वोक्तेषु सर्वसत्यविद्याकोशेषु वेदेषु प्रीतिरुत्पादिताऽतो वयं सर्वे भाग्यशालिनः स्म इति निश्चितं विज्ञाय सकृपाकटाक्षेणास्माकमिदं सर्वहितसम्पादि कृत्यं प्रतिक्षणमुन्नतं करिष्यतीति प्रार्थयामहे ।

१—यच्छ्रीमत्प्रेषितसभाप्रतिष्ठापत्रस्योपरि मया स्वहस्ताक्षराणि मुद्रितं च कृत्वा श्रीमतः प्रति पुनः प्रेषितं तद्भवन्तः सद्यः प्राप्स्यन्ति । यच्च श्रीमद्भिर्लिखितमार्य्यावर्त्तीयार्य्यसमाजशाखाथियोसोफीकलसुसायटीति नाम रचितं तदस्माभिरपि स्वीकृतमिति विजानीत ॥

२—सर्वैर्मनुष्यैर्यथेश्वरोपासना चतुर्वेदभूमिकायां प्रतिपादिता तथैवानुष्ठेयेति । तत्रोक्तस्यायं संक्षेपः । सर्वमनुष्यैः शुद्धदेशस्थितिं कृत्वात्ममनःप्राणेन्द्रियाणि समाधाय सगुणनिर्गुणविधानाभ्यामीश्वर उपासनीयः । एतस्या उपासनायास्त्रयोऽवयवाः । स्तुतिः प्रार्थनोपासना चेति । एतेषामेकैकस्य द्वौ द्वौ भेदौ स्तः । तत्र यया तदीयगुणकीर्त्तनेन सहेश्वरः स्तूयते सा सगुणा स्तुतिः ॥ तद्यथा—

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥

य० अ० ४० । मन्त्र ८॥

(स पर्य्यगात्) यः परितः सर्वतोऽगाद्व्याप्तवानस्ति (शुक्रम्) सद्यः सर्वजगत्कर्त्ताऽनन्तवीर्य्यवान् (शुद्धम्) न्यायसकलविद्यादिसत्यगुणसहितत्वात् पवित्रः (कविः) सर्वज्ञः (मनीषी) सर्वात्मनां साक्षी (परिभूः) सर्वतः सामर्थ्ययोगेन सर्वोपरि विराजमानः (स्वयम्भूः) सदा स्वसामर्थ्ययोगैकरसत्वाभ्यां वर्त्तमानः (शाश्वतीभ्यः, समाभ्यः) सर्वदैकरसवर्त्तमानाभ्यो जीवरूपाभ्यः प्रजाभ्यः (याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधात्) वेदोपदेशेन यथावदर्थानुपदिष्टवानस्ति । एवमादिना स सगुणरीत्या सर्वैः स्तोतव्यः । यत्र यत्र क्रियया सह सामानाधिकरण्येनेश्वरगुणा स्तूयन्ते सा सा सगुणा स्तुतिरिति मन्तव्यम् । अथ निर्गुणा—(अकायम्) अर्थाद्यो न कदाचिज्जन्मशरीरधारणेन साऽवयवो भवति (अव्रणम्) नाऽस्य कर्हिचिच्छेदो भवति (अपापविद्धम्) यो न कदाचित्पापकारित्वेनान्यायकारी भवति ॥

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते ॥१॥
न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते ॥२॥
नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते ॥३॥
तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव ॥४॥

अथर्व० कां० १३ । अनु० ४ । मं० १६ । १७ । १८ । २० ॥

अत्र नवभिर्नकारैर्द्वितीयत्वसंख्यावाच्यमारभ्य नवत्व[1]संख्यावाच्यपर्य्यन्तस्य भिन्नस्येश्वरस्य निषेधं कृत्वैकमेवेश्वरं वेदोऽवधारयति यथा । सर्वे पदार्थाः स्वगुणैः सगुणाः स्वविरुद्धगुणैर्निर्गुणाः सन्ति तथेश्वरोऽपि स्वगुणैः सगुणः स्वविरुद्धगुणैर्निर्गुणश्चेति । एवमादिना यया नेति निषेधसामानाधिकरण्येन सहेश्वरः स्तूयते सा निर्गुणा स्तुतिर्विज्ञेया ॥

---

१. अत्र 'नवत्व' स्थाने 'दशम' शब्दस्य पाठो युक्तः, मन्त्रे 'दशमो नाप्युच्यते' इति वचनात् । यु०मी० ।

॥ अथ प्रार्थना ॥

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ यजु० अ० ३२ । १४ ॥

हे अग्ने सर्वप्रकाशकेश्वर कृपया त्वं यां मेधां देवगणा विद्वत्समूहाः पितरो विज्ञानिनश्चोपासते स्वीकुर्वन्ति तया मेधया स्वाहया सत्यविद्यान्वितया भाषया चान्वितं मामद्य कुरु सम्पादय । येन मनुष्येण विद्याबुद्धिर्याचिता तेन सर्वशुभगुणसमूहो याचित इत्येवमादिसगुणरीत्या परं ब्रह्म प्रार्थनीयम् ।

अथ निर्गुणा—

मा नो वधीरिन्द्र मा परादा मा नः प्रिया भोजनानि प्रमोषीः ।
आण्डा मा नो मघवञ्छक्र निर्भेन्मा नः पात्रा भेत्सहजानुषाणि ॥१॥ ऋ० १।१०४।८।
मा नो महान्तमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षन्तमुत मा न उक्षितम् ।
मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः ॥२॥ ऋ० १।११४।७।
मा नस्तोके तनये मा न आयौ मा नो गोषु मानो अश्वेषु रीरिषः ।
वीरान्मा नो रुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ॥३॥ ऋ० १।११४।८॥

हे रुद्र दुष्टरोगदोषपापिजननिवारकेश्वर स्वकरुणया त्वं नोऽस्मान् मा वधीः । स्वस्वरूपानन्दविज्ञानप्रेमाज्ञापालनशुद्धस्वभावात् कदाचिद् दूरे मा प्रक्षिप त्वं च मा परादा दूरे मा तिष्ठ । नोऽस्माकं प्रियाणि भोजनान्यभीष्टान् भोगान् मा प्रमोषीः पृथङ् मा कुरु । हे शक्र सर्वशक्तिमँस्त्वं नोऽस्माकमाण्डा गर्भान् मा निर्भेद्धययुक्तान् मा कुरु । हे भगवन् नोऽस्माकं सहजानुषाणि सहजेनानुषङ्गीणि पात्राणि सुखसाधनानि मा निर्भेन्मा विदीर्णानि कुरु॥ १ ॥ हे रुद्र सर्वदुष्टकर्मशीलानां जीवानां तत्तत्फलदानेनरोदयितरीश्वर त्वं नोऽस्माकं महान्तं विद्यावयोवृद्धं जनं मा वधीर्मा हिंसय । उतापि नोऽस्माकमर्भकं क्षुद्रं जनं मा वधीर्मा वियोजय । हे भगवन् नोऽस्माकमुक्षन्तं विद्यावीर्यसेचनसमर्थं मा वधीः । उतापि नोऽस्माकमुक्षितं विद्यावीर्यसिक्तं जनं सद्गुणसम्पन्नं वस्त्वन्तरं वा मा वधीः । नोऽस्माकं पितरं पालयितारं जनकमध्यापकं वोत मातरं मान्यकर्त्रीं जनयित्रीं विद्यां वा मा रीरिषो मा विनाशय । नोऽस्माकं प्रियास्तन्वः सुखरूपलावण्यगुणसहितानि शरीराणि मा रीरिषो मा हिंसय ॥२॥ हे रुद्र सर्वरोगविदारकेश्वर त्वं कृपया नोऽस्माकं स्तोके ह्रस्वे तनये मा रीरिषः । नोऽस्माकमायौ मा रीरिषः । नोऽस्माकं गोषु पशुष्विन्द्रियेषु मा रीरिषः । नोऽस्माकमश्वेष्वग्न्यादिवेगवत्पदार्थेषु मा रीरिषः । त्वं भामितः पापानुष्ठानेनाऽस्माभिः क्रोधितो नोऽस्माकं वीरान् मा वधीः । हे रुद्र हविष्मन्तो वयं सदं ज्ञानस्वरूपं त्वामिदेव हवामहे गृह्णीम इत्येवमादिना निर्गुणरीत्या प्रार्थनीय इति ॥

॥ अथ सगुणोपासना ॥

न्यायकृपाज्ञानसर्वप्रकाशकत्वादिगुणैः सह वर्त्तमानं सर्वत्र व्याप्तमन्तर्यामिणं यथास्तुतं यथाप्रार्थितं परमेश्वरं निश्चित्य तत्रात्ममनइन्द्रियाणि स्थिरीकृत्य दृढा स्थितिस्तदाज्ञायां च सदा वर्त्तमानमिति सगुणोपासनम् ॥

॥ अथ निर्गुणोपासना ॥

सर्वक्लेशदोषनाशनिरोधजन्ममरणशीतोष्णक्षुत्तृट्शोकमोहमदमात्सर्य्यरूपरसगन्धस्पर्शादिरहितं परमेश्वरं ज्ञात्वा स सर्वज्ञतयाऽस्माकं सर्वाणि कर्माणि पश्यतीति भीत्वा सर्वथा पापाननुष्ठानमित्येवमादिना निर्गुणोपासना कार्या। एवं स्तुतिप्रार्थनोपासना भेदैस्त्रिधारूपां सगुणनिर्गुणलक्षणान्वितां मानसीं क्रियां कृत्वेश्वरोपासनं कार्य्यमिति ॥

३—अथार्य्यशब्दार्थः—यो विद्याशिक्षासर्वोपकारधर्म्माचरणसमन्वितत्वाज्जनैर्ज्ञातुं संगन्तुं प्राप्तुमर्हः स आर्य्यः। आर्य्यो ब्राह्मणकुमारयोः ॥ अ० ६। २। ५८ ॥ वेदेश्वरयोर्वेदितृत्वेन तदाज्ञानुष्ठातृत्वं ब्राह्मणत्वम्। अष्टमं वर्षमारभ्याष्टचत्वारिंशद्वर्षपर्य्यन्ते समये सुनियमजितेन्द्रियत्वविद्वत्संगसुविचारैर्वेदार्थश्रवणमननिदिध्यासनपुरःसरं सकलविद्याग्रहणाय ब्रह्मचर्यसेवनं पश्चादृतुकाले स्वस्त्र्यभिगमनं परस्त्रीत्यागश्च कुमारत्वमेतदर्थवाचिनोः परस्थितयोरेतयोः सामानाधिकरण्येन पूर्वस्थितस्यार्य्यशब्दस्य प्रकृतिस्वरत्वशासनादेतस्यैतदर्थवाचित्वं सिद्धमिति विज्ञेयम्।

विजानीह्यार्य्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान् ॥

ऋ० १। ५१। ८ ॥

वेदविद्भिर्वेदेष्वार्य्यशब्दार्थं दृष्ट्वोत्तमपुरुषाणामार्येति संज्ञा रचिता। यदा सृष्टिवेदौ प्रादुर्भूतौ तदा नाम रक्षणचिकीर्षाभूत्। पुनर्ऋषिभिः श्रेष्ठदुष्टयोर्द्वयोर्मनुष्यविभागयोर्वेदोक्तानुसारेण द्वे नाम्नी रचिते श्रेष्ठानामार्येति दुष्टानां दस्य्विति। अस्मिन् मन्त्रे मनुष्यायेश्वरेणाज्ञा दत्ता हे मनुष्य ! त्वं बर्हिष्मते उत्तमगुणकर्म्मस्वभावविज्ञानप्राप्तये श्रेष्ठगुणस्वभावकर्म्माचरणपरोपकारयुक्तान् विदुष आर्यान् विजानीहि। ये च तद्विरुद्धा दस्यवः सन्ति तानपि दुष्टगुणस्वभावकर्म्माचरणान् परहानिकरणतत्परान् दस्यूँश्च विजानीहि। एतान् सव्रतान्सत्याचरणादियुक्तानार्यान् रन्धय संसाधय विद्याशिक्षाभ्यां च शासत् शाधि। एवमव्रतान् सत्यानुष्ठानाद्विरुद्धाचरणान् रन्धय हिन्धि दण्डेन शासत् शाधि ताडय। अनेन स्पष्टं गम्यते आर्यस्वभावविरुद्धा दस्यवो दस्युस्वभावविरुद्धा आर्या इति ॥

यवं वृकेणाश्विना वपन्तेषं दुहन्ता मनुषाय दस्रा।
अभि दस्युं बकुरेणा धमन्तोरुज्योतिश्चक्रथुरार्याय ॥२॥

ऋ० १। ११७। २१ ॥

अश्विनावध्वर्यू दस्युं दुष्टं मनुष्यमभिधमन्तौ मनुषायार्यायोरु बहुविधं विद्याशिक्षासिद्धं ज्योतिश्चक्रथुः कुर्याताम्। अत्रापि मनुष्यनाम्नी आर्यदस्यू इति वेद्यम्। एते नाम्नी प्राङ्मनुष्यसृष्टिसमये किञ्चित्कालानन्तरं वेदाज्ञानुसारेण विद्वद्भी रचिते। हिमालयप्रान्त आद्या सृष्टिरभूत्। यदा तत्र मनुष्याणां वृद्ध्या महान् समुदायो बभूव तदा श्रेष्ठमनुष्याणामेकः पक्षोऽश्रेष्ठानां च द्वितीयो जातः। तत्र स्वभावभेदादेतयोर्विरोधो बभूव पुनर्य आर्यास्त एतद्देशमाजग्मुः पुनस्तत्संगेनास्या भूमेरार्य्यावर्त्तेति संज्ञा जाता। आर्य्याणामावर्त्तः समन्ताद्वर्त्तनं यस्मिन् स आर्य्यावर्त्तो देशः। तद्यथा—

सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्। तं देवनिर्मितं देशमार्य्यावर्त्तं प्रचक्षते ॥१॥

आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्। तयोरेवान्तरं गिर्य्योरार्य्यावर्त्तं विदुर्बुधाः ॥२॥

मनु० अ० २। श्लो० १७। २२ ॥

देवनद्योर्देवानां विदुषां संगसहितयोः सरस्वतीदृषद्वत्योर्या पश्चिमप्रान्ते वर्त्तमानोत्तरदेशाद्दक्षिण-देशस्थं सागरमभिगच्छन्ती सिन्धुनद्यस्ति तस्याः सरस्वतीति संज्ञा। या प्राक् प्रान्तवर्त्तमानोत्तरदेशाद्दक्षिणदेशस्थितं समुद्रमभिगच्छन्ती ब्रह्मपुत्रनाम्ना प्रसिद्धा नद्यस्ति तस्या दृषद्वतीति संज्ञा एतयोर्मध्ये वर्त्तमानं देवैर्विद्वद्भिरार्य्यैर्मर्य्यादीकृतं देशमार्य्यावर्त्तं विजानीत ॥ १ ॥ तथा च यः पूर्वसमुद्रं मर्य्यादीकृत्य पश्चिमसमुद्रपर्य्यन्ते विद्यमानो हिमालयविन्ध्याचलयोरुत्तरदक्षिणप्रान्तस्थितयोर्मध्ये देशोऽस्ति तमार्य्यावर्त्तं बुधा विदुः। आर्य्याणां समाजो या सभा स आर्य्यसमाजः। दस्युभावत्यागायार्य्यगुणग्रहणाय च या सभा साप्यार्य्यसमाजसंज्ञां लभते। अतः किमागतं सर्वासां शिष्टसभानामार्य्यसमाजनामरक्षणं परमं भूषणमस्ति। नात्र काचित् क्षतिरिति विजानीमः॥

॥ ४ ॥ स्वयं सत्यशिक्षाविद्यान्यायपुरुषार्थसौजन्यपरोपकाराद्याचरणे वर्त्तेत तत्रैव प्रयत्नतो बन्धुजनानपि वर्त्तयेत्। इति संक्षेपत उत्तरम्। एतस्य विस्तरविज्ञानन्तु खलु वेदादिशास्त्राध्ययनश्रवणाभ्यामेव वेदितुं योग्यमस्ति। ये च मया वेदभाष्यसन्ध्योपासनार्य्याभिविनयवेदविरुद्धमतखण्डनवेदान्तिध्वान्तनिवारणसत्यार्थप्रकाशसंस्कारविध्यार्य्योद्देश्यरत्नमालाद्याख्या ग्रन्था निर्मितास्तद्दर्शनेनापि वेदोद्देश्यविज्ञानं भवितुमर्हतीति विजानीत॥

॥ ५ ॥ यच्चेतनवत्त्वं तज्जीवत्वम्। जीवस्तु खलु चेतनस्वभावः। अस्येच्छादयो धर्म्मास्तु निराकारोऽविनाश्यनादिश्च वर्त्तते। नायं कदाचिदुत्पन्नो न विनश्यति। एतस्य विचारो वेदेष्वार्य्यकृतग्रन्थेषु च बहुभिर्हेतुभिः कृतोऽस्ति। अत्र खलु विस्तरलेखावकाशाभावात् स्वल्पं प्रकाश्यते।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳसमाः ॥ यजु० अ० ४०। मं० २।

कुर्वन्नेवेह कर्म्माणीति जीवस्य शतवर्षपर्य्यन्तं प्रयत्नकरणं धर्म्मः। जिजीविषेत् जीवितुमिच्छेदितीच्छाधर्म्मः॥

सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु।

दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥१॥

यजुः अ० ६ ।२२॥

सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्त्विति सुखेच्छाकरणात् सुखं धर्म्मः। दुर्मित्रियास्तस्मै सन्त्विति दुःखत्यागेच्छाकरणाद् दुःखं धर्म्मः। योस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्म इति द्वेषो धर्म्मः। वेदाहमेतं पुरुषम्। यजुः अ० ३१। मं० १८। इति ज्ञानं धर्म्मः। जीवश्चेतनस्वरूपत्वाद्यद्यदनुकूलं तत्तत्सुखमिति विदित्वा सदेच्छति। यद्यत् प्रतिकूलं तत्तद् दुःखमिति ज्ञात्वा सदा द्वेष्टि सुखप्राप्तये दुःखहानये च सदा प्रयतते। एतदन्तर्गताः सूक्ष्मा बहवोऽन्येऽपि जीवस्य धर्म्माः सन्तीति वेद्यम्। इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिंगमिति॥ न्याय० अ० १। सू० १०। जीवस्यैतानि लिंगानि धर्म्मलक्षणानि सन्तीति ज्ञातव्यम्। प्राणापाननिमेषोन्मेषजीवनमनोगतीन्द्रियान्तरविकाराः सुखदुःखेच्छाद्वेषप्रयत्नाश्चात्मनो लिङ्गानि—वैशेषिक० अ० ३ आ० २ सू० ४। कोष्ठ्यस्य वायोर्निस्सारणं प्राणः। बाह्यस्य वायोराचमनमपानः। नेत्रस्यावरणं निमेषः। तदुद्घाटनमुन्मेषः। जीवनं प्राणधारणम्। मनो ज्ञानम्। गतिरुत्क्षेपणाद्यनुष्ठानम्। इन्द्रियान्तरविकाराः इन्द्रियसंयोजनं कस्माच्चिद्विषयान्निवर्तनम्। अन्तर्हृदये व्यापारकरणम्। विकाराः क्षुत्तृड्ज्वरादिरोगादयः। धर्म्मानुष्ठानमधर्म्मानुष्ठानं च।

संख्याजात्यभिप्रायेणैकत्वं व्यक्त्यभिप्रायेण बहुत्वम् । पूर्वानुभूतस्य ज्ञानमध्येऽङ्कनं संस्कारः । परिमाणं परमसूक्ष्मत्वम् । पृथक्त्वमस्यान्योऽन्यं भेदः । संयोगो मेलनम् । वियोगः संयुज्य पृथग्भवनं वियोगत्वमिति च जीवधर्म्माः । मानसोऽग्निर्जीव इति महाभारतस्य मोक्षधर्म्मान्तर्गते भरद्वाजोक्तौ वर्त्तते । अस्यायमर्थः । यो मनस्यन्तःकरणे भव इच्छादिज्ञानान्तसमूहप्रकाशसमवेतः पदार्थोऽस्ति तस्य जीवसंज्ञेति बोध्यम् । अयं खलु देहेन्द्रियप्राणान्तःकरणाद्भिन्नश्चेतनोऽस्ति । कुतः । अनेकार्थानां युगपत् संधातृत्वात् । तद्यथा । अहं यच्छ्रोत्रेणाश्रौषं तच्चक्षुषा पश्यामि । यच्चक्षुषाऽद्राक्षं तद्धस्तेन स्पृशामि । यद्धस्तेनास्प्राक्षं तद्रसनया स्वदे । यद्रसनयाऽस्वदिषि तद्घ्राणेन जिघ्रामि । यद्घ्राणेनाघ्रासिषं तन्मनसा विजानामि । यन्मनसाऽज्ञासिषं तच्चित्तेन स्मरामि यच्चित्तेनास्मार्षं तद्बुध्या निश्चिनोमि । यद्बुध्या निरचैषं तदहङ्कारेणाभिमन्य इत्यादिप्रत्यभिज्ञया सह वर्तमानं यदस्ति तदात्मस्वरूपः सर्वेभ्यः पृथगस्तीति वेदितव्यम् । कुतः । यः स्वस्वविषये वर्त्तमानैरन्यविषयाद्भिन्नवर्त्मभिः श्रोत्रादिभिः पृथक् पृथग्गृहीतानां शब्दार्थानां वर्त्तमानसमये सन्धातास्ति स एव जीवोस्त्यतः । नह्यन्यदृष्टस्यान्यः स्मरति नहि श्रोत्रस्य स्पर्शग्रहणे साधकत्वमस्ति न च त्वच शब्दग्रहणे परन्तु श्रोत्रेण श्रुतो घटस्तमेवाहं हस्तेन स्पृशामीति यस्य पूर्वकालदृष्टस्यानुसंधानेन पुनस्तस्यैवार्थस्य प्रत्यभिज्ञया वर्त्तमाने दर्शनमस्ति स उभयदर्शिनः सर्वसाधनाभिव्यापकस्य सर्वाधिष्ठातुर्ज्ञानस्वरूपस्य जीवस्यैव धर्म्म उपपद्यत इति मन्तव्यम् । एवमादिप्रकारेण बहूनामार्य्याणां वेदशास्त्रबोधसमाधियोगविचाराभ्यां जीवस्वरूपज्ञानं बभूव भवति भविष्यति वेति यदायं शरीरं त्यजति तदा मरणं जातमित्याचक्षते, नहि खलु तस्य देहाभिमानिनो जीवस्य वियोगाद्विना मरणं सम्भवति । शरीरं त्यक्त्वायं खल्वाकाशस्थः सन्नीश्वरव्यवस्थया स्वकृतपापपुण्यानुसारेण शरीरान्तरं प्राप्नोति । यावत्पूर्वं शरीरन्त्यक्त्वाऽऽकाशे गर्भवासे बालाज्ञावस्थायां वा तिष्ठति न तावदस्य किञ्चिद्विशेषविज्ञानमुपपद्यते । किन्तु यथा निद्रामूर्च्छाङ्गतो जीवो वर्त्तते तथा तत्रास्य गतिरिति। यच्चेतस्य वार्त्ताकरणे कपाटताडने परशरीरावेशे सामर्थ्यं वर्त्तते तर्हि स कथं न पुनः प्रियं स्थानं धनं शरीरं वस्त्रभोजनादिकं प्रियान् स्त्रीपुत्रपितृबन्धुमित्रभृत्यपशुयानादीन् प्राप्नोति । यद्यत्र कश्चिद् ब्रूयाद्यदा सम्यग्ध्यानं कृत्वा तमाह्वयेत् । तर्हि तत्समीपमागच्छेत् । अत्र ब्रूमः । यदा कस्यचित्कश्चित्प्रियो म्रियते तदा स तस्य प्राप्त्यर्थमहर्निशं सम्यग्ध्यानं करोति पुनः स कथं नागच्छति । यदि कश्चिद् ब्रूयात्पूर्वसम्बन्धिनः प्रति नागच्छत्यन्यान् प्रत्यभ्यागच्छतीति । नैतदुपपद्यते । कुतः । पूर्वसम्बन्धिनः प्रति प्रीतेर्विद्यमानत्वेनासम्बन्धिषु प्रीतेरदर्शनात् । नेदमनधिष्ठातृकं स्वतन्त्रं जगत्सम्भवति । सर्वस्यास्याधीशस्य न्यायकारिणः सर्वज्ञस्य सर्वेभ्यो जीवेभ्यो पापपुण्यानां फलप्रदातुरीश्वरस्य जागरूकत्वात् । अतः श्रीमद्भिर्यो मृतकस्य प्रतिबिम्बो मत्समीपे प्रेषितः तत्र कापट्यधूर्त्तत्वव्यवहारो निश्चीयत इति । यथेन्द्रजाली चातुर्येणाश्चर्यान् विपरीतान् व्यवहारान् सत्यानिव दर्शयति तथाऽयमस्तीति प्रतीयते यथा कश्चित्सूर्य्यचन्द्रप्रकाशे स्वच्छायायां कण्ठशिरस उपरि निमेषोन्मेषवर्जितां स्थिरां दृष्टिं कृत्वा किञ्चित्कालानन्तरं शुद्धमाकाशं प्रत्यूर्ध्वं पुनरेवमेव निमेषोन्मेषवर्जितां दृष्टिं कुर्य्यात् स स्वस्माद्भिन्नां स्वच्छायाप्रतिबिम्बरूपां महतीं मूर्तिं पश्यति तथैवाऽयं व्यवहारो भवितुमर्हति। संस्कृतविद्यायां भूतशब्देन यः कश्चित्सशरीरः प्राणी वर्त्तित्वा न भवेत्तस्य ग्रहणमस्ति । यस्तु खलु निर्जीवो देहः समक्षे वर्त्तते यावद्यस्य दाहादिकं न क्रियते तावत्तस्य प्रेत इति संज्ञा । ईश्वरेण समः कश्चिन्न भूतो न भविष्यतीत्याप्तवाक्यम् ।

गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृमेधं समाचरन्। प्रेतहारैः समं तत्र दशरात्रेण शुध्यति ॥

मनु० अ० ५ श्लो० ६५ ॥

अत्र भूतशब्देन भूतस्थस्य ग्रहणम्। "प्रेतस्य" "प्रेतहारै" रेताभ्यां पदाभ्यां मृतकशरीरस्य प्रेत इति नाम। यथा पितृमेधं समाचरन्निति पदेन मृतकस्य पितृशरीरस्य दाहवद् गुरोर्मृतकशरीरस्य दाहकरणं पितृमेधसंज्ञां लभते तथा मृतकानां शरीराणां विधिवद्दाहकरणं नृमेध इति विज्ञेयम्। इदं प्रसंगादुक्तम्। यथा भूतप्रेतेष्विदानींतनानामभिप्रायोस्ति तथेदं नैव सम्भवति। कुतः। समूलतोऽस्य मिथ्यात्वेन भ्रान्तिरूपत्वात्। नात्र कश्चित्सन्देह इदमस्ति नास्ति वेति किन्तु सर्वमिदं कपटजालमिति विजानीमः। अत्रालमतिविस्तरेणैतावतैवाधिकं भवद्भिर्विज्ञेयमिति ॥

॥ ७ ॥ भवन्तो यां शिक्षां मत्तो ग्रहीतुमिच्छन्ति सा परमार्थव्यवहारविषयभेदेनातिविस्तीर्णास्ति। पत्रद्वारा लिखितुमशक्या। सा संक्षेपतो मद्रचितेषु ग्रन्थेषु लिखितास्ति। विस्तरशस्तु वेदादिशास्त्रेषु। परन्त्वेतदुत्तरदानाय मया श्रीयुतहरिश्चन्द्रचिन्तामणीन् प्रति लिखितं मद्रचितस्य स्वल्पस्यार्य्योद्देश्यरत्नमालाग्रन्थस्यैंगलण्डभाषया विवरणं कृत्वा भवतां समीपे सद्यः प्रेषयन्त्विति ते तत्र शीघ्रं प्रेषयिष्यन्तीति बुध्यध्वम्। तद्दर्शनेन श्रीमतामुद्देशतो मदुपदेशशिक्षा भविष्यति ॥

॥ ८ ॥ वेदोक्तानुसारेण वक्ष्यमाणरीत्या मृतकक्रिया कर्त्तव्या। तद्यथा। सेयं संस्कारविधिग्रन्थे विस्तरशः प्रतिपादिता तथाप्यत्र संक्षेपतो लिख्यते। यदा कश्चिन्मनुष्यो म्रियेत तदा मृतकं शरीरं सम्यक् स्नपयित्वोत्तमसुरभिणाऽनुलेप्य सुगन्धियुक्तैर्नवीनैः शुद्धैर्वस्त्रैराच्छाद्य मलिनानि वस्त्राणि पृथक् कृत्वा श्मशानभूमिं नीत्वा तत्र यावानूर्ध्वबाहुकः पुरुषस्तावद्दीर्घां पार्श्वतो व्यायाममात्रविस्तीर्णामूरुदघ्नीं गम्भीरां वितस्तिमात्रीमधस्तादेतत्परिमाणां वेदिं रचयित्वा जलेनाभ्युक्ष्य शरीरभारसमं घृतं वस्त्रपूतं कृत्वा तत्र प्रतिप्रस्थमेकैकरक्तिकापरिमाणां कस्तूरीमेकमाषपरिमाणं केशरं च संपेष्य यथावन्मेलयेत्। चन्दनपलाशाम्रादिकाष्ठानि गृहीत्वा वेदिगर्त्तपरिमाणेनैतेषां खण्डान् कृत्वाऽधस्तादर्धवेदिं पूरयित्वा तदुपरि मध्यतो मृतकं देहं संस्थाप्य कर्पूरगुग्गुलुचन्दनादिचूर्णान् मृतकदेहाभितो विकीर्य्य पुनस्तैरेव काष्ठैस्तटत ऊर्ध्वं वितस्तिमात्रीं वेदिं संचित्य तन्मध्येऽग्निस्थापनं कुर्य्यात्। तद्घृतं स्वल्पं स्वल्पं गृहीत्वा यजुर्वेदस्यैकोनचत्वारिंशाध्यायस्थं प्रतिमन्त्रमुच्चार्य्याभितो दाहयेत्। पुनर्यदा भस्मीभूतं शरीरं भवेत्तदा ततो निवर्त्य जलाशयं स्वं स्वं गृहं वा प्राप्य स्नानादिकं कृत्वा निःशोका संतो यथायोग्यं स्वानि स्वानि कार्याणि कुर्य्युः। पुनर्यदा दाहदिवसात्तृतीये दिवसे सर्वं शीतलं भवेत् तदा तत्र गत्वा सास्थि सर्वं भस्म गृहीत्वा स्थानान्तरे शुद्धदेशे गर्त्तं खनित्वा तत्र तत्सर्वं संस्थाप्य खनितगर्त्तं मृदाऽऽच्छादयेत्। एतावानेव वेदोक्तसनातनोत्तमतमो मृतकसंस्कारोऽस्ति नातोधिको न्यूनश्चेति। एवमेव यानि स्वमित्रशरीरास्थीनि भवतः समीपे स्थितानि संति तान्यपि क्वचिच्छुद्धभूमौ गर्तं खनित्वा तत्र स्थापयित्वा मृदाच्छादनीयानीति ॥

॥ ९ ॥ पत्रद्वयमिङ्गलण्डाख्यदेशे यथालिखितस्थाने प्रेषितम्।

॥ १० ॥ यदा युष्माकं निश्चयः स्यात्तदा सभानामविपर्य्यासः कार्य्यः। विदुषां सभाया अयं नियमोस्ति यत् किञ्चिन्नूतनं कार्य्यं कर्त्तव्यं तत्सर्वमुत्तमान् विदुषः सभासदः प्रति निवेद्य तदनुमत्या कार्य्यमिति यद्यत्सर्वोपकारविरुद्धं सभाकृत्यं तत्तन्नैव कदाचिदाचरणीयम्। यद्यत्तु खलु परिणामानन्दफलं तत्तदचिरादेव पुरुषार्थेन समयं प्राप्य कर्त्तव्यम्। तस्माद्यदावसर आगच्छेत्तदा तत्रत्यसभाया आर्य्यसमाजेति नामरक्षणे न काचित्क्षतिरस्तीति मतं मे ॥

॥ ११ ॥ अत ऊर्ध्वं श्रीमन्तो यद्यत्पत्रं मत्समीपे प्रेषयेयुस्तत्तन्मन्नामांकितं प्रेषणीयम्। परन्तु पूर्वलिखितेन श्रीयुतहरिश्चन्द्रचिन्तामण्यादिद्वारैव प्रेषणीयम्। तत्रायं क्रमः। पत्रोपरि मन्नाम पत्रावरणपृष्ठोपरि श्रीयुतहरिश्चन्द्रचिन्तामणीनां नाम लिखित्वा प्रेषणीयम्। सच्चिदानन्दादिलक्षणाय सर्वशक्तिमते दयासागराय सर्वस्य न्यायाधीशाय परब्रह्मणेऽसङ्ख्याता धन्यवादा वाच्याः। यत्कृपया भवद्भिः सहाऽस्माकमस्माभिः सह भवतां च संप्रीत्युपकारसमयः प्राप्तः। एतममूल्यं समयं प्राप्य यूयं वयं चैवं प्रयतामहे यतो भूगोलमध्ये मनुष्याणां पाषण्डमतपापाचरणाविद्यादुराग्रहादिदोषनिवारणेनैकं सनातनं वेदप्रमाणसृष्टिक्रमानुकूलं सत्यं मतं प्रवर्त्तेतेति। पत्रद्वाराऽतीवस्वल्पं कार्य्यं सिध्यति। यावत्समक्षे परस्परं वार्त्ता न भवन्ति न तावत्समस्तो लाभो जायते। परन्तु यस्येश्वरस्यानुग्रहेण पत्रद्वारा वार्त्ताः प्रवृत्ताः सन्ति तस्यैव कृपया भवतामस्माकं च कदाचित्समक्षेऽपि समागमो भविष्यतीत्याशासे किं बहुना लेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु॥

भूतकालाङ्कचन्द्रेऽब्दे नभोमासासिते दले।
शुक्रे रुद्रतिथौ सम्यक् पत्रपूर्तिः कृता मया॥ १॥

संवत् १९३५ श्रावणवदी ११ शुक्रवासरे[1] पत्रमिदमलङ्कृतमिति विज्ञेयम्॥

(दयानन्दसरस्वती)

---

[१] पत्र (८७) [८७]

बाबू दयाराम आनन्द रहो।[2]

अमरीकन चिट्ठी की नकल कराकर रवाना करेंगे। और यह भी आप को विदित होगा कि अमरीका थियोसोफिकल सोसायटी आर्यसमाज की शाखा बन गई और अमरीका वाले बराबर वेद को मानते हैं और उस की शिक्षा के इच्छुक [हैं] और हम बहुत राजी खुशी हैं।

२७ जुलाई ७८ — दयानन्द सरस्वती
श्रावण वदी १२ [शनि] संवत् १९३५ — रुड़की

---

[१] २९९[3] पत्र (८८) [८८]

ला० मूलराजजी एम. ए. आनन्द से रहो।[4]

विदित हो कि कल आप के पास एक पारसल अमरीका की चिट्ठियों का भी पहुँचा होगा। सो उन में से डिप्लोमा और छपी हुई चिट्ठी जो उन के साथ है, सो हमारे पास भेज दीजिये। और

---

१. २६ जुलाई १८७८। [शुक्रवार २६ जुलाई को द्वादशी थी]।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३२ पर उद्धृत।

३. यह संख्या हमने ला० मूलराज को लिखे गए अगले पत्र [पूर्ण संख्या ९०] की पंक्ति दो से ली है।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३२ पर उद्धृत।

लाहौर में अथवा ट्रिब्यून में शीघ्र छपवा दीजिये, क्योंकि इन की बहुत आवश्यकता है, और सब स्थानों से उनकी मांग आती है। इस लिए २०० कापी शीघ्र छपवा दीजिए। डिप्लोमा और छपी चिट्ठी जो असल है, वह हमारे पास भेजें। और जो नकल करके भेजी गई है सो छपने के लिये प्रेस में दीजिये। यहाँ पर व्याख्यान नित्य होते हैं। और लोगों के विचार बहुत अच्छे हैं। हम बहुत आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते।

५ अगस्त ७८ रुड़की[1] दयानन्द सरस्वती

———

[१] नं २५८ पत्र (५९) [८९]

ठाकुर भूपालसिंहजी आनन्द रहो।[2]

विदित हो कि ठाकुर रणजीतसिंहजी ने रुपया हमारे पास भेज दिया है। परन्तु ठाकुर मुकुन्दसिंह ने अब तक रुपया नहीं [भेजा] और पहले यहां उनकी दो तीन चिट्ठियां इस विषय की आईं कि रुपया हमारे पास मौजूद और तय्यार रक्खा है कहां भेज देवें। सो उनको कई बार लिख चुके कि हमारे पास भेजो। अब वे फिर चुप हो बैठे। इसका कारण ही मालूम नहीं होता कि क्या भेद है। और रुपये की हमको बहुत जरूरत है। इस लिए एक बार लिखा जाता है कि उन से फर्रुखाबाद शहर की हुँडी बनवा कर यहां हमारे पास भिजवादो। ताकीद जानो। और हम बहुत आनन्द में हैं।

रुड़की जि० सहारनपुर
६ अग० १८७८[3]

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

———

[२] पत्र (६०) [९०]

ला० मूलराज एम० ए० आनन्द रहो।[4]

विदित हो कि इससे पहले एक चिट्ठी सं० २५५ लिखी ५ अगस्त की आप के पास भेजी गई

---

१. श्रावण शु० ७ सोमवार सं० १९३५। यु० मी०।

२. प्रसिद्ध कविवर पं० नाथूरामशङ्कर शर्मा जी हरदुआगंज, [अलीगढ़] निवासी को यह पत्र किसी रद्दी में से मिला था। पत्रों का अन्वेषण करते हुए ला० मामराज सितम्बर सन् १९२८ को पं० जी के घर पहुँचे थे। वहीं कवि जी ने बहुत आग्रह पर यह पत्र उन को दिया था।

मूल पत्र अब हमारे संग्रह में संख्या ७ पर सुरक्षित है।

ठाकुर भूपालसिंह ग्राम ऐख (जिला अलीगढ़) के रहने वाले ऋषि के अनन्य भक्त थे। ऋषि के अन्तिम दिनों में इन्होंने ही बड़ी श्रद्धा भक्ति से उनकी सेवा की थी।

उनके पौते चौ० मित्रसेन से ला० मामराज सितम्बर सन् १९२८ को मिले थे। उन के कागज़ों के खोजने पर रामानन्द ब्र० के कितने ही पत्र मिले थे, परन्तु ऋषि का कोई पत्र नहीं मिला।

३. श्रावण शु० ८ मंगलवार सं० १९३५। यु० मी०।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३२ पर उद्धृत।

है। सो पहुँची होगी। और अब फिर लिखते हैं। आप के पास जो चिट्ठी भेजी गई है सो उन में से दो असली छपी हुई चिट्ठियां और डिप्लोमा बहुत शीघ्र हमारे पास भेज दो। क्योंकि उनकी नकल बाबू कमलनयन जी कर ले गये थे। वह समाज में विद्यमान है। और आधा खर्च छपाई का आप के ऊपर रहेगा। और आधा रुड़की निवासी पण्डित उमरावसिंह वा शङ्कर लाल आदि देवेंगे। परन्तु लाहौर प्रेस वा ट्रिब्यून प्रेस जहां छपवाने की इच्छा हो शीघ्र छपवा दीजिए क्योंकि २८ ता० को यहां पर टामसन कालेज की परीक्षा गवर्मिण्ट लेवेगी। फिर दो मास की छुट्टी में सब अपने २ घर चले जावेंगे। कभी तीसरे मास में आवेंगे। जो पास या फेल हो जावेंगे। इस लिए आप को लिखा जाता है कि २८ ता० से पहले छपवा लीजिए।

९ अगस्त ७८[1] दयानन्द सरस्वती

रुड़की

———

[६] पत्र (६१) [९१]

बाबू माधोलालजी आनन्द रहो![2]

विदित हो कि आप को इस बात का विज्ञापन दिया जाता है कि बहुत से मनुष्य हमारे नाम से आप को लूटते फिरते हैं और कहते हैं कि हमको स्वामीजी ने भेजा है, सो हमने अब तक किसी को व्याख्यान के लिए नियुक्त नहीं किया और जब नियत करेंगे तो सब समाजों में अपनी मोहर करके चिट्ठी भेज देवेंगे और एक नकल उसी चिट्ठी की मोहर करके उस मनुष्य को देदी जावेगी॥ कभी ऐसे मनुष्य के धोखे में न आना॥ और ग्राहक अष्टाध्यायी के भेज दो क्योंकि अब तैयार होने लगी है॥

९ अगस्त[3]

७८

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
रुड़की जि० सरारनपुर

———

[१] पत्र (६२) [९२]

जनाब मौलवी मुहम्मद कासिम अली साहिब![4]

आपकी खिदमत शरीफ में बजा (वाजिह) हो कि कल बवक्त शाम ६ बजे के रजिस्ट्री चिट्ठी आप की मेरे पास पहुँची। उस चिट्ठी पर आपके दस्तखत न थे इस वास्ते आप को तकलीफ दी

---

१. श्रावण शु० १२ शुक्रवार सं० १९३५। यु० मी।

२. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के पास सुरक्षित है।

३. श्रावण शु० १२ शुक्रवार, सं० १९३५। यु० मी०।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ७३६ से उद्धृत।

जाती है कि मुन्शी चिट्ठी लेकर आप की खिदमत में पहुँचता है। आप इस पर दस्तखत साबत कर देवें। क्योंकि इश्तिहार और लिफाफे पर तो आप के दस्तखत मौजूद थे मगर सिर्फ चिट्ठी पर न थे, लिहाजा अर्ज़ है कि बराय इनायत दस्तखत चिट्ठी मज़कूर पर कर देंवे। ताकि हम भी अपने दस्तखत कर के चिट्ठी बराय डाक रजिस्ट्री आप के पास रवाना कर देवें। ज्यादा खैरियत।

रुड़की जिला सहारनपुर। १० अगस्त सन् १८७८।[1]

दयानन्द सरस्वती

---

[७] पत्र (६३) [९३]

नं० ३०२

बाबू माधोलालजी आनन्द रहो ![2]

विदित हो कि चिट्ठी आप की आई एक नोट १०) के और २८) के टिकट पाये सो आप के लेखानुसार

४.	सत्यार्थप्रकाश	१०)
३.	पं० महायज्ञविधि	१)॥
१.	आर्य्याभिविनय	॥)
		११॥)॥
	डाक महसूल	॥)

भेजते हैं सो जब आप के पास पहुँच लेवें रसीद भेज दीजिये और आर्य्यसमाज की उन्नति करते रहो॥

अष्टाध्यायी की वृत्ति बनने का आरम्भ हो गया है।

यहाँ पर सब प्रकार से कुशल है और हम आनन्द में हैं।

रुड़की ज़िले सहारनपुर हस्ताक्षर
१५ अगस्त ७८[3] दयानन्द सरस्वती

---

[३] पत्र (६४) [९४]

ला० मूलराज जी एम० ए० आनन्द रहो।[4]

विदित हो कि चिट्ठी आप की लिखी हुई १४ अगस्त को पहुंची। और एक पारसल डिसोमा और दो छपी हुई चिट्ठियों से युक्त पहुंचा। आप को चाहिये कि इन चिट्ठियों के छापने में जो कुछ

---

१. श्रावण शु० १३ शनिवार, सं० १९३५। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित हैं।

३. भाद्र कृष्ण २, बृहस्पतिवार, सं० १९३५। यु० मी०।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३२, ८३३ पर उद्धृत।

खर्च हुआ है सो लिख भेजें। क्योंकि खर्च रुड़की वाले देवेंगे। और आशा है कि यहां पर आर्य्यसमाज अवश्य बन जावेगा।

१७ अगस्त ७८[1]

रुड़की

[?] पत्र (६५) [२५]

[मन्त्री आर्यसमाज मुलतान][2]

रुड़की में व्याख्यान नित्य होते हैं। दृढ़ आशा है कि आर्यसमाज अवश्य बन जावेगा। मौलवी महम्मद कासम भी हम से मुबाहिसा करने के लिये आया है और १८ ता० निश्चित है। सो अभी कुछ ठीक २ नहीं है, जब कुछ होगा सूचना दी जावेगी। हम बहुत आनन्द और कुशल में हैं। सब सभासदों को नमस्ते।

१७ अगस्त १८७८[3] दयानन्द सरस्वती

रुड़की

---

[४] पत्र (६६) [२६]

लाला मूलराजजी एम. ए. आनंद रहो![4]

विदित हो कि तारीख १८ अगस्त को बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणिजी और श्री श्यामजीकृष्ण वर्म्मा हम से मिलने के लिये बम्बई से अलीगढ़ को चले हैं और २१ वा २२ तारीख तक वे वहां आ पहुंचेंगे और हम भी २२ तारीख को अलीगढ़ पहुंच जावेंगे।

आपको उचित है कि आप भी २२ वा २३ तारीख तक अलीगढ़ पहुंच जायँ, परंतु आप अकेले ही चले आना।

और स्टेशन के पास ही ठाकुर मुकुन्दसिंहजी का बाग़ीचा पूछ लेना, वहीं पर हम ठहरेंगे॥

हम बहुत आनंद में हैं।

और इस चिट्ठी तथा अपने आगमन की प्रसिद्धि न कर[ना]	हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती रुड़की ज़ि० सहारनपुर	२० अगस्त १८७८[5]

---

१. भाद्र कृष्ण ४, शनिवार सं० १९३५। यु० मी०।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ७५७, ७५८ पर उद्धृत।

३. भाद्र कृष्ण ४. शनिवार सं० १९३५। यु० मी०।

४. मूल पत्र रायबहादुर मूलराज जी के पास है।

५. भाद्र कृष्ण ७. मङ्गलवार सं० १९३५। यु० मी०।

[५]　　　　पत्र (६७)　　　　[९७]

नं० ३४०

लाला मूलराजजी एम० ए० आनन्द रहो ![1]

विदित हो कि हम और हरिश्चन्द्र चिन्तामणिजी कल २६ अगस्त को यहां से सवार होकर मेरठ पहुंचेंगे, और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि, श्यामजीकृष्ण वर्मा और मूलजी ठाकुरशी, २७ अगस्त दिन मंगलवार मेल ट्रेन पर सवार होकर बुधवार २८ ता० को प्रातःकाल ८ बजे लाहौर आवेंगे । सो आप सब आर्य लोक स्टेशन पर मौजूद रहैं और उनको अच्छी प्रकार खातिर के साथ लेकर अपनी बैठक वा आर्य्यसमाज वा किसी और अच्छे मकान में ठहरा देवें । और हर तरह से खातिर रक्खें ।

एक व्याख्यान हरिश्चन्द्र चिन्तामणि देवेंगे । और दो व्याख्यान श्यामजी कृष्ण वर्म्मा देवेंगे एक अंग्रेजी और एक संस्कृत । फिर वे अमृतस[र] आवेंगे सो आप सब लोक अच्छी तरह से उनका इस्तकबाल करें । रुड़की में आर्य्यसमाज बन गया है । हम बहुत आनन्द में हैं । सब सभासदों को नमस्ते ॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
अलीगढ़

२५ अगस्त १८७८[2]

---

[६]　　　　पत्र (६८)　　　　[९८]

ला० मूलराज जी एम० ए० आनन्द से रहो ।[3]

आपने लिखा था कि ता० २४ को छपी हुई चिट्ठी भेज देंगे । सो अब तक नहीं आई । जो अब तक रवाना न कि हो तो मेरठ भेजना ।

२७ अगस्त ७८[4]　　　　दयानन्द सरस्वती

मेरठ

---

[१४]　　　　पत्र (६९)　　　　[९९]

नं० ३७७

पण्डित रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो ![5]

विदित हो कि आपको लिखते हैं कि आप के पास जो रुपया जमा है, वा किसी ग्राहक से वसूल हो और पुस्तकादि के मूल्य की बाबत जो हो और सब ग्राहकों से रुपया वसूल करके मेरठ के

---

१. मूल पत्र रायबहादुर मूलराज जी के पास है ।
२. भाद्र कृष्ण १२ रविवार, सं० १९३५ यु० मी० ।
३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३३ पर उद्धृत ।
४. भाद्र कृष्ण १४, मंगलवार, सं० १९३५ यु० मी० ।
५. मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह से सुरक्षित है ।

पते से हमारे पास भेज दो, क्योंकि हम को रुपये की बहुत जरूरत है और इसी कारण आपको लिखा है कि जल्दी कुल रुपया हमारे पास भेज दो और यह भी लिखो कि स्वामी गंगेश आज कल कहां हैं ।। उत्तर शीघ्र भेज दीजिए ।।

२ सितम्बर १८७७[1] — हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती मेरठ

———

[९] पत्र (७०) [१००]

मौलवी अब्दुल्ला साहिब सलामत[2]

दरजवाब आपके लिखा जाता है । बेहतर है कि आप अपनी हस्बमन्शा बज़रिये मुअज़िज़ रईसान शहर और सदर के सिलसिला जुम्मबानी कीजिये । मुझको कुछ उज़र नहीं । और जुमला मुआमलात तहरीरी होने चाहियें न कि तकरीरी । फ़क़त ।।

ता० ७ सितम्बर सन् १८७८[3] दयानन्द सरस्वती

———

[७] पत्र (७१) [१०१]

लाला मूलराज जी एम० ए० आनन्द रहो !

विदित हो कि पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा ९ सि० को यहां से रवाना हो कर लाहौर गये हैं सो पहुंचे होंगे । सो उन को अपने मकान पर वा जहाँ पर आराम हो ठहरा देना, और ये संस्कृत तथा इङ्गलेण्ड भाषा में व्याख्यान देवेंगे ।। बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि एक जरूरी कार्य्य के कारण से मुम्बई को वापिस चले गये हैं । यहां पर नित्य व्याख्यान होता है और हम बहुत आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते ।। शायद समाज भी हो जावेगा ।

११ सि० १८७८[4] — हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती मेरठ

———

[८] पत्र (७२) [१०२]

४६५

बाबू माधोलाल जी आनन्द रहो ![5]

विदित हो कि पत्र आपका १०।=)।। के साथ पहुँचा सो रसीद भेजते हैं और मुम्बई को

---

१. भाद्र शु० ६ सोमवार, सं० १९३५ यु० मी० ।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ३९६ से उद्धृत किया ।

३. भाद्र शु० ११ शनिवार सं० १९३५ यु० मी० ।

४. भाद्र शु० १५ बुधवार, सं० १९३५ यु० मी० ।

५. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है । इस की प्रतिकृति श्रीमद्दयानन्द चित्रावली में है ।

लिख दिया है वहाँ से १०-११ दिन में २ वेदभाष्यभूमिका आप के पास पहुँचेंगी।

हम आज कल मेरठ में हैं। यहाँ से दिल्ली की ओर का विचार है। जब पूर्व को बढ़ेंगे आप को लिख भेजेंगे। यहां पर भी व्याख्यान नित्य होता है, आशा है कि समाज भी हो जावेगा। हम बहुत आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते॥

मेरठ　　　　हस्ताक्षर
१३ सि० १८७८[1]　　　　दयानन्द सरस्वती

———

[१.]　　　　पत्र (७३)　　　　[१०३]

लाला किशनसहाय जी साहब आनन्द रहिये![2]

जो के कल हस्बुलईमा आपके पं० मानसिंह और नीज़ दीगर साहिबान ने सभा के नियम लिखवा दिये हैं। हम उनके बखूबी पाबन्द हैं। अगर आप को फिलहकीकत और बदिल निश्चय करना सत्य और असत्य का मंजूर है तो आप उनपर गौर कीजिये और अमल फरमाइये। वरना अमूरात मुनासिब में तहरीर व तकरीर खिलाफ वरज़ी के नतायज भी बहरंज बेरूही होवेंगे फक्त।

१८ सितम्बर १८७८[3]

———

[१६]　　　　विज्ञापन[4]　　　　[१०४]

विदित हो कि सत्यार्थप्रकाश[5] के १०७ पृष्ठ पंक्ति १४ में रोहिणी बलदेव की स्त्री थी इसके स्थान में रोहिणी बलदेव की माता और वसुदेव की स्त्री थी ऐसा जान्ना॥

———

[१७]　　　　विज्ञापन पत्र[6]　　　　[१०५]

'आर्य्यदर्पण' शाहजहांपुर

इस नाम का एक मासिक पत्र उर्दू भाषा में आर्यसमाज शाहजहाँपुर की ओर से प्रकाशित होता है, इसमें वेदादि सत्यशास्त्रानुकूल सनातन धर्म्मोपदेश विषय के व्याख्यान और आर्य्यसमाजों के नियम उपनियम आदि प्रकाशित होते हैं, जो उसके देखने से मालूम होगा, जो इस पत्र को लेना चाहें वे अपना नाम पते सहित लिख कर मुन्शी बखतावर सिंह मैनेजर आर्य्यदर्पण शाहजहांपुर के पास भेज दें, पूर्वोक्त पत्र का वार्षिक मूल्य डाक महसूल सहित ३।≈) है॥ यह पत्र मेरी समझ में भी बहुत अच्छा है॥

———

१. आश्विन कृष्ण २, शुक्रवार सं० १९३५। यु० मी०।

२. पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृष्ठ ४०४ पर उद्धृत।

३. आश्विन कृष्ण ६, बुधवार सं० १९३५। यु० मी०।

४. यह विज्ञापन ऋग्वेद और यजुर्वेदभाष्य के तीसरे अङ्क पर छपा था। यह सम्भवतः आश्विन सं० १९३५ के आरम्भ में लिखा गया था। यु० मी०।

५. अर्थात् सं० १९३२ (सन् १८७५) के छपे सत्यार्थप्रकाश के। यु० मी०।

६. यह विज्ञापन भी ऋग्वेद और यजुर्वेदभाष्य के तीसरे अङ्क में छपा है। यु० मी०।

[९] पत्र (७४) [१०६]

बाबू माधोलालजी आनन्द रहो ![1]

प्रकट हो कि चिट्ठी आप की नम्बरी १६४-२० सि० की लिखी हुई पहुँची। सब हाल मालूम हुआ, आप के प्रश्न का उत्तर यह है कि हम १ अक्टूबर से १५ अक्टूबर तक मेरठ और दिल्ली रहेंगे जो आप लोग १ अक्टूबर के पीछे मेरठ आ जाओगे तो फिर साथ २ दिल्ली चले जावेंगे।

यहां पर आर्य्यसमाज हो गया है और व्याख्यान भी होता है। सब प्रकार से कुशल है ॥ हम बहुत आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते।

मेरठ हस्ताक्षर

२३ सि० ७८[2] दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्रसूचना (५) [१०७]

[मुन्शी सेवाराम, नहर जिलेदार, मेरठ]

नहर के डिप्टी मजिस्ट्रेट हो जाने पर बधाई और वेदभाष्य की सहायतार्थ की गई प्रतिज्ञा का स्मरण कराना।[3]

[१.५] पत्रसूचना (६) [१०८]

[बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो]

मेरठ में समाज स्थापित होने और दिल्ली जाने के सम्बन्ध में।[4]

---

[२] पत्र (७५) [१०९]

५६३

पण्डित श्यामजी कृष्णवर्म्मा आनन्द रहो[5]

विदित हो कि आपका पत्र मुम्बई से आया था हाल मालूम हुआ। आपने वहां जाकर काम देखा ही होगा कि क्या प्रबन्ध है और अब की बार भी वेदभाष्य के लिफाफे के ऊपर देवनागरी नहीं लिखी गई जो कहीं ग्राम में अंग्रेजी पढ़ा न होगा तो अङ्क वहां कैसे पहुंचते होंगे और ग्रामों में देवनागरी पढ़े बहुत होते हैं इसलिए तुम बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणी जी से कहो कि अभी इसी पत्र के देखते ही देवनागरी जानने वाला मुन्शी रख लेवें कि जो काम ठीक ठीक हो नहीं तो वेदभाष्य

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

२. आश्विन कृष्ण १२, सोमवार, सं० १९३५। यु० मी०।

३. देखो पं देवेन्द्र नाथ जी संकलित जी० च० पृष्ठ ५०३। यह पत्र कहां से तथा कब लिखा गया यह अज्ञात है। अनुमान से यहां रखा है। यु० मी०।

४. इस पत्र का संकेत पूर्ण संख्या ११४ पृष्ठ ११३ के पत्र में है। मेरठ आर्य्य समाज की स्थापना २९ सितम्बर १८७८ को हुई थी। अतः यह पत्र उसी दिन या अगले दिन लिखा होगा।

५. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

के लिफाफों पर किसी से रजिस्टर के अनुसार ग्राहकों का पता किसी देवनागरी [जानने]वाले से नागरी में लिखा कर टपास लिया करें और तुम जाकर काम की खबरदारी करो कि वहां क्या हाल हो रहा है और उनसे पुस्तकों का हिसाब भी जो कि अङ्क ग्राहकों के पास भेजे गये हों और जो उनके यहां मौजूद हों भिजवा दो और बाबू साहब से कह दो कि जब वेद का प्रूफ भेजा करें तो उस के सा[थ] टाइटल पेज भी भेजा करें और वहाँ के समाचार से बहुत जल्दी हम को पत्र द्वारा विदित कर दीजिये। मेरठ में आर्य्यसमाज हो गया है और हम ३ अक्टूबर को दिल्ली आगये हैं ।[1] यहां पर कुशल है ॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली ७ अक्टू० ७८[2]

———

[१]　　　　**विज्ञापन-सूचना**　　　　[११०]

[१३ अक्टूबर सन् १८७८[3] से व्याख्यान देने का[3]]

[३]　　　　पत्र (७३)　　　　[१११]

५९४

पण्डित श्यामजी कृष्णवर्म्मा आनन्द रहो ![4]

विदित हो कि इससे पहले एक चिट्ठी आप के पास भेजी गई थी पहुँची होगी आज फिर आवश्यकता समझ कर आप को लिखते हैं **वह पत्र जिस के लिये मेरठ बात हुई थी शीघ्र भेज देना और**[5] जब तक तुम वहाँ रहो हम से पत्र व्यवहार करके वेदभाष्य के काम का तुम ही प्रबन्ध करो, क्योंकि बिना आप के यह काम न चलेगा वा किसी देवनागरी वाले को वहाँ रखा दो क्योंकि बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी अंग्रेजी में भी लिखते हैं तो भी छेदीलाल को शादीलाल लिख देते हैं और न ग्राहकों के नम्बर लिखते हैं विवेचन पूर्वक पहले पत्र[6] में भी आपको लिखा गया है आप इस का कुछ प्रबन्ध अवश्य शीघ्र ही कीजिये। और वहाँ के प्रबन्ध और सब हाल से विदित कीजिये और एक कामसूत्र का पुस्तक भी हमारे पास भेज दीजिए। हम बहुत आनन्द में हैं ॥

१४ अक्टूबर ७८[7] }　　हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

———

१. पं० लेखराम (पृ० ३८६, ४१०) तथा पं० घासीराम (पृ० ५०३) ने लिखा है कि श्री स्वामी जी ६ अक्टूबर को दिल्ली पहुँचे। यह भूल है। श्री स्वामी जी ३ अक्टूबर को दिल्ली पहुँचे थे यह इस पत्र से स्पष्ट है।

२. आश्विन शु० १३, बुधवार, सं० १९३५। यु० मी०।

३. कार्तिक कृष्ण २ रवि, सं० १९३५। देखो पं० घासीराम सम्पादित जी० च० पृष्ठ ५०३। यु० मी०

४. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

५. स्थूल अक्षरों का पाठ श्री स्वामी जी के स्वहस्त का है।

६. पूर्ण संख्या १०९ का ७ अक्टूबर १८७८ का पत्र।

७. कार्तिक कृष्ण ३ सोम, सं० १९३५।

[१.०] पत्र (७७) [११.२]

No. 597.

Dehllee, Kaboolee Gate
near the Subzimandee
in the Garden of
Lallah Kaishree Chand & Balmookund.
15. 10. 78.[1]

To

Baboo Madho Lall
Arya Samaj, Dinapore.[2]

Dear

I have received your letter No. 181 of 31st.[3] October to-day, I shall be glad to see you at Dehllee on the address. which has [been] written up. And I have appointed an Arya Samaj in the *Meerutt* and always here I am delivering the Lecture of Vedic reform. I am well and hope you the same.

Signature

15-10-78[4] [दयानन्द सरस्वती]

Dehllee,

[भाषानुवाद]

५९७

देहली काबुली गेट,
सब्जी मण्डी के समीप
ला० केशरीचन्द और बालमुकुन्द के उद्यान में
१५-१०-७८[1]

बाबू माधोलाल, आर्य्यसमाज दीनापुर[2] को ।

प्रिय !

आप का पत्र सं० १८१, ३१ अक्तूबर[3] का आज प्राप्त हुआ । देहली में उपरिलिखित पते पर आप को मिल कर मैं प्रसन्न हूँगा और मेरठ में मैंने समाज स्थापन किया है ।

वैदिक धर्म पर मैं प्रतिदिन यहाँ व्याख्यान देता हूँ । मैं प्रसन्न हूँ और आप की प्रसन्नता चाहता हूं ।

१-१०-७८[4]

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

---

१. कार्तिक कृष्ण ४, मङ्गलवार, सं० १९३५ । यु० मी० ।

२. मूल अंग्रेजी पत्र में 'दानापुर' के स्थान में 'दीनापुर' भूल से लिखा गया है ।

३. सम्भवतः यहां १३ अक्तूबर चाहिए ।

४. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है ।

[१६]　　　　पत्र [७८]　　　　[११३]
५८८[1]

बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो !

विदित हो कि आप की एक चिट्ठी मेरठ में आई थी सो आपने लिखा था कि हम पुस्तकों का रुपया भेजेंगे परन्तु अब तक नहीं भेजा, इसलिये आपको लिखते हैं कि आप बहुत जल्दी हुण्डी बनवा कर हमारे पास यहाँ दिल्ली में भेज दीजिये, आवश्यकता के कारण से आपको लिखा गया है और मेरठ में समाज होने तथा वहाँ से दिल्ली को गमन करने का समाचार आप को पहिले पत्र में लिख चुके हैं ।।

हम बहुत आनन्द में हैं ।।

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

[२]　　　　पत्रसूचना (५)　　　　[११४]
६०८

भूपालसिंह जी......[2]
१५, या १६ अक्तूबर[3]
दिल्ली

पत्रसारांश (७९)　　　　[११५]

[ठा० रणजीतसिंह जागीरदार अचरौल राज्य जयपुर]
हम कार्तिक में जयपुर आवेंगे ।[4]

---

१. पं० रा० वा० ने लाल स्याही से १५ अक्तूबर १८७८ की तारीख (कार्तिक कृ० ४ सं० १९३५) स्वामी जी से इस पत्र के चलने की लिखी है [ता० १५-१०-७८ का ५६७ नं० का पृष्ठ ११२ तथा १४-१०-७८ का ५६४ न० का पृष्ठ १११ पर पत्र पहले छप चुका है] इस लिए इस पत्र की संख्या ५६८ होगी, ५८८ नहीं । [अथवा यह भी सम्भव है कि पत्र की ५८८ संख्या ठीक हो और यह पत्र १३ या १४ अक्टूबर को लिखा गया हो । क्योंकि पत्र पर तारीख नहीं है । पं० रा० वा० ने तारीख अनुमान से ही लिखी होगी] मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है ।

२. इस पत्र का संकेत ठाकुर भूपालसिंह के पत्र में है ।

३. कार्तिक कृ० ४ या ५ सं० १९३५ । यु० मी० ।

४. देखो पं० देवेन्द्रनाथ जी संक० जी० च० पृ० ५०४ । इसी पृष्ठ पर गायत्री पुरश्चरण की सब विधि लिख कर देने का भी उल्लेख है । यह पत्र देहली से भेजा गया था । यु० मी० ।

[१७] पत्र (८१) [११६]

६२६

बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो ![1]

विदित हो कि पत्र आपका आया सब हाल मालूम हुआ हुँडी ४६) की अभी हमारे पास नहीं पहुंची, शायद कल वा परसों आ जावेगी, तब्ही आपके पास रसीद भेजी जावेगी और ७ ऋग्वेद और छः यजुर्वेद आपके पास भेजने के लिए मुम्बई को लिख दिया है। वहाँ से जल्दी आपके पास पहुँचेंगे और आगे से बराबर पहुँचा करेंगे ॥

और केवल भूमिका ५) को मिल सकती है और जो ग्राहक लोग ४॥) गत वर्ष में दे चुके और भूमिका पर्य्यंत लेकर छोड़ते हैं, उन से ॥) और वसूल कर लो और जो केवल एक वेद लेते हैं उन से ४) लेने चाहियें और जो ग्राहक पिछले साल में ४॥) दे चुके और इस वर्ष में दोनों वेद लेना चाहते हैं उन से ७) और जो एक वेद लेते हैं उन से ४) वसूल करो, जो नवीन ग्राहक हों और वे दोनों वेद भूमिका सहित लेवें उन से ११॥) और जो भूमिका सहित एक वेद लेवें उन से ८॥) और जो केवल एक वेद लेवें उन से ४) वसूल कीजिये। यहाँ पर आज कल नित्य व्याख्यान होता है ॥ हम आनन्द पूर्वक कुशल क्षेम से हैं ॥

२० अक्टूबर ७८[2] दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (८१) [११७]

नं० ६२८

बाबू समर्थदानजी चारण आनन्दित रहो ![3]

विदित होवे कि आज जुगल बिहारी शर्म्मा की एक चिट्ठी आई, जिससे जाना गया कि वहाँ चन्दे का कुछ प्रबन्ध नहीं हुआ है। सो तुम कुछ चिन्ता मत करो। अब मिलना न हो तो फिर कभी मिलेंगे। और कुछ अफसोस मत समझो। हम तुम्हारे प्रेम को खूब जानते हैं और कुछ शोक की बात नहीं है। यहाँ पर भी आनन्द पूर्वक व्याख्यान हो रहा है, और सब प्रकार से कुशल है। हम बहुत आनन्द में हैं।

२१ अक्तूबर सन् १८७८[4]

दिल्ली ह० (दयानन्द सरस्वती)

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

२. कार्तिक कृ० ६ रविवार सं० १९३५। यु० मी०।

३. यह पत्र अजमेर को लिखा गया था। यह पत्र पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ४१४ पर छपा है। यही पत्र भारत सुदशा प्रवर्तक दिसम्बर १८८१, पृ० २३ पर भी छपा है। पहले हमने जीवनचरित से इसे छापा था। अब भा० सु० प्र० से शुद्ध कर के छापा है।

४. कार्तिक कृ० १० सोमवार सं १९३५। यु० मी०।

[४] पत्र सारांश (८२) [११८]

[नं० ६२९][1]
हरिश्चन्द्र चिन्तामणि, बम्बई।
[वेदभाष्य का काम पं० श्यामजी कृष्णवर्मा को सौंप दो]
२२ अक्टूबर सन् १८७८[2]

———

[४] पत्रं (८३) [११९]

६३०

पंडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![3]

विदित हो कि तुम्हारी चिट्ठी १८ अक्टूबर की लिखी पहुंची, सब हाल मालूम हुआ, हम वहुत प्रसन्नता पूर्वक लिखते हैं कि जब तक तुम मुम्बई में रहो तभी तक वेदभाष्य का काम उठालो और खूब होशियारी से करो और ३०) जो नौकर चाकरों के लिये हैं, उन में तुम को अख्त्यार है चाहे जैसे खर्च करो और जो ३५) तक भी कभी खर्च हो जावेगा हमको स्वीकार है और यह संख्या भी जब तक है कि काम कुछ कम चलता है, जब दो हज़ार ग्राहक हो जावेंगे फिर हम कुछ गिनती न रक्खेंगे चाहे जितना खर्च हो और जब तुम इस काम को ठीक ठीक चलाओगे तो प्रतिदिन उन्नति ही होगी और आज ही हमने बाबू हरिचन्द्र चिन्तामणि जी को भी लिखा है। वे आप को बुला कर प्रसन्नता पूर्वक काम सोंप देंगे, तुम यह शंका मत करो कि शायद वे बुरा मानें, वे कभी बुरा न मानेंगे और न वे ऐसे आदमी हैं और उनकी और तुम्हारी तो घर के सी बात है, वे तुम पर सदैव प्रसन्न हैं ॥

यह पहिला पत्र व्यवहार का हमारा तुम्हारे पास पहुंचता है, इस को रख लेना और आगे से सब रखते जाना[4], हम भी तुम्हारे पत्र रख लिया करेंगे, और तुम्हारे पास पत्र भेजा करेंगे और पुस्तक आदि सब संभाल कर रखना और जैसा काग़ज अब की वार लगा है, ऐसा ही सदैव लगाना। इस से कुछ भी न्यून न हो और अगले मास में ५००) भी तुम्हारे पास भेज देंगे। बाबू हरिचन्द्र चि० जी को यह हमारा पत्र दिखा देना और गोपालरावहरि देशमुख जी को हमारा आशीर्वाद कह देना। अगले मास में तुम्हारा नाम भी टाईटिल पर छाप दिया जावेगा जिस से ग्राहक लोग भी चिट्ठी पत्री और रुपया पैसा तुम्हारे पास भेजा करेंगे। हम बहुत आनन्द में हैं ॥

२२ अक्टू० ७८[5] हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती दिल्ली

———

१. यह पत्र संख्या तथा पत्रांश अगले पत्र (पूर्ण संख्या ११६) के 'आज ही हमने बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि को भी लिखा है' वाक्य से ली है। यु० मी०

२. कार्तिक कृष्ण ११ मंगलवार, सं० १६३५। यु० मी०।

३. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

४. इसी आदेश के अनुसार ये सब पत्र सुरक्षित रहे।

५. कार्तिक कृष्ण ११ मंगलवार, सं० १६३५। यु० मी०।

[१८] पत्र (८४) [१२०]

६३२

बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो ![1]

विदित हो कि एक पत्र इससे पहिले आपके पास भेजा गया है[2] पहुँचा होगा, अब इस चिट्ठी के भेजने की आवश्यकता यह है कि आपने पत्र में लिखा था कि ४६) की हुण्डी दूसरे लिफाफे में भेजी है, सो आज तक हमारे पास नहीं पहुँची, सो जानना और सब प्रकार से आनन्द है ॥

हस्ताक्षर

२२ अक्टूबर ७८[3]

दयानन्द सरस्वती

दिल्ली

---

[१९] पत्र (८५) [१२१]

६२७[4]

बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो ॥[5]

विदित हो कि आज आपका भेजा हुआ मनी आर्डर ४६) का पहुँच गया है, आप खातिर जमा रक्खें, और बाकी रुपया भी जल्दी ही भेज देना क्योंकि रुपये की आज कल बहुत आवश्यकता है॥

और यह भी लिखना चाहिए कि कितना रुपया किस पुस्तक का है वा किस ग्राहक के नाम छपना चाहिए और ७ ऋग्वे० और छः यजु० आप के पास मुम्बई से पहुंचेंगे, वहां को लिख दिया गया है, यहां पर व्याख्यान नित्य होता है और हम बहुत आनंद में हैं ॥

हस्ताक्षर

२३ अक्टू० १८७८[6]

दयानन्द सरस्वती

दिल्ली

---

[१] पत्र सूचना (६) [१२२]

लीलाधर हरिदास बम्बई[7]

[श्यामजी से वेदभाष्य के काम में सलाह कर के उनको सहाय दो]

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह से सुरक्षित है ।

२. यह संकेत २० अक्टूबर १८७८पूर्ण संख्या ११६, पृष्ठ ११४ पर मुद्रित पत्र की ओर है । यु० मी० ।

३. कार्तिक कृष्ण ११ मंगलवार सं० १९३५ । यु० मी० ।

४. इस पत्र की संख्या ६२७ लिखी है । यह संख्या ठीक प्रतीत नहीं होती । अथवा ठीक भी हो सकती है । संभवतः कोई पिछली संख्या छूट गई हो और उसी पर इसे रख दिया गया हो ।

५. मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है ।

६. कार्तिक कृष्ण १२ बुधवार सं० १९३५ । यु० मी०

७, देखो पूर्ण संख्या १३० । यु० मी०

[११] पत्र (८६) [१२३]

No. 636 *Dehllee.*
26-10-78.[1]

To

Baboo Madho Lall
Arya Samaj,
Dinapore.[2]

My dear.

I have recieved your letter just now and knew the all subjects of it. You must send the account of books to me. When you will go to *Arra* I hope you will say to Baboo Hurbansh Sahai for the *Chanda* of Ved Bhashya.

Here I am delivering the Vedic Lecture in these days and hoping that the Arya Samaj will be appoint at *Dehllee*. I am well and hope you the same.

Swamee D. Nd. Sarrasswatee,
26-10-78.[1] [दयानन्द सरस्वती]
Dehllee.

[भाषानुवाद]

देहली
सं० ६३६. २६-१०-७८.[1]

बाबू माधोलाल
आर्यसमाज दीनापुर[2] को।

मेरे प्रिय !

अभी आपका पत्र मिला सब समाचार ज्ञात हुआ। आपको पुस्तकों का हिसाब मुझे अवश्य भेजना चाहिये। जब आप आरा जायेंगे तो मैं आशा करता हूं कि आप बाबू हरबंससहाय को वेदभाष्य के चन्दा के लिये कहेंगे। मैं यहां आज कल वैदिक विषय पर व्याख्यान दे रहा हूं और आशा करता हूँ कि दिल्ली में समाज स्थापित हो जावेगा। मैं प्रसन्न हूं और आपकी प्रसन्नता चाहता हूं।

२६। १०। ७८[1] दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

———

१. कार्तिक शुक्ल १ शनिवार सं० १९३५। मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।
२. मूलपत्र में दानापुर के स्थान में भूल से दीनापुर लिखा गया है। यु० मी०

[९] **पत्र-सूचना (७)** [१२४]

[सं० ६३७][1]
हरिचन्द्र चिन्तामणि बम्बई
[पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा को वेद भाष्य का काम सौंप दो]
२७ अक्टूबर सन् १८७८[2] दिल्ली

---

[९] **पत्र (८७)** [१२५]

६३८
पंडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनंद रहो ![3]

विदित हो कि इस से पहले तुम्हारे पास एक पत्र भेजा गया है पहुंचा होगा और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी को तुम्हें काम सोंपने के लिये तीन चिट्ठी[4] लिख चुके हैं, और एक चिट्ठी आज फिर लिखी है, सो शायद है कि उन्होंने तुम को बुलाकर सब काम सोंप दिया होगा, पहिली नवम्बर से सब काम तुम ही करो और ग्राहकों के पास भी वेदभाष्य तुमही भेजना और रजिस्टर, वेदभाष्य के अंक और लिखित पत्र आदि चिट्ठी वगैरे और सब काम उन से लेकर समझ लो, जो वे प्रसन्न हों तो पुस्तकें उन्हीं के मकान में रहने दो और कुंजी अपने पास रक्खो और जो वे न रहने दें तो जहां तुम चाहो रक्खो परन्तु प्रबन्ध से रखना कि कुछ हानि न हो, और जो कुछ रुपया वेदभाष्य के अंकों के ऊपर लगाने के टिकटों के लिये चाहिये सो बाबू साहब से ले लेना, फिर आगे से प्रबन्ध कर दिया जायगा, जब तुम यह काम ले लोगे और हमको लिख भेजोगे, तब सब व्यवस्था तुम्हारे पास लिख कर भेज देंगे उसी के अनुसार काम करना।। अब शीघ्र लिखो कि काम तुमने लिया वा नहीं और वहाँ का कुल हाल लिखो, हम बहुत आनन्द में हैं।

हस्ताक्षर
२७ अक्टू० ७८[2]
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

---

१. यह संख्या और पत्र की सूचना पूर्ण संख्या १२५ के 'एक चिट्ठी आज फिर लिखी है' पदों से संगृहीत की है सम्भवतः इसी पत्र के विषय में पूर्ण संख्या १२६ (पृष्ठ १२०) भी लिखा है—'और बाबू जी को इन्हें काम देने के लिये...'।

२. कार्तिक शुक्ल २, रविवार, सं० १९३५। यु० मी०।

३. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

४. इन तीन चिट्ठियों में से १ चिट्ठी २२ अक्टूबर को लिखी गई थी। देखो पूर्ण संख्या ११९ पृष्ठ ११५। दो चिट्ठियों की तिथियां ज्ञात नहीं हो सकीं। यु० मी०

[२]　　　　पत्रांश (८८)　　　　(१२६)

[मुन्शी समर्थदान को][1]

हम अवश्य आवेंगे। यहाँ हम ने समझ लिया है कि जुगुलविहारी शर्मा के नाम से किसी ब्राह्मण ने पोप लीला की है, परन्तु क्या होता है, ऐसे धूर्त बहुत हैं।

———

[६]　　　　पत्र (८९)　　　　[१२७]

६४३

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![2]

विदित हो कि पहले भी आप को दो तीन चिट्ठियाँ लिखी गई हैं पहुँची होंगी और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी को भी तुम्हें काम देने के लिये कई बार लिखा गया है सो आशा है कि तुम को उन्हों ने सब काम सौंप दिया होगा और जो कुछ उनसे बातें हुई हों सो हम को जल्दी लिखो और बाबू जी से काम लेकर पहिली नवम्बर से तुम्हीं करो, यह भी लिखो कि **छापेखाने करने में यन्त्र और**[3] अक्षर और टाइप आदि के मंगाने में क्या खर्च होता है और मोहन लाल विष्णु लाल पंड्या जी आज कल कहाँ हैं, मुम्बई में हैं वा नहीं ॥

अब हम यहाँ से ६ नवम्बर बुधवार को पुष्कर जायेंगे सो इस मिति के पीछे पत्र हमारे पास अजमेर में भेजना चाहिए, कल वहाँ पर भी आर्य्य समाज के लिए प्रधानादि नियत हो गए हैं और ३ नवम्बर रविवार को समाज का आरम्भ हो जायगा उत्तर शीघ्र भेजो कि जिस मिती तुम काम सम्भाल लो, आगे उस मिती से पत्र तुमारा हमारा बराबर आनन्द से पत्र व्यवहार होगा ॥

हस्ताक्षर

३० अक्टू० ७८[4]　　　　दयानन्द सरस्वती

दिल्ली

———

[१]　　　　पत्र (९०)　　　　[१२८]

६५५[5]

गण्डा सिंह जी आनन्द रहो।

वाज़ह कि एक चिट्ठी बख़त नागरी तुम्हारी पहुँची। जवाब उस का यह है कि हमारे पास खर्च तो ज्यादा है और आमदनी कम है इस लिये हम कुछ नहीं [कर] सकते । मगर हाँ जो तुम

---

१. उपर्युक्त अंश भारतसुदशाप्रवर्तक दिसम्बर १८७८ के अङ्क के पृष्ठ २३ पर छपा है। इसी प्रकार पं० देवेन्द्रनाथ जी संकलित जी० च० पृष्ठ ५०६ पर भी उद्धृत । यु० मी०

२. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

३. स्थूलाक्षर का पाठ श्री स्वामी जी के स्वहस्त का है।

४. कार्तिक शुक्ल ५ बुधवार, सं० १९३५।

५. इस पत्र के अन्त में ३१ अक्टूबर सन् १८७८ (कार्तिक शु० ६ बृहस्पतिवार सं० १९३५) लिखा गया है। २ नवम्बर १८७८ के क्रम संख्या ६४८, ६४९ के पत्र आगे पूर्ण संख्या १२९, १३० पर छपे हैं। अतः यहां क्रम संख्या ६५५ के स्थान में ६४५ होनी चाहिये।

अपना खर्च करो तो हम को पढ़ाने में कुछ उज़र नहीं है क्योंकि जितना फायदा तुम्हारे पढ़ाने से दुनिया को होता है उतना ब्राह्मण लोगों के पढ़ाने से नहीं होता। हम तुम को बहुत खुशी से पढ़ा सकते हैं। अगर खर्च का तुम कुछ बन्दोबस्त कर लो तो पढ़ना हो सकता है, मगर फिर भी पाँच या छः माह में तुम आना क्योंकि अब तो हम बतारीख ६ नवम्बर यहाँ से पुष्कर जी को चले जावेंगे। फिर वहाँ से वापिस होते वक्त मेला कुम्भ में हरिद्वार पर या देहली वग़ैरा में तुम आ जाना, तब पढ़ना हो सकता है और अब पढ़ना नहीं हो सकता क्योंकि इस सफर में तुम्हारा खर्च भी ज्यादा होगा और पढ़ना भी ठीक २ न होगा, इस लिए तुम को लिखा गया सो वाजह रहे, यहाँ पर हमारा व्याख्यान रोज़ मर्रा: होता है। और आर्य समाज भी यहाँ पर कायम हो गया है और बहुत से मोज़िज़ लोग उस में शरीक हैं और रोज़ बरोज़ तरक्की होती जाती है और ऐसे ही रुड़की व सहारनपुर व मेरठ व लुधियाना में बहुत आर्य समाज कायम हो गये हैं। अब दुनिया से अन्धकार जाने वाला है और सत्य का प्रकाश होता जाता है।[1]

३१ अक्टूबर सन् १८७८[2] — दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

[१.०] पत्र (९१) [१.२९]
६४८

पंडित गोपालहरि देशमुख जी आनंद रहो![3]

विदित हो कि जिस दिन से बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी के प्रबंध में वेदभाष्य का काम गया है तब से किसी ग्राहक के पास भी अंक यथार्थ ठीक ठीक नहीं पहुंचते और वे बेचारे क्या करें, उन के पास कोई आदमी इस काम के योग्य नहीं, अब हम इस बात से बहुत प्रसन्न हुए कि आपने श्यामजी कृष्ण वर्म्मा को इस काम के स्वीकार करने को उद्दित किया, यह पुरुष इस काम के बहुत योग्य है और बाबू जी को इन्हें काम देने के लिये लिखा था, सो वे लिखते हैं कि इस की बाबत एक दो दिन में लिखूँगा, सो देखिए क्या लिखते हैं। प्रथम तो आशा है कि वे कुछ इसमें तकरार न करेंगे और जो शायद वे कुछ तकरार करने लगें तो जब आप मुम्बई में आवें वा पत्र द्वारा उन को समझा कर इन को काम दिला दीजिए॥

आप इस काम के अधिपति रहें और बाबूजी भी नाम मात्र रहें परन्तु सब काम आप के

---

१. यह पत्र सरदार गण्डासिंह मशरकी अकाउंटेण्ट मिलिट्री वर्क्स, स्थान रोपड़ जिला अम्बाला को भेजा गया था। पत्र के लिफाफे पर रोपड़ पोस्ट आफिस की मोहर २ नवम्बर १८७८ ई० और पता "गण्डासिंह ग्रंथी, रोपड़, जिला अम्बाला" है। यह पत्र उर्दू में लिखा गया था।

इस पत्र की फोटो तथा प्रतिलिपि स्वर्गीय सरदार गण्डासिंहजी के सुपुत्र सरदार नारायणसिंह त्रिम्भराओ सूबेदार हैडक्लर्क पैंशनर ग्रन्थी बाग रोपड़ जि० अम्बाला की कृपा से प्राप्त हुई। मूल पत्र उन्हीं के पास सुरक्षित है।

२. कार्तिक शु० ६ बृहस्पतिवार सं० १९३५।

३. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

नीचे श्याम जी करें, तब यह काम ठीक ठीक होगा और श्याम जी [1]......और जब अवश्यकता होगी आप को भी लिखा करेंगे। यहां दिल्ली में आर्य्य समाज नियत हो गया है, अब हम यहां से ६ नवंबर को पुष्कर जावेंगे और सब प्रकार से हम आनन्द में हैं ॥

२ नवम्बर ७८[2] { हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती दिल्ली }

---

[७] पत्र (९२) [१३०]

६४९

पंडित श्याम जी कृष्ण वर्मा आनन्द रहो ![3]

विदित हो कि कल आप का पत्र आया था, सब हाल मालूम हुआ और कल ही बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी का भी पत्र आया था, वे लिखते हैं कि श्याम जी को काम देने की बाबत सोच विचार के दो एक दिन में लिखूँगा, सो जब वे कुछ लिखेंगे तब तुमको लिखा जावेगा और वे तुम्हें काम देने में कुछ तकरार नहीं करेंगे, क्योंकि उन की हानि ही क्या है, जो वे लिखेंगे कि हमारा नाम टाइटिल पेज पर छपवा कर हमको बदनाम किया, तो उनका नाम माघ तक ऐसे ही छपता रहेगा, फिर अगले वर्ष में बदल दिया जावेगा, और हम उनको भी यही लिख देंगे ॥

हमने एक चिट्ठी लीलाधर हरिदास को लिखी थी कि श्यामजी से वे० के काम में सलाह करके उनको सहाय दो, सो उन्हों ने लिखा है कि हम उनसे मिल कर अवश्य सम्मति करेंगे, सो तुम तथा वे सुन्दर दास और पुरुषोत्तमादि मिलकर इस काम को चलाओ और सब काम तुम करो, वे तुमको सहाय देंगे.........................ते रहा करो[4] ॥ और गोपाल रावहरि देशमुख जी के नाम एक चिट्ठी[5] लिख कर तुम्हारे पास इस चिट्ठी के साथ भेजते हैं, सो जहाँ वे हों भेजदो वा जब वे मुंबई में आवें तब उनको दे देना, और बाबू जी के पास और भी चिट्ठियां लिखी गयी हैं, जो उनसे बातें हुआ करें सो सब लिखा करो। यहाँ पर आर्य्य समाज हो गया है अब हम कार्ति० शु० १२, ६ नवंबर को पुष्कर जावेंगे और दो तीन मास इधर ही जयपुर अजमेर आदि नगरों में घूमेंगे फिर हरिद्वार में कुम्भ के मेले पर आवेंगे, जो हम दूर देश में हों और तुम को जो कुछ काम पड़े सो लीलाधर हरिदास जी से कह कर सहाय लेना और सब काम ठीक करना और बाबू हरिश्चन्द्र से भी मिला करना, अब उन का दूसरा पत्र आने वाला है जब वह आ लेवे तब प्रबन्ध कुछ दूसरा किया जावे

---

१. अगला थोड़ा सा पाठ फट गया है।

२. कार्तिक शु० ८ सं० १९३५।

३. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

४. बिन्दु वाले स्थान के तीन या चार शब्द फट गये हैं।

५. यह पत्र पूर्ण संख्या १२९ पर छपा है।

और तब ही तुम को भी लिखेंगे और तुम सब हाल वहां का लिखो और यह भी लिखो कि गोपाल-रावहरि देशमुख जी आज कल कहां हैं, हम बहुत आनंद में हैं ॥

[२] नं० ७८[1] { हस्ताक्षर / दयानन्द सरस्वती / दिल्ली }

———

[१] तार का सारांश [१३१]

हम आते हैं।[2]

६ नवम्बर १८७८, दिल्ली।

———

[१८] विज्ञापनपत्रमिदम्[3] [१३२]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि पं० स्वामी दयानन्दसरस्वतीजी महाराज संवत् १९३५[4] कार्तिक शुक्ल १३ गुरुवार को पुष्कर में आकर नाथजी के दरीचे अर्थात् जोधपुर के घाट पर ठहरे हैं। जिस जिस सज्जन को सनातन वेदोक्त धर्मविषय में कहना वा सुनना होवे, सत्य पुरुष उक्त स्थान में जाकर और समागम कर के सभ्यता और प्रीतिपूर्वक वेद और प्राचीन शास्त्रों के विषय में सम्भाषण करें।

सब मनुष्यों को अत्यन्त आवश्यक है कि अति पुरुषार्थ से सत्यासत्य का निर्णय करके उससे सब मनुष्यों को जानकार करें। क्योंकि यह मनुष्य जन्म अति दुर्लभ, धर्म के सेवने और अधर्म के छोड़ने, परमात्मा की भक्ति और परमानन्द भोगने के लिये है। इस लिये जो शुभ काम कल करना हो आज ही करें, जिससे सब मंगलकारी बना रहे ॥ इति ॥

———

१. तिथि का स्थान फट गया है। यह पत्र पूर्ण संख्या १२९ के पत्र के साथ लिखा गया था। देखो यही पत्र। अतः यहां २ नवम्बर [कार्तिक शु० ८ सं० १९३५] चाहिये।

२. कार्तिक शुक्ल १२, सं० १९३५। देहली से रात में रेल में सवार होते समय उपर्युक्त तार अजमेर दिया था। देखो पं० देवेन्द्रनाथ जी संकलित जी० च० पृष्ठ ५०६। यु० मी०।

३. मासिक पत्र भारतसुदशाप्रवर्तक, फरुखाबाद, नम्बर ३१ पृष्ठ १६, १७, जनवरी सन् १८८२ से लिया गया। पं० लेखरामकृत—जी० च० के पृष्ठ ४१५ पर भी छपा है।

४. ७ नवम्बर बृहस्पतिवार सन् १८७८। भारतसुदशाप्रवर्तक में भूल से संवत् १९३८ छप गया है। देखो पत्र, पूर्ण सं० १२९ व १३०, १३३।

[८] पत्र (९३) [१३३]

६७६

पंण्डि श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![1]

विदित हो कि आज एक पत्र बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी का आया, उसमें वे लिखते हैं कि वर्ष दिन के अन्त पर्य्यंत हम काम नहीं छोड़ सकते, इसमें हमारी बदनामी होगी। सो आज उनको उत्तर लिख दिया है कि इस में आपकी बदनामी किसी प्रकार से नहीं हो सकती, क्योंकि वर्ष दिन तक टाइटिल पेज पर आप ही का नाम बना रहेगा और ग्राहकों के पत्रादिक भी आप ही के पास आया करेंगे, और सब काम श्यामजी करेगा। अब देखिये क्या उत्तर लिखते हैं, अब तुम चौथे अङ्क का शोधना, सब ग्राहकों [के] पास यथावत् भेजना, और सब काम ठीक ठीक करो और काग़ज़ का प्रबन्ध भी करो, कि काग़ज़ अच्छा लगा करे, जैसा दूसरे अंक में लगा है। हम क्षेम कुशल पूर्वक पुष्कर में पहुंच गए हैं, अब यहा से अजमेर जाकर ठहरेंगे, वहां का सब हाल जल्दी लिखाकर उसी जगह हमारे पास भेजना और बाबू जी से मिलना ॥

पुष्कर ज़ि० अजमेर हस्ताक्षर
१० नवम्बर १८७८[2] दयानन्द सरस्वती

———

[९] पत्र (९४) [१३४]

७०४

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![3]

विदित हो कि आज आप के पास हम एक सूचीपत्र भेजते हैं कि जिस में उन ग्राहकों का नाम लिखा है जिन्हों ने अब तक वेदभाष्य का मोल नहीं दिया, सो इस कुल सूची को पाँचवें अङ्क के टाइटिल पेज पर छाप देना और दिसम्बर के मास से सब काम सम्भाल कर पाँचवें अङ्क का सब काम तुम ही करना, बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी को तो हम ने कई बार बहुत कुछ लिखा, परन्तु अब हम ने पण्डित गोपालरावहरि देशमुख जी को भी लिखा है, वे मुम्बई में आकर अपने सामने तुम को सब काम सोंपवा देंगे, और जो कुछ हिसाब किताब होगा सो सब तुम समझ लेना वा बाबू जी हमारे पास भेज देंगे, और वहाँ का कुल हाल लिखो कि बाबू जी का क्या विचार है, और प्रेस में आजकल क्या काम होता है। और चौथा अङ्क भी ग्राहकों के पास तुम ही भेजना और बहुत होशयारी के साथ अङ्कों को बाँध कर अंग्रेज़ी और नागरी में लिखना और अच्छी तरह से रजिस्टर से मिला लेना यह काम बहुत होशयारी से करना चाहिये, उत्तर शीघ्र भेजो ॥

हस्ताक्षर

२० नवम्बर ७८[4] दयानन्द सरस्वती

अजमेर

———

१. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है। २. कार्तिक शु० १५ रविवार, सं० १९३५।

३. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है। ४. मार्गशीर्ष कृष्ण ११ बुधवार, सं० १९३५।

[१०] पत्र (९५) [१३५]

७८०

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्दयुक्त रहो![1]

प्रकट हो कि अब हमारी सम्मति है कि वेदभाष्य की ३१०० कापी जो हम छपवाते हैं उन की जगह १५०० कापी छपवावें, क्योंकि ३१०० कापी छपने में खर्च अधिक होता है। इसलिए तुम से पूछते हैं कि १५०० कापी के छपने में क्या खर्च रह जावेगा, और छापे वालों का तथा कागजादि का कितना खर्च कम हो जावेगा, इसकी सब व्यवस्था लिखो: और यह भी लिखो कि राव साहब गोपालरावहरि देशमुख जी कहाँ हैं और तुम से मिले वा नहीं और अमरीका वालों का समाचार क्या है, और केशव लाल निर्भयराम कहाँ हैं। इस पत्र का उत्तर जयपुर में भेजना क्योंकि हम यहाँ से १४ दिसम्बर को चलकर अजमेर होते हुए १५ दि०[2] को जयपुर पहुँच जावेंगे, हम बहुत प्रसन्न हैं॥

हस्ताक्षर

११ दि० ७८[3]

दयानन्द सरस्वती

नसीराबाद जि० अजमेर

---

[२] तार का सारांश [१३६]

हम सकुशल हैं।[4]

[१९ या २० दिसम्बर १८७८ (कार्तिक कृष्ण ८ या ९ सं० १९३५) जयपुर]

---

[१] पत्र (९६) [१३७]

बाबू प्यारे लाल सभासद आर्यसमाज लाहौर।[5]

आज आपका खत हमको रिवाड़ी में मिला, बहुत खुशी हासिल हुई। हम अजमेर से जयपुर आये थे और ९ रोज़[6] वहाँ कयाम किया, इस अरसे में वहाँ पर ठाकुर फतेसिंह साहब व बाबू श्री प्रसाद मोहतमिम बन्दोबस्त व ज़ी अखत्यार वो मुअज़िज़ शख्स कप्तान वगैरा हम से मिले। और निहायत आनन्द रहा। मगर राजा साहब से मुलाकात नहीं की गई। और वहाँ से हम २४ दिसम्बर को रवाना होकर २५[7] को रिवाड़ी जिला गुड़गांवां में पहुंचे और व्याख्यान दिया। अब यहाँ व्याख्यान पूरा हो चुका है। लिहाज़ा हम परसों बतारीख ९ जनवरी १८७९ देहली में जाकर सब्जी मण्डी के पास बाबू केशरी लाल के बाग़ में ठहरेंगे और जो कैफ़ियत वहाँ की होगी सो तहरीर की जावेगी और

---

१. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२. १४ और १५ दिसम्बर को क्रमशः पौष कृष्ण ५ शनिवार और ६ रविवार सं० १९३५ था। यु० मी०।

३. पौष कृष्ण २ सं० १९३५। यु० मी०।

४. देखो, पं० देवेन्द्रनाथ जी सं० जी० न० पृष्ठ ५१७। जयपुर से मेरठ दिया गया। यु० मी०।

५. पं० लेखरामजी कृत जीवन चरित्र पृष्ठ ५४१ पर उद्धृत।

६. १५ दिसम्बर (पौष कृष्ण ६) से २४ दिसम्बर (पौष शु० १) तक जयपुर रहे थे। यु० मी०।

७. २४ और २५ दिसम्बर को क्रमशः पौष शु० १ मंगलवार और २ बुधवार सं० १९३५ था। यु०मी०।

सब तरह से खैरियत है हम बहुत आनन्द हैं सब सभासदों को नमस्ते ॥

७ जनवरी १८७९[1] दयानन्द सरस्वती

रिवाड़ी ज़िला गुड़गाँवाँ

[१.१] पत्र (९७) [१३८]

९३७

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![2]

विदित हो कि आप के पास एक पत्र पहिले भेजा गया है पहुंचा होगा, आज फिर लिखा जाता है कि तुम लिखो कि चौथा अङ्क वेदभाष्य का अब तक क्यों नहीं निकला और छापेखाने में आजकल क्या काम हो रहा है और बाबू साहब क्या करते हैं। दो दो महीने हो जाते हैं कि अङ्क नहीं निकलता, ग्राहक लोग बहुत तकाज़ा करते हैं,॥ इस लिए तुम को लिखा है कि जल्दी लिख कर भेजोकि चौथे अङ्क के निकलने में क्या देरी है, हम कल दिल्ली से मेरठ आ गए हैं, यहां पर आठ नव दिन ठहरेंगे, फिर मुज़फ्फ़र नगर, सहारनपुर, रुड़की होते हुए चैत्र मास में हरिद्वार पहुंचेंगे सो जानना ॥

उत्तर शीघ्र भेजो, हम बहुत आनन्द में हैं ॥

मेरठ १७ जन० ७९[3] हस्ताक्षर

दयानन्द सरस्वती

[१.२] पत्र (९८) [१३९]

९४२

पंडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![4]

विदित हो कि १७ जन०[3] को तुम्हारे पास एक पत्र[5] भेजा गया है पहुंचा होगा, आज फिर लिखा जाता है कि तुम जल्दी वहां का हाल तलाश करके लिखो कि चौथा अङ्क हरिश्चन्द्र ने छपवाया है वा नहीं वा छपवा कर रख छोड़ा है और हानि करना चाहते हैं इसका व्योरा जल्दी लिख भेजो और बाबू जी की प्रतिज्ञानुसार माघ महीना पूरा होने वाला है इसलिए तुम उन से अब वेदभाष्य का काम ले लो और पाचवां अङ्क तुमही निकालो, और छापे वालों से इकरार लिखा लो कि हमारा काम मितिवार निकला करे और हम रुपया दूसरे महीने और हर तीसरे महीने तक चुकाते रहेंगे, और तुम रुपये पैसे का कुछ संदेह न करो, हम इसका प्रबंध ठीक ठीक कर देंगे और तुम विस्तारपूर्वक लिखो कि १५०० वा २००० कापी के छापने में कितना खर्च कम होगा, बाबू जी लिखते हैं कि

---

१. पौष शुक्ल १४ सं० मंगलवार सं० १९३५। यु० मी०।

२. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

३. माघ कृष्ण १० शुक्रवार सं० १९३५। यु० मी०।

४. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

५. यह पत्र ऊपर पूर्ण संख्या १३८ पर छपा है। यु० मी०।

१५८० के छपाई में कुल १००) कम होगा जिस में से ७७।) तो कागज़ ही के कम हुए फिर छपाई और बंधाई वगैरे का कुछ भी कम नहीं होता, इससे यह हिसाब तुम तलाश करके विस्तापूर्वक लिखो। जो तुम को हज़ार काम भी हों तो उनको छोड़ कर इस पत्र के प्रत्येक अक्षर का उत्तर लिखकर बहुत जल्दी भेजो, और यहां मेरठ में कई एक धनाढ्य छापाखा[ना] किया चाहते हैं, इस लिए इसका निश्चय करके लिखो कि टाइप आदि के लेने में कितने रुपये लगेंगे॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
मेरठ, १९ जनवरी ७९[१]

जिसे तुम ने मेरठ में फोटोग्राफ खेंचने को कहा था उस ने तैय्यार कर लिया है ५) भेज कर मंगा लो॥

---

[१] **पत्र-सूचना (८)** [१४०]

बखतावरसिंह, शाहजहांपुर

[जयपुर से रिवाड़ी तथा देहली होते हुए मेरठ पहुँचने की सूचना][२]

---

[१] **उर्दू पत्र (९९)** [१४१]

लाला रामशरनदास जीव साहिब आनन्दित रहो।[३]

जो कि तजवीज़ हुई है कि आर्य्यसमाज की तरफ से एक छापहखाना जारी किया जावे। और हर एक हिस्सा मुब्लिग़ सौ रुपया का मुकर्रिर हुआ है। लिहाज़ा हमारे भी उस में दो सौ रुपया

---

१. माघ कृष्ण १२ रविवार सं० १९३५। यु० मी०।

२. मासिक पत्र आर्यदर्पण, जनवरी सन् १८७९, पृ० २४ पर निम्नलिखित सूचना छपी है। उन दिनों यह पत्र उर्दू में निकलता था—

"सब आर्य भाइयों को वाजेह हो कि बतारीख २४ माहे अकतूबर (दिसम्बर चाहिए। भूल से अकतूबर छपा है। भ० द०) सन् ७८ पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती मुकाम जयपुर से रवाना होकर मुकाम रिवाड़ी, ज़िला गुड़गावां में पहुंचे। और ६ तारीख जनवरी को रिवाड़ी से देहली तशरीफ लाए। तारीख १६ जनवरी को देहली से रवाना होकर बमुकाम मेरठ पहुँचे। और वहां पर आठ रोज रह कर मुकाम मुज़फ्फर नगर, देवबन्द, सहारनपुर रुड़की होते और हर जगह हफ़्ता अशरा ठहरते हुए माहे चेत में कुम्भ के मेले पर बमुकाम हरद्वार पहुंच जावेंगे। इतलाअन अर्ज किया, फक्त।" [पूर्ण सं० १३७ में २५ दिसम्बर को रिवाड़ी पहुंचना लिखा है।]

श्री स्वामी जी ने मेरठ से कोई पत्र मु० बखतावर सिंह को शाहजाहांपुर भेजा होगा। उस पत्र में यह सब वृत्तान्त लिखा होगा। उसी पत्र के आधार पर मुंशी जी ने यह सूचना अपने पत्र में छाप दी होगी।

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। यह पत्र सेठ धनपतिराय जी सुपुत्र ला० रामशरनदास जी मेरठ से प्राप्त हुआ था। ला० मामराज जी इसे लाए थे॥

के दो हिस्सा शामिल कर लेवें। और जब आप चाहें रुपया मज़कूर हम से ले लेवें।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

मेरठ, २० जनवरी सन् १८७९[1]　　　　दयानन्द सरस्वती

---

[१९]　　　　विज्ञापन　　　　[१४२]

ओं नमः सर्वशक्तिमते परमेश्वराय
विज्ञापनपत्रमिदम् ॥[2]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज विक्रमादित्य के सं० १९३५ फा० शु० ६ गुरुवार को हरिद्वार में आकर श्रवणनाथ के बाग के पास निर्मलों की छावनी के सामने बूचा नाला के पार मूलामिस्त्री के खेतों में ठहरे हैं। जो महाशय मनुष्य उन स्वामी जी से संभाषण करके लाभ उठाना चाहें, वे पूर्वोक्त स्थान पर उपस्थित होकर सभ्यता और प्रीतिपूर्वक वार्त्तालाप करें॥

सब सज्जनों के लिये वेदोक्त उपदेश

ऐसा कौन मनुष्य होगा जो अपना, अपने बन्धुवर्गों का हित और परमेश्वर की आज्ञा का पालन करना न चाहे। क्या कोई ऐसा भी मनुष्य है जो परस्पर मित्रता, सदुपदेश, प्रीति, धर्मानुष्ठान, विद्या की वृद्धि, दुष्टकाम और आलस्य के त्याग, श्रेष्ठ कामों के सेवन, परोपकार और पुरुषार्थ के विना सर्वहित कर सके। और ईश्वर प्रतिपादित वेदोक्त अनुसार आचरण किये विना सुख को प्राप्त हो सके। इसलिये आर्यों के इस महा-समुदाय में वेदमन्त्रों के द्वारा सब सज्जन मनुष्यों के हित के लिये ईश्वरकी आज्ञा का प्रकाश संक्षेप से किया जाता है। जिसको सब मनुष्य देख सुन और विचार कर ग्रहण करें। और इस मेले में तन मन और धन से आने के सत्य सुखरूप फलों को प्राप्त हों और अपने मनुष्य देहरूप वृक्ष के धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी चार फलों को पाकर जन्म सुफल करें। और अपने सहचारी लोगों को भी उक्त फलों की प्राप्ति करावें। इस विषय में नीचे लिखे वेदमन्त्रों का प्रमाण देख लीजिये।

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव। १।

ऋ० मं० ५ सू० ८।

उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवामफलामपुष्पाम्। २।
यस्तित्याज्य सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम्। ३।

---

१. माघ कृष्ण १३ सोमवार सं० १९३५

२. यह अद्भुत विज्ञापन संवत् १९३५ के कुम्भ के मेले पर सहस्रों की संख्या में हरिद्वार के समस्त मार्गों, घाटों, पुलों और मन्दिरों की दीवारों पर लगवाया गया था।

पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ६१६-६१८ पर देवनागरी अक्षरों में उद्धृत है।

सर्वे नन्दन्ति यशसागतेन सभासाहेन सख्या सखायः ।
किल्विषस्पृत्पितुषणिर्ह्येषामरं हितो भवति वाजिनाय । ४ ।
सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत ।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि । ५ ।

ऋ० मं १० सूक्त ७१ मन्त्र ५ । ६ । १० । २ ॥

सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥
ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः । ६ ।

तैत्तिरीयारण्यके प्र० ६ । अनु० १ ।

॥ इन मन्त्रों के अर्थ ॥

सब मनुष्य इस प्रकार ईश्वर की प्रार्थना करें कि हे (देव) सब सुखों के देने और (सविता सब जगत की उत्पत्ति और धारण करने वाले परमेश्वर, आप कृपा कर के (नः) हमारे जितने (विश्वानि) सब (दुरितानि) दुष्ट कर्म और दुःख हैं, उन सब को (परासुव) दूर कीजिये और (यत) जो (भद्रम्) शुभकर्म और नित्य सुख हैं उनको हमारे लिये सदा प्राप्त कीजिये । १ ।

परमात्मा ऐसे धार्मिक मनुष्यों को वेद और अन्तर्यामीपन से उपदेश करता है कि जो अविद्वान मनुष्य (अपुष्पाम्) साधन रूप पुष्पों और (अफलाम्) अर्थ काम और मोक्ष रूपी फलों से रहित (वाचम्) अर्थ ज्ञान के विना वाणी को (शुश्रुवान) सुन कर (एषः) यह पुरुष (अधेन्वा) सुशिक्षा शब्द अर्थ औरसम्बन्ध के वोध रहित वाणी और छल कपटादि बुरे कामों से युक्त होकर (चरति) चलता है, जिसको अज्ञानी (आहुः) विद्वान् लोग कहते हैं (उत्) जिसको कुछ भी दुःख (न) नहीं प्राप्त होता और जो आप विद्वान होकर (एनम्) इस विद्या रहित मनुष्य को (स्थिरपीतम्) दृढ़विद्यायुक्त करके (हिन्वन्ति) बढ़ाते (त्वम्) उसको (सख्ये) वैर विरोध छुड़ा कर मित्र होने के लिये प्राप्त करते (अपि) और उसको (वाजिनेषु) अतिश्रेष्ठ गुणकर्म युक्त करके सुखी कर देते हैं, वे मनुष्य धन्य हैं । २ ।

इन से विरुद्ध (यः) जो मनुष्य (सचिविदम्) सब से प्रीति प्रेम भाव से सब को सुख प्राप्त कराने वाले (सखायम्) सर्वहितकारी मित्रों को (तित्याज) छोड़ देता है अर्थात् औरों से मित्र भाव नहीं रखता (तस्य) उसका (वाचि) सुशिक्षित विद्या की वाणी में (अपि) कुछ भी (भागः) अंश (नास्ति) नहीं है, अर्थात् वह भाग्यहीन पुरुष और (यत्) जो कुछ वह विद्वानों वा अविद्वानों के मुख से (ईम) शब्द को (शृणोति) सुनता है सो सब (अलकम्) अर्थ प्रयोजन रहित (शृणोति) सुनता है अर्थात् वह विद्या और ज्ञान के विना अर्थ का अनर्थ और अनर्थ का अर्थ समझ कर (सुकृतस्य) धर्म्म के (पन्थाम्) मार्ग को (न हि प्रवेद) कभी नहीं जान सकता । और जो आप सब का मित्र और सब को अपने मित्र समझ के सत्य से सब का उपकार करता है, वही धर्म्म के मार्ग को जान कर आप उसमें चल और सब को चला के धन्यवाद के योग्य होता है ।३।

इन का ऐसे न होने और होने चाहिये। जो मनुष्य (वाजिनाय) विद्यादि शुभ गुण प्राप्ति करने और कराने के लिये (किल्बिषस्पृत्) पाप का सेवन कराने द्वारा (पितुषणिः) स्वार्थी (भवति) होता है, वह सुख को कभी प्राप्त नहीं होता। और जो (हि) निश्चय करके (एषाम्) इन मनुष्यादि वर्त्तमान जीवों का (अरं हितः) अत्यन्त हितकारी है, उस (यशसा) कीर्तिमान् (सभासाहेन) सभा का भार उठाने और सभा को उन्नति करने (आगतेन) सब प्रकार से प्राप्त होने वाले (सख्या) मित्र के साथ (सखायः) मित्र भाव रखते हैं वे (सर्वे) सब लोग (नन्दन्ति) परस्पर सदा आनन्दयुक्त रहते हैं।४।

जहाँ ऐसे मनुष्य होते हैं, वहां दुःख का क्या काम है। (सक्तुमिव) जैसे सत्तू को (तितउना) चालनी से छान कर सार असार को अलग २ करके शुद्ध कर देते हैं, वैसे (यत्र) जिस देश, जिस समुदाय, जिस सभा में (धीराः) धार्मिक विद्वान् लोग (मनसा) विज्ञान और प्रीति से (वाचम्) वाणी को सुशिक्षित और विद्या युक्त करके सत्य का सेवन और असत्य का त्याग करने के लिए (सखायः) परस्पर सुहृद होकर (सख्या) मित्रों के कर्म्म और भावों को (जानते) जानते और जनाते हैं। (अत्र) इस में वर्त्तमान होने वाले (एषाम्) मनुष्यों ही की (वाचि) सत्य वाणी में (भद्रा) कल्याण और सुख करने वाली (लक्ष्मी) विद्या शोभा और चक्रवर्ती राज्य की श्री (निहिता) सदा स्थित रहती है, और जो एक दूसरे के साथ सुख करने में निश्चित नहीं होते, उनको दरिद्रता घेर कर सदा दुःख देती रहती है।।५।।

इसलिए हे मनुष्य लोगो तुम ऐसा समझ के इस आगे लिखी बात को सदा करते रहियो।

(सह नाववतु) हम लोग परस्पर एक दूसरे की रक्षा सदा करते (सह नौ भुनक्तु) एक दूसरे के साथ विरोध छोड़ कर आनन्द भोगते (सह वीर्यं करवावहै) और एक दूसरे का बल पराक्रम, विद्या और सुख को बढ़ाते रहें और (तेजस्विनावधीतमस्तु) हमारे बीच में विद्या का पठन पाठन (तेजस्वी) अत्यन्त प्रकाश युक्त हो। (मा विद्विषावहै) और हम लोग आपस में वैर विरोध कभी न करें। इस प्रकार चाल चलन शुद्ध करने से (ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः) जो हमारे (अध्यात्मिक) शरीर की पीड़ा (आधिभौतिक) शत्रु आदि से पराजय आदि क्लेश का होना, (आधिदैविक) अर्थात् अति वर्षा होने, न होने आदि और मन आदि इन्द्रियों की चञ्चलता से तीन प्रकार का दुःख होता है वह कभी उत्पन्न न हो, किन्तु सदा सब सुख बढ़ते रहते हैं।

विचारना चाहिये ।। हे मनुष्य लोगो ! ऊपर लिखी व्यवस्था पर आत्मा में ध्यान देकर देखो कि परमेश्वर ने वेद द्वारा हम सब मनुष्यों को सुखी होने के लिये कैसा सत्योपदेश किया है कि जिस में चलने से अपने लोगों में सब दुःखों का नाश और सत्य सुखों की वृद्धि बनी रहे। क्या तुम ने नहीं सुना कि अपने पुरुष ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्य्यन्त महर्षि और स्वायंभव[मनु] से लेके महाराजे युधिष्ठिर पर्य्यन्त राजर्षि लोग वेदोक्तधर्म्म के अनुकूल चलके कैसे २ बड़े विद्या और चक्रवर्ती राज्य के असंख्यात सुखों को भोगते, विमान आदि सवारियों में बैठते, सर्वत्र विद्या और धर्म को फैला कर सदा आनन्द में रहते थे। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, दिन, रात, प्रहर, मुहूर्त, घड़ी, पल, क्षण, आँख, नाक, कान आदि, शरीर, ओषधि, वनस्पति, खाना, पीना आदि व्यवहार ज्यों के त्यों बने हैं और हम आर्यों का हाल क्यों बदल गया। हे मनुष्यो ! आप लोग अत्यन्त विचार करके देखो कि जिसका फल दुःख वह धर्म्म और जिसका फल सुख वह अधर्म्म कभी हो सकता है ? अपना हाल अन्यथा होने का यही कारण है कि जिसको ऊपर लिख चुके,

वेद-विरुद्ध चलना। और उस प्राचीन अवस्था की प्राप्ति कराने वाला कारण वेदोक्तानुकूल चलना है। और वह चाल चलन यह है कि जैसा आर्य्यावर्त्तवासी आर्य्य लोग आर्य्यसमाजों के सभासद करते और कराना चाहते हैं कि संस्कृत विद्या के जानने वाले स्वदेशियों की बढ़ती के अभिलाषी, परोपकारक निष्कपट हो के सब को सत्यविद्या देने की इच्छा युक्त, धार्मिक विद्वानों की उपदेशक मण्डली और वेदादि सत्य शास्त्रों के पढ़ने के लिये पाठशाला किया चाहते हैं। इस में जिस किसी आर्य्य की योग्यता हो वह अपने अभिप्राय को प्रसिद्ध करके इस परोपकारक महोत्तम कार्य्य में प्रवृत्त हो। इसी से मनुष्यों की शीघ्र उन्नति हो सकती है। मैं[1] निश्चित जानता हूं कि इस बात को सुन के सब भद्र लोग स्वीकार कर के आर्योन्नति करने में तन, मन, धन से प्रवृत्त होंगे निस्सन्देह ॥

भूतरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे माघमासि सिते[2] दले।
अमायां बुधवारे वै पत्रमेतदलेखिषम् ॥[3]

---

(१) पत्र (१००) [१४३]

नं० १००७

श्रीयुत कृपाराम स्वामी आनन्द रहो !

ता० १ फरवरी सन १८७९ का लिखा रजिस्टर पत्र पहुँचा। देख कर आनन्दित होके समाचार जानके प्रत्युत्तर लिखता हूँ। वहाँ रहने वालों से मेरा आशीर्वाद कहना। वहां आने में मुझको बहुत प्रसन्नता है। परन्तु मैं अनुमान करता हूँ कि जो बन सकेगा तो सं० १९३६ वैशाख लगते ही आने का सम्भव है। यहां सहारनपुर से ता० ६ फरवरी को रुड़की को जाके वहां ८ वा १५ दिन रह के हरद्वार में जाके कनखल और ज्वालापुर के बीच नहर के पुल पर बड़ी सड़क पर मूला मिस्तरी के बाग़ में डेढ़ महीना ठहरने का विचार है। पीछे आप लोगों के यहाँ आने का विचार है। सो जानिये। क्या आप लोगों से मैं नहीं मिला चाहता ऐसा सम्भव है।

सम्वत् १९३५ मिति माघ शु० १० आदित्यवार।[4]

दयानन्द सरस्वती

---

१. विज्ञापन के अन्त में श्री स्वामी जी का नाम अवश्य होगा। यहां मैं शब्द से वे अपना संकेत करते हैं। [इस विज्ञापन का निर्देश अगले पत्र पूर्ण संख्या १४५ पृष्ठ १३१ में भी है।]

२. पं० लेखराम जी के जीवन चरित में "माघमासासिते दले" शुद्ध पाठ है। ऊपर के पाठ में किसी कारण अशुद्धि हो गई प्रतीत होती है।

३. २२ जनवरी १८७६। यह विज्ञापन चशमाए फैज प्रेस मेरठ में छपा था।

४. मूल पत्र अतिजीर्ण पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार की भगिनी के पास हरिद्वार गुरुकुल काङ्गड़ी में है। इसे हमने पहले मेरठ से आई प्रतिलिपी से छापा था, फिर सन् १६३३ में ला० मामराज जी ने मूल पत्र से मिला लिया था। यह पत्र सहारनपुर से देहरादून भेजा गया था। २ फरवरी १८७६ ॥

[१३] पत्र (१०१) [१४४]

सं १९३५ मि० फाल्गुण शु० ८ शनि ता० १ मार्च १८७९।[1]

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्दित रहो!

ता० २४ फरवरी का लिखा पत्र आप का आया, सब हाल विदित हुआ। मेरी ओर से पाताल देश वासी लोगों को बहुत २ प्रेम प्रीति के साथ आशीर्वाद यथोचित कहके कुशल क्षेम पूछना और वे वहां कितने दिन रहके किधर २ जाना होगा। जब लाहौर आदि समाजों में जाना हो तब पहिले ही हम को विदित कर देना उचित है, उन का सत्कार यथायोग्य सर्वत्र हो और वे मुम्बई में नवीन समाज और थियोसोफिकल सुसायटी का स्थापन करेंगे सो क्या बात है समाज तो है ही है, पुनर्नवीन समाज और थियोसोफीकल का स्थापन करना कुछ समझ में नहीं आया, इस का खुलासा लिखो, जिस से समझना सुगम हो। आगे जो रुपैयों के विषय में लिखा सो विदित हुआ, उन सब की इच्छा हो तो वेदभाष्यादि के छपाने में खरच हो तो अच्छा है, आगे इस से अधिक परोपकारक विषय हम को नहीं विदित होता, आगे जैसी सब की प्रसन्नता हो सो करें। आगे एक मुन्शी समर्थदान वेदभाष्य का काम वहां करेगा। यह बड़ा भद्र पुरुष है, नागरी पारसी तो अच्छी तरह से जानता है थोड़ी सी इंगरेजी भी जाने है, अपने घर का प्रतिष्ठित मातवर पुरुष है। यह यहां हरद्वार से दो चार दिनों में मुम्बई को आने के लिये रवाना होके वहां पहुँचेंगे। इस को सब काम छापे वालों से और कागज वालों से नियम व्यवहार करा देना और इन को किसी प्रकार का दुःख न हो, स्थान आदि का प्रबन्ध कर देना, सब से मिलाप भी करा देना और एक चपरासी भी, मातवर आगे का हो तो वही नहीं तो कोई दूसरा रखवा देना, ठीक २ व्यवस्था करवा देना चाहिये॥

(दयानन्द सरस्वती)

---

[१४] पत्र (१०२) [१४५]

सं० १९३५ मि० फाल्गुण शु० ११ मंगल ता० ४ मार्च १८७९।[2]

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्दित रहो!

तुम्हारा ता० २६ फरवरी का लिखा पत्र आया सब हाल विदित हुआ। मैं बहुत शोक इस बात में करता हूं कि हमारे प्रिय बन्धुवर्ग पाताल देश निवासी लोगों को मुबई में आके मिल नहीं सकता, क्योंकि हरद्वार में चैत्र की समाप्ति पर्य्यन्त ठहरने का नोटिस फाल्गुण शुदि ६ गुरुवार से दे चुका हुँ[3] और यहां इस बात कि प्रसिद्धि भी कर चुका हूँ, अब इस बात को अन्यथा नहीं कर सकता। जब वे इस देश में लाहौर आदि के समाजों को देखने को आवेंगे तब यहां वा कहीं अत्यन्त प्रेम के साथ उन से मिलूंगा और बात चीतें भी यथोचित होंगी। उन से मेरा आशीर्वाद कहके कुशल क्षेम प्रेम

---

१. यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामीजी के स्वहस्त से लिखा हुआ है। मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्माजी के संग्रह में सुरक्षित है। हरिद्वार से लिखा गया।

२. यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामी जी के स्वहस्त से लिखा हुआ है। मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्माजी के संग्रह में सुरक्षित है।

३. यह नोटिस पूर्ण संख्या १४२ पृष्ठ १२७-१३० तक छपा है। यु० मी०।

से पूछना और जो तुमने समाज के विषय में लिखा कि न आओगे तो यहां का आर्य्यसमाज टूट जायगा क्या तुम ने समाज हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के ही भरोसे किया था और जो मेरे आने जाने पर ही समाज की स्थिति है तो मैं अकेला कहां २ जा आ सकता हूँ जो समाज में अयोग्य प्रधान हो उसको छुड़ा कर दूसरा नियत करके समाज का काम ठीक २ चलाना चाहिये। कल यहां से चल के मुन्शी समर्थदान वेदभाष्य के काम पर नियत होके मुम्बई को आते हैं, तुम से मिलेंगे । छापेवालों और कागजवालों से ठीक २ नियम करा देना और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि से भी सब पुस्तक पत्रे दिला देना, सब हिसाब किताब करा के शीघ्र खुलासा करा देना और इन को मकान आदि का क्लेश कुछ भी न होने पावे ॥

(दयानन्द सरस्वती)

———

[१.९] पत्र (१०३) [१४६]

सं० १९३५ फाल्गुण शुदि १२ बुधवार ता० ५ मार्च १८७९[1]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतश्यामजिकृष्णवर्मभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशीषो भूयासुस्तमां, शमिहास्ति तत्रत्यं भवदादीनां च नित्यमाशासे ॥ अग्र इदं बोध्यमेकं मनस्विनं समर्थदान-नामानं पुरुषं वेदभाष्यप्रबन्धार्थं भवत्सनीडं मुम्बापुर्यां वर्त्तमानेऽहनि प्रेषयामि, यथासमयमयं तत्र प्राप्स्यत्यस्मै कथंचित्क्लेशो न स्यात्तथानुष्ठेयं, वेदभाष्यसम्बन्धिकार्याणि संसेधनीयानि, नैवात्र विलंबः कार्य इति ॥ ये तत्र सभासदः सज्जनाः सन्ति तैः सह संमेलनम् । ये तत्र पातालदेशनिवासिनो वर्त्तन्ते तेभ्योऽत्यन्तादरेणाशिषः संश्राव्य कुशलक्षेमता प्रष्टव्या ॥ यथा मयि प्रीति वर्त्तते तथैवैतस्मि[न्] प्रेम-भावो विधेयो विद्याऽध्ययनसहायः स्थानभृत्यप्रबन्धश्च यथावत्समर्थदानस्य कार्य इति च ॥

(दयानन्द सरस्वती)

———

[१.] टिप्पणी [१४७]

इन पुस्तकों में से शिक्षापत्री ध्वान्तनिवारण को छोड़ के और सब पुस्तक आधे हमारे पास भेजो और आधे वल्लभदास जी के पास भेजिये ।[2]

(दयानन्द सरस्वती)

———

१. यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामी जी के स्वहस्त से लिखा हुआ है । मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है ।

२. आर्यसमाज लाहौर के पुस्तकाध्यक्ष श्री वल्लभदास का एक पत्र पूर्ण पत्र संख्या १४० के साथ लगा है । उस पर श्री स्वामी जी ने यह टिप्पणी दी है ।

[३] **पत्रांश (१०४)** [१४८]

[मुन्शी समर्थदान……………………][1]
मुम्बई जा कर अमरीका वालों से मिलना और हाल लिखना ॥
चैत्र वदी २, सोमवार संवत् १९३५ ॥[2]
(हरद्वार)

[१.२] **पत्र (१०५)** [१४९]

Hardwar.
16 March 1879.[3]

Lalla Madho Lall
Secretary, Arya Samaj
Dinapore,[4]

Dear Sir,

I have the pleasure to acknowledge receipt of your letter of 13th instant, containing 3 Currency notes aggrigating Rs. 20/- and postage stamps for annas five, being cash of the books mentioned therein :—

I am very glad to hear that efforts are being made for establishing Arya Sanskrit Patsala still more that Rs. 102/5 are collected in its aid. I shall be happy to hear further of your progress-

There are 10 copies of Satyarth Prakash available. The other contents of your letter the 5th Number of Veda Bhash.

Always your well wisher.
[दयानन्द सरस्वती]

[भाषानुवाद]

हरद्वार
१६ मार्च १८७९[3]

लाला माधोलाल
मन्त्री आर्य्यसमाज
दीनापुर[4]

प्रिय महाशय !

आप का १३ तारीख का पत्र मिला, प्रसन्नता हुई। उस में ३ करेन्सी नोट २०) रु० के और पाँच आना के टिकट थे। यह रुपया वहाँ लिखी पुस्तकों का मूल्य है।

---

१. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३४ पर इतना अंश उद्धृत है।

२. १० मार्च १८७६।

३. [चैत्र कृष्ण ६, रविवार सं० १६३५] मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

४. यहां लेखक प्रमाद से दानापुर का दीनापुर बन गया है।

मुझे यह सुन कर बहुत प्रसन्नता हुई है कि आप आर्य्य संस्कृत पाठशाला का यत्न कर रहे हैं, और भी अधिक प्रसन्नता इस बात की है कि १०२।-) रु० इस की सहायता में एकत्र हो गये हैं।

मैं आगे आप की उन्नति सुन कर प्रसन्न हूँगा।

सत्यार्थप्रकाश की १० प्रतियाँ मिल सकती हैं। आप की दूसरी बात का उत्तर है, वेदभाष्य का पाँचवाँ अङ्क।

आप का सदा हितैषी
(दयानन्द सरस्वती)

———

[३] **पत्र-सूचना** [१९०]

कर्नल अलकाट......।[1]

ता० २४ मार्च (चैत शु० २ सोम, सं० १९३६)

———

[४] **पत्रांश (१०६)** [१९१]

....

अमरीका वालों से अति प्रेम से हमारा नमस्कार कहना और उन से कुशलता पूछना कि लाहौर आदि के समाज में आप लोगों के लिये तय्यारी कर चुके हैं, वहाँ कब तक जावेंगे और **उन्होंने संस्कृत पढ़ने का आरम्भ किया है वा नहीं** और जो कुछ वे हमारे विषय में कहा करें सो लिख दिया करना और हम नहीं लिखें तो भी उन की कुशलता आदि सदैव लिखते रहें। यहाँ मेला अब तक साधुओं का ही है। गृहस्थ लोग तो कम आए हैं। हम ने एक पत्र कर्नल अलकाट साहब को २४ ता० को और दिया है। तुम उन से उत्तर लिखवाना[2]। शामलाल खन्ना को नमस्ते। चैत्र सुदी ४ संवत् १९३६। हरद्वार।

२६ मार्च १८७९[3] दयानन्द सरस्वती

———

[५][4] **पत्रांश (१०७)** [१९२]

....

दो लाख के लगभग वैरागी तथा सन्यासी आदि आए हैं। मेला के समाप्त होने का समाचार है। हैजा से ५ व्यक्ति तीन दिन में मर गये हैं।

चैत्र सु० [४][5] [सं० १९३६] दयानन्द सरस्वती
२७ मार्च १८७९ हरद्वार

———

१. इस पत्र की सूचना अगली पूर्ण संख्या १५१ के पत्र में है।

२. प्रबन्धकर्ता वेदभाष्य (मुं० समर्थदान ?) को लिखा गया।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत। [२६ को चतुर्थी का भी संयोग था।]

४. प्रबन्धकर्ता वेदभाष्य (मु० समर्थदान) को लिखा गया।

५. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत। ४ के स्थान में वहां माघ पाठ है। यह माघ पाठ अशुद्ध है।

[६] पत्रांश (१०८) [१५३]

……………… … … …

हम को पन्द्रह दिन से दस्त आते हैं।[1] दिन भर में १०, १२। अब दिन दिन से आराम है परन्तु निर्बलता बहुत है। सो यहाँ से १२ ता० को देहरादून के पर्वत को जावेंगे। वहाँ से मुम्बई आने का प्रबन्ध करेंगे जब शरीर अच्छा होगा, सो तुमने अमरीका वालों से कह देना। उनको समझा दो कि हमारा शरीर महीने ढेढ़ तथा दो से कम में अच्छा भी नहीं होगा और जो इस गर्मी के दिनों में रेल में भी बड़ी गर्मी होगी। सो आठ दिन के जाने और आठ दिन के आने में बड़ा कष्ट होगा और देह को बड़ा दुःख होगा। तुम उनको अच्छे प्रकार सन्तुष्ट कर देना कि हम अवश्य आवेंगे जिस दिन हमारी देह को आराम होगा। और हम को बड़ा दुःख है कि अमरीका वाले ऐसे समय में आए हैं जिसमें हमारा उनसे शीघ्र मिलाप नहीं हो सकता।

चैत्र शुक्ल ११ [सं० १९३६]।[2] २ अप्रैल १८७९ दयानन्द सरस्वती
हरिद्वार

———

[१] पत्रसारांश[3] (१०९) [१५४]

स्वामी विशुद्धानन्द

मैं जो बात कर रहा हूँ उस को आप सब लोग जानते हैं कि वह सर्वथा ठीक है, परन्तु विद्वान् होते हुए भी आप उसे प्रसिद्ध क्यों नहीं करते।[4]

[१] पत्रसारांश[3] (११०) [१५५]

स्वामी जीवनगिरि

… … …… … … … … … … …।[5]

———

[१] पत्रसारांश[3] (१११) [१५६]

स्वामी सुखदेवगिरि जी

……… … … … … … … …।

———

१. अर्थात् १८ या १६ मार्च अर्थात् चैत्र वदी ११ या १२ से।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत। यह पत्र सम्भवतः मु० समर्थदान को मुम्बई लिखा गया है।

३. यह पत्रसारांश पं० देवेन्द्रनाथ जी संकलित जीवनचरित पृ० ५३१ पर उद्धृत है। यु० मी०।

४. इस पत्र की तिथि अज्ञात है। यह सं० १९३६ (सन् १८७९ के हरिद्वार के कुम्भ के मेले में लिखा गया था। यु० मी०।

५. इन को भी पूर्व संख्या १५४ वाला अभिप्राय ही लिख कर भेजा गया था। देखो टि० ३। यु० मी०।

पत्रसारांश (११२)[1] [१५७]

शास्त्रार्थ के लिए मैं हर समय उद्यत हूं, परन्तु उस का प्रबन्ध कर्त्ता कोई राजपुरुष हो। शास्त्रार्थ में पण्डितों के अतिरिक्त कोई अपठित मनुष्य न आने पाए। शास्त्रार्थ की जगह न मेरी हो न आप की। जूना अखाड़ा में आने में मुझे शारीरिक हानि पहुँचने का भय है। शरीरपात की तो मुझे चिन्ता नहीं, परन्तु जो उपकार कार्य मैं कर रहा हूँ वह अधूरा रह जायेगा।

[वैशाख वदी १ सं० १९३६][2]

———

पत्रसारांश[3] (११३) [१५८]

यदि स्वामी विशुद्धानन्दजी कह दें कि आप लोग मेरी अपेक्षा वेदों को अधिक समझते हैं, तो मैं शास्त्रार्थ करने को उद्यत हूँ और मैं उन्हीं को मध्यस्थ नियत करता हूँ।[4]

———

[७] पत्रांश[5] (११४) [१५९]

तुम्हारे जाने के पीछे हमारा शरीर अच्छा नहीं रहा। अर्थात् ४०० से अधिक अधिक दस्त हुए। इस से शरीर अति दुर्बल हो गया। विचार था कि शरीर अच्छा रहा तो हम हरद्वार से ही मुम्बई को अवश्य आते, परन्तु अब यहां[से] देहरादून जाने का विचार है। सो वहां जा कर थोड़े दिनों में शरीर अच्छा हो जायगा। तब आने के विषय में लिखेंगे। सो तुम ने अमरीका वालों के पास हमारा नमस्ते कहना और किसी प्रकार का सोच विचार वे लोग न करें। क्योंकि मुम्बई में आ कर उन लोगों से हम अवश्य मिलेंगे। मुन्शी इन्द्रमणि जी भी यहां हमारे पास आ कर ठहरे हैं और मेला भी कुछ विशेष नहीं जुड़ा है।

वैशाख सु० २ संवत् १९३६[6] दयानन्द सरस्वती
हरद्वार

———

१. पत्र का यह सारांश पं० देवेन्द्रनाथ संकलित जीवनचरित पृष्ठ ५३५ पर उद्धृत है। यु० मी०।

२. यह पत्र हरिद्वार के कुम्भ के मेले में वैशाख वदी १ सं० १९३६ (७ अप्रैल १८७९) को शास्त्रार्थी पण्डितों की ओर से लिखे गये पत्र के उत्तर में उसी दिन लिखा गया था। यु० मी०।

३. पत्र का यह सारांश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जीवनचरित्र पृष्ठ ५३५ पर उद्धृत है यु० मी०।

४ यह पत्र पूर्ण संख्या १५७ के पत्र के कुछ दिनों के अनन्तर (परन्तु वैशाख वदी ८ सं० १९३६–१४ अप्रैल १७७९) से पूर्व लिखा गया था, क्योंकि इसी तिथि को श्री स्वामी जी देहरादून चले गये थे। यु० मी०।

५. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६२४ पर उद्धृत। यह पत्र संभवतः मुंशी समर्थदान को मुम्बई में लिखा गया है। मुंशी समर्थदान को ही वेदभाष्य के प्रबन्धकर्ता के रूप में ता० ५ मार्च को श्री स्वामी जी ने हरिद्वार से मुम्बई भेजा था। देखो पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा के नाम का पत्र, पूर्ण संख्या १४६ पृ० १३२।

६. ८ अप्रेल १८७९ मंगलवार। वैशाख वदी चाहिये। सुदी छापने में जीवनचरित की भूल है [क्योंकि वैशाख वदी ८ (१४ अप्रेल) को श्री स्वामी जी देहरादून चले गये थे]।

[१३] पत्र (११९) [१६०]

Hardwar.
10-4-78[1]

Baboo Madho Lall[2]

Arya Samaj,
Dinapore.[3]

Dear Sir,

Informs that American Mission (*col.* H. S. Olcott and countess H. Blavatsky) is coming to see me at Dehra Dun about the 14th current and I hope will stay with me for some months.

Sd. Dianand Sarasswatti.
द: दयानन्द सरस्वती

———

[भाषानुवाद]

हरद्वार
१०-४-७८.[1]

बाबू माधोलाल

आर्यसमाज दीनापुर[3]।

प्रिय महाशय !

आप को सूचित किया जाता है कि अमेरिकन मिशन (कर्नल एच० एस० अल्काट और काऊण्टेस एच० ब्लवत्स्की) इस मास की १४ तक मुझे देहरादून मिलने आ रहा है और मैं आशा करता हूँ कि मेरे साथ कुछ मास तक ठहरेंगे ॥

दयानन्द सरस्वती

———

[२०] विज्ञापन [१६१]

नोटिस[4]

(१) सब को विदित हो कि वेदभाष्य के तीसरे वर्ष का आरम्भ सम्वत् १९६६ के वैशाख मास के छठे अङ्क से गिना जायगा। और पीछे के दो वर्षों का हिसाब ग्राहकों के पास प्रतिमास अङ्क

१. यहां ७८ भूल से लिखा गया है। ७९ चाहिये। [वैशाख कृष्ण ४ बृहस्पति सं० १९३६।]

२. मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

३. इस पत्र में भी दानापुर को दीनापुर लेखक प्रमाद से लिखा गया है।

४. यह नोटिस ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के अङ्क पांच के टाइटल पेज ३, ४ पर छपा है। यह अङ्क देर से निकला था। नोटिस सम्भवतः वैशाख कृ० ७-३० के बीच में लिखा गया था।

न पहुँचने के कारण से ठीक न रहा। इसलिए हम वर्षों के हिसाब को छोड़कर अङ्कों का हिसाब लगाते हैं॥ एक अङ्क नमूने का १६ भूमिका के और इस अङ्क सहित १० अङ्क दोनों वेदों के निकले, सब मिलाने से २७ अङ्क हुए॥ इनमें से १२ अङ्कों के ४॥) रुपये और शेष १५ के (२४ अङ्कों के ८) रु० के हिसाब से ५) रु० हुये॥ सम्वत् १९३६ के वर्ष के दो वेदों के २४ अङ्कों के ८) रु० रक्खे हैं। जिन लोगों ने वेदभाष्य के आरम्भ से आज तक रुपये नहीं दिये हैं, वे इस अङ्क तक के ९॥) रु०, सं० ३६ के अन्त तक के १७॥) रु० और जो लोग ४॥) रु० दे चुके हैं वे इस अङ्क तक के ५) रु० और उक्त सं० के अन्त[त]क के १३) रु० और जो लोग ११) रु० दे चुके हैं वे अगले वर्ष के लिये ६) रु० भेजें। यह दो वेदों का हिसाब हुआ॥ एक वेद के ग्राहकों के पास १ अङ्क नमूने का १६ भूमिका के और इस अङ्क सहित ५ अङ्क वेद के पहुँचे सब मिलाने से २२ अङ्क हुये। इनमें से १२ अङ्कों के ४॥) रु० और बाकी के १० अङ्कों के (१२ अङ्कों के ४) रु० के हिसाब से) ३।-)॥ हुये। अगले वर्ष के १२ अङ्कों के ४) रु० हैं। जिनके रुपये भाष्य के आरम्भ से उधार हैं वे अब तक के ७॥।-)॥ और सं० ३६ के अन्त तक के ११॥।-)॥ और जिन्होंने ४॥) रु० दे दिये हैं वे अब तक के ३।-)॥ और अगले वर्ष के अन्त तक के ७।-)॥ और जो लोग ८॥) रु० दे चुके हैं वे अगले वर्ष के ३।-)॥ देवैं॥ अब जो नया ग्राहक होना चाहे वह सं० ३६ के अन्त तक के दो वेदों के १७) और एक वेद के ११॥) रु० भेजें। आगे नये ग्राहकों को नमूने का अङ्क नहीं मिलेगा। जो कोई भूमिका के बिना केवल वेद ही लिया चाहे सो नहीं मिल सकते[1] किन्तु भूमिका ५) रु० देने से पृथक् मिल सकती है॥

(२) सब ग्राहकों को विदित किया जाता है कि इस पाँचवें अङ्क से मुम्बई में वेदभाष्य का प्रबन्ध अर्थात् भाष्य का चन्दा वसूल करना, मासिक अङ्क छपकर ग्राहकों के पास भेजना, नवीन ग्राहक करना आदि वेदभाष्य सम्बन्धी जो काम बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणी जी करते थे, सो हमारी ओर से मुनशी समर्थदान करेंगे और पण्डित उमरावसिंह भी चन्दा वसूल करना, नये ग्राहक करना, मुम्बई के सिवाय सब स्थानों के उधार वाले ग्राहकों से तक़ाज़ा करके रुपये वसूल करना, ये सब काम करेंगे। अब नीचे लिखे ठिकानों से रोक रुपये देने पर वेदभाष्य का पुस्तक मिला करेगा।

मुनशी समर्थदान प्रबन्ध कर्त्ता "वेदभाष्य कार्यालय" मारवाड़ी बाज़ार मुम्बादेवी की चाली मुम्बई॥ (Munshi Samartha Dana Manager of the Veda Bhashya office Marawari Bazar Mumba Devi's chalee Bombay.)

पण्डित उमरावसिंह मंत्री आर्य्यसमाज रुड़की ज़िला सहारनपुर। और जहां मैं स्थित होऊं वहाँ के लोग रुपया दे सकते हैं और पुस्तक ले सकते हैं, परन्तु पत्र द्वारा मेरे पास रुपये भेजने और मेरे पास से पुस्तक मंगाने का कुछ काम नहीं। पर पत्र द्वारा तो ऊपर लिखे दोनों स्थानों में जिसको जहाँ सुगम हो रुपये भेजकर पुस्तक मंगावें। अब पीछे कोई भी ग्राहक भाष्य सम्बन्धी रुपया और पत्र बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणी जी के पास न भेजे।

(३) यह बड़े उत्साह की बात है कि वेदभाष्य के ग्राहक बहुत से हो गये हैं। कि जिनकी सहायता से इस महान् कार्य वेदभाष्य के बनने और छपने का काम अच्छी तरह से चल सके, परन्तु

---

१. अर्थात् कोई भी ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका पढ़े बिना स्वामी जी का वेदभाष्य का ठीक ठीक अभिप्राय नहीं समझ सकता। इस लिये वे भूमिका के बिना वेदभाष्य देना ही नहीं चाहते थे। यु० मी०।

शोक की बात यह है कि ऐसे भद्र पुरुषों ने धर्मोपकारार्थ वेदभाष्य का लेना स्वीकार किया और अभी तक बराबर लेते हैं परन्तु उनमें से बहुत से ऐसे लोगों ने कि जिनको इतना चन्दा देना कुच्छ भी कठिन नहीं है वेदभाष्य के आरम्भ से अभी तक रुपये नहीं भेजे हैं। अब सब महाशयों को उचित है कि इस विज्ञापन को देखते ही उक्त हिसाब के अनुसार उत्साह पूर्वक चन्दा भेज देवें। अब यह अङ्क तो सबके पास भेजते हैं और सूचना करते हैं कि उन लोगों के पास कि जिन्होंने पीछे कुच्छ भी चन्दा नहीं दिया है अब तक के चूकते रुपये न भेजेंगे तो उनके पास ६ठा अङ्क नहीं भेजा जायगा और अगले अङ्क में रुपयों सहित सब उधार वालों के नाम छपाकर प्रगट करेंगे और दाम लेवेंगे। तकाजा करने उधार का चन्दा वसूल करने का काम मुम्बई का मुं० समर्थदान और सब स्थानों का पं० उमरावसिंह को सौंपा है। ग्राहक लोग तकाजा करने के पहिले ही रुपये भेज दें तो अच्छी बात है॥

(४) जिन भद्र पुरुषों ने मासिक धर्म्मार्थ चन्दा देना स्वीकार किया है उनमें से बहुत से लोगों का चन्दा कई महिनों से नहीं आया है उन को उचित है कि आज तक का चन्दा अगले अङ्क के पहिले ही भेज देवें।

हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती

---

[२]　　　**पत्रांश (११८)**　　　[१६२]

[पं० कृपाराम][1]

हम पर्वी से दूसरे दिन डेरादून को कूच करेंगे।

---

[८][2]　　　**पत्रांश (११७)**　　　[१६३]

हरद्वार में ओंकारमल और सुनन्दराज हम को नहीं मिले। रामगढ़ से भी बहुत से प्रेमी लोग पहुंच गए।[3] हरद्वार में बहुत लोगों से बात चीत हुई। साधु लोगों ने उपदेश सुना लाभ भी बहुत सा हुआ। हैजा बहुत सा नहीं है थोड़ा सा हुआ। जब अमरीका वाले सुनेंगे और उन से बात-चीत होगी, तब सब भ्रम निकल जावेंगे। हम को हरद्वार में लग भग ४०० दस्त हुए और अब तक भी कुछ २ आते हैं परन्तु यहां कि वायु ठण्डा होने से कुछ २ अराम होता आता है परन्तु शरीर बहुत निर्बल हो गया है। आज दस्त बन्द हुआ दीखता है। जो बन्द हो जावेंगे तो शरीर भी १५, २० दिन में अच्छा हो जावेगा॥

वैशाख वदी १२, शुक्रवार संवत् १९३६[4]।　　　दयनन्द सरस्वती

देहरादून।

---

१. यह मूल पत्र का अंश अथवा उस का अभिप्राय है। यह पत्र हमें नहीं मिल सका। इस का उल्लेख पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४२७ पर हैं।

२. पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृष्ठ ६२४ पर उद्धृत।

३. मंगलदान चारण के पुत्र मुंशी समर्थदान रामगढ़ सीकर (जयपुर राज्य) के समीप, नेठवा ग्राम के रहने वाले थे। उन्हें ही, पूर्ण संख्या १४७, १५०, १५१, १५२, १५८ और १६२ के पत्र लिखे गए प्रतीत होते है।

४. १८ एप्रिल १८७९।

[१.४] पत्र (१.१.८) [१.६४]

Dehra Dun
24th April 1879.[१]

Sir,[२]

I am very glad to receive your letter of 20th instant by this day's post.

You were quite right in remitting the value of ved Bhashya Bhoomika to pandit Sunder Lall at Allahabad who can supply you as many more copies as you will want. I have also received the price of the books you had taken from Delhi.—

I have great pleasure to hear of your intention for opening a Sanskrit School, but before you take this most advantageous work in hand, I should be informed as to what arrangement you have made about the standard of various sciences to be studied at the School, have you got all the necessary books ready yet, I think not ! I mean to say that before you go into the work, you should have all the books printed first of all. The " koran" in Nagri is entirely ready but has not been printed yet.

The Astadhyaee has not met the sufficient number of subscribers yet; the 4 adhya[ya]s of this are just ready but the work is going on quite well though not (a) copy (has) passed in the press up to date.

The great dishonesty and misconduct on the part of Babu Harish Chandra Chintamani has been the cause of delay in getting the Ved Bhashya out of the press in the proper time. Now the man has been turned out and another man has been appointed in his stead and it is hoped that he will carry out the work very satisfactorily.—

I intend setting up a press at Moradabad under the auspices of Munshi Indra Mani for which purpose a subscription to the amount of Rs. 5,000/- is necessary to be raised by shares of 100/- each. Of this sum Rs. 2,500/- has already been raised. I hope it will be a great help to the work should you be inclined to take as many shares as you can. In that

---

१. वैशाख शुक्ल ३ बृहस्पतिवार सं० १९३६ । मूल पत्र दानापुर आर्यसमाज में सुरक्षित है ।
२. बाबू माधोलाल, दानापुर को लिखा गया ।

case you should apply to Lallah Ram Saran Das of Meerut who is authorized to receive money when the time comes.

Yours truly
Sd. Daya Nand Saraswati

[दयानन्द सरस्वती]

[भाषानुवाद]

देहरादून
२४ एप्रिल, १८७९[1]

महाशय !

आज की डाक में आप का २० तारीख का पत्र प्राप्त करके मुझे बड़ा हर्ष हुआ।

वेदभाष्यभूमिका का मूल्य प्रयाग में पण्डित सुन्दरलाल को भेजने में आप ने सब ठीक किया। वे आप को जितनी प्रतियां आप और चाहें, भेज सकेंगे। जो पुस्तकें आप ने दिल्ली से ली थीं, मुझे भी उनका मूल्य मिल गया है।

आप के संस्कृत पाठशाला खोलने का विचार सुन कर मुझे बहुत हर्ष है। पर इस से पूर्व कि आप इस सर्वोपयोगी काम को हाथ में लें, मुझे सूचना दें कि पाठशाला में पढ़ाये जाने वाले भिन्न २ शास्त्रों के प्रमाण ग्रन्थों के संबन्ध में आप ने क्या क्रम रखा है ? क्या अभी आप के पास सब आवश्यक ग्रन्थ तय्यार हैं। मेरा विचार है, नहीं। मेरा कहने का अभिप्राय यह है कि काम को आरम्भ करने से पूर्व आप को सब से पहले सब ग्रन्थ छपवा लेने चाहियें। "कुरान" नागरी में पूरा तय्यार है[2] परन्तु अभी तक छापा नहीं गया।

अष्टाध्यायी के अभी तक पर्याप्त संख्या में ग्राहक नहीं हुए हैं। इस के ४ अध्याय अभी तय्यार हुए हैं। काम सर्वथा भले प्रकार चल रहा है, यद्यपि कोई कापी आज तक यन्त्रालय में से नहीं निकली।

बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि की बड़ी कुटिलता और बुरे आचार के कारण वेदभाष्य के प्रेस में से उचित समय पर निकलवाने में देर हो गई है। अब वह बाहर निकाल दिया गया है और उसके स्थान में अन्य पुरुष नियुक्त हुआ है और यह आशा की जाती है कि वह कार्य्य को सन्तोष-जनक रीति से करेगा।

मुन्शी इन्द्रमणि की अध्यक्षता में मुरादाबाद में मेरा एक यन्त्रालय खोलने का विचार है। एतदर्थ ५,०००) रु० का चन्दा करना आवश्यक है जो १००) रु० के प्रति भाग द्वारा होगा। इतने

---

१. वैशाख शुक्ल ३, बृहस्पतिवार, सं० १९३६। यु० मी०।

२. इस हस्तलिखित कुरान के अन्तिम पृष्ठ पर यह लेख है—"सं० १९३५ कार्तिक शु० ९ रविवासरे कुराणाख्योऽयं ग्रन्थः संपूर्णः। इन्द्रप्रस्थनगरे+॥+॥+॥" इस पर जिल्द संख्या ११९ है, पृष्ठ संख्या ७२५ सिपारे ३० मं० ७, सूरत ११४। श्री महाशय मामराज जी ने इस ग्रन्थ को २१-२-३३ को देखकर इन, पंक्तियों की प्रतिलिपि की थी। यु० मी०।

में से २,५००) रु० पहले एकत्र हो चुका है। मैं आशा करता हूं कि इस से हमारे काम में बड़ी सहायता होगी, यदि आप की अभिरुचि अधिक से अधिक भाग, जितने आप ले सकते हैं, लेने की हो तब आप को ला० रामशरणदास मेरठ वालों को लिखना होगा। उन्हें समय आने पर धन लेने का अधिकार है।

आपका शुभचिन्तक
[दयानन्द सरस्वती]

---

[४] पत्र (११९) [१६५]

Saharanpur N. W. P.
May 2nd 1879.[1]

I hereby authorize Henry S. Olcott, to caste my vote upon all questions relating to the Theosophical Society which may be brought before the General Council for action in my absence; and, generally, to use my authority as Supreme Chief of the Eastern and Western Theosophists of the Arya Samaj according to the general views which I have personally expressed to him.[2]

(दयानन्द सरस्वती)

[भाषानुवाद]

सहारनपुर, पश्चिमोत्तर प्रदेश
२ मई, १८७९[1]

मैं इस लेख द्वारा हैनरी ऐस आल्काट को थिसोसोफिकल सोसायटी सम्बन्धी सब प्रश्नों पर जो मेरी अनुपस्थिति में साधारण सभा के सम्मुख कार्यार्थ लाये जायें, अपनी ओर से सम्मति देने का अधिकार देता हूं और वे उन सामान्य विचारानुसार जो मैंने इन्हें स्वयं जताए हैं, आर्य्यसमाज के पूर्वीय और पश्चिमीय थियोसोफिस्टों के प्रधानाध्यक्ष के रूप में साधारणतया मेरा अधिकार वर्त्त सकते हैं॥

[दयानन्द सरस्वती]

---

१. वैशाख शुक्ल ११, शुक्रवार, सं० १९३६। यु० मी०।

२. जब यह पत्र लिखा गया था तब कर्नल और मैडम श्री स्वामी जी के साथ सहारनपुर में ही थे। इस पत्र की प्रतिकृति थियोसोफिस्ट जुलाई १८८२ के परिशिष्ट में छपी है। उसके नीचे एक नोट है कि म० मूलजी ठाकुरशी ने कहा है कि उन्होंने स्वामी जी को इस पत्र का अनुवाद सुनाया था। तब उन के सम्मुख ही स्वामी ने अपने हस्ताक्षर कर दिये थे॥

[९][1] **पत्रांश (१२०)** [१६६]

……………

हम डेरादून से चल कर सहारनपुर आए और वहां पर अलकाट साहब और ब्लेवेस्तकी लेडी वा मूलजि ठाकरसी से जो कि अमरीका से आए हैं, समागम हुआ। दो दिन वहां ठहर कर हम मेरठ आ गये हैं। यहां पर [पांच छः] ५, ६ दिन ठहरेंगे। पश्चात् साहब मुम्बई को आवेंगे और हम कुछ दिन यहां ही वास करेंगे परन्तु आज कल कुछ अवकाश नहीं है। साहब कि और हमारी सम्मति मिल गई है। किसी प्रकार का भेद नहीं है और जो कुछ हरिश्चन्द्र ने उन के चित्त में शङ्का डाली थी, वह सब निवृत्त हो गई है। साहब अत्यन्त शुद्ध अन्तःकरण सज्जन पुरुष हैं। इन में किसी प्रकार का छल छिद्र नहीं है। परन्तु हरिश्चन्द्र ने ऐसा कपट किया कि जिस को हम कथन नहीं कर सकते हैं। परन्तु अब होश्यार रहना चाहिये ॥

वैशाख सु० १४ सं० १९३६।[2] दयानन्द सरस्वती

———

[१०][3] **पत्रांश (१२१)** [१६७]

……………………

कल अल्काट साहब और ब्लेवेस्तकी लेडी समाज में गये थे और आज उक्त साहब सदर मेरठ में उपदेश करेंगे और कल परसों यहाँ से मुम्बई जाने वाले हैं। उक्त साहबों की अपनी समाज से कोई बात विरुद्ध नहीं है अर्थात् अनुकूल आचरण स्वभाव है। क्योंकि चार पाँच दिन से जो हम उन के साथ बात करते हैं तो बिलकुल ये लोग शुद्ध अन्तःकरण प्रतीत होते हैं और थियोसोफिकल सोसायटी में जो हमारा नाम लिखा गया है यदि तुम उस पत्र को भेज देते तो हम साहब को दिखला देते। परन्तु जुबानी जो साहब से कहा गया तो उन्हों ने उत्तर दिया कि हमारी थियोसोफीकल सोसायटी का अभी तक यह प्रयोजन था कि सब मतों के लोग इस में दाखल हों और अपनी २ सम्मति देवें। अब आर्यसमाज के नियमों को समझ कर जिस प्रकार आपकी आज्ञा होगी, उसी प्रकार किया जावेगा। आगे ऐसा न होगा और जो आर्यसमाज के नियमों को पसन्द नहीं करता है, वह थियोसोफिकल सोसायटी में नहीं रहेगा। इस वृत्तान्त को जब मूलजिभाई आवेंगे[4] तब तुम को समझा देंगे ॥

५ मई ७९[5] दयानन्द सरस्वती
मेरठ

———

१. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३६, ८३७ पर उद्धृत। यह पत्र सम्भवतः मुं० समर्थदान प्रबन्धकर्त्ता वेदभाष्य मुम्बई को मेरठ से लिखा गया है।

२. ५ मई सोमवार १८७९। अगली पूर्ण संख्या १६७ का पत्र भी ५ मई का है। स्वामी जी महाराज वै० शु० १२ (३ मई) को मेरठ पहुँचे थे। पूर्ण संख्या १६६, १६७, १६८ के पत्रों को मिला कर पढ़ने से ज्ञात होता है कि यह पत्र वै० शु० १२ (३ मई) को ही लिखा गया होगा। यु० मी०।

३. पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ८३७ पर उद्धृत। यह पत्र भी मु० समर्थदान के नाम हो सकता है। ४. मूलजिभाई मुम्बईवासी थे। वे भी सहारनपुर आए थे। ५. वै० शु० १४ सं० १९३६।

[१.५] पत्र (१२२) [१६८]

बाबू माधोप्रसादादि आनन्दित रहो ![1]

वृत्तांत यह है कि सब सज्जनों के प्रति एक आनन्द का समाचार प्रकट किया जाता है वोह यह है कि एस० एच० अलकाट साहब तथा एच० पी० ब्लेवेस्तकी लेडी जिन की पत्री पहिले अमेरिका से अपने समाजों में आई थी **उन से हमारा पहिली मई सन् हाल को सहारनपुर में समागम होने से** मालूम हुआ कि जैसी उनकी पत्रियों से बुद्धि प्रकट होती थी उनके मिलने से अधिक योग्यता और सज्जनता प्रकट हुई। उनके साथ दो दिन सहारनपुर में समागम रहा और समाज के सब पुरुषों ने यथावत् सत्कार किया। उनका उपदेश सुनने से लोगों के चित्त बड़े प्रसन्न हुए। पश्चात् वे हमारे साथ मेरठ को आये। वहाँ पर भी सब समाज के लोगों ने सुन्दर रीति से सत्कार किया और उपदेश का ऐसा सुन्दर चरचा रहा कि जिससे सब को आनन्द हुआ और उपदेश में सब अमीर वा उमराव तथा अहलकार और अंग्रेज़ लोग भी पाँच दिन तक बराबर आते रहे और जिस किसी ने मतमतांतर में कुछ शङ्का की उनका यथार्थता से उत्तर मिलता रहा। अर्थात् अमरीकन साहिबों ने सब लोगों के चित्त पर यह निश्चय करा दिया कि जितनी भलाई और विद्या है वे सब वेद से निकली और जितने वेद विरुद्ध मत हैं वे सब पाखण्ड रूप हैं पश्चात् उक्त साहिब तो ७ मई को बम्बई चले गये और हम कुछ दिन यहाँ पर ठहरेंगे। यह जो उन साहिबों से हमारा समागम है यह इन आर्यावर्तादि देशों के मनुष्यों की उन्नति का कारण है। जैसे एक परम औषध के साथ किसी सुपथ्य का मेल होने से शीघ्र ही रोग नाश हो जाता है इसी प्रकार इस समागम से आर्यावर्तादि देश [में] वेदों का प्रकाश और असत्यरूपी रोग का विनाश शीघ्र हो जावेगा और उक्त साहिबों का आचरण तथा स्वभाव हम को अत्यन्त शुद्ध प्रतीत होता है, क्योंकि वे लोग तन मन धन से सब प्रकार वेद मत की स्थापना करने में उद्यत हैं। जो बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने उक्त साहिबों के विषय में यह बात उड़ाई थी कि ये लोग जादू जानते हैं और जासुसों की तरह छल कपटी बातें करते हैं उस की यह बात सब मिथ्या है। क्योंकि जिस को जादू कहते हैं वोह यथार्थ में पदार्थ विद्या है उस विद्या को उन्होंने मूर्खों के भ्रम दूर करने और सत्य मार्ग में चलाने के लिए धारण किया है सो कुछ दोष नहीं है परन्तु हरिश्चन्द्र जैसे मूर्खों को भूषण भी दूषण ही दीख पड़ता है। इस हरिश्चन्द्र ने इन साहिबों के चित्त में ऐसा भ्रम किया कि जिस का हम वर्णन नहीं कर सकते परन्तु वे सब भ्रम हमारे मिलने से दूर हो गये। देखो इस हरिश्चन्द्र की बेइमानी कि बहुत सा विघ्न वेदभाष्य के काम में कर चुका है और अब तक भी करता जाता है, इस लिए सब आर्य्य भाइयों को उचित है कि इस को अपने आर्य्यसमाजों से बहिष्कृत समझें और इस का किसी प्रकार का विश्वास न करें। देखो पूर्व काल में हमारे ऋषि मुनियों को कैसी पदार्थ विद्या आती थी कि जिस से आत्मा के बल से सब के अन्तःकरण के भेद को शीघ्र ही जान लिया करते थे। जैसे बाहर की पदार्थ विद्या से सिद्ध किये हुए रेल तारादि विद्या को मूर्ख लोग जादू समझते हैं वैसे ही भीतर के पदार्थों के योग से योगी लोग अनेक अद्भुत कर्म कर सकते हैं इस में कोई आश्चर्य नहीं, क्योंकि मनुष्य लोग जितनी विद्या बाहर के पदार्थों से सिद्ध करते हैं उस से कई गुणी अधिक

१. मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर में सुरक्षित है।

भीतर के पदार्थों से सिद्ध कर सकते हैं। जैसे बाहर के पदार्थों का उपयोग बाहर से होता है वैसे ही भीतर के पदार्थों का उपयोग भीतर से होता है। जैसे स्थूल पदार्थों की क्रिया आँखों से देख पड़ती है वैसे सूक्ष्म पदार्थों की क्रिया आंखों से नहीं देख पड़ती, इसी कारण लोग आश्चर्य मानते हैं। हां, यह कह सकते हैं कि बहुत से धूर्त लोग उस विद्या को तो जानते नहीं, झूठे जाल रच कर सत्य विद्या को बदनाम करते हैं, इस प्रकार झूठों का तिरस्कार और सच्चों का सत्कार सर्वथा करना चाहिये, परन्तु जिस समय किसी का असत्य प्रकट हो जावे, उसी समय उस का परित्याग करना चाहिये, जैसे बहुत दिनों के पश्चात् हरिश्चन्द्र का कपट प्रकट होने से अपने आर्य्यसमाजों से बाहर किया गया। इस प्रकार जिस किसी पुरुष का प्रकट हो जावे उसको तत्काल ही अपने समाजों से अलग करदो चाहे कोई क्यों न हो। असत्यवादी की सर्वदा परीक्षा करते रहो। इसी का नाम सुधार है क्योंकि बुद्धेः फलमनाग्रहः। जब यही सत्पुरुष का लक्षण है, तब उसको सच्चा ज्ञान हुआ जानो जब अपने निश्चय किये हुये में भी, जितना असत्य जाने उस को उसी समय त्याग दे। तो उस को दूसरे का असत्य छोड़ने में क्या आश्चर्य है। ऐसे काम के बिना न आप सुधर सकता है और न दूसरे को सुधार सकता है। अब इस पत्र को इस वृत्तांत पर पूर्ण करता हूँ कि इन साहिबों के पूर्व पत्रों और सात दिन बात चीत करने से निश्चय किया है कि इन का तन धन सत्य के प्रकाश और असत्य के विनाश और सब मनुष्यों के हित करने में है। जैसा कि आप लोगों का निश्चय उद्योग है। वेदभाष्य अब शीघ्र आने वाला है कुछ चिन्ता मत करना॥

७।५।१८७९[1] मेरठ।　　　　　　　　　　(दयानन्द सरस्वती)

---

[१]　　　　　　　　　　पत्र (१२३)　　　　　　　　　　[१६९]

मन्त्री आर्यसमाज शाहजहाँपुर[2]

८।५।१८७९ मेरठ

---

[१]　　　　　　　　　　पत्र (१२४)　　　　　　　　　　[१७०]

मन्त्री आर्यसमाज अमृतसर[3]

११।५।१८७९ मेरठ

---

१. ज्येष्ठ कृष्ण १ बुधवार, सं० १९३६।

२. लग भग पूर्ण सं० १७ वाला ही पत्र मन्त्री आर्यसमाज शाहजहांपुर को लिखा गया था। देखो पं० लेखरामकृत दयानन्द चरित पृ० ८३५, ८३६। शाहजहांपुर से प्रकाशित होने वाले आर्यदर्पण (उर्दू) जून १८७९ के अन्तिम पृष्ठ पर इस पत्र का कुछ अंश छपा है। वह ८ मई [ज्येष्ठ कृष्ण २ बृहस्पतिवार सं० १९३६] मेरठ का है।

३. पूर्ण सं० १५७ वाला पत्र मन्त्री आर्यसमाज अमृतसर को ११ मई १८७९ [ज्येष्ठ कृष्ण ६ रविवार सं० १९३६] को लिखा गया था। देखो, उर्दू मासिक पत्र विद्याप्रकाशक अगस्त १८७९।

[११][1] पत्रांश (१२५) [१७१]

… … … … …………………

पाताल देशस्थों का पत्र तुम्हारे द्वारा वाला अब तक नहीं पहुँचा है। उन को हमारा नमस्ते कह के कुशल पूछना और अब वह क्या काम करते हैं सो लिखते रहना। जिन बाबू छेदीलाल वा शिवनारायण गुमास्ता कमसरेट मेरठ की कोठी पर वे उतरे थे, उन से लैकचर छपवा कर भेजने को कह गये थे, सो अब तक नहीं भेजा, कदाचित् भूल गया, याद दिला देना। हम यहां से परसों अलीगढ़ जावेंगे ॥

ज्येष्ठ वदी १४ मंगलवार
२० मई ७९ मेरठ दयानन्द सरस्वती

———

[१२] पत्रांश (१२६) [१७२]

[मुंशी समर्थदान][2]

……हमें हरिश्चन्द्र ने एक बार लिखा था अमेरिका वाले कुछ धन भेजना चाहते हैं। उस के पश्चात् जब वह हमसे मिला तो हमने उससे कह दिया कि इस बात को सर्वसाधारण में और विशेषतः आर्यसमाजियों में प्रचरित कर दो कि अमेरिका वाले आर्यसमाज की सहायता के लिये धन भेजना चाहते हैं और जो धन आवे उसे दाताओं के नाम सहित पत्रों में मुद्रित करा दो। उसने यह उत्तर दिया कि मैं अमेरिका वालों की इच्छा के अनुसार कार्य करूंगा। हमने उस से कह दिया कि जो धन प्राप्त हो उसे तीन कार्यों में व्यय करना।

(१) वेदों के सम्बन्ध में ज्ञान और पुस्तक प्रचार में, (२) सदाचार की शिक्षा देने वाली सभाओं की सहायता में और (३) दीन दरिद्रों की सहायता में। परन्तु अब ज्ञात होता है कि उसने इन कार्यों में से एक भी नहीं किया।

[२५ मई १८७९ अलीगढ़][3]

———

[१] [मुख्तियार नामा][4] [१७३]

मैं कि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज शिष्य स्वामी डण्डी प्रज्ञाचक्षु जी महाराज मथुरावासी मुकीम हाल कोल* का हूँ। जो कि तरजुमा वेदभाष्य व दीगर पुस्तकों का किया है उनके खरीदारान हर जिला व शहर व कसबा व मौज़ा मुमालिक मगरबी व शुमाली व मुल्क अवध व

१. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत। सम्भवतः मु० समर्थदान के नाम मुम्बई को यह पत्र भेजा गया है। [* कोल = कोयल (अलीगढ़)।]

२. देखो पं० देवेन्द्रनाथ जी सङ्क० जी० च० पृष्ठ ७६७ पर उद्धृत।

३. जेष्ठ शु० ४ रविवार, सं० १९३६। उपर्युक्त तारीख उक्त जीवनचरित्र में दी है।

४. इस मुखत्यारनामे की प्रतिलिपि श्री महाशय मामराज जी ने श्री बा० पीतमलाल जी बी० ए०

पञ्जाब व बम्बई व मद्रास व कलकत्ता व·····व बंगाला व इङ्गलैण्ड व योरप में मौजूद हैं और ज़रे कीमत ब जुम्मे खरीदारान वाजिबुल अदा है और आयन्दा भी कीमत व जुम्मे खरीदारान के वाजिबुलअदा होगी इस वास्ते जानिब अपने से ठाकुर मुकन्दसिंह व मुन्नासिंह खलफ ठाकुर नरायन सिंह साकिन व रईस छलेसर व ठाकुर भूपालसिंह खलफ ठाकुर कञ्चनसिंह साकिन व रईस मौज़ा अहक तहसील कोल को मुखत्यार आम मुक़ररिर करके ये इक़रार है के मुखत्यार आन मौसूफ मुत्फ़र्दन खुआ मुस्तरकन ज़रे कीमत वेदभाष्य व दीगर पुस्तकान जो अब तक बाकी हमारी है या आयन्दा व जुम्मे खरीदारान वेदभाष्य वग़ैरा भी वसूल करें और रसीद लिखदें खुआ व जरिये नालिश अदालत दीवानी के रुपया वसूल करें या नालिश अदालत दीवानी या कलक्टरी में दायर करें और इबारत तस्दीक़ हमारी जानिब से अरज़ी दावा या ब्यान तहरीरी पर लिखें या मुख्तयार खास या वकील या कारिन्दा मुकरर करें और नालिश बनाम कारिन्दा या मुख्तियार या वकील बाबत खयानत ज़रे कीमत वेदभाष्य वग़ैरा या खरीदारान पर दायर करें और निस्बत कारिन्दा मुकरर किये हुये हमारे मातहत मुखत्यारान मज़कूर के होंगे या किसी अमर में जवाब देही करें या किसी नालिश में बाज़-दावा या तसफिया नामा या दस्तबरदारी गुज़राने या महक़मा सबरजिस्टरार खुआ रजिस्टरार में हाज़िर होकर दस्तावेज़ नविश्ता हमारी पर बाबत वेदभाष्य या दीगर पुस्तकान की रजिस्ट्री करावें खुआ खज़ाना कलक्टरी से रुपया हायअदा बज़रिये वाउचर अदालत मुन्सफी या जज मातहत या जनाब जज बहादुर वसूल करके रसीद लिखदें या अदालत से रुपया वसूल करें इस ज़िले या दीगर इज़ला में कोई कार्रवाई किसी किस्म की मामलात अदालत में करें और बहुत सी जिल्दें अक्सर पुस्तकों की जो ममलूका हमारी हैं वह दीगर असखास के पास अमानतन मौजूद हैं और आयन्दा भी होंगी हमको इसकदर फ़ुर्सत नहीं है कि हम बज़ात खास पैरवी करें और जो कोई नीलाम या डिगरी हमारी खरीद करके रसीद ज़रे समन लिखदें वह सब साख्ता परदाख्ता मुखतारान कबूल व मंजूर है। लिहाज़ा यह मुखतार नामा आम लिख दिया है के सनद हो। तहरीर तारीख ४ जून सन् १८७९ मुकाम कोल तहरीर हुआ, बकलम शौपरशाद वल्द छीतर मल कायस्थ साकिन कोल। अलब्द स्वामी दयानन्दसरस्वती जी महाराज बख़त हिन्दी,

गवाह—पण्डित गोविन्दराम वल्द पं० नारायणदास ब्राह्मण साकिन अतरौली, बख़त हिन्दी,

गवाह—हरप्रशाद वल्द दुर्गा परशाद कौम कायस्थ साकिन हाल अलीगढ़,

गवाह—पण्डित भीमसैन वल्द नेकराम बरहमन साकिन मौज़ा लालपुर, ज़िला एटा मुलाज़िम स्वामी जी महाराज बखत हिन्दी मुड़िया।

[1][इबारत तस्दीक—

यह दस्तावेज़ दफ्तर सब रजिस्ट्रार मुकाम तहसील कोल ज़िला अलीगढ़ में बतारीख ४ जून

एल० एल० बी० वकील, प्रधान आ० स० अलीगढ़ तथा श्री बा० सुलतान सिंह जी वकील अलीगढ़ के विशेष प्रयत्न से ता० २६–२–५३ को प्राप्त की। इस की प्रतिलिपि वर्तमान सब रजिस्ट्रार श्री मोहम्मद उमरखां अलीगढ़ के हस्ताक्षर से युक्त ता० २६–२–५३ को प्राप्त हुई। यु० मी०।

१. यह कोष्ठक वाला भाग उपर्युक्त मुखत्यार नामे से संबन्ध रखता है और श्री स्वामी जी की अत्यधिक शारीरक अस्वस्थता को प्रकट करता है, अतः हम इसे यहां छाप रहे हैं। यु० मी०।

सन १८७९ रोज़ चहार शंबा माबैन ११ व १२ बजे दिन के पेश हुई बज़रिये दरख्वास्त कमीशन मुकुन्दसिंह बकलमखुद। दस्तखत गुलाम हैदर खां साहब सबरजिस्ट्रार—

तकमील तहरीर दस्तावेज़ हाज़ा में मुसम्मी स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज शिष्य स्वामी दण्डी प्रज्ञाचक्षु जी महाराज मथुरावासी मुक़ीम हाल कोल उम्र ५४ वर्ष पेशा पण्डिताई ने रोबरू मुबारिक अली मुहर्रर दोयम जो हमारी तरफ से वास्ते तस्दीक व तहरीर इज़हार मुसम्मी मज़कूर के अहले कमीशन मुकर्रर हुआ था इकबाल किया और मिकर निवासिन्दा दस्तावेज़ हाज़ा से-मुबारिक अली मुहर्रर एडीशनल बज़ात खुद वाकिफ है। हम को इतमीनान है कि यह दस्तावेज़ व रज़ाय मुसम्मी मज़कूर लिखी गई और मिकर मज़कूर बवजह कसरत जारी दस्तों और पेचिस के असालतन हाजरी से मुवाफ किया गया।

५ जून सन् १८७९ अलब्द मुबारिक अली मुहर्रर दोयम अहले कमीशन, दस्तखत मोहम्मद गुलाम हैदर खां साहब सब रजिस्ट्रार, बतारीख ४ जून सन् १८७९ रोबरू अहले कमीशन दस्तखत मिकर के माबैन ४ व ५ बजे रोज़ चहार शंबा सब्त हुए, दस्तखत मोहम्मद गुलाम हैदर खां साहब, सब रजिस्ट्रार-रजिस्ट्री नम्बर १५७ सफहा १८५ जिल्द २५ रजिस्टर नम्बर ४ में बतारीख ५ जून सन् १८७९ की गई दस्तखत मोहम्मद गुलाम हैदर खां साहब सब रजिस्ट्रार।]

———

[२१] (विज्ञापन)[१] [१७४]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि ठिकाना ज़िले अलीगढ़ परगना मौरथल ग्राम छलेश्वर ठाकुर मुकुन्दसिंह ठाकुर मुन्नासिंह रईस तथा ठाकुर भूपालसिंह ऐख रईस को हमने वेदभाष्य और सत्यार्थप्रकाशादि पुस्तकों के मूल्य वसूल करने का अधिकार दिया है अर्थात् इनके नाम मुख्त्यारनामा[२] रजिस्टरी कराके दिया है। इनमें से ठाकुर मुन्नासिंह के नाम पूर्वोक्त ठिकाने वेदभाष्यादि पुस्तकों का मूल्य भेजें। वे ग्राहकों के पास रसीद भेज देवेंगे। जो कोई पुस्तक लिया चाहे वह भी मुन्नासिंहजी के नाम पत्र भेजे वा इस विषय में जो कुछ लिखना आवश्यक हो सो भी लिखे और जो अङ्क ५ वें में पण्डित उमरावसिंहजी के नाम से नोटिस दिया था[३] सो अब नहीं रहा। अब मैं सब ग्राहकों से प्रीतिपूर्वक सूचना करता हूं कि जैसी प्रीति से इस काम में पुस्तक लेके सहायक हुए हैं वैसे मूल्य भेजने में भी विलम्ब न करें। क्योंकि अब जो मुखतियार किये हैं वे जिस उपाय से मूल्य वसूल होगा वह २ उपाय करके शीघ्र वसूल करेंगे। और जो अंक ५ वें में नोटिस दिया था कि उधार वाले ग्राहकों के पास ६ अंक नहीं भेजा जायगा सो भी नहीं रहा, क्योंकि जब तक ग्राहक अपनी खुशी से बंध न करावेगा तब तक बराबर पहुँचता रहेगा। जो ग्राहक वर्ष की आदि में पहिले ही मूल्य भेज देगें उनसे प्रत्येक वेद का वार्षिक मूल्य ४) रु० लिये जायेंगे और जो प्रथम न भेजेंगे उनसे एक २ वर्ष के ४॥) रु० के

---

१. यह विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य तथा यजुर्वेदभाष्य अंक ६ (वैशाख १९३६) पर छपा है। यह अंक देर से निकला था। इस में जिस मुख्तियार नामे का उल्लेख है वह ५ जून १८७९ (आषाढ कृष्ण १ सं० १९३६) को रजिस्ट्री कराया गया था। देखो पूर्ण संख्या १७३ का अन्त। यु० मी०। २. यह पूर्ण संख्या १७३ पर छपा है।

३. यह पूर्ण संख्या १६१ पृ० १३७-१३९ पर छपा है। यु० मी०।

हिसाब से लिये जायेंगे और जो ग्राहक अपनी प्रसन्नता से नहीं भेजेगा उससे डाक महसूल भी लिया जायगा। और हमारे इस काम में कोई मनुष्य किसी प्रकार की बुराई की है वा करेगा, उसका भी प्रबंध पूर्वोक्त मुखतियार लोग यथोचित करेंगे। जैसा कि बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने बहुत से रु० पुस्तकों की बाबत आये वे हमारे पास न भेजे, न हिसाब ठीक २ दिया और सुना है कि विलायत को चले गये। जो नोटिस पहुंचने पर रुपये न भेज देंगे तो उन पर जब नालिश पड़ेगी ॥

हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती

———

[१.३][1] **पत्रांश (१२७)** [१.७५]

....

हम बमुकाम छलेसर परगना थल जिला अलीगढ़ में क्याम पज़ीर हैं। जुलाब जो लिया था, उस से फ़ारिग हो गये मगर कमज़ोरी किसी कदर है। बाद ७, ८ दिन के मुकाम मुरादाबाद को जायेंगे। मुशी इन्द्रमन भी यहां आये है ॥

२३ जून १९७९[2] दयानन्द सरस्वती

छलेसर

चन्दा वेदभाष्य का मुन्नासिंह वसूल करेंगे।

———

[१४][3] **पत्रांश (१२८)** [१७६]

....

पाताल निवासियों के पत्र का मतलब यहां लिखना कठिन है, जब समझेंगे, तब जवाब लिखा जावेगा।...

हमारा शरीर अब कुछ अच्छा होता आता है।

आषाढ़ सुदी ५ मंगलवार १९३६।[4]

दयानन्द सरस्वती

छलेसर

———

१. पं० लेखराम कृत जीवनचरित पृष्ठ ७६८ पर उद्धृत [संभवतः यह पत्र मुं० समर्थदान को लिखा गया था]।

२. मिति आषाढ़ सुदी ४ संवत् १९३६ सोमवार।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ७६८ पर उद्धृत। [सम्भवतः यह पत्र मुंशी समर्थदान को लिखा गया था]।

४. २४ जून १८७९।

[१.६] पत्र (१.२९) [१.७७]

॥ ओ३म् ॥

वेदभाष्य कार्यालय मारवाड़ी बाजार मुवाद्वे
वीका चाली मुंबई ता० ३० जून सं० १८७९ ई०[1]

पंडितवर श्यामजी कृष्णवर्म्मा आक्सफोर्ड

प्रियतम महाशय, नमस्ते !

निवेदन यह है कि पत्र आप के मास्तर प्राणजीवनदास के पास आये। आपके आनन्द के समाचार सुन कर बड़ा हर्ष प्राप्त हुआ। आप बरिस्टर की परीक्षा देने के लिये कालेज में भरती हुए सो बड़ी आनन्दकारक बात हुई। मैं यह पत्र स्वामी जी की आज्ञानुसार लिखता हूं।[2] बाबू हरिश्चन्द्र, अमेरिका वालों और केशवलाल निर्भयराम का हाल आप को मास्तर का पत्री इस पत्र में मैं डालता हूँ उससे मालूम होगा। उक्त बाबू बहुत रुपये खा गया। इस लिये अमेरिकन के द्वारा उस पर नालिश करने का विचार है। आप तलाश करके लिखें कि बाबू किस शहर में और किस ठिकाने पर है इसकी अति आवश्यकता है। लंदन में है तो उसका एड्रेस भी लिख भेजें। मेरे नाम पर पत्र भेजना। मेरा ठिकाना छपे करा परचे में भेजता हूं सो विदित होगा। आप वहां के समाचार पत्रों में छपा के ऐसा प्रगट कर दें कि बाबू मुंबई के आर्य्यासमाज का प्रधान था सो बिलकुल समाज से निकाल दिया गया है और उस समाज के प्रधान रावबहादुर गोपालराव हरि देशमुख नियत हुए हैं स्वामी जी के नाम के पत्र आदि इंगलैण्ड से आते हैं वे अभी तक बाबू के नाम से आते हैं अब आप इतना काम कृपा करके करना कि वहां के नियूज़ पेपरों में नोटिस दे दें कि अब पीछे जिस किसी को स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के पास पत्र वा समाचारपत्र भेजना हो सो स्वामी जीके एजेन्ट मुनशी समर्थदान के द्वारा भेजें और मेरा नाम और पता और मुम्बई सब यथार्थ छाप देना यह काम बड़ी आवश्यकता का है नोटिस आदि छपाने के बाबत कुछ दाम खर्च होंगे सो आप के लिखने से यहां धनजी को दे दिये जायेंगे। आज बुकपोस्ट के द्वारा वेदभाष्य का अंक ५।६ और पंचमहायज्ञविधि १ और पंचांग १ भेजता हूँ सो रसीद भेजना। अंक प्रोफेसर मोनियर विलियमस के हैं और पुस्तक और पंचांग आप के लिये भेजे हैं सो उक्त प्रोफेसर से लेना। आप ने लिखा कि प्रोफेसर के पास अंक नहीं पहुँचे सो आप के लिखने से विदित होगा कि कौनसे अंक नहीं पहुँचे तब मैं अंक भेज दूँगा। वेदभाष्य का मुल्य ५।६ में नोटिस में दिये हैं उनके अनुसार भेजवा देना। विलायत का महसूल जो अंको पर लगता है उसका मूल्य भी भेजवाना प्रोफेसर मेक्समूलर और मोनियर विलियमस दोनों से मूल्य भेजवा देना और लिखना कि उन लोगों का स्वामी जी और वेदभाष्य के विषय में क्या कहना है। स्वामी जी उनके भाष्य का खण्डन करते हैं उसके बाबत वे क्या कहते हैं। अमेरीका वालों के विषय में वे क्या कहते हैं सो भी लिखना। वहां संस्कृत का कालेज है उसमें कैसे पुस्तक पढ़ाये जाते हैं सो लिखना। और कोई भाष्य का ग्राहक हो तो करना। वहां के लोगों से कहना कि तुम पढ़ नहीं

१. आषाढ़ शुक्ल ११ सोमवार, संवत् १९३६। यु० मी०

२. इसीलिए यह पत्र इस संग्रह में छापा गया है।

सकते तो पुस्तकालयों में रखने के लिये ही ऐसा पुस्तक मंगाना चाहिये। संस्कृत विद्या का वहां कैसा प्रचार है और आर्य समाजों के बाबत वे लोग क्या कहते हैं ? मैं जानता हूं कि आप का समय बहुमूल्य है, परन्तु क्या करें उधर का हाल सुनने को चित्त बहुत चाहता है। आप जैसे भद्रपुरुष हमको हाल नहीं लिखेंगे तो और कौन लिखेगा। स्वामी जी बहुत प्रसन्न हैं। आपके भाई धनजी बहुत प्रसन्न हैं। धनजी का पत्र इसमें भेजता हूं सो लेना। बाबू के रहने का पता तलाश करके शीघ्र लिखना और मेरे योग्य काम हो सो सदैव लिखा करें। हम विचारते हैं कि बाबू वहां आर्यसमाज और स्वामी जी के विरुद्ध कहता होगा सो आप लिखना। जो वह पेपर में कुछ बुराई छापें तो आप उसका उत्तर यथार्थ देना जिस बात की खबर आप को न हो सो लिखना हम बराबर भेजेंगे। बाबू आप से कुछ सहायता चाहे तो देने के योग्य नहीं है।

आपका शुभचिन्तक
समर्थदान प्रबन्धकर्त्ता वेदभाष्य
कार्यालय मुम्बई

---

[५] पत्र (१३०) [१७८]

Moradabad,[1]
The 13th July 1879.[2]

Dear Col. Olcott,

Your letters of 10th June and 5th July duly to hand. Also of Madam H. P. Blavatsky of probably 30th June in Hindi.

You have acted very wisely in negotiating with the Governor of Bombay ; and that British Government has no more suspicions regarding your stay in India and your movements to different places on sacred duty of preaching the Vedic religion.

The Kunte brothers are fickle minded I knew. I am glad to hear, you have begun reading "Nagari."

Your proposal for publishing a monthly journal is very sound, I only add a little to the name you have already proposed. My object is

---

१. कटघर मुहल्ला, मुरादाबाद निवासी ठाकुर शंकरसिंह उपनाम भूपजी श्री स्वामी जी के बड़े भक्त थे। श्री स्वामी जी के अनेक पत्रों का वे ही अंग्रेजी अनुवाद करते थे। यह पत्र भी उन्होंने ही अंग्रेजी में अनूदित करके दिया होगा। सौभाग्यवश अंग्रेजी प्रतिलिपि उनके घर सुरक्षित रही। १३ नवम्बर सन् १९२६ तदनुसार कार्तिक शुक्ल ८, शनिवार संवत् १९८३ को श्री भूपजी के पुत्र ठाकुर चैतन्यदेवजी से ला० मामराज यह पत्र लाये थे।

२. श्रावण कृष्ण ९ रविवार, सं० १९३६।

that the name will convey to the subscribers that joint exertions are made in the paper—this may perhaps cause a great influx of subscribers. Call the journal by name "The Theosophist or Aryaprakash."

The date of the foundation of Arya Samaj you can get from Bombay Samaj. The object of this Samaj is that all mankind.

(1) "give up bad ideas, deeds and habits."

(2) and take hold of good ideas, deeds and habits." Guna (गुण) karma (कर्म्म) and Svabhava (स्वभाव) through the ancient (Sanatana) (सनातन) (1) Veda Vidya. (2) God-creation (ईश्वर-कृतसृष्टि).

(3) The question with regard to my life, I should say that at present, I am not quite prepared to undertake so long a business. I shall give you a brief account of me after sometime. I shall do this work myself or have it done directly under my own eye. Certificate will follow.

Yours truly,
(Sd.) ———

[भाषानुवाद]

मुरादाबाद
१३ जुलाई १८७९[1]

प्रिय कर्नल आल्काट

आपके दस जून और पाँच जुलाई के पत्र हस्तगत हुए और श्रीमती एच० पी० ब्लावट्स्की का भी सम्भवतः ३० जून का हिन्दी पत्र मिला। बम्बई के गवर्ननर के साथ बात चीत करके आपने बुद्धिमत्ता का काम किया है और अब आपके भारत में रहने तथा वैदिक धर्म के प्रचार के पवित्र कार्य के लिये विभिन्न स्थानों में भ्रमण के विषय में ब्रिटिश सरकार सशङ्क न होगी। मैं समझ गया कण्टे बन्धु चञ्चलचित्त व्यक्ति हैं। यह सुन कर कि आपने नागरी पढ़नी आरम्भ कर दी है बहुत प्रसन्न हुआ।

एक मासिक पत्रिका के प्रकाशन के लिये आपका प्रस्ताव बहुत ठोस है। जो नाम आपने प्रस्तुत किये हैं उसमें कुछ थोड़ा और जोड़ना चाहता हूँ। मेरा उद्देश्य यह है कि नाम से ग्राहक यह समझें कि पत्रिका चलाने में संयुक्त प्रयत्न किया जा रहा है। इससे सम्भवतः ग्राहकों की संख्या में वृद्धि हो।

पत्रिका का नाम थ्योसोफिस्ट अथवा "आर्यप्रकाश" रखें। आप आर्यसमाज स्थापना तिथि बम्बई आर्यसमाज से प्राप्त कर सकते हैं। इस समाज का उद्देश्य है कि सभी मनुष्य—

(१) बुरे कर्म और स्वभाव छोड़ दें।

---

१. श्रावण कृष्ण ९, रविवार, सं० १९३६।

(२) सनातन वेद विद्या और ईश्वर कृत सृष्टि से अच्छे प्रकार अच्छे गुण कर्म स्वभाव ग्रहण करें जो किये जा सकते हैं।

जहां तक मेरे जीवन के विषय में प्रश्न है, मैं कहूँगा कि इस समय मैं इतने लम्बे कार्य को अपने हाथ में लेने के लिये सर्वथा तय्यार नहीं हूँ। कुछ समय पश्चात् मैं स्वयं अपना संक्षिप्त वृत्तांत दूँगा। या तो यह कार्य मैं अपने आंखों के सामने करवाऊंगा।

प्रमाणपत्र बाद में भेजूंगा।

आपका—
(ह)————————

———

[१]　　　　पत्र (१३१)　　　　[१७९]

Dear M. Blavatsky,[1]

(1) After death man's or any one's "Atma" lives in air "Vayu" according to the sins and virtues of the departed soul. God allows the transmigration or a new life. When there is small proportion of sins and numerous good deed, then the soul gets a body of highly educated man or "Deva" in proportion to good deeds, and after leaving the Vidvan body, ascends to Moksha or becomes free of sorrow and troubles. When Sins and virtues are equal, then soul gets a man's body. When Sins increase and virtues decrease the soul is sent to lower creation and vegetable world.

The "Jiva" or soul suffers for the increased quantity of sins in the bodies of lower animals or in form of *trees* plants, & c., and after a lapse of time when sins and virtues again kick the beam equally, then the soul again gets a human body.

In the same manner"Vidvan" after the enjoyment of blessings in Deva-life, becomes man again, when the Virtues and Sins are in equal proportion.

Sins and Virtues are of Various stages and degrees.

The inferior or superior body is given according to their proportion both in the brute creation and human being as well as of Deva.

The *Mukta Jiva* enjoys eternal happiness till Mahakalpa (36,000 times creation and destruction of the world) and comes into the human

१. यह पत्र मुरादाबाद से मुम्बई को भेजा गया। इस पत्र की प्राप्ति वैसे ही हुई है, जैसे इससे पूर्व पत्र की। पूर्ण संख्या १८० के ३१ जुलाई ७६ के पत्र में इस पत्रान्तर्गत वेदभाष्य के अंग्रेजी अनुवाद के विषय का उल्लेख है।

body again and transmigration goes on again, according to good and bad deeds.

(2) The first rishis were Aditya, Vayu, Agni, and Angira.

The Omnipresent (Sarva Vyapka), God inspired the sacred Vedas into their Atma. "Nothing like a Heavenly book coming from Heaven and sent by God thro' his Messenger." This is detailed at length in my Ved Bhashya from the very beginning (Vide Anka 1, & c.,). You can have it read to you. All such things are discussed at length in my books both in Sanskrit and Bhasha, which see.

(3) The Verbal prayer as well as practice is to teach others but for ones own good it should be done internally.

(4) (a) In order to obtain the advantage of Diksha and yoga, company of the learned (Vidvano ka sang), (4) Atmaki-pavitrata, (purification of soul) and (5) "pratyakshadi pramana." (The essence and reality of the Universe) one is to practice.

The practitioners are allowed to embrace the deeds which are to help in the matter; the contrary to be rejected-- (see Upasanaprakarna in Veda Bhumika 9 Anka).

(b) The soul in human body can perform wonders. By knowing the properties and formation of all the things in the universe (between God and Bhumi (earth)—a human being can acquire power of seeing, hearing, &c., far distant objects which generally is unable to attend to.

You can write articles on any subject; but first consult my books and write cautiously in their light. The contrary or the offspring of your own brain will have to be answered by you if criticized.

Yours———

(Sd.)——–—

P. S. I received the other day under cover of Col. Olcott's letter 9th July—letters from :—

(1) Peter Davidson Scotland (13th June 1879).

I shall send answer to Peter Davidson in English as you say- The others will be replied in Hindi.

In these matters I shall take steps according to your suggestions.

With regard to your enquiry of translating Veda-Bhashya into English and publish it into your journal, I am of opinion that :—

(1) It is an uphill work to translate faithfully one language into another—and if at all possible the translator should be equally learned in both languages. My Bhasha version is not like common vernacular; word for word of Sanskrit is translated in Bhasha. A most competent man both in English and Sanskrit is required to translate my Veda-Bhashya—and that even not quite to the mark.

(2) Unless I hear the gist of translation thus made in English—myself, I cannot be satisfied of its accuracy and I have not time enough to do this.

If you can manage to keep the translator with me, it is possible that at leisure moments he can read it over to me and have it rectified where necessary—and where he might be unable to understand, he can ask its explanation from me.

(3) Supposing all these arrangements can be successfuly made—the greatest drawback then is that the Aryan (English student) community of India will, on the appearance of English translation of my Veda-Bhashya-give up the Sanskrit and Hindi studies which they are so vehemently pursuing now a days in order to enable themselves to read Veda-Bhashya, and which is the chief object of mine, so of course English translation wlil be greatly serviceable to European scholars only.

(4) This will lead to the diminution of the number of subscriber's of Hindi Edition of Veda-Bhashya and cause a great deterioration in its publication. This will result very probably in the stoppage of the Hindi version altogether. The treasure whence you wish to take will exhaust. The final result will be the total destruction of both Hindi and [Sanskrit and] English will thus be a favourable issue ? It is not my desire to prohibit you from translating, as without the English translation the European nation cannot catch the true light. But first consider the above points.

First of all the four Vedas should be expeditely translated. I have estimated that it will take 10 years for me at the present rate of translation of all the Vedas. It is most important to finish them.

Please answer all the points. Your———

[भाषानुवाद]

प्रिय श्रीमती ब्लैवट्स्की

१–मनुष्य या किसी की मृत्यु के पश्चात् आत्मा मृत व्यक्ति के पाप पुण्यों के अनुसार वायु में निवास करता है। ईश्वर पुनर्जन्म या नया जन्म देता है। जब पापों का अनुपात कम और शुभ कर्म अधिक होते हैं तथा शुभ कर्मों के अनुपात से सुशिक्षित या देव का शरीर प्राप्त करता है और विद्वान् का शरीर छोड़ कर मोक्ष प्राप्त करता है। या दुःख और विपत्तियों से मुक्त हो जाता है। जब पाप पुण्य बराबर होते हैं, तब मनुष्य का शरीर प्राप्त करता है। जब पाप अधिक और पुण्य कम होते हैं तो आत्मा निम्नयोनि या स्थावर योनियों में जाता है। पाप अधिक होने से जीव निम्नकोटि के प्राणियों तथा वृक्षादिकाओं के शरीरों में कष्ट पाता है और कुछ समय बाद जब पाप और पुण्य बराबर हो जाते हैं तो आत्मा पुनः मनुष्य का शरीर पाता है।

इसी प्रकार 'देव जीवन' का आनन्द लेने के बाद पाप पुण्य के बराबर हो जाने पर विद्वान पुनः मनुष्य शरीर धारण करता है।

पाप और पुण्य के अनेक स्तर और श्रेणियाँ हैं। अमानुषी सृष्टि और मानुषी तथा दैवी सृष्टि में उनके अनुपात के अनुसार अच्छा या बुरा शरीर दिया जाता है।

मुक्त जीव महाकल्प तक (संसार की ३६ हजार बार सृष्टि और प्रलय होने तक के समय का) अनन्त सुख का भोग करता है और पुनः मनुष्य शरीर में आता है। और पुनः अच्छे बुरे कर्मों के अनुसार पुनर्जन्म चल पड़ता है।

२—प्रथम ऋषि आदित्य वायु अग्नि और अङ्गिरा थे।

सर्वव्यापक परमात्मा ने उनकी आत्मा में पवित्र वेदों की प्रेरणा की। परमात्मा ने अपने पैगम्बर द्वारा स्वर्ग से ईश्वरीय पुस्तक जैसी कोई चीज नहीं भेजी। इस का मेरे वेदभाष्य में आरम्भ से ही बड़े विस्तार से वर्णन है। (देखो अङ्क १, आदि) आप इसे अपने लिये पढ़वा सकती हैं। मेरी संस्कृत और भाषा की दोनों पुस्तकों में इस प्रकार की बातों पर विवेचन किया गया है। उसे देखिए!

३—उच्चारण सहित प्रार्थना तथा आवृत्ति दूसरों को शिक्षा देने के लिये है। किन्तु अपने हित के लिये मन में ही करनी चाहिये।

४—(क) दीक्षा और योग, विद्वानों का सङ्ग, आत्मा की पवित्रता और प्रत्यक्षादि प्रमाणों (जगत् की तत्त्व और वास्तविकता) का लाभ प्राप्त करने के लिये अभ्यास करना चाहिये।

अभ्यासी को इस विषय में सहायक कार्यों को करने की अनुमति है। और विपरीतों को छोड़ देना चाहिये (देखो उपासना प्रकरण ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका)।

(ख) आत्मा मनुष्य शरीर में अद्भुत कार्य कर सकती है। संसार में (ईश्वर से लेकर पृथिवी पर्यन्त) सभी पदार्थों के स्वरूप और गुणों को जानकर मनुष्य अत्यन्त दूर के पदार्थों के दर्शन श्रवण आदि की शक्ति प्राप्त कर सकता है। जिसे प्राप्त करने में प्रायः असमर्थ रहता है।

आप किसी भी विषय पर लेख लिख सकती हैं। परन्तु पहले मेरे ग्रन्थों का अवलोकन

करलें और उनके प्रकाश में सावधानी से लिखें। विपरीत लेखों या आपकी अपने मस्तिष्क की उपज के लिये आलोचना होने पर आप ही उत्तरदायी होंगी।

आपका—

हः—

पुनश्च—

कल मुझे कर्नल आलकाट के ९ जुलाई के लिफाफे में पीटर डैविडसन स्काटलैण्ड (१३ जून १८७९) के पत्र मिले।

आपके कथनानुसार मैं पीटर डैविडसन को अंग्रेज़ी में पत्र लिख दूँगा। शेष का उत्तर हिन्दी में दिया जायगा।

इन मामलों में आपके सुझावों के अनुसार कार्य करूंगा। वेदभाष्य के अंग्रेज़ी में अनुवाद करने और आपकी पत्रिका में उसे प्रकाशित करने के आपके प्रश्न के विषय में मेरा मत है कि--

१–एक भाषा से दूसरी भाषा में ठीक २ अनुवाद करना अति कठिन कार्य है और यदि सम्भव भी हो तो अनुवादक को दोनों भाषाओं पर समान अधिकार होना चाहिये। मेरा भाषानुवाद साधारण भाषा सा नहीं है। संस्कृत के शब्दों का भाषा में शब्दशः अनुवाद किया जाता है। मेरे वेद भाष्य का अनुवाद करने के लिए अंग्रेज़ी और संस्कृत दोनों में निपुण व्यक्ति की आवश्यकता है, यद्यपि वह भी सर्वथा ठीक नहीं कर सकता।

२–इस प्रकार अंग्रेज़ी में किये गये अनुवाद के सारांश को जब तक मैं स्वयं न सुन लूं तब तक मैं उसकी यथार्थता से सन्तुष्ट नहीं हो सकता और इस के लिये मेरे पास इतना समय नहीं है।

यदि आप अनुवादक को मेरे साथ रहने का प्रबन्ध कर सकें तो सम्भव है कि अवकाश के समय वह उसे मुझे पढ़ कर सुना दे और जहां अवश्यक हो शुद्ध कराले। और जहां वह समझ न सके वहां मुझ से अर्थ पूछ सकता है।

३–कल्पना कीजिए कि यह सब प्रबन्ध सफलता पूर्वक कर भी दिये जायं, तो भी सब से बड़ी वाधा यह है कि भारत की आर्य जनता (अंग्रेजी के विद्यार्थी) मेरे वेदभाष्य के अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित होने पर संस्कृत और हिन्दी का अध्ययन त्याग देगी। मेरे वेदभाष्य को समझने के लिये संस्कृत और हिन्दी का अध्ययन, जिस को वे कर रहे हैं, और जो मेरा मुख्य उद्देश्य है, नष्ट हो जायगा। अतः वस्तुतः अंग्रेजी अनुवाद प्रधानतया केवल यूरोपियन विद्वानों के लिये ही लाभप्रद हो सकता है।

४–इस से वेदभाष्य के हिन्दी संस्करण के ग्राहकों की संख्या में कमी हो जायगी और उस प्रकाशन में बड़ी हानि होगी और सम्भवतः इस का यह परिणाम हो कि हिन्दी अनुवाद सर्वथा वन्द हो जाय। वह निधि जहां से आप लेना चाहते हैं; समाप्त हो जायगी और अन्तिम परिणाम हिन्दी और संस्कृत दोनों संस्करणों का पूर्ण विनाश होगा और इङ्गलिश संस्करण ही अभीष्ट बन जायगा। मेरा विचार आप को अनुवाद करने से रोकने का नहीं है, क्योंकि बिना अंग्रेज़ी अनुवाद के यूरोपियन जातियां सत्य प्रकाश को नहीं पा सकतीं, किन्तु पहले उपर्युक्त बातों पर ध्यान दीजिए।

सबसे पहले चारों वेदों का शीघ्रता से अनुवाद हो जाना चाहिये। मेरा अनुमान है कि सारे वेदों का इसी वेग से भाष्य करने में मुझे १० वर्ष लगेंगे। उन्हें समाप्त कर लेना सबसे आवश्यक कार्य है। आपका

कृपया सभी बातों का उत्तर देवें

———

[१५][1] **पत्रांश (१३२)** [१८०]

....

अमरीका वालों से हमारा नमस्ते कह देना।

वेदभाष्य के अंग्रेज़ी करने के विषय में अमरीका वालों के पत्र का उत्तर हमने भेज दिया है।[2] इस का उत्तर अभी तक हमारे पास नहीं पहुंचा। उनके पास जाओ तो प्रसंग से कह देना कि अब तक हमारा शरीर अच्छा नहीं था। इस लिये विलायत की चिट्ठियों का उत्तर नहीं भेजा है। अब कुछ शरीर अच्छा है। अब भेजेंगे। वहां मुम्बई में इस समय हम नहीं जा सकते, किन्तु पटना से दानापुर को जावेंगे।

३१ जुलाई ७९[3]
मुरादाबाद
आज मुरादाबाद से बदायूं जाते हैं।

———

[१६] **पत्र (१३३)** [१८१]

[मैनेजर प्रेस के नाम............][4]

....

हम मुरादाबाद से चलकर बदायूं ठहरे हैं। यहां से भाद्रपद कृष्ण १२ गुरुवार १४ अगस्त ७९ को बरेली पहुंचेंगे। अब तक हमारा शरीर काम के योग्य ठीक २ नहीं हुआ है।

दयानन्द सरस्वती
बदायूं

———

[१७][5] **पत्रांश (१३४)** [१८२]

....

हमारा शरीर बहुत दिनों से बीमार है। अति दुर्बल हो गया है। सो तुम जा कर अमरीका वालों से कहना कि और कुछ न समझें। हमारा शरीर दो दिन से कुछ अच्छा है। जो ऐसा ही रहेगा

१. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत [सम्भवतः मुंशी समर्थदान को लिखा गया]।

२. देखो, इस से पहला अंग्रेजी पत्र।

३. श्रावण शुक्ल १३ गुरुवार, सं० १९३६। यु० मी०।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४४० से उद्धृत। मैनेजर अर्थात् मुं० समर्थदान।

५. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत [मुंशी समर्थदान को]।

तो हम उन के पत्रों का उत्तर शीघ्र भेजेंगे। और अपने जन्म से लेकर दिनचर्या अभी कुछ संक्षेप से देवनागरी और अंग्रेजी में करवा कर हम उन के पास भेजदेंगे। और विलायत के पत्रों का उत्तर भी शीघ्र भेजेंगे। अमरीका वाले लोग समाचार पत्र छापेंगे, सो उनको भूमिका आदि से बातें समझा देना।

२१ अगस्त ७९[१]

दयानन्द सरस्वती
बरेली

---

[१८]　　　　पत्र (१३५)　　　　[१८३]

[मैनेजर वेदभाष्य के नाम][२]

....

करनैल साहब ने हमको लिखा था कि आप अपना जन्मचरित्र लिख दीजिये, प्रथम तो हमारा शरीर अच्छा नहीं रहा इस कारण से नहीं भेज सके। अब दो चार दिन से कुछ अच्छा है सो आज तुम्हारे इस पत्र के साथ कुछ थोड़ा सा जन्मचरित्र लिख कर भेजते हैं। सो तुम जिस समय पहुंचे उस समय उनके पास पहुंचाना। क्योंकि उनका समाचार में छापने का समय आ गया है। अलकाट साहब को यह बात भी हमारी ओर से सुना देना कि हमारा यह अभिप्राय नहीं कि इस समाचार का नाम केवल आर्यप्रकाश वा थ्योसोफिस्ट हो, किन्तु दोनों को मिला कर रक्खा जावे। और यह भी कह देना कि आपने जो चिट्ठी के साथ दो पत्र विलायत के भेजे सो पहुँच गये। हमारा शरीर दस्तों की बीमारी से बहुत दुर्बल हो गया था। अब आनन्द है।

२७ अगस्त सन् १८७९[३]

दयानन्द सरस्वती
बरेली

---

[२०]　　　　पत्र (१३६)　　　　[१४८]

My Dear friend,[४]

My friend M. Indermuni requires the address of M. Hurprasad,

---

१. भाद्रशुक्ल ४ बृहस्पतिवार, सं० १९३६। यु० मी०।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४४१ से उद्धृत। मैनेजर अर्थात् प्रबन्धकर्ता मुंशी समर्थदान।

३. भाद्र शुक्ल ११ बुधवार, सं० १९३६। यु० मी०।　४. पं० रामाधार वाजपेयी को।

the copy-navis. I hope you will send it to him as soon as possible.[1]

Yours ever
Swamee Diyanund Sarusswatti.

[भाषानुवाद]

मेरे प्रिय मित्र !

मेरे मित्र मुन्शी इन्द्रमणि, म० हरप्रसाद कापी-नवीस का पता चाहते हैं । मैं आशा करता हूं कि आप उन्हें यथासम्भव यह शीघ्र भेज देंगे ।

आप का
स्वामी दयानन्द सरस्वती

रामाधार वाजपेई जी आनन्दित रहो ![1]

मुंशी जी ने जो पत्र तुम्हारे पास भेजा उस का उत्तर क्यों नहीं दिया, जो २ पूछे वा मंगवावे उसी समय उत्तर भेज दिया करो। यहां व्याख्यान खूब हो रहे हैं। पादरी स्काट साहब से तीन दिन[2] भर बहस हुई उनकी विरुद्ध बातें सब कट गईं सो जब छपेगा[3] तब तुम्हारे पास भी भेजा जायगा। और यहां से चार पाँच दिन के पीछे शाहजहांपुर आकर वहां कुछ ठहर कर तुमको लिखेंगे। जैसा मकान हमारे रहने के लिये किया है, वैसा ही व्याख्यान के लिये भी एक मकान शहर में कर रक्खो, क्योंकि हमारा ठहरना अब थोड़ा २ ही होगा।

ता० २९ अगस्त।[4] { दयानन्द सरस्वती }

———

१. ये दोनों लेख एक ही पत्र पर हैं।

२. यह प्रसिद्ध शास्त्रार्थ २५, २६, २७ अगस्त १८७९ (भाद्र शु० ८, १०, ११ सोम मंगल बुध सं० १९३६) को बरेली में हुआ।

३. यह पुस्तक प्रथम बार आश्विन सं० १९३६ में छपा था। इस की सूचना ऋग्वेद तथा यजुर्वेद भाष्य के ११वें अङ्क पर इस प्रकार दी थी—

"सत्यासत्य विवेक

इस पुस्तक में सविस्तर वृत्तान्त तीनों दिन के शास्त्रार्थ कि जो स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और पादरी टी० जी० स्काट साहब का राजकीय पुस्तकालय बरेली में, इस प्रकार की प्रथम दिन अनेक जन्म के विषय में, दूसरे दिन अवतार अर्थात् ईश्वर देह धारण कर सकता है इस विषय में और तीसरे दिन इस विषय में कि ईश्वर पाप क्षमा कर सकता है, हुआ था, बहुत उत्तम फारसी लिपी और उर्दू भाषा में मुद्रित हुवा है। इस शास्त्रार्थ में प्रत्येक विषय पर उत्तम प्रकार से खण्डन-मण्डन हुआ है कि जिसके देखने से सत्यप्रेमी जनों को सत्य और असत्य प्रगट होता है। जो विद्यार्थी मिशन स्कूलों में पढ़ते हैं और बहुत करके गुमराह होते हैं, उनको यह पुस्तक गुमराही से बचाता है। डाक महसूल सहित ।)॥ मूल्य भेज कर मंगवा लें" ॥

४. सन् १८७९ (भाद्र शुक्ल १३ शु० सं० १९३६) बरेली से लिखा गया। मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

[१] पत्र (१३७) [१८९]

ओम् नमः सर्वशक्तिमते परमेश्वराय[1]

श्रीयुताङ्गदशास्त्र्यादिपण्डितान् प्रतीदमाज्ञापनम् ।[2]

क्या आप लोग मूर्तिपूजा आदि वेदविरुद्ध काम करने से वेद विमुख होकर वेदप्रतिपादित एक अद्वितीय ईश्वरपूजा और सद्धर्मादि से उलटा चल और चला कर अपना मतलब (प्रयोजन) सिद्ध नहीं करते हैं ।

और क्या मैं कोई धर्म अर्थ काम मोक्ष सम्बन्धी कर्म वेदविरुद्ध कभी करता और कराता हूं ।

जो आप को शास्त्रार्थ करने की सच्ची इच्छा होती तो सभ्यता वा विनयपूर्वक शास्त्रार्थ करने का निषेध मैंने कब किया था और अब भी नहीं करता ।

परन्तु जो शास्त्रार्थ को आप की सच्ची इच्छा होती तो जहां मैं ठहरा था उसी स्थान में आकर ठहरते ।

अन्य स्थान में ठहरने से विदित होता है कि आप की इच्छा शास्त्रार्थ करने की नहीं है। किन्तु कहने ही मात्र है और अब आगे जैसी होगी वैसी विदित भी हो जायगी ।

हां जहां मूर्ख और असभ्य पुरुषों का हल्ला गुल्ला होता है; वहां मैं खड़ा भी नहीं होता । तुम ने जो यह लिखा कि मैं जहां २ जाता हूँ वहां २ से तुम किनारा काट कर चले जाते हो, यह बात तुम्हारी अत्यन्त झूठ है ।

तुम से मुझ को किञ्चिन्मात्र भी भय न कभी हुआ था, न है और न होगा । क्योंकि आप में ऐसे गुण ही नहीं हैं, जो भयप्रद हों ।

बांसबरेली में भी तुम्हारी उलटी कारवाई अर्थात् दंगा बखेड़ा करने वाले मनुष्यों के संग लाने के कारण खजानची लक्ष्मीनारायण आदि ने अपने बंगला में तुमको आने से रोक दिया था। यह तुम को तुम्हारे ही कर्म्मों का फल है । सिवाय बरेली और शाहजहांपुर के मैंने कभी आप का आना सुना भी नहीं । अब आप और मैं दोनों शाहजहांपुर में हैं, जो इस समागम सेभागे सो झूठा । अब आप को जितना शास्त्रार्थ करने का बल हो कर लीजिये । परन्तु विदित रखना चाहिये सब आप्तों की यही रीति है कि जो सर्वदा सत्य को जताना है और झूठ को हराना है । इस को मत भूलियेगा । मैं अपनी विद्या और बुद्धि के अनुसार निश्चित जानता हूं कि मैं और पुरुषों को जहां तक शक्य है, वेदोक्त सनातन धर्म में चलता और चलाता हूं । इस में जो तुम को वेदविरुद्धपने का भ्रम हुआ, सो जो शास्त्रार्थ होगा । तो तुम वेदविरुद्ध चलते हो या मैं, निश्चय हो जायगा । हां मथुरा में श्री स्वामीजी के पास बहुत विद्यार्थी जाते थे, आप भी कभी गये होंगे, परन्तु जो आप स्वामी जी के

---

१. मासिकपत्र आर्यदर्पण, शाहजहांपुर, सितम्बर १८७६, पृ० १४-१६, २६१-६२ पर उद्धृत। पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४६६-७१ पर आर्यदर्पण से ही उद्धृत किया गया है । परन्तु कई पाठ अशुद्ध हैं । हमारा पाठ आर्यदर्पण के अनुकूल है ।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित में यह पंक्ति लुप्त है ।

शिष्य होते तो उन के उपदेश से विरुद्ध आचरण क्यों करते और ज्येष्ठ कनिष्ठ उत्तम गुण कर्म्म और नीच गुण कर्म्मों से ही होते हैं। इस शास्त्रार्थ में निम्नलिखित नियम उभयपक्ष वालों को मानने होंगे।

१. इस शास्त्रार्थ में चारों वेद मध्यस्थ हैं अर्थात् वेदविरुद्ध झूठा और वेदानुकूल सच्चा माना जायगा।

२. इस शास्त्रार्थ में जो वेद के किसी मन्त्रपद के अर्थ करने में विप्रतिपत्ति[1] हो तो जिस के अर्थ पर ब्रह्मा जी से ले कर जैमनि मुनि पर्यन्त उक्त सनातन मान्य ग्रन्थों का प्रमाण साक्षी में मिलेंगे, उन का अर्थ सत्य माना जायगा, दूसरे का नहीं। और वेदानुकूलता श्रेष्ठ कर्मानुसार प्रत्यक्षादि प्रमाण, लक्षण लक्षित, आप्तानुचरण अविरुद्ध और अपने आत्मा की विद्या और पवित्रता इन पांच कसौटियों से परीक्षा में जो २ सच्चा वा झूठा ठहरेगा सो २ वैसा ही माना जायगा, अन्यथा नहीं।

३. एक एक की ओर से सभ्य धार्मिक विद्वान् चतुर पचास पचास पुरुष शास्त्रार्थ में सभासद होना चाहियें।

४. उभय पक्ष के १०० मनुष्य को प्रथम से सभा में प्रवेश करने के लिये टिकट मिल जायेंगे। वे ही सभा में आ सकेंगे, अन्य नहीं।

५. जो जिस का पक्ष होगा वही अपने सप्रमाण पक्ष को लिखा कर सुना समझा या दूसरे से सुना कर समझाया करेगा।

६. उभय पक्ष वालों को अपने अपने समय में एक एक अक्षर प्रश्न या उत्तर लिखवा कर आगे चलना होगा, अन्यथा नहीं।

७. इस शास्त्रार्थ में उभय पक्ष वाले जो २ कहेंगे, उस २ को तीन लेखक लिखते जावेंगे। अपने २ पक्ष के लेख लिखवा कर अंत में तीनों पर स्वहस्ताक्षर कराके एक प्रति मुझ को दूसरी आप को और तीसरी सरकार में रहेगी कि जिस से कभी कोई घटा बढ़ा न सके।

८. अपने पत्र में जो आपने दस २ मिनट लिखे सो स्वीकार करता हूं; परन्तु उत्तर देने के लिये दस मिनट और प्रश्न करने के लिये दो मिनट होना योग्य है।

९. शास्त्रार्थ विषय में मुझ और आप को ही बोलने लिखवाने सुनवाने का अधिकार होगा, अन्य को नहीं। अन्य सभासद तो ध्यान देकर सुनते रहेंगे।

१०. जहां खजानची जी के बंगला में मैं ठहरा हूं, यह ही शास्त्रार्थ के लिये निश्चित रहना चाहिये। क्योंकि यह न मेरा स्थान है न आप का।

११. इस शास्त्रार्थ में वेद आदि सनातन शास्त्रों की रीति से पाषाणादि मूर्तिपूजा और पुराणादि पक्षों का खण्डन विषय मेरा और आपका मण्डन विषय रहेगा।

१२. कुवचन, हठ, दुराग्रह, क्रोध, पक्षपात, भय, शङ्का, लज्जा आदि को छोड़ कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग उभयपक्ष वालों को अवश्य होना चाहिये। क्योंकि आप्तों का यह ही सिद्धान्त है।

१३. जब तक किसी विषय का खण्डन या मण्डन पूरा [न] हो तब तक शास्त्रार्थ बन्द न होगा। किन्तु प्रतिदिन होता ही जायगा। क्योंकि आरब्ध कर्म्मों को बीच में निष्फल न छोड़ कर

१. आर्यदर्पण-विप्रतिक्त। जीवनचरित-विप्रतिपत्त।

सिद्धान्त पर्यन्त पहुंचा देना विद्वानों का मुख्य सिद्धान्त है और इसी रीति से बहुत दिनों वा महीनों तक शास्त्रार्थ होने से आप के शास्त्रार्थ करने की उत्सुकता भी परिपूर्ण होगी, अन्यथा नहीं।

१४. उभयपक्ष वालों को सरकार से पोलीस आदि का प्रबन्ध अवश्य करना होगा कि जिस से कोई असभ्य मनुष्य शास्त्रार्थ में विघ्न न कर सके।

१५. इस शास्त्रार्थ का समय जिस दिन से आरम्भ होगा उस दिन से सन्ध्या के ५ बजे से ८. बजे तक प्रतिदिन होना चाहिये।

१६. एक दिन पहले मैं बोलूँगा, तो दूसरे दिन आप बोलेंगे और जो पहले बोलेगा वही उस दिन अन्त में भी बोलेगा। और सब सुनने वाले वा जब छप कर सब सज्जन लोग बाचेंगे तब अपनी २ विद्या और बुद्धि के अनुसार सच्चा वा झूठा को जान कर झूठ को छोड़ कर सत्य का ग्रहण कर लेंगे। आप की चिट्ठी कल दोपहर समय आई। इस से आज उत्तर लिखा गया। जो प्रातःकाल आती तो कल ही लिख दिया होता। आप के पत्र में संस्कृत और भाषा में अनेक प्रकार से बहुत अशुद्ध है। सो जब मिलोगे तब समझा दिया जायगा।

आश्विन कृष्ण ११ शुक्रवार[1] १९३६।[2]

दयानन्द सरस्वती

———

[२]   पत्र (१३८)   [१८६]

ओम् नमः सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय[3]

श्रीयुताङ्गदशास्त्र्यादिपण्डितान्प्रतीदम्प्रख्यापनम्।

संवत् १९३६ आश्विन कृष्ण १२, शनिवार का लिखा तुम्हारा पत्र आश्विन कृष्ण १३ रविवार को दिन के ११½ बजे मेरे पास पहुँचा। तत्रस्थ लेखाभिप्राय सब प्रकट हुआ। मुझ को अति निश्चय है कि तुम लोग शास्त्रों का विचार करना कराना तो तब जानोगे कि जब तुम्हारे अनेक जन्मों के पुण्य उदित होंगे, परन्तु जो मैं तुम्हारे निश्चय किये स्थानों में बातचीत करने को आऊं तो तुमको हल्ला गुल्ला करने को अवसर अच्छा मिल जावे। अब जो तुमको पूर्वोक्त ५० धार्मिक बुद्धिमान रईसों के साथ यहाँ आकर कुछ कहना सुनना हो तो मैं आने से रोकता नहीं। आगे तुम्हारी प्रसन्नता।

दयानन्द सरस्वती

सं० १९३६ आश्विन कृष्ण १३, रविवार।[4]

———

१. आर्यदर्पण में शुम्वार छपा है। प्रतीत होता है कि उर्दू के लेखक ने शुक्र को शुम्वार लिखा है। जीवन चरित में सोमवार छपा है। चाहिये वस्तुतः शुक्रवार।

२. १२ सितम्बर १८७९।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४७७ पर उद्धृत। यह पत्रव्यवहार शाहजहांपुर में हुआ। अङ्गद शास्त्री के पत्र भी जीवन चरित में छपे हैं। आर्यदर्पण पृ० २७२, २७३ सितम्बर १८७९।

४. १४ सितम्बर१८७९।

[२२] ॥ विज्ञापनपत्रमिदम्[1] ॥ [१८७]

सब को विदित हो कि ठाकुर मुकुन्दसिंह भूपालसिंह और मुन्नासिंह जी के नामका ६ अङ्क में विज्ञापन दिया गया था और मुन्नासिंह जी ने परोपकार बुद्धि से ग्राहकों से उधार का रुपया लेने का काम स्वीकार किया था, परन्तु उक्त ठाकुर को किसी विशेष कार्य के होने से ग्राहकों से रुपया जमा करने की फुरसत नहीं है। इसलिये सब स्थानों के ग्राहकों से तकाज़ा करके रुपया लेने का अधिकार मुन्शी समर्थदान, प्रबन्धकर्त्ता "वेदभाष्यकार्यालय" मुम्बई को दिया गया है। और इनके तकाज़ा करने पर भी ग्राहक लोग रुपया देने में हीला हवाला करेंगे तो उनसे रुपया, समर्थदान के विदित करने से राजकीय नियमानुसार ठाकुर मुन्नासिंह ही लेंगे अब पीछे सब ग्राहक मुम्बई में रुपया भेजा करें वहाँ से सब के पास बराबर रसीद पहुंचेगी। हम ग्राहकों को सुगमता होने के लिये यह नियम भी लिखते हैं कि जिस २ स्थान के लोगों के नाम हम नीचे लिखते हैं उस २ स्थान के ग्राहक उनके पास रुपया जमा करा देंगे तो वे लोग सबके नाम की पृथक् २ रसीद मुम्बई से मंगवा दिया करेंगे॥

मुनशी इन्द्रमणीजी प्रधान आर्य्यसमाज मुरादाबाद।
मुन्शी बखतावरसिंह मन्त्री आर्य्यसमाज शाहजहांपुर।
लाला रामशरणदास रईस उपप्रधान आर्य्यसमाज मेरठ।
लाला सांईदास मन्त्री आर्य्यसमाज लाहौर।
लाला वल्लभदास जी खजानची आर्य्यसमाज गुरदासपुर।
चौधरी लक्ष्मणदास सभासद आर्य्यसमाज अमृतसर बाजार माई सेवा।
बाबू रामाधार बाजपेई तार आफिस रेलवे लखनऊ।
पं० सुन्दरलाल रामनारायण पोस्ट मास्टर जनरेल्स आफिस इलाहाबाद।
बाबू माधोलाल मन्त्री आर्य्यसमाज दानापुर बंगाल।

मुन्शी समर्थदान और मुन्शी इंद्रमणी जी के पास हमारे बनाए सब पुस्तक रहते हैं जिसको इच्छा हो मंगवा ले॥

हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती

———

[१९] पत्रांश (१३९)[2] [१८८]

....

अमरीका वालों के पास हम एक पत्र भेजेंगे तो उस में सब बातें लिखेंगे। आबू में कोई

१. यह विज्ञापन ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के नवम तथा दशम अंक पर छपा था। श्रावण का अङ्क देर से प्रकाशित हुआ था। विज्ञापन सम्भवतः प्रथम आश्विन १९३६ में लिखा गया होगा।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ पर उद्धृत [सम्भवतः मुन्शी समर्थदान को लिखा गया]।

विष खाता था, यह बात हमने सुनी हुई कही थी। ठीक नहीं समझते। इस लिये जन्मचरित्र में नहीं लिखी और एक साधु समुद्र पर चलता था, ऐसी असंभव बातें मैं ने कदापि न लिखी होंगी।

दयानन्द सरस्वती

१७ सितम्बर७९[1] शाहजहांपुर

———

[२०] पत्रांश (१४०) [१८९]

[मैनेजर वेदभाष्य के नाम][2]

कुंवर मुन्नासिंह छलेसर वाले का अब चंदा वसूल करने का कुछ भरोसा नहीं। इस लिये तुमको चाहिये कि यहां तक बने चंदा वसूल करो। आठ दिन पीछे लखनऊ जावेंगे। अब हमारा शरीर कुछ अच्छा है।

दयानन्द सरस्वती

१७[3] सितम्बर ७९[1] शहाजहांपुर

———

[२१][4] (१४१) [१९०]

… …… … … … … …

हम १८ सितम्बर[5] सन् [१८]७९ को सायंकाल को शाहजहांपुर से लखनऊ आये और ता० २४ सितम्बर[6] सन् [१८]७९ बुधवार के दिन प्रातःकाल कानपुर को जायेंगे और वहां से उसी दिन फर्रुखाबाद को जावेंगे और वहां एक सप्ताह या दस दिन ठहर कर फिर कानपुर आवेंगे और फिर यहां दो चार दिन ठहर कर प्रयाग मिर्जापुर काशी होते हुए कार्तिक पूर्णमासी तक दानापुर पहुँचेगें और अब हमारा शरीर पहले से अच्छा है।

दयानन्द सरस्वती

२१ सितम्बर १८७९,[7] लखनऊ

———

१. प्रथम आश्विन शुक्ल १ बुधवार सं० १९३६। यु० मी०।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४७६ से उद्धृत।

३. पं० लेखराम जी के जीवन चरित्र में १७ सितम्बर ही छपा है। इस पत्र में ८ दिन पीछे लखनऊ जाने का उल्लेख है, परन्तु अगले पूर्ण संख्या १९० के पत्र में १८ सितम्बर को ही लखनऊ पहुँचने का निर्देश है। अतः सम्भव है जीवनचरित्र में छपने की असावधानता से पूर्ण सं० १८८, १८९ दोनों में ७ सितम्बर का १७ बन गया होगा। ७ सितम्बर १८७९ को प्रथम आश्विन कृष्ण ६ रविवार १९३६ था। यु० मी०।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४८० से उद्धृत। यह पत्र दानापुर के बाबू माधोलाल को लिखा गया होगा। मूल पत्र पं० लेखरामजी के संग्रह के साथ नष्ट हो गया प्रतीत होता है।

५. प्रथम आश्विन शुक्ल २ बृहस्पतिवार सं० १९३६। यु० मी०।

६. प्रथम आश्विन शुक्ल ९ बुधवार सं० १९३६। यु० मी०।

७. प्रथम आश्विन शुक्ल ६ रवि, सं० १९३६। यु० मी०।

[२२] पत्रांश (१४२)[1] [१९१]

....

छापाखाना के वास्ते एक हज़ार फ़रुखाबाद से हुआ है। अब अपना छापाखाना स्वतंत्र कराया जावेगा। तुम भी मुम्बई में इसके वास्ते चंदा करो। हमारा विचार मार्गशीर्ष तक अपना छापाखाना कर लेने का है।

दयानन्द सरस्वती

कानपुर ११ अक्टूबर १८७९ आश्विन वदी ११ शनि०।

[आश्विन द्वितीय शुक्ल १ बृहस्पतिवार][2] अर्थात् १६ अक्टूबर को यहां से प्रयाग को जावेंगे!

---

[२३] पत्रांश (१४३)[3] [१९२]

....

और कर्नल अलकाट साहब के पत्र आये। उसका उत्तर पीछे से तुमको नागरी में भेजेंगे। उनकी नकल अंग्रेजी में करके दे देना तो हम सीधा भेज दिया करें।

दयानन्द सरस्वती

११ अक्तूबर ७९[4]
कानपुर

---

[१६] पत्र (१४४) [१९३]

आर्य्यसमाज के मन्त्री बाबू माधोलाल आनन्दित रहो![5]

तुम्हारी कई चिट्ठियां आईं। हम सफर में रहे, इस लिये चिट्ठी का जवाब नहीं भेज सके। विज्ञापन तुम ने छपवा लेने। नमूना भेजते हैं और हम १६ अक्तूबर को प्रयाग जायेंगे तब तुमको और चिट्ठी भेजेंगे। अब हम बनारस नहीं जावेंगे। मिरजापुर से दानापुर सीधे चले जावेंगे, रास्ते में कहीं न ठहरेंगे। हमारे पास कोई आदमी आप भेजें। जब हम दूसरी चिट्ठी लिखें तब मिरजापुर में भेजना। मुरादाबाद से विज्ञापन बाबत नवीन पुस्तक छपवाने के आप के पास गया होगा, उसके मुताबिक चन्दा करने का बन्दोबस्त कर रहे होगे। फर्रुखाबाद से एक हजार रुपया हो

---

१. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४६२ पर उद्धृत। यह पत्र संभवतः मुन्शी समर्थदान को लिखा गया है। अगला पत्रांश भी इसी में सम्मिलित होगा।

२. सम्भवतः कोष्ठन्तर्गत पाठ पं० लेखरामजी के जीवनचरित में लेखकप्रमाद से छूट गया होगा। यु०मी०।

३. पं० लेखरामकृत जी० च० पृ० ८३७ पर उद्धृत। ४. आश्विन (२) वदी ११ शनिवार १९३६।

५. जो पत्र हमें दानापुर से प्राप्त हुए हैं उनमें यह पत्र नहीं हैं, परन्तु पण्डित लेखरामजी रचित बृहद् जीवनचरित के पृ० ४६६ पर यह मिलता है। हम ने वहीं से लेकर इसे शब्दशः देवनागरी लिपी में कर दिया है।

गये होंगे। यह चन्दा हम को बनारस में मार्गशीर्ष में जाना होगा सो समझ लेना। हम को दानापुर से लौट कर आरा अथवा जहां कहीं ठहरना होगा वहां ठहरेंगे। मार्गशीर्ष तक बनारस लौट कर आ जावेंगे। और विज्ञापन में स्थान की जगह छोड़ दी है, सो तुम जो जगह निश्चित हो, लिख कर छपवा देना और तारीख की जगह छोड़ देना। जब हम आयेंगे लिखवायेंगे। हमारे रहने का मकान शहर से एक मील अलग रहे, इस से दूर न हो। व्याख्यान का मकान शहर में हो। और रहने के मकान की आबोहवा अच्छी देख लेनी। और हरिहर क्षेत्र के मेला में जायेंगे। वहाँ का भी बन्दोबस्त, मकान, डेरा, तम्बू वगैरा का कर लेना, अब हम चिट्ठी मिरजापुर से लिखेंगे। और अगले महीना में **बनारस में आकर छापाखाना अपना बनवाने की तजवीज करेंगे।** सो चन्दा अपने हां जल्दी करना और अब **बनारस में छः महीने रहने का बन्दोबस्त हुआ है,** जिस में वेदभाष्य और बाकी पुस्तक जल्दी छप कर तय्यार हो जावेंगे, ऐसा विचार है।

दयानन्द सरस्वती

मुकाम कानपुर, १२ अक्तूबर ७९ ई०।[1]

———

[२३]　　(विज्ञापनपत्रम्)[2]　　[१९४]

ठाकुर मुकुन्दसिंह वा मुन्नासिंह आम मुकद्दमा के वास्ते मुख्तार हैं। परन्तु पुस्तकें बेचने और रुपया लेने के मुख्तार ये हैं मुन्शी समर्थदान मुम्बई वाले। मुन्शी इन्द्रमणि जी प्रधान आर्य्यसमाज मुरादाबाद। बख्तावरसिंह मन्त्री आर्यसमाज शाहजहांपुर, लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्यसमाज मेरठ। लाला साईंदास मन्त्री आर्यसमाज लाहौर। लाला बलदेव दास[3] वा डा० बिहारीलाल मन्त्री आर्यसमाज गुरुदासपुर। चौधरी लक्ष्मणदास[4] सभासद आर्यसमाज अमृतसर। बाबू रामाधार वाजपेई[5] तार आफिस रेलवे लखनऊ। पं० सुन्दर लाल रामनारायण पोस्ट मास्टर जनरल आफिस प्रयाग। बाबू माधोलाल मन्त्री आर्यसमाज दानापुर। इन सब को चन्दा वेदभाष्य के उगराहने का अधिकार है। और जिसके पास जितना चन्दा होवे, जैसराज गोटेराम साहूकार

---

१. आश्विन (द्वितीय) कृष्ण १२, रविवार सं० १९३६। यु० मी०।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४६२ पर उद्धृत [इसी आशय का एक विज्ञापन पूर्ण सं० १८७ पर छपा है।]

३. पूर्ण संख्या १८७ में 'लाला वल्लभदास' नाम है।

४. ये ही चौधरी लक्ष्मणदास थे, जो पीछे लक्ष्मणानन्द स्वामी के नाम से प्रसिद्ध हुए। इन्होंने श्री स्वामी जी से योग की अनेक क्रियाएं सीखी थी। इन्हीं का ग्रन्थ ध्यानयोगप्रकाश योगशिक्षा के लिए अपूर्व है। हमने उन्हीं की कृपा से सन् १९१२ में अमृतसर में जप की विधि सीखी और सत्यार्थप्रकाश के कई प्रकरण पढ़े। ऋषि दयानन्द सरस्वती का महत्त्व हमने इन्हीं से समझा था।

५. जीवनचरित में अर्जुन आधार नाम छपा है, परन्तु शुद्ध नहीं। रामाधार जी के नाम के अनेक पत्र इस संग्रह में छापे गए हैं। [पूर्ण सं० १८७ में भी रामाधार शुद्ध नाम ही है।]

फरुखाबाद के पास रुपया भेज कर रसीद मंगा लें। और मुं० समर्थदान मुम्बई वाले और मुं० इन्द्रमणि जी मुरादाबादी के पास मेरे बनाए सब पुस्तक मिलेंगे।

दयानन्द सरस्वती

१४ अक्तूबर १८७९।[1]
कानपुर

---

[१७] पत्र (१४५) [१९५]

बाबू माधोलालजी आनन्दित रहो![2]

विदित हो कि १९३६ द्वि० आश्विन सुदी ९ गुरुवार ता० २३ अक्टूबर को हम प्रयाग से मिरजापुर आकर सेठ राम रतन के बाग में ठहरे हैं अब तुम लोगों का क्या विचार है। हमारा शरीर बीमार है, परन्तु तुम्हारे यहां आने को लिख चुके हैं। आना तो होगा ही, व्याख्यान होना, न होना वहां आकर मालूम होगा।[3] और तुम लोगों ने लिखा था कि हमारे सभासद आप को लेने को आवेंगे सो जो आने का विचार हो तो ६ छः दिन के विच यहाँ मिरजापुर में पूर्वोक्त पते पर आ जावें। क्योंकि कार्तिक वदि प्रतिपदा ता० ३० अक्टूबर[4] को हम यहां से चल कर डुमरांव वा आरा अथवा पटना में पहुँचेंगे। इस में सन्देह नहीं।

सब से मेरा नमस्ते।

मिर्जापुर दयानन्द सरस्वती।

---

[२४][5] पत्रांश (१४६) [१९६]

[मुंशी समर्थदान.....................]

कर्नल अलकाट साहब को मेरे शरीर का हाल विदित नहीं है कि दस मास तक तो दस्तों का रोग रहा। पश्चात् एक बड़ा ज्वर आने लगा सो तीन बारी आकर छूट गया है अब दोनों रोग

---

१. आश्विन (द्वितीय) कृष्ण १४, मंगलवार सं० १९३६। यु० मी०।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४९६, ४९७ पर उद्धृत। परन्तु हमने यह पत्र दानापुर समाज में सुरक्षित मूलपत्र से ही छापा है।

३. 'व्याख्यान न होगा तो तुम लोगों से बातचीत तो अवश्य होगी।' जीवनचरित में ऐसा लेख अधिक है। सम्भवतः पं० लेखरामजी ने यह पत्र वैदिक यन्त्रालय के संग्रह के पत्र से प्रतिलिपि किया हो। और उस पत्र से प्रतिलिपि होकर दानापुर को जाने वाले पत्र में परिवर्तन कर दिया होगा।

४. २३ और २९ अक्टूबर १८७९ के मध्य की किसी तिथि को यह पत्र लिखा गया होगा। सम्भवतः २५ अक्तूबर को लिखा गया।

५. मैनेजर वेदभाष्य के नाम। पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७, ३८ पर उद्धृत। अगला पत्र भी इसी पत्र का एक अंश प्रतीत होता है।

नहीं हैं, परन्तु विचार करो कि इतने रोग के पश्चात् निर्बलता और सुस्ती कितनी हो सकती है। इस में भी हमको कितने काम आवश्यक हैं जिन से दम भर अवकाश नहीं मिल सकता। जो एक जन्मचरित्र के लिखने लिखवाने का काम ही होता, तो एक बार लिख लिखवाके भेज दिया होता।

दयानन्द सरस्वती

६ नवम्बर ७९[1]

दानापुर

---

[२५] पत्रांश (१४७) [१९७]

[मैनेजर प्रेस के नाम][2]

आजकल दानापुर में प्रतिदिन व्याख्यान होते हैं, आज पांचवां दिन है। यहां का समाज और समाज के पुरुष बहुत उत्तम हैं। समाज का प्रबन्ध भी बहुत उत्तम किया है। यहां से अमावस के पश्चात् हरिहरक्षेत्र के मेले में जाना होगा। वहां से कार्तिकी पूर्णमासी के अनन्तर काशी में जाकर छापेखाने का प्रबन्ध किया जावेगा और वहां आधे चैत या अन्त चैत तक ठहरेंगे।

दयानन्द सरस्वती

६ नवम्बर १८७९[1] दानापुर

---

[२६][3] पत्रांश (१४८) [१९८]

....

शोक की बात है कि आर्यपुरुष ठाकुर मुन्नासिह का शरीर छूट गया।

दयानन्द सरस्वती

२० नवम्बर १८७९[4] काशी

---

१. कार्तिक कृष्ण ७ बृहस्पतिवार सं० १९३६। यु० मी०।

२. पं लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ४६६ पर उद्धृत।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ७६८ पर उद्धृत। [सम्भवतः मुंशी समर्थदान के नाम लिखा गया]।

४. भ्रमोच्छेदन के प्रारम्भ में तथा आर्यदर्पण फरवरी १८८० पृ० ४२ पर स्वामीजी महाराज के काशी पहुँचने की तिथि कार्तिक सुदि १४ सं० १९३६ गुरुवार (२७ नवम्बर सन् १८७९) लिखी, वह अशुद्ध प्रतीत होती है, क्योंकि २० नवम्बर से २४ नवम्बर तक के काशी से लिखे गये तीन पत्र पूर्ण संख्या १९८, १९९, २०० पर छाप रहे हैं। पं० घासीरामजी संपा० जी० च० पृ० ५९२ में दानापुर से चलने की ता० १६ नवम्बर लिखी है। पं० लेखराम जी कृत जीवन चरित पृ० ५०५ में लिखा है—"कार्तिक सुदि ७ गुरुवार मुताबिक १६ नवम्बर को

[१८] पत्र (१४९) [१९९]

बाबू माधोलाल जी आनन्दित रहो ![1]

हम वहाँ से चल के आनन्दपूर्वक काशी में पहुँच कर महाराजे विज[य]नगर के आनन्द बाग में ठहरे हैं यह बाग बहुत अच्छा है। हवा और जल यहां का बहुत अच्छा है मकान भी इस बाग में बहुत और उत्तम हैं यह बात प्रसिद्ध है। इस में ठहरने के लिये लाजरस साहेब ने प्रबन्ध कर रक्खा था चिट्ठी पहुँचने पर। जैसा यह बाग है वैसा काशी में दूसरा नहीं है इसके आगे जो २ अवश्य लिखने योग्य समाचार हों वे २ लिखे जायेंगे आप लोग भी लिखते रहना। सब से हमारा नमस्ते कहना॥

सं० १९३६ मि० का० सुद० ८ शुक्रवार।[2]

दयानन्द सरस्वती
काशी।

---

[२९] पत्र (१५०) [२००]

Benares
The 24th Nov. 1879[3]

Babu Ramadhar, Bajpaye,[4]

May you prosper! I returned from Danapore and have lodged now-a-days in the garden of His late Highness the Maharajah of Vizianagram, at Benares. I will write for the books about which you told me, to Bombay and Moradabad. You will try your best to treat in a friendly manner the son of Munshi Indra-Man, named Narayan Das, who wishes to go to Lucknow from Morada-bad in the search of a copywriter on a printed lithographic paper, you will procure for him such a writer if

---

दानापुर से चलकर उसी रोज बनारस में सुशोभित हुए।" परन्तु पं० लेखरामजी कृत जीवन चरित्र में ही पृष्ठ १५१ पर लिखा है—'मिर्जापुर और दानापुर का एक दौरा करके कार्तिक सुदि १४ गुरुवार मुताबिक २७ नवम्बर सन् १८७९ ईस्वी को काशी नगर में तशरीफ······।'

यहां यह भी ध्यान रहे कि १९ नवम्बर को कार्तिक सुदि ७मी और गुरुवार नहीं था, अपितु कार्तिक सुदि ६ बुधवार था। अतः यहां अंग्रेजी तारीख लिखने में अवश्य ही कुछ भूल हुई है। हमारा विचार है कि श्री० स्वामीजी २० नवम्बर (कार्तिक सुदि ७) गुरुवार के दिन ही काशी पहुँचे थे। यु० मी०।

१. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर में सुरक्षित है। इसकी प्रतिकृति श्रीमद्दयानन्द चित्रावली (संस्क० ३) में छपी है।

२. २१ नवम्बर शुक्रवार सन् १८७९। यु० मी०।

३. कार्तिक सुदी ११, सोमवार सं० १९३६।

४. मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

you can find one,—for such a writer is urgently required.

दयानन्द सरस्वती
काशी ॥

[भाषानुवाद]

बनारस
२४ नवं० १८७९[1]

बाबू रामाधार बाजपेई आनन्द रहो !

मैं दानापुर से लौटा हूं और बनारस में स्वर्गवासी श्री महाराजे विजयनगर के बाग में आजकल ठहरा हूं। जिन पुस्तकों के लिये आप ने मुझे कहा था, उन के लिये मैं मुम्बई और मुरादाबाद को लिखूँगा। मुन्शी इद्रमन के पुत्र नारायणदास को मित्रवत् रखने में आप अपना पूर्ण यत्न करेंगे वह मुरादाबाद से छपे हुए लिथो कागज पर कापी लिखने वाले की खोज में लखनऊ जाना चाहता है। यदि ढूंढ सकें तो उस के लिये ऐसा लेखक निकालें, क्योंकि ऐसे लेखक की अत्यन्तावश्यकता है।

(दयानन्द सरस्वती)
काशी ॥

———

[२४]　　　विज्ञापनपत्र　　　[२०१]

॥ ओ३म् । नमः सर्वशक्तिमते परमेश्वराय ॥

॥ प्रथमं विज्ञापनपत्रमिदम् ॥

सर्वान् सज्जनान् प्रतीदं विज्ञाप्यते सम्प्रति दयानन्दसरस्वतीस्वामिनः श्रीयुतमहाराजविजयनगराधिपतेरानन्दारामे निवसन्ति। यैर्वेदानां मतमङ्गीकृत्य तद्विरुद्धं किंचिदपि नैव मन्यते। किन्तु यानीश्वरगुणकर्मस्वभाववेदोक्तेभ्यः सृष्टिक्रमात्प्रत्यक्षादिप्रमाणेभ्यः आप्ताचारसिद्धान्तात्स्वात्मपवित्रता सुविज्ञानतश्च विरुद्धत्वात्पाषाणादिमूर्त्तिपूजा, जलस्थलादौ पापनिवारणशक्तिः, व्यासमुन्यादिभिरप्रणीतास्तन्नामव्याजेन प्रसिद्धीकृता नवीना व्यर्थपुराणादिसंज्ञा ब्रह्मवैवर्तादयो ग्रन्थाः, परमेश्वरस्यावताराः, सपुत्रो भूत्वा स्वविश्वासिनां पापानि क्षमित्वा मुक्तिं प्रददाति, उपदेशाय स्वमित्रं भूमौ प्रेषितवान्, पर्वतोत्थापन-मृतकसंजीवनचन्द्रखण्डनाकारणकार्य्योत्पत्तिस्वीकरणानीश्वरवाद-जीवब्रह्मणोः स्वरूपैक्यादीनि, कण्ठीतिलकरुद्राक्षादिधारणम्, शैवशाक्तवैष्णवगाणपतादि नवीनाः सम्प्रदायादयश्च निराकर्त्तुमर्हाणि सन्ति, तानि खण्ड्यन्ते॥ अतोऽत्र यस्य कस्यचिद्वेदादिसत्यशास्त्रार्थविज्ञाने प्रवीणस्य सभ्यस्य शिष्टस्याप्तस्य विदुषो विप्रतिपत्तिः स्वमतस्थापने परमतखण्डने च सामर्थ्यं वर्तते। स स्वामिभिः सह शास्त्रार्थं कृत्वैतेषां मण्डनाय प्रवर्तेत नेतरः खलु। इह शास्त्रार्थे वेदा मध्यस्था भविष्यन्ति। एतेषामर्थनिश्चयाय ब्रह्मादिजैमिनिपर्य्यन्तैर्मुनिभिर्निर्मिता ऐतरेयब्राह्मणादि पूर्वमीमांसापर्यन्ता आर्षा वेदानुकूला वादिप्रतिवाद्युभयसम्मता ग्रन्था मन्तव्याश्च। येऽत्र सभासदो भवेयुस्तेऽपि पक्षपातविरहा धर्मार्थकाममोक्षपदार्थस्वरूपसाधनाभिज्ञाः सत्यप्रिया असत्यद्वेषिणः स्युर्नोतो विपरीता। यत् किंचित्पक्षिप्रतिपक्षिभ्यामुच्येत तत्सर्वं त्रिभिरभिज्ञैर्लेखकैर्लिपीकृतं भवेत्। स्वस्वलेखान्ते वादिप्रतिवादिनौ

[1] कार्तिक सुदी ११ सोम, सं० १९३६। यु० मी०।

सम्मत्यर्थं स्वहस्ताक्षरैः स्वस्वनाम लिखेताम्, ये च मुख्याः सभासदः। एतत्कृत्वैकदिनलेखसिद्धं पुस्तकमेकं वादिने, द्वितीयं प्रतिवादिने देयं, तृतीयं च सर्वसम्मत्या कस्यचित्प्रतिष्ठितस्य राजपुरुषस्य सभायां स्थापितं भवेद्यतः कश्चिदप्यन्यथा कर्तुं न शक्नुयात्। यद्येवं सति काशीनिवासिनो विद्वांसः सत्यानृतयोर्निश्चयं न कुर्य्युस्तर्ह्येषामतीव लज्जास्पदमस्तीति वेदितव्यम्। विदुषामयमेव स्वभावो यत्सत्यासत्ये निश्चित्य सत्यस्य ग्रहणमितरस्य परित्यागं कृत्वा कारयित्वा स्वेनान्यैः सर्वैर्मनुष्यैश्चानन्दितव्यमिति॥

॥ प्रथम विज्ञापन ॥

॥ भाषार्थ ॥

सब सज्जन लोगों को विदित किया जाता है कि इस समय पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज काशी में आकर जो श्रीयुत् महाराजे विजयनगर के अधिपति का आनन्दबाग महमूदगञ्ज के समीप है उसमें निवास करते हैं। वे वेदमत का ग्रहण करके उससे विरुद्ध कुछ भी नहीं मानते, किन्तु जो २ ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव और वेदोक्ति १, सृष्टि क्रम २, प्रत्यक्ष आदि प्रमाण ३, आप्तों का आचार और सिद्धान्त ४, तथा अपने आत्मा की पवित्रता और उत्तम विज्ञान से विरुद्ध होने के कारण जो पाषाणादि मूर्ति पूजा, जल और स्थल विशेष में पाप निवारण करने की शक्ति, व्यास मुनि आदि के नाम पर छल से प्रसिद्ध किये नवीन व्यर्थ पुराण नामक आदि ब्रह्मवैवर्त आदि ग्रन्थ, परमेश्वर के अवतार, ईश्वर का पुत्र होके अपने विश्वासियों के पाप क्षमा करके मुक्ति देने हारे का मानना, उपदेश के लिये अपने मित्र पैगम्बर को पृथ्वी पर भेजना, पर्वतों का उठाना, मुरदों का जिलाना, चन्द्रमा का खण्ड करना, कारण के विना कार्य की उत्पत्ति मानना, ईश्वर को नहीं मानना, स्वयं ब्रह्म बनना, अर्थात् ब्रह्म से अतिरिक्त वस्तु कुछ भी न मानना, जीव ब्रह्म को एक ही समझना, कण्ठी तिलक और रुद्राक्षादि धारण करना, और शैव, शाक्त, वैष्णव, गाणपतादि सम्प्रदाय आदि हैं, इन सब का खण्डन करते हैं।

इस से इस विषय में जिस किसी वेद आदि शास्त्रों के अर्थ जानने में कुशल, सभ्य, शिष्ट, आप्त विद्वान् को विरुद्ध जान पड़े, अपने मत का स्थापन और दूसरे के मत का खण्डन करने में समर्थ हो, वह स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ कर के पूर्वोक्त व्यवहारों का स्थापन करो। इस से विरुद्ध मनुष्य कभी नहीं कर सकता।

इस शास्त्रार्थ में वेद मध्यस्थ रहेंगे। वेदार्थ निश्चय के लिये जो ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्त के बनाए ऐतरेय ब्राह्मण से लेके पूर्वमीमांसा पर्यन्त वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थ हैं, वे वादी और प्रतिवादी उभय पक्ष वालों को माननीय होने के कारण माने जावेंगे। और जो इस सभा में सभासद् हों, वे भी पक्षपात रहित धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के स्वरूप तथा साधनों को ठीक २ जानने सत्य के साथ प्रीति और असत्य के साथ द्वेष रखने वाले हों, इन से विपरीत नहीं। दोनों पक्ष वाले जो कुछ कहें, उसको शीघ्र लिखने वाले तीन लेखक लिखते जावें। वादी और प्रतिवादी अपने अपने लेख के अन्त में अपने २ लेख पर स्वहस्ताक्षर से अपना अपना नाम लिखें। तथा जो मुख्य सभासद् हों, वे भी दोनों के लेख पर हस्ताक्षर करें।

उन तीन पुस्तकों में से एक वादी दूसरा प्रतिवादी को दे दिया जाए और तीसरा सब सभा की सम्मति से किसी प्रतिष्ठित राजपुरुष की सभा में रखा जावे कि जिस से कोई अन्यथा न कर सके।

जो इस प्रकार होने पर भी काशी के विद्वान् लोग सत्य और असत्य का निर्णय करके औरों को न करावेंगे, तो उनके लिये अत्यन्त लज्जा की बात है, क्योंकि विद्वानों का यह ही स्वभाव होता है जो सत्य और असत्य को ठीक २ जान के सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग कर दूसरों को कराके आप आनन्द में रहना औरों को आनन्द में रखना।[1]

———

[२८] ॥ दूसरा विज्ञापन ॥[2] [२०२]

स्वामी जी को छः पुरुषों की अपेक्षा है ॥ एक—वेद वेदाङ्ग निघण्टु निरुक्त व्याकरण मीमांसादि शास्त्रों में निपुण शुद्ध लिखने पूर्वापर शब्द अर्थ और सम्बन्ध के विचार से शुद्धाशुद्ध को जान के शुद्ध करने और भाषा के व्याकरण की रीति से संस्कृत की भाषा की सुन्दर रचना करने वाला विद्वान् ॥

दूसरा--व्याकरण में निपुण लिखने में शीघ्रकारी पूर्वोक्त रीति से संस्कृत की ठीक २ भाषा की रचना करने हारा ॥

तीसरा--शुद्ध लेखक शीघ्र लिखने वाला ॥

चौथा--ब्राह्मण रसोई बनाने में अति चतुर ॥

पांचवां--चतुर सेवक कहार काछी कुर्मी वा किशान ॥

और छटा--नागरी इङ्गलिश और उर्दू भाषाओं का लिखने पढ़ने वाला हो। इन छः पुरुषों की जैसी २ योग्यता अपने २ काम में होगी उस को मासिक भी वैसा ही दिया और उस से यथायोग्य काम लिया जायगा। जिस किसी को ऐसा करना अपेक्षित हो वह उक्त स्थान पर जाकर स्वामी जी से मिल के प्रबन्ध कर लेवे ॥

ऋतुकालाङ्कचन्द्रेऽब्दे मार्गशीर्षेऽसिते दले।
चन्द्रवारे तृतीयायां पत्रमेतदलेखिषम् ॥ १ ॥

संवत् १९३६ मिती मार्गशीर्ष वदी ३ सोमवार को यह पत्र मैंने लिखा है ॥[3]

हस्ताक्षर
पण्डित भीमसेन शर्म्मा[4]

Printed At The Medical Hall Press, Benares :—3-12-1879–200.[5]

---

१. आर्यदर्पण दिसम्बर १८७९, पृ० ३४७, ३४८ पर भी इतना आर्यभाषा का भाग फारसी अक्षरों में छपा है। [यह भाग आर्यदर्पण फरवरी १८८० पृ० ४२ पर भी छपा है। यु० मी०।]

२. यह विज्ञापन पूर्व विज्ञापन के साथ ही छपा है।

३. प्रथम दिसम्बर १८७९ को लिखा गया और ३ दि० १८७९ को छपा कर बांटा गया।

४. हमने सारा विज्ञापन मूल-विज्ञापन से छापा है। मूल विज्ञापन हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

५. ये दोनों विज्ञापन पं० लेखराम जी कृत जीवनचरित्र में पृ० १५१, १५२ पर छपे हैं। उन में अन्त की प्रेस लाइन और पं० भीमसेन के हस्ताक्षर नहीं हैं। साथ में एक विज्ञापन और छपा है। उसे हम आगे दे रहे हैं। देखो पूर्ण संख्या २०३ तथा उस की टिप्पणी। यु० मी०।

[२६] **तृतीय विज्ञापन**[1] [२०३]

सन्ध्या के चार बजे से लेके रात्रि को दश बजे पर्यन्त स्वामी जी को सब से मिलने और बातचीत करने का अवकाश प्रतिदिन रहता है ।

हस्ताक्षर पण्डित भीमसेन शर्मा
दशाश्वमेध आर्य यन्त्र में मुद्रित हुआ ।

———

[१९] **पत्र (१९१)** [२०४]

बाबू माधोलालजी आनन्दित रहो ![2]

अब तक छापेखाने की कुछ सामग्री आई नहीं और न कुछ पण्डित सुन्दरलाल का जवाब आया। अब आप लोग इसका बहुत शीघ्र भाव ताव टैप् का नमुना और रायलप्रेस का मूल्य लिखकर हमारे पास भेजिये। इसमें जितना बने उतनी शीघ्रता कीजिये। हम को सब छापेखानों से तिगुना चौगुना टैप् लेना होगा। उसके केस, लकड़ी, सबका भाव लिखना।

मुंशी बखतावरसिंह मन्त्री आर्यसमाज साहजहांपुर ने ३०) रुपये मावारी पर छापेखाने का सब प्रबन्ध करने के लिये सरकारी नौकरी छोड़के आने का स्वीकार किया है। ये बहुत अच्छे आदमी हैं तीनों भाषा पढ़े हुये सब काम अच्छा चलेगा छापेखाने का काम सब जानते हैं। और विज्ञापन पत्र आज छप चुके हैं सो भी तुम्हारे पास भेजते हैं।[3]

[दयानन्द सरस्वती]

———

[२०] **पत्रांश (१९२)** [२०५]

[बाबू माधोलाल जी][4]

ता० १५ दिसम्बर ७९[5] को साहब लोग अंग्रेज निम्नलिखित बनारस आकर मेरे पास राजा

---

१. उपर्युक्त दो विज्ञापनों के साथ यह विज्ञापन पं० लेखराम जी कृत जीवनचरित पृष्ठ ९५२ पर मिलता है। पं० लेखराम जी द्वारा संगृहीत तीनों विज्ञापनों के अन्त में 'दशाश्वमेध आर्य यन्त्र में मुद्रित हुआ' पाठ है और पूर्व मुद्रित दोनों विज्ञापनों के अन्त में 'मेडिकल हाल यन्त्रालय' में छपने का उल्लेख और हस्ताक्षर पण्डित भीमसेन' इतना पाठ नहीं है। प्रतीत होता है कि मेडिकल हाल वाला प्रथम संस्करण है और आर्य यन्त्र में छपा द्वितीय संस्करण। द्वितीय संस्करण के समय यह तृतीय विज्ञापन बढ़ाया गया, ऐसा प्रतीत होता है। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

३. इस पर कोई तिथि नहीं है। परन्तु इस पत्र के अन्त में लिखित 'विज्ञापन पत्र' आज छप चुके हैं, वाक्य में पूर्व (पूर्ण संख्या २०१, २०२ पर) मुद्रित विज्ञापनों की ओर संकेत है। अतः यह पत्र ३ दिसम्बर सन् १८७९ को लिखा गया होगा। यु० मी०।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३८ पर उद्धृत। यह पत्र सम्भवतः उर्दू में था। जीवनचरित में सब उर्दू शब्द ही हैं।

५. मार्गशीर्ष शुक्ल २ सोमवार, सं० १९३६। यु० मी०।

विजयनगर के बाग में जो निकट महमूदगंज है, ठहरेंगे। इस लिये आप को लिखा जाता है कि यदि आप को इन अंग्रेज़ों से मुलाकात करनी हो, तो सोलहवीं तक मेरे पास उक्त बाग में चले आइये। और कृपा करके छपरा में महावीरप्रसाद आदि को भी इस विषय में विदित कीजिये।

१२ दिसम्बर ७९[1]

नाम उन साहब लोग अंग्रेज़ों के जो बनारस में १५ को आवेंगे। करनेल एच० एस० अल्काट साहब बहादुर अमरीकन। मेडम एच० पी० ब्लेवेटस्की साहिबा। इ० एफ० सिनेट साहब प्रबन्धक पायोनियर समाचार इलाहाबाद। अतिरिक्त इन अंग्रेज़ों के उनके साथी और भी दो तीन अंग्रेज़ आवेंगे।

दयानन्द सरस्वती

---

[२७]　　　　**पत्रांश[2] (१५३)**　　　　[२०६]

[प्रबन्धकर्त्ता वेदभाष्य][3]

करनल अल्काट आदि सब अंग्रेज़ी १५ दिसम्बर ७९ को मेरे पास आ गये। और मेरा संवाद उन से प्रारम्भ हो गया।

१७ दिसम्बर ७९[4]　　　　दयानन्द सरस्वती

बनारस

---

[१]　　　　**पत्र (१५४)**　　　　[२०७]

[काशी के मजिस्ट्रेट[5] के नाम]

श्रीमन् !

क्या आप मुझे बताने की कृपा करेंगे कि आप की कल की आज्ञा कि में सम्प्रति व्याख्यान न दूँ किन आधारों पर निहित थी। आप की सूचनार्थ उस आज्ञा की प्रतिलिपि इस पत्र के साथ भेजी जाती है। मैं आप का उपकृत हूंगा यदि आप मुझे यह भी बतायेंगे कि यह प्रतिबन्ध कितने समय तक रहेगा। आप की सुविधानुसार आपके पत्र का प्रतीक्षक—

आप का प्रतिष्ठाभावसम्पन्न
दयानन्द सरस्वती स्वामी[6]

---

१. मार्गशीर्ष कृष्ण १४ शुक्रवार सं० १९३६। यु० मी०।

२. पं० लेखरामकृत जीवन चरित्र पृष्ठ ८३८ पर उद्धृत।

३. मुन्शी समर्थदान।

४. मार्गशीर्ष शुक्ल ४, बुधवार, सं० १९३६।

५. इस मजिस्ट्रेट का नाम "मिस्टर बाल" था। देखो पं० घासीराम जीवन चरित्र पृष्ठ ५९५।

६. यह पत्र २१ दिसम्बर १८७९ (मार्गशीर्ष शु० ८ रवि, सं० १९३६) को लिखा गया था। पं० घासीरामजी सम्पादित जीवन चरित्र पृष्ठ ५९५ पर उद्धृत। यु० मी०।

[१] कार्ड (१९९) [२०८]

जैसराज गोटीराम [जी आनन्दित रहो][1] ।

मुनशी बखताबर सिंह………वार को[2] कलकत्तं रवाने हुए । जब [वह आप] के पास पहुँचें तो मेरा यह पत्र उनके [हवा]ले कीजिये ।

मुन्शी साहब—

एक रोयल प्रेस तो आप लेंहिगे परन्तु एक छोटा प्रेस भी जिस से प्रूफ उठाने का काम लिया जाता है अवश्य लेना चाहिये । और यह सब सामग्री अमृत [बजार] पत्रिका के सम्पादक की सम्मति से लीजियेगा क्योंकि वे इस विषय के जानकार हैं । चीज अच्छी और कीमत वाजिब दिलावेंगे । यहां एक बंगाली का प्रेस, टाइप के अक्षर, केस आदि सब चीज बिकाऊ हैं । हम दो एक दिन में उनको देख भाल कर यदि वह अच्छे और काम के लायक होंगे तो ख[रीद लेंगे]

२३ दिस० ७९ ई० ![3] [दयानन्द सरस्वती

[कार्ड पर उर्दु तथा देवनागरी में निम्नलिखित पता है]

कलकत्ता अफीम का चौराहा जुगल किशो[र]

विलासराय की कोठी में जैसराज गोटी राम के पास

———

[१] पत्रसूचना (१९६)[4] [२०९]

वल्लभदास लाहौर ।

मार्ग सु० १२ सं० १९३६ बृहस्पतिवार

२५ दिसम्बर १८७९

———

॥ ओ३म् । नमः सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय ॥[5]

[२७] ॥ विज्ञापनपत्रमिदम् ॥ [२१०]

समस्तान्धार्मिकान्प्रतीदम्प्रत्याय्यते । यच्छ्रीताराचरणप्रकाशितं वाराणसीस्थविदुषां स्वामिभिः सह शास्त्रार्थकरणाभिप्रायसूचकं सभ्यविद्वल्लेखविरुद्धं पत्रमस्ति । तद्दृष्ट्वाऽत्यन्तमाश्चर्यं प्रतिभाति नः । यदत्रत्यो दयालुरुपानहान्निर्माताऽन्त्यजोऽपि विद्वदुपमां बिभर्ति तर्हीहत्याः पण्डिताः खलु कस्योपमां दधतीति । नहि योग्ययोर्विदुषोः समागमेन विना कदापि सत्यासत्यव्यवहाराणां सिद्धान्ता भवितु मर्हन्ति ।

१. यह कार्ड म० मामराज जी ने ता० २३ जुलाई सन् १९४५ को स्वर्गीय लाला रामशरण दास जी रईस मेरठ शहर वालों के पुराने पत्रों में से उनके पौत्र लाला परमात्माशरण जी के साथ खोज कर प्राप्त किया । मूलकार्ड हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

२. बिन्दु वाला स्थान नष्ट हो गया है । कोष्ठों में हमने पूर्ति की है, बनारस से लिखा गया ।

३. मार्गशीर्ष सुदी १० संवत् १९३६ मंगलवार ।

४. इस पत्र का संकेत लाहौर समाज के कोषाध्यक्ष वल्लभदास जी के पत्र में है ।

५. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० १५७, १५८ से उद्धृत ।

तस्माद्भाविनि समागमे विशुद्धानन्दसरस्वतीस्वामिनो बालशास्त्रिणो वा संवादङ्कर्त्तुं प्रवर्तेरन्नेतरा: किल यद्वैतेऽत्र प्रवर्त्स्यन्ति तदा स्वामिनोऽप्युद्यताः सन्त्येवेत्यलमतिविस्तरेण ।

विद्वांसः सुविचारशीलसहिता धर्मोपकारे रता
दुष्टं कर्म विहाय सत्यसरणा नौकेव पाराय ते ।
क्रूराः कामसिताः किमत्र समलाः स्वार्थाः अहो भावना
विघ्नाः[1] कस्य नरस्य नैव विततान् कुर्य्युः सदा दूषिताः ॥१॥
ऋतुरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे मार्गशीर्षे सिते दले ।
चतुर्दश्यां शनीवारे पत्रमेतदलेखिषम् ॥

॥ भाषार्थ ॥

सब काशीस्थ धार्मिक विद्वान् महाशयों पर प्रगट हो कि श्री ताराचरण शर्म्मा ने एक विज्ञापन पत्र छपवाया जिसका अभिप्राय यह है कि काशी निवासी विद्वज्जन स्वामी दयानन्द सरस्वती जी से शास्त्रार्थ करने की इच्छा करते हैं। यह पत्र विश्वास करने योग्य तो है परन्तु ऐसा लेख सभ्य विद्वानों का नहीं होता। इसके देखने से हम को बड़ा आश्चर्य होता है कि जब जूते गांठने और बनाने हारा काशी का चमार विद्वानों की उपमा को धारण करता है तो पण्डित लोग किस की उपमा को धारण करेंगे। भला बक और हंस की समता कहीं सम्भव है। यदि यह बात एक मूर्ख से भी पूछी जावे तो वह भी दृढ़ता पूर्वक कहेगा कि सत्य का सिद्धान्त बिना पण्डितों के समागम के कदापि नहीं हो सकता। अब इस काशी में सर्वोत्तम पण्डित दो हैं। एक स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती दूसरे बालशास्त्री। जो इन दोनों महाशयों में से कोई एक भी यदि शास्त्रार्थ करना चाहे तो स्वामी जी भी सर्वथा उपस्थित हैं। सिवाय इन दोनों के दूसरों को विज्ञापनपत्र देना और लिखना सर्वथा निरर्थक है।

श्लोक की भाषा।

सर्वशक्तिमान जगदीश्वर की सृष्टि में दो प्रकार के मनुष्य हैं। एक उत्तम दूसरे निकृष्ट। उत्तम वे हैं जो कि विचारयुक्त सुशील धर्म और उपकार करने में सन्तुष्ट दुष्ट कर्मों से दूर सत्य के प्रेमी नौका के समान अविद्यादि दोषों और कष्टों से लोगों को पार उतारने वाले विद्वान् हैं। वे अपनी शान्ति परोपकार और गंभीरतादि को कभी नहीं छोड़ते। और जो क्रूर कामी अविद्यादि मलयुक्त स्वार्थी दूषित मनुष्य हैं वे श्रेष्ठ मनुष्यों को बड़े २ विघ्न सदा क्या नहीं करते हैं ? ये बड़ा आश्चर्य है कि आप्त लोग असभ्य लोगों पर कृपा करके सदा उनका उपकार ही किया करते हैं। परन्तु वे अपने दोषों से उपकार को अनुपकार ही माना करते हैं। इसलिए हम प्रार्थना करते हैं कि सर्वशक्तिमान परमात्मा अपनी कृपा से उन मनुष्यों को सब बुरे कामों से हटाकर सत्यमार्ग में सदा प्रवृत्त करें।

संवत् १९३६ मि० मार्ग शुक्ल १४ शनिवार।[2]

———

१. यहां 'विघ्नान्' पाठ चाहिये। यु० मी०।

२. २७ दिसम्बर सन् १८७९।

[१] उर्दू पत्र (१५७) [२११]

जनाब मुंशी इन्द्रमन जीव साहब आनन्दित रहिये ![1]

नमस्ते ! ५९९ पंचसौ निनानवें जिल्द सन्ध्याभाष्य मुरसले आपकी पहुंची । हस्बुल ईमा आपके मैं यहां चन्द्रिका तलाश कर रहा हूँ। अनकरीब बशरते दस्तयाबी अरसाल खिदमत होगी। कैफीयत यहां की यह है कि जमीअ असबाब छापेखाने का मय कागज व रौशनाई व प्रूफ सीट वगैरा के कलकत्ता से यहां आ गया। व ५ पाँच मन टाइप तो राजा साहब ने मुरादाबाद से मेरे पास भेज दिये हैं। व करीब ८ आठ मन के कलकत्ते से खरीद किये गये हैं गरज कि अन्दर एक महीने के कार छापेखाने का इजरा हो जावेगा। मेरा कस्द है कि पेशतर शिक्षा पुस्तक जो छोटी व हाल में तसनीफ हुई है छपवाई जावे। व बाद उसके दूसरी किताबें जो काबिल नविश्त खवांद हैं छपवाई जावें। व जब कार छापेखाने का बखूबी इजरा हो जावेगा तब बम्बई से बुला वेदभाष्य का कारखाना उठवा कर बनारस में जारी किया जावेगा।

अब यहां रुपये के लिए कमाल दिक्कत है। व यह कारखाना सिर्फ आप लोगों की उम्मीद पर चलाया जाता है आगाज़करदय सास मासाह।

इसलिये आप बराये मेहरबानी ला० श्यामसुन्दर से कह कर अरदूनी महकमा जहां २ जिस कदर रुपया जमा हो यकजा कराकर मेरे पास भेज दीजिये। ताकि इजराय कार में तवक्कुफ व तसाहुल न हों। अब बनिसबत निकालने अखबार के क्या कस्द हैं। मेरी दानिस्त में तो अगर अखबार अंग्रेज़ी व हिन्दी व उर्दू तीनों एक ही परचे में हों तो निहायत मुनासिब होगा। या जैसी राय शरीफ हो वही अनसब है। बराये मेहरबानी दर्बारए निकालने अखबार के जो तजवीज़ आप की मुसम्मि हो उसको तहरीर फरमाइये। बाकी कैफियत यहां की बदस्तूर है। हनूज़ यहां के पण्डित शास्त्रार्थ करने के लिये मुसतइद नहीं हुए। जैसा हाल होगा उस से आप को मतले करूंगा। फक्त १० जनवरी सन् १८८० ई०।[2]

दस्तखत

[द० दयानन्द सरस्वती]

---

१. यह उर्दू पत्र काशी से मुरादाबाद भेजा गया था। मूल पत्र मुंशी जी के पोते ला० भगवतसहाय के पास लिफाफे के अन्दर मुरादाबाद में है। इसकी प्रतिलिपि ता० १० नवम्बर सन् १९२६ को म० मामराज जी ने उन के स्थान मुरादाबाद से प्राप्त की।

२. पौष कृष्ण १३ शनिवार सं० १९३६। यु० मी०।

[२८]　　　　**पत्रांश (१५८)**　　　　[२१२]

[मुंशी समर्थदान मुम्बई]
तुम सब काम उठाकर बनारस चले आओ।[1]
[लगभग ता० १७ जनवरी १८८० काशी][2]

———

[२]　　　　**पत्र सूचना (१५९)**　　　　[२१३]

[मैडम ब्लेवेटस्की के नाम]।[3]
लाहौर समाज से अंग्रेजी भाषान्तर मुम्बई समाज को गया और वहां से मैडम को।
जनवरी १८८० का आरम्भ[4]

———

[१]　　　　**पत्रांश (१६०)**　　　　[२१४]

[थियोसोफिस्ट के सम्पादक][5]

मजिस्ट्रेट मिस्ट बाल ने मेरे उस पत्र का जो मैंने उनकी आज्ञा के प्रतिवाद के रूप में भेजा था और जिस में कुछ बातें पूछी थीं नोटिस तक नहीं लिया।

———

[१]　　　　**पत्र सूचना (१६१)**　　　　[२१५]

[लेफ्टिनेण्ट गवर्नर]
काशी में मजिस्ट्रेट की आज्ञा से व्याख्यान बन्द करने के सम्बन्ध में।[6]

———

१. श्री पं० कालूराम जी रामगढ़ के नाम मुंशी समर्थदान जी ने ता० २० जनवरी १८८० को मुम्बई से एक पत्र लिखा था। उसमें अगली सूचना है—स्वामी जी का पत्र आज आया है उन्होंने लिखा है कि "तुम सब काम उठा कर बनारस चले आओ।" उक्त पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। यु० मी०।

२. पौष शुक्ल ६, शनिवार, सं० १९३६। यु० मी०।

३. इस पत्र का संकेत मुम्बई समाज के मन्त्री श्री सेवकलाल कृष्णदास के पत्र में है। देखो महात्मा मुंशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २६५।　　　　४. पौष सं० १९३६। यु० मी०।

५. थियोसोफिस्ट फरवरी सन् १८८० (माघ सं० १९३६) में उद्धृत। देखो पं० घासीरामजी सम्पादित जी० च० पृष्ठ ५९५। यु० मी०।

६. इसकी सूचना के लिए देखो पं० घासीराम जी द्वारा सम्पादित जीवनचरित्र पृष्ठ ५९४। यह पत्र सम्भवत: जनवरी १८८० के उत्तरार्ध (पौष शुक्ल पक्ष सं० १९३६) में भेजा गया होगा। बा० मूलराज के पूर्ण संख्या २२२ के पत्र में भी इसका संकेत है।

उपर्युक्त पत्र के उत्तर में यू० पी० सर्कार के जूनियर सेक्रेट्री "पी० समीटन" साहब ने सं० ४६१ ता० २४

[१] पत्र सूचना (१६२) [२१६]

[चीफ़ कमिश्नर]

काशी में मजिस्ट्रेट की आज्ञा से व्याख्यान बन्द करने के सम्बन्ध में।[१]

---

[१] उर्दू पत्र (१६३) [२१७]

चौधरी लक्ष्मणदास जी आनन्दित रहो।[२]

बाद नमस्ते आं के आपने जो पापोश पेशतर भेजा था वह भी बड़ा था। यह तो निहायत बड़ा व चौड़ा है। देखिये इसमें आप का आठ आने पारसल व चार आने रजिस्ट्री में फजूल सर्फ़ हुआ। अगर मालगाड़ी में आता तो शायद कम खर्च होता। पापोश तो हर जगह उमदा किसम के दस्तयाब हो सक्ते हैं। अब बदून हमारे मंगवाये कोई चीज भेजने की तक्लीफ़ न उठाइयेगा। फकत। बाकी हाल बनारस का बदस्तूर है। होर कोई पंडत शास्त्रार्थ के लिये मुस्तइद नहीं हुआ। जो कुछ आइन्दा हाल होगा लिखेंगे। फकत।

मुअर्खा २८ जनवरी सन १८८०।[३] [दयान——————

---

[१] पत्र सूचना (१६४) [२१८]

[शुकदेवप्रसाद नसीराबाद]।

फरवरी १८८० के आरम्भ में लिखा गया।[४]

---

[१] पत्र सूचना (१६५) [२१९]

बाबू श्रीप्रसाद जयपुर

अष्टाध्यायी [भाष्य] बहुत शीघ्र छपने वाला है।[५]

फरवरी १८८०

फरवरी सन १८८० (माघ शु० १३ सं० १९३६) में जो पत्र लिखा वह इस प्रकार था—

"दयानन्द सरस्वती स्वामी का निवेदन पत्र पढ़ा गया, जिस में उन्हों ने बनारस के मजिस्ट्रेट की आज्ञा की कि वह बनारस में धार्मिक विषयों पर व्याख्यान न दें शिकायत की है। आज्ञा हुई कि निवेदक को सूचना दी जावे कि लेफ्टिनेण्ट गवर्नर व चीफ कमिश्नर की सम्मति में उक्त अवसर पर मजिस्ट्रेट ने ठीक कार्य किया था और निवेदन अस्वीकार किया जाता है।" इनके सम्बन्ध में पृष्ठ १६७ टि० ४ देखो।

यह पत्र पं० घासीराम जी द्वारा सम्पादित जीवन चरित्र पृष्ठ ५९४ पर उद्धृत है। यु० मी०।

१. इसकी सूचना पं० घासीराम सम्पा० जी० च० पृष्ठ ५९४ पर है। यु० मी०

२. इस पत्र की उर्दू प्रतिलिपि म० मामराज जी ने मेरठ निवासी लाला रामशरण दास जी के पत्रों में से जुलाई सन् १९४५ में खोजी। प्रतिलिपि हमारे संग्रह में सुरक्षित है। इन के संबन्ध में पृष्ठ १६७ टि० ४ देखो।

३. माघ कृष्ण १ बुधवार सं० १९३६। यु० मी०।

४. शुकदेवप्रसाद के पत्र में निर्देश। माघ सं० १९३६।

५. बाबू श्री प्रसाद जयपुर के १७ मार्च १८८० (फा० शु० ८ सं० १९३६) से पूर्व के पत्र में है।

[२८]　　　　**विज्ञापन पत्र**[1]　　　　[२२०]

सब सज्जनों पर विदित हो कि अब वेदभाष्य तेरहवें १३ अंक पर्य्यन्त मुम्बई में छपेगा, इस के आगे १४ वें अंक से ले कर आगे आगे काशी में आर्यप्रकाश यंत्रालय में सदा छपा करेगा। मैंने इस यंत्रालय में अधिष्ठाता मुन्शी बखतावरसिंह मन्त्री आर्य्यसमाज शाहजहांपुर को नियत किया है, इस लिए सब ग्राहक और दूसरे सज्जनों से यह निवेदन है कि इस के आगे अब जो कुछ वेदभाष्यादि पुस्तकों के लेने के लिये पत्र और मूल्यादि भेजा चाहें सो उक्त यंत्रालय में उक्त स्थान पर उक्त मुन्शी जी के पास भेजा करें। और इस के आगे बाहर के लोग मुम्बई में मुन्शी समर्थदान के समीप वेदभाष्य संबंधी कार्य्य के लिए पत्र अथवा मूल्य आदि न भेजें क्योंकि १३ अंक छपे पीछे मुम्बई में इस का कुछ भी संबंध नहीं रहेगा, किन्तु मुम्बई के लोग दूसरा विज्ञापन दिया जाय तब तक सब व्यवहार मुम्बई में ही रक्खें।

(दयानन्द सरस्वती)

———

[१]　　　　पत्र (१६६)　　　　[२२१]

मुंशी मनोहरलालजी [आनन्दित] रहो![2]

आप ले जाइये सब, परन्तु जितना शोधा जाय उतना भेज दें। वा सब को शोध के शीघ्र

---

१. यजुर्वेद और ऋग्वेदभाष्य के बारहवें अङ्क पर छपा। यह अङ्क कार्तिक मास सं० १९३६ का है। [यह अङ्क देर से प्रकाशित हुआ था।]

[इस अङ्क से सम्बन्ध रखने वाला एक विज्ञापन यजुर्वेद और ऋग्वेद भाष्य के १३ वें अङ्क (मार्गशीर्ष १९३६) पर छपा था। आवश्यक होने से हम उसे नीचे दे रहे हैं।

"**विज्ञापन**

(१) सब सज्जनों को विदित हो कि मुम्बई में १३ अङ्क छपने का था सो छप चुका अब पीछे सब काम काशी अर्थात् बनारस में रहेगा। १२ अङ्क में काशी के यन्त्रालय का नाम "आर्य्यप्रकाश" छपा था उसके बदले "वैदिक" यन्त्रालय नाम रक्खा गया है इस लिये अब पीछे वेदभाष्य सम्बन्धी पत्र व्यवहार मुम्बई और बाहर के सब लोगों को मुन्शी बखतावरसिंहजी प्रबन्धकर्त्ता "वैदिक" यन्त्रालय काशी से करना चाहिये। मुम्बई में इसका कुच्छ काम नहीं है।"

स के साथ दो विज्ञापन और छपे हैं। अन्त में मुन्शी समर्थदान के हस्ताक्षर हैं अतः यह विज्ञापन भी उन्हीं की ओर से छपा होगा। यु० मी०।

२. श्री स्वामी जी ने कुरान का भाषानुवाद करवा रखा था [देखो पृ० १४१ की टिप्पणी २]। मुंशी मनोहर लाल रईस गुड़ हट्टा. पटना निवासी अरबी के अच्छे विद्वान् थे। वे ही उस अनुवाद को शोधने के लिए अपने घर ले गये। यह पत्र उसी अनुवाद की पुस्तक में पड़ा रहा। हमारे मित्र श्री साधु महेशप्रसाद मौलवी फाजिल प्रो० हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी, उस अनुवाद को अजमेर में देखने गये। वहीं से वे इस पत्र की प्रतिलिपि कर लाये। वह प्रतिलिपि उन्होंने अपने पत्र ७-८-१९४३ के साथ सोलन में हमारे पास भेजी।

भेजियेगा। क्योंकि इस का काम हमको बहुत पड़ता है। और जगन्नाथ के हाथ और भी सब पूरे पत्रे भेजते हैं। आप संभाल लीजिये।

मि० मा० ३० मंगल[१]

[दयानन्द सरस्वती]

१०४ से लेकर १२५ पृष्ठ सब हैं।

---

[८] पत्र (१६७) [२२२]

To

Lala Mulraj, M. A., Officiating Extra Assistant Commissioner, Multan.

Benares, dated 16th February 1880.[२]

NAMASTE,

Your letter, dated 11th February 1880, received. It has given me great pleasure to hear of your appointment as an Extra Assistant Commissioner. May God raise you still higher. As regards matters over here, the Lieutenant-Governor has as yet sent us no reply. The Magistrate Sahib verbally tells us to commence lecturing, but shrinks from giving the order in writing. We have come to know that the Lieutenant-Governor forwarded our application to the Magistrate for his remarks, and the Magistrate returned it (about one week ago) saying that he had stopped the lectures on account of the Muharram procession, fearing lest a quarrel may not arise. We expect to get a reply in a day or two. We have not thought it proper to commence lecturing without a written order of the Local Government. This will settle the matter once for all.

We will commence our series of lectures with great earnestness. The press has been started and named Vedic Pres. A notice to that effect is sent separately to-day. Namaste to all.

(Sd.) Dayananda Saraswati.

---

१. मार्गशीर्ष ३० संवत् १९३४ मंगल तदनुसार ४ दिसम्बर १८७७ को पड़ता है। और माघ ३० संवत् १९३६ मंगल, १० फरवरी १८८० को पड़ता है। यही सं० १९३६ की तिथि ठीक प्रतीत होती है।

२. माघ शु० ६ सोमवार सं० १९३६। यु० मी०।

[भाषानुवाद]

लाला मूलराज एम० ए० स्थानापन्न
ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर, मुलतान
बनारस, १६ फरवरी १८८०[1]

नमस्ते !

आप का पत्र, ११ फरवरी १८८० का मिला। आप की ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर पद पर नियुक्ति सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। परमात्मा आप को और भी उन्नत करे। यहां का हाल यह है कि लाट साहब ने अभी तक हमें कोई उत्तर नहीं दिया। मजिस्ट्रेट साहिब मौखिक रूप से हमें व्याख्यान आरम्भ करना कहते हैं पर लिखित आज्ञा के देने में संकोच करते हैं। हमें पता लगा है कि लाट साहब ने हमारा प्रार्थनापत्र मजिस्ट्रेट को उस की सम्मत्यर्थ भेजा था, और मजिस्ट्रेट ने (लगभग एक सप्ताह हुआ) उसे यह कह कर लौटा दिया था कि उस ने मुहर्रम मेले के कारण व्याख्यान बन्द किये थे, इस भय से कि कोई झगड़ा न उठ पड़े। हम एक या दो दिन में उत्तर की आशा रखते हैं। हम ने स्थानीय सरकार की लिखित आज्ञा विना व्याख्यान आरम्भ करना उचित नहीं समझा। इस से इस बात का सदा के लिये निर्णय हो जायगा।

हम अपने व्याख्यानों का क्रम बड़े उत्साह से आरम्भ करेंगे। यन्त्रालय का आरम्भ कर दिया गया है। इस का नाम वैदिक यन्त्रालय रखा गया है। इस विषय का एक विज्ञापन आज पृथक् भेजा जाता है। सब को नमस्ते।[2]

ह० दयानन्द सरस्वती

———

[१.] पत्रांश (१६८) [२२३]

[मिस्टर सिनेट सम्पादक पायोनियर प्रयाग]
आप काशी आने का कष्ट न उठावें, मैं स्वयं ही प्रयाग आकर आपसे मिलूंगा।[3]

———

१. माघ शु० ६ सोमवार सं० १९३६। यु० मी०।

२. मूलपत्र आर्यभाषा में था। उस का अंग्रेजी अनुवाद दि० गुरुकुल मैगजीन, गुजरांवाला, अक्तूबर-दिसम्बर, सन् १९०८, पृ० २४८ पर छपा है। ला० मूलराज जी ने कहा था कि गुजरांवाला गुरुकुल के संचालक ला० रलाराम जी की असावधानी से मूलपत्र चूहों से नष्ट किया गया।

३. देखो पं० घासी राम जी सम्पादित जी० च० पृष्ठ ५६७।

पायोनियर प्रयाग के सम्पादक मिस्टर सिनेट साहब ने श्री स्वामीजी महाराज को अंग्रेजी में १८ फरवरी सन् १८८० को जो पत्र भेजा था उसके उत्तर में स्वामीजी ने उपर्युक्त पत्रांश लिखा था। मिस्टर सिनेट का मूलपत्र जो श्री मामराज जी लाये थे, अनेक बहुमूल्य पत्रों के साथ लाहौर में देशविभाजन के समय नष्ट हो गया।

[२] पत्र-सूचना (१६९)[1] [२२४]

बाबू श्रीप्रसाद जयपुर।

व्याकरण सम्बन्धी पुस्तकों के सम्बन्ध में।

---

[२९] पत्र-सूचना (१७०) [२२५]

उर्दू पत्र

मुन्शी समर्थदान मुम्बई।[2]

पुस्तकों का महसूल आदि अधिक लगा।

लगभग २० फरवरी १८८०

बनारस

---

[१] लेख [२२६]

श्राद्ध (ओरिजन) अर्थात् असली है। श्राद्ध शब्द के अर्थ श्रद्धा के हैं। पुत्र को माता पिता आदि की सेवा श्रद्धा से उनके जीवन पर्यन्त करना अवश्य है। परन्तु जो लोग मरे हुए माता पिता का श्राद्ध करते हैं वह असली नहीं है क्योंकि जीते माता पिता आदि की सेवा श्रद्धा से करनी श्राद्ध कहाता है। मृतक के लिये पिण्ड देना व्यर्थ है क्योंकि मरे हुए को पिण्ड देने से कुछ लाभ नहीं होता।[3]

दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र-सूचना (१७१)[4] [२२७]

गोपालराव हरि फर्रुखाबाद।

लग भग १० मार्च १८८० [फाल्गुन कृ० ३० सं० १९३६]

---

[६] पत्रांश (१७२) [१२८]

Though I am very anxious that my autobiography which you are publishing in your journal, should be completed, I have not yet been able

---

१. इस का संकेत बा० श्रीप्रसाद जयपुर के पत्र में था। वह पत्र लाहौर में नष्ट हो गया। यु० मी०।

२. इस का संकेत मुंशी समर्थदान के पत्र में था। वह पत्र लाहौर में नष्ट हो गया। यु० मी०।

३. किसी पुरुष ने सम्पादक थ्यासोफिस्ट को ८ फरवरी १८८० को एक पत्र लिखा। उसमें उनसे श्राद्ध विषय में उनकी और विशेष कर स्वामी दयानन्द सरस्वती की सम्मति मांगी थी। वह मूल और स्वामी जी की ओर से उसका पूर्वोक्त उत्तर थ्यासोफिस्ट मार्च १, १८८० [फा० कृ० ५ सं० १९३६] में छपा है।

४. इस पत्र का संकेत गोपालराव के १८ मार्च ८०[फा० शु० ७ सं० १९३६] में है [यह पत्र लाहौर में नष्ट हो चुका है]।

to give the necessary tlme to it. But as soon as possible I will send the narrative to you......'

[भाषानुवाद]

यद्यपि मैं बहुत उत्सुक हूँ कि मेरी स्वयंलिखित आत्मकथा जिसे आप अपनी पत्रिका में प्रकाशित कर रहे हैं, पूर्ण हो जावे तथापि अभी उसे आवश्यक समय नहीं दे सका। किन्तु जितना शीघ्र हो सकेगा मैं आप को आत्मकथा भेज दूँगा......।[1]

---

[३] पत्र-सूचना (१७३)[2] [२२९]

[केशवलाल निर्भयराम सूरत]
संस्कारविधि की छपाई के हिसाब के सम्बन्ध में।
३१ मार्च १८८० [चैत्र कृ० ५ बुध सं० १९३६] काशी।

---

[१] पत्र (१७४) [२३०]

॥ ओम् ॥

सं० १९३७ चैत्र शुदी १२ गुरुवार।[3]
राजा शिवप्रसादजी आनन्दित रहो!

आपका चैत्र शुक्ल ११ बुधवार[4] का लिखा पत्र मेरे पास आया। देख के आपका अभिप्राय विदित हुआ। उस दिन आप से और मुझ से परस्पर जो २ बातें हुई थीं वे तब आपको अवकाश कम

---

१. यह पत्रांश थ्यासोफिस्ट ऐप्रिल सन् १८८० चैत्र १९३७ के पृ० १९० पर छपा है। इस से पहले निम्नलिखित सूचना है। आवश्यक समझ कर वह भी छापी जाती है।

THE FOOLISH EMBARGO LAID UPON SWAMIJI DAYANAND SARASWATI BY MR. WALL, THE BENARES MAGISTRATE, HAS AT LAST BEEN RAISED, AND THAT LEARNED AND ELOQUENT PANDIT WAS TO HAVE RESUMED HIS LECTURES ON THE EVENING OF THE 21ST MARCH*. BEFORE GRANTING THE PERMISSION-WHICH THE SWAMI OUGHT NEVER TO HAVE BEEN OBLIGED TO ASK-MR WALL HAD A CONVERSATION OF NEARLY AN HOUR WITH HIM. THE EXCUSE, OFFERED BY THE LIEUTENANT GOVERNOR FOR THE ACTION IN THE PERMISES, WAS THAT IT WAS NOT SAFE FOR THE SWAMI TO LECTURE IN THE MOHURAM HOLIDAYS I THE SUBJECT OF THE OPENING DISCOURSE WAS "THE CREATION."

अर्थात् "बनारस के मैजिस्ट्रेट मिस्टर वाल द्वारा स्वामी दयानन्द के ऊपर लगाई गई रोक अन्त में उठा ली गई और वह विद्वान् और वाग्मी पण्डित २१ मार्च सायङ्काल को अपना व्याख्यान पुनः आरम्भ करने वाले थे। अनुमति देने से पूर्व, जो अनुमति मांगने के लिये स्वामी जी कभी भी विवश नहीं किये जाने चाहिये थे, मि० वाल ने उनके साथ लगभग एक घण्टा वार्तालाप किया। लेफ्टिनेण्ट गवर्नर ने इस कार्य के लिये जो बहाना बताया था वह यह था कि मुहर्रम के त्यौहार पर व्याख्यान देना स्वामी जी के लिये सुरक्षा की दृष्टि से ठीक नहीं था, व्याख्यान का विषय सृष्टि था।"

२. इस पत्र का संकेत म० मुंशीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २७८ पर है।

३. २२ एप्रिल १८८०। ४. २१ एप्रिल १८८०।

होने से मैं न पूरी बात कह सका और न आप पूरी बात सुन सके, क्योंकि आप उन साहबों से मिलने को आए थे। आप का वही मुख्य प्रयोजन था। पश्चात् मेरा और आपका कभी समागम न हुआ जो कि मेरी और आपकी बातें उस विषय में परस्पर होतीं। अब मैं आठ दश दिनों में पश्चिम को जाने वाला हूँ। इतने समय में जो आपको अवकाश हो सके तो मुझ से मिलिये। फिर भी बात हो सकती है। और मैं भी आपको मिलता, परन्तु अब मुझको अवकाश कुछ भी नहीं है इससे मैं आप से नहीं मिल सकूंगा क्योंकि जैसा सम्मुख में परस्पर बातें होकर शीघ्र सिद्धान्त हो सकता है, वैसा लेख से नहीं, इसमें बहुत काल की अपेक्षा है।

आपका प्रश्न	मेरा उत्तर
१ आपका मत क्या है?	१ वैदिक।
२ आप वेद किसको मानते हैं?	२ संहिताओं को।
३ क्या उपनिषदों को वेद नहीं मानते?	३ मैं वेदों में एक ईशावास्य को छोड़ के अन्य उपनिषदों को नहीं मानता[1]। किन्तु अन्य सब उपनिषद् ब्राह्मण ग्रन्थों में हैं। वे ईश्वरोक्त नहीं हैं।
४ क्या आप ब्राह्मण पुस्तकों को वेद नहीं मानते?	४ नहीं, क्योंकि जो ईश्वरोक्त है वही वेद होता है जीवोक्त नहीं। जितने ब्राह्मण ग्रन्थ हैं वे सब ऋषि मुनि प्रणीत और संहिता ईश्वर प्रणीत है। जैसा ईश्वर के सर्वज्ञ होने से तदुक्त निर्भ्रान्त सत्य और मत के साथ स्वीकार करने के योग्य होता है वैसा जीवोक्त नहीं हो सकता क्योंकि वे सर्वज्ञ नहीं। परन्तु जो वेदानुकूल ब्राह्मण ग्रन्थ हैं उनको मैं मानता और विरुद्धार्थों को नहीं मानता हूं। वेद स्वतःप्रमाण और ब्राह्मण परतः प्रमाण हैं। इससे जैसे वेदविरुद्ध ब्राह्मण ग्रन्थों का त्याग होता है वैसे ब्राह्मण ग्रन्थों से विरुद्धार्थ होने पर भी वेदों का परित्याग कभी नहीं हो सकता क्योंकि वेद सर्वथा सब को माननीय ही हैं।[2]

१. अर्थात् ईशोपनिषद् को स्वामी जी महाराज यजुर्वेद के अन्तर्गत मानते हैं। इसी कारण पृ० ३६ पंक्ति २, ३ में जो १० उपनिषदें गिनाई हैं उन में ईश का उल्लेख नहीं है। दश संख्या की पूर्ति "मैत्रेयी" को गिन कर की है। यह भी ध्यान रहे कि स्वामी जी महाराज ईशोपनिषद् के माध्यन्दिन संहितानुसारी पाठ को ही वेदान्तर्गत मानते हैं, काण्व शाखानुसारी पाठ को नहीं। क्योंकि श्री स्वामी जी महाराज माध्यन्दिन संहिता को ही मूल वेद मानते हैं। उसी का उन्हों ने भाष्य किया है। काण्व संहिता को उसकी शाखा अर्थात् व्याख्यात्मक पाठ मानते हैं। इसलिए उन के मत में काण्व शाखानुसारी ईशोपनिषद् माध्यन्दिन ईशोपनिषद् की व्याख्यारूप होने से उसकी पृथक् गणना की कोई आवश्यकता नहीं रहती। यु० मी०।

२. प्रश्न और उत्तर का भाग एक दो शब्दों के अन्तर से भ्रमोच्छेदन में भी छपा है।

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन।

राजा शिवप्रसादजी आनन्दित रहो

आपका पत्र मेरे पास आया देखकर अभिप्राय जान लि
या इसके देखने से मुझको निश्चित हुआ कि आपने वेदों से ले के
पूर्वमीमांसा पर्यन्त विद्यापुस्तकों के मध्य में से कोई भी पु
स्तक के शब्दार्थ संबंधों को नहीं जाना है इसलिये आपको मेरी बनाई
भूमिका का अर्थ भी ठीक कर विदित न हुआ जो आप मेरे पास आके स
मझते तो कुछ २ समझ सकते परन्तु जो आपको अपने प्रश्नों
के प्रत्युत्तर सुनने की इच्छा हो तो स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती बाबा
ल शास्त्री जी को खड़ा करके सुनियेंगा तो भी आप कुछ २ समझ
लेंगे भला विचार तो कीजिये कि आप उन पुस्तकों के पढ़े विना
वेद और ब्राह्मण पुस्तकों का कैसा आपसमें संबन्ध क्या २ उनमें
है और स्वतः प्रमाण तथा ईश्वरोक्त वेद और परतः प्रमा
ण और ऋषिमुनिकृत ब्राह्मण पुस्तक हैं इन हेतुओं से क्या २ सि
द्धान्त सिद्ध होते हैं और ऐसे हुए विना क्या २ हानि होती है इन वि
द्या रहस्य की बातों को जाने विना आप कभी नहीं समझ सकते। सं० १९२६ मि० वै०
व० सप्तमी शनिवार — दयानन्दसरस्वती

ऋषि दयानन्द सरस्वती का आद्यन्त स्वहस्तलिखित पत्र। पृ० १८७ पर मुद्रित।

अब रह गया यह विचार कि जैसा संहिता ही को ईश्वरोक्त निर्भ्रान्त सत्य वेद मानना होता है वैसा ब्राह्मण ग्रन्थों को[क्यों]नहीं, इसका उत्तर मेरी बनाई ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के नववें पृष्ठ से ९ लेके ८८ अट्ठासी पृष्ठ तक वेदोत्पत्ति, वेदों का नित्यत्व, और वेदसंज्ञाविचार विषयों को देख लीजिये। वहाँ मैं जिसको जैसा मानता हूँ सब लिख रक्खा है। इसी को विचार पूर्वक देखने से सब निश्चय आपको होगा कि इन विषयों में जैसा मेरा सिद्धान्त है वैसा ही जान लीजियेगा ॥[1]

(दयानन्द सरस्वती) काशी।

———

[२] पत्र (१७६) [२३१]

राजा शिवप्रसाद जी आनन्दित रहो!

आपका पत्र मेरे पास आया देखकर अभिप्राय जान लिया। इस से मुझ को निश्चय हुआ कि आपने वेदों से लेके पूर्वमीमांसा[2] पर्यन्त विद्या पुस्तकों के मध्य में से किसी भी पुस्तक के शब्दार्थ संबंधों को जाना नहीं है। इसलिये आप को मेरी बनाई भूमिका का अर्थ भी ठीक २ विदित न हुआ, जो आप मेरे पास आके समझते तो कुछ समझ सकते। परन्तु जो आपको अपने प्रश्नों के प्रत्युत्तर सुनने की इच्छा हो तो स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती व बालशास्त्री जी को खड़ा करके सुनियेगा तो भी आप कुछ २ समझ लेंगे, क्योंकि वे आप को समझावेंगे तो कुछ आशा है समझ जांयगे। भला विचार तो कीजिये कि आप उन पुस्तकों के पढ़े विना वेद और ब्राह्मण पुस्तकों का कैसा आपस में सम्बन्ध, क्या २ उन में हैं और स्वतः प्रमाण तथा ईश्वरोक्त वेद और परतः प्रमाण और ऋषि मुनि कृत ब्राह्मण पुस्तक हैं इन हेतुओं से क्या २ सिद्धान्त सिद्ध होते और ऐसे हुए बिना क्या २ हानि होती है इन विद्यारहस्य की बातों को जाने बिना आप कभी नहीं समझ सकते॥

(दयानन्द सरस्वती)

सं० १९३७ मि० वै० व० सप्तमी शनिवार[3]

———

१. मूल पत्र अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है। इस पर अधिकांश श्री स्वामी जी के हाथ का संशोधन है। इसी की प्रतिलिपि राजा जी को भेजी गई होगी।

२. इस स्थल पर राजा जी ने अपने निवेदन में एक टिप्पण दिया है। उस में उन्होंने इस बात पर हास्य किया है कि स्वामी जी महाराज पूर्वमीमांसा पर्यन्त ही पढ़े थे, उन्होंने उत्तरमीमांसा न देखी थी। राजा जी इस पर बड़े प्रसन्न दीखते हैं, परन्तु यह भी उनका अज्ञान है। उन्हें यह ज्ञान नहीं कि अन्तिम आर्षग्रन्थकार जैमिनि मुनि हुए हैं। उन्हीं का बनाया पूर्वमीमांसा है। ग्रन्थ गणना में चाहे वह पहले गिना जाय वा पीछे, परन्तु रचयिता की दृष्टि से जैमिनि ही अन्तिम है, अतएव ऋषि का उपर्युक्त लेख सत्य ही है। राजा शिवप्रसाद के निवेदन में मुद्रित।

३. १ मई १८८०।

[१] पत्र-सूचना (१७६) [२३२]

[पं० ज्वालादत्त फर्रुखाबाद]
ज्वाला दत्त को बुलाने के विषय में ।[1]

---

[२] पत्र (१७७) [२३३]

मुंशी बखतावर सिंह जी आनन्दित रहो[2]

कल एक पत्र आपके पास भेजा है पहुँचा होगा । आज यहां[3] आर्यसमाज का आरम्भ होगा । फिर दो दिन और व्याख्यान देंगे । बुधवार के रोज व्याख्यान देंगे वा न देंगे, परन्तु रहेंगे यहीं । बृहस्पति[वार] के प्रातःकाल कान्हपुर कम्पू को जायंगे ।[4] खरबूजे यहाँ अब तक चले ही नहीं ठीक २ । और जो चले हैं वे पूर्ववायु से फीके भी हैं जैसे कि काशी में । रामाधार वाजपेयी से हमने कह दिया कि जब अच्छे आने लगैं तब तुम्हारे पास भेज देंगे ।

पण्डित इन्द्रनारायण के पास नीचे लिखे हुए पुस्तक भेज देना—

ऋग्वेद का अङ्क आठवां । दशवां	१ सत्यार्थप्रकाश
८ । १०	१ संस्कारविधि
यजुर्वेद का अङ्क । आठवां । दशवां । बारहवाँ	१ वर्णोच्चारणशिक्षा
८ । १० । १२ ।	१ संस्कृतवाक्य प्र०
वहां रह गये हैं सो सेठ सेवाराम कालूराम	१ भ्रान्तिनिवारण
की दूकान में भेज देना कान्हपुर में	१ आर्योद्देश्यरत्नमाला

और स्त्रैणताद्धित के पत्रे यहाँ भीमसेन ने नहीं रखे हैं । और किस पत्रे में कहां से आगे लिखा जायगा कि कौन पंक्ती कहां तक लिखा गया और कहां से लिखना होगा वहां चिन्ह कर देना । जिस २ चिठी में जो २ लिखैं उस २ का ख्याल रखा करना । फिर दूसरी बखत वह विषय न लिखेंगे। पण्डित इन्द्रनारायण ने ५) रु० हमारे पास जमा किये । उनमें ―)॥ टिकट का और ४॥।≈)॥ पुस्तकों के का दाम जमा हुआ ―)॥ इस के आगे जो महसूल लगे सो उन से वसूल कर लेना । वा और जो रामाधार वाजपेयी के पास पुस्तक भेजें उनके साथ भेज देना तो रामाधार को लिख भेजना कि ये पुस्तक पण्डित इन्द्रनारायण के पास शीघ्र भेज देवें ।

और जो ब्रह्मचारी काशी में रसोई करता था वह भाग उठा था सो यहां मिला हमारे पास है।

भैरव कहार एक रुपया नरसिंह थापा को दिलाता है । सो भीमसेन उसके पास नेपाली रानी

---

१. आर्यसमाज फर्रुखाबाद के १७-५-८० (वैशाख शु० ८ सोम सं० १९३७) के पत्र में श्री स्वामी जी के ३ पत्र पहुंचने का संकेत है । जिन में पं० ज्वालादत्त को बुलाया था । देखो म० मुन्शीराम जी द्वारा सं० पत्र व्यवहार पृष्ठ ३६५, ३६६ ।

२. पत्र, लेखक ने लिखा है और श्री स्वामी ने अनेक स्थानों पर बढ़ाया तथा शोधा भी है ।

३. लखनऊ में ।

४. अर्थात् १३ मई १८८० को जायेंगे ।

के स्थान में जाके रसीद लेके १) रू० उसको देदे। और चपरासी को पहेचान करवादे। जब भैरव उस को रूपया दिलवावे तब उसके पास पहुंचा दिया करे ॥

मिती वैसाख कृष्ण ३० सं० १९३७।[1] दयानन्द सरस्वती[2]

---

[३] पत्र (१७८) [२३४]

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो!

वैशा[ख] सुदी ११[3] को कान्हपुर से फरुखाबाद आनन्दपुर में पहुँच कर टोकाघाट पर कालीचरण रामचरण के बाग में ठहरे हैं। पिछले पत्र में वर्त्तमा[न] जो लिखा है सो सब करते होंगे। और कलकत्ते से टैपादि आ गया होगा तो वेदभाष्य का आरंभ कर दिया होगा और जो न आया हो तो चिठी के देखते हि कलकत्ते जाके टैपादि लाके शीघ्र ही वेदभाष्य का आरंभ चलाओ। और दूसरे पुस्तक का संधिविषयक का भी शीघ्र २ छपना चाहिये। व्यवहारभानु का पुस्तक छप गया हो तो भेजदो। और पिछले पत्र के लिखे मुताबिक सब काम करो। और पिछले पत्र का जवाब लिखो। सबसे नमस्ते कह देना।

मिती वैशाख शुक्ल १२ शुक्रवार सं० १९३७।[4]

दयानन्द सरस्वती

---

[४] पत्र-सूचना (१७९) [२३५]

मु० बखतावरसिंह बनारस।[5]

९जून १८८०[6]

---

[५] पत्र (१८०) [२३६]

ओम्

मुन्शी बखतावर सिंह जी आनंदित रहो!

दशमी [१०] जून[7] का लिखा हुआ पत्र तुमारा आया वर्त्तमान विदित हुआ। क्या डेढ़

---

१. ता० ६ मई सन १८८० रविवार। **लखनऊ** से बनारस को भेजा गया।

२. ता० २४ जुलाई सन् १६४५ को म० मामराज जी ने लाला रामशरण दास मेरठ वालों के पुराने पत्रों में से खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। जीवनचरितों में लखनऊ से कानपुर जाने का उल्लेख नहीं है। वह इस पत्र से सिद्ध है।

३. २० मई १८८०

४. २१ मई १८८०, **फरुखाबाद**। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

५. इस पत्र के संकेत वाला पत्र लाहौर में नष्ट हो गया। यु० मी०।

६. ज्येष्ठ शुक्ल १ बुध, सं० १६३७। यु० मी०।

७. ज्येष्ठ शुक्ल २ बृहस्पतिवार सं० १६३६।

महीना हुआ जब मैं चला था। तब व्यवहारभानु थोड़ा सा बाकी रहा था। क्या अबतक डेढ़ महीना हुआ बाकी ही पड़ा रहा है। और संधि विषय का भी एक ही फर्मा तैयार हुआ। व्यवहारभानु रहा खंडित। संधिविषय का एक ही फर्मा। अब कहो कोई ग्रन्थ पढ़ने के लायक हुआ ? अब जलदी व्यवहारभानु का बाकी फर्मा तैयार करके जहां २ भेजना है भेज दो। और वेदभाष्य का काम भी चलता रहे।

फौंडरी का बंदोबस्त कर लिया अच्छा हुआ। अभयलाल व चुन्नी लाल का ढीलापन मैं खूब जानता हूँ। जब किसी दूसरे साहूकार के यहां काम होगा तब वहां से उठा लिया जावेगा। और भीमसेन को भेजकर तीन अशर्फी और थोड़ा सा सोना है मंगवालो। अथवा जो अरंडीये[1] उस्में हिसाब किताब करें उनसे कहदो कि हम बाजार में बेंचलेंगे। तो बाबू अविनाशी लाल[2] चौक [खं]भे वाले के साथ जो अपना सभासद आर्य स० है बेचलेना। और रुपया अलग ही जमा रखना खर्च मत करना। क्योंकि वह अरंडीन उस्के ही लिये हैं। वेदभाष्य का फर्मा हमने देखा तुम भी मिला लो। बंबई के फर्मे से आध अंगुल कम है सो जिल्द बांधने में कैसा होगा। और जड़ में आर्बल भी कम रहता है। इस लिये चारों ओर बराबर रहना चाहिये जैसा कि बंबई के छापे में है। परन्तु हां जब वैसा कागज इतना लंबा चौड़ा नहीं मिलता तो इसी में छपवाना होगा। शिव प्रसाद का खंडन हमने तैयार कर लिया है शोध के भेज देंगे। और उस्के टाटल पेज पर (रचिता) शब्द (रचितः) अर्थात् (ता को तः) करदो।

क्या दफ्तरी ने नौकरी छोड़ दी ? मुझ को मालूम होता है कि अब काम अच्छी तरह चलेगा और तुम चलाओगे। कल फर्रुखाबाद के कंपू[3] में भी शाखा समाज स्थापित हो गया है। जो जो पुस्तक जैसराज गोटीराम के नाम पर फर्रुखबाद भेजो वह कालूराम सेवाराम के नाम पर उसी दूकान पर कानपुर कम्पू में रेल पर भेज दिया करो। वहां से फर्रुखाबाद चला आवेगा। और उनको चिट्ठी में भी लिखदो कि तुम फर्रुखाबाद भेज दिया करो। और जब फर्रुखाबाद तक सूधा रेल हो जावे तब जैसराज गोटीराम की दूकान पर सूधा फर्रुखाबाद ही भेज दिया करो।

मुन्शी इन्द्रमणि के पास रुपये भेजे या नहीं उनका जवाब लिखो। और न भेजा हो तो जितना उनने हिसाब करके लिखा हो भेज दो। जब हम नखलऊ में थे तब हमने लिखा था कि रामाधार वाजपेई के पास जो जो पुस्तकें वे लिखें भेज दिया करो। सो तुमने नहीं भेजीं। शायद तुम काम काज में भूल गये होगे। ऐसा न होना चाहिये। उनने तुमारी शिकायत लिखी है। वह कार्ड भी तुमारे पास भेजते हैं देख लेना। जब हम यहां से कहीं को जावेंगे, तुमको इत्तला करेंगे।

और संधिविषय जो हम ने शुद्ध कर लिखा है सो भी भेज देवेंगे। जैसी कि स्याही वेदभाष्य में तुमने अब लगवाई है ऐसी ही लगती रहे। और अभी ये अङ्क आये हैं। भूल चूक देखके पीछे से लिखेंगे। और भीमसेन से व्यवहारभानु में शुद्धाशुद्ध पत्र लिखवाके साथ छपवा के लगवादो। क्योंकि

---

१. अरंडीये या अरंडीन उन कारीगरों का नाम है जो दुपट्टा व अरंडी कपड़ा बनाते हैं। उन को ही देने के लिये यह रुपये अलग रखवाये गए थे। देखो पत्र पूर्ण सं० २३७, पृष्ठ १६१।

२. इन्हीं बा० अविनाशीलाल ने स्वामी जी कृत पञ्चमहायज्ञविधि मूलमात्र छपवाई थी। उसमें जीवित श्राद्ध के स्थान में मृतक श्राद्ध का विधान छपवाया था। देखो हमारा 'ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास' पृष्ठ ५०। यु० मी०।

३. फतेगढ़ में।

उस्में बहुधा शुद्ध अशुद्ध है। और वेदभाष्य के पत्रे जो कमती होते हैं वे टाटल पेज पर नोटिस लगवादो कि इतना चौड़ा लम्बा कागज नहीं मिलता जो कि बम्बई के बराबर हो। इसलिए इसी प्रकार के कागज से छपा करेगा। हम आनन्द में हैं आप आनन्द में हूजिये। और समाज आदि का सब काम अच्छे प्रकार चले। भीमसेन से कह दो कि व्याख्यान अच्छे प्रकार दिया करे। और अपने पढ़ने पढ़ाने व शोधने में होशियारी रखे। पण्डित सूबेराव जी और हरि पण्डित जी से हमारा नमस्ते कह देना। पं० अमरनाथ का शरीर आरोग्य हो गया है वा नहीं। वहां जो काररवाई जो कुछ हुआ करे आठवें दिन लिख भेजा करो। और हम को जब जरूरत होगी तब हम भी लिखेंगे। इति

ज्येष्ठ शुक्ल ६ सं० १९३७।[1] दयानन्द सरस्वती[2]

---

[६] पत्र (१८१) [२३७]

ओम्

मुंशी ब[खतावर]सिंह जी आनन्दि[त] रहो।[3]

आज रजस्टरी करके राजा शिवप्रसाद का उत्तर यहां से रवाना करेंगे। उस के पहुंचते बखत ही रसीद भेजनी। इस पुस्तक को प्रथम भीमसेन देख कर कम्पोजीटर को समझा देवे। कहीं टूट फूट अशुद्ध न होने पावे। नोट जैसा कि इस में है वैसा ही छपे। और इस की भी २,००० दो हजार कापी छपवानी। ~) मूल्य। और वेदभाष्य के साथ जहाँ २ भेजना योग्य समझें वहाँ भी भेजना। [सब आर्यस]माजों में भेज देना। और [संन्यासि]यों के पास भी। और जो भाष्य के गाहक योग्य हैं उन [सब] के पास [एक]२ पुस्तक भेज देनी। सब कालेज ग[वर्नमेण्ट स्कूलों] और शरकारी पुस्तकालय में भी भेजना॥

तुमारे लिखे प्रमाण सीसा (टैप आदि) के लिए सेठ निर्भयराम से कह दिया है। जैसी तुम लिखो [गे वै]सी कलकत्ते से आजावेगी। परन्तु प्रथम कलकत्ते में सौ रुपैये जैसी[राज गुट]राम की दूकान पर भेज दो। उन्हीं में से जो २ चीजें तुम का चाहने पड़ेंगी सो २ वे भेज दिया करेंगे। और जो तुमने लिखा के अभयराम चुन्नीलाल अच्छी तरह से बन्दोबस्त नहीं रखते उसके लिए वहाँ काशी में एक साहूकार के पास रुपैये जमा करने के लिये यहां बन्दोबस्त किया है। उसी की दो[का]न‡ पर जमा करना। और अभयराम चुन्नीलाल के यहां केवल सौ रुपैये बाकी रहने भी देना जिस में [लेन दे]न न टूटे। फिर दिवाली पर हिसाब करके सब चुका लेना। तुमने जो पारसल भेजा ठीक २ पहुँचा। परन्तु उसका डाक महसूल बहुत क्यों लगा। जिस कारीगर ने ये दुपट्टा और अरंडी बनाई है उसको ३) रुपैये इनाम दे देना। मैं खूब जानता हूँ कि तुम तन मन धन से काम करते हो। परन्तु मेरे जरूरी

---

१. ता० १४ जून सन् १८८० सोमवार को फरुखाबाद से बनारस को भेजा। इस पत्र की आरम्भ की २॥ पंक्ति दूसरे लेखक की हैं, शेष पत्र पं० गणेशप्रसाद शर्मा फरुखाबाद वालों के हाथ का लिखा हुआ है। हस्ताक्षर ऋषि के हैं।

२. जुलाई सन् १९४५ में म० मामराज जी ने लाला रामशरणदास जी रईस मेरठ वालों के पत्रों में से खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. इस पत्र पर अनेक स्थलों में श्री स्वामीजीने स्वहस्त संशोधन किया है।

वार २ लेख से कुछ सन्देह न करना। क्योंकि तुम अपना और मेरा काम [दो] नहीं समझते। सन्धिविषय और वेदभाष्य [के पत्रे] आपने मंगवाये। वे इस बखत राजा शिवप्रसाद के [उत्तर देने से फु]रसत नहीं मिली। इस वास्ते नहीं पहुचे। आगे···

जो[1] भैरव कंहार हमारे साथ आया था··· ··· [उस]ने कलमदान खोल १॥) वा २॥) रुपैये चोर लिये थे। इस [लि]ये उसको जितना मासिक चढ़ा था दिया। और म[ार्ग] [ख]रच ॥।) आने देकर यहां से निकाल दिया। जब तक यह भ्रमोच्छेद[न]ॐ ग्रन्थ छपके बाहर न हो तब तक किसी को मत दिखलाना। जब छप जाय तब काशीराज, राजा शिवप्रसाद, विशुद्धानन्द, बाल शास्त्री और राय शंकटाप्रसाद की लायब्रेली तथा पण्डित सुवेराव औ[र] हरि पण्डित[2] जी को भी एक पुस्तक दे देना। और जिस २ को योग्य जानो उस २ को भी देना। बाकी मूल्य से देना। सब से हमारा न[मस्ते क]ह देना। हम बहुत प्रसन्न हैं। आप लोग सब प्र[सन्न रहि]ये।

संवत् १९३७ आषाढ़ कृष्ण २ गुरुवार।[3]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र (१८२) [२३८]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमार्हायै श्रुतशास्त्रविद्याभ्यासापन्नायै श्रीयुतरमायै दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्।

शमत्रास्ति। तत्रत्यं भवदीयमेधमानं च नित्यमाशासे।

अभ्यस्तसंस्कृतविद्याया भवत्याः शुभां कीर्त्तिं निशम्योत्पन्नस्वान्तानन्देन मया श्रीमतीम्प्रति लेखद्वाराभिप्रायं प्रकाश्यैवमेव भवत्या अभिप्रायं विज्ञातुमिच्छामि सद्यः स्वाभिप्रायविज्ञापनेन मामलङ्करोतु।

इदानीमग्रे च भवती किं किं कर्त्तुं चिकीर्षति। किं यथा लोकश्रुतिरस्ति सा ब्रह्मचारिणी वर्त्तत इतीदमेवं विद्यते न वा। सा यत्र कुत्र जनतायां सुशोभितं शास्त्रोक्तलक्षणप्रमाणान्वितं विद्वदाह्लादकरं वक्तृत्वं करोतीत्येतत्तथ्यं न वा। श्रुतं मया सा स्वयंवरविधिना विवाहाय स्वतुल्यगुणकर्मस्वभावसहितं कुमारं पुरुषोत्तममन्विच्छतीति सत्यमाहोस्विन्न। किमेतदकृत्वा ब्रह्मचर्ये स्थातुमशक्यमस्ति।

यथाऽऽर्य्यावर्त्तीयाः सत्यो विदुष्यो गार्ग्यादयः कुमार्य्यो ब्रह्मचर्य्ये स्थित्वा स्त्रीजनादिभ्यो यावान् सुखलाभः प्रापित[वत्य]स्तथा तावान् विवाहे कृतेऽनेकप्रतिबन्धकप्राप्त्या प्रापितुमशक्यः। एवं सत्यपि स्वसमानवरं पुरुषं प्राप्य विवाहं कृत्वा यथाऽनेकाः स्त्रियः सन्तानोत्पत्तिपालनस्वगृहकृत्यानुष्ठाने प्रवर्त्तन्ते तथैव भवत्या इच्छास्ति वा पुनरपि कन्यकाभ्योऽध्यापनस्य स्त्रीभ्यः सुशिक्षाकरणेच्छास्ति। श्रीमती वंगदेशनिवासं कृत्वाऽन्यत्र यात्रां न करोति किमत्र कारणम्। यावदुपकारः सर्वत्र गमनागमनेन

---

१. 'जो···' भैरव से आगे सारा लेख ऋषि के अपने हाथ का ही है। बिन्दु से परिचिन्हत कोष्ठों को छोड़ कर शेष सब कोष्ठों के स्थान का पत्र फटा हुआ है। हमने कोष्ठों में अपनी ओर से पूर्ति की है।

२. हरि पण्डित महाराज विजय नगर की बनारस कोठी के कामदार थे। देखो आषाढ़ शुक्ल ११ सं० १९३७ (१८ जुलाई १८८०) पूर्ण संख्या २४५ का पत्र।

३. २४ जून १८८०, फरुखाबाद। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

जायते न तादृगेकत्र स्थिताविति निश्चयो मे।

यद्यत्रागमनाभिलाषास्ति चेत्तर्ह्यागम्यतां, यावानस्यां यात्रायां मार्गे धनव्ययो भविष्यति तावान् भवत्या अत्र प्राप्तेऽवश्यं लभ्येत । यद्याजिगमिषाऽत्र वर्त्तते तर्हि ततो गमनात्प्राक् पत्रद्वारा समयो विज्ञाप्यतामतोऽत्र भवत्याः स्थित्यर्थं स्थानादिप्रबन्धः स्यात् । यदि श्रीमत्युपदेशाय सर्वत्र यात्रां चिकीर्षेत्तर्ह्येतत्स्थानादिनिवासिन आर्य्या भवत्याः सर्वत्रार्य्यावर्त्तयात्रायै योगक्षेमाय च धनं दातुं शक्नुवन्ति नात्र काचिच्छङ्कास्ति।

यदि भवती पत्रं प्रेषयेदथवाऽऽगच्छेत्तर्हि निम्नलिखितस्थानस्य सूचनया पत्रं भवती वाऽऽगन्तु-मर्हतीत्यलमतिविस्तरलेखेन विदुषीं प्रति।

रसरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे आषाढस्य शुभे दले।
षष्ठ्यां शनौ शिवं पत्रं लिखितं मान्यवर्द्धकम् ॥[1]

(मेरठ छावनी बाबू छेदीलाल गुमास्ते कमसरयट के द्वारा स्वामी दयानन्द सरस्वती) जी के पास पहुँचे । परन्तु इतना लिखना बहुत है कि (मेरठ स्वामी दयानन्द सरस्वती) बराबर पहुंचेगा।

———

[२] पत्र (१८३) [२३९)

ओ३म्

पण्डित गोपालरावहरि आनन्दित रहो—

मैं आशा करता हूं कि जो २ बातें करनी आपके लिए नीचे लिखता हूँ, सो २ यथावत् स्वीकार करेंगे।

(१) जो मीमांसक उपसभा नियत की गई है उसके पाँच सभासद् निश्चित किये गये हैं । एक आप, द्वितीय बाबू जी, तृतीय लाला जगन्नाथप्रसाद, चतुर्थ लाला रामचरण, पञ्चम लाला निर्भयराम और उसकी अनुपस्थिति में क्रमशः यथा आप के लाला रामनारायणदास मुख्तार, लाला हरनारायण, ला० हितमनीलाल, लाला कालीचरण और लाला निर्भयराम के कोई पुत्र अर्थात् तीनों में से एक जो उपस्थित हो, नियत किये गये हैं॥

(२) जहाँ तक बनें और आप यहाँ उपस्थित हों तो व्याख्यान भी समाज में दिया करें॥

(३) जो मासिक पुस्तक निकलता है वह भी आपके हाथ से बनेगा, अथवा बनने पर शुद्ध कर देंगे। तो भी अच्छा होगा। इति—

आषाढ कृष्ण ८, सम्वत् १९३७।[2] दयानन्द सरस्वती

———

१. सं० १९३६ आषाढ़ सुदी ६ शनि। यह तिथि सर्वथा अशुद्ध है। संवत् १९३७ चाहिये १९३६ नहीं। रमा ने इस पत्र का उत्तर आषाढ़ शुक्ल १, भृगुवासर शक वत्सर १८०२ अर्थात् ९ जुलाई १८८० को दिया। अतः श्री स्वामी जी का पत्र आषाढ़, वदी ६ सोमवार अथवा २८ जून १८८० का हो सकता है। आषाढ़ सुदी ६ को शनिवार भी नहीं था।

२. ३० जून १८८० फर्रुखाबाद। मूल पत्र पहले हमारे पास था। अब प्रो० महेशप्रसादजी के पास है।

[७] पत्र (१८४) [२४०]

ओम्

[मुन्शी बख]तावर सिंह जी आनन्दित रहो।

हम कल यहाँ [से चल] कर बुध की रात को सकूराबाद स्टेशन से रेलमें [सवार हो] कर मेरठ जायंगे। वेदभाष्य जहां तहां भेजा ग[या होगा] और राजा शिवप्रसाद का उत्तर छप के जहां तहाँ पहुँचा वा नहीं। [अब हम] को चिठी पत्री भेजना हो तो मेरठ के पते से हमारे पास भेज[ना। हम] को यहाँ कार्य विशेष था इसलिए वेदभाष्य [और सन्धि] विषय के पत्रे नहीं पहुंचे। मेरठ में जाके वहाँ [से भेज देंगे[1] ……………………………………………………………………
… … … … … … …

… … … …सो छापना और न हों तो जिस… … … …हो लिख भेजना और संधिविषय का अ… … … …यहाँ जो पत्रे हैं लिखवा लिये हैं। शोध के भेज देंगे। संस्कृतवाक्यप्रबोध का एक फर्मा जो बाकी रह गया है छाप कर ज[हां तक हो] जलदी भेज दो जो पठन पाठन में काम आवे। राजा शिवप्रसाद के उत्तर में तीन चार दिन का काम थ[ा] इतनी देर क्यों लगा[ई, जो] वेदभाष्य अब तक किसी के पास नहीं भेजा। और [इस] अङ्क के साथ जिस २ के रुपैये आय [कर जो] बाकी [हैं] [उन सब के] पास चिठीं पहुंचाइँ जायंगी…… ……………………………………………………
… … … … … … …

… … ……की लेना हो सब हिसाब कर रखना और हम [पहले जो चि]ठी लिख चुके हैं[2] उसी के माफिक सब काम करना।

मिती आषाढ़ वदी १३ सोमवार संवत् १९३७॥[3] (दयानन्द सरस्वती)[4]

———

[१] पत्र सूचना (१८५) [२४१]

[जीवाराम टीकाराम शीतलाघाट काशी][5]

दोनों जने चले आओ। [आषाढ़ वदी १३ सोमवार १८३७][5]

———

[८] पत्र (१८६) [२४२]

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

हम आज मेरठ में पहुँचके लालकुर्ती बजार में रामशरणदास के बंगले में ठहरे हैं। और यहां महीना भर ठहरने का विचार भी है। जो कुछ चिट्ठी पत्रादि भेजो मेरठ में इसी पता से भेजना।

---

१. विन्दुओं वाला स्थान फट चुका है। कोष्ठों में हमने पूर्ति की है। २. सम्भवतः पृष्ठ १९१ पर छपी हुई।

३. ता० ५ जुलाई सन् १८८०। [आषाढ़ कृष्ण ६—१४ सं० १९३७=१–६ जुलाई १८८० को स्वामी जी मैनपुरी में थे। अतः यह पत्र मैनपुरी से भेजा गया था। यु० मी०।]

४. फटे हुए पत्र के दो टुकड़े म० मामराज जी ने ता० २४ जुलाई सन् १९४५ को लाला रामशरण दास जी मेरठ वालों के यहां से खोजे। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

५. इस पत्र की सूचना पूर्ण संख्या २४६ के पत्र (पृष्ठ १९८) में है। मैनपुरी से। यु० मी०

तुम ने लिखा था कि पच्चीसवीं जून को दोनों वेदों [का] १४ वां [अंक] छपकर तैयार हो जांयगे। और हमने २४ वीं जून को राजा शिवप्रसाद का उत्तर भेजा था। २६ वीं को पहुंचा होगा । और वह भी पहिली अप्रेल[1] वा पांचवीं तारीख अप्रेल[1] त[क] छपके तैयार हो ही गया होगा । सब के पास वेदभाष्य के साथ रमाना भी तुमने कर दिया होगा। जैसा कि हमने पहिले पत्रों में लिखा है वैसा करना। तुमको चाहिये कि आप जो २ वहां की कारवाई २ दूसरे तीसरे पत्र में जो काम किया लिख भेजा करो। भीमसेन ने पांच रुपैये माहवारी के लिये लिखा। सो आजकल इतना अन्नादि महगा नहीं है। कि जिस में खान पानादि का निर्वाह ना हो। और मेरे आये पीछे कोई भी पुस्तक छोटा वा बड़ा जिसका आरंभ मेरे पीछे आप ने वा भीमसेन ने किया हो नहीं पहुंचा । वेदभाष्य और राजा शिवप्रसाद का उत्तर छपकर अभी तक नहीं आया। संधिविषय का अब तक प्रारंभ न हुआ होगा। एक फर्मा व्यवहारभानु का छपना था ओ भी पूरा न हुआ होगा। अब भीमसेन कहता है कि मैंने बड़ा परिश्रम किया सो दो तीन महीने में क्या बनाके तयार किया। अपने लोगों की ये व्यवस्था है कि रुपैये के लिये तैयार और काम कुछ भी नहीं दिखाते। और जो हम काम देखेंगे तो आप ही बढ़ा देंगे। और वेदभाष्य और राजा शिवप्रसाद का उत्तर जलदी भेजना चाहिये। और राजाराम शास्त्री के लिये हमने लिख भेजा है कि पैंतीस रुपैये में मंजूर हों तो चल आवें और एक विद्यार्थी जो कि पचास श्लोक काम करके लिख सकता हो रसोई आदि के लिये पांच रुपैये माहवारी का लेते आवें । कुछ व्याकरण भी पढ़ा हो। और जो इनकार करे तो चालीस रुपये के बीच में दो पंडित अच्छी तरह लिख[ने] वाले बहुत जलदी आप और भीमसेन अच्छी तरह परीक्षा करके भेज देना । वे भी व्याकरण पढ़े हों। और भीमसेन [से] कह देना कि जब छापाखाने का काम अच्छी तरह चलेगा तब पांच रुपैये हो जांयगे। भारौल वाले ठाकर फतेसिंह के १७) रुपैये वेदभाष्य के लिये तीन वर्ष के हमारे पास जमा कर दिये हैं।

[दयानन्द सरस्वती]

मिती आ० सुदी १ संवत् १९३७[2]

---

[९]　　　　उर्दू पत्र (१८७)　　　　[२४३]

मुन्शी बखतावरसिंह जीव आनन्दित रहो।[3]

आज कल तुम्हारा कोई चिट्ठी पत्र नहीं आता। तुमने लिखा था कि २५ जून को वेदभाष्य तय्यार हो जावेगा। और २४ जून को राजा शिवप्रसाद का जवाब हम ने फर्रुखाबाद से तुम्हारे पास भेज दिया था। और वेदभाष्य को दरुस्त हुए भी आज १६ या १७ दिन हुए। राजा जी के जवाब का पुस्तक हद्द के दरजह ८ दिन में छपकर तय्यार हो सकते हैं। पर न मालूम अब तक क्यों नहीं तय्यार हुए। और हम ने तुम से कहा था कि दूसरे तीसरे दिन खत भेजते रहना। मगर अब २०-२० दिन तक आपके चिट्ठी पत्र का दर्शन नहीं होता। आप को चाहिये कि हफ़्ता में दो दफ़ा चिट्ठी भेजा करो।

---

१. यहां जुलाई के स्थान में अप्रेल भूल से लिखाया गया प्रतीत होता है।

२. ८ जुलाई १८८०, मेरठ से।

३. मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

और सब हाल कच्चा पक्का आमदनी खर्च का मुफ़सिल लिखा करो और यह भी लिखना कि राजा शिवप्रसाद का जवाब और वेदभाष्य अब तक छप कर क्यों नहीं आया। और फाऊण्डरी यानि हरफ वगैरा ढालने का साँचा और औजार कलकत्ता से आये या नहीं। और हरफ वगैरा ढालने शुरु हो गये या नहीं **अब हम वेदभाष्य के पत्रे तय्यार कर रहे है। और सन्धिविषय के पत्रे भी शोधे जाते हैं।** दो चार दिन में वेदभाष्य और सन्धिविषय के पत्रे तुम्हारे पास पहुंचेंगे। और क्या आज तक हमारे नाम की कोई चिट्ठी काशी में ऐसी नहीं आई होगी जो हमारे पास भेजने के लाइक हो। जरूर आई होगी। मगर तुम भेजनी भूल गये होगे। और तुम जो अपने आर्यदर्पण निकालो तो जो वृत्तान्त मुंशी इन्द्रमनजी की बदनामी का मुसलमानों ने अपने अखबार जामे जमशेद में छापा था, और उस का जवाब और मुख़्तसर हाल अख़बार नैय्यरे आज़म मथरा मतबूआ ३० जून सन् ८० और अखबार दबदबा कैसरी बरेली मतबूआ ३ जुलाई सन ८० में छपा है।[1] तुम भी अपने समाचार में छाप देना। उस में साहब मैजिस्ट्रेट बहादुर मुरादाबाद के नाम तहकीकात का हुक्म गवर्नमेण्ट से आया है। और जो कोई काशी में और समाचार हो, तो उसमें से अङ्गरेज़ी से और भाषा बन सके तो जरूर छपवा दीजिये। और कलकत्ता में भी जो समाचार या अखबार अङ्गरेज़ी का निकलता हो, और तुम उसमें छपवा सकते हो, तो वहां भी छपवा दो, और अमृतबाजार पत्रिका के एडीटर को भी लिख के इस को छपवा देना। और अब वेदभाष्य के १५[अङ्क के] भेजने में तुम क्यों देर कर रहे हो। लोग घबरा रहे हैं। इसमें जितनी देर करोगे, उतना ही महा हानि का सबब होगा। और मुंशी जी का सब हाल मुफस्सिल लिख कर अमृतबाजार पत्रिका में और थ्यासोफिस्ट में छपने के लिये भेज देना। और हम यहां[2] एक महीने तक ठहरेंगे।

(दयानन्द सरस्वती)

———

[१७] पत्र (१८८) [२४४]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमार्हाय विद्वद्वर्य्याय वैदिकधर्ममार्गैकनिष्ठाय निगमोक्तलक्षणप्रमाणैर्धर्म्य-कर्मोपदेशप्रवर्त्तितस्वान्तायैतद्विरुद्धस्योच्छेदने प्रोत्साहितचित्ताय सद्विद्वद्भ्योऽभ्यानन्दार्थं सूक्तसमूह-वाक्यानुवाक्यप्रयुक्तवक्तृत्वाभ्यासशालिने सर्वदा विद्यार्जनदानोत्कृष्टस्वभावाय लब्धार्यविपश्चिन्माना-यास्मत्प्रियवराय श्रीयुतश्यामजि[कृष्ण]वर्म्मणे दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्। शमत्रास्म[दीयम]स्ति तत्रत्यं भवदीयं नित्यमेधमानं चाशासे।

बहुमासाभ्यन्तरे भावत्कपत्रानागमेन चित्तानन्दाह्रासात् पुनरानन्दप्रजननायेदानीमेतस्मिन्निम्न-लिखिताभिप्रायाणां भवतः स[का]शात् सद्यः प्रत्युत्तराभिकांक्षिणोत्साहयुक्तं…मया पत्रं श्रीमत्सनीडं प्रेष्यते।

तत्र कीदृग्गुणकर्मस्वभावा मानवा भूजलवायुभक्ष्यभोज्यलेह्यचूष्याः पदार्थाश्च सन्ति। अतो गत्वाऽद्यपर्यन्तं तत्र भवदात्मशरीरारोग्यमस्ति न वा। यदर्था यात्रा कृता तत्प्रयोजनं प्रतिदिनं सिध्यति

१. यह पत्र इस तिथि के ६, ७ दिन पश्चात् लिखा गया है।

२. यहां अर्थात् मेरठ में।

न वा । भवत्समर्थ्यादि तत्रत्याः कति जनाः संस्कृतमधीयते कं कं ग्रन्थं च । तत्र भवतः कियती मासिकी प्राप्तिर्व्ययश्च । कस्मिन् कस्मिन् समये पठ्यते पाठ्यते चिन्त्यते च । ततोऽत्र कदाऽऽगमनाय निश्चितं कृतमस्ति । किमिदं यथात्र सद्धर्मोपदेशजन्या भवत्कीर्तिस्तूरणं देशदेशान्तरे प्रसृता तत्र कुतो न जाता । जाता चेद्यतो दूरदेशस्थास्ति, तस्मादस्माभिर्न श्रुता किम् । किं वैतत्कारणेऽवकाशो न लब्धः । एवं चेद् यदा भवता पठनपाठने सम्पूर्य्य(?) वेदार्थोत्कर्षाभिप्रायसूचकानि वक्तृत्वानि तत्रत्येषु देशेषु कृत्वैवात्रागमने भद्रं नान्यथेति निश्चयो मेऽस्ति । कुतः । धनलाभात् सत्कीर्त्तिलाभो महान् शिवकरोस्त्यतः । श्रीयुतप्रियवराध्यापकमुनियरविलियंस[मो]न्तमूलराख्यानामधुना वेदादिशास्त्राणां मध्ये कीदृङ् नि[श्चयः] प्रेमतदर्थप्रचारा[य] चिकीर्षाऽस्त्यन्येषां च । तत्र नन्दनपुर्य्यां काचिद् वैदिकी शा[खा]ख्या थियोसोफीकलसभाप्रेरिता सभास्तीति श्रुतं तत्तथ्यं न वा । भवता [कदा] चिच्छ्रीमतीराजराजेश्वरी महाराज्ञी पारलीमेंटाख्या सभा च दृष्टा न वा । भवता श्रीमत्प्रियवराध्यापकमुनियरविलियंसाख्यादिभ्यो ऽत्यादरेण मन्नियोगतो नमस्त इति संश्राव्य कुशलं पृष्ट्वा ते श्रुत्वा यद्यत्प्रत्युत्तरं ब्रूयुस्तत्तदन्यच्च यद्यद्युक्तं च लिखितुं तत्तस्य सर्वस्यक्त (?) प्रत्युत्तराणि यद्यस्यानुक्तप्रश्नस्यापि लेखार्हमुत्तरं वैतत्सर्वं विस्तरेण संलिख्याविलम्बेन पत्रं मत्सन्नि[धौ] प्रेषणीयमेवेत्यलमधिकलेखेन विचक्षणोत्कृष्टेषु

मुनिरामाङ्कभूम्यब्द आषाढस्य शुभे दले ।
षष्ठ्यां हि मंगले वारे पत्रमेतदलेखिषम् ॥[1]

इस पते से पत्र भेजना । बनारस लक्ष्मीकुण्ड मुंशी बखतावरसिंहजी
मैनेजर वैदिक यन्त्रालय के द्वारा स्वामी दयानन्द
सरस्वती जी के समीप पहुँचे ॥

इदं वैदिकयन्त्रं स्वाधीनं नवीनस्थापितमस्मा[भि]राय्यैर्वेदादिशास्त्राणां मुद्राऽक्षरसंसिद्धय इति वेद्यम् ॥

[दयानन्द सरस्वती][2]

(मेरठ)

———

१. संवत् १९३७ आषाढ़ सुदी ६ मंगलवार । १३ जुलाई १८८० ।

२. पहले हम ने यह पत्र आर्यभाषा में संख्या ३० के अन्तर्गत छापा था । इस का अंग्रेजी अनुवाद सन् १८८० या ८१ में इङ्गलेण्ड के एथिनियम पत्र में अध्यापक मोनियर विलियम्स की ओर से छपा था । भारत में भी उसी अंग्रेजी के कई अनुवाद समय २ पर प्रकाशित हुये थे । हम ने मूल अंग्रेजी की सहायता से भाषा उल्थे को ठीक बनाया था । पाठक आश्चर्य करेंगे कि पत्र के लिखे जाने की तिथि वाला श्लोक जो हम ने बना के धरा था, उस में और श्री स्वामी जी के रचे मूल श्लोक में एक ही अक्षर का भेद रहा था। श्लोक के तीसरे पाद में श्री स्वामी जी ने "हि" रखा था । उसके स्थान में हमने "च" बनाया था । ईश्वर कृपा से इस पत्र का मूल परोपकारिणी के संग्रह में सुरक्षित रहा । उसी की प्रतिलिपि विलायत गई होगी । दीवान बहादुर हरविलास जी सारडा मन्त्री सभा ने मूल पत्र का चित्र दयानन्दग्रन्थमाला शताब्दी संस्करण संवत् १९८१ में छापा था । उसी से अब यह मूलपत्र संस्कृत में ही छापा गया है ।

[१] **पत्र-सूचना (१८९)** [२४५]

[लाला निर्भयराम फरुखाबाद]

प्रेस सम्बन्धी सामान के विषय में।[1]

---

[१] **पत्र (१९०)** [२४६]

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो!

बड़े आश्चर्य की बात है कि तुमने वहां जाके एक भी पत्र न भेजा। अब जो २ लिखने योग्य हों सब समाचार लिख भेजना। सुना है कि बाबू केशवचन्द्रसेनजी आज कल वहाँ हैं। तुम आनन्द में होगे हम बहुत आनन्द में हैं। एक बात तुमको आवश्यक जान के लिखी जाती है। जो वहां ब्रह्मी ओषधी मिलती हो तो उसको ले सुखा पारसल कर डाक में भेज दो, उसका महसूल वहां दे दिया जाएगा उस पर पता यह लिखो। (हरि पण्डित जी कामदार महाराजे विजयनगराधिपति बनारस भेलूपुरा)। अब छापा का काम चलने लगा है। हम यहां मेरठ में बीस या पच्चीस दिन रहेंगे। जब तुम प्रयाग को आओ तब ब्रह्मी ओषधी बहुत सी लेते आना। जो आज कल न हो तो भादों और आश्विन में बहुत होती है, वहां के मनुष्यों से पूंछ के निश्चय कर लेना, वहाँ रईस उस को जानते होंगे। सब से मेरा नमस्ते कह देना।

दयानन्द सरस्वती

सं० १९३७ मि० आ० शु० ११ रविवार।[2]

---

[१०] **पत्र (१९१)** [२४७]

मुंशी बखतावर सिंह जी आनन्दित रहो।

आप ने जो पुस्तक और पत्र भेजे सब पहुँचे, हिसाब सहित······चिठी भी······यजुर्वेद के पत्रे तो कल वा परसौं तैयार करके भेजता हूं। और ऋग्वेद के पत्रे लिख रहे हैं। तथा यजुर्वेद के भी जितने वैयार होते जायंगे भेजते जायंगे। आपने लिखा कि तीनों अङ्क बराबर निकालें उसमें फिर भी देर लगेगी। इस वास्ते [एक अङ्क] अभी निकाला जाय फिर दोनों साथ निकालना ये [तो हमारी] सलाह है। और तुमरी सलाह············नाथ को दो रुपैये देके पुस्तक पूर्ण [करालो। उन] से कह देना कि शीतलाघाट पर जो पण्डित जीवाराम [टीकारा]म रहते हैं उनके वास्ते मैनपुरी से चिठी भेजी थी सो दी [वा नहीं] नहीं दी हो तो वहाँ जाके उनसे कहना कि स्वामीजी ने तुम से कहा है दोनों जने चले आवो अवश्य। हम मेरठ में हैं। जो उनके पास खर्च न हो तो तुम मेरठ का टिकट दिवादो यहाँ उनका काम है। उनने कहा था कि हम आपके पास आवेंगे, सो क्यों नहीं आये। हमारे पास चले

---

१. इस का संकेत पूर्ण संख्या २४६ के पत्र (पृष्ठ १९९) में है। यह पत्र आषाढ़ सुदी ११ रविवार सं० १९३७ [१८ जुलाई १८८०] को या उस से पूर्व लिखा गया होगा। यु० मी०।

२. आषाढ़ १८ जुलाई सन् १८८०। यह सारा पत्र श्री स्वामी जी के हाथ से लिखा हुआ है। मूल पत्र श्री नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित हैं।

आवें। और गोपाल .... यहां अच्छी तरह से है। इसका जवाब जैसा हो वैसा उनसे निश्चय कर तुम लिखो। और उनसे कहो बहुत रोज पढा, अब कुछ जीवका भी करनी चाहिये। लाला निर्भयराम को हमने लिख दिया है। वे कलकत्ता को चिठी लिखेंगे। तुमको जो चीज चाहती हो वहां से मंगा लेना। परन्तु तुम एसा कि वहां किसी .... र जन व साहब के पास रुपैये भेजकर मंगवा लिया [करो और] भीमसेन रामप्रताप का पता अच्छी तरह जा[नता है .... लिखो वह अच्छी चीज पहुँ .... रुपये निर्भयराम की दुकान से दिवा [दिया क]रेगा ओ बहुत जलदी तुमारा काम कर दिया करेगा। [तुम] बहुत हुशियारी [से] काम करते हो और भूल भी जाते हो। परन्तु आगे को ऐसा न होना चाहिये। क्योंकि विरोधी लोग इस में न जाने क्या क्या कहैंगे। देखो सुन्दरलाल के तीन सौ रुपैये आये थे और तुम ने रसीद अढाई सौ की छापी है। उनने हम को चिठी लिखी है सो अब तुम [अ]गले पन्द्रहवैं अङ्क में तीन सौ का अङ्क लिख कर यह भी लिख देना कि हमने पहले भूल से लिख दिया है। हम भी उनको चिठी भेजदेंगे। और भीमसेन से कहना कि किसी दूसरे पण्डित के पास न्याय दर्शन लगाके पूरा करले, अधूरा न रक्खे। और किसी नौकर को पेशगी मत दिया करो। जो दी हो तो अगले महीने में सम्पूर्ण वा आधी काट लेना। किसी से दबा मत करो। ये काशी के महा लुच्चे हैं। आपने वेदभाष्य छापा [होगा] ही परन्तु मूल से संस्कृत और भाषा के अक्षर .... इस लिये पद और संस्कृत के अ .... ये।

मिती आषाढ़ सुदी ११ रविवार संव[त् १९३७][1]

[2]यहां के समाज की बड़ी उन्नति है। मैं यहां बीस वा [पचीस] दिन तक रहूँगा। हरि पण्डित जी से कहना कि ब्राह्मी ओषधी के लिये हमने नैणीताल को लिखा है।[3] अनुमान है कि आप के पास पहुँच जाय[गी]।[4]

---

[११] पत्र (१९२) [२४८]

मुंशी बखतावर सिंह जी आनन्दित रहो।

कल कुछ पत्रे यजुर्वेद और ऋग्वेदके पहुंचा दिये हैं पहुंचे होंगे। तैयार करते जाते हैं जैसे तैयार होंगे तेसेही पहुंचाते जायंगे। परन्तु तुमने तीन २ अङ्क का निकालना एक ही वखत अकस्मात् प्रारम्भ कर दिया है। जो हमको पहिल कहते तो पत्रे आगे से ही तैयार कर भेज देते। अब भी चार दिन आगे पीछे पौंचा देंगे। काशी में से कोई लेखक जो कि संस्कृत की भाषा बना जाने तो पंद्रह रूपैये माहवारी कर भेज दो। व्याकरण भी पढ़ा हो। विहारी चौबे को पुस्तक न दो। जो वह दस

---

१. १८ जुलाई सन् १८८० मेरठ से।

२. यहां से आगे की तीन पंक्तियां ऋषि ने स्वहस्त से लिखी हैं। हस्ताक्षर तथा बिन्दुओं वाला स्थान फट चुका है। कोष्ठों में हम ने पूर्ति की है।

३. यह नैणीताल का पत्र पूर्ण सं० २४५ (पृष्ठ १८८) पर है।

४. म० मामराज जी ने २४ जुलाई सन् १९४५ को मेरठ निवासी ला० रामशरणदास जी के सहस्रों पत्रों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण जी के साथ खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

रूपैये सैकड़े कमीसन पर ले तो दे दो। परन्तु पचीस रुपैये से ले तो कमीसन देना। कम में नहीं। हां व्रजभूषण दास वाले दस रूपैये पर भी कमीसन लें [तो] उधार भी देदो।

और जगदंबा प्रसाद बरेली के पास अब तक तुमने तीनों पुस्तक नहीं भेजे, क्योंकि उसने हमको परसों चिठी भेजी कि हमारे पास पुस्तक अभी नहीं आये। ऐसा क्यों करते हो कि जिसके दाम आये उसको उसी वखत पुस्तक भेज देना चाहिये। नहीं तो आगे को दाम कैसे आवेंगे कोई भी न भेजेगा। और जीवाराम टीकाराम की क्या खबर है। वे वहां है वा नहीं।

मिती आषाढ़ सुदी १३ मंगलवार संवत् १९३७।[1]

(दयानन्द सरस्वती)[2]

---

[१] पत्र (१९३) [२४९]

ओ३म्

लाला रूपसिंहजी आनन्दित रहो !

तारीख १९ जुलाई को एक पत्र आपका दो टिकट सहित और २३ जुलाई[3] को ६०) रूपैये का मनियाडर हमारे पास आया। इस बात पर जैसा कि हमने आशीर्वाद आर्यसमाज फरुखाबाद को दिया वैसा तुम को भी देते हैं। आप आगे की साल से फरुखाबाद मन्त्री आर्यसमाज कालीचरण रामचरण के पास साठ २ रुपैये हर साल भेजना। ये रुपैये भी दो तीन दिन में फरुखाबाद में उक्त मन्त्री के पास भेजेंगे वहां से अपना हिसाब समझ लिया करो। शुक्रिया अदा करना इसका अर्थ संस्कृत में धन्यवाद देना ऐसा है।

मैं मेरठ में २० दिन तक रहूंगा।

(दयानन्द सरस्वती)

मिति आषाढ सुदी १५ संवत् १९३७।[4]

---

[२] पत्र (१९४) [२५०]

श्रीमदनवद्याभ्यस्तसुविद्यालङ्कारपरिशोभितायै भारतवर्षीयेदानीन्तनस्त्रीजनानां निवारितमूर्खत्वादिकलङ्कदार्ष्टान्तस्वरूपायै सत्त्वसौजन्यार्द्रतासभ्यार्य्यविद्वद्वर्य्यस्वभावान्वितप्रकाशितस्वाभिप्रायलेखायै प्रियवरमनसे श्रीयुतरमायै दयानन्दसरस्वतीस्वामिनः स्वाशिषो भूयासुस्तमाम्।

---

१. २० जुलाई सन् १८८० को मेरठ से बनारस भेजा गया।

२. म० मामराज जी ने ला० रामशरणदास जी के पुराने कागजों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण जी तथा ला० श्यामलाल जी प्रधान आर्यसमाज मेरठ के साथ २३ जुलाई सन् १९४५ को खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. २३ भूल से लिखा गया है। २० या २१ जुलाई चाहिए। यु० मी०।

४. २१ जुलाई १८८०। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। यह पत्र सरदार रूपसिंह जी ने हमें दिया था।

शिवमत्रास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमाशासे। यद्भवत्याः प्रेमास्पदानन्दप्रदं पत्रमागतं तत्समालोक्यातीव सन्तुष्टिं प्राप्तोऽहं पुनरपि श्रीमत्यै यत्किञ्चित्कष्टं दातुं प्रवर्त्ते तत्क्षन्तुमर्हति। महदाश्चर्य्यमेतद्यदानन्दवर्द्धनाय भवतीं प्रति पत्रं प्रेषितं तत्प्रत्युत्तरितमागतं सद्धर्षशोककरं कुतो जातमिति प्रतिभाति नः। कस्य श्रीमत्या आर्जवलेखं दृष्ट्वा सुखं, सनाभ्यस्य मरणं श्रुत्वा दुःखं च न जायेत। परन्त्वेवं जाते सत्यपीदानीमशक्ये सांसर्गिकसंयोगवियोगात्मकजन्ममरणस्वरूपे लोकव्यवहारे भवती शोचितुं नार्हति। श्रीमत्याः कुत्रत्यं जन्म कियदायुः किं किमधीतं श्रुतं च? किं संस्कृतादार्य्यावर्त्तीयभाषाभ्यो भिन्ना काचिदन्यद्देशभाषाभ्यस्तास्ति न वा? क्वास्ति निजं गृहमभिजनश्च मातापितरौ विद्यमानौ नो वा? मृताद् बन्धोरन्ये ज्येष्ठाः कनिष्ठा वा भ्रातरो भगिन्यश्च सन्ति न वा? यो मृतः स स्वतो ज्येष्ठः कनिष्ठो वा? अधुनाऽनघायाः संनिधौ स्वजातीयः पुरुषः स्त्री वा काचिद्वर्त्ततेऽथवैकाकिनी च? अहो कुतोऽस्मदीयं पत्रं काकतालीयन्यायवत्सुखदुःखसंयोगसूचकं जातमिति विस्मयामहे। परन्तु विद्वद्वर्य्यायां भवत्यां शोकस्य लेशोऽपि स्थातुमनर्ह इति निश्चित्य मृडयामः। यदि मार्गव्ययार्था धनापेक्षास्ति तर्हि सद्यो विज्ञाप्यतामियद्धनमत्र प्रेषणीयमिति नात्र शङ्कितुं लज्जितुं योग्या वर्त्ततेऽपूर्वपरिचये कथं धनार्थं लिखेयमिति। यदि स्वसमीपे वर्त्तते तर्हि लेखितुं न योग्यम्। यथा मया पूर्वपत्रे लिखितं तथैवात्र प्राप्तायां श्रीमत्यां लब्धव्यमित्येवानवद्ये कार्य्यमस्तु। यथा भवत्यात्र स्वशुभागमनसूचना द्विविधा कृता तत्राद्यायां प्रतिज्ञायां मासात्पर इति वचसि यदि शक्यमत्रागन्तुं तर्ह्यत्यन्तं वरमिति नियोजनम्। अहमप्यत्र पञ्चविंशतिदिनानि स्थातुमिच्छाम्येतदन्तराले समयेऽत्रागमिष्यति चेत्तर्हि मत्समागमो भविष्यति। पुनरितो यत्र गमिष्यामि तस्यापि सूचना श्रीमतीं प्रति विज्ञापयिष्यामीत्यलमधिकलेखेन विपश्चिद्विचक्षणायाम्।

मुनिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे शुचौ मासे सिते दले।
पौर्णमास्यां बुधे वारे लिखित्वेदं ह्यलङ्कृतम्॥[१]

———

[१२]   पत्र (१९६)   [२५१]

ओ३म्

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

जो हमने ऋग्वेद और यजुर्वेद के पत्रे भेजे थे पहुंचे होंगे। कल और भी पत्रे भेजेंगे। हमने फरूखाबाद को लिख भेजा और कलकत्ते का पत्र भी भेज दिया। परन्तु यह काम उन से होना कठिन है। अन्य किसी भद्र मनुष्य से कराना चाहिये। जो रुपैये हमारे सामने कलकत्ते में भेजे थे उन का हिसाब लिख भेजना। जिने १७) रुपैये दिये थे हमको, वह ठाकर फतेसिंह पहिले के गाहक हैं। उसको भीमसेन भी जानता है। वह ठाकर जाल[म] सिंह का सम्बन्धी है। क्या उसका नाम रजष्टर में नहीं लिखा है। जो मुझ से पूछते हो। निम्नलिखित पुरुषों की रसीद छपा देना कि जिनोंने दो पण्डितों के लिये जितने २ रुपैये दिये हैं। बाबू दुर्गाप्रसाद रईस फरूखाबाद ने ५०० रुपैये अनाथों के पालन के लिये। १०) स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अनाथों के पालन। और ५००) रुपैये वेदभाष्य बनवाने के लिये दिये। २५०) सेठ निर्भयराम रईस फरुखाबाद ने पण्डितों के लिये दिये।

१. सं० १९३७ आषाढ सु० १५। २१ जुलाई १८८०।

१५०) लाला कालीचरण रामचरण रईस फरुखाबाद ने पं० वे० के लिये दिये। २००) लाला जगन्नाथ प्रसाद रईस फरुखाबाद ने पं० वे० के दिये। १००) लाला गणेशराम रईस फरुखाबाद ने पं० वे० के लिये दिये। ५०) लाला गुरुमुखराय रईस फरुखाबाद ने पं० वे० के लिये दिये। ५०) लाला नारायणदास रईस फरुखाबाद ने दिये पं० वे० के लिये दिये। ६०) बाबू रूपसिंह त्रेजरी क्लर्क कोहाट पंजाब ने पं० वे० के लिये दिये। ४०) आर्य्यसमाज दानापुर ने पं० वे० के लिये दिये। २५) आर्य्यसमाज देहरादून ने पं० वे० के लिये दिये। २५) आर्य्यसमाज रुड़की ने पं० वे० के लिये दिये। २५) आर्य्यसमाज सहा[र]नपुर ने दिये। इस में इतना विशेष है कि पण्डितों को रख के वेदभाष्य को बनाने में १००) मावारी हम खर्च किया करेंगे। छः वर्षों तक इस में ५०) रुपैये मावारी देने में सब लोग और ५०) रुपैये देने में अकेला फर्रुखाबाद रहेगा। यह चन्दा छः वर्ष का है। शाय[द] और भी इकट्ठा भया होगा। अगाडी मालूम होगा।[1]

मिती श्रावण वदी १ संवत् १९३७।[2] मेरठ [दयानन्द सरस्वती]

[3]दो पण्डितों को रखने के लिये ६ छः वर्ष पर्यन्त देंगे। प्रति मास १००)रुपैयों के हिसाब से दिया करेंगे। मावारी १००)रुपैया में जितना चन्दा न्यून रहेगा उतना आर्य्यसमाज फरुखाबाद दिया करेगा। और बाकी अन्य सब समाज देंगे। अर्थात् ५०) मावारी छः वर्ष तक अकेला फुरुखा[बा]द आर्य्यसमाज और ५०)रुपैये मावारी अन्य सब समाज देंगे। परन्तु शोक है कि अब तक कोई योग्य पण्डित नहीं मिला है बहुत ठिकानों में लिखा तो है। तुम भी जहां तहां लिखना और वेदभाष्य के टाटिलपेज पर जो विज्ञापन पण्डितों के लिये लिखा है वह अवश्य छाप देना।[3]

[श्री स्वामी जी।[4]

यह भी लिखिये कि यह रुपया एक दफा दे दिया वा वार्षिक देते हैं। सो सब वृत्तान्त सपष्ट करके लिखिये। जो रसीद गडबड छप जावे अच्छा नहीं। इसलिये जो स्पष्ट हो जावे अच्छा है।]

—·—

[१३] पत्र (१९६) [२५२]

मुंशी वखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

टाटाल पेज बादामी पर अच्छा होगा, छाप दो। आज यजुर्वेद और ऋग्वेद के पत्रे शोध कर भेज दिये हैं। तेली की चिठी कोई नहीं आई। ऐसे बीमारों को इनाम देने लगोगे तो कहां पूरा

---

१. इस पत्र की कई बातें, अर्थात् रुपयों का व्योरा मुंशी बखतावरसिंह जी को समझ में नहीं आया। उन्होंने पत्र पर वहां २ चिन्ह कर के स्पष्टीकरणार्थ पत्र श्री स्वामी जी को लौटा दिया। स्वामी जी महाराज ने जैसा ठीक करके पत्र पुनः भेजा वैसा हम ने ऊपर छाप दिया है। तथा अगली पंक्तियां भी श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से उसी पत्र की पीठ पर लिख दीं। वे आगे छापी जाती हैं। २. २२ जुलाई १८८०।

३–३. यह श्री स्वामी जी के अपने हाथ का लेख है। [परन्तु यह लेख श्रावण वदी १ (२२ जुलाई) के अनन्तर का है (देखो टि० १)। इसमें वेदभाष्य के टाइटल पेज पर जिस विज्ञापन के छापने का उल्लेख है, वह पूर्ण संख्या २५१ के पत्र के अन्त में लिखा है।

४. पूर्व पत्र की पीठ पर यह लेख मुन्शी बखतावरसिंह का है। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

पड़ेगा। पंद्रह का अब भेजोगे और सोलह सत्रका फिर, ये बहुत अच्छा किया। ३२ और दो २ पृष्ठ से अधिक मत बढ़ावो। नहीं तो हमारे वेदभाष्य के बनने में हरकत होगी। ये बी नोटिस दे दो वेदभाष्य के टाटल पेज पर[1] कि हम को एक ऐसा पण्डित चाहता, कि जो पाणि[नीय] व्याकरण अर्थात् अष्टाध्यायी, महाभाष्य, पूर्वमीमांसा, न्याय, निरुक्त, निघंटु, पूर्वमीमांसा[2] न्याय, वेदान्त, उपनिषद, छन्दोग्रंथ आदि वेदांगों का पढ़ा हुआ संस्कृत की भाषा व्याकरण की रीति से सुंदर[2] बना सकता हो एक वेद अथवा दो वेद भी पढ़ा हो संस्कृत की शुद्धि कर सके। उसको पचास वा साठ रुपैये माहवारी देंगे। परंतु शीघ्र शुद्ध लिखने वाला हो। यह तुमारे पास काशी में तुम को खबर देदे।

मिती श्रावण वदी २ शु० संवत् १९३७।[3] [दयानन्द सरस्वती]

———

[१४] पत्र (१९७) [२५३]

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

आज पत्रे वेदभाष्य अर्थात् ३०६ से ३२० तक यजुर्वेद के और ३०८ से ३२३ तक ऋग्वेद के तुमारे पास पहुंचाते हैं। एक चिट्ठी अलमोढ़ा से वेदभाष्य के ग्राहक की हमारे पास आई है। तुमारे पास पहुंचाते हैं। पचीस रुपैये मंगा के पीछे पोथी भेजना और उनको उत्तर भी भेज देना कि आपने जो स्वामी जी के पास चिठी भेजी थी उनने हमारे पास भेजी। हम आपको इतलाह देते हैं कि पचीस रुपैये पहुंचा देवें। पुस्तक आप के पास पहुंच जायगी। कल जो उर्दू में हमने चिठी भेजी है[4] उसी के अनुसार कामकरो।

कुजरावाले का जो हाल था उसका जवाब भेज दिया है। अब हाल में कुछ सुनने में नहीं आता है। हमारा शरीर आनन्दित है। आप लोग आनन्दित होंगे। हम मेरठ में शायत् दिन पन्द्रह तक ठहरेंगे।

मिती श्रा० वदी २ श० संवत् १९३७।[5]

[दयानन्द सरस्वती][6]

———

[१] पत्र (१९८) [२५४]

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो।

अब तुमने ८ दिन पीछे चिट्ठी भेजना बन्द क्यों कर दिया। बराबर आठ दिन पीछे चिट्ठी भेजा करो। और यह लिखा करो कि इस सप्ताह में इतनी पुस्तकें छपीं और यह २ काम हुआ। और

१. यह नोटिस (विज्ञापन) यजुर्वेदभाष्य अङ्क १५ के टाइटल पेज ३ पर छपा था। यु० मी०।

२. पूर्वमीमांसा—सुन्द० तक इतना लेख श्री स्वा० जी की अपनी लेखनी से है।

३. २३ जुलाई १८८०, शुक्रवार। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। ४. पूर्ण संख्या २५१ की।

५. २४ जुलाई सन् १८८० को मेरठ से बनारस भेजा गया। शनिवार को श्रा०वदी ३ है। ३ चाहिये।

६. म० मामराज जी ने ता० २३ जुलाई सन् १९४५ को ला० रामशरण दास जी रईस मेरठ वालों के पुराने पत्रों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण जी के साथ खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

अब क्या होता है। आगे सप्ताह में कौन २ काम होने वाला है। और जब २ चिट्ठी लिखा करो मुंशी जी से पूछ देखा करो कि इन ८ दिनों में कितनी पुस्तकें छपीं। और जब २ छप कर तैयार हुआ करें सब गए कर संख्या लिखा करो। और मुन्शीजी तो माहवारी आमदनी विक्री के रुपयों का हिसाब चिट्ठी लिखते ही हैं। तथापि तुम भी वखत २ सब पूंछ लिया करो। और मुन्शीजी से कहना कि तुम को कुछ भी शङ्का न करनी चाहिये। आप इस्तिफा शरकारी नौकरी का दे दीजिए जब तक तुम काम करने वाले हो, जब तक तुम्हारे शरीर में प्राण है और सामर्थ्य है तब तक आनन्द में काम किया करो और पश्चात् भी तुम्हारी सलाह से काम हुआ करेंगे और वसीयतनामा[1] की सभा के सभासद सब आर्य्यसमाज के हैं। किसी प्रकार की हानि उनके लिये न करेंगे। और निश्चय है कि मुंशीजी भी ऐसे नहीं हैं कि कभी धर्मविरुद्ध काम करें। और वसीयतनामे में यह अवकाश रखा है कि चाहे जिसको रजष्टरी जितने अधिकार वा धन देने आदि के लिये मैं करा दूंगा। उसका पूरा करना सभा को अवश्य होगा। और अधिक न्यून अदल बदल वा दूसरा वसीयतनामा करने का अधिकार मैंने अपना पूरा रखा है। चाहे किसी सभासद को निकाल दूँ वा किसी अन्य सभासद को भरती करदूँ। इत्यादि नियम इसी लिये रखे हैं कि जो चाहें हम कर सकते हैं। ये सभासद मुंशीजी के सुहृद् ही हैं। और सब विद्वान और धार्मिक हैं। किसी के लिये अन्याय की वृत्ति नहीं करते तो क्या मुंशी जी के लिये अन्यथा प्रवृत्ति करने को उद्यत हो सकते हैं। कभी नहीं। क्योंकि धार्मिक लोग सदा धर्म प्रिय और अधर्मद्वेषी ही होते हैं। क्या मैं वा वे सभासद मुंशी जी को परोपकार के लिए प्रवृत्त हुए नहीं जानते हैं। इस से यह पत्र मुंशी बखतावरसिंह जी को एकान्त में सुना देना। और इस पत्र को अपने पास रखा चाहें तो दे देना। तुझ को यह पत्र इस लिये लिखा है कि तू भी इस का साक्षी रहै। और यह लेख मैंने अपने हाथ से इस लिए किया है कि यह बात गुप्त रहे और समय पर काम आवे।[2]

ह० दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (१९९) [२५४]

ठाकरदास जी योग नमस्ते!

पत्र आप का संवत् १९३७ आषाढ़ सुदी पञ्चमी[3] पञ्जाबी का लिखा हुआ स्वामी जी के पास पहुंचा। देख कर अभिप्राय जान लिया। उस के उत्तर लिखने के लिए स्वामी जी ने मुझ को आज्ञा दी है इस से आप को मैं लिखता हूं।

बड़े आश्चर्य की बात है कि जो लोग विद्वान नहीं होते, वे ही अन्यथा बातों के लिखने में प्रवृत्त हो कर अपनी हानिमात्र कर बैठते हैं क्योंकि उन को अपनी और पराई बातों की समझ तो

---

१. यह वसीयतनामा [=स्वीकार पत्र] १६ अगस्त सन् १८८० को रजिस्ट्री कराया गया था। उसे हम आगे पूर्ण संख्या २६३ पृष्ठ २१७ पर छाप रहे हैं। यु० मी०।

२. यह पत्र आर्यदर्पण मई सन् १८८६ पृ० ११७-११८ पर छपा। हमने इसे वहीं से लेकर यहां धरा है। प्रकरण से जुलाई १८८० में लिखा गया प्रतीत होता है।

३. १२ जुलाई १८८०। यु० मी०।

होती ही नहीं। इस से अपने आप गढ़ा खोद उस में आप ही गिर पड़ते हैं। तुम्हारे लेख से हम को यह विदित हुआ कि आप किसी विद्या को न पढ़े और न किसी विद्वान् से कभी तुमने संग किया है, नहीं तो स्वामी जी के लेख के अभिप्राय को क्यों न समझ लेते? और अपना लेख अपने अभिप्राय के विरुद्ध क्यों लिखते? देखिये, जब स्वामी जी ने बारहवें समुल्लास में अनेक ठिकानों में यह चाहे अर्थात् जैन लोग चाहे ऐसा कहते हैं लिखा ही था फिर आपने यह क्यों पूछा कि किस शास्त्र ग्रन्थ के अनुसार छापा है? इस लेख से विदित होता है कि आप जिस सम्प्रदाय में हैं जब उसी का हाल ठीक नहीं जानते तो दूसरे जैनियों के सम्प्रदायों की बातों को कैसे जानने में समर्थ हो सकते हैं। और इस से यह भी विदित होता है कि आप और आपका कोई संगी भी संस्कृत और भाषा को नहीं पढ़े हैं। जब स्वामीजी ने यह लिखा है कि जैन लोग ऐसा कहते हैं फिर क्या तुम्हारा लिखना कि किस शास्त्र और ग्रन्थ की यह बात है, मिथ्या नहीं है। और जो तुमने श्लोक लिखे हैं वे ही स्वामीजी के सब लेख में प्रमाणभूत हैं। परन्तु जो तुमने अग्निहोत्र, तीन वेद, त्रिपुण्ड्र भस्म धारण आदि बुद्धि और पुरुषार्थ से हीन मनुष्यों की जीविका, स्वभाव से जगत् की व्यवस्था वर्ण और आश्रमों की क्रिया सब निष्फल हैं लिखा क्या ये बातें तुम्हारा सर्वस्व नीलाम होने में थोड़ा अपराध है। मैं आप से सुहृदता से लिखता हूं कि इस विषय को आप झूठा कभी मत समझना। इस में सब जैन मत वालों की सम्मति ले लीजिए। जैसे कि हम सब आर्यों की तुम्हारे सामने अदालत करने में तन मन धन से निश्चित हैं। क्योंकि तुम जैन लोगों ने परम पवित्र सब सत्य विद्याओं से युक्त, सब मनुष्यों के लिए अत्यन्त हितकारी ईश्वरोक्त वेदों और वेदानुकूल अन्य सच्छास्त्रों की निन्दा और इन परोपकारी पुस्तकों के नाश करने से इतनी हानि की और करनी चाहते हो कि जिसमें सब जैनियों का तन मन और धन लग जावे तो भी नालिश की डिगरी पूरी न होगी। इसलिए तुम सब जैनियों को विज्ञापन देदो कि वह भी सब तुम्हारे सहायक हो के इस मामला को हम लोगों से चला सकें। तुम सब इस में तैयार हो जाओ जैसे कि हम लोग सत्य और असत्य के निश्चय करने में तत्पर हैं। यह अपने मन में बड़ा विचार कर लीजिएगा। हम आर्यों को वैष्णव आदि के समान कभी मत समझ लेना कि जैसे उनके रथ आदि निकालने के विषय को अदालत से जीत लेते हो वैसे हमारे साथ कभी न कर सकोगे। क्योंकि जैसे पाषाण आदिक मूर्तिपूजक तुम हो वैसे वे भी हैं। और हम हैं परमेश्वर पूजक और तुम हो अनीश्वर वादी, अर्थात् स्वतःसिद्ध अनादि ईश्वर को नहीं मानते। इत्यादि हेतुओं से तुम्हारा पराजय हमारे सामने होना किसी प्रकार असम्भव और कठिन नहीं है। इस लिये तुम को नोटिस देते हैं कि तुम आपस में मिलकर इस मालला को चलाओ। और जब तुम्हारी योग्यता हमारे सामने कम दीखती है तो स्वामी जी के सामने तुम्हारी क्या योग्यता हो सकती है? कभी नहीं। देखना तुम्हारे हज़ारों ग्रन्थों से वेदादि सच्छास्त्रों की मिथ्या निन्दा कचहरी में हम सब हाकिमों आदि के सामने ठीक २ सिद्ध कर देंगे। इस में कुछ भी सन्देह मत जानना। जितना तुम्हारा सामर्थ्य हो उतना खर्च हो जाने पर भी आप लोगों को बचना अति कठिन देख पड़ता है। और एक यह बात भी करो कि जैसे हमारे बीच में स्वामी जी बहुत से उत्तम विद्वान् हैं वैसे जो कोई एक तुम्हारे मध्य में सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हो उसको स्वामी जी के सामने खड़ा कीजिए कि जिस से तुम और हमको वैदिक और जैन मत के चर्चा में कुछ आनन्द प्राप्त हो और अन्य मनुष्यों को भी लाभ पहुँचे। हमारे इस लेख को निःसन्देह सत्य और मूल मन्त्र तथा सूत्र के तुल्य

समझना कि इतने ही लिखने से सब कुछ जानियेगा। तुम्हारे सामने इससे अधिक लिखना हमको आवश्यक नहीं किन्तु जब २ जहां २ जैसा प्रकरण आवेगा तब २ वहां वहां वैसा २ ही हम लोग तुम को ठीक २ साक्षात् करा दिया करेंगे। ऐसा निश्चित जानों। जैसे यह पत्र हम लोग वहां गुजरांवाला के आर्यसमाज के द्वारा ही भेजते हैं वैसे आप लोग वहीं के समाज द्वारा ही हमारे पास पत्र भेजा कीजिए।

मिति श्रावण वदी ५. सोमवार संवत् १९३७।'

---

[२९] [२५६]

॥ ओ३म् ॥

॥ विशिष्ट विज्ञापन ॥

॥ सब सज्जनों को ॥

विदित हो कि आर्य्यसमाज और थियोसोफीकल सोसायटी का जैसा सम्बन्ध है वैसा प्रकाशित कर देना मुझको अत्यन्त उचित इसलिये हुआ कि इस विषय में मुझ वा अन्य से बहुत मनुष्य पूछने लगे और इस का ठीक मतलब न जान उलटा निश्चय कर कहने भी लगे कि आर्य्यसमाज थियोसोफीकल सोसायटी की शाखा है। इत्यादि भ्रम की निवृत्ति कर देनी आवश्यक हुई। जो ऐसी २ बातों के प्रसिद्ध रीति से उत्तर न दिये जायं तो बहुत मनुष्यों को अत्यन्त भ्रम बढ़ कर विपरीत फल होने का संभव हो जाय। इसलिये सब आर्य्य और अनार्य्यों को इसका सत्य २ वृत्तान्त विदित करता हूं कि जिससे सत्य [में] दृढ़ता और भ्रम का उच्छेद हो के सब को आनन्द ही सदा बढ़ता जाय॥

बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जो किसी समय मुम्बई आर्य्यसमाज के प्रधान थे उनसे न्यूयार्क नगर एमिरिका की थियोसोफिकल सोसायटी के प्रधान एच०एस० करनेल ओलकाट साहब बहादुर और एच० पी० मेडम ब्लेवस्टिकी आदि से कुछ दिन आगे पत्र द्वारा एक दूसरी सभा के नियम आदि जानके सम्वत् १९३५ चैत्र में मेरे पास भी पत्र न्यूयार्क से आया था कि हम को भी आर्य्यावर्त्तीय प्राचीन वेदोक्त धर्मोपदेश विद्या दान कीजिये। मैंने उसके उत्तर में अत्यन्त प्रसन्नता से लिखा कि मुझसे जितना उपदेश बन सकेगा यथावत् करूंगा। इसके पश्चात् उन्होंने एक डिपलोमा मेरे पास इसलिये भेजा जो थियोसोफिकल सोसायटी आर्य्यावर्तीय आर्य्यसमाज की शाखा करने के विचार का निमित्त था। जब वह डिप्लोमा यहां से फिर वहां गया सभा करके सभासदों को सुनाया, तब बहुत से सभासदों ने इस बात में प्रसन्न होकर इस का स्वीकार किया, और बहुतों ने कहा कि हम ठीक २ जान के पश्चात् इस बात का स्वीकार करेंगे॥

जब वहां ऐसा विरुद्ध पक्ष हुआ तब फिर मेरे पास वहां से पत्र आया कि अब हम क्या करें? इस पर मैंने पत्र लिखा कि यहां आर्य्यावर्त्त में अब तक भी बहुत मनुष्य आर्य्यसमाज के

---

१. पं० लेखरामकृत ऋषि जीवनचरित पृ० ६८५, ६८६। जीवनचरित में पत्र के अन्त में "दयानन्द सरस्वती" लिखा है। वस्तुतः यह पत्र आनन्दी लाल के हस्ताक्षरों से गुजरांवाला भेजा गया था। इस के लिखाने वाले, जैसा पत्र के आरम्भ में लिखा है, श्री स्वामी जी ही थे। दयानन्द मुख चपेटिका में इस के आगे कुछ और भी पंक्तियां हैं और अन्त में आनन्दी लाल जी के अंग्रेज़ी में हस्ताक्षर हैं। २६ जुलाई १८८०।

नियमों को स्वीकार नहीं करते, थोड़े से करते हैं, तो वहां वैसी बात के होने में क्या आश्चर्य्य है। इसलिये जो मनुष्य अपनी प्रसन्नता से आर्य्यसमाज के नियमों को मानें वे वेदमतानुयायी और जो न मानें वे केवल सोसायटी के सभासद रहें, उनका अलग होजाना अच्छा नहीं। इत्यादि विषय लिख के मैंने बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के पास पत्र भेजा और उनको लिखा कि इस पत्र की अंग्रेजी करके शीघ्र वहां भेज दीजिये। परन्तु उन्होंने वह पत्र न्यूयार्क में न भेजा, जब समय पर पत्र का उत्तर वहां न पहुंचा तब जैसा मैंने उत्तर लिखा था वैसा ही वहां किया गया, कि जो वेदों को पवित्र सनातन ईश्वरोक्त मानें वे वैदिकी शाखा में गिने जायं, और वह आर्य्यसमाज की शाखा रहे; परन्तु वह सोसायटी की भी शाखा रही क्योंकि वह सोसायटी की भी एक अंगवत् है। अर्थात् न आर्य्यसमाज थियोसोफिल सोसायटी की शाखा और न थियोसोफिकल सोसायटी आर्य्यसमाज की शाखा है, किन्तु जो वैदिकी शाखा थियोसोफिकल में है जिसमें एच्० एस्० करनेल ओलकाट साहब बहादुर और एच्० पी० मेडन ब्लेवस्टकी आदि सभासद हैं वह आर्य्यसमाज और सोसायटी की शाखा है। ऐसा सब सज्जनों को जानना उचित है। इससे विपरीत समझना किसी को योग्य नहीं। देखिये यह बड़े आश्चर्य्य की बात हुई है कि जिस समय मुम्बई में आर्य्यसमाज का स्थापन हुआ उसी समय न्यूयार्क में थियोसोफिकल सोसायटी का आरम्भ हुआ। जैसे आर्य्यसमाज के [उद्देश्य] नियम लिखके माने गये वैसे ही [उद्देश्य] नियम थियोसोफिकल सोसायटी के निश्चित हुए, और जैसा उत्तर मैंने तीसरे पत्र में लिख के वैदिकी शाखा और सोसायटी के लिये भेजा था उसके पहुंचने के पूर्व ही न्यूयार्क में वैसा ही कार्य किया गया। क्या ये सब कार्य्य ईश्वरीय नियम के अनुसार नहीं हैं? क्या ऐसे कार्य्य अल्पज्ञ जीव के सामर्थ्य से बाहर नहीं हैं? कि जैसे कार्य्य पृथिवी के ऊपर जिस समय में हों वैसे ही भूमि के तले [पाताल] अर्थात् एमरिका में उसी समय हो जाय। ये बड़ी अद्भुत बातें जिसकी सत्ता से हुई हैं अर्थात् पांच हज़ार वर्षों के पश्चात् अर्य्यावर्त्तीय धार्मिक मनुष्यों और [पातालस्थ] अर्थात् एमरीका के निवासी मनुष्यों का वेदोक्त सनातन सुपरीक्षित धर्म्य व्यवहारों में बान्धवीय प्रेम प्रकट किया है, उस सर्वशक्तिमान् परमात्मा को प्रार्थना पुरस्सर कोटि कोटि धन्यवाद देता हूँ; कि हे सर्वशक्तिमन्! सर्वव्यापक! दयालो! न्यायकारिन्! परमात्मन् जैसा आप ने कृपा से यह कृत्य किया है वैसे भूगोलस्थ सब धर्मात्मा विद्वान मनुष्यों को उसी वेदोक्त सत्य मार्ग में सुस्थिर शीघ्र कीजिये कि जिससे परस्पर विरोध छूट, मित्रता होके सब मनुष्य एक दूसरे की हानि करने से पृथक् होके अन्योन्य का उपकार सदा किया करें। वैसे ही हे प्रियवर मनुष्यो आप लोग भी उसी परब्रह्म की प्रार्थना पूर्वक पुरुषार्थ कीजिये, कि जिससे हम सब लोग एक दूसरे को दुःखों से सदा छुड़ाते और आनन्द से युक्त रहें, और दूसरों को भी सर्वसुखों से युक्त करें। हे बन्धुवर्गो जैसा आनन्द मनुष्यों को छः हज़ार वर्षों के पूर्व था वैसा समय हम लोग कब देखेंगे। धन्य हैं वे मनुष्य कि जो जैसा अपना हित चाहते और अहित नहीं चाहते थे और वैसा ही वर्त्तमान सब के साथ सदा करते थे। क्या यह छोटी बात है। इस लिखने में मेरा अभिप्राय यह है कि जो २ बातें सब मनुष्यों के सामने सत्य हैं, जिनके मिथ्या होने के लिये कोई भी मनुष्य साक्षी न दे सकता है उन उन बातों को धर्म, उन से विरुद्ध बातों को अधर्म जान मान के भूगोलस्थ मनुष्यों को धर्म की बातों का ग्रहण करना, और अधर्म की बातों का छोड़ देना, क्या कठिन और असम्भव है? जिस लिये ऐसा ही

वर्तमान छः हजार वर्षों से पूर्व था इसी लिये कोई दूसरा मत प्रचरित नहीं होता था, जैसे अज्ञान से आज कल मनुष्य एक २ अपनी २ कौम और एक २ अपने २ मजहब की बढ़ती और अन्य सब की हानि करने में प्रवृत्त हो रहे हैं वैसे वैदिक मत के प्रचार समय में न था; किन्तु सब मनुष्य सब की बढ़ती करने में प्रवर्तमान हो कर किसी की हानि करना कभी न चाहते थे, सब को अपने समान समझ दुःखी किसी को न करते, और सब को सुखी किया करते थे, वैसा ही अब भी होना अवश्य चाहिये। क्या जब सब धार्मिक विद्वान् मनुष्य पुरुषार्थ से निःशंकित सत्य बातों में एक सम्मति और मिथ्या बातों में एक विमति कर एक मत किया चाहें तो असम्भव और कठिन है ? कभी नहीं। किन्तु सम्भव और अति सुगम है। जितना अविद्वानों के विरोध और मेल से मनुष्यों को हानि और लाभ नहीं होता, उतने से हजार गुणा हानि और लाभ विद्वानों के विरोध और मेल से होता है। इस लिये सब सज्जन विद्वान् मनुष्यों को अत्यन्त उचित है कि शीघ्र विरुद्ध मतों को छोड़ एक अविरुद्ध मत का ग्रहण कर परस्पर आनन्दित हों। यही वेदादि शास्त्र प्राचीन सब ऋषि मुनि और मेरा भी सिद्धान्त और निश्चय है।

बुद्धिमानों के सामने अधिक लिखना आवश्यक नहीं क्योंकि वे थोड़े ही लेख में सब कुछ जान लेते हैं॥ ओ३म्॥

मिती श्रावण वदी ५, सोमवार सम्वत् १९३७॥[1]

हस्ताक्षर—स्वामी दयानन्द सरस्वती

---

[१५] पत्र (२००) [२५७]

मुन्शी बखता[वर सिंह जी आ]नन्दित रहो

तुमने जो पारसल भेजा हमारे पास पहुँचा। जो तुमने लिखा कि पंद्रहमा अङ्क एक और सोहलवां सत्रहवां इकट्ठा निकालेंगे सो बहुत अच्छी बात है। चारों वर्षों के पृथक् २ चन्दा का विज्ञापन टाटल पेज पर छाप दो[2] कि जिनने जितना दिया हो उतना छोड़ बाकि सब दाम भेज दें। और आर्यसमाज-थियोसोफीकल सुसायटी का विज्ञापन पत्र[3] लिख कर हम भेजते हैं। सो छपवा कर सब आर्यसमाजों में दश दश और सुसायटीओं और करनेल ओलकाट साहेब को दो चार भिजवा दो और हमारे पास भी दश पांच भेज दो। और एक कार्ड हमारे पास आया है। तुमारे पास भेजते हैं चिट्ठी के साथ। एक नई बात हुई है कि मुन्शी इन्द्रमणि जी को मुसलमानों ने बड़ा दिक्क किया है। यह बात किसी से कहने योग्य नहीं है। आगे इसका हम कुछ विचार करते हैं। सो आप के पास में विदित करेंगे। वेद भाष्य के[पत्रे भी तैयार] हुए हैं। दो चार दिन में भेजेंगे।

१४) रुपैये चौधरी देवीसिंह जी अ..........वाले जिले मेरठ के और—

१२) रुपैये बाबू गणेशी लाल वा विहारी लाल जी मेरठ वालों के और—

---

१. २६ जुलाई १८८०। यह विज्ञापन आर्य दर्पण मई १८८० के टाइल पेज पर तथा यजुर्वेद भाष्य अङ्क १६, १७ (सम्मिलित) के टाइटल पेज ३, ४ पर छपा था। यजुर्वेदभाष्य में 'सोमवार पद नहीं है। यु० मी०।

२. यह विज्ञापन यजुर्वेदभाष्य अंक १६, १७ (सम्मिलित) के टाइटल पेज ४ पर छपा है।

३. देखो ऊपर (पूर्ण संख्या २५७) वाला विशिष्ट विज्ञापन।

२१ रुपैये ठाकर शेरसिंह जी कर्णवास वाले के हमारे पास आये।
इनका नाम वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपा देना।

मिति श्रावण वदी ६ मंगलवार संवत् १९३७।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[६] पत्र (२०१) [२५८]

ता० १४ जुलाई[2] सन् १८८०

श्रीयुत प्रियवर एच एस् करनेल ओलकाट साहेब तथा एच पी व्लेवस्तिकीजी आनन्दित रहो। नमस्ते। अब मेरा शरीर नीरोग हो के स्वस्थानन्द में है। आशा है कि आप लोग भी आनन्द में होंगे। सुना था कि आप लोग लंका अर्थात् सिलौन की यात्रा के लिए गए थे। वहां क्या २ आनन्द की बातें हुईं और कुशल क्षेम आए ही होंगे। मैं इस समय मेरठ में ठहरा हूँ। एक मास भर रहूंगा। जैसा दृढ़ता से वेदों को परम पवित्र सनातन ईश्वरोक्त सब का हितकारी आपने अपने नागरी पत्र में लिख कर काशी को मेरे पास भेजा था उसको देख मैं और समस्त आर्य्य विद्वान् लोग बहुत प्रसन्न हुए। सत्य है कि (अङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति) जो धर्मात्मा विद्वान पुरुष हैं वे जिस धर्म की बात को ग्रहण करते हैं उसको कभी नहीं छोड़ते। अब मैं जो थियोसोफीकल सुसायटी में वैदिकी शाखा है वह आर्य्य समाज और थियोसोफीकल सुसायटी की भी शाखा है। न आर्य्यसयाज थियोसोफीकल सुसायटी की शाखा और न थियोसोफीकल सुसायटी आर्य्यसमाज की शाखा है; किन्तु जो इन दो समाजों के धर्म के सम्बन्धार्थ प्रेम का निमित्त वैदिकी शाखा है, वही परस्पर सम्बन्ध का हेतु है। इत्यादि बातों की प्रसिद्धि जैसी आर्य्यसमाजों में मैं शीघ्र करूंगा वैसी प्रसिद्धि थियोसोफीकल सुसायटी में भी आप अवश्य करेंगे। इस बात का गुप्त रहना ठीक नहीं। क्योंकि आगे आर्य्यसमाज वैदिकी शाखा और थियोसोफीकल सुसायटी के सभासदों को, जैसा पूर्वोक्त सम्बन्ध है वैसा ही जानना, मानना, कहना और प्रसिद्धि करना सर्वदा उचित होगा, अन्यथा नहीं। ऐसी प्रसिद्धि हुए पर किसी को कुछ भ्रम न रहकर सुनिश्चय से सब को आनन्द होता जायगा। और जो मैंने सिनट साहेब से कहा था वह ठीक है। क्योंकि मैं इन तमाशे की बातों को देखना दिखलाना उचित नहीं समझता। चाहे वे हाथ की चालाकी से हों चाहे योग की रीति से हों। क्योंकि योग के किए कराये बिना किसी को भी योग का महत्त्व वा इसमें सत्य प्रेम कभी नहीं हो सकता, वरण सन्देह और आश्चर्य में पड़कर उसी तमाशे दिखलाने वाले की परीक्षा और सब सुधार की बातों को छोड़ तमाशे देखने को सब दिन चाहते हैं, और उसके साधन करना स्वीकार नहीं करते। जैसे सिनट[3] साहेब को मैंने न दिखलाया और न दिखलाना चाहता हूँ, चाहे वे राजी रहें

१. २७ जुलाई सन् १८८० को मेरठ से बनारस भेजा गया। म० मामराज जी ने मेरठ से जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदासजी के पुराने पत्रों में से खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. १४ जुलाई को लिखा गया होगा, परन्तु श्रावण वदी ६—२७ जुलाई १८८० को अंग्रेजी में अनुवाद करा के भेजा गया होगा। देखो पत्र के अन्त में श्रावण की तिथि।

३. पायोनियर पत्र इलाहाबाद के सम्पादक। इन के नाम के पत्र की सूचना, पूर्ण सं० २२३ देखें।

चाहे नाराज़ हों क्योंकि जो मैं इस में प्रवृत्त होऊं तो सब मूर्ख और पण्डित मुझ से यही कहेंगे कि हम को भी कुछ योग के आश्चर्य काम दिखलाइये, जैसा उसको आपने दिखलाया, ऐसी संसार की तमाशे की लीला मेरे साथ भी लग जाती जैसी मेडम एच पी ब्लेवस्तिकी के पीछे लगी है। अब जो इनकी विद्या धर्मात्मता की बातें हैं कि जिन से मनुष्यों के आत्मा पवित्र हो आनन्द को प्राप्त हो सकते हैं उनका पूछना और ग्रहण करने से दूर रहते हैं। किन्तु जो कोई आता है मेडम साहेब आप हमको भी कुछ तमाशा दिखलाइये। इत्यादि कारणों से इन बातों में प्रवृत्त नहीं करता न कराता हूँ। किन्तु कोई चाहे तो उसको योग रीति सिखला सकता हूँ कि जिस[1] से वह स्वयं योगाभ्यास कर सिद्धियों को देख लेवे। इससे उत्तम बात दूसरी कोई भी नहीं। मैं बहुत प्रसन्नता से आप लोगों को लिखता हूँ कि जो आपने ईसाई आदि आधुनिक मत छोड़, परम पवित्र सनातन ईश्वरोक्त वेदमत का स्वीकार कर, इस के प्रचार में तन मन और धन भी लगाते हो। और उस बात से अति प्रसन्नता मुझको हुई कि जो आपने यह लिखा कि कभी आप भी वेदों को छोड़ दें तो भी हम लोग उन को न छोड़ेगें। क्या यह बात छोटी है? यह परमात्मा की परम कृपा का फल है कि जिसने हम और आप लोगों को अपने वेदोक्त मार्ग में निश्चय पूर्वक प्रवृत्त किए। उसको कोटि कोटि धन्यवाद देना भी थोड़े हैं। जैसी उसने हम और आप लोगों पर करुणा की है, वैसी ही कृपा सब पर शीघ्र करे कि जिससे सब लोग सत्य मत में चलें और झूठ मतों को छोड़ देवें। कि जैसा अपने आत्मा अत्यन्त आनन्दित हैं वैसे सब के आत्मा हों। और एक आनन्द की बात की सूचना करता हूँ कि जिस को सुन आप लोग बहुत आनन्दित होंगे। सो यह है कि एक वसीयतनामा १२ अठारह पुरुष अर्थात् जिन में दो अर्थात् एक आप और दूसरी ब्लेवस्तिकी और शोलह पुरुष आर्य्यावर्त्तीय आर्य्यसमाज के प्रतिष्ठित पुरुष हैं। इन आप सब लोगों के नाम पर पत्र और नियम लिख रजिष्टरी कराके आप और सब लोगों के पास शीघ्र पत्र भेजूँगा[2] कि जिससे पश्चात् किसी प्रकार की गड़बड़ न होकर मेरे सर्वस्व पदार्थ परोपकार में आप लोग लगाया करें और मेरी प्रतिनिधि यह सभा समझी जावेगी।

इस लिए उस पत्र को आप लोग बहुत अच्छी प्रकार रखियेगा कि वह पत्र आगे बड़े २ कामों में आवेगा। किमधिलेखेन प्रियवरविद्वद्विचक्षणेषु।[3]

---

१. इस पत्र का इतना अंश हम ने पहले परोपकारी पत्र से छापा था। "जिस" से आगे कुछ शब्द परोपकारी के सम्पादक ने अपनी ओर से बना कर धरे थे। महात्मा मुंशीराम जी ने पत्र व्यवहार में "स से वह स्वयं" से लेकर पाठ छापा था। प्रतीत होता है कि परोपकारी में छापने वालों को मूलपत्र का पृष्ठ ३ नहीं मिला होगा। और म० मुंशीराम जी को पहले दो पृष्ठ नहीं मिले। वहीं से हमने भी पहले इस एक पत्र को दो पत्रों के रूप में छापा था। अब संगति मिला कर पढ़ने से ज्ञात हुआ कि यह एक ही पत्र है। इसी लिए अब यह यथार्थ रूप में छापा गया है।

२. यह वसीयतनामा १६ अगस्त सन् १८८० को रजिस्टरी कराया था। हम उसे पूर्ण सं० २६४, पृष्ठ २१७ पर छाप रहे हैं।

३. "यह पत्र पैंसिल से लिखा हुआ है और इस पर पृष्ठ संख्या ३ तीन है। जिससे विदित होता है कि इसके पूर्व दो पृष्ठ और लिखे गये थे, परन्तु उन दोनों पृष्ठों का पता नहीं है। यद्यपि पत्र के आदि, मध्य व अन्त में कर्नल आलकट साहब का नाम लिखा हुआ नहीं है परन्तु सारे पत्र का आशय विचारने से यही बोध होता है कि यह पत्र श्री स्वामी जी महाराज की ओर से आलकट साहब को लिखा गया था।

सं० १९३७ मि० श्रावण वदी ६ मंगलवार।[१] ता० १४ जुलाई[२] सन् १८८०।[३]

(दयानन्द सरस्वती)

———

[९]　　　　पत्र (२०२)　　　　[२५९]

Meerut,
27th juey 1880.[४]

My Dear Babu Mulrajji, M. A.

It is a long time since I have heard nothing from you, still I hope you are quite well and wish you to give me, in future, occasional, if not often, intimation of your destination, &c.

I am at Meerut for a fortnight last and intend staying here for about 20 days more.

I have a mind to address our Government on a subject which is unquestionably a matter of public good, now wished for by hundreds of men, who have attended to my lectures, &c. It is that Government may be moved to pass a regulation by which children of widows be entitled to claim and obtain their rights of the property, both movable and immovable, of their parents, and that any one trying to injure the widow in any way be made liable to punishment by Government.

The results which I anticipate from the above are, that lives of thousands of children will be saved, miscarriages shall be minimised or not all, *Niyog* or remarriage of widows will thus be introduced at last &c. &c. &c. *(sic)* But this is a work not to be dealt with by men of ordinary abilities. I, therefore, leave the matter to you and ask you to frame regulations worthy of the subject, giving everything requisite in detail. I hope you will agree with me and do the needful. I have given you only the hints, you have to think upon and frame what is called a law, complete in all respects, having sections, clause, &c., for every part of the point in view. This draft regulation may be sent to me as soon as

---

१. "इस पंक्ति से बहुत नीचे बाईं ओर "स्वामी जी" पेंसिल से लिखा हुआ है जो बतलाता है कि श्री स्वामी जी महाराज की ओर से जो पत्र कर्नल आलकट साहब को लिखा गया उस की यह कापी है।"

२. २७ जुलाई १८८०। १४ जुलाई के विषय में पृष्ठ २०६ टि० २ देखो।

३. पृष्ठ २१० की टि० सं० ३ तथा पृष्ठ २११ की टि० सं० १; ये दोनों टिप्पणियां "पत्र व्यवहार" में म० मुंशीराम जी की हैं।

४. श्रावण कृष्ण ६ मंगल सं० १९३७।

ready in a complete state for submission of Government under my, signature, but the sooner it is done so much the better.

There is a piece of *bad* news too which requires your advice, and considerable efforts which it may be worthy of. I think you know well Munshi Indra Man of Muradabad. He is now president of the Arya Samaj there, and a personage of unrivalled excellence. No, he is universally known and it is useless to enter into detail as regards him. The Mohammadans are his great enemies and have always been playing tricks to injure him but in vain. They have succeeded this time to mortify him to the very soul, and that injury is not to him alone, but for all the Aryas.

History of the case stands thus that a newspaper, called *jam-i-jamshed* of Muradabad, published an article on 16th May last stating that Munshi Indra Man, enemy of Islam, had published some books in these days against *Mohammadanism* which will give rise to a general disturbance in the Mohammadan community, and that he will lose his life by similar acts one day or other. It is not known how the Magistrate and Collector of the city allowed him this liberty. Now *I solicit* the Government to order destruction of the books he has published and abolition of the press.

The said newspaper was laid before Government (I mean H. E. the Lieutenant-Governor) and enquiry made through District authorities, which unfortunately resulted on 24th instant in the infliction of a fine of Rs. 500 on Munshi Indra Man and the confiscation of all his books without any due enquiry into the matter. As the matter is of great concern not only to *Munshi Indra Man,* but to our country and to all of us, I, therefore ask your advice in the matter how to proceed. In the meantime, arrangements will be made to prefer an appeal in the case. Early answer with full directions to go in this critical matter is requested.

I have yesterday received a letter from a gentleman of Germany accepting instructions of our countrymen in any act they like. *(sic)* This is a good chance indeed, and if you like to allow your brother to try his fortune, it is all that I want. Any other Aryan worthy of the task, will also be welcome. Full particulars as to expense, voyage, &c., &c., will be communicated to you at leisure time.

All is well here and hope the same so be with you.

Hoping to hear from you soon.

I am,

Yours, & c.

(Sd.) Daya Nand Saraswati.

P. S.—After all, I again ask you to interest yourself in this matter and expedite your advice & c.

[भाषानुवाद]

मेरठ

२७ जुलाई १८८०[1]

मेरे प्यारे बाबू मूलराज जी एम० ए०

चिर काल से आप का कोई पत्र नहीं आया, फिर भी मैं आशा करता हूँ कि आप सर्वथा अच्छे हैं और चाहता हूँ कि भविष्य में यदि अधिक नहीं तो कभी २ अपने स्थानादि की सूचना देंगे।

मैं पिछले पक्ष से मेरठ में हूँ और लगभग २० दिन और यहाँ ठहरने की इच्छा है।

मेरा विचार अपनी सरकार को एक ऐसे विषय पर लिखने का है जो निस्सन्देह जनता का हितकारी है जिसे अब मेरे व्याख्यानों आदि के सुनने वाले सैंकड़ों पुरुष चाहते हैं। वह यह है कि सरकार को एक ऐसा नियम पास करने के लिए कहना चाहिये जिस से कि विधवाओं की संतान अपने पिताओं की स्थावर और जंगम सम्पत्ति के अधिकार को प्राप्त करे और उसे ले सके। और जो कोई विधवा को किसी प्रकार भी कष्ट दे वह सरकार का दण्ड भागी बने।

पूर्वोक्त बात से मैं इन फलों का विचार करता हूँ कि हज़ारों बालकों के जीवन बचाये जांयगे गर्भपातन बन्द या कम हो जायगा, इस प्रकार नियोग या विधवाओं का पुनर्विवाह अन्ततः प्रचलित होगा···। परन्तु इस काम को साधारण योग्यता के पुरुष नहीं कर सकते, इस लिये मैं यह विषय आप पर छोड़ता हूं और चाहता हूं कि आप यथायोग्य नियम बनायें जिन में सब आवश्यक बातें विस्तार से आजायें। मैं आशा करता हूं कि आप मेरे से सहमत होंगे और अवश्य काम करेंगे। मैंने आप को संकेत मात्र दिये हैं, आपने ही विचार कर नियम बनाना है, जो सब प्रकार से पूर्ण हो और जिस में प्रकृत बात के प्रत्येक भाग के लिए दफा आदि बनें। जब यह मसौदा पूर्णतया तय्यार हो जाये तो मुझे भेज दें। मैं इसे अपने हस्ताक्षर सहित सरकार के पास भेजूंगा, और यह जितना शीघ्र हो उतना ही अच्छा है।

एक अशुभ समाचार भी है, जिस में आप की सम्मति और यथायोग्य बहुत परिश्रम की आवश्यकता है। मेरा विचार है आप मुन्शी इन्द्रमन मुरादाबादी को भले प्रकार जानते हैं। वह अब वहां की आर्य्यसमाज के प्रधान हैं, और अद्वितीय योग्यता के पुरुष हैं। नहीं, वह सर्वत्र प्रसिद्ध हैं अतः उन के विषय में अधिक कहना निरर्थक है। मुसलमान उन के बड़े शत्रु हैं और सदा निष्फल ही उन्हें कष्ट देने के उपाय घड़ते रहे हैं, अब वे उन्हें अत्यन्त बांध लेने में सफल हुए हैं, और यह हानि उन्हीं की नहीं, प्रत्युत सब आर्य्यों के लिये है।

---

१. श्रावण कृष्ण ६ मंगलवार सं० १९३७।

मुकदमे का वृत्तान्त ऐसे है कि मुरादाबाद के एक पत्र जामेजमशेद ने गत १६ मई को एक लेख इस विषय का प्रकाशित किया है "कि इसलाम के शत्रु मुन्शी इन्द्रमन ने इन दिनों महम्मदी मत के विरुद्ध कुछ ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं। इन से महम्मदी श्रेणी में एक सामान्य विप्लव हो जायगा, और वह एक न एक दिन अपने जीवन को खो बैठेगा। यह ज्ञात नहीं होता कि नगर के मजिस्ट्रेट और कलेक्टर ने उन्हें कैसे यह स्वतन्त्रता दे दी। अब मैं सरकार से प्रार्थना करता हूं कि वे उस के प्रकाशित ग्रन्थों को नष्ट कर दे और प्रेस को तोड़ दे"।

पूर्वोक्त पत्र सरकार (मेरा अभिप्राय लाट साहब से है) के सामने रखा गया और जिला अफसरों द्वारा पड़ताल हुई। उस का दुर्दैव से २४ तारीख़ को यह फल निकला कि विना किसी उचित पड़ताल के **मुन्शी इन्द्रमन पर ५०० रुपये दण्ड हुआ और उन के सारे ग्रन्थ जब्त हुए।** क्योंकि यह बात केवल मुन्शी इन्द्रमन के लिये ही बड़ी नहीं, प्रत्युत हमारे देश और हम सब के लिये भी है, इसलिये मैं आप की सम्मति चाहता हूं कि इस विषय में क्या किया जाय ? इस अन्तर में मुकदमे की अपील दायर किये जाने का प्रबन्ध किया जायगा। इस सूक्ष्म विषय में पूर्ण-निर्देशयुक्त उत्तर शीघ्र चाहिए।

मुझे कल **जर्मनी से एक महाशय[१] का पत्र आया है।** उस ने स्वीकार किया है कि वह हमारे देशीय लोगों को किसी भी विषय में शिक्षा देगा। यह निश्चय ही अच्छा अवसर है, और यदि आप अपने भ्राता को दैविक परीक्षा में डालना चाहते हैं, तो बस मैं यही चाहता हूं। कोई अन्य आर्य्य सज्जन जो इस काम के योग्य हैं बड़ी प्रसन्नता से लिये जायेंगे। व्यय, यात्रादि का पूर्ण व्योरा अवकाश मिलने पर आप को लिखा जायगा।

यहां सब आनन्द है और आप का आनन्द चाहते हैं।

आशा है आप शीघ्र उत्तर देंगे।

मैं हूं आप का

ह० दयानन्द सरस्वती

पुनः—अन्ततः मैं पुनः कहता हूं कि आप इस विषय में ध्यान दें और अपनी सम्मति आदि से सूचित करें।

———

[१६] पत्र (२०३) [२६०]

मुन्शी बखतावर सिह जी आनन्दित रहो।

पत्र आपके बहुत से आये। वेदभाष्य का पुस्तक भी पहुंचा। हिसाब तुमने नहीं भेजा। सो पिछले महीने [के] आर्यदर्पण का और अब का भेजो। मेला चांदापुर का जैसा हमने कहा था कि उर्दू और नागरी पृथक् २ छापो सो क्यों नहीं छापा। तुमारे लेख से हमको कुछ संदेह होता है। क्या तुमने अपने नाम से छापने का विचार किया है। हमारी तो आज्ञा थी नहीं। अभी तो बहुत खर्च

१. प्रो०जी वाईज एलबर्ट्स् स्ट्रीट बेंडन जर्मनी के साथ श्री स्वामीजी महाराजका पत्रव्यवहार भारतीयों को कलाकौशल सिखाने के विषय में हुआ था। प्रो०जी० वाईज के ६ पत्र मास्टर लक्ष्मणजी द्वारा सम्पादित उर्दू जीवन चरित के परिशिष्ट में छपे हैं। सम्भव है। यहां उन्हीं के किसी पत्र की ओर यह संकेत हो। यु० मी०।

है। कुछ ठहर जाओ पीछे छापना। ये दो फरमे [के] पत्रे वेदभाष्य के दो दिन पीछे हम भेजते हैं। और वर्ष के अन्त में यह छाप दिया करो कि जिस २ का जितना २ बाकी हो वे भेज देवें। और यह भी छाप दो सतरहवें अंक के अन्त में कि जिसका रूपैया आजतक नहीं आया है उसके पास अठारहवां अंक नहीं आवेगा। और लेने के लिये जैसा होगा वैसा उपाय किया जायगा।

मिती श्रावण वदी ३० गुरु० संवत् १९३७।[1]

हम कैई वखत लिख चुके। आप समझते क्यों नहीं। शायत् घबरा के देखते होंगे। अनाथ के पालन अर्थात् लावारस के लिये वे पांच सौ रूपैये बाबू दुर्गाप्रसाद जी ने दिये हैं। १०) रु० हमने। हम ये बात तीन वखत लिख चुके हैं।[2]

दयानन्द सरस्वती
मेरठ

———

[१७] पत्र (२०४) [२६१]

ओम्

मुंशी बखतावरसिंहजी आनन्दित रहो!

वेदभाष्य के ग्राहक पण्डित पुरुषोत्तमदास निवासी दिल्ली, घासीराम का कूचा, मकान वट्टामल नारिये के में—इनका १२) रूपैये बावत वेदभाष्य के हमारे पास जमा हुए, मिती भाद्रपद कृष्ण[3] प्रतिपदा १, शनिवार को, यहां का नम्बर ६११। भूमिका का पुस्तक उनके पास है। यजुर्वेद, ऋग्वेदों के अंक भेज देना। और उनसे चौथे वर्ष का दाम लिख कर मंगा लेना। शायत् नंबर ६१० ठाकर बलवंत सिंह जिला बुलन्दशहर परगणे शिकारपुर ग्राम चांदोख वाले के २५) बावत वेदभाष्य के हमारे पास जमा हुए। इसका हाल पिछले पत्र में लिख चुके हैं। आपने अपने रजस्टर में जमा कर लिया होगा। १०) रूपैये चौवे गोपीनाथ जी शिमले वाले के बावत धर्मदाय के हमारे पास आये हैं। वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपा देना। यह भी छपवा देना कि हाल में स्वामी जी मेरठ में हैं। इतना ही और नहीं। आर्य्यदर्पण में यह भी छाप देना कि रामाबाई के दो व्याख्यान मेरठ में बहुत ही अच्छे हुए।[4] सब लोगों ने सुनके प्रशंसा की। आशा है कि स्त्री लोगों में उपदेश करेंगी तो बड़ी उन्नति की बात है। इसका हाल आगे लिखा जायगा। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिति श्रावण सुदी ३ सोमवार संवत् १९३७।[5] [दयानन्द सरस्वती][2]

———

१. ५ अगस्त सन् १८८०। गुरुवार को श्रावण वदी १४ है।

२. ता० २४ जुलाई सन् १९४५ को म० मामराज जी ने मेरठ-निवासी ला० रामशरणदास तथा उनके पुत्र ला० बनारसीदास जी रईस कोर्ट वालों के सहस्रों पत्रों में से खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. पत्र श्रावण सुदी ३ सोमवार को लिखा गया है, उस में भाद्रपद कृष्ण प्रतिपदा का उल्लेख नहीं हो सकता। अतः 'श्रावण शुक्ल प्रतिपद' पाठ चाहिये, उस दिन शनिवार भी था। यु० मी०।

४. रमाबाई के सम्बन्ध में श्रावण शु० १३ सं० १९३७ (=१८ अगस्त १८८०), भाद्र सुदी ४ सं० १९३७ (=८ सित० १८८०) तथा भाद्र सुदी ८ सं० १९३७ (=१२ सित० १८८०) के अगले पत्र भी देखें। यु० मी०।

५. ९ अगस्त सन् १८८०।

[१०] पत्र (२०५) [२६२]

लाला मूलराजजी आनन्दित रहो !

मुन्शी इन्द्रमन सम्बन्धी जो पत्र हम ने उर्दू में भेजा है उसका अंग्रेज़ी में अनुवाद होना है। जो पत्र जर्मनी से आए हैं[1] वह आप के देखने के लिए ला० आनन्दीलाल द्वारा भेज दिए हैं। कृपया हमें बताना कि क्या उत्तर दिया जाय ? मेरा विचार है कुछ पुरुष कला कौशल सीखने के लिए जर्मनी भेज दिये जायें। परन्तु यदि यहीं आर्य्यावर्त में ऐसा सिखाने वाले पुरुष मिल जायें तो बाहर जर्मनी को आदमी भेजने की कोई आवश्यकता नहीं ।

यहां मुंशी इन्द्रमन के लिए ३००) रुपये चन्दा हो गया है। इस विषय में किसी निश्चित परिणाम पर पहुँचने के लिए हमने आप को सब आवश्यक पत्र भेज दिये हैं । कृपया बहुत सोच विचार के पश्चात् अपील के हेतु तय्यार करें, क्योंकि इसे बहुत बड़े पुरुषों के पास भेजना है । इस अपील के मुकद्दमे सम्बन्धी खर्च के लिये १, ५०० रुपये पंजाब से चन्दा करना है और १,५०० रुपये दूसरे प्रान्तों से। यह अच्छा है कि पंजाब से १, ५०० रुपये एकत्र करने का आप प्रबन्ध करें।

जो पत्र हमने आपत्काल के धर्म्म नियोग सम्बन्धी लिखवाया था, मैं ने शोक से जाना है कि लेखक वह अभिप्राय नहीं प्रकट कर सका जो मैं आप को जताना चाहता था, और इस लिये आप इसे न समझ सके ।

आप का संकेत नियम के सम्बन्ध में कि यह पुनर्विवाह को बताता है और नियोग को नहीं, इस के लिये मैंने अब एक कानूनी मसौदा[2] एक विधवा की दुःखित अवस्था को दूर करने के लिये बनाया है। मैं वही एक या दो दिन में आप को आवश्यक शुद्धियों के लिये भेज दूँगा १. इस का प्रयोजन नियोग होगा। २. विधवा की सन्तान मृत पति की सम्पत्ति की दायभागी होगी। ३. उन्हें हरामी या जाति से बाहर न समझा जाय। ४. विधवा की जाति के लोग उसे किसी प्रकार तंग न करें। ५. कानून भी उसे दुःख न दे। ऐसे नियम के पास होने से गर्भ पातन बन्द हो जायगा, और सैकड़ों बालकों के जीवन बच जांयगे, और आज कल की तरह किसी के दायभाग में आई सम्पत्ति या जागीर, अथवा कुल की वृद्धि बंद वा नष्ट न होगी, क्योंकि उस अवस्था में नियोगज सन्तान विवाह से उत्पन्न होने वालों के समान अधिकार रखेगी, उस में कोई भी भेद न होगा। चाहे नियम जनता के सामने किया जाता है या और रूप से, यह एक ही है। मसौदा पूर्वोक्त नियमानुसार होगा। जब हम आ को फिर इसी विषय पर लिखें, तो आप को ऐसे ही समझना होगा।

श्रावण सुदी ४ सं० १९३७।[3] ह० दयानन्द सरस्वती

———

१. देखो पृष्ठ २१४ टिप्पणी १ । यु० मी० । २. यह हम पूर्ण सं० २६८ पृष्ठ २२४ पर छाप रहे हैं।

३. यह और अगले ४ मूलपत्र हमें नहीं मिल सके। ला० मूलराजजी ने कहा था कि उन्हें चूहे काट गये हैं। हम ने अंग्रेजी से इनका अनुवाद दिया है। अंग्रेजी न देने का प्रयोजन यह है कि वस्तुतः ये पत्र आर्य्यभाषा में थे।

१० अगस्त १८८० मेरठ। वैदिक मैगजीन, गुजरांवाला, अक्टूबर–दिसम्बर सन् १९०८ पृ० २४६ से अनूदित।

[२]　　　　कार्ड (२०६)　　　　[२६३]

[ठाकुर] शेरसिंह जी आनन्दित रहो।

[पत्र] आप का आया वर्त्तमान विदित हुआ। लेखक तो हम को चाहिये। विहारी को यहां भेज दो। जो वह हमारा सब काम कर सकेगा आपने पास रखलेंगे। अथवा समाज के योग्य होगा समाज में रखदेंगे। २१) रूपैये जो तुम दे गये थे उनमें से २०) की रसीद तो तुमारे पास पहुंच गई है। और एक रूपैया लिखने में भूल गये हैं। उसकी यही रसीद समझो। हमने अपने रजस्टर में २१) ही रूपैये जमा किये हैं।

मिती श्रावण सुदी ६ संवत १९३७।[1] मु० (मेरठ)

पं० भीमसेन शर्मा—

नमस्ते आपके पास स्वामी जी की रसीद भेजता हूं। बाहर मुद्रा की जगह २१) की रसीद छाप दो। इस को मुझे वापिस दो। आगे को ऐसी भूल न करो।[2]

[दयानन्द सरस्वती][3]

———

[प्रथम]स्वीकारपत्र

[१]　　　　[२६४]

ओ३म्

(१) मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती निम्नलिखित नियमानुसार वक्ष्यमाण अष्टादश सज्जन आर्यपुरुषों की सभा को—वस्त्र, पुस्तक, धन और यंत्रालय आदि अपने सर्वस्व का अधिकार देता हूं। और उस को परोपकार और सत्कार्य में लगाने के लिये अधिष्ठाता करके यह पत्र लिखे देता हूं कि समय पर कार्यकारी हो। जो यह एक सभा जिस का नाम परोपकारिणी सभा है उस के निम्नलिखित अष्टादश सज्जन सभासद हैं। और उन में से इस सभा के प्रधान लाला मूलराज एम० ए० एक्स्ट्रा असिस्टैन्ट कमिश्नर—प्रधान आर्यसमाज लाहौर। और मंत्री लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्यसमाज मेरठ हैं।

---

१. १२ अगस्त सन् १८८०। तिथि और हस्ताक्षर के मध्य के रिक्त स्थान पर का लेख उसी कार्ड पर पं० भीमसेन के नाम ठा० शेरसिंह ने लिखा है। यहां श्रावण कृष्ण १३ सं० १६३६ (१३ जुलाई १८८२) का पत्र भी देखें।

२. कार्ड पर पता इस प्रकार श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है—ठाकुर शेरसिंह कर्णवास परगणे डिभाई (जिले बुलन्दशहर)। मेरठ की मुहर में १३ अगस्त है और बुलन्दशर की मुहर में १४ अगस्त छपा है।

३. म० मामराज जी ने जुलाई सन् १६४५ में मेरठ निवासी लाला रामशरणदास जी के पत्रों में से खोजा। जो उनके पास वैदिक यंत्रालय बनारस से दूसरे पत्रों के साथ आया था। मूल कार्ड हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

नाम सभासद		निवास स्थान
१—लाला मूलराज एम० ए० एक्स्ट्रा असिस्टैन्ट कमिश्नर लाहौर	...	लुधियाना
२—पंडित सुन्दरलाल इन्स्पैक्टर डिपार्टमैंट इलाहाबाद	...	आगरा
३—राजा जैकृष्णदास सी० एस० आई० डिप्टी कलक्टर	...	मुरादाबाद
४—मुन्शी इन्द्रमणि प्रधान आर्यसमाज मुराबाद	...	"
५—बाबू दुर्गाप्रशाद कोषाध्यक्ष आर्यसमाज फर्रुखाबाद	...	फर्रुखाबाद
६—लाला जगन्नाथप्रसाद फर्रुखाबाद	...	"
७—सेठ निर्भयराम प्रधान आर्यसमाज फर्रुखाबाद	...	विसाऊ(राजपू०)
८—लाला कालीचरण रामचरण मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद	...	फर्रुखाबाद
९—लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्यसमाज मेरठ	...	मेरठ
१०—बाबू छेदीलाल गुमाश्ता कमसरयट मेरठ	...	कानपुर
११—लाला साईंदास मन्त्री आर्यसमाज लाहौर	...	लाहौर
१२—लाला डाक्टर बिहारीलाल असिस्टैंट सिविल सरजन	...	"
१३—बाबू माधोलाल मन्त्री आर्यसमाज दानापुर	...	दानापुर
१४—लाला पण्डित गोपालराव हरिदेशमुख प्रधान आर्यसमाज बम्बई		पूना
१५—लाला जज महादेव गोविन्द रानाडे	...	"
१६—एस० एच० कर्नल आलकाट साहब बहादुर प्रधान थियोसोफीकल सोसायटी अमरीका	...	अमरीका
१७—एच० पी० मेडम ब्लेवट्स्की मन्त्री थियोसोफीकल सोसायटी अमरीका	...	"
१८—पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा प्रोफेसर संस्कृत यूनिवर्सिटी औक्सफोर्ड लण्डन	...	बंबई

(१) उक्त सभा जैसे कि वर्तमानकाल में सभा के नियमानुसार व आपत्काल में मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की नियम [से] यथावत् रक्षा करके सर्व हितकारी कार्यों में लगाती है, वैसे मेरे (पश्चात्) अर्थात् मेरी मृत्यु से पीछे भी लगाया करें।

प्रथम—वेद और वेदाङ्ग वा सत्य शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उन की व्याख्या करने कराने, पढ़ने पढ़ाने, सुनने सुनाने, छापने छपवाने आदि में।

द्वितीय—वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा में अर्थात् उपदेशक मंडली नियत करके देश देशान्तर वा द्वीप द्वीपान्तर में भेजकर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में।

तृतीय—आर्य्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण पोषण और शिक्षा में व्यय करे और करावे।

(२) जैसे मेरी विद्यमानता में यह सभा सब प्रबन्ध करती है वैसे मेरे पश्चात् भी तीसरे वा छठे महीने किसी सभासद् को वैदिक यन्त्रालय का हिसाब किताब समझने और पड़तालने के लिए भेजा करे। और वह सभासद् जाकर समस्त आय व्यय और संचय आदि की जाँच पड़ताल कर और उन के तले अपने हस्ताक्षर लिख दे, और उस विषय का एक एक पत्र प्रति सभासद् के पास भेजे। और जो उसके प्रबन्ध में कुछ हानि लाभ देखे उस की सूचना भी अपने परामर्श सहित प्रत्येक सभासद् के पास लिख भेजे। पश्चात् प्रत्येक सभासद् को उचित है कि अपनी अपनी सम्मति प्रधान के पास भेजदे और प्रधान सब की सम्मति से यथोचित प्रबन्ध करे और कोई सभासद् इस विषय में आलस्य अथवा अन्यथा व्यवहार न करे।

(३) इस सभा को उचित है किन्तु आवश्यक है कि जैसा यह परम धर्म और परमार्थ का कार्य है उस को वैसे ही उत्साह पुरुषार्थ गम्भीरता और उदारता से करे।

(४) मेरे पीछे उक्त अष्टादश आर्यजनों की सभा सर्वथा मेरे स्थानापन्न समझी जाय, अर्थात् जो अधिकार मुझे अपने सर्वस्व का है वही अधिकार सभा को है और रहे। यदि उक्त सभासदों में से कोई इन नियमों से विरुद्ध स्वार्थ के वश होकर वा कोई अन्य जन अपना अधिकार जमावे तो वह सर्वथा मिथ्या समझा जाये।

(५) जैसे इस सभा को अपने सामर्थ्य के अनुसार वर्तमान समय में मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा और उन्नति का अधिकार है, वैसे ही मेरे मृतक शरीर का भी अधिकार है अर्थात् जब मेरा देह छूटे तो न उस को गाड़े, न जल में बहावें, न जङ्गल में फेंकने दें केवल चन्दन की चिता बनावें। और जो यह सम्भव न हो तो दो मन चन्दन, चार मन घी, पांच सेर कर्पूर, ढाई सेर अगर तगर और दश मन काष्ठ लेकर वेदानुकूल जैसे कि संस्कारविधि में लिखा है वेदी बनाकर तदुक्त वेद मन्त्रों से होम करके भस्म करें। इस से भिन्न तथा कुछ भी वेदविरुद्ध क्रिया न करें। और जो सभा-जन उपस्थित न हों तो जो कोई समय पर उपस्थित हो वही पूर्वोक्त क्रिया करदे। और जितना धन उस में लगे उतना सभा से ले लें और सभा उस को दे दे।

(६) अपनी विद्यमानता में मैं और मेरे पश्चात् यह सभा चाहे जिस सभासद को पृथक करके उसका प्रतिनिधि किसी अन्य योग्य सामाजिक आर्य पुरुष को नियत कर सकती है परन्तु [कोई सभासद सभा से तब तक पृथक् न किया जाय, जब तक उस के कार्य में अन्यथा व्यवहार] न पाया जाये।

(७) मेरे सदृश यह सभा सदैव इस स्वीकार पत्र की व्याख्या वा उसके नियम और प्रतिज्ञाओं के पालने वा किसी सभासद् के पृथक् और उस के स्थान में अन्य सभासद् के नियत करने वा मेरे विपत् और आपत्काल के निवारण करने के उपाय और यत्न में वह उद्योग करे, जो समस्त सभासदों की सम्मति से निश्चय और निर्णय पाया वा पावे। और जो सम्मति में परस्पर विरोध हो तो बहु पक्षानुसार प्रबन्ध करे और प्रधान की सम्मति को सदैव द्विगुण जाने।

(८) किसी समय भी यह सभा तीन से अधिक सभासदों को अपराध की परीक्षा करके पृथक् न कर सके, जब तक पहिले तीन के प्रतिनिधि नियत न करले।

(९) यदि सभा में से कोई पुरुष मर जाये वा पूर्वोक्त नियमों और वेदोक्त धर्म को त्याग कर विरुद्ध चलने लगे, तो इस सभा के प्रधान को उचित है कि सब सभासदों की सम्मति से पृथक करके

उस के स्थान में किसी अन्य योग्य वेदोक्त धर्मयुक्त आर्यपुरुष को नियत कर दे, परन्तु जब तक नित्य कार्य के अनन्तर नवीन कार्य का आरम्भ न हो।

(१०) इस सभा को सर्वथा प्रबन्ध करने और नवीन युक्ति निकालने का अधिकार है। परन्तु जो सभा को अपने परामर्श और विचार पर पूरा २ निश्चय और विश्वास न हो तो पत्र द्वारा समय नियत करके सम्पूर्ण आर्यसमाजों से सम्मति ले ले और बहु पक्षानुसार उचित प्रबन्ध कर ले।

(११) प्रबन्ध न्यूनाधिक करना वा स्वीकार वा अस्वीकार करना वा किसी सभासद को पृथक् वा नियत करना वा आय व्यय और संचय का जांच पड़ताल करना आदि लाभ हानि सब सभासदों को वार्षिक वा षाण्मासिक पत्र द्वारा प्रधान छपवा कर विदित करदे।

(१२) इस स्वीकार पत्र सम्बन्धी कोई झगड़ा टंटा सामयिक राज्याधिकारियों की कचहड़ी में निवेदन न किया जाय। यह सभा अपने आप न्यायव्यवस्था करले। परन्तु जो अपनी सामर्थ्य से बाहर हो तो राज्यगृह में निवेदन करके अपना कार्य सिद्ध करले।

(१३) यदि मैं अपने जीते जी किसी योग्य आर्यजन को पारितोषिक अर्थात् पैंशन देना चाहूं और उसकी लिखित पढ़त कराकर रजिस्ट्री करादूँ तो सभा को उचित है कि उसको मानै और दे।

(१४) विशेष लाभ, उन्नति, परोपकार और सर्वहितकारी कार्य के वश मुझे और मेरे पीछे सभा को पूर्वोक्त नियमों के न्यूनाधिक करने का सर्वथा सदैव अधिकार है, वैसे ही किया करे।

हस्ताक्षर दयानन्दसरस्वती ब खत शास्त्री[1]

गवाह—मुन्नालाल खलफ लाला किशनसहाय साकिन मेरठ बकलम खुद उर्दू।

गवाह—मुन्शीसिंह वल्द वंशीधर साकिन मेरठ अंग्रेजी

गवाह—सुजानसिंह वल्द रामसुखदास कौम सरावगी साकिन मेरठ ब खत-हिन्दी।

यह वसीयत नामा है। १६ अगस्त १८८०[2] ई० द० नागरी वसीयतनाम हाज़ा, यह कागज़ सादा है।

Presented for registration in the office of the Sub-Registrar of Meerut on Monday the 16th August 1880 between the hours of 3 and 4 P.M

(Sd.) MUKAND LAL, ह० दयानन्द सरस्वती
Sub-Registrar.

Execution admitted by Swami Dayanand Saraswati who is personally known to the registering officer.

16th August 1880.
(Sd.) MUKAND LAL, ह० दयानन्द सरस्वती[3]
Sub-Registrar.

---

१. इस स्वीकार पत्र (वसीयत नामे) के लिये पूर्ण सं० २५४ (पृष्ठ २०४) तथा २५८ (पृष्ठ २१०) के पत्र भी देखें। यु० मी०। २. मिति श्रावण सुदी ११ सोमवार संवत् १९३७। मेरठ शहर।

३. इस स्वीकार पत्र की प्रतिलिपि के लिए ता० १६।५।४५ को १।) का स्टाम्प लेकर बाबू हरवन्श सिंह वकील मन्त्री आर्यसमाज मेरठ ने दफतर रजिस्ट्री में पेश किया। नकल ता० ७ जून १९४५ को मिली। उसे म० मामराजजी ने बाबू श्यामलाल अग्रवाल प्रधान आर्यसमाज से ता० २२ जुलाई १९४५ को प्राप्त किया देखो दफतर रजिस्ट्री मेरठ शहर में तितम्मा न० ५ सफे ४० जिल्द–अलिफ-रजिस्टर न० ३ [सन् १८८०] में।

[१८] पत्र (२०७) [२६५]

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो![1]

१६ अगस्त का लिखा पत्र तुम्हारा आया। वर्त्तमान विदित हुआ। जिन तीन के पास सत्यार्थप्रकाश भेजने को लिखा था भेज दिये। और कल इन दोनों के पास भेजेंगे। एक २ पाकट पर =)॥ अढ़ाई २ आने के टिक[ट] डाक महसूल के लगे हैं।

जो संस्कृतवाक्यप्रबोध पर पुस्तक छपाया है सो बहुत ठिकानों में उनका लेख अशुद्ध है। और कै एक ठिकानों में संस्कृ० में अशुद्ध भी छपा है। इस अशुद्धि के कारण तीन हैं। एक शीघ्र बनना, मेरा चित्त स्वस्थ न होना। दूसरा भीमसेन के आधीन शोधने का होना और मेरा न देखना न प्रूफ को शोधना। तीसरा छापेखाने में उस समय कोई भी कम्पोजीटर बुद्धिमान न होना, लैंपों की न्यूनता होनी॥ इसके उत्तर में जो २ उनकी सच्ची बात है सो २ शोधक और छापा का दोष रहेगा। इसके खंडन पर भीमसेन का नाम मत लिखना किन्तु पंडित ज्वालादत्त के नाम से छापना।[2] इस पर आगेके आर्य्यदर्पण में छापने के लिये पं० ज्वा० भी लिखेगा। भीमसेन भी लिखो परन्तु उसका नाम उस पर छपवाने से उसके पढ़ने में वहां के लोग बहुत विरोध करेंगे।

मोहनलाल विष्णुलाल आदि का हिसाब वहीं जो मुंशी समर्थदान से बही दी थी उसमें और भूमिका तथा वेदभाष्य के टायटिल पेज और ग्राहकों के रजष्टर में हैं। देखके भेज दो। हमने सब रजष्टर अन्य सत्यार्थ आदि पुस्तकों के भी वहीं रखे हैं। फिर हम से हिसाब उनका कैसे मांगते हो। देख कर भेज दो। यहां हमारे पास सिवाय एक रजष्ट[र] के दूसरा कागजात कुछ भी नहीं है। नवीन हाल ये हैं। एक मुंशी जी का दूसरा मेरे ठहरने का भी ठिकाना मेरठ का ही नोटिस छापना। तीसरा आजकल रमाबाई यहां कलकत्ते से आके ठहरी है। आज उसका व्याख्यान समाज में स्त्रियों के कर्त्तव्याकर्त्तव्य विषय में है, दूसरा आगामी शनि को भी होगा। यह संस्कृत पढ़ी है। बहुत अच्छा संस्कृत भाषण भी करती है। इसका विशेष आगे लिखेंगे। चौथा जो मैं कह आया था कि जो धन आवे वह वहाँ न रखना चाहिये किन्तु जिसका नाम फुरुखाबाद से लिख भेजा था उसी की दुकान में जमा रक्खा करो, अपने पास मत रक्खो। पांचवां असरफियों का हिसाब लिख भेजना। छःठा वसीयत-नामा रजष्टरी करा लिया है। जब तहसील की कचहरी से नकल मिलेगी तब वहां भी एक नकल भेजेंगे छापेखाने रख लेना। सातवां यह जो तुमने लिखा कि दुकान में ४००) रुपैये रह गये कलकत्ते चले गये। इस के लिखने का क्या मतलब है। तुम्हारे पास मासिक खरचे से आमदनी अधिक होती है। उसमें कलकत्ते का भी मावारी हिसाब में खरच आ जाता है। फिर वे दुकान के रुपैये सिवाय २००) के किस लिये उठाये। आठवां जो आपने लिखा था वह सब क्षमा किया गया। नवमा वेदभाष्य का प्रूफ और छापना संस्कृतवाक्यप्रबोध के तुल्य न हो जाय। दशवां मैं यहां मेरठ में १५ दिनों से कम न रहूंगा। हम लोग सब आनन्द में हैं। आप लोग भी आनन्द होंगे। कल परसों और भी पत्रे दोनों वेदों के भेजेंगे। सब से हमारा नमस्ते कहना। तेली आदि के मासिक बढ़ाने के लिये जब १६वां और

---

१. यह सारा पत्र ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. यही खण्डन अगली संख्या [पूर्ण संख्या २६६] पर मुद्रित किया गया है।

१७ वां अङ्क छपके आवेंगे। १४वें अङ्क से लेके १७ अङ्क तक जो काशी में छपे हैं देखके जिसकी जैसी योग्यता होगी वैसा बढ़ाया जायगा। और १४वें अङ्क से ले १७ वें अङ्क तक दोनों वेदों के अङ्क भेजके आगे बराबर फिरोजपुर आर्यसमाज के नाम प्रति मास भेजा करो। इस समाज में क्यों नहीं पहुँचा। क्या यह आपकी भूल है वा डाक वालों की गड़बड़ है। यह अच्छा होगा कि जब २ डाक की गड़बड़ हो तब २ पोष्ट इन्स्पेक्टर को लिख के जवाब लेना। नहीं बहुत गड़बड़ करेंगे। शमस्तु।

मि० श्रा० शु० १३ बुध सं० १९३७।[1] [दयानन्द सरस्वती]

---

[१] लेख [२६६]

पुस्तक 'अबोधनिवारण' की अशुद्धियां

१, येन शरीराच्छ्रमो न क्रियते स नैव शरीरसुखमवाप्नोति। पृ० ६ पं० २०[2] ॥

यहां पण्डित अम्बिकादत्त जी लिखते हैं कि (शरीरात्) इस पद में पञ्चमी विभक्ति अशुद्ध है किन्तु (शरीरेण) ऐसा चाहिये। सो यह सन्देह कारक-व्यवस्था को ठीक २ नहीं विचारने से हुआ है। देखो श्रम कहते हैं पुरुषार्थ करने को। उसका कर्त्ता जीवात्मा और शरीर आश्रय रहता है। क्योंकि **चेष्टेन्द्रियार्थाश्रयः शरीरम्।**[3] चेष्टा अर्थात क्रिया का जो आश्रय है उस को शरीर कहते हैं। सो यहां **पञ्चमी विधाने ल्यब्लोपे कर्मण्युपसंख्यानम् । अ० २ । ३ । २८ ॥** इस वार्तिक से (आश्रित्य इस ल्यबन्त क्रिया के लोप में पञ्चमी विभक्ति हुई है। देखो ऐसा वाक्यार्थ होगा। **येन पुरुषेण शरीरमाश्रित्य श्रमो न क्रियते**—इत्यादि। जो कहो कि ऐसा अर्थ भाषा में क्यों न किया तो संस्कृत के एक वाक्य का व्याख्यान भाषा में कई प्रकार से कर सकते हैं इस में कुछ विवाद नहीं है। परन्तु यहां तो प्रयोजन यही है कि भाषा सुगम और थोड़ी हो ऐसा उल्था करना चाहिये! अब पण्डित जी के कहने से तो **प्रासादात्प्रेक्षते** इत्यादि महाभाष्यकार के प्रयोगों में भी पञ्चमी विभक्ति नहीं होनी चाहिए। और भी पण्डित जी क्या लिखते हैं कि **विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्**[4] भला इसका यहां क्या प्रसंग था। सो जब स्वामी जी के मुख्य अभिप्राय को पण्डित जी न समझे तो जो सूत्र सामने आया लिख बैठे। भला शरीर शब्द को कोई थोड़ा विद्या वाला भी गुणवाचक कह सकता है कि जिस से गुणवाची मान के पञ्चमी विभक्ति हो जावे। और कारक विषय में ऐसा भी नियम है कि— **कारकं चेद्विजानीयाद्यां यां मन्येत् सा भवेत**[5]। अर्थात् यह शब्द क्रिया के किस अंश को सिद्ध करता है ऐसे क्रिया साधक कारक को जान के जिस २ विभक्ति से वह अर्थ प्रतीत हो सके वह २ विभक्ति हो सकती है। इन गूढ़ बातों को समझना सब का काम नहीं है॥ १॥

२, चक्रवर्तिशब्दस्य कः पदार्थः । १० । ९ ।

यहां पं० जी लिखते हैं कि चक्रवर्त्ति शब्द का क्या अर्थ है इसकी संस्कृत यही होगी। इन

१, १८ अगस्त १८८०; २. यह पृष्ठ और पंक्ति संख्या संस्कृतवाक्यप्रबोध प्रथम संस्करण (फाल्गुण सं० १९३६) के अनुसार हैं। यु० मी०।

३. न्यायदर्शन १।१।११॥ ४. अष्टा० २।३।२५॥ ५. महाभाष्य १।४।५१॥

को भाषा का भी बोध है जैसा विदित हो गया। भला संस्कृत शब्द को स्त्रीलिंग पण्डित जी ने किस व्याकरण से किया। यह संस्कृत प्राचीन ऋषि मुनियों के अनुकूल है, इसमें कुछ दोष नहीं। देखो महाभाष्य में लिखा है कि **अथ सिद्धशब्दस्य कः पदार्थः।** आह्निक १। इसका क्या यह अर्थ नहीं है कि सिद्ध शब्द का क्या अर्थ है। बड़े आश्चर्य की बात है कि प्राचीन ग्रन्थों को बिना देखे दोष देने लगते हैं। अब पं० जी का लगाया दोष कुछ स्वामी जी को ही लगा हो सो नहीं किन्तु इन्हों ने तो सब ऋषि मुनियों को दोष लगा दिया और **सापेक्षमसमर्थं भवीति।** यह दोष यहां कभी नहीं आता क्योंकि यहाँ एक देश के साथ अन्वय नहीं है। और इसी प्रकार **सभाशब्दस्य कः पदार्थः।** इसको शुद्ध समझ लेना ॥ २ ॥

३. अस्मिन् समये तु मम सामर्थ्यं नास्ति षण्मासानन्तरं दास्यामि।[1] १८। ८।

यहां षण्मास शब्द में पण्डित जी को सन्देह हुआ है कि यहां **द्विगोः**[2] इस सूत्र से ङीप् होके षण्मासी शुद्ध होता है। इस भ्रम का मूल यही है कि उनको व्याकरण के सब सूत्र विदित नहीं हैं। पं० जी के कथनानुसार यदि स्वामी जी का लेख अशुद्ध भी माना जावे तो फिर पाणिनि मुनि का सूत्र भी अशुद्ध मानना चाहिये। **सू० षण्मासाण्यच्च।** अ० ५। १। ८३॥ यहाँ पण्डित जी के मतानुसार **षण्मास्योण्यच्च**—इस प्रकार का सूत्र होना चाहिये। अब देखिये इस पाणिनीय सूत्र को यदि पं० जी जानते होते तो स्वामी जी के लेख को मिथ्या दोष क्यों लगाते और छोटे २ बालक कि जो अष्टाध्यायी के सूत्र भी घोखते हैं वे भी जानते हैं कि यह सूत्र ऐसा है। इस प्रकार के बहुत से प्रयोग व्याकरण आदि शिष्ट जनों के ग्रन्थों में आते हैं तो क्या सब अशुद्ध है। अब रहा कि ङीप् क्यों नहीं होता तो **पात्रादिभ्यः प्रतिशेधः।**[3] यह वार्त्तिक इसीलिये है। पात्रादि आकृतिगण है। इसका परिगणन कहीं नहीं किया कि इतने ही पात्रादि शब्द हैं। महाभाष्यकार ने तो इस वार्तिक पर उदाहरणमात्र दिया है। अब इसी प्रकार 'द्विवर्षानन्तरम्' इसको भी शुद्ध समझ लेना चाहिये। पाणिनि जी महाराज ने अपने सूत्र में षण्मास शब्द को पढ़ा है। इससे यह भी उनका उपदेश प्रसिद्ध विदित होता है कि षण्मास आदि शब्दों में ङीप् कदापि नहीं होता और कोई किया चाहे तो अशुद्ध ही है ॥ ३ ॥[4]

एक पण्डित[5]

———

१. महा० २।१।१॥　　२. अष्टा० ४।१।२१॥　　३. महा० २।४।१७॥

४. आर्यदर्पण मई १८८० पृ० १२० पर छपा। यह अंक अगस्त के अन्त या सितंबर के आरंभ में छपा होगा। देखो श्रावण शु० १३ सं० १९३७ (१८ अगस्त १८८०) का पत्र, पूर्ण संख्या २६५ पृष्ठ २२१।

५. इस उत्तर में श्री स्वामी जी की ही अनुमति थी। देखो पूर्ण संख्या २६५ पृष्ठ २२१ का पत्र।

[२] पत्र (२०८) [२६७]

मुंशी इन्द्रमनजी आनन्दित रहो।[1]

आप के दो तीन पत्र आये हाल मालूम हुआ। पञ्जाब के अढ़ाई सौ या तीन सौ रुपया आप के पास शायद पहुंचे होंगे। आज हम यहां के सभासदों से दर्याफ्त करेंगे कि रुपया भेजे या नहीं। अगर न भेजे होंगे तो हम भिजवाते हैं। चार दिन हुए कि उसी वक्त हम ने उनसे कह दिया था कि रुपया भेज दो। अढ़ाई सौ रुपया वहां हैं और १००) रुपया लाला श्यामलाल के और पञ्जाब और फरुखाबाद से भी आते हैं सब मिलकर सात सौ रुपया इकट्ठे होंगे। खूब होश्यारी से काम करना।

मिति भाद्रपद कृष्ण ६ गुरुवार संवत् १९३७, स्थान मेरठ।[2]

दयानन्द सरस्वती

———

[१] [२६८]

नियोग का मसव्विदा[3]

मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती निहायत अदब से उस एजाज़ और ताज़ीम कानूने शादी के तसलीम करने के बाद कि जिसका तसलीम करना हम सब पर फर्ज़ है, निस्बत एक्ट नम्बर १५ सन ५६ ई० (कानून दरबारा शादी बेवगान की, कि जिसकी यह मन्शा है कि हिन्दू बेवा के विवाह करने के बारे किसी तरह से कानूनन् मुमानिअत न हो और जो औलाद कि दूसरे विवाह से पैदा हो वह हरामी मुत्सव्वर न होकर तकरीबन् मालिक हो सके, और जो बाज़ हिन्दू अपने ईमा से इस रसमोरिवाज विवाह सानी को खिलाफ़ रसमोरिवाज साबक़ के जारी करना मनजूर करें, उनको अदम तामील कानूनी की पाबन्दी से जिससे वह शाकी है रिहा किया जावे) अपनी आदिल और क़दरदान गवर्नमेन्ट के हजूर में चन्द बवाइस जरुरी गुज़ारिश करना चाहता हूं और चूंकि रिआया की फ़रयादरसी गवर्नमेण्ट से और गवर्नमेन्ट की दादबख्शी रिआया पर एक ऐसा फर्ज़ लाज़िम मलज़ूम है कि जैसा मां बाप का बच्चों पर, या बच्चों का अपने मां बाप पर । लिहाज़ा बावजूद मलहूज रखने तमामतर एजाज़ और आदाब क़ानून मज़कूर हसबज़ैल इलतमास करता हूं, कि अगरचे एक्ट मज़कूर का असली मनशा सरीह इन्साफ और मसलिहत आमा कायिम करना और हिन्दुओं के असली और इन्साफी कानून को बमुकाबला जायिज़ रस्मो रिवाज बे बुनियाद के तरजीह देता है और उस की तासीर से बेवगान हनूद को झूंठे रस्मोरिवाज की पाबन्दी से बचा कर आदिल गवर्नमैण्ट ने कानूनी हक़ उन का बहाल फरमाया है । लिहाज़ा इस हक़पसन्दी गवर्नमैन्ट आलीजाह का तहे दिल से शुकरिया अदा किया जाता है मगर अफ़सोस है, कि उन हिन्दू साहिबों ने जो मुहर्रक उसकारे खैर के हुए थे इस मसला के मतालब और तासीरात और क़ाइद की तौज़ीह में मुग़ालता खाया । इस लिए ऐक्ट मज़कूर के नफ़ाद से ग़रज मकसूद हासिल न होसकी और न पूरे २ क़ाइद उस की बाबत

---

१. ला० जगन्नाथदास की पुस्तक मुं० इन्द्रमन का इल्तमास और स्वामी दयानन्द का संन्यास, पृ० १६ पर उद्धृत।

२. २६ अगस्त १८८०।

३. इस के विषय में मूलराज के नाम लिखे पूर्ण संख्या २५६, २६२ पत्र भी देखो।

मिन्ज़ाव्त हुए। बल्कि एक गलत लफ़्ज़ विवाह बेवा हनूद के मुस्तअमल होने से कि गालिबन सहीह नाम यानी नियोग से मुराद है। बाज़ असली मक़ासद और उसकी तमामतर तासीर बिलअक्स हो गये। यह ही वजह है कि ऐक्ट मजकूर के नफाज़ को अरसा बईद २५ साल गुज़र गया, मगर जो कवाईद कि उस के ज़रिये से हासिल होने चाहियें वह हनूज़ मुरत्तब नहीं हुए और न आइन्द को किसी ऐसे फाइदा मकसूदा के पैदा होने की उमीद है कि जिसका पैदा होना वक्त नफाज ऐक्ट मज़कूर तहरीक कुनन्दा हिन्दू साहिबों के ज़ेहननशीन और गवर्नमैण्ट को ख्याल दिलाया होगा। पस निहायत अदब से गुज़ारिश है कि ऐक्ट मजकूर की नौज़ीह व एतबार इलफाज़ और उसकी तरमीम बाएतबार अदालत व ऐहकाम ऐसे तौर पर फरमाई जावे कि जिससे उसका मन्शा इस बारे में हिन्दुओं के असली कानून के मवाफिक हो जावे।

मख्फ़ी न रहे कि आर्य्य लोगों (जिनको उरफन गलत नाम हिन्दू के लफ्ज़ से बोलते हैं) के असली कानून वेद वगैरा में तीन आला फिरकों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य में औरत और नीज़ मरद के वास्ते दूसरा विवाह करने की कतई मुमानियत है।

सिरफ एक सूरत है कि जिस में दूसरा विवाह करने की औरत और मरद दोनों के वास्ते इजाज़त है और वह यह है कि जब कोई औरत ऐसे वक्त बेवा हो जाय कि उसकी हमबिस्तरी की नौबत अपने शौहर के न साथ पहुँची हो, या किसी मरद की ज़ौजह ऐसे वक्त मर गई हो कि वह उस अपनी ज़ौजह के साथ हमबिस्तर न हुआ हो तो ऐसा मरद या औरत हरसे आया फिरक़ों मज़कूरा बाला में दूसरी शादी कर सकता है, मगर ऐसी औरत या ऐसे मरद के साथ (यानी जैसे कि सूरत हो) जो बज़रिया नियोग पैदा हुआ या हुई हो।

अलबत्ता वे औलादी की कबाहितें रफा करने के वास्ते आर्य्य लोगों की सच्ची किताब वेद बगैरा में नियोग करने की इजाज़त मरद और औरत दोनों के वास्ते पाई जाती है। ताकि औलाद मज़कूर अपने वालदैन के वास्ते फ़ैज़ दुनयावी का ज़रिया हो और मालिक मुतरहका होकर खानदान का नामोनिशान कायिम रख सके और जिस रसम नियोग से जो खास २ हालात में महदूद किया गया है, मसलन् जब कि कोई मरद बग़ैर छोड़े किसी औलाद के मर जावे या नामरदी से कोई नाकाबलियत ऐसी लाहक़ हो कि जिसकी वजह से वह औलाद पैदा करने के लाइक न रहा हो, तो बेवा बा इजाज़त विरसाए शौहर या शौहर या खुद अपनी मरज़ी से ऐसे शख्स के साथ जो उस की शौहरी निसबत की रू से भाई के सिलसला क़राबत में नियोग कर सकती है और उस नियोग के ज़रिया से अपने शौहरी खानदान को फवाइद मज़कूराबाला पहुंचाने के लिये दो और हिलकायिम पैदा कर लेने की मजाज़ होती है मसलन् चित्रांगद विचित्रवीर्य्य के मरने पर व्यास जी उन के बड़े भाई ने उनकी औरतों से नियोग करके दो लड़के पैदा किये। एक धृतराष्ट्र, दूसरा पाण्डु। और एक कनीज़क से एक लड़का पैदा किया। जिस का नाम विदुर था। इसी तरह पाण्डु की हय्यात में उन की ज़ौजा कुन्ती ने पांच पुत्र उसी रिशता नियोग के ज़रिया से बवजह नाकाबल होने अपने शौहर के पैदा किये।

इस रिशता नियोग की वजह से मुसम्मात या मर्द या उस औलाद पैदाशुदः का कोई तअल्लुक या फर्ज़ या हकतौरीस या हकनान वा नुफ़क़ः खानदाने शौहरी से मुनकतअ या ज़ायल

और नियोग करने वाले शख्स के खानदान में पैदा वा कायम नहीं होता है। बल्कि औलाद मज़कूर का तअल्लुक मिस्ल औलाद सहीह उलनस्ब के बेवा और उस के खानदान शौहरी से या अगर मर्द ने अपने वास्ते नियोग किया हो तो औलाद का तअल्लुक उस मर्द और उसके खानदान से इस तरह पर होता है कि गोया वह उस शौहर या मनकूहः ज़ौजः से (व जैसी कि सूरत हो) पैदा हुई।

लेकिन अगर बवजेह मिन उलवजह मुअय्यनः धर्मशास्त्र ज़ौजीन का तअल्लुक ज़नाशवी कतअ हो जावे और बाद कतअ हो जाने तअल्लुक मज़कूर के ज़ौज या ज़ौजः अपने वास्ते नियोग करे तो उस औलाद का जो ऐसी हालत में पैदा हो सिर्फ नियोग करने वाले शख्स की ज़ात से उस तेदाद तक कि जो आइन्दः बयान की जावेगी तअल्लुक होता है, नियोग करने वाले शख्स को अपने वास्ते दो औलाद तक जो हिलकायिमः हों और जिस के साथ नियाग किया जावे दो औलाद तक उस के वास्ते भी, अगर नाम्बरवः की खाहिश और ज़रूरत हो, पैदा करने का इखतयार वेद वगैरः आर्य्य लोगों की मुकद्दस किताबों में पाया जाता है। और जो ज्यादः औलाद इस तेदाद से उसी नियोग के ज़रिया से की जावे, वह हरामी ख्याल की जाती है।

एक औरत या एक मर्द को जब कि वह अपने वास्ते भी दो औलाद तक पैदा करना चाहता हो, चार नियोग तक करने की इजाज़त है। और अगर नाम्बरवः अपने वास्ते औलाद पैदा करने की ज़रूरत समझे तो पांच नियोग कर सकता है। इस का असली मन्शा बहुत साफ़ है कि एक खानदान के नाम को कायिम रखने के वास्ते दो औलाद और एक शख्स के ज़रीयअ से दस औलाद तक पैदा करना जाइज़ है। और जो औलाद जिस खानदान के वास्ते इस रिशता नियोग के ज़रियअ से पैदा हो वह उसी खानदान में मिस्ल सही उलनस्ब औलाद के दाखल और शामल समझी जाती है।

चूंकि इस कारेखैर के मुहर्रक हिन्दू साहिबों ने इस मसअला के असूल और तासीरात के समझने और समझाने में गलती की थी, बल्कि विवाह बेवा हनूद का गलत लफ्ज़ इस्तेमाल करके उस कि तासीर को बिल्कुल मुन्कलब कर दिया था। लिहाज़ा वह तमाम फवायद जो इस के ज़रीया से हासिल होने चाहिये थे, बिल्कुल रुक गये।

अब मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती धर्म्मशास्त्र की सही और असली मक़ासद दर-बाब जिस मसअला की आदिल और कदरदान गवर्नमैण्ट की आखरी राय पर ज़ाहर करके एक मसव्विदा बाबत इजराय रस्म मजकूर गवर्नमैण्ट के हजूर में निहायत अदब से पेश करता हूं और उम्मीद रखता हूं कि मसव्विदा मज़कूर कीं मनजूरी से इस आर्य्यावर्त देश की रिआया को फ़ैज़ बख्शी और गवर्नमैण्ट की हक़पसन्दी बज़रिया इमदाद अदालतहाए दीवानी वाकिअ बृटिश इण्डिया वमुआम्लात नफ़ाज़ हक़ तौरीस वगैरः उन क्वाइद और शराइत के मवाफ़िक जो मसव्विदा में अर्ज की गई हैं ज़ाहिर फरमाई जावे।

चूंकि इस ऐक्ट के ज़रिया से कोई जदीद मसअला कानून का पैदा नहीं होता बल्कि सिर्फ धर्म्मशास्त्र के कदीम मसअला की तजदीद होती है, लिहाज़ा कव्वी उम्मीद है कि जो फव्वाइद ऐक्ट १५ सन् ५६ के नफ़ाद से ख्याल किये गए होंगे, मगर पैदा नहीं हुए, वह बल्कि उस से ज्यादः कायम और मुकम्मिल हो जावेंगे। मस्लन

(१) बेवगान का फ़ाक़ फजूर से बचना और जुरायम शदीद मिस्ल इस्कात हमल और ज़िना वगैरः का मसदूद हो जाना।

(२) मसकीन बेवगान के दिल से बेऔलादी की हालत में मुफारकते शौहर का ग़म सहव जाना।

(३) बे औलादी के रञ्ज और तकालीफ से मसकीन बेवगान का निजात पा जाना।

(४) किसी आर्य्य यानी हिन्दू की मौरूसी या मकसोयः तर्क का बवजः न होने औलाद के तल्फ न होना।

(५) किसी फैज़ दुनयावी से बवजः बे औलादी किसी आर्य्य का महरूम न होना।

(६) इन्सानों की अफ़ज़ायश और उसके आम नतायज नेक का ज़हूर। व कस अलहज़ा।

फैज़ बख्शी गवर्नमैण्ट के तरहम अंगेज मादलत से दाद खाही की उम्मीद करके दस्तबस्ता गुज़ारिश करता हूं कि मेरे पेश किये हुए मसव्विदा पर ग़ौर फ़रमा कर इसकी मनजूरी से मतला फरमाया जावे।*

———

[१९] पत्र (२०९) [२६९]

[मुं० बखतावरसिंह..............]

... .

....व लिखा और ऋ[ग्वेद के टाइटल पर मु]न्शी जी का हाल छपवा दिया सो क्यों। ऐसे छ-[पवाने से] फसाद होने का संभव होता है।

... ...र नहीं है। आगे ऐसा काम कभी न करना। और जो मैंने कहा था कि

... ...से दाम उधार है उन सब का हिसाब छा-[प दो सो तो] कुछ भी न किया किन्तु विज्ञापन ही वि-[ज्ञापन] छपवा डाले। नहीं छापने के योग्य बातें छापीं। मुन्शी जी का वृथा छापा।[1] अब जिन लो-[गों ने] दाम नहीं दिया है और एक महीने तक न दें उन के पा[स अगले अं]क न भेजो। और उन को उन के हिसाब [का] नोटिस देओ तथा आ-[गे से] एक वेद के ६४ पृष्ठ अर्थात् दो दो अंक एक २ .... पहले महीने ऋग्वेद और दूसरे में यजुर्वेद

· ...वा दो मैं ने..... ....

* शेष आगे छपेगा।

१. "मुंशी इन्द्रमणि जी के मुकदमे का वृत्तान्त"—ऋग्वेदभाष्य अङ्क १६-१७ के टाइटल पर देखें। तथा इस के सम्बन्ध में भाद्र सुदी ६ सं० १९३७ (१०। सितम्बर १८८०) का पत्र भी देखें।

मि० भा० क० १४ सं० ····· ।[1]

[चन्द्रा] लोक वा कोई काव्यालंकार सूत्र ग्रंथ हो तो भेज देना ।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

[3]सत्यार्थप्रकाश भेजने के लिये तुमने कागद छपवा कर भेजे थे वे लगाकर हमने पुस्तक स[त्यार्थ-]प्रकाश के भेजवा दिये । अब तुम्हीं पूछ[ते हो] कि क्या नाम थे । बड़े शोक का विषय है [कि तु-]म्हें इस का उत्तर क्या दें। क्या तुम ने नाम [ठिका-]ना आदि हिसाब रजस्टर में विना ही लिखे [भेजे] थे । ऐसी अचेतनता से क्या काम [चलेगा] [3]।

---

[२] पत्र (२१०) कार्ड [२७०]

स्वामी कृपाराम जी आनन्दित रहो ।

इस पत्र का उत्तर हम लिख चुके हैं । हम यहां छः सात दिन रहेंगे । जो तुम शनिवार को आओगे तो मिल जांयगे । और एक चिट्ठी बलदेवसिंह[4] के विषय में हमने भेजी है । तुम्हारे पास जो पहुँची होगी उसी में । बाकी जब तुम यहां आके मिलो तब सब निश्चय होगा । और हम पहिले लिख चुके हैं कि मनुष्यों का आत्मा कपटी । पहले कहते हैं कि हम ऐसा २ करेंगे । पीछे वक्त परे पर कुछ भी नहीं ।

मिति भाद्र सुदी ४ मंगलवार संवत् १९३७ ।[5]

दयानन्द सरस्वती

---

[२०] पत्र (२११) [२७१]

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो ।

दो एक दिन में तुम्हारे पास वसियतनामा की नकल भी भेज देंगे । अब हम पत्र भेजते हैं । इस महीने में ६४ पत्रे ऋग्वेद के अंक में भेजो । और अगले महीने में ६४ पत्रे यजुर्वेद के अंक में

---

१. ३ सितम्बर १८८० । शुक्रवार ।

२. यह पत्र बहुत फट चुका है । विषय से मुं० बखतावर सिंह के नाम का ही निश्चित होता है । तिथि और हस्ताक्षर का टुकड़ा सर्वथा पृथक है, परन्तु लेख आदि से इसी पत्र का अंश प्रतीत होता है ।

३. उक्त पत्र की पीठ पर ही हस्ताक्षर से नीचे वाला लेख है । पत्र के टुकड़े म० मामराज जी जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहां से खोज कर लाये । ये टुकड़े अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

४. बलदेवसिंह शर्मा के नाम एक चिट्ठी पृ० २३ पर छपी है ।

५. ८ सितम्बर १८८० मेरठ । मूल पत्र पं० बुद्धदेवजी विद्यालंकार की भगिनी के पास है ।

भेजना। और जब पत्रों की दरकार हो तब दो तीन महीना पहिले से कहना कि हम तैयार करके भेज दिया करें। भीमसेन से कहो वही इस बात की याद रक्खेगा।

मेला चांदापुर का वहां क्या अचार होगा। हमने कहा है जिस २ जगह सौ २ और जितनी २ पुस्तकें जहां २ जाती हैं वहां २ भेज दो। अभी तक क्यों नहीं भेजी। चिठी के देखते ही १० वेदभाष्य और ५ भूमिका उन्हीं के साथ १०० पुस्तक चांदापुर की मेरठ आर्यसमाज में भेज दो। हमने कहा था कि समर्थदान से सब हिसाब[1] समझ लो और तुमने कहा था कि हमने समझ लिया। अब कहते हो कि हमको ठीक २ मालूम नहीं होता है। [य]ह क्या बात है, पहिले से क्यों नहीं समझ रक्खा। अब जैसे हो वैसे ठीक ठीक करो। वह समय तो गया अब कहने से क्या होता है कि गड़बड़ है, ठिकाना नहीं लगता है। जो हमने पहिले लिखा है कि आर्यदर्पण में कितने कागज़ लगे हैं और उस का हिसाब तथा एक रीम में कितने रुपैये लगते हैं कितने उस में कागज़ होते हैं। और यंत्रालय का सब हिसाब एक नकशे में लिखो। जितना रुपैया वहां जमा हो, जितना खर्च भया हो जितना कागज़ लगता हो उस का दाम और भाव सब लिखो। वेदभाष्य के दाम का रुपैया कितना जमा हुआ और कितना बाकी है। और सब पुस्तकों का दाम जमा और बाकी। सब यन्त्रालय की कुरसी आदि जितनी चीज़ें हैं उन सब का ठीक ठीक जांच परताल कर साफ लिखो। क्योंकि इस वसियतनामे के जो सभासद हैं उनके सुपुर्द हमने अ[पना] सब हिसाब किताब कर दिया है। वे कहते हैं कि हम ठीक २ बिना जाने क्या हिसाब करें। इससे तुमको लिखा जाता है कि सब यन्त्रालय का हिसाब ठीक २ करके भेज दो।

यजुर्वेद का सातवां अध्याय बनता है। हम यहाँ शायत ७ दिन रहेंगे। फि[र] जहाँ जायंगे वहां से खबर दी जायगी। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ४ बुधवार संवत् १९३७॥[2]

[दयानन्द सरस्वती][3]

---

[१]　　　　पत्र (२१२)　　　　[२७२]

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

हम यहां हद्द आठ दिन रहेंगे। और करनेल ओलकाट साहिब और मेडम भी कल यहां से चले गये। रमा भी कल यहां से जावेगी। लेखक को आप जल्दी मेरठ में हमारे पास भेज दीजिये जब तक हम यहां हैं। १००) जो आप ने मुंशी इन्द्रमणी जी के विषय में इकट्ठे किये हैं वे मेरठ

---

१. मुंशी समर्थदान का लिखा हुआ मुम्बई के वेदभाष्य के हिसाब का एक परचा मिति चैत्र वदी ६ सं० १९३६ से मिति ज्येष्ठ सुदी २ सं० १९३६ तक का है जिस में ६२२) रु० की आय, तथा ५७५॥-)॥ व्यय और ४६।=)॥ रोकड़ बाकी लिखी है, इस परचे में मोहनलाल विष्णुलाल का हिसाब भी है। देखो पत्र पू० सं० २६५ (पृष्ठ २२१)। पत्रों के साथ ही वह परचा म० मामराज जी को मेरठ से मिला है।

२. ता० ८ सितम्बर सन् १८८० मेरठ से। मूल पत्र चार स्थान में फटा हुआ है।

३. म० मामराज जी जुलाई सन् १९४५ में लाला रामशरणदास जी रईस मेरठ वालों के पुराने कागजों में से खोज कर लाये। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

आर्य्यसमाज के उपप्रधान लाला रामशरण दास जी के पास भेज दीजिये उन्हीं के नाम से। क्योंकि सब जगह का यहाँ जमा होता है। और यहां से खर्च होता है। रमाबाई अपने घर को जाने कहती है। यहां समाज से १२५) रुपैये और एक थान मलमल का देकर सत्कार किया। कल यहां से दिल्ली और दिल्ली से इलाहाबाद, वहां से घर जायगी। अभी किसी समाज में नहीं जाने कहती है। शायत वहां से आवे तो जाय। इस के भाई के मरने से इसकी "कुछ कुचाली हो गई है" ऐसा लोग संशय करते हैं। चित्त भी चञ्चल है। शरीर पतला निर्बल और रोगी है, गुस्सा भी बहुत है। इसकी "कुचाली" में जो लोग "शंका करते है" वह लिखने "योग्य नहीं है"। हमने इस को वैशेषिक और न्याय दर्शन के कुछ सूत्र पढ़ाये हैं। समझाई भी बहुत है। आशा है "कि कुचाली" को छोड़ कर उपदेश मार्ग में प्रवृत्त हो जावेगी। इस के साथ में बंगाली लोग हैं। वे ही इस की कुमति का कारण हैं, कहती है कि मैं देश में जाकर वहां से अपने किसी कुटुम्बी एक पुरुष और एक औरत रोटी करने वाली साथ में लेकर आऊंगी। इसकी बुद्धि बहुत अच्छी और सुबोध है। काव्यालंकार, कुछ व्याकरण वाल्मीकी रामायण, महाभारत इतना पढ़ी है। संस्कृत बहुत अच्छा बोलती है। व्याख्यान बहुत अच्छा देती है। "परसों रविवार को" गोपालराव हरि ने इस के बुलाने के लिये चिठी भेजी थी। सो यह कहती है कि अभी तो हम देश को जायंगे। फिर वहां से [आ]वेंगे तब देखी जायगी। ज़ादा क्या लिखना। और तो सब प्रकार से अच्छी है परन्तु जैसे "चन्द्रमा में ग्रहण लग जाय" ऐसो हाल है। रमा के इस हाल को प्रसिद्ध हर जगह न होना चाहिये। उन के भाई का शोक तो निवृत्त हो गया है।'

मुंशी इन्द्रमणी जी के विषय में ३००) रु० मेरठ से ३००) रु० मुरादाबाद से इकट्ठे हुए हैं। और भी मुरादाबाद और चंदोसी चन्दा होगा। इन में से ६००) रु० बालिष्टर को दिये गये और बाकी मिती पर फिर काम पड़ेगा तब भेजे जायंगे। ये सब रुपैये यहां ही जमा होते हैं। उन के पास एक ही वखत भेजना अच्छा नहीं है, जो ऐसा होता तो इतनी जगह मामला क्यों बढ़ता। उन में वालिष्टर को पहिले पांच सौ रुपैये दिये थे। फिर १ सौ रु० पीछे से पहुँचाये गये। इस तरह का हाल है। मुकदमा तारीख १८ को जारी होगा। यहाँ से दो एक दिन पहिले लाला रामशरणदास जायंगे। और बाकी रुपैये भी लेते जायंगे। आप भी मुंशी जी को लिख भेजिये कि उपर लिखे मुताबिक मेरठ में रुपैये भेज दिये। रामनाथ लेखक को ७ दिन के भीतर मेरठ में भेज दीजिये। सब से हमारा नमस्ते कह देना। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ४ बुध० संवत् १९३७।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

———

१. स्वामी जी का अनुमान सत्य निकला। रमा ने इस बंगाली विपिनबिहारी के साथ ही ता० १३ अक्टूबर सन् १८८० को ईसाई मत स्वीकार करके विवाह कर लिया। देखो पं० ज्वालादत्त का मिति मार्ग वदि ५ सं० १९३७ का पत्र। उलटे कामों में छपा पाठ श्री स्वामी जी ने काटा हुआ है।

२. ८ सित० १८८०, मेरठ, मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[पत्रांश कार्ड][1] (२१३) [२७३]

[प्रो० जी० वाईज़ ऐलू वर्ठ्स् स्ट्रीट वैडन जर्मनी]

कमेटी और कई विद्वानों की सम्मति है कि नवजवान आर्यों को योरूप में कला कौशल सीखने के लिये भेजना आवश्यक नहीं है।

९[2] [१८८०]

———

[९] पत्र (२१४) [२७४]

ओ३म्

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

पत्र आप का आया हाल मालूम हुआ। मुंशी इन्द्रमणि जी का विषय जो हमने वेदभाष्य के टाईटिल पेज पर छापने को लिखा वह हमारा दोष है[3]। परन्तु आर्य्यदर्पण और मेला चांदापुर प्रत्यक्षर एकसा ही छाप दिया है यह दोष तो दुर्निवार्य्य है। क्योंकि इसमें वृथा ही कागज खराब करना है। इस को कौन लेगा। अब ऐसा न होना चाहिये। सिवाय अच्छे समाचार और नोटिस आदि छापना उचित है। देवीदत्त और शंकरलाल हम से नहीं मिले। और वेदभाष्य के पत्रों की व्यवस्था भीमसेन लिखा करेगा उसी से कह दो जिस वेद के जिस पृष्ठ से जिस पृष्ठ तक दरकार हो दो तीन महीने पहिले से लिख भेजेगा। पहिले पत्र में हिसाब के लिये जो नकशा की व्यवस्था लिखी है सब यन्त्रालय का हिसाब समझकर जलदी लिख कर भेज दो। हम अब यहां थोड़े ही दिन तक रहेंगे। दो दिन पीछे लिखेंगे जहां जाना होगा। और १ रीम का कितना रुपया, कितना दस्ता, कितने ताव, कितने पृष्ठ होते हैं, यह भी लिखो। और हमारे कहे सुने बिना वेदभाष्य के अंक का दाम बढाया मत करो। और वहां यह भी कह देना सब जनों से कि सत्यनामसिंह मथुरा में हैं। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ६ शु० संवत १९३७।[4] [दयानन्द सरस्वती]

जैन मत के ग्रन्थ जिस किसी छापेखाने बनारस वा कलकत्ते में संस्कृत वा भाषाके जितने जहां से मिलें भेज दो। और अलंकार के पत्रे जो हमने चंद्रालोप (क) नामक लिखे हैं भीमसेन के पास होंगे। भेज देना जलदी। ———

१ प्रो० जी वाईज ऐल्वर्ट्स् स्ट्रीट वैडन जर्मनी के ६ पत्र मास्टर लक्ष्मण जी सम्पादित उर्दू जी० च० के परिशिष्ट में छपे हैं। उनके आठवें पत्र में उक्त अंश उद्धृत है। देखो जी० च० परिशिष्ट पृष्ठ २८६। यु०मी०

२. प्रो० जी० वाईज ने अपने अक्टूबर १८८० के पत्र में केवल ६ ता० का उल्लेख किया है। महिना अज्ञात है। हमने अधिक से अधिक इसे सितम्बर मास का मानकर यहां जोड़ा है। यु० मी०

३. श्री स्वामी जी ने इन्द्रमणि का समाचार आर्यदर्पण में छापने को लिखा था, न कि वेद भाष्य के टाइटल पेज पर। देखो पूर्ण संख्या २४३ का पत्र पृष्ठ १९६। प्रतीत होता है जब स्वामी जी ने पूर्ण संख्या २६६ (पृष्ठ २२७) के पत्र में 'वेदभाष्य के टाइटल पर उक्त समाचार छापने के विषय में' बख्तावरसिंह से पूछा तो उसने लिख दिया होगा कि आपने लिखा था और स्वामी जी ने उसे सरलता से मान लिया। यु०मी०

४. १० सितम्बर १८८०, मेरठ। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[२] पत्र (२१९) [२७९]

ओ३म्

भाई ठाकुरदास जी योग्य नमस्ते ।

पत्र आप का मिति भाद्र वदी १० सोमवार [सं० १९३७ पंजाबी][1] का लिखा स्वामी जी के पास पहुंचा। स्वामी जी ने हम को दे दिया। उक्त पत्र को देख अभिप्राय जानकर मुझ को आश्चर्य होता है कि आप पुनः पुनः पिष्टपेषणवत् श्रम क्यों करते हैं। मैंने प्रथम पत्र में सब बातों के प्रत्युत्तर लिखे फिर भी तुम न समझे तो मेरा क्या दोष है। क्या मैं ने यह बात न लिखी थी कि जो स्वामी जी से मत विषयक शास्त्रार्थ किया चाहो तो अपने मत के सर्वोत्कृष्ट विद्वान् को स्वामी जी के सन्मुख करो। अथवा जो ऐसा न कर सको तो जो इस समय गुजरांवाला में आत्माराम जी उपस्थित हैं उन्हीं को शास्त्रार्थ के वास्ते नियुक्त करो। जिस में आप लोगों के मत की सत्यता सर्वत्र प्रसिद्ध हो के सब को विचार करने का समय प्राप्त हो और जो आप लोंगो पर (मत और स्वग्रन्थों को गुप्त रखने से) मिथ्यात्वरूप कलंक प्रसिद्ध हो रहा है वह दूर हो कर स्वमत का तत्त्व यथार्थ प्रकाशित हो जाये। लोग ऐसा अपवाद तुम्हारे पर धरते हैं कि जैसे वेदादिक शास्त्रों को आर्य लोग, बायबल आदि को ईसाई लोग और कुरान आदि को मुसलमान लोग व्याख्या और देश भाषान्तर में तरजुमा कर के प्रचार कर रहे हैं वैसे जैन लोग क्यों नहीं करते। यदि जैनों के मत विषयक पुस्तक ठीक २ सत्य और विद्या पुस्तकों के अनुकूल होते तो वाममार्गियों के सदृश कौल पद्धति के समान अपने पुस्तकों को गुप्त क्यों रखते। इत्यादि बुद्धिमानों के अपवाद का निवारण करना आप लोगों को अत्यन्त उचित है। सो इस के निवारण के उपाय दो ही हैं। एक स्वामी जी के साथ तुम्हारे मत के सर्वोत्तम विद्वान् का शास्त्रार्थ होना और द्वितीय अपने सब पुस्तकों को अनेक देश भाषाओं में छपवा के प्रसिद्ध करना। जब तक ऐसा न करोगे तब तक पूर्वोक्त कलंक दूर कभी न होगा। प्रथम यत्न का उपाय जो किया चाहो तो शीघ्र ही हो सकता है। स्वामी जी और आत्माराम जी का संवाद हम और तुम मिल कर करावें। जो स्वामी जी का पक्ष खण्डित होकर आप लोगों का पक्ष सिद्ध रहे तो आत्माराम जी आदि आठ जनों का रेल वा खाने पीने का जितना खर्च उठे उतना हम दें और जो आत्माराम जी का [पक्ष] निराकृत हो के स्वामी जी का पक्ष सिद्ध रहे तो आठ पुरुषों का पूर्वोक्त व्यवहार में यावत् व्यय हो तावत् आप लोग देवें। कोई उत्तम स्थान मध्यवर्ती हो वहां दोनों महात्मा उपस्थित हो के शास्त्रार्थ करें। हम लोगों ने स्वामी जी से इस विषय में पूछा था। स्वामी जी ने कहा है कि ऐसा हो तो हम को स्वीकार हैं।

अब तुम लोग आत्माराम जी से पूछो कि वे इस बात में प्रसन्न हैं वा नहीं। जो वे शास्त्रार्थ करने को उद्यत हों तो शीघ्र लिखें क्योंकि स्वामी जी यहां से अन्यत्र जाने वाले हैं। इस से यह कार्य अति शीघ्र होना चाहिये अर्थात् दोनों महात्माओं के समागम से सब सिद्धान्त प्रकाशित हो जा सकेंगे और दूसरे पत्र का उत्तर इस वास्ते नहीं भेजा कि उस में कुछ विशेष न था। अब जो तीसरे उत्तर में तुमने लिखा है सो भी पिष्ट पेषणवत् है। क्योंकि इनका उत्तर प्रथम पत्र के उत्तर में हम लिख चुके हैं और इस पत्र में तुमको ऐसा असभ्य लेख करना योग्य न था। तथा स्वामी जी के नाम

---

१. ३० अगस्त १८८०।

पत्र भेजना भी अनुचित था। यह निश्चय जानो कि स्वामी जी और उन का सर्वस्व हमारा और हम तथा हमारा सर्वस्व स्वामी जी का है। जैसा तुम ने लिखा वैसा तुम पर भी आ गिरता है कि तुम कौन कहने और लिखने वाले और जो हो तो हम क्यों नहीं ? यह सब बातें लिखने से कभी नहीं निपट सकती है, विना दोनों विद्वानों के समागम के। बार बार विना समझे लिखते हो कि सत्यार्थप्रकाश आप ने क्यों छपवाया ? इतना भी बोध तुमको नहीं है कि यह ग्रन्थ स्वामी जी ने छपवाया है वा राजा जयकृष्णदास सी० ऐस० आई० रईस मुरादाबाद ने छपवाया है। जब ऐसी छोटी २ बातों को नहीं समझ सकते हो तो गूढ़ बातों को क्या समझ सकोगे। यह तुम और हमको अत्यन्त योग्य है कि अपने और दूसरे के मत का सत्यासत्य निर्णय के लिये सभ्यता, विद्या, प्रमाण और शास्त्रोक्त व्यवहार के सहित प्रीतिपूर्वक शास्त्रार्थ कर के असत्य का निरोध और सत्य का प्रचार करें। यह शास्त्रार्थ प्रथम प्रकृत विषय जो सत्यार्थप्रकाश में स्वामी जी ने लिखा है उसी विषय में हो, पश्चात् अन्य विषयों में। जो इस शास्त्रार्थ में तुम्हारा पण्डित सत्यार्थप्रकाश के द्वादश समुल्लासोक्त विषय को तुम्हारे मत से विरुद्ध ठहरा देगा तो स्वामी जी उस विषय को दूसरी बार सत्यार्थप्रकाश में छपवाने न देंगे और माफी भी मांगेंगे और जो वह विषय स्वामी जी ने तुम्हारे मत के अनुसार सिद्ध कर दिया तो जितनी तुमने वेदादि विषयक निन्दा लिखी है इस को छोड़ना और स्वामी जी से माफी मांगना होगा। जो तुम शीघ्र शास्त्रार्थ करना न चाहो तो कब तक करोगे इस का निश्चित समय लिखो। परन्तु जितना बने उतना शीघ्रता से करो। स्वामी जी और हमारी ओर से कुछ भी विलम्ब नहीं। इसका प्रत्युत्तर पत्र देखते ही दीजिये और इस बात में तुम को विलम्ब करना उचित नहीं, क्योंकि तुम्हीं [ने] यह बात उठाई है। इस वास्ते आप को योग्य है कि कल शास्त्रार्थ करने में प्रवृत्त हुआ चाहो तो आज ही तत्पर हूजिये। देखो हमारे साथ पत्र व्यवहार करने से तुमको कितना लाभ हुआ। कि जो प्रथम और दूसरा पत्र तुम ने हमारे पास भेजे थे वे कैसे अशुद्ध थे और जो तीसरा पत्र तुमने भेजा सो भाषा के कायदे से कुछ अच्छा है। और अभिप्राय अर्थ से तो यह भी शुद्ध नहीं है। अब मैं अपनी लेखनी को अधिक लिखने से रोक कर आप लोगों को जताता हूं कि आप लोग पूर्वोक्त बातों पर ध्यान अवश्य देवें। यह बात बहुत उत्तम और लाभकारी है।

मिती भाद्रपद शुदी ८ रविवार सं० १९३७।[1]

आनन्दीलाल मन्त्री आर्यसमाज मेरठ

———

[२] पत्र (२१६) [२७६]

॥ ओं ॥

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

लेखक रामनाथ कल सप्तमी शनिवार को हमारे पास पहुंचा। और आज लिखने का भी प्रारम्भ करा दिया है। जैसा होगा वैसा पीछे लिखा जायगा। अब हम यहां से १२ गुरुवार को चार ४ बजे की रेल में मुजफ्फर नगर जायंगे। मुन्शी इन्द्रमणि जी के विषय में जो आपने १००) रूपैये

१. १२ सितम्बर १८८०। पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ६८७, ६८८ पर छपा।

चन्दा किये हैं वे क्या अपने ही पास रखनी की इच्छा है। हमने कई वखत लिखा है कि मेरठ आर्य्य-समाज के उपप्रधान लाला रामशरणदास के पास भेज दो। क्यों नहीं भेजते हो। मुन्शी इन्द्रमणि जी [के] पास नहीं भेजना। वहां जाने से व्यर्थ ही खर्च कर देंगे। हम ने यह कहा है कि मुकदमे में यथोचित खर्च होकर जो बाकी बचेगा वह इकट्ठा जमा रहेगा कि जब फिर भी कभी इसी तरह समय काम आवे। इस मुकदमे के हुए पीछे जिन्होंने जितना रुपया दिया है छपाकर सब प्रकाश किया जायगा। और सितम्बर की १८वीं तारीख को मु[क]दमा जारी होगा।

मुम्बई में पण्डित के विषय में हमने पत्र लिखा। वहां से रूपैये आगये वा नहीं।

मथुरा से दूसरा पण्डित बुलाया है। आशा है कि उसके आने से वेदभाष्य का अच्छी तरह से काम चलेगा। अभी यजुर्वेद के ७वें अध्याय २३वें मन्त्र का भाष्य हो रहा है।

सब से हमारा नमस्ते कह देना। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ८ रविवार सम्वत् १९३७।[1]

२०) रूपैये फिरोज़पुर से जो विष्णुसहाय मन्त्री आर्य्यसमाज फिरोज़पुर ने पण्डितों के विषय में भेजे हैं, जमा कर लिये जायं।

[दयानन्द सरस्वती]

बाबू जी दुर्गाप्रसाद जी से रामनाथ की नमस्ते। बहोत्त राजी खुशी साथ पहोंचा। लाला हर नारायण जी योग्य रामनाथ की नमस्ते।

———

[२२] पत्र (२१७) [२७७]

ओम्

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

कल [पत्र] आप का आया हिसाब देखा गया। परन्तु तु[मने लि]खा कि इस महीने में ४८॥) रुपैये का टि[कट] आ[या] यह तो सम्भव नहीं होता। हमारा..........भेजा है कागज़ आदि का हिसाब क्यों नहीं लि[खा] सेठ निर्भयराम की दुकान पर जो २००) रूपैये भेजे [थे] उनका क्या हुआ। बड़े आश्चर्य की बात है कि पुस्तकों की बिक्री बहुत कम होती है। हम पहिले लिख चुके हैं कि जो २ पुस्तकें छपती जायं वे जहां २ जितनी २ भेजी जाती हैं उसी वखत भेज दिया करो। मैं जानता हूँ कि मेला चांदापुर अभी तक न भेजा गया होगा और तुमने जो उत्तर लिखा वह अकिंचन है। इस का ठीक उत्तर यही है कि आगे को ऐसा न करना [चा]हिये। और श्याम जी कृष्णवर्म्मा के पास [उनका] ठीक २ पता लिखकर सब अङ्क दोनों वेद[ों के] तथा वर्णोच्चारणशिक्षा, संस्कृतवाक्यप्रबोध [और] व्यवहारभानु ये पत्र के देखते ही भेज दो। हम मेरठ से १२ गुरुवार को चार बजे की रेल में मुज़फ्फरनगर जायंगे। तुम भी अपने मामा को चिठी लिखना हो लिखो, उनको जो शंका हों निवृत्त कर जायं। वहां हम को जाना कुछ आवश्यक तो न था, परन्तु मेरठ से डिप्टी कलक्टर राय बद्री प्रसाद वहां गये हैं। उन्होंने बुलाया है। उनके सबब से वहां के [और] लोगों की भी प्रीति है क्योंकि वे वहां के हाकिम [हैं] और रमाबाई का हाल इतना ही है व्याकरण [काव्यालं]कार पढ़ी है। संस्कृत

१. १२ सितम्बर १८८० मेरठ। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

भी अ[च्छा बोलती है, व्याख्या]न भी अच्छा देती है और बड़ी बुद्धिमती है। [परन्तु कुछ] अकथनीय अनुचित दोष है। इससे वहाँ के स[भास]दों की उपेक्षा हुई है। हमने तो उसको बहुत समझाया है। जो उसका भाग्य होगा और सुधर जायगी तो इस में उसकी बड़ी प्रतिष्ठा होगी और उसके उपदेश से स्त्री उपकार भी बड़ा होगा। यह रमा का हाल कहीं छपवा न देना। नहीं तो उसकी दुर्दशा हो[गी]। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ८ रवि संवत् १९३७।[1]

फिरोज़पुर के आर्य्यसमाज में १४ और १५ अङ्क दोनों वेदभाष्यों के उनके पास नहीं पहुँचे हैं। जलदी भेज दो। और फिरोज़पुर के कांतचन्द के ८) रु० बाबत वेदभाष्य के हमारे पास आगये। और ८) रु० फीरोज़पुर समाज के भी आगये। और रजस्टर अच्छी तरह दरुस्त कर रक्खो। और ग्राहकों के नम्बर भी हमारे पास लिख भेजो। हम अपने रजस्टर से मिला लेंगे।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

---

[२३] पत्र (२१८) [२७८]

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

आज वसियतनामा रमाना कर दिया। और ८) रुपैये पण्डित अंबाशंकर के बाबत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के। और ८) रुपैये लाला रामशरणदास के बाबत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के। और १४) रुपैये बाबू छेदीलाल के बाबत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के। और १२) रुपैये मुंशी राशरणदास के बाबत वेदभाष्य के तीन वर्ष तक के। इन चारों का एक ही मिती में रुपया जमा हुआ। और एक ही मुकाम मेरठ है। मिती भाद्र सुदी १२ बुध वा० संवत १९३७ जानो इन का नाम भी अगले वेदभाष्य में चाहो तो छपा देना। और ५४।।≈)।। रूपैया आर्य्यसमाज मेरठ से वर्णोच्चारणशिक्षा आदि पुस्तकों का मूल्य जमा हुआ मिती भाद्र सुदी १२ बुधवार संवत् १९३७ को। **हम कल ४ बजे की रेल में बैठ कर मुजफ्फरनगर जायेंगे**[3]। चिठी पत्र वहीं भेजना होगा। हमने तुमको कई वखत लिख कर भेजा है कि जो पुस्तक जिस वखत छपकर तैयार हो उसको उसी वखत जहां २ जितनी पुस्तकें जातीं हैं भेज दो। क्यों नहीं भेजते हो। हमको मालूम होता है कि जिस तरह मेला चांदापुर अभी तक यहां नहीं आया निश्चय है कि दूसरी जगह भी न पहुँचा होगा। यह बड़े अन्धेर की बात है। न जाने क्या होता है। हमने कह दिया है कि वेदभाष्य के साथ ही पहुंचा दिया करो। और पांच व छः वेदभाष्य तो यहां से भेजे गये और व्रजभूषणदास के यहाँ से भी आये थे। उनका दाम चिठी में क्यों नहीं लिखा। क्या तुमने अपना ही पास हिसाब लिख कर बैठ रहे। इस से हमको क्या मालूम है कितना

---

१. १२ सितम्बर १८८० मेरठ से बनारस को।

२. म० मामराज जी ने ला० श्यामलाल जी अग्रवाल प्रधान आर्यसमाज के साथ ला० रामशरण दास जी रईस मेरठ वालों के सहस्रों पत्रों में से २३ जुलाई सन् १९४५ को खोजा। फटा हुआ मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। कोष्ठों में हमने पूर्ति की है।

३. पं लेखरामकृत जीवनचरित में भाद्र, सुदी १२ को वहां पहुँचना लिखा है। पहुँचे वस्तुतः १३ को।

बिका और कितना रहा। हम से यहां के पांच सात मनुष्य कह चुके कि हमने भ्रमोच्छेदन का पुस्तक मंगाया है। अभी तक हमारे पास नहीं भेजा। हम कहते हैं कि यन्त्रालय की आमदानी और बिक्री जितनी हो तिल भर का हिसाब साफ लिखकर भेजा करो। और अगले महीने से हिसाब हमारे पास मत भेजा करो। किन्तु **परोपकारिणी सभा के मन्त्री जो लाला रामशरणदास हैं,** उन्हीं के पास एक नकशे में सब हिसाब यथावत् लिखकर भेजा करो। अभी से अपना हिसाब ठीक २ कर रक्खो[1]। बहुत बार हम लिख चुके हैं कि जिस[न] ने वेदभाष्य का चन्दा आज तक कुछ भी नहीं आया है उन के पास वेदभाष्य चौथे वर्ष के आरम्भ से मत भेजना। ऐसा ही करना और उनके पास पत्र भी भेजो कि जब तक तुम चार वर्ष का चन्दा न भेजोगे तब तक तुम्हारे पास वेदभाष्य न भेजा जायगा। और उनके नाम छांटके हमारे पास भेजो कि जिनको हम अपने रजष्ट[र] के साथ मिला के ठीक करें और। जितनी सामग्री हमारे सामने और जितनी हमारे पीछे छापेखाने में आई है और जितना दाम लगा है जितना तोल वा गिनती जितने पुस्तकादि पदार्थ जमा वा खर्च तथा धन का भी हिसाब यथावत् लिख कर लाला रामशरण उपप्रधान आर्य्यसमाज मेरठ के पास भेज दीजिये। क्योंकि परोपकारिणी सभा के मन्त्री उक्त लाला ही हैं। उन ने मुझ से हिसाब माँगा था। मैंने कहा कि मुंशी जी देंगे। मेरे पास पूरा हिसाब नहीं है। श्यायद वे भी आपको इस वास्ते लिखेंगे और आप उनके पास भेज भी देंगे।[2] हम आनन्द में हैं। आप लोग आनन्द में होंगे।

मिती भाद्र सुदी १२ बुधवार संवत् १९३७ मु० (मेरठ)[3]

[दयानन्द सरस्वती]।

———

[१७] पत्र (२१९) [२७९]

ओ३म्

स्वस्ति श्रीश्रौतमार्गप्रकृतपरिचयस्वान्तसिद्धान्तधर्मा
नानातर्कप्रयासैर्विविधगुणभरश्रान्तिविश्रान्तिशर्मा।
देशे देशे प्रवादोत्पथजनमथितोत्कर्षसद्धर्षकर्म्मा
भूयो भूयस्समीयाद्बुधकृतिजनितं सत्फलं कृष्णवर्म्मा ॥ १ ॥
पत्रमत्र त्वदीयस्योदन्तस्य च मदन्तिकम्।
आगतं येन नः स्वान्तेऽत्यन्तं सुखमजायत ॥२॥
वेदभेदपरिध्वंसतर्कसद्धर्षकृद्वरम् ।
व्याख्यानमतिसौहित्यमाख्यातुस्तव दैशिकम् ॥३॥

---

१. इस विराम के पश्चात् से लेकर अन्त की दो पंक्तियों से पहले तक का सारा लेख ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है।

२. ऋषि का निज लेख यहाँ समाप्त हो जाता है।

३. १५ सितम्बर १८८०। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

समीरितं पत्रमनेकमञ्जसा क्रियावरैर्जर्मनदेशजैर्जनैः ।
समीपमस्माकमवाप्तमत्र तत्तदाशयं विद्धि महाशयैर्मुदा ॥४॥
विदेशजैर्देशसुखाय[1] शिल्पक्रियानिदेशाय सदाशयात्किल ।
नरेभ्य एभ्यो[2] लिखितं निरन्तरं करण्डमेतैस्त्वमतस्समाचर ॥५॥
गन्तव्यमत्रागमनात्स्वदेशे त्वया च तत्राढ्यपुरे[1] पुरैव ।
व्याख्यानमाख्यानमनस्सु देयं श्रुतीरितं श्रौतसुखान्वितं च ॥६॥
तदीयभाषाविरहान्न[1] मत्तः प्रयाति पत्रोत्तरमाश्रुतेभ्यः ।
वक्तव्यमेतल्लिखितं न धीमंस्त्वया च मोनिर्विलमस्य वृत्तम् ॥७॥
नमस्त इत्येष मदुक्तशब्दस्तस्मै[1] प्रयुक्तोऽथ न वा प्रयुक्तः ।
प्रस्थातुकामो मतिमंश्च देहरादूनं पुरं नूनमितोऽहमस्मि ॥८॥
गत्वा पारलिमेन्टसज्जनसभां व्याख्यानमाख्यावरम्[1]
दत्त्वा भारतवर्षपूर्वनियमप्रेक्षावतस्तान्[2] कुरु ।
पश्येयुर्यत ईदृशं निजदशादुःखं द्रुतं दुःखिनां
म्लेच्छा म्लेच्छतया च भारतजनान् संपीडयन्तीति यत् ॥९॥
यवनजनमतं हि स्वीयधर्मानुकूलः
सकलजनगरिष्ठः श्रेष्ठकर्मैव नान्यः ।
इति मनसि निधायोत्कण्ठिताः कण्ठतैल
श्रुतिपथनिरतानां च्छेदमिच्छन्ति नित्यम् ॥१०॥

(अत्रांशे प्रकृतविवादो यथा)

मुरादाबादीयश्श्रुतिपथगमुंशीन्द्रमणिकः

ये सब संस्कृत टिप्पणियां स्वामी जी की हैं

५—१. (देशसुखाय) भारतवर्षीयजनसुखाय ।
२. (एभ्यः) भारतवर्षनिवासिभ्यः ।
६—१. (तत्राढ्यपुरे) धनसमृद्धे युरोपाख्ये ।
७—१. (तदीयभाषाविरहात्) तेषां युरोपदेशवासिनां भाषाविरहात् ।
८—१. मौनिर्विलिमाख्याय ।
९—१. (आख्यावरम्) सौजनाभियुक्तश्रौतसिद्धान्तानुकूलम् ।
२. (भारतवर्षपूर्वनियमप्रेक्षावतः) भारतवर्षस्य पूर्वेषां जनानां सौजन्यसौहार्दाजिलत्वसर्वशास्त्र-सिद्धान्तानुकूलेषु नियमेषु विचारवतः (तान्) युरोपदेशनिवासिनो महाशयान् पारलिमेण्ट-सभासदः । (दुखिनां) भारतवर्षनिवासिनां दुःखाकुलचेतसाम् ।

श्रुतः श्रौताचाराद्यवनमतविच्छे[द]नरतः ।
तदुक्तौ द्वौ ग्रन्थौ यवनकृतसम्मानवशान्
मजस्ट्रेटः सम्प्रस्यनिशमवदार्षीत्तदपरम् ॥११॥
मुद्रापञ्चशतं दण्डं कृतवांञ्छीघ्रमेव सः ।
तस्य प्रत्यर्जनं' तत्र यातं जजगृहे यदा ॥१२॥
त्यक्त्वा शतानि चत्वारि जजेनापि स्वयत्नतः ।
मजस्ट्रेटकृतो न्यायः स्वीकृतोऽनेकधा तदा ॥१३॥
सदालसा राज्यनिबन्धकर्म्मसु प्रभावतः स्वार्थरता विशेषतः ।
भवन्ति केचिच्च परार्थतत्परा जना नियुक्ता इह राज्यकर्म्मसु ॥१४॥
भवन्ति ये म्लेच्छजनाश्च तेषु तत्कथाप्यलं दुःखतमाय दृश्यते ।
न यावदेतेषु मनूक्तदण्डकृन्नयोऽस्ति तावन्न सुनीतितत्पराः ॥१५॥
भवन्ति ते प्रत्युत धर्मकर्मणि प्रकाशयन्ति स्वमतिभ्रमं यतः ।
अहो महोपद्रवकर्मकारिणः समत्सराः स्वल्पधियोऽतिलोभिनः ॥१६॥
सर्वमेतत्समाख्याहि पारलिमेण्टसंसदि ।
आख्यातुस्तव दृष्टान्ते सिद्धान्ते न यथा भवेत् ॥१७॥
सुसायटी सोफिकलप्रधानः ख्यातश्च यो डाक्टरमासिनाम्ना ।
न तस्य पत्रोत्तरमाशु मत्तस्तदीयभाषाविरहाद्धि याति ॥१८॥
न च तावद्धनं व्येतुमवकाशो ममाधुना ।
रक्षेयं यावता कञ्चिद् द्विभाषिणमिहान्तिके ॥१९॥
करनेल ओलकाटाख्यं प्रयुक्तं च मयाधुना ।
पत्रमिच्छुस्तदा रक्ष मत्समीपे तथाविधम् ॥२०॥

११—१ (अवदार्षीत्) भिन्नवान् ।

१२—१. (प्रत्यर्जनम्) प्रतिविवादपत्रमपीलाख्यमिति यावत् ।

१३—त्यक्त्वा शतानि चत्वारि इत्यत्र अयं निर्धनी नापराधे न्यूनत्वमस्येति कथयित्वेति शेषः ।

१५—(मनूक्तः) कार्षापणं भवेद्यत्र दण्ड्योऽन्यप्राकृतो जनः । तत्र राजा भवेद्दण्ड्यः सहस्रमिति धारणा ॥ इत्यादिवत् । अत्र राजशब्देन सामान्यतो राज्यकर्मणि नियुक्ता ग्राह्याः ॥

१६—(द्विभाषिणम्) देवभाषागौरण्डभाषाविदम् ।

२०—(तथाविधम्) उक्तद्विभाषाविदम् ।

यदि त्वां स मिलेत्तत्र सुसायटिपतिस्तदा।
कथ्यतां सर्वमेवैतद्वृत्तं मत्पत्रकांक्षिणे ॥२१॥

त्वदभिलषितानि पुस्तकानि मया तदानीमेव प्रेषितुमाज्ञप्तानि काशीनगरादागमिष्यन्त्यागतानि न वेत्यलं विस्तरेण। अत्रैका परोपकारिणीसभा स्थापिता, यत्र भवानपि सभासदस्ति। तस्या व्यवस्था नियमान्वितं राजमुद्राङ्कितं भवत्सनीडे प्रेषयामीदं स्वात्मवत्सदा रक्ष्यमुत्तरस्मिन् समयेऽत्यन्तं कार्यकारि वर्तते। तत्रत्योदन्तः पत्रद्वारा मह्यं निवेदनीय इति।

नगगुणनवचन्द्रे विक्रमादित्यवर्षे
रसतिथिशनिवारे चाश्विने कृष्णपक्षे।[1]
बुधजनसुखदात्रे कृष्णवर्माभिधाय
प्रथितविबुधवाण्या प्रेषितं पत्रमेतत् ॥[2]

दयानन्द सरस्वती

---

[३] उर्दू पत्र (२२०) [२८०]

ओं तत्सत्

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्द रहो।

पत्र आप का आया। समाचार मालूम हुआ। रामनाथ पहुँच गया। सो विदित हुआ। हम यहां ८ आठ दिन और रहेंगे। और ३ अक्तूबर को [मेरठ के] वार्षिक उत्सव पर जायेंगे।[3] बाद इसके शायद देहरादून को जायें। मुंशी इन्द्रमन का मुआमला साहब जज ने भी कुछ अच्छा कुछ बुरा किया है। अर्थात् ५०० पांच सौ रुपया जुर्माना में से ४०० रुपया वापिस किये और १०० सौ रुपया रखे। और बाकी साहब मैजिस्ट्रेट की राय बहाल रखी। और उससे अधिक बुरी राय ऐसी दी कि उसने ३ तीन बात फोहश लिखी हैं। इस ने यानी जज ने सब किताब को फोहश बतला दिया। इस में भी कुछ पक्षपात हुआ। अब यह मुआमला शायद हाई कोर्ट को जायगा। देखा जाय कि वहां से क्या होता है। और भी जज साहब ने लिखा है कि यह मुआमला सब हिन्दुओं का नहीं है खास मुन्शी इन्द्रमन का है। उसकी यह बड़ी भूल है। लेकिन हाकिम है जो चाहा सो लिखा दिया।

एक पण्डित मथुरा से यहां आया था। चार दिन रहकर चला गया। उसको आने जाने का

२१—(सः)सुसायटीप्रधानो डाक्टर मासीति नाम।।

१. २५ सितम्बर १८८०। उस दिन तिथि ७ हो गई थी। संवत् १६३७ आश्विन कृष्ण ६ शनिवार।

२. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्रवर्मा जी के पास सुरक्षित है। इसकी जो प्रतिलिपि हमारे पास आई थी, वह अशुद्ध प्राय थी। हम ने बहुत यत्न से उसे शोधा है। फिर भी कई अशुद्धियां रह गई हैं।

३. अनुमानतः २५ सितम्बर १८८० को मुजफ्फरनगर से लिखा गया। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

खर्च दिया गया है। और असूज के अन्त में फिर आवेगा। फ़िर खर्च दिया जावेगा। अब आप ही तहरीर फरमाईये कि उस का माहवारी क्या मुकरिर किया जावे। आपके पास माहवारी असल मा सूद कहां तक हो गया है। और आर्यसमाज वाले अलहदा बैठने का खुशी नहीं करते। कहते हैं घूमे विना अच्छा नहीं है। तुम्हारी इस में क्या राय है लेकिन मैं जानता हूं कि बहुत घूमने में हरज होगा। मगर इस में कि जहां जांयें दो दो एक एक महीना ठहरें तो हरज कम होगा। और बड़े पण्डित तो अब मिलते नहीं कि जिसको पचास या साठ रुपया दें। लेकिन अब बेहतर है कि छोटे छोटे यानी एक एक विद्या जानने वाला कम तनखवाह वाला रखकर काम निकाला जावे। यानी चार पाँच रखे जायेंगे! और उस से भी वैसा ही काम लिया जावेगा। यानी हर एक के एक एक काम स्पुर्द कर दिया जावेगा। हम आनन्द हैं। सब से नमस्ते कह देना।

दयानन्द सरस्वती

---

[११] पत्र (२२१) [२८१]

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो!

आज कल हम मुज़फ्फरनगर में हैं। हम ने आप को वसीयत भेज दी थी। क्या यह आप को पहुँची या नहीं? हमने अभी तक उसके उत्तर में कुछ नहीं जाना, क्या कारण है? सब से हमारा नमस्ते कह दें। हम सब सर्वथा आनन्द में हैं और आप सब का आनन्द चाहते हैं।[1]

अक्तूबर १८८०[2]

ह० दयानन्द सरस्वती

---

[९] पत्र (२२२) [२८२]

पण्डित भीमसेन आनं[दित रहो]

......ह रजस्टरी भेजी है पहुंची होगी। यजुर्वेद षष्ठाध्याय के आरम्भ से २० पृष्ठ भेजते हैं सो ले[ना][3]। एक अङ्क में कितने पृष्ठ लगते हैं सो लिखना। और ऋग्वेद के पृष्ठ कै छपने को बाकी हैं सो भी लिखना। जो आगे के लिये पृष्ठ तैयार कर रक्खें। अलङ्कार विषय में जो चन्द्रालोक के पत्रे [जो] झेलम में पास थे वे भेज देओ। और सर्वदर्शनसंग्रह पुस्तकों में हम छोड़ आये हैं। जो वह मिले वहीं अथवा किसी दूकान से लेकर और भेज देओ। और जैनमत [की] पुस्तक जिस में [वेदादिशास्त्र]ों का खण्डन और... ... ... संपादन कर भेज देओ।

---

१. वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरांवाला से अनूदित। देखो पत्र पूर्ण संख्या २२२ का टिप्पण २ (पृष्ठ १८३)

२. तारीख का निर्देश छूट गया है। इस पत्र में मुजफ्फरनगर में रहने का उल्लेख है। श्री स्वामी जी मुजफ्फरनगर १६ सितम्बर से २ अक्टूबर (१८८०) रहे थे अतः यह पत्र १ या २ अक्टूबर (आश्विन कृष्ण १२, १३ सं० १९३७) को लिखा होगा।

३. यजुर्वेद के २० पृष्ठों की रजिस्टरी इस पत्र के साथ नहीं पहुंची। वह पीछे से पहुंची। उसकी पहुंच पं० भीमसेन ने अपने पत्र आश्विन शुक्ला १२, शुक्र में स्वीकार की है।

रजिस्टरी की बातों को यथायोग्य होशिआरी से करना'।

एक २ अंक में कितने २ पृष्ठ लगते हैं सो भी लि[खो]
जहां शारीर[क] भाष्य में जैनों का मत दिखलाया है उसका
और जो २ वहाँ श्लोक लिखे हों [वह] लिख भेजने
आगे सिवाय वेदभाष्य और व्याकरणादि पुस्तकों………
…… छपने पावे अन्य कुछ भी नहीं…… ……………
… … … … … … … … …

हर महिने में कान्ताप्रसाद का मासिक………………
में लिखते आये हैं और अब लिखते हैं [कि का]
न्तप्रसाद हमारा नौकर है और अत्यन्त भूठ यह
मैं अपने पास से आप की ओर जमा कर दे
कान्ताप्रसाद से कहना कि तुम कुछ भी चिन्ता [वा उ]
च्चाटन मत करना। वैसे सब को धीरज [दे]
ते रहना कि जिस से कोई भाग न उठे और [अ-]
त्युत्साह से काम किया करें। जिस २ ने जितना [का-]
म शरकारी और जितना २ बाहर का किया [है उस]
का निश्चय उस २ से पूंछ के कर लेना आवश्यक है। मुं[शी]
जी से भी कह देना जो तुझ से पूंछें तो हिसाब स………
………रक्खो और १ महिना वा डेढ़ महिना तक
………हो वैसे ही किया करो इतने समय में हिसाब……
………और मकान का किराया बराबर मावारि भि[जवादो]
………नारायणसिंह वहाँ है वा कलक[त्ते चले गये
वा नहीं]…………। कर शरकारी क…………
हरि पंडित[जी को ब्राह्मी] ओषधी भेजी थी पहुँची वा नहीं'।
[आश्विन शुक्ला १, संवत् १९३७][3]

दयानन्द सरस्वती

१. यहां तक का पत्र पृष्ठ की एक ओर किसी लेखक का लिखा हुआ है। अगला सारा लेख पृष्ठ की दूसरी ओर श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है।

२. पं० भीमसेन अपने आश्विन शुक्ला ७ रविवार के पत्र में लिखता है—
"आश्विन शु० १ का लिखा पत्र आप का आया।" उस पत्र में पं० भीमसेन ने इसी पत्रस्थ बातों का उत्तर दिया है। अतः उस पत्र के आधार पर श्रीस्वामी जी के इस पत्र की तिथि निश्चित करके लिखी गई है। इस पत्र की तिथि वाली पंक्तियां तथा और भी कई पंक्तियां या पंक्तियों के अंश फट चुके हैं। कुछ नष्ट शब्दों की पूर्ति कोष्ठों में की गई है। मूल पत्र के टुकड़े म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहां से खोजे। ये अब हमारे संग्रह में सुरक्षित हैं।

३. ५ अक्तूबर १८८० मंगलवार।

[१] पत्र सूचना[1] (२२३) [२८३]

सेवकलाल कृष्णदास मं० आ० स० मुम्बई।
५. ६ अक्तूबर १८८० मेरठ।

———

[३] पत्र (२२४) [२८४]

पंडित भीमसेन जी आनंदित रहो।

आश्विन सुदि ७ रविवार के लिखे हुए पत्र तुम्हारे आये। तथा अक्टूबर १२ का लिखा पत्र मुन्शी [बखता]वर का आया। हाल विदित हुआ। पुस्तकों का हिसाब तुम से वा २।४ रुपैये लगकर भी किसी पुरुष की सहायता से जैसे हो सके वैसे करो। और पुस्तक तथा और पदार्थों को अच्छी प्रकार गण कर ताला कुंजी अपने हाथ कर ले। और मुंशी वख्तावरसिंह लिखते हैं कि किसी मनुष्य को शीघ्र छापेखाने में भेज दो, क्योंकि प्रेसमीन आदि कारीगर चालाक होते है। उन के सब काम के [को] वह अच्छे [प्रकार] समझ ले। सो मेरठ वा फर्रुखाबाद आदि को हम पत्र भेज चुके हैं। तुम्हारी सहायता के लिये कहीं से कोई मनुष्य आया जाता है। वह भी सब काम समझेगा। परन्तु तुम अच्छे होशिआरी के साथ सब काम की जांच रखना। तुम किसी तरह हा [गा]फिल न होना। आर्य्यदर्प्पण इस महीने का छप जाने दो। परन्तु आगे को कोई भी और काम बाहरी न रहे। जो रुपैये ३००) जमा किये हैं उन का आठ आने ।।) सैकड़े से व्याज मिला करेगा। हम से और मिरजापुर के भवानीराम जी के बेटे से पहले इस मामले की बात हो गई है। फिर भी उन के मुनीम से कहना कि मिरजापुर से चिट्ठी मंगा लेओ। और फर्रुखाबाद निर्भयराम जी को भी लिख दिया है। वहां से भी उन को चिट्ठी आजायगी।

पुस्तक काव्यप्रकाश सटीक जो छपी है वह भेज देना और सर्वदर्शनसंग्रह तथा जैनप्रभाकर से वा और जगह से जो जैन वा बौद्धमत वालों के ग्रन्थ जैसे हम ने लिखे हैं भेज देना।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

———

[४] पत्र (२२५) [२८५]

पण्डित भीमसेन आनन्दित र[हो]
फर्रुखाबाद से तोताराम और लाला स[न्नू]
लाल गये हैं। बाबू दुर्गाप्रसाद के मक[ान पर]
हम ने रजस्टर[भेज दिये थे उन······के····· अ]
नुसार सन्नूलाल से [मिला···कर··· ····· ···]
हिसाब करेंगे। मुन्शी जी से भी [कहना कि]
उन को ठीक २ सब हिसाब दें औ[र मु]

१. इस पत्र का संकेत म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० २४५-२४८ पर देखें।
२. संभवतः १४ अक्टूबर १८८० देहरादून से। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

न्शी जी को भी चिट्ठी लिखते हैं [कि हिसा-]
ब और सब वस्तु तथा छापेर[वाने का]
और भी जो कुछ व्यवहार हो [वह पांच सात]
रोज के भीतर उन से समझ लें [और तोता]
राम और तुम तथा और हू को[ई ... मि-]
ले तो कुछ दे कर [और रख]
कर तुम लोग पुस्तकें [गिन कर ....]
स से f ....
देना क्योंकि तुम्हें चु[न्नीलाल-अभय]
राम के पास का व्यवहा[र] और [कलक-]
त्ते से जो वस्तु आती हैं तथा और
f नीआ का हिसाव बहुत मालूम है। तु[म्हारे]
पढ़ने में दश पांच रोज हानि हो [सो भी]
[सह]न करना और उक्त [दोनों]
पुरुष] जब पहुँचे। तभी से डाकखाने को नोटिस
देओ कि डांक सब पंडित भी-
मसेन के नाम से आवें चिट्ठी पत्रीं [जो]
नागरी में होगीं सो तुम वांचा करना [औ]
र अंगरेज़ी वा फारसी की सन्नू [लाल वाँ]
चेंगे। मुन्शी जी की जो हों [सो उन्हें दे]
दिया करना [हिसाव की जब तक पड़ताल]
समाप्त न हो ले तब तक सब चिट्ठियां
तुम्हारे ही नाम से आया करें।
.........आर्य्यदर्प्पण के इस महीने की २४
[तारीख तक..]
.... आ ....
..........................यह बहुत अनुचित है हमा-
रा काम बन्द होता है अभी तक कितना
.........व्याकरण छप जाता
[......... ह]ानी सो हुई।
[और पुस्]तक जो शिरकारी वैदिक
यन्त्रालय में हैं उन का हिसा-
ब भेजते हैं।
.........तुम्हारे पास भी फुटक-

[र··· ··· ···········] से हो-
[गा··· ··· ··· ··· ···]लेओ ।
वस्तु सब अच्छी प्रकार सह्वार
लेना और तोल माप कर लेना ।
पड़त]ाल-कुञ्जी अपने पास रखना ।
[जब] कहीं जाओ तब सन्नू लाल
[या] तोताराम को दे जाया करना ।
अब यह काम बहुत परिश्रम
औ[र] होशिआरी का है सो अ-
च्छी प्रकार समझना ।
[कि]मधिकलेखननेत्यलम् ।
[मि··· ··· ··· ··· ···][1] [दयानन्द सरस्वती][2]

---

[२४] **पत्र सूचना (२२६)** [२८६]

मुंशी बख्तावरसिंह
वैदिक यन्त्रालय के सम्बन्ध में[3]

---

[२] **पत्र (२२७)** [२८७]

लाला रामशरण दास जी आनन्दित रहो ।

मुन्शी इन्द्रमणि के मामले के खरच में तुम को अखतयार है । जो मुनाशिब जानो सो देओ । और अपील जरूर हाईकोरट में जाय । और पांच जजों के बीच यह मामला हो । ऐसा बंदोबस्त कर देना । इस के खरच के लिये जहाँ जहाँ चंदा होता है । और तुम योग्यता जानो उस २ जगह को और भी चंदा होने के लिये लिखो । मेरठ समाज में पहले बहुत खरच हो चुका है । इस लिये तुम वहां चन्दा न करना । और मुंशी जी को लिखना कि घबड़ावें नहीं । किन्तु अपने पक्ष पर श्रेष्ठ प्रमाण राजघर में दें । दूसरों के बहुत दोष दिखाने से भी अच्छी तरह कार्यसिद्धि नहीं होती है, यह विचार पूरा २ रखें ।

फर्रुखाबाद से दो सभासद तोताराम और लाला सन्नूलाल काशी वैदिक यन्त्रालय में गये हैं । वे सब हिसाब का बन्दोबस्त यथायत् करेंगे । तुम अब किसी आदमी का खोज न करना । परन्तु वहां रहने के लिये किसी मुंशी का बन्दोबस्त अवश्य करना, जो हमेसा छापेखाने में रहे और योग्य हो ।

---

१. इस पत्र की तिथि प्रसंग और अन्य पत्रों के अनुसार अक्तूबर १५ से २१ सन् १८८० तक की कोई तिथि है ।

२. फटा हुआ पत्र म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के पत्रों में से खोजा । पत्र के नष्ट अंशों की पूर्ति कोष्ठों में हमने की है । मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

३. देखो पूर्ण संख्या २८५, पृ० २४३ पं० १ । यु० मी० ।

तीनों भाषाओं का यथायोग्य काम करें। और मातबर हो।

मि० आ० १४।[1] [दयानन्द सरस्वती]

[१.] पत्रांश (२२८) [२८८]

मन्त्री आर्यसमाज गुजरांवाला

पण्डित आत्माराम जी से एक पत्र उन सन्देहमात्र बातों का जिनको वह सत्यार्थप्रकाश में जैनों के मतों के विरुद्ध ठहराते हैं उनके हस्ताक्षर से हमारे पास भिजवा दो कि हम विचार पूर्वक उन का उत्तर लिखकर और अपने हस्ताक्षर करके उनके पास भेजेंगे।[2]

---

[४] पत्र (२२९) [२८९]

ओ३म्

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

नमस्ते—पत्र आपका ता० २१ अक्टूबर स० ८०[3] को हमारे पास पहुँचा। समाचार सब मालूम किया। मास्टर शादीराम जी कि जो अंग्रेज़ी और फारसी में खूब हुश्यार और रईस आदमी हैं, उनको मेरठ से बनारस को भेजा गया है। मास्टर मज्कूर काम अंग्रेज़ी और फारसी का और तोताराम जी नागरी का और भीमसेन जी सोधने वगैरा का काम करेंगे और सन्नूलाल वापिस आवेंगे। मगर माहवारी खर्च कि जैसे मुंशी और शोधने वाले के ३५ रुपये हैं। जिन में से ३०) बखतावरसिंह लेता था। और ५) भीमसेन को मिलते थे। सो अब दोनों काम यानी शोधना व मुन्शी का कुल ३०) रुपये में होना चाहिये। दोनों आदमियों को वह रुपये जैसे मुनासिब मालूम होंगे, हस्ब लियाकत दिये जायेंगे। और मास्टर शादीराम बिल्फेल वास्ते देखने और समझने काम के भेजे गये हैं। अगर वहां का काम उन से चला और समझ में आगया तो रहेंगे। वर्ना खैर और कुछ तजवीज मुनासिब की जावेगी।

और पं० गोपालराव हरी को हम अलहदे पत्र लिखेंगे। और पाठशाला की पुस्तकों की बाबत जो लिखा है। सो ऐसा करना चाहिये। कि जो जो पुस्तक तैयार होती जाए,सो सो जमायत बन्दी में शामिल करते रहना यथायोग्य। और हम को फुर्सत कम रहती है। हम भी कक्षा बनावेंगे। और

---

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। आश्विन वदी १४ रविवार ३ अक्तूबर १८८० को है और आश्विन सुदी १४ रविवार १७ अक्तूबर को है।

२. यह पत्रांश उस पत्र में है, जो मुं० नारायण कृष्ण मन्त्री आर्यसमाज गुजरांवाला ने पं० आत्माराम जी को गुजरांवाला में ही कार्तिक ५ को भेजा। यह पत्र नारायण कृष्ण जी के पास लगभग ४ कार्तिक को पहुंचा होगा। श्री स्वामी जी ने मूल पत्र १ या २ कार्तिक को लिखा होगा। मुंशी ना० कृ० जी ने अपने पत्र के आरम्भ में लिखा है—"इस समाज में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का एक पत्र आया है।" कार्तिक वदी १, १६ अक्तूबर १८८० को पड़ती है।

३. कार्तिक कृष्ण ३ सं० १६३७। यु० मी०।

दूसरा निवेदन जो बाबू शिवप्रसाद ने छापा है उसका उत्तर भी तैयार हो गया है। सो पं० ज्वालादत्त के नाम से अब जारी किया जायगा[१]।

यजुर्वेद का ८ अध्याय पूरा होने को आया है। ज्वालादत्त के आये पश्चात् ३ अध्याय का भाष्य बन चुका है।

तारीख २१ अक्टूबर सन् १८८०[२]।

दयानन्द सरस्वती

—.—

[१] पत्र (२३०) [२९०]

पूज्यवर आत्माराम, पञ्चायत सरावगियां लुधियाना और ठाकुरदास जी रईस गुजरांवाला।

जैन मतानुयायी सज्जनों के प्रश्नों के उत्तर—

प्रश्न—जो सत्यार्थप्रकाश में श्लोक लिखे हैं जैनों के किस शास्त्र या ग्रन्थ के हैं?

उत्तर—यह सब श्लोक बृहस्पतिमतानुयायो चारवाक जिसके मत का नामान्तर लोकायत भी है और यह जैन मतानुयायी है उनके मतस्थ शास्त्र वा ग्रन्थों के श्लोक हैं।

श्लोकः—

यावज्जीवं सुखं जीवेन्नास्ति मृत्योरगोचरः। भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ॥१॥

तथा तदन्तर्गतश्चाभाणकोऽप्याह—

अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुण्ठनम्। प्रज्ञापौरुषहीनानां जीविकेति बृहस्पतिः ॥२॥

अग्निरुष्णो जलं शीतं, शीतस्पर्शस्तथानिलः। केनेदं चित्रितं तस्मात्स्वभावात्तद्व्यवस्थितिः ॥३॥

न स्वर्गो नापवर्गो वा, नैवात्मा पारलौकिकः। नैव वर्णाश्रमादीनां, क्रियाश्च फलदायकाः ॥४॥

अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुण्ठनम्। बुद्धिपौरुषहीनानां, जीविका धातृनिर्मिता ॥५॥

पशुश्चेन्निहितः स्वर्गं ज्योतिष्टोमे गमिष्यति। स्वपिता यजमानेन, तत्र कस्मान्न हिंस्यते ॥६॥

मृतानामपि जन्तूनां, श्राद्धं चेत्तृप्तिकारणम्। गच्छतामिह जन्तूनां, व्यर्थं पाथेयकल्पनम् ॥७॥

स्वर्गस्थिता यदा तृप्तिं,गच्छेयुस्तत्र दानतः। प्रासादस्योपरिस्थानामत्र कस्मान्न दीयते ॥८॥

यावज्जीवेत्सुखं जीवेदृणं कृत्वा घृतं पिबेत्। भस्मीभूतस्य देहस्य, पुनरागमनं कुतः ॥९॥

यदि गच्छेत् परं लोकं, देहादेष विनिर्गतः। कस्माद्भूयो न चायाति,बन्धुशोकसमाकुलः ॥१०॥

ततश्च जीवनोपायो, ब्राह्मणैर्विहितस्त्विह। मृतानां व्रतकार्याणि, नत्वन्यद्विद्यते क्वचित् ॥११॥

अश्वस्यात्र हि शिश्नं तु, पत्नीग्राह्यं प्रकीर्तितम्। भण्डैस्तत्परं चैव ग्राह्यजातं प्रकीर्तितम् ॥१२॥

त्रयो वेदस्य कर्तारो धूर्त्तभाण्डनिशाचराः। जर्फरी तुर्फरीत्यादि पण्डितानां वचः स्मृतम् ॥१३॥

मांसानां खादनं तद्वन्निशाचरसमीरितम् ॥

---

१. यह उत्तर भ्रनुभ्रमोच्छेदन के नाम से पं० भीमसेन की ओर से छपा है।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है।

एतदादि जो जो मैंने सत्यार्थप्रकाश में जैन मत विषयक लिखा है सो सो समस्त यथार्थ है। प्रथम पत्र के उत्तर में ला० ठाकरदास आदि को लिखवा दिया था कि जैन मत की कई एक शाखायें हैं। यदि आपने प्रत्येक शाखा के प्रतितन्त्र सिद्धान्त जाने होते तो आप को सत्यार्थप्रकाश के लेख में भ्रम कभी नहीं होता। आप लोगों के प्रश्नों के उत्तर में विलम्ब इस लिये हुआ कि जो कोई सज्जन सभ्य विद्वान् जैसा कि श्रेष्ठ पुरुषों को लेख करना चाहिये वैसा करता तो उसी समय उत्तर भी लिखा दिया जाता, क्योंकि सज्जनता पूर्वक लेख के उत्तर में स्वामी जी विलम्ब कभी नहीं करते, देखिये अब पञ्चायत सरावगियां ने योग्य लेख किया तो स्वामी जी ने उत्तर भी शीघ्र लिखवा दिया और अब भी लिख दिया गया था कि जितने आप लोगों के सत्यार्थप्रकाश विषयक प्रश्न हों सब लिख के भेज दीजिये जो सब के उत्तर एक संग लिख दिये जावें। जैसा स्वामी जी ने लिखवाया था कि आत्माराम जी को जैन मत वाले शिरोमणि पण्डित गिनते हैं। उन का और स्वामी जी का पत्र लेखानुसार समागम होता तो सब बातें शीघ्र ही पूरी हो जातीं, परन्तु ऐसा न हुआ और यह भी शोक की बात है कि हम ने इस विषयक रजिस्टरी पत्र आप, पञ्चायत सरावगियां लुधियाना को भेजी थी और उस का उत्तर भी अब तक नहीं मिला, न प्रश्न भेजे किन्तु जो ठाकरदास ने एक बात लिख भेजी थी कि यह श्लोक जैन मत के किस शास्त्र और किस ग्रन्थ के अनुसार हैं और जो बात करने के योग्य आत्माराम जी हैं उन का शास्त्रार्थ करने में निषेध लिख भेजा और ठाकरदास जी का यह हाल है कि प्रथम पत्र में संस्कृत और भाषा के लिखने में अनेक दोष लिखे थे, अब आप लोग धर्म न्याय से से विचार लीजिये कि क्या यह बात ऐसी होनी योग्य है कि जब जब पत्र ठाकरदास ने लिखी तब तब स्वामी जी के पास और उस में जो बात शिष्ट पुरुषों के लिखने योग्य न थी सब लिखी और जो योग्य हैं अर्थात् आत्माराम जी उन को बात करने और लिखने वा पत्र पर हस्ताक्षर करने से पृथक रखते हैं और एक ठाकुरदास से स्वामी जी का सामना कराते हैं, क्या ऐसी बात करनी शिष्टों को योग्य है। अब अधिक बात करनी हो तो आप अपने मत के किसी योग्य विद्वान् को प्रवृत्त कीजिये कि जिस से हम और आप लोगों को सत्यासत्य का निर्णय हो कर सर्वोत्तम ज्ञान हो सके। बुद्धिमानों के सामने अधिक लिखना आवश्यक नहीं, किन्तु अपनी सज्जनता उदारता, अपक्षपातता, बुद्धिमत्ता और विद्वत्ता से थोड़े लिखने से बहुत जान लेते हैं।

सं० १९३७ मिति कार्त्तिक शुदी ४ शनिवार[1]।

कृपाराम मन्त्री आर्यसमाज डेरादून ॥

---

[५] पत्र (२३१) [२९१]

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो!

नमस्ते—तुम अपने शरीर का हाल लिखो कि अब कैसा है। और बड़े अफसोस की बात है, देखो कि आजकल तुमको वहां पर रहना जरूर्यात से था। क्योंकि काम की कसरत इस वक्त हुई थी। मगर खैर क्या किया जावे। तुम बेमारी की ज्यादती की वजह से चले आये होगे। अब तुम यह लिखो, कि जो जो चीज़ कपड़ा वा पुस्तक वा और कुछ वस्तु जो सर्कारी[2] हो, या रुपया जहां जहां

---

१. ६ नवम्बर १८८० । यु०मी० ।

२. अर्थात् स्वामी जी का ।

तुम्हारे हाथ से जमा हो या तुम्हारी समझ में और जिस किसी का जमा कराया हुआ हो फौरन अपने हाथ से वा अपने भाई के हाथ से लिखवा कर ठीक २ काशी जी पं० ज्वालादत्त जी के पास भेज दो। ताकि उनको सब हाल मालूम हो जावे। और ज्वालादत्त को हमने हमेशा के लिए काशी जी में भेज दिया है। जो हमारे पास था। और अगर तुम्हारी तबिअत दुरुस्त हो गई हो तो तुम लिखो कि हम आजकल आग्रे की तरफ आने वाले हैं। जो तुम आना चाहो तो दूसरा आदमी तुम्हारी जगेह न रक्खा जावे। मगर पहिले तुम हमको लिख भेजो। और जहां २ जो चीज़ रक्खी हो या तुम जो तोताराम के स्पुर्द कर आये हो, सब का व्योरा पूरा पूरा लिखो। और शीघ्र ज्वालादत्त जी को लिख भेजो, कि फलानी २ चीज़ फलाने के स्पुर्द में हैं। ताकि ज्वालादत्त को मिल जावे। और हम ने तेरे लिखे मुताबिक यह काम हमने किया है। क्योंकि तुम कहते थे, कि हमारा पढ़ना नहीं होता। इसलिए ज्वालादत्त को हमने वहां भेज दिया है। अब तुम अपने आने को कैफीयत मुफसिल लिखो कि आवोगे या नहीं। मगर जहां तक मुमकिन हो, सब चिज़ों की फहरिस्त कपड़ा रुपया पुस्तकां इत्यादि वस्तु छापेखाने की, जो कुछ होवें महाभारत वगैरा की पुश्तक सब चीज़ें जहां २ और जिस २ के पास जमा वा तुम्हारा रक्खा हो-सब की कैफीयत लिखदो। इन सब बातों का जवाब (कि मैं तुम्हारे पास आना चाहता हूं; या काशी जी जाऊंगा और कुल चिज़ों की फहरिस्त कि मैंने वहां पर उनके पास भेज दई।) हमारे पास भेजना जल्दी। देरी नहीं करनी[1]।

ता० ७ नवम्बर स० १८८० ई०[2]

[दयानन्द सरस्वती]
मुकाम देहरादून।

---

[२] पत्र (२३२) [२९२]

पूज्यवर आत्माराम जी नमस्ते[3]।

पत्र आप का ता० ४ नवम्बर १८८० का लिखा हुआ १० नवम्बर १८८० की सायं काल मेरे पास पहुंचा। देखकर आनन्द हुआ। अब आप के प्रश्नों का उत्तर क्रमवार लिखता हूं—

प्रश्न १—सत्यार्थप्रकाश समुल्लास १२ पृष्ठ ३९६ पंक्ति १६ में लिखा है कि जब प्रलय होती है तो पुद्गल पृथक् २ हो जाते हैं ऐसा नहीं है।

उत्तर—मैं ने ठाकुरदास जी के उत्तर में एक पत्र आर्यसमाज गुजरांवाला के द्वारा भेजा था जो आप के पास पहुंचा होगा। उस में यह बतलाया गया है कि जैन और बौद्ध दोनों एक ही हैं चाहे उन को बौद्ध कहो चाहे जैन कहो। कई स्थलों पर महावीर आदि तीर्थङ्करों को बुद्ध और बौद्ध आदि

---

१. यह पत्र बहुत अशुद्ध लिखा हुआ है। किसी अनाड़ी लेखक का लिखा प्रतीत होता है।

२. रविवार, कार्तिक सु० ५, संवत् १९३७। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. आर्यसमाचार मेरठ, भाग २, पृ० ३१८-३२३, माघ, सं० १९३७। दयानन्ददिग्विजयार्क १ खण्ड, पृ० ४७-५०।

शब्दों से कहा गया है और कई स्थलों पर जिन, जैन, जिनवर, जिनेन्द्र आदि नाम से बोलते हैं (विवेकसार पृष्ठ ६५, पंक्ति १३) बुद्ध, बौद्ध यह एक सिद्ध अनेक सिद्ध भगवान् हैं (पृष्ठ ११३, पंक्ति ७) चार बुद्ध की कथा (पृ० १३७, पं० ८) प्रत्येक बुद्ध की कथा (पृ० १३८, पं० २१) स्वयं बुद्ध की कथा (पृ० १५२, पं० १४)।

चार बुद्ध समकाल मोक्ष को गए। इसी प्रकार और भी आप के ग्रन्थों में कथा स्पष्ट विद्यमान हैं जिनको आप या कोई जैन श्रावक विरुद्ध न कह सकेंगे।

और ठाकरदास के पहले पत्र में (उन श्लोकों समेत जो मैंने इस से पहले पत्र[1] में लिख कर आप के पास भिजवाया है) आप लोग कई श्लोक स्वीकार भी कर चुके हैं। उस पत्र की प्रतिलिपि मेरठ में है और आप के पास भी होगी (कल्प भाष्य भूमिका जिसमें राजा शिवप्रसादजी ने अपने जैन मतस्थ पिता आदि पूर्वजों का वर्णन किया है उनकी साक्षी भी लिख भेजी और इतिहासतिमिरनाशक खण्ड ३, पृ० ८, पं० २१ से लेकर पृ० ९ की पं० ३२ तक) स्पष्ट लिखा है कि जैन और बौद्ध एक ही के नाम हैं[2]।

बहुत स्थलों पर महावीर आदि तीर्थङ्करों को बौद्ध कहते हैं। उन्हीं को आप लोग जैन और जिन आदि कहते हैं। अब रहे बौद्ध की शाखाओं के भेद जो चारवाक आभाणक आदि हैं जैसा कि आप के यहां श्वेताम्बर, दिगम्बर, ढूण्डिया आदि शाखाओं के भेद हैं कि उन में कोई शून्यवाद, कोई क्षणिक, कोई जगत् को नित्य मानने वाला, कोई अनित्य मानने वाला, कोई स्वभाव से जगत् की उत्पत्ति और प्रलय मानते हैं, कोई आत्मा को पांच भूतों से बनी हुई मानते हैं और उसका नाश हो जाना भी मानते हैं। (देखो रत्नावली ग्रन्थ पृ० ३२, पं० १३ से लेके पृ० ४३, पं० १० तक) कि उस स्थल पर सब जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय भी लिखा है वा नहीं।

इसी प्रकार चारवाक आदि भी कई शाखा वाले जिसको आप पुद्गल कहते हैं उसको अणु आदि नाम से लिखते और उन के परस्पर मिलने से जगत् की उत्पत्ति और पृथक् होने से प्रलय होना ही मानते हैं और वे जैन और बौद्ध से पृथक् नहीं हैं। किन्तु जैसे पौराणिक मत में रामानुजी आदि वैष्णवों की शाखा और पाशुपतादि शैवों की और वाममार्गियों की दस महाविद्या की शाखायें और ईसाइयों में रोमन कैथलिक आदि और मुसलमानों में शीआ सुन्नी आदि कुछ के कुछ भेद हैं और तब भी वेद, बाईबल और कुरान के मत में वे एक ही समझे जाते हैं वैसे ही आपके अर्थात् जैन और बौद्ध मत की शाखाओं के भेद चाहे पृथक् २ लिखे जा सकते हैं, परन्तु जैन और बौद्ध मत में एक ही हैं।

आप ने बौद्ध, जैन मत के प्रत्येक सम्प्रदाय के तन्त्र सिद्धान्त अर्थात् भेद कथन करने वाले ग्रन्थ देखे होते तो सत्यार्थप्रकाश में जो लेख उत्पत्ति और प्रलय के सम्बन्ध में है उस पर शङ्का कभी न करते।

प्रश्न २—सत्यार्थप्रकाश पृ० ३९७ पं० २४ (प्रश्न) मनुष्य आदिकों को ज्ञान है, ज्ञान से वे अपराध करते हैं। इस से उन को पीड़ा देना कुछ अपराध नहीं। यह बात जैन मत में नहीं।

उत्तर—ग्रन्थ विवेकसार में पृ० २२८ पं० १० से लेकर पं० १५ तक देख लीजिये क्या लिखा है अर्थात् गुणाभियोग और स्वजन आदि समुदाय की आज्ञा जैसे विष्णु कुमार ने कछ की आज्ञा से

१. पूर्ण संख्या २६०, पृष्ठ २४६ पर। यु० मी०।

२. उस समय तक बौद्ध और जैन एक मत की ही दो शाखायें मानी जाती थीं। यु० मी०।

बौद्ध रूप रचना करके नमुची नाम पुरोहित को कि वह जिन का विरोधी था लात मार के सातवें नरक में भेजा और ऐसी ही और बातें।

प्रश्न ३—सत्यार्थप्रकाश पृ० ३९९ पं० ३ और उसके ऊपर (अर्थात् पद्मशिला पर) बैठ के चराचर का देखना।

उत्तर—पुस्तक रत्नसार भाग पृ० २३ पं० १३ से लेकर पृ० २४ पंक्ति २४ तक देख लीजिये कि महावीर और गौतम के परस्पर वार्तालाप में क्या लिखा है।

प्रश्न ४—सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०१ पं० २३ और उन के मत में न हो वह श्रेष्ठ भी होय तो भी उस की सेवा नहीं करते अर्थात् जल तक भी नहीं देते।

उत्तर—पुस्तक विवेकसार पृ० २२१ पं० ३ से लेकर पं० ८ तक लिखा है, देख लीजिये कि अन्य मत की प्रशंसा वा उन का गुण कीर्तन नमस्कार, सत्कार, वा उन से थोड़ा बोलना वा अधिक बोलना वा उन को बैठने के लिये आसन आदि देना, उन को खाने पीने की वस्तु, सुगन्ध पुष्प देना वा अन्य मत की मूर्ति के लिये चन्दन पुष्प आदि देना यह छः बातें नहीं करनी चाहियें।

प्रश्न ५—सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०१ पं० २७ किन्तु साधु जब आता है तब जैनी लोग उस की डाढ़ी, मूछ और सिर के बाल सब नोच लेते हैं।

उत्तर—ग्रन्थ कल्पभाष्य पृ० १०८ पं० ४ से कर ९ तक देख लीजिये, और प्रत्येक ग्रन्थ में दीक्षा के समय पांच मुट्ठी बाल नोचना लिखा है। यह काम अपने हाथ, चाहे चेला वा गुरु के हाथ से होता है और अधिकतर ढूण्डियों में है।

प्रश्न ६—सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०२ पं० २० से लेकर जो श्लोक जैनों के बनाए लिखे हैं, वे जैन मत के नहीं।

उत्तर—मैं इस का उत्तर इस से पहले पत्र में लिख चुका हूं (मिती कार्तिक शुदी ४ शनिवार[1]) आपके पास पहुंचा होगा देख लीजिये।

प्रश्न ७—सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०३ पं० ११ अर्थ और काम दोनों पदार्थ मानते हैं।

उत्तर—यह मत जैन मत सम्बन्धी सम्प्रदाय चारवाक नामक का है जिसने ऐसे २ श्लोक कि जब तक जिये सुख से जिये, कोई प्राणी मृत्यु से अगोचर नहीं है, भस्मी भूत [का] देह में पुनः आना नहीं आदि अपने मत के बना लिये हैं; इसी प्रकार से नीति और कामशास्त्र के अनुसार अर्थ और काम दो ही पदार्थ पुरुषार्थ और बुद्धि से माने गये हैं।

यहां संक्षेप से आप के प्रश्नों का उत्तर दिया गया है, क्योंकि पत्रों द्वारा पूरा स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। जब कभी मेरा और आपका समागम होवे तब आप को मैं ग्रन्थों के प्रमाणों, युक्तियों के साथ स्पष्ट ठीक २ निश्चय करा सकता हूँ। आप को और भी जो कुछ सन्देह सत्यार्थप्रकाश के बारहवें समुल्लास में होवें। (मेरठ के आर्यसमाज द्वारा) लिख कर भेज दीजिये, सब का ठीक उत्तर दे दिया जायगा। अब मैं यहां थोड़े दिन तक रहूँगा। यदि आप अम्बाला तक आ सकें तो ता० १७ नवम्बर १८८० तक प्रातः ८ बजे से पहले पहले डेरादून में उसके पश्चात् आगरा मुझ को तार में सूचना देनी

---

१. पूर्ण संख्या २६०, पृष्ठ २४६ पर। यु० मी०।

चाहिये कि मैं आप से शास्त्रार्थ अर्थात् परस्पर वार्तालाप के लिये यहां पहुँच सकूं। बुद्धिमान् मनुष्य के लिए इतना पर्याप्त हैं। अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं।

सं० १९३७ मिति कार्त्तिक शुदी १३ रविवार[1]।

हस्ताक्षर—दयानन्द सरस्वती डेरादून

---

[६] पत्र (२३३) [२९३]

॥ ओ३म् ॥[2]

तारीख १५ नवम्बर सं० ८० ई०।
मिति कार्तिक सुदी १४ सं० १९३७ चन्द्रवार
देहरादून से।

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो।

नमस्ते। तुम हमारे दोनों बेग कि जिस में हमारे वस्त्र साल जोड़ी आदि और बरतन रसोई आदि कहां पर और किस की सुपुर्द करके आये हो। और जो रुपया कोठी से तुम लाये हो उस का व्योरा, कि किस २ क़दर और कितना कितना और किस को सोंपा है। और मुंशी जी की निस्बत छापेखाने में गड़बड़ करने के मआमले में जान्ता हो या नौकरों चाकरों से सुन रक्खा हो, और या जो को[ई] चीज फौंडरी वग़ैरे लकड़ी आदि की बनाते या बनवाते देखा हो, सो सब का एक पत्र पर ठीक २ व्योरा लिख कर काशी जी को भेज दो। और एक पत्र मुझ को शीघ्र लिख दो। क्योंकि वह सब बातों में युं कहता है कि मुझ को कोई चीज मालूम नहीं है। सब बातों का हाल भीमसेन जी जानते हैं। क्योंकि उस का कोई हिसाब किताब तो दुरुस्त है ही नहीं। और सब बातों में गड़बड़ाट कर रक्खा है। ठीक २ जवाब दे नहीं सकता है। उलटा लड़ने को दौड़ता है। परन्तु मास्टर शादीराम जी और पण्डित ज्वालादत्त जी योग्य आदमी हैं। वे उस के कहने पर बुरा नहीं मानते। अपना काम उनसे निकालते हैं। वह अपनी साथ तुम को भी लपेटना चाहता है। और अपनी बदनामी तुम्हारे ऊपर रक्खा चाहता है। क्योंकि उसकी कई एक बातें वहां पर पकड़ी गई हैं। और मास्टर जी ने मालूम कर लई हैं। उन को उस ने यही जवाब दिया है कि मुझ को कुछ मालूम नहीं। भीमसेन जाने। देखो जैसे कि उसने अंग्रेजी फर्मा चढ़ा रक्खा था। और तुम ने कहा था कि तुम बिना आज्ञा स्वामी जी [के] क्यों चढ़ाया। तब उसने जवाब दिया था, कि अब जो मैं यहां से दूसरी जगेह ले जाऊं, तो मेरा चार पांच सौ रुपय का नुकसान होता है। और यह भी कहता है कि कोठी से रुपये लाने या लेजाने की निस्बत मुझ को कुछ भी मालूम नहीं है। और यह भी हम को यकीन है कि तुम्हारे पास ऐसी लिखत मिति वार तो नहीं होगी, जैसा कि कब और कितना २ रुपया और किस के देने को आया। और किस को दिया गया है। मिति वार है या नहीं। अगर ऐसी क़िसम की हो तो बहुत अच्छी बात है। क्योंकि ऐसी लिखत के मौजूद होने से बहुत मतलब हासिल होगा। अगर तुम्हारे

---

१. १४ नवम्बर १८८०। पृ० २४८ टि० ३ यहां भी लागू है।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

पास न हो, तो कोठी पर मितिवार सब रुपये की अम्मद रफ़त मालूम हो सकती हैं । वहां से हो सकता है। और तुम सब वस्तुओं की तैदाद लिख कर जो जो तुम्हारी दानिस्त में हो, बहुत शीघ्र लिख कर एक पत्र काशी को और दूसरा हम को लिख भेजो, ताकि वह तुम्हारा नाम से बरी न होने पावे। और सब चीज़ों का पता ठीक ठीक बतला देवे। जो जो हिसाब रुपये जमा कर आने या सोंपने या मुन्शी जी के काम में आने की निस्बत तुम को मालूम हो, वह भी, और जो हिसाब चलती बेर बाबत मौजूदगी रुपयों की कि जो मुंशी जी के पास जमा थे, और जो कोठी पर थे, हम तुम को लिखवा आये थे, वह भी सारी बातों का हिसाब लिख पढ़ कर जल्दी हमारे पास भेज दो। और काशी वालों को भी, इतला दे दो, कि जिस्से वह लोग सब हाल जानकर मुन्शी जी की निस्बत अदालत में दावा कर दें। और मुंशी जी भी तुम्हारी निस्बत कुछ झूट न कह सकें। जिन जिन बातों का सबूत फोंडरी आदि लकड़ी की किसी वस्तु का मुंशी जी की निस्बत तुम जानते हो या कोई लिखत पढ़त तुम्हारे पास इस किसम की मौजूद हो, कि जिस से स्पुर्द करना किसी वस्तु आदि या रुपये पैसे का मुंशी जी की निस्बत ठीक सबूत हो जावे, फौरन लिख कर हमारे और काशी वालों के पास भेज दो । और अब वहां का काम बसबब मास्टर शादीराम व पण्डित ज्वालादत्त के उम्मद है कि अच्छी तरह से होगा और मुंशी जी की सारी कलई सब बातों की खुल जावेगी। देखो बड़े शोक की बात है कि वक्त के ऊपर तुम को बेमार हो जाना, और तुम्हारा वहां से जल्दी चले आना। और मास्टर साहब, ज्वाला दत्त का तुम्हारे सामने न पहुँचना, यह तमाम कारण बखतावरसिंह के करने का छापेखाने में हुआ । वर्नेः तुम्हारे हुये, यानि तुम्हारे साम्हने ऐसा कभी न होता क्योंकि देखो, मुन्शी जी ने अकलमंदी से और चालाकी से आधी वस्तु छापेखाने की अपनी बना लई हैं। और रुपये का कुछ हिसाब नहीं देता और जो कोठी का हिसाब समझने के लिये मास्टर वा पण्डित कहते हैं, कि चलो, तो बिल्कुल जाना कबूल नहीं करता। और गाली गुफ्तार बकने लगता है। यह कुल कारण माल के हज़म करने का है । हम मिति मार्गशिर वदि २ बृहस्पतवार सम्वत् १९३७ को आगरे में पहुंचेंगे।[१] इस लिये तुम को उचित है कि सारी बातों का जवाब लिख कर ठीक २ हम को आगरा में खबर दो, और एक पत्र लिख कर सारी बातों का हाल से जो २ तुम जानते हो और जहां तक मालूम हो सके, जल्द लिख भेजो। और तुम भी लिखो कि अगर हमारे पास आना समझो और तुम्हारा शरीर भी दरुस्त हो गया हो तो हम को लिखो। अगर तुम आवो, तो हम दूसरा पण्डित न रक्खें । मुफस्सिल लिखो । शीघ्र जवाब से इतला दो[२] ।

द० [दयानन्द सरस्वती]

---

[३०] विज्ञापन[३] [२९४]

सब सज्जनों को विदित हो कि अब १५ नवम्बर सन १८८० से मुंशी बखतावरसिंह को जो वैदिक यन्त्रालय के मैनेजर थे वे यहां के काम से अपने दोष से अलग कर दिये गये हैं।

---

१. १८ नवम्बर १८८०। २. यह लेखक बहुत अशुद्ध लिखता है।

३. यह विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य के २०, २१ सम्मलित अंक (मार्गशीर्ष सं० १९३७) के अंक पर छपा है अतः यह नवम्बर १८८० के उत्तरार्ध में लिखा गया होगा। यु० मी०।

उन्होंने सर्वथा अपने लाभ और वैदिक प्रेस के हानिकारक अनुचित काम जो उनके करने योग्य न थे किये । हम उन कामों को जान चुके हैं और कुछ दिनों वा महिनों में सब को विदित हो जायेंगे । प्रिय पाठक जनों कुछ चिन्ता नहीं, अच्छे और बुरे कामों का फल कर्त्ता को ही होता है ॥

अब कोई ग्राहक वेदभाष्य आदि पुस्तकों के लिए मुंशी बखतावरसिंह के समीप पत्र वा धन न भेजे और जो भेजेगा तो हम जिम्मेदार नहीं हैं ॥

ता० १६ नवम्बर सन् १८८० से वैदिक यन्त्रालय के मैनेजर सादीराम जी हैं । इन के नाम से पत्र और इन्हीं के समीप धन (लाला सादीराम मैनेजर वैदिक यन्त्रालय लक्ष्मी कुण्ड बनारस) इस पते से भेजा करें । यह सब के समीप उत्तर, रसीद और पुस्तक उचित समय पर भेजा करेंगे ॥

जिस ग्राहक के हिसाब में ४ वरस के २५॥) रुपयों में से जितने २ बाकी दाम हों, लाला सादीराम जी के पास उक्त पते से शीघ्र भेज दे । और जब से वैदिक यन्त्रालय नियत हुआ है उस समय से लेकर १५ नवम्बर सन् १८८० तक के हिसाब में से मुंशी बखतावरसिंह के पास दाम भेजे हों उनकी रसीद वेदभाष्य के टाइटल पेज पर न छपी हो और ग्राहकों के पास मुंशी बखतावरसिंह की हस्ताक्षरी वा मनियाडर की हो तो उसकी सूचना यन्त्रालय के मैनेजर को कर दे कि जिस से सब का हिसाब ठीक ठीक विदित हो । क्योंकि मुं० ब० ने हिसाब जैसा चाहिये वैसा सफाई से नहीं लिखा । इस में ग्राहकों की कुछ हानि नहीं, किन्तु छापेख़ाने के मालिक की हुई है, क्योंकि ग्राहक लोग तो छापेखाने के मालिक के विज्ञापन पर दाम भेजते हैं मैनेजर के विश्वास पर नहीं, इसलिये ग्राहकों को रुपये भेजने में शंका देर और अविश्वास न करना चाहिये ।

जो आर्यदर्पण समाचार पत्र छपता है, वह न स्वामी दयानन्द सरस्वती जी की ओर से और न किसी आर्यसभासद की ओर से है, किन्तु केवल मुंशी बखतावरसिंह की ओर से है ।

———

[१]　　　　**पत्र सूचना (२३४)**　　　　[२९५]

[मास्टर शादीराम जी काशी][1]

मुन्शी बखतावर सिंह के हिसाब की गड़बड़ी जाचने के विषय में ॥

———

[१]　　　　**पत्र (२३५) कार्ड**　　　　[२९६]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो ।[2]

और मैं देहरादून से यहां आया । चोबे तोताराम की गफलत से पुस्तकों का अस्त व्यस्त हो जाना है । और अब मैं यहां से दो चार दिनों में आगरे को जाऊंगा । और वहां मैं १ महीना रहूंगा । और मास्टर शादी राम जी की जामनी लाला रामशरणदासजी ने कर दीनी है । और मुन्शी बखतावर

---

१. इस पत्र का संकेत पं० ज्वालाप्रसाद ने अपने मार्गशीर्ष वदी ८ संवत् १९३७ (२५ नवम्बर १८८०) के पत्र में किया है । देखो म० मुंशीरामसम्पादित पत्रव्यवहार पृ४ ४०८ । यु० मी० ।

२. यह पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ४ ५१६, ५२० पर छपा है । वहां कुछ शब्द बदले हुए हैं हम ने इसे मूल पत्र से छापा है । मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है । फरुखाबाद का इतिहास पृ४ १८५ पर भी मुद्रित है ।

सिंह जी की चिट्ठियों से मालूम हुआ कि उनके ऊपर कानून से पेश आना चाहिये। सो ठाकुर मुकंद सिंह भूपालसिंह जी मुखतार हैं[1]। सब काम कर लेंगे।

सं० १९३७ मि० मा० व० ४ रविवार[2]।

(दयानन्द सरस्वती)

---

[२५] पत्रांश (२३६) [२२७]

[मुन्शी बखतावरसिंह शाहजहांपुर]

तुम आगरे में आकर स्वामी को हिसाब समझादो।[3]

२२ नवम्बर १८८० अलीगढ़ (कोयल) से

[३] तार का अंश [३] [२२८]

[मुन्शी इन्द्रमणि मुरादाबाद]

आकर मिलो[4]।

[३] पत्र (२३७) [२२९]

ॐओ३म्ॐ

एच्० पी० मेडम ब्लेवरतकी जी आनन्दित रहो।

आपकी चिट्ठी ता० ८ अक्टूबर सन् १८८० ई० की लिखी हुई बाबू छेदीलाल जी रईस मेरठ के द्वारा मेरे पास देहरादून में पहुंची[5]। इसका क्रमानुसार उत्तर सत्य निश्चय से देता हूँ। आपने जो अमरीका से पत्र और उनके उत्तर में यहां से मैंने वहां पत्र भेजे थे, पुनः आपका और मेरा समागम सहारनपुर, मेरठ, काशी और फिर मेरठ में हुआ था। उन सब के अनुसार अपने निश्चय के अनुकूल सब दिन मैं वर्त्तमान करता रहा हूँ। परन्तु वैसा वर्त्तमान आपका ठीक २ नहीं देखता हूं, क्योंकि प्रथम आप लोगों ने जैसा लिखा था, जैसा समागम में प्रथम विदित किया था, वैसा अब कहां है ? आप अपने आत्मा से निश्चय कर लीजिये। प्रथम संस्कृत पढ़ने, शिक्षा लेने, सुसायटी को आर्य्यसमाज की शाखा करार देने आदि के लिये लिखा था, और वे चिट्ठियां छप के सर्वत्र प्रसिद्ध भी हैं, और जो मैंने पत्र वहां भेजे थे उनकी नकल भी मेरे पास उपस्थित हैं। देखिये कि जब अभी मेरठ में उस दिन रात को आर्यसमाज और सुसायटी के नियम विषयक बातें हुई थीं, तब मैंने आप और अन्य सब के सामने

---

१. देखो मुख्तियारनामा, पूर्ण संख्या १७३ पृष्ठ १४६। २. २१ नवम्बर १८८०, अलीगढ़।

३. इस पत्र का संकेत सेठ कालीचरण रामचरण के नाम लिखे विना तिथि [६ फरवरी १८८१ माघ शुक्ल ११ सं० १९३७] के पत्र में है। यह पत्र यथास्थान आगे छपा है, वहां देखें। यह रजिस्टरी चिट्ठी ठाकुर मुकुन्दसिंह भूपालसिंह अपने आममुख्तार से श्री स्वामी जी ने स्वयं भिजवाई थी। यु० मी०।

४. इस तार का संकेत सम्पादक देशहितैषी के नाम पौष शुक्ल १ सं० १९३९ (१० जनवरी १८८३) को लिखे पत्र में है। यह पत्र आगे यथास्थान छपा है, वहां देखें। तार सम्भवतः, नवम्बर २१ या २२ सन् १८८० को भेजा होगा। यु० मी०।

५. मैडम का यह पत्र श्रीमद्दयानन्दप्रकाश तथा परोपकारी पत्र में छपा हुआ है।

क्या यह बात नहीं कही थी कि आर्यसमाज के नियमों से सुसायटी के नियमों में कुछ भी विशेष नहीं ? यही बात मैंने बम्बई की चिट्ठी में भी आपके पास लिख भेजी थी। उन्हीं के अनुसार मैं अब भी बराबर मानता और कहता हूं कि आर्यसमाजस्थों को सुसायटी में धर्मादि विषयों के लिये मिलना उचित नहीं। और यही बात आप वा एच् एस् करनेल ओलकाट साहिब ने अपने पुस्तक, उपदेश और संवाद में क्या नहीं लिखी और नहीं कही है कि जो सत्यधर्म सत्यविद्या और ठीक २ सुधार की और परम योग आदि की बातें सदा से जैसी आर्य्यावर्त्तीय मनुष्यों और वेदादि शास्त्रों में थीं और है वैसी कहीं न थीं और न हैं। अब विचारिये कि थियोसोफीष्टों को एतद्देशवासी मत में मिलना चाहिये किंवा आर्य्यावर्त्तियों को थियोसोफीष्ट होना चाहिये। और देखिये कि आज तक मैंने वा किसी आर्य समाजस्थ ने किसी थियोसोफीष्ट को आर्यसमाज में मिलने का उपदेश वा प्रयत्न कभी किया है ? और आप अपनी बात को अपने आत्मा में विचार लीजिये कि आप ने क्या करी और क्या करते जाते हैं। कितने ही आर्यसमाजस्थों को थियोसोफीष्ट होने के लिए कितना प्रयत्न और कितना उपदेश किया। और कइयों से १०) दस २ रु० फीस सभासद होने के लिए, लिए हैं। और मेरठ में बात होने के पश्चात् बाबू छेदीलाल जी से अम्बाले में थियोसोफीष्ट होने के लिये क्या न कहा था, और शिमले से चिट्ठी न भेजी थी ? इसीलिए अवश्य मैंने मेरठ आर्यसमाज में सबके सामने पूर्वोक्त हेतुओं से यह कहा था कि जो कभी आप वा एच् एस् करनेल ओलकाट साहिब वा और कोई थियोसोफीष्ट अथवा अन्य कोई जन किसी सभा में सभासद होने के लिए कहे तब उसको यही उत्तर देना कि जो आर्यसमाज के नियमों से थियोसोफिकल सुसायटी आदि के नियम और उद्देश एक ही हैं तो हम और वे भी सब एक हैं और जो विरुद्ध हैं तो हमको सुसायटी वा अन्य किसी सभा में मिलना कुछ आवश्यक नहीं। और तब तक आर्यसमाज के नियम अखण्डित हैं कि जब तक उनमें कोई बात खण्डनीय विदित न हो। अब कहिए निर्भ्रान्त पोप रूम की बात मेरी हैं वा आपकी ? और जो मैंने, अन्य देशियों के समाज में मित्रता और स्नेह वैसा कभी नहीं हो सकता जैसा कि स्वदेशियों के समाज में, यह बात इस प्रसङ्ग पर कही थी, कहता हूं और कहूंगा कि (असिद्धं बहिरङ्गमन्तरङ्गे) अर्थात् जिनका एक देश, एक भाषा, एकत्र जन्म, सहवास और विवाहादि व्यवहार सम्बन्ध आपस में होते हैं उनसे उनको जितना लाभ और उनकी उनमें जितनी प्रीति होती है उतना अन्य देशवासियों से अन्य देशवासियों को लाभ और उन्नति नहीं हो सकती। देखिये भाषा ही के केवल भेद होने होने से मुझ को और योरपियन को कितनी कठिनता परस्पर उपकार होने में होती है। और जिन के पूर्वोक्त सब भिन्न हैं उन में पूर्वोक्त बातें कम होती ही हैं। और जिनके वे सब एक हैं उनमें वे बातें सहज से शीघ्र अधिक होती हैं इस में क्या सन्देह है। और दूसरे दिन भी थोड़ा सा अनुवाद अवश्य कर दिया था क्योंकि जिस को रोग होता है उसी को निदान और पथ्य आदि करना आवश्यक हैं, निरोगी के लिये नहीं। जब हम लोग थियोसोफिष्टों को भी आर्यसमाज के अवयवभूत शाखास्थ भ्रातृगणवत् मानते आये थे, और जहां तक बनेगा मानेंगे, ऐसा जानकर उनको आर्यसमाज में मिलने और उन से १०) रुपए फीस लेने आदि के लिये प्रयत्न न किया था और अब नहीं करते, उनसे यथाशक्ति प्रेम और उनका उपकार ही करते हैं, हां जो कोई आर्यसमाज वा सुसायटी से भिन्न हैं वे उपदेश से समझ कर वेदमत में अपनी प्रसन्नता से स्वयं मिलते जाते हैं तो हम लोगों के लिये वह निषेध करना भी औषध नहीं

क्योंकि हम में वह रोग ही नहीं है । अब आप लिखती हो कि सिवाय आपके और बम्बई, लाहौर और अन्यत्रस्थ भी आर्यसमाजिक लोग हमारी सुसायटी में हैं, परन्तु हमने उन से सरीख होने को कभी नहीं कहा, यह बात सच नहीं । क्योंकि आपने बम्बई में मुन्शी समर्थदान आदि, प्रयाग में पंडित सुन्दरलाल आदि आर्यसभासदों को सुसायटी में मिलने को अवश्य कहा था । इस का साक्षी मैं ही हूं क्योंकि मेरे विना सुने मुझ को खबर भी नहीं थी और जैसे मेरा नाम सुसायटी के सभासदों में लिखती हो वैसा अन्यत्र भी आप ने किया होगा, इस में कुछ सन्देह नहीं । और जो बात आप आर्यसमाज के नियमों से विरुद्ध प्रत्येक धर्म के लोगों की प्रतिष्ठा और सब धर्म वाले हमारी सुसायटी में मिलें और उनके धर्म पर हम हाथ नही डालते हैं किन्तु एक भाईपन होने के लिये शामिल करते हैं और कोई बात उसकी थियोसोफीष्ट होने में निषेधक नहीं हो सकती । अब मैं इसमें आपसे पूछता हूँ कि आप का धर्म क्या है ? जो आप कहें कि हमारा धर्म सबसे विरुद्ध है तो दूसरे धर्म वाला आपकी सुसायटी में कभी नहीं मिल सकता । जैसा रात दिन का विरोध है वैसे विरुद्ध धर्म होते हैं । और जो कहें कि हमारा धर्म किसी से विरुद्ध नहीं तो उसमें मिलना किस लिये हो, क्योंकि वे एक ही हैं । जैसे मुसलमान अपने मज़हब से भिन्न को काफिर और उनसे मेल कभी न करना चाहिये कहते हैं, इत्यादि धर्म वाले लोग आप की सुसायटी में कैसे मिल सकते हैं । जो वे भ्रातृभाव से अन्य मत वालों से आत्मा और मन करके प्रीति करते हैं तो उनका धर्म जाता है और अपना रक्खें तो आप का नहीं रहता । एक चित्त से एक समय में दो बातें हो ही नहीं सकतीं, इत्यादि बातों का उत्तर लिखियेंगी । और विशेष इस विषय में जब सन्मुख बैठ के परस्पर हम आप बातें करेंगे तभी निश्चय होगा । क्या यह बात सर्वथा असंभव नहीं है कि स्वामी जी भी अढ़ाई वर्ष से हमारे सब से उत्तम सभासदों में एक हैं । भला आप कहिये तो कि मैं ने आप की सुसायटी का सभासद् होने के लिये कब दर्खास्त भेजी थी ? और मैंने कब आप से कहा था कि मैं आप की सुसायटी का सभासद् होना चाहता हूं ? क्या मैंने जो बम्बई में चिट्ठी भेजी थी, उस बात को भूल गईं कि जो मैं सिवाय वेदोक्त सनातन आर्य्यावर्त्तीय धर्म के अन्य सुसायटी समाज वा सभा के नियमों को स्वीकार न करता था, न करता हूं, न करूंगा । क्योंकि यह बात मेरे आत्मा की दृढ़तर है; शरीर, प्राण भी जायें तो भी इस धर्म से विरुद्ध कभी नहीं हो सकता । हाँ यह अपराध आप लोगों ही का है कि बिना कहे सुने सुनाये अपनी इच्छा से आपने मेरा नाम कहीं अपने सभासदों में लिख लिया होगा, सो क्योंकर सच हो सकता है । और इस बात को क्या भूल गये कि मेरठ में मूलजी ठाकरसी के सामने जहां आप भी सामने बैठी थीं, एच् एस करनेल ओलकाट साहब को मैंने कही थी कि आप ने बम्बई की कौशल में मेरा नाम सभासदों में क्यों लिखा, ऐसा काम आप लोग कभी मत कीजियेगा कि जिस में मेरी सम्मति न हो और आप अपने मन से कर बैठोगे तो मैं उस बात का स्वीकार कभी न करूंगा । उस पर करनेल ओलकाट साहब ने कहा था कि हम ऐसा काम कभी न करेंगे । और बम्बई में मैंने चिट्ठी भी दी थी कि मेरा नाम आपने अपनी इच्छा से जहां कहीं सभासदों में लिखा हो काट दीजिये । इतने हुये पर फिर भी आपने इस चिट्ठी में जो यह बात लिखी इस को कोई भी सच कर सकता है ? क्या आश्चर्य की बात है ? आये तो विद्यार्थी और शिष्य बनने को, गुरु और आचार्य्य बनना चाहते हो । ऐसी पूर्वाऽपर विरुद्ध बातें करना किसी को योग्य नहीं । जो आप ईश्वर को कर्त्ता, धर्त्ता नहीं

मानती हो। सो बात इसी संवत् १९३७ के भाद्र महीने की है। इस के आगे आप ने मुझ से कभी न कहा और न किसी से मैंने सुना था कि आप ईश्वर को वैसा नहीं मानती हो, सिवाय काशी के समागम में प्रमोददास मित्र और डाक्टर लाजरस साहब के। क्या आप ने काशी में डाक्टर टीबो साहिब आदि के सामने कोठी के बाहर चौंतरे पर श्याम को बैठे थे जब प्रमोददास मित्र ने मुझ से कहा था कि मेडम तो अनीश्वरवादिनी, नास्तिकिनी है तब मैंने उन को उत्तर दिया था कि मेडम साहिब की बात को तुम समझे न होगे। और दामोदर से मैंने कहा था मेडम साहिब ईश्वर को मानती हैं वा नहीं तब दामोदर ने आप से पूंछ कर मुझ से कहा था कि मानती हैं। क्या यह बात भी झूंठ है? और मेरी बात अद्भुत भेद करने वाली आप की ओर नहीं, किन्तु आप की बातें मेरी ओर भेद करने वाली हैं। मैं आप को भगिनी वा मित्र के समान जानता था, जब तक कोई ऐसा विशेष कारण न होगा तब तक जानूंगा भी, क्योंकि मैं और जितने सज्जन आर्य्य हैं वे जैसा सदा से मानते आये हैं और मानेंगे भी कि सामान्यतः आर्य्यावर्त्तीय इङ्गलेण्ड और अमरीका आदि भूमण्डलस्थ देशनिवासी मनुष्यों को सब दिन से भ्रातृ और मित्रवत् मानना है परन्तु सत्यधर्म व्यवहारों के साथ, असत्य और अधर्म के साथ नहीं। यहां के अंगरेज़ लोग आर्य्यों को चाहे वैसा मानें। क्या वे राज्याधिकारी हों वा व्यवहारिक हों मुझको भी अपनी समझ के अनुकूल यथेष्ट मानें। मैं तो सब मनुष्यों के साथ सुहृद्भाव से सदा वर्तता आया और वर्तना चाहता हूं। और जो उनका यह कहना कि हम इसका कोई दृढ़ हेतु नहीं देखते कि स्वामी जी के अनन्तर और आर्य्यसामाजिकों से भी वैसा ही वर्त्तें। यह उनका कहना तब तक है कि जब तक वे आर्य्यावर्त्तस्थ आर्यों का पूर्व इतिहास, आचार, उन्नति, विद्या, पुरुषार्थ, न्यायवृत्ति, आदि उत्तम गुणों और वेदादि शास्त्रों के सत्य २ अर्थों को न जानेंगे, परन्तु कालान्तर में उनका यह भ्रम अवश्य छूट जायगा। तथापि मैं परमात्मा को धन्यवाद देता हूं कि जो हमने आपस के विरोध, फूट, अनाचार करने, और जैन और मुसल्मान आदि की पीड़ा और भ्रम जाल से कुछ २ अलग स्वास्थ्य और स्वतन्त्रता प्राप्त की है कि जिस से मैं वा अन्य सज्जन लोग अपना २ सत्य अभिप्राय युक्त पुस्तक रचने, उपदेश करने और धर्म में स्वाधीनपन से आनन्द में प्रवृत्त हो रहे हैं क्या जो श्रीयुत भारतेश्वरी महाराणी, पारलीमेन्ट सभा और आर्यावर्त देशस्थ राज्याधिकारी धार्मिक विद्वान् और सुशील न होते तो क्या मेरा वा अन्य का मुख प्रफुल्लित हो कर व्याख्यान वेदमत प्रचारक पुस्तकों की व्याख्या करनी भी दुर्लभ न होती, और आज तक शरीर भी बचना कठिन न था, इसीलिए पूर्वोक्त महात्माओं को हम लोग धन्यवाद देते हैं। आप लोगों को अवश्य स्मरण होगा कि जो काशी की चिट्ठी के उत्तर में आप लोगों ने लिखा था कि जो आप भी वेदों को छोड़ दें तो भी हम लोग कभी न छोड़ेंगे। यह आप लोगों की बात प्रशंसनीय और धन्यवादार्ह है। ऐसे ही सब योरूपियन इस उत्तम बात में मिलें तो क्या ही कहना है और जो कभी न मिलें, हम आर्यों और आर्यसमाजों की कदापि हानि नहीं हो सकती, क्योंकि यह बात नवीन नहीं है। हम लोग जब से सृष्टि और वेद का प्रकाश हुआ है उसी समय से आज पर्यन्त ऐसी बात को मानते आते हैं। क्या हुआ कि अब थोड़े समय से अपनी अज्ञानता और उत्तम उपदेशकों के बिना बहुत से आर्य्य वेदोक्त मत से कुछ २ विरुद्ध और बहुत से अनुकूल आचरण भी करते हैं। अब जिसको प्रसन्नता हो अपनी और सब की उन्नति के लिए इस

आर्यसमाज में मिलें वा न मिलें। उनके न मिलने से हमारी कुछ हानि नहीं, किन्तु उन्हीं की हानि है। हम लोगों का तो यही अभीष्ट, यही कामना और यही उत्साह है कि सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी। और ऐसे तो कोई भी कह सकता है कि फलाने के सी मेरी सी सम्मति वा बड़ा विचार फलाने का नहीं है। फलाना ईश्वर को कर्त्ता धर्त्ता मानता है इसलिये उससे हम प्रेम क्यों करें। परन्तु यह बात आपकी सुसाइटी का मुख्य उद्देश्य जो सब को बन्धुवत् जानना आप कहते हैं उसको काट देती है। सोच कर देखिये कि हानि के कारण किनकी ओर हैं। हमारा तो संसार का उपकार करना और हानि किसी की न करना मुख्य तात्पर्य है, सो है ही है। यहां हम भी कह सकते हैं कि जो थियोसोफीष्ट आर्यसमाजों से विरोध करेंगे तो हमारी कुछ भी हानि नहीं, किन्तु वे आप ही अपने भ्रातृभाव मुख्य उद्देश्य को नष्ट कर अपनी हानि कर लेंगे। हम तो हमारा स्वभाव जो कि धर्मात्माओं से सुहृद्भाव और अधर्मियों को धर्मात्मा करने में प्रयत्न और बन्धुवत् स्नेह करना है, करते हैं और करते रहेंगे, जितना कि हम कर सकते हैं (अब अपना पूर्वापर व्यवहार को समझ कर जैसा हित हो वैसा कीजिये) ऐच् एस् करनेल ओलकाट साहेब आदि को मेरा नमस्ते कह दीजियेगा।

सं० १९३७ मि० मा० ब० ६ मङ्गलवार।[1] दयानन्द सरस्वती

---

[१] **पत्र सूचना[2] (२३८)** [३००]

ला० श्यामसुन्दर दास मुरादाबाद[3]

यह चन्दा किसी की ज़ात ख़ास के वास्ते नहीं, वा सर्फ रिफा आम के लिए है।

२४ नवम्बर १८८०[4]

---

[४] **पत्र सूचना[5] (२३९)** [३०१]

मुन्शी इन्द्रमणि जी ... ...

यह चन्दा का रुपया वैदिक फण्ड (निधि) कहलावेगा। और आर्यों के लिये इस फण्ड में जमा होता रहेगा।

२९ नवम्बर १८८०[6]

आगरा दयानन्द सरस्वती

---

१. २३ नवम्बर १८८०।

२. मुंशी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वा० दयानन्द का संन्यास। जगन्नाथदास कृत पृ० १८।

३. यह सन्दिग्ध है। जीवनचरित्रों के अनुसार २२ नवम्बर से २७ नवम्बर तक मेरठ रहे थे; इस पत्रव्यवहार से इतना स्पष्ट है कि २१, २२ नवम्बर को स्वामी जी महाराज अलीगढ़ में थे। देखो पूर्ण संख्या २६७ (पृष्ठ २५४) तथा पूर्ण सं० ३३४ (६ फरवरी १८८१) का सेठ कालीचरण के नाम और पौष शुक्ल १ सं० बुधवार १९३६ (१० जन० १८८३) का सम्पादक देशहितैषी के नाम का पत्र। ये दोनों यथा स्थान आगे छपे हैं। यु० मी०।

४. मार्गशीर्ष कृष्ण ७, बुध सं० १९३७। यु० मी०।

५. रिसाला मुंशी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वा० दयानन्द सरस्वतीका संन्यास(उर्दू)रचयिता जगन्नाथदास।

६. मार्गशीर्ष कृ०१२सोम१९३७। हमें इस तारीखमें सन्देह है,क्योंकि इस तिथि से पूर्व ही इन्द्रमणिने हिसाब देनेमें गड़बड़ी की थी। देखो पौष शु०१ बुधवार सं० १९३६ का सम्पादक देशहितैषी के नाम का पत्र। यु०मी०

[९] पत्र सूचना (२४०) [३०२]

[मुंशी इन्द्रमणि, मुरादाबाद]

यदि यह बात सत्य है, तो इस में आप की बड़ी निन्दा होगी। आप शीघ्र आइये[1]।

आगरा

---

[१२] पत्र (२४१) [३०३]

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो!

आप का २६ नवम्बर का पत्र मिला। समाचार ज्ञात हुआ। आजकल हम आगरा में हैं, और व्याख्यान देते हैं और लगभग एक मास यहां रहने का विचार है।

यह अब स्पष्ट है कि बहुत से पढ़े लिखे लोगों को भी नौकरी नहीं मिलती, या वे जीवन-निर्वाह का प्रबन्ध नहीं कर सकते। ऐसी अवस्था देख कर मैं एक कला कौशल के स्कूल की आवश्यकता विचारता हूँ। प्रत्येक पुरुष को अपनी आय का १००वाँ भाग प्रस्तावित संस्था को देना चाहिये। उस धन से चाहे तो विद्यार्थी कला कौशल सीखने जर्मनी भेजे जावें या वहां से अध्यापक यहां बुलाये जायं। जो कोई इस फण्ड के व्यय पर इन धन्दों को सीखे, उसे प्रतिज्ञा करनी होगी कि स्वशिक्षा समाप्त करने पर सभा या फण्ड की वह १२ वर्ष तक सेवा करेगा। यह प्रश्न यहाँ विचारा जा रहा है और जब कोई परिणाम निकलेगा तो हम आप को सूचना देंगे। मैंने एक गुजरांवाला के आत्माराम जैनी के भ्रमों के उत्तर लिखवाये हैं[2] और वहां के आर्य्यसमाज द्वारा उसे भिजवाये हैं। मुझे इनके विषयमें सब कुछ लिखना। कर्नल आल्काट और मेडम ब्लेवस्तकी के पत्र का उत्तर मैंने भेज दिया है[3]। मैं आशा करता हूं कि आप ने उसे देख लिया है। वह नास्तिकता की ओर झुके हुए दिखाई देते हैं। कदाचित् वह पहले भी ऐसे ही झुके हुये थे, परन्तु दूसरे के के मन की कोई क्या कह सकता है?

मुझे अपने भाइयों और उन के अब के पता का हाल लिखो। अब समय है कि आप ला० श्रीराम को कला कौशल सीखने इङ्गलैण्ड भेज दें।

जर्मनी से पत्र आ रहे हैं[4]। हम सब आनन्द में हैं। सब से हमारा नमस्ते कह दें[5]।

ह० दयानन्द सरस्वती

३० नवम्बर १८८०[6] बाग गिरधारी लाल

आगरा।

---

१. देखो पौष शु० १ बुधवार सं० १९३६ सम्पादक देशहितैषी के नाम का पत्र। सम्भव है यह पिछले [पूर्ण संख्या ३०१] पत्रसूचना वाले पत्र का ही अवयव हो। अथवा उस से दो एक दिन पीछे लिखे गये पत्र का संकेत हो। यु० मी०।

२. पूर्ण संख्या २९२, पृष्ठ २४८। यु० मी०।

३. सम्भवतः पूर्ण संख्या २९६, पृष्ठ २५४। यु० मी०।

४. देखो पृष्ठ २१४ टिप्पणी १। यु० मी०।

५. गुजरांवाला को भेजा गया। वैदिक मेगजीन सन् १९०८ से अनूदित किया गया।

६. मार्गशीर्ष कृष्ण १३ मंगल सं० १९३७। यु० मी०।

[४] पत्र (२४२) कार्ड[1] [३०४]

कृपाराम जी आनन्दित रहो !

पत्र तुम्हारा आया हाल विदित हुआ, मुन्शी बखतावर सिंह के हिसाब की जांच पड़ताल हो रही है। जालसाज़ी निकलती है। पश्चात् जैसा होगा लिखा जावेगा और अब तुम पुस्तकें निःसन्देह मंगा लो, और पानों की तशतरी वहीं रक्खी रहने दो। जब कभी हम आवेंगे देख लिया जावेगा, यहां व्याख्यान होता है और हम सब प्रकार से आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते।

आगरा } हस्ताक्षर
१ दि० १८८०[2] } दयानन्द सरस्वती

---

[१] रसीद[3] [३०५]

हमने आज मूल्य वेदभाष्य ८) बाबत चौथे वर्ष के किशनलाल से वसूल पाए।

आगरा } हस्ताक्षर
१ दि० १८८०[4] } दयानन्द सरस्वती

---

[६] पत्रसूचना [२४३] [३०६]

मु० इन्द्रमणि[5]
६ दिसम्बर[6] दयानन्द सरस्वती

---

[२] नं १.० पत्र (२४४) [३०७]

मन्त्री आर्य्यसमाज आनन्दित रहो।[7]

प्रकट हो कि पत्र तुम्हारा आया हाल मालूम हुआ। आज गुजरांवाला से अभी लाला मूलराज एम० ए० की चिट्ठी आई है। सो वहां कुछ प्रसिद्ध नहीं। और मित्र विलास तो विरोधी है। वह सदैव इसी प्रकार लिखता रहता है। जो वह कुछ प्रतिष्ठित होता तो लाहौर आर्य्यसमाज ही उस

---

१. मूल कार्ड पं० कृपाराम जी के भाई के पोते पं० मित्रानन्द जी फोटोग्राफर ओल्ड कैन्टोनमैण्ट रोड देहरादून के पास है। ता० २७।१२।३२ को म० मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की।

२. मार्गशीर्ष कृष्ण १४ बुधवार सं० १९३७। यु० मी०।

३. मूल रसीद मथुरावासी, श्री किशनलाल नागर के पुत्र श्री काशीलाल (प्रसिद्ध मोहनलाल) नागर के पास है।

४. मार्गशीर्ष कृष्ण १४ बुध सं० १९३७। यु० मी०।

५. मुंशी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वा० दयानन्द का सन्यास पृ० १८।

६. सन् १८८०। मार्गशीर्ष शु० ५ सोम, सं० १९३७। यु० मी०।

७. मन्त्री आर्यसमाज फरुखाबाद को लिखा गया। मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। फरुखाबाद का इतिहास ग्रन्थ के पृ० २८६ पर भी छपा है।

का सहायक होता। सो तुम कुछ शंका न करो। और ....तो अत्यन्त ही दुष्ट है। जो तुम को कुछ उनके विषय में लिखना हो तो आर्य्यसमाज गुजरांवाले से दर्य्याफ्त करलो और हम सब प्रकार से आनन्द में हैं। सभासदों को नमस्ते।

आगरा हस्ताक्षर

८ दि० १८८०[1] (दयानन्द सरस्वती)

[१.३] पत्र (२४५) [३०८]

लाला मूलराज जी एम० ए० आनन्दित रहो[2]!

आप का ६ दिसम्बर का पत्र मिला, समाचार विदित हुआ। हम आप को मेडम ब्लवत्सकी का पत्र अपने उत्तर सहित भेजते हैं[3]। उस में जो कुछ परिवर्तन करें, उस की हमें पहले सूचना दे दें।

आप उसे मुम्बई आर्य्यसमाज द्वारा पत्र भेज दें। कृपया देखने के पश्चात् मेडम ब्लवत्स्की का पत्र हमें लौटा दें। आजकल आत्माराम कहां है? जैनों के उत्तर में जो पत्र हम ने लिखे थे[4] वे अवश्य समाज के कार्यालय में होंगे। अच्छा होगा यदि आप उन सब को किसी समाचार पत्र में प्रकाशित करवा दें। अब हम उस समाज द्वारा जैनों को कुछ प्रश्न करना चाहते हैं[5]। आप अच्छा हो जो उस समाज से पूछ लें और हमें सूचना दें। क्या आप मुझे बता सकते हैं कि कला कौशल सिखाने का स्कूल कहां है?

यहां नगर के बाहर गोकुलपुर में एक छोटा सा समाज स्थापन किया गया है। सब को नमस्ते।

८ दिसम्बर १८८०[6]

[ह० दयानन्द सरस्वती]

आगरा।

---

[२] उर्दू पत्र (२४६) [३०९]

लाला शादीराम जी आनन्दित रहो[7]!

वाजे हो कि खत तुम्हारा आया, हाल मालूम हुआ। जो नोटिस सन्धि विषय पर छपेगा सो आप के पास रवाना करते हैं सो छाप देना। और पण्डित काशी नारायण साहिब मुनसिफ से आगरे चौथे वर्ष तक के २०॥) हमारे पास आये सो टाइटल पेज वेदभाष्य पर छाप देना। और एक खत लाला श्यामसुन्दर कोठी वाले मुरादाबाद का आया। वे लिखते हैं कि उनके पास अब की मरतबा एक ही

---

१. मार्गशीर्ष शुक्ल ७ बुधवार, सं० १९३७। यु० मी०।

२. गुजरांवाला को लिखा गया। वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरांवाला अक्तूबर-दिसम्बर १९०८, अंक १०, ११, १२ पृ० २५३ से अनूदित। ३. सम्भवतः पूर्ण संख्या २६६, पृष्ठ २४४ का। यु० मी०।

४. पूर्ण संख्या २६० (पृ० २४५), २६२ (पृ० २४८) यु० मी०।

५. ये इच्छित प्रश्न सम्भवतः पूर्ण संख्या ३२३ के पत्र (पृष्ठ २७१) वाले होंगे। यु० मी०।

६. मार्गशीर्ष शुक्ल ७ बुधवार, सं० १९३७। यु० मी०।

७. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर के पास सुरक्षित है।

वेदभाष्य पहुँचा । और वे पांच अङ्क हर एक वेद के लिया करते हैं और कीमत पेशगी दाखिल कर चुके हैं। सो इसका क्या सबब है । और ५० वेदभाष्य राजा जयकिशनदास तो लेते ही हैं मगर उनका लड़का कुंवर ज्वालाप्रसाद भी बरपता मुरादाबाद एक२ अंक दोनों वेदभाष्य का लेते हैं सो लिखो कि उनके नाम भी रवाना कर दिया या नहीं। और भूमिका वगैरा जुमला कुतुब फरोक्त दस दस यजुर्वेदभाष्य के रवाना करदो और हिसाब व किताब भी जांच पड़ताल करके जल्दी जहां तक मुमकिन हो बखतावरसिंह जी की जाल साजी ज़ाहिर करो और कीमत सन्धि विषय की ॥) रखो और हमेशा खत को तोलकर टिकट लगाया करो, स्वामी दयानन्द सरस्वती ।

दयानन्द सरस्वती
आगरा १० दिसम्बर १८८०[1]

———

[१] पत्र (२४७) [३१०]

ओ३म्

पं० गणेशप्रसाद जी आनन्दित रहो[2] !

तुम से जो साथ रहने के विषय में बात चीत हुई थी जिसका उत्तर विचार के देना कहा था सो क्या निश्चय किया । तुम्हारी शीघ्र और सुप्रचार लेख शैली से भाषा सम्बन्धी कार्य में सुगमता रहेगी । तुम्हारा संस्कृत बोध जो अधूरा लघुकौमुदी मात्र का है मेरे साथ में अच्छा हो जायगा । और व्याख्यान देने की शैली भी आजायगी । योग्यता बढ़ने पर वेदभाष्य के प्रूफ को शोधन भी करना होगा । तब मासिक वेतन में वृद्धि की जायगी । इसका उत्तर मंत्री जी के पत्र में लिख भेजना ।

१० दिसम्बर १८८० ई०[3] आगरा हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती)

———

[२] पत्र (२४८) [३११]

ओ३म्

पं० गणेशप्रसाद जी आनन्दित रहो[4]

कल एक पत्र भेजा था, पाया होगा । उसमें इतना और विशेष जानना कि जो तुम हिसाब का काम रुपये पैसे रखना आदि और करोगे तो २०) मुद्रा मासिक मिलेगा । सो तुम्हारे पिता जी

१. मार्ग शीर्ष शुक्ल ६ शुक्र, सं० १९३७ । यु० मी० ।

२. मूल पत्र पं० गणेशप्रसाद जी के पास फरुखाबाद में सुरक्षित था । म० मामराज जी ने फरवरी १९२७ में प्रतिलिपि की । फरुखाबाद का इतिहास पृ० १८६ पर भी छपा है ।

३. मार्गशीर्ष शुक्ल ६ शुक्र सं० १९३७ । यु० मी०

४. मूल पत्र पं० गणेशप्रसाद के पास फरुखाबाद में सुरक्षित था । म० मामराज जी ने फरवरी सन् १९२७ में प्रतिलिपि की । फरुखाबाद का इतिहास पृ० १८६ पर भी छपा है ।

लाला निर्भयराम की दूकान से प्रति मास ले लिया करेंगे। हम तुम्हारे शील स्वभाव से प्रसन्न हैं। देशी भाषा की परीक्षा पास कर चुके हो काम ठीक कर लोगे।

११ दिसम्बर ८०[1] (दयानन्द सरस्वती)

---

[२] पत्र (२४९) [३१२]

पंडित ज्वालादत्त जी आनन्दित रहो[2]।

विदित हो कि तुम्हारा पत्र आया, लिखा सो प्रगट हुआ, बड़े शोक की बात है कि तुमको कई बार लिखा कि व्याकरण में नवीन रचना की कुछ आवश्यकता नहीं है किन्तु जैसी सम्मिति देरेदून में ठहर गयी है उसी प्रकार से छपना चाहिये। और अब नामिक जैसा छपता है वैसे ही छपने दो, कुछ जरूरत नवीन रचना की नहीं है॥ और नामिक के पश्चात् कारकीय छपेगा। हम नहीं जानते थे कि शोधने में तुम्हारी ऐसी कच्ची दृष्टि है, देखो वेदभाष्य की शुद्धि अशुद्धि केवल चार पांच पत्र ही की नमूने के तौर पर लिखकर भेजते हैं उनको देखो और अपने शोधे हुए में सर्वत्र ऐसा ही जान लो॥ खैर अब ऐसा हुआ, आगे कभी ऐसा न होने पावे। शोधने में खूब दृष्टि दिया करो कि एक भी अशुद्धि न रहे[3]। दयानन्द सरस्वती

---

[३] उर्दू पत्र (२५०) [३१३]

ओ३म्

मास्टर शादीराम जी।

आप पंण्डित ज्वालादत्त को खूब समझा देवें कि व्याकरण में कुछ जरूरत 'नवीनरचना' की नहीं है। जैसे अब नामिक छपता है वैसे ही छपने दो। और नामिक के बाद कारकीय छपेगा। और पण्डित ज्वालादत्त के शोधन में बहुत ग़लती रहती हैं। उनको ताकीद कर दो कि खूब गोर से शोधे, ताकि गलती न रहे।

आगरा २२ दिसम्बर ८१[८०] ईस्वी[4] दयानन्द सरस्वती!

---

१. मार्गशीर्ष शुक्ल १० शनि सं० १९३७ यु० मी०।

२. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

३. इसी पत्र के नीचे अगला (पूर्ण सं० ३१३ का) पत्र उर्दू में मास्टर शादीराम के नाम का लिखा हुआ है। [वह २२ दिसम्बर ८० = पौष कृष्ण ५ सं० १९३७ का है, इसलिए यह भी उसी दिन का है]।

४. पहले यह पत्र आर्यधर्मेन्द्र जीवन संस्करण तृतीय पृ० ३६९ से छापा गया था। अब मूल पत्र की प्रतिलिपि से छापा है। मूल पत्र परोपकारिणी समा में सुरक्षित है। हमारे पास आई हुई प्रतिलिपि में कोई तिथि नहीं है। न जाने आर्यधर्मेन्द्रजीवन में तिथि कहां से ली गई है। तिथि में सन् अशुद्ध छपा है। शताब्दी संस्करण, भूमिका पृ० १६ पर ऊपर के पत्र (पूर्ण ३१२) के सम्बन्ध में भी यही अशुद्धि है। सन् ८० चाहिये [क्योंकि स्वामी जी महाराज २२ दिसम्बर १८८० (पौष कृष्ण ५ सं० १९३७) को ही आगरा में थे, २२ दिसम्बर १८८१ में आगरा में नहीं थे, इन्दौर में थे]।

[३] पत्र (२८१) [३१४]

मास्टर दयाराम जी आनन्दित रहो[१] !

विदित हो कि आपका पत्र आया, हाल मालूम हुआ। आपने जो नक्शा मर्दुम शुमारी का लिखा सो उसकी खाना पुरी इस प्रकार करो।

मजहब फिरके मजहबी	वैदिक
असल कौम	आर्य्य
जात या फिर्का	ब्राह्मण वा क्षत्रिय वैश्य शूद्र
गोत्र या शाख	जो अपना गोत्र है

और जिसको अपना गोत्र याद न हो वह अपना काश्यप गोत्र या पाराशर लिखा दे। और यह सब समाजों में तथा पंजाब भर में इसी प्रकार से लिख भेजें। और हम यहां सब प्रकार से आनन्द में हैं। हस्ताक्षर

आगरा ३१ दि० स० १८८०[२] दयानन्द सरस्वती

---

[१] पत्र (२८२) [३१५]

द्वारकादास जी आनन्दित रहो[३] !

पत्र तुम्हारा आया हाल मालूम हुआ। पुस्तकों का सूचीपत्र लिखते हैं। जो चाहे दाम भेज कर मंगालो॥

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	५)
सत्यार्थप्रकाश	२॥)
संस्कारविधि	१॥=)
सन्ध्या	।)
वेदांतिध्वांतनिवारण	=)
सत्यधर्म्मविचार	=)
सत्यासत्यविवेक	।)
वर्णोच्चारणशिक्षा	।)

---

१. मूल पत्र की प्रतिलिपि फरुखाबाद में सुरक्षित थी। वहीं से म० मामराज जी ने सन् १९२७ में इस की प्रतिलिपि की। यह पत्र फरुखावाद का इतिहास पृ० १८७ पर भी छपा है उसमें इतना लेख अधिक है—"इस की नकल सब समाजों में स्वामी जी की आज्ञानुसार भेजी जाती है। दयाराम वर्मा मन्त्री आर्यसमाज मुलतान ८ जनवरी सन् ८१ ई०।"

२. पौष कृष्ण ३०, शुक्र, सं० १९३७। यु० मी०।

३. यह कार्ड ता० १८ अप्रैल सन् १९२७ को म० मामराज जी ने ला० द्वारकादास जी (आयु ७५ वर्ष) से इटावा जाकर प्राप्त किया था। कार्ड उन्हें वापिस भेज दिया गया था। उक्त ला० जी ने ऋषि द० स० के लगभग ३० व्याख्यान आगरे में सुने थे। उनको यह कार्ड ऋषि ने एतमादपुर भेजा था। ला० द्वारकादास जी उस समय वहीं रहते थे।

व्यवहारभानु	...	...	...	।)
संस्कृतवाक्यप्रबोध	...	...	...	।-)
आर्योद्देश्यरत्नमाला	...	...	...	-)॥

तथा ऋ० वेद और यजुर्वेद का भाष्य होता है। सो उसका मूल्य जो अब तक छपा और २९ अंक तक छपेगा २०॥) और आगे को दोनों वेदों का ८) साल है।

आगरा
३१ दि० १८८०[1]

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

[७] पत्र (२५३) [३१६]

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[2]।

तुम्हारे लिखने के अनुसार काशी को पत्र हमने भेज दिया है[3]। और जो लिखने की योग्यता थी सो सब लिख दिया। वहां के हिसाब के जो पत्र थे, सो जा चुके हैं। और जो मेरठ में लाला रामशरणदास के पास होंगे सो पहुंच जायंगे। मेरठ को भी पत्र लिख दिया है।

३५) रुपैये माहवारी खर्च में ५) भीमसेन; ३०) रुपैये में मुन्शी का बंदोबस्त हैं। अब हम चाहते हैं कि खजांची कोई अच्छा मातबर रहे। थोड़ा भी पढ़ा हो तो चिन्ता नहीं है। और चिट्ठी लिखने मात्र को कुछ दामों से मुन्शी रख दिया जाय, वह चिट्ठी लिख जाया करे।

अथवा तोताराम वहां का काम चलाने योग्य हो तो वह सब हिसाब और कारीगरों से काम लिया करे। भीमसेन खजांची रहे। भीमसेन निष्कपट है, हम अच्छी तरह जानते हैं। और चिट्ठी किसी से लिखवा दिया करें। नागरी पत्र ये दोनों लिखते ही हैं। अथवा तुम अच्छा विचार कर जो कहो सो किया जाय। परन्तु तोताराम को अच्छा चिताइ देना चाहिये कि जब तक मुंशी न आवे कुछ और विशेष प्रबन्ध न हो ले, तब तक होशआरी के साथ काम सम्हाले। आगे आप लोग जैसा विचार कर बन्दोबस्त करेंगे सो होगा। इस पत्र का जवाब विचार पूर्वक हमारे पास जहाँ तक हो सके जल्दी भेजना चाहिए।

छापाखाना का प्रबन्ध अच्छा करना बहुत अवश्य हो रहा है।

(दयानन्द सरस्वती)

---

१. पौष कृष्ण, ३० शुक्र सं० १९३७। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था। इस की प्रतिलिपि म० मामराज जी ने सन् १९२७ में की। यह पत्र फरुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ पृ० २१४ पर भी छपा है। वहां पाठ की कुछ अशुद्धियां हैं। पत्र में तिथि नहीं है। हमने इसे प्रकरण देख कर यहां रखा है। [हमारे विचार में यह पत्र पूर्ण संख्या २८७ से पूर्व छपना चाहिये था, क्योंकि इस पत्र से पं० भीमसेन का काशी रहना ध्वनित होता है, परन्तु पूर्ण संख्या २९१ के अनुसार वह ७ नवम्बर १८८० से पूर्व बीमार हो कर काशी से चला गया था। यु० मी०।]

३. सम्भवतः पूर्ण संख्या २८५ (पृष्ठ २४२) का पत्र। यु० मी०।

[३] पत्र (२५४) [३१.७]

लाला कालीचरण, रामचरण जी आनन्दित रहो[१]।

विदित हो कि हमने अब यहां सब असिल कागज़ और रजिस्टर "बखतावरसिंह" के दस्तखती काशी से मंगा कर देखे; उनमें बहुत कुछ फर्क है। और सब लेख धोखे का है। यह भली प्रकार से साबित होता है। इसलिए तुम को लिखते हैं कि यहां आकर आप भी देखें और "बखतावरसिंह" को भी बुला लें। और एक रजिष्टरी चिट्ठी बखतावरसिंह के पास भेज दो कि इस चिट्ठी के देखते ही आगरे में स्वामी जी के पास आकर हिसाब समझा दो। और हम भी वहीं होंगे। और ~) रजिष्टरी में अधिक देवें कि उसके हस्ताक्षर भी आ जावें॥ और आप को यहां अवश्य आना उचित है। और जिस दिन आप आवें उससे पहिले हमको लिख भेजें कि हम फलाने दिन आवेंगे॥

हमने आपको पहिले लिखा था कि १००) पंडितों की बाबत के हमारे पास भेज दो। सो अब तक नहीं पहुँचे। इसका क्या कारण है। और हमने नारायणदास मुखतार से कहा था कि एक मोतबिर खजानची काशी में रखवादो और उसकी जमानत भी ले लो। इस का भी हाल लिखो॥ सब सभासदों को नमस्ते॥

आगरा

बेलनगंज लाला गिरिधरलाल वकील का बागीचा

१० जन० १८८१[२]।

हस्ताक्षर

(दयानन्द सरस्वती)

[१.४] पत्र (२५५) [३१.८]

लाला मूलराजजी एम० ए० आनन्दित रहो[३]!

आप को लिखा जाता है कि जब बाबू शिवदयाल जी यहाँ थे, तो उन्होंने पण्डित बिहारीलाल को हमारे यन्त्रालय में काम करने को भेजने और श्रीराम को विलायत भेजने की हम से प्रतिज्ञा की थी। क्या आप हमें लिखेंगे कि इस विषय में अन्तिम निर्णय क्या हुआ है? यहां एक गोरक्षिणी सभा स्थापन की गई है और इसके नियमोपनियम भी बना दिये गये हैं, जब छपेंगे तो आपको सूचना के लिये भेज देंगे। आज इसी विषय पर एक और सभा की जायगी।

मुन्शी बखतावरसिंह ने यन्त्रालय की बड़ी हानि की है। आज कल हम यन्त्रालय के हिसाब की जांच कर रहे हैं। जो आगे होगा सो लिखूंगा। सब से मेरा नमस्ते कहना।

१२ जनवरी १८८१[४]

ह० दयानन्द सरस्वती

आगरा।

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में है। उसकी प्रतिलिपि सन् १६२७ में म० मामराज जी ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १८८ पर भी छपा है। वहां कई पाठ त्रुटित हैं।

२. पौष शुक्ल १० सं० सोम, १६३७। यु० मी०।

३. यह पत्र वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरांवाला सन् १६०७ अंग्रेजी से अनूदित है।

४. पौष शुक्ल १२ बुध सं० १६३७। यु० मी०

[१.] पत्र (२५६) [३१९]

पंडित ज्वालादत्त जी आनन्दित रहो ।[१]

विदित हो कि तुम ने जो यजुर्वेद अष्टमाध्याय के पत्र भेजे सो पहुंचे। परन्तु वे किसी काम के नहीं। क्यों, उनमें भाषा बहुत काट फाँट रक्खी है। और तुम्हारे संकेत हैं। यह उत्तर तो सहज है कि अवकाश नहीं मिला। और नामिक जैसा है वैसा शुद्ध और दिव्य छपवाओ। सन्धिविषय की तरह अशुद्ध[२] न होने पावे। अब हम ने सन्धिविषय का शुद्धिपत्रमात्र देखा तो विदित हुआ कि जो कम विद्या वाला भी ध्यान देकर शोधे तो भी ऐसी अशुद्धि कभी न रह सके। अब हम यह उपदेश करते हैं। तुम लोगों को इसका गुण मानना उचित है न कि चिड़ जाना। भीमसेन ने जो कि ४० पृष्ठ संधिविषय के शोध कर छपवाए हैं उसमें अशुद्धि कम है। और इन अशुद्धियों में भी संस्कृत की अशुद्धि बहुत ही कम हैं। देखो तुम्हारे शुद्धिपत्र के अनुसार ४० पृष्ठों में ५१ अशुद्धि हैं। और तुम ने शुद्ध का अशुद्ध किया। और तुम्हारे २४ पृष्ठ में ५९ अशुद्धियां हैं। और इन अशुद्धियों में भाषा की कम और संस्कृत की अधिक हैं। और जब हम सन्धिविषय का पाठ करें[गे][३] तब तुम्हारी और भी० से० की न जाने कितनी निकलेंगी। अब ऐसा हुआ सो हुआ, परन्तु आगे कभी ऐसा न करो। आगे से हम सब पुस्तक देखा करेंगे और अपना लिखाया और तुम्हारा शोधा पुस्तक भी मंगा लिया करेंगे। और आज से हम वेदभाष्य भी देखेंगे कि कितनी अशुद्धि हैं। बड़े आश्चर्य की बात है कि जब लाजरस और मुम्बई से छपता था, कभी ऐसी अशुद्धि न होती थी जैसे कि अब घर के छापेखाने में होती हैं। जो ऐसी अशुद्धि हुआ करेंगी, तो सब पुस्तक में अशुद्धिपत्र ही भरा करेंगे। और छपवाने वालों और प्रेस की भी बदनामी होगी। जो छप गया सो खैर, परन्तु आगे कभी ऐसा न होगा।

आगरा

१७ जन० १८८१[४] दयानन्द सरस्वती

---

१. दयानन्द ग्रन्थमाला, शताब्दी संस्करण, प्रथमावृत्ति, संवत् १९८१, सन् १९२५, पृ० १६, १७ पर खण्डशः मुद्रित। सम्पूर्ण पत्र Works of Maharshi Dayanand by Shri Harbilas Sarda, Ajmer 1942, पृ० १२७ पर मुद्रित। हम ने दोनों की तुलना करके तथा मूल पत्र की एक नई प्रतिलिपि से मिला कर सारा पत्र छापा है।

२. शताब्दी सं० में यह शब्द नहीं है।

३. Works of M. Dayanand में "देखेंगे" पाठ है।

४. [माघ कृष्ण २ सोम, सं० १९३७] इस पत्र का उत्तर पं० ज्वालादत्त ने १९ जनवरी सन् १८८१ को दिया। देखो म० मुंशीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृ० ४०५-४०८। शताब्दी संस्करण और Works में इसकी तिथि १७ जून दी है। वह बात ठीक नहीं। चाहिए १७ जनवरी। मूल में १७जन० ही होगा। श्री हरबिलासजी के नकल करने वाले ने उसे जून बनाने में भूल की है। मूल पत्र उन्हीं के पास है।

[४] पत्र (२५७) [३२०]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो ![1]

विदित हो कि आपने जो पण्डितों के खर्च में १००) की हुंडी भेजी, सो पहुंची । आप खातिर जमा रक्खें ॥

हस्ताक्षर
आगरा १८ जन० १८८१[2] दयानन्द सरस्वती

———

[२६] पत्रांश (२५८) [३२१]

[मुन्शी बखतावरसिंह, शाहजहांपुर]

तुम एक सप्ताह के अन्दर यहां आकर हिसाब समझा दो, नहीं तो कार्यवाही जाबते की की जावेगी ।[3]

१९ जनवरी १८८१ ।[4]

———

[१] नं० १० उर्दू पत्र (२५९) [३२२]

मुन्शी नारायण किशनजीव आनन्द रहो[5] ।

वाजे हो कि तुम्हारा खत आया हाल मालूम हुआ। एक चिट्ठी व खत नागरी बनाम आत्माराम आपके पास रवाना की जाती है[6] । सो आप उनको दे दीजिये। और जो अब वे वहां न हों तो जहां वे गये हों पहुँचा दीजिए। और रसीद से मतलअ कीजिये । और लाला मूलराज जीव से कह दीजिये कि मुन्शी बखतावरसिंह के सब कागजात देखे गये । उनसे बखूबी उस का फरेब जाहिर हुआ। और जाए गौर है कि सिर्फ कागज ही में से उसने १७० का गबन किया। और रकम इलावा रहीं । और उस के पास ठाकुर मुकन्दसिंह के भेजे दो खत रवाना कराये कि जल्दी आकर हिसाब समझा दो। मगर वह नहीं आया । क्योंकि उसने काम नहीं किया जो रोबरू आने के लायक रहा हो। अब हमने भी एक खत रजिस्टरी उसके पास [रवाना] किया हैं कि एक हफता के अन्दर आकर हिसाब समझा दो सो अगर वह आ गया तो ठीक है वरना यह मुआमला बज़रिआ अदालत ही तय होगा । इस लिये लाला मूलराज जी को भी लाज़िम है कि ठाकुर मुकन्दसिंह के (को) जाबिता की काररवाई करने के लिये एक खत रवाना कर दें । और जो चिट्ठी आत्माराम के नाम नत्थी खत हज़ा है[6] उसकी नकल

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था। वहीं से म० मामराज जी ने फरवरी सन् १६२७ में इसकी प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १८८ पर भी छपा है।

२. माघ कृष्ण ३ मंगल सं० १६३७। यु० मी०

३. यह पत्रांश ६ फरवरी १८८१ के पत्र (पूर्ण संख्या ३३४ पृष्ठ २७६) में उद्धृत है, तथा अगले पूर्ण संख्या ३२२ के पत्र में भी इसका निर्देश है। उक्त पत्र रजिस्टरी से भेजा गया था। यु० मी०।

४. माघ कृष्ण ४ बुध, सं० १६३७। यु० मी०।

५. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। मुंशी नारायण किशन आर्यसमाज गुजरांवाला के मन्त्री थे।

६. अगली पूर्ण संख्या ३२३ पृष्ठ २६६ पर मुद्रित। यु० मी०।

रखलो और छपवा दो। और वहां लाला शिवदयाल जीव पहुंचे या नहीं। और आपके खत से ठाकुर दास के अफ़आल मालूम हुए।

आगरा २१ जनवरी सन् १८८१[1]　　　　स्वामी दयानन्द सरस्वती
　　　　दयानन्द सरस्वती

---

[३]　　　　पत्र (२६०)　　　　[३२३]

आनन्द विजय आत्माराम जी (नमस्ते)[2]।

आप का पत्र ८ माघ का लिखा हुआ मेरे पास पहुंचा। उस में लिखित वृत्त विदित हुआ। मेरे प्रश्नों के उत्तर में जो आपने लिखा कि "बौद्ध और जैन को एक ही मत के नाम मानने से हमारी कुछ मानहानि नहीं" इसको पढ़ कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। यही सज्जनों का काम है कि सत्य को मानें और असत्य को न मानें, परन्तु यह बात जो आप ने लिखी है कि "योगाचार आदि चार सम्प्रदाय जैन बौद्ध मत के हैं सो वह बौद्ध मत जैन मत से एक पृथक् शास्त्र का हैं।" इसका उत्तर मैं आपके पास भेज चुका हूं कि मत में शाखा प्रशाखा का भेद थोड़ी बातें पृथक् होने से होता है, परन्तु मत के रूप में शाखायें एक ही मत की होती हैं। देखिये कि उन्हीं नास्तिकों में चारवाक आदि नास्तिक हैं और जो आप उनका इतिहास और जीवन चरित्र पूछते हैं सो इस का उत्तर भी मैं दे चुका हूं अर्थात् इतिहासतिमिरनाशक के तीसरे अध्याय में देख लीजिये।

और आप जिन बौद्धों को अपने मत से पृथक् कहते हैं, वे आप के सम्प्रदाय से चाहे पृथक् हों, परन्तु मत के रूप से कदापि पृथक् नहीं हो सकते। जैसे कई जैनी उदाहरणतया श्वेताम्बर दूसरे जैनों उदाहरणतया समवेगी साधुओं पर आक्षेप करके उन्हें पृथक् और नया मानते हैं। यह स्पष्ट हुवेक (?) नामक पुस्तक में लिखा है इत्यादि आप लोगों ने उन पर बहुत से आक्षेप करके उनके मत में सम्यक्त्व निर्णय पुस्तक लिखी है, तो भी इस से वे और आप बौद्ध या जैन मत से पृथक् नहीं हो सकते और न कोई विद्वान् उनके मत के सिद्धान्तों के आधार पर उन्हें पृथक् मान सकता है, उन के सिद्धान्तों में भेद तो अवश्य होगा।

आप के इस वचन से कि "इस में क्या आश्चर्य है कि महावीर तीर्थङ्कर के समय में चारवाक मत था और उन से पीछे नहीं हुआ" इस से मुझको आश्चर्य हुआ, क्या जो महावीर तीर्थङ्कर से पहले २३ तीर्थङ्कर हुए उन सब से पहले चारवाक मत को आप सिद्ध नहीं कर सकते। यदि किसी प्रकार का कथन का स्थान आप के लिये हो तो आप पर प्रश्न हो सकता है कि ऋषभदेव भी चारवाक मत से चले हैं, फिर आप इसके उत्तर में क्या कह सकते हैं। क्या चारवाक १५ प्रकार में से एक प्रकार का भी नहीं है और उसमें एक सिद्ध और मुक्त नहीं हुआ ? क्या वे आपके सिद्धान्तों और पुस्तकों से पृथक् हो सकते हैं ?

इसके अतिरिक्त आपने भी अपने लेख में बुद्ध मत को अपने मत में स्वीकार कर लिया है

---

१. माघ कृष्ण ६ शुक्र, सं० १९३७। यु० मी०।

२. दयानन्द दिग्विजयार्क प्रथम खण्ड पृ० ५२ से ५४ तक संक्षिप्त रूप से, तथा आर्य समाचार (उर्दू) मेरठ मिति माघ संवत् १९३७ विक्रमी पृ० ३२५ ३३१ तक उद्धृत है। पं० लेखरामकृत जीवन च० पृष्ठ ६६५-६६८ तक भी छपा है।

क्योंकि करकण्डा आदि को आप ने बौद्ध माना है और मैंने भी अपने पहले पत्र में जैन और बौद्ध के एक मत होने का लिखित प्रमाण दे दिया है फिर आप का दूसरी बार पूछना व्यर्थ और निष्प्रयोजन है। जहां स्वयं वादी के साक्षी से मुकदमा सिद्ध हो जाए तो फिर हाकिम को अन्य पुरुषों की साक्षी लेने की आवश्यकता नहीं होती। भला जिसकी कई पीढ़ियां जैन मत में चली आई हों अर्थात् राजा शिवप्रसाद की साक्षी को और आज कल जो यूरोपियन लोग बड़े परिश्रम से इतिहास बनाते हैं उन की साक्षी आप अशुद्ध कह सकते हैं, जिन्होंने अपने इतिहास में बौद्ध और जैन को एक ही लिखा है और यह भी लिखा है कि कुछ बातें आर्यों की और कुछ बौद्धों की लेकर जैन मत बना है।

*प्रश्न २ के उत्तर में जो आप ने लिखा है वह नमुचि नास्तिक जैनमत का द्वेषी साधुओं को निकालने और कष्ट देने वाला था और उस को मार कर सातवें नरक में भेजा गया। यह लेख आप ने सत्यार्थप्रकाश के लेख के उत्तर में नहीं समझा। विचार कीजिये कि वह नमुचि जैन मत का शत्रु था इसलिए मारा गया। तो क्या उसने जान बूझ कर पाप नहीं किया था। कितने शोक की बात है कि आप सीधी बात को भी उल्टा समझ गये।

प्रश्न ३ के उत्तर में जो आपने प्राकृत भाषा का एक श्लोक लिखा है, परन्तु उसके अर्थ स्वयं नहीं लिखे, केवल मुझ पर उसका समझना छोड़ दिया। इसका यह अभिप्राय होगा कि मैं उसके अर्थ और तात्पर्य तक नहीं पहुंच सकूँगा। हाँ मैं कुछ सब देशों की भाषा नहीं जानता हूं केवल कुछ देशों की भाषा और संस्कृत जानता हूँ, परन्तु मत मतान्तरों की शाखा प्रशाखा और सम्प्रदायों के सिद्धान्तों को अपनी विद्या और बुद्धि और विद्वानों के संग के प्रभाव से जानता हूं। आप और आप लोगों के आचार्यों ने ऐसी अपभ्रंश भाषा, अपनी भाषा बना ली है, जैसे धर्म के स्थान पर धम्म इत्यादि, जैसे जिन का मत युक्ति और प्रमाणों से सिद्ध नहीं हो सकता है वे ऐसे २ अप्रसिद्ध शब्द बना लेते हैं, ताकि कोई दूसरा ठीक प्रकार से समझ न सके। जैसे मद्य का नाम तीर्थ, मांस का नाम पुष्प आदि बना लिया है ताकि उनके सिवाय कोई दूसरा न जान ले। जो राजा लोग न्यायप्रिय होते हैं वे तो मार्ग ऐसे सीधे बना लेते हैं कि अन्धा भी प्राप्य स्थान को पहुँच जाए, परन्तु उन के विरोधी मार्गों को इस प्रकार से बिगाड़ते हैं कि कोई परिश्रम और कष्ट से भी चल न सके। आप रत्नसार भाग नामक पुस्तक को प्रामाणिक नहीं समझते तो क्या हुआ, बहुत से श्रावक और जैन लोग उसको सच्चा मानते हैं।

देखिये, आप ऐसे विद्वान हो कर मूर्ख को मूर्ष लिखते हैं और पत्र में लिखे शब्दों को शुद्ध करने में बहुत सी हड़ताल भी लपेटते हैं। कितने शोक की बात है कि संस्कृत तो दूर रही, देसी भाषा भी आप लोग नहीं जानते, परन्तु इस लेख के स्थान में यह लिखना उचित था कि आप की भूल का कुछ नहीं; क्यों कि मनुष्य प्रायः भूल किया ही करता है।

प्रश्न ४ के उत्तर में जो कुछ आपने लिखा है वह बहुत आश्चर्य में डालने वाला है। विद्या की प्राप्ति की इच्छा मनुष्य वहां प्रकट कर सकता है, जहां अपने से अधिक किसी विद्वान् को देखता है। मैंने भी उन्हीं विद्वानों और आचार्यों से विद्या प्राप्त की है जो मुझसे अधिक बुद्धिमान् और विद्वान् थे आप भी शायद इसको स्वीकार करते होंगे। क्या आप लोग दूसरे मत के विद्वानों को गुरु न समझ कर शिष्य के विचार से और मुक्ति के फल का ध्यान न रख कर किसी विरुद्ध अभिप्राय की प्राप्ति की

*. इन प्रश्नों का सम्बन्ध पूर्ण संख्या २९२ पृष्ठ २४९—२५१ पर मुद्रित पत्र से है। यु० मी०।

इच्छा से दान करते हो और क्या यह बातें अविद्वानों की नहीं है कि अपने मत और उसके साधुओं की बड़ाई का ध्यान रखना और अन्य मत के विद्वानों के विषय में इसके विरुद्ध । यह अच्छे लोगों की बातें नहीं हैं। वस्तुतः मनुष्य मात्र में से अच्छे को अच्छा और बुरे को बुरा मानना जिज्ञासुओं और धर्मात्माओं और महात्माओं का काम है और उसको ही हम मानते हैं और उचित है कि आप भी उस को स्वीकार करें। मेरे लेख का यथार्थ अभिप्राय आप उस समय समझेंगे जब कि मैं और आप सन्मुख होंगे। मेरी पुस्तक सत्यार्थप्रकाश के लेख से कोई मनुष्य यह अभिप्राय नहीं निकाल सकता कि जैन मत के लोगों को चिरकाल तक पीड़ा देना और दान न देना और जैन मत बेईमानी का मूल है, अपितु यह सिद्ध है कि "अच्छे और ईमानदार लोगों और अनाथों की सहायता करना और बुरे लोगों को समझाना।"

परन्तु यह छः निषेधों का कलङ्क आप को ऐसा लिपट गया है कि जब ईश्वर की दया हो और आप लोग पक्षपात को छोड़ कर यत्न करें तब धोया जा सकता है अन्यथा सर्वथा नहीं। भला जब यह स्पष्ट लिखा है कि अन्य मत की प्रशंसा न करना और अन्यों को भोजन और जल न देना तो फिर आप इसको अशुद्ध क्योंकर कर सकते हैं। यह बातें आप के सहस्रों ग्रन्थों में लिखी हुई हैं और आप लोग इस को समझ लें कि मुझे ऐसा स्वप्न में नहीं आया है, हां जो आप लोग कुछ भी विचार कर देखें तो उन का छोड़ देना ही धर्म है, आगे आप की इच्छा।

पाँचवे प्रश्न का उत्तर, उसके विषय में जो आपने लिखा है उस से मेरे उत्तर का खण्डन नहीं हो सकता, क्योंकि जब बालों के नोचने का प्रमाण आपकी पुस्तकों में लिखा है और मैं ने उस के प्रमाण से सिद्ध कर दिया, फिर भला कहीं युक्ति का आश्रय लेने से उस बात से नकार हो सकता है? सर्वथा नहीं।

छठे प्रश्न के उत्तर में, जब मैं यह सिद्ध कर चुका हूं कि जैन और बौद्ध जिस मत का नाम है उस की शाखा चारवाक आदि हैं, फिर यह कैसे अशुद्ध हो सकता है।

जो आप जैन लोगों के ग्रन्थों में हमारे मत के विषय में लिखा है और जिस का हमारी धार्मिक पुस्तकों में कहीं उल्लेख नहीं, इस से हमारी धार्मिक मानहानि होती है। इस लिए आप जैन लोगों से पूछा जाता है कि लौटती डाक शीघ्र उत्तर दें कि वे बातें हमारी किन धार्मिक पुस्तकों में लिखी हैं। ध्यान रहे कि जिस भाष्य [में है उस का नाम] और ठीक २ पता दें, उन के साथ पृष्ठ और पंक्ति आदि के प्रमाण से जैसा मैंने आपके प्रश्नों का उत्तर दिया है उसी प्रकार से आप भी उत्तर दें, नहीं तो आप सज्जनों की बहुत हानि होगी। इस विषय को आप केवल साधारण दृष्टि से न देखें, परन्तु एक प्रकार का पूरा ध्यान रखें, ताकि यह लम्बा न हो जाए। उत्तर देने में शीघ्रता करें तो अच्छा है।

जैनों के विवेकसार ग्रन्थ के लेख पर कुछ आक्षेप—

आक्षेप १—विवेकसार पृष्ठ १० पंक्ति १ में लिखा है कि श्रीकृष्ण तीसरे नरक को गया।

आक्षेप २—विवेकसार पृ० ४० पं० ८ से १० तक लिखा है कि हरिहर, ब्रह्मा, महादेव, राम कृष्ण आदि कामी, क्रोधी, अज्ञानी, स्त्रियों के दूषी, पाषाण की नौका के समान आप डूबते और सब को डुबाने वाले हैं।

आक्षेप ३—विवेकसार पृ० २२४ पं० ९ से पृ० २२५ पं० १५ तक लिखा है कि ब्रह्मा, विष्णु, महादेव आदि सब अदेवता और अपूज्य।

आक्षेप ४—विवेकसार पृ० ५५ पं० १२ में लिखा है कि गङ्गा आदि तीर्थों और काशी आदि क्षेत्रों से कुछ परमार्थ सिद्ध नहीं होता।

आक्षेप ५—विवेकसार पृ० १३८ पं० ३० में लिखा है कि जैन का साधु भ्रष्ट भी हो तो भी अन्य मत के साधुओं से उत्तम है।

आक्षेप ६—विवेकसार पृ० १ पं० १ से ले कर लिखा है कि जैनों में बौद्ध आदि शाखायें हैं। इस से सिद्ध हुआ कि जैन के अन्तर्गत बौद्ध आदि सब शाखायें हैं।

मिति माघ वदी ६ शुक्रवार सं० १९३७।

हस्ताक्षर स्वामी दयानन्द सरस्वती

आगरा तारीख २१ जनवरी सन् १८८१[१]

———

[२७] पत्र-सारांश (२६१) [३२४]

[मुंशी बख्तावरसिंह, शाहजहांपुर]

हमने तुम्हारे सब कागज़ात काशी से १० जनवरी ही को मंगा लिये, तुम अवश्य २८ जनवरी को चले आओ[२]।

२४ जनवरी १८८१[३]

———

[४] उर्दू पत्र (२६२)[४] [३२५]

शादीराम [प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यंत्रालय बनारस]

रजिस्टर मैंने रवाना किया। जो गलती हैं, ठीक है। अब तुम तकाज़ा करो और चिट्ठी छपवा लो बिल के तौर पर। और वेदभाष्य के साथ रवाना करो। और दो चार दिन में पुस्तकों के रजिस्टर सब रवाना कर देंगे। और सेठ भवानीराम मारवाड़ी मिरज़ापुर का जिसका रिशता लाला निर्भयराम फरुखाबाद वालों से है उसको पूछकर पण्डित सुन्दरलाल के हुक्म से उन से रुपया लेलो।

पण्डित भागराम लाला प्रसादीलाल वहां आते हैं, वे आप से मिलेंगे[४]।

———

१. माघ कृष्ण ६, शुक्र सं० १९३७। यु० मी०।

२. यह पत्र-सारांश ६ फरवरी १८८१ (पूर्ण संख्या ३३४) के पत्र में उद्धृत है। उपर्युक्त पत्र रजिस्ट्री से भेजा गया था। यु० मी०।

३. माघ कृष्ण ९ सोम, सं० १९३७। यु० मी०।

४. लगभग २४ जनवरी १८८१ [माघ कृष्ण ९ सं० १९३७] को लिखवाया गया। एक पीले मटियाले बड़े कागज़ पर इस और अगले तीन पत्रों पूर्ण सं० ३२६ से ३२८ का पूर्वरूप उर्दू में लिखवाया गया है। प्रतीत होता है कि श्री स्वामी जी के पास आगरा में कोई उर्दू पढ़ा पुरुष बैठा था। स्वामी जी का लेखक

[४] पत्र (२६३) [३२६]

सेवकलाल कृष्णदास [मंत्री आर्यसमाज मुम्बई]

आपने जो पत्र[१] और जैनों [के ग्रन्थों] की सूची [भेजी][२] सो देखी। जब तक देखो सो देखो और जो सूचीपत्र बने बनालो। जब पत्र भेजें, भेज देना। हम को देखने का अवकाश कम है। तुम देखो। हम खण्डन मण्डन और सिद्धान्त के जानने [को देखेंगे।]

जो आप लोगों की ओर से पण्डित गिरजाशंकर दुबे जी,[२] रतनसी श्याम जी हमारे पास आए। उनसे सब हाल मालूम हुआ। मगर मैं उन के साथ जल्दी नहीं आसकता, क्योंकि यहां आर्यसमाज नया हुआ है। और मुन्शी बखतावरसिंह ने प्रेस में गड़बड़ [की है।] २८ को मेरे व्याख्यान होना है आर्यसमाज में है। जो कहीं मैं राजपूताना की ओर चला उदयपुर तक [तो] मैं नहीं आऊंगा तो एक मास पर विदित करूंगा। सब से नमस्ते कह देना। यहां से जिस………उनके आने पर ही मालूम [होगा] भुज को छोड़कर बड़ा[३] देश में [जाना है] और यह दोनों आप के पास एक दिन ठहरेंगे। यहां का वर्तमान उन से विदित होगा। और यहां एक गोरक्षणी [सभा][४] के नियम छपा। और जो मुझे जा[नते] हैं उन से नमस्ते कह देना।

---

[१] पत्र (२६४) [३२७]

राणा जालमसिंह[५] [कच्छ-दरबार]

जो आप ने मेरे बुलाने के लिए दोनों कवि[जी और श्याम जी भेजे] उस को मैं इस समय आप के अनुकूल न कर सका। इस समय विशेष बात सब उन से विदित होगी। आपत्ति में धैर्य से बुद्धिमत्ता के साथ आपत्ति का निवारण करना आप्तों का काम है।

जो आप ने विदेश जाने का विचार किया, वह यहीं हो सकता है। वहां कुछ प्रयोजन नहीं।

किसी काम में लगा होगा। उस से ये पत्र शीघ्रता में लिखवाए गए। पत्रों में कई शब्द छूटे हुए हैं। उन्हें पत्र लिखते समय लेखक ने पूरा किया होगा। उनकी पूर्ति हमने कोष्ठों में की है। मुम्बई के तीनों पत्र पुनः देवनागरी में इसी लेखक ने श्री स्वामी जी के भाषा-लेखक कों लिखवाए होंगे। मूल कागज म० मामराज जी अक्टूबर सन् १९२६ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहां से लाये थे। अब वह हमारे संग्रह में सुरक्षित हैं।

१. देखो सेवकलाल कृष्णदास का १५ जनवरी १८८१ का पत्र। म० मुन्शीराम संपा० पत्र व्यवहार पृष्ठ २८५। यु० मी०।

२. म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार, पृ० २६६–२६७ पर लिखा है कि यह महाशय धन सहित श्री स्वामी जी के पास निमन्त्रणार्थ भेजा गया। पत्र १८ जनवरी १८८१ (१८८० अशुद्ध है) का लिखा हुआ है।

३. 'विदेश' चाहिये। देखो पूर्ण संख्या ३२७ का पत्र। यु० मो०।

४. गोरक्षणीसभा की स्थापना के लिये देखो पत्र पूर्ण सं० ३१८ में।

५. ये महाशय कच्छ दरबार के थे। देखो म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० २६५ पर मुम्बई आर्यसमाज के मन्त्री श्री सेवकलाल कृष्णदास का पत्र। यह पत्र सेवकलाल कृष्णदास के पत्र में ही भेजा गया होगा।

[१२] पत्र (२६५) [३२८]

राव बहादुर गोपालरावहरि देशमुख[1]

महादेव गोविन्द रानडे

आप देश के परम हितैषी हैं। हिन्दी जैसे सब देश पर दृष्टि रखते हैं। विशेष कृपादृष्टि कच्छ भुज देश पर भी कीजिये।

जिसे यथोचित सुशिक्षा हो, सत्य सत्य करेंगे यह भी आशा है क्योंकि इस समय राबसाहब[2] नाबालग हैं।

जो मैं कहीं इस समय आता तो आप सब मिलते। परन्तु फिर मुझ को यह विदित न था यहां व्याख्यान [होते हैं] और और भी कुछ काम है। [अतः] कैसे आ सकता हूं। जो मैं राजपूताना की ओर आया और समय देखा जब आना होगा। आप को सूचना हो जावेगी। मैं जदीद (=नवीन) स्थान पर जाऊं तो ठीक है। उस अहाता का भी याद करोगे।

---

[२८] पत्रसारांश (२६६) [३२९]

[मुंशी बख्तावरसिंह शाहजहांपुर]

जो अपना कल्याण चाहते हो तो अब भी आकर हिसाब समझा दो[3]।

[गिरधरलाल वकील आगरा]

---

[५] उर्दू पत्र (२६७) [३३०]

लाला शादीराम जी—आनन्दित रहो

वाजे हो कि आज तुम्हारे पास ऋग्वेद के वरक १२३० सफे से १५२१ तक यानि ८६ सूक्त के ६ मंत्र से १११ [सूक्त के ......] मंत्र तक रवाने करते हैं, रसीद रवाने कर देना और ज्वालादत्त ने जो लघुकौमुदी खरीदी है वह हमारे काम की नहीं उसको अखतियार है कि वह चाहे अपने खर्च में रखे चाहे फरोख्त करे। हमारी सिद्धान्तकौमुदी मौजूद है। आज तुम्हारा वेदभाष्य पहुंचा, मालूम हुआ कि तुम्हारे पास रुपया बहुत कम आया है। अब तकाजा करके खरीदारों से रुपया वसूल करो और सब तरह आनन्द है।

आगरा ३ फरवरी ८०[4]।

३-२-८० दयानन्द सरस्वती

---

१. यह पत्र सेवकलाल कृष्णदास के पत्र में ही मुम्बई भेजा गया होगा।

२. इन का नाम खेंगारजी था। इस समय इन की आयु लगभग १३, १४ वर्ष की थी। ये कच्छ के राजा स्वर्गीय श्री प्रागमल के उत्तराधिकारी थे। देखो कच्छ कलाधर भाग २ पृष्ठ ४६४। यु० मी०

३. यह पत्र स्वामीजी महाराज ने वकील के द्वारा लिखवाया था। देखो ६ फरवरी १८८१ का पूर्ण संख्या ३३४ (पृष्ठ २७७) तथा ३३५ (पृ० २७८) का पत्र। यह पत्र लगभग ३० जनवरी को लिखा गया होगा। यु०मी०।

४. सन् ८० नहीं, १८८१ चाहिए [माघ शुक्ल ५ सं० १९३७]। मूलपत्र परोपकारिणी सभा, अजमेर में सुरक्षित है।

[२] **पारसल**[1] [३३१]

[सेठ निर्भयराम जी फरुखाबाद]

१½ तोला सुरमा

———

[२९] **पत्रांश (२६८)** [३३२]

[मुंशी बख्तावरसिंह शाहजहांपुर]

तुम अपने पत्रों को आगरे में लाओ वा आगरे में और किसी को पंच बध दो और स्टाम्प के कागज़ पर पञ्चायत का इकरार नामा लिख कर जल्दी भेज दो।[2]

———

[६] **उर्दू पत्र (२६९)** [३३३]

❀ ओ३म् ❀[3]

लाला शादीराम जी आनन्दित रहो—

वाज़ह हो कि ख़त तुम्हारा आया। हाल मालूम हुआ। और तुमने जो टिकट १०॥) के और तीन फ़र्मे नामिक के भेजे सो पहुंचे खातिरजमा रक्खो। हमने इस माह का ऋग्वेद का भी अङ्क देखा। उसमें भी ग़लती बरआमद होती हैं। मगर हां फ़र्मे अख़ीर में बेशक ग़लतियां कम हैं। अगर इसी तरह ज्वालादत्त ख़याल करेगा और काम में दिल लगावेगा तो आइन्दह ग़लती बिलकुल न रहेगी। उसको ताकीद कर दो कि प्रूफ़ को चार पांच दफे देखा करे, और एक मात्रा की भी ग़लती न रहा करे, तब छापने का हुक्म दिया करे। प्रूफ़ हमारे ग्रन्थ माफ़िक़ दुरुस्त हो जाना चाहिए। अगर वह ज़ियादह शुद्ध न करे तो अशुद्ध भी न करना चाहिए। उसकी नज़र शोधन में बहुत मोटी है। देखो, नामिक के नोट में "छन्दस्युभयथा" ऐसा लिखना चाहिये था कि उसने बजाय इसके "छन्दस्युथा" छपवा दिया है। ऐसा ग़ाफ़िल होना उसको लाज़िम नहीं। अगर वह कहे और पसंद करे कि मैं भाषा नहीं बना सकता सिर्फ़ शोधा करूंगा तो हमको कबूल है। हम भाषा का बनाना उस पर से मौक़ूफ़ कर देंगे, और सिर्फ़ शोधने ही पर रख लेंगे। और जो तनख्वाह भीमसेन को देते थे यानी ५) उसको भी, बल्कि दो ज़ियादह यानी ७) माहवारी देवेंगे, क्योंकि हम खूब जानते हैं कि वह बजुज़ लिखने और श्लोक बनाने के और कुछ नहीं कर सकता। बस अब उसको तुम बखूबी ताकीद करदो कि कोई एक भी ग़लती न रहने पावे। अगर अबकी मर्तबा एक भी ग़लती रही तो हम उस पर बेशक व शुबहा दण्ड करेंगे। और यह भी तहरीर करो कि बनारस में आज कल सब-जज यानी जजमातहत या

---

१. इस की सूचना पत्र सं० ३३४ तथा ३३६ में हैं। पूर्ण सं० ३३६ से जाना जाता है कि यह पारसल ३ फरवरी १८८१ (माघ शु० ५ सं० १९३७) को भेजा था।

२. यह पत्रांश पूर्ण संख्या ३३४ (पृष्ठ २७७) में उद्धृत है। लगभग ६ या ७ फरवरी सन् १८८१ [माघ शुक्ल ८ या ९ सं० १९३७] को लिखा गया होगा। यु० मी०

३. आर्यधर्मेन्द्रजीवन तीसरा संस्करण पृ० ३६८, ३६९ पर मुद्रित। मूल पत्र परोपकारिणी सभा, अजमेर में सुरक्षित होगा।

सदरआला कौन है, जनाब रामकाली चौधरी साहब हैं या और कोई साहब हैं, और हम सब तरह आनन्द में हैं।

मुकर्रिर यह है कि हम तुम्हारे पास ऋग्वेद व नामिक की शुद्धि अशुद्धि नमूने के तौर पर लिखकर रवाने करते हैं, ज्वालादत्त को देदेना और तुम भी देखना कि किस क़दर ग़लती निकलती हैं।

आगरा ७ फरवरी ८१ ई०[1] दयानन्द सरस्वती

---

[५] नं ६२ पत्र (२७०) [३३४]

सेठ कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[2]।

विदित हो कि अब हमने मुंशी बख़तावरसिंह के समय से सब काग़ज़ात काशी से मंगवा कर देखे और हिसाब की जांच पड़ताल की। और कई योग्य पुरुषों, जैसे बाबू पन्नालाल के गुमाशते जमनादास हिसाबदां, लाला गिरिधरलाल वकील जो यहाँ इस समय वकीलों में गणनीय हैं, मास्टर लक्ष्मणप्रसाद और लाला हरिप्रसाद आदि को भी दिखाकर जांच पड़ताल कराई। जो भली प्रकार प्रत्यक्ष और सिद्ध हो गया कि बख़तावरसिंह ने टाइप, काग़ज़ादि प्रेस की वस्तुओं और बाहर की छपाई में से हज़ारों रुपयों का गबन किया। जो भद्र पुरुष उसके कागजात को देखता है दांतों नीचे अँगुली दबा शोक से कहता है कि उसने यह ऐसा बुरा काम क्यों किया। जिस किसी साहब को इस में सन्देह हो वह उसके कागजात अपनी आंख से देख लेवे। जब हम पर उस की चोरी सिद्ध हो गई तो हम ने नालिश करने से पहिले चाहा कि उससे हिसाब समझ लेना अवश्य उचित है। इस प्रयोजन से हम ने अलीगढ़ पहुंच कर अपने आम मुखतार ठाकुर मुकुन्दसिंह और भूपालसिंह की मार्फत उस के पास २२ नवम्बर १८८०[3] को रजिष्टरी चिट्ठी इस विषय की भिजवाई कि **तुम आगरे में आकर स्वामी जी को हिसाब समझादो**, कि उसकी रसीद भी हमारे पास मौजूद है। जब वह न आया तब बहुत बाट देखने के पश्चात् हमने उस के समय के सब रजिस्टरादि कागज़ यहां काशी से मंगा कर देखे। और उस को एक रजिस्टरी चिट्ठी इस विषय की १९ जन० १८८१[4] को लिखी कि **तुम एक सप्ताह के अन्दर यहां आकर हिसाब समझादो नहीं तो कारवाई जाबते की की जावेगी**। जिस का उत्तर २१ जन० का लिखा २४ जन०[5] को हमारे पास इस मज़मून का आया कि आप मेरे रजिस्टर आदि सब कागजात काशी से मंगा लें तो मैं २९ जन० को आकर २ दिन में सब हिसाब समझा दूँ। उस का उत्तर हम ने २४ जन० को रजिस्टरी कराकर यह लिख भेजा कि **हम ने तुम्हारे सब कागजात काशी से १० जन० ही को मंगा लिये। तुम अवश्य २८ जन० को चले आओ**। उस का उत्तर नहीं भेजा। किन्तु गुम शुम लिखता है कि मुझ को छुट्टी नहीं मिलती। शिवरात्री वा मई मास की छुट्टी

---

१. माघ शुक्ल ६ सं० १६३७। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में था। उसी से १६ दिसम्बर १६२६ को म० मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की। [पत्र पर तिथि या तारीख नहीं है]।

३. मार्गशीर्ष कृष्ण ५ सोम० सं० १६३७। यु० मी०।

४. माघ कृष्ण ४ बुध, सं० १६३७। यु० मी०।

५. माघ कृष्ण ६ सोम० सं० १६३७। यु० मी०।

में आकर हिसाब समझा दूँगा। सो वह केवल दिन टला रहा है। उसके आने की आशा नहीं॥ उस के लिखने का विश्वास और ठीक ठिकाना नहीं है। अब हम ने सब कागजात ला० गिरिधरलाल वकील को सौंप दिये हैं। फिर हमने उन से भी एक रजिष्टरी चिट्ठी उस के पास भिजवाई कि जो अपना कल्याण चाहते हो तो अब भी आकर हिसाब समझा दो। उसने उत्तर लिखा कि मैं बहुत चाहता हूँ कि स्वामी जी से हिसाब का फैसला हो जावे, परन्तु छुट्टी न मिलने से मजबूर हूँ। जो आप पञ्चायत करलें मुझे स्वीकार है। और लाला रामशरणदास मेरठ वाले तथा मुन्शी इन्द्रमणि साहब मुरादाबाद वाले मेरे पंच रहे। उसको फिर उत्तर लिखा कि तुम अपने पंचों को आगरे में लाओ वा आगरे में और किसी को पंच बध दो और स्टाम्प के कागज़ पर पंचायत का इकरार नामा लिखकर जल्दी भेज दो। अब देखिये कि क्या उत्तर लिखता है। जो वह यहां आगया और पञ्चायत करके हिसाब का फैसला कर दिया तो अच्छा है, नहीं तो यह मामला अदालत में अवश्य जावेगा। आप फिर हम को कोई दोष न देना, क्योंकि हम ने केवल परमार्थ और स्वदेशोन्नति के कारण अपने समाधि और ब्रह्मानन्द को छोड़ कर यह कार्य ग्रहण किया है। और निम्नलिखित सज्जन पुरुषों ने इस प्रेस के लिये रुपया दिया है कि जिसकी बेबाकी भी अब तक नहीं हुई। जो बखतावर-सिंह ऐसा अनिष्ट काम न करता तो देश की हानि न होती। जो सत्य पूछते हो तो यह वैदिक प्रेस इन्हीं योग्य पुरुषों की सहाय के वसीले से हुआ है कि जिन का विवेचन यह है।

आर्य्यसमाज फर्रुखाबाद	१८००)
,, मेरठ	४२८)
,, लाहौर	३५०)
,, देहरादून	२५)
,, दानापुर	१४)
राजा जयकृष्णदास जी	६००)
लाला ईश्वरदास स्यालकोट	२५)
लाला चूड़ामणि लुधियाना	५)
चौधरी जालिमसिंह रूपधनी	५०)
पं० सुन्दरलाल साहब इत्यादि	३००)

इन्हीं में से कई मनुष्यों के नाम वसीयत नामा भी है। जो यह केवल हमारा ही धन होता तो कुछ पर्वाह न थी। परन्तु यह सब संसार का धन है। फिर भी चोरी से लेना सो यह कैसे पच सकता है। आप भी इस का उत्तर शीघ्र लिख भेजिये। और सेठ निर्भयराम जी से कह देना कि जब हम जयपुर जावेंगे तब आप को अवश्यमेव लिख भेजेंगे। और हम ने डेढ़ तोला सुर्मा पारसल कर के भेजा है। उसकी रसीद भेज दीजिये। हम सब प्रकार से आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते। और हमारा हिसाब भी उन से भिजवा देना।

[९ फरवरी १८८१][1]　　———　　दयानन्द सरस्वती

---

१. पत्र पर तिथि नहीं दी गई। अगले [पूर्ण संख्या ३३५] पत्र के अन्तिम भाग से निश्चय होता है कि यह पत्र ६ फरवरी सन् १८८१ (माघ शुक्ल १० सं० १६३७) को लिखा गया था।

[६] नं० ७० पत्र (२७१) [३३५]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।[1]

विदित हो कि आप की चिट्ठी ९ ता० फ० १८८१ की लिखी नम्बरी ४०१ आज हमारे पास पहुँची। समाचार विदित हुआ। पण्डित सुन्दरलालजी प्रयाग वालों ने खजानची होना और ऊपर की दृष्टि से सब यंत्रालय का प्रबन्ध करना स्वीकार कर लिया है। और अनुमान है कि वे प्रेस को भी प्रयाग ही में अपने पास उठा मंगावेंगे। इस लिये अब वहां किसी ख़ज़ानची की आवश्यकता नहीं है। सब प्रबन्ध वे ही स्वतः एव कर लेवेंगे। इस बात का निश्चय अब हुआ है। इस लिए ख़ज़ानची के विषय में कुछ उत्तर नहीं लिखा था। और पण्डित प्रागदत्त के लिये भी अभी कुछ नहीं लिख सकते। यदि वे ज्वालादत्त की तरह शीघ्र लिखते होते तो हम उन को अपने पास रख लेते। और उन्होंने जो बालविवाहखण्डन बनाया सो बहुत उत्तम बात है।।

और जो पं० सुन्दरलाल जी ख़ज़ानची के लिये लिखेंगे तो राधाकृष्ण के लिये लिखा जावेगा और परसों बख़्तावरसिह के विषय में एक पत्र आपके पास भेजा गया है, पहुंचा होगा[2]। वह धूर्त्तता कर रहा है। और अब यह भी सिद्ध हो गया कि उसने चोरी से अधिक पुस्तकें छपाकर बेच दीं। अब लाला गिरिधरलाल जी वकील ने उसको नोटिस दिया है। देखिये वह आता है कि नहीं। और सब हाल आपको परसों की चिट्ठी में विस्तार पूर्वक लिख चुके हैं। सब सभासदों को नमस्ते पहुंचे।

हस्ताक्षर

आगरा
११ फ० १८८१[3] } दयानन्द सरस्वती {

———

[७]नं० ७९ पत्र सूचना (२७२) [३३६]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[4]

———

१. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था। उसी से दिसम्बर सन् १९२६ को म० मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की।

२. यहां से आगे का पाठ फरुखाबाद के इतिहास (पृ० १८९) में नहीं है।

३. माघ शुक्ल १२ शुक्र० सं० १९३७। यु० मी०।

४. फरुखाबाद के मन्त्री ने नं० ४१८ का पत्र ता० २९।२।८१ को आगरा लिखा। उस में पत्र संख्या ७९ और ८४ का उत्तर है। श्री स्वामी जी का संख्या ८४ का पत्र अगली पूर्ण संख्या ३३७ पर छपा है।

आर्यसमाज फरुखाबाद में पुराने रजिस्टर सुरक्षित थे। उन में उक्त समाज के पास आने और उस समाज से भेजे गए सब पत्रों की तिथि-वार सूची है। उन के अनुसार समाज की ओर से सारे ५७ पत्र श्री स्वामी जी की सेवा में गए। अन्तिम पत्र ता० ३ अक्टूबर सन् १८८३ को जोधपुर भेजा गया था। उनमें से २९।२।८१ के २३वें पत्र में यह सूचना है। म० मामराज ने सन् १९२७ में प्रतिलिपि की।

[३०] पत्र सारांश (२७३) [३३७]

[बखतावरसिंह शाहजहांपुर]

तुम अवश्य २५ फ० को यहां पहुंच जाओ[१]।

---

[८] नं० ८४ पत्र (२७४) [३३८]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[२]।

विदित हो कि कल बखतावरसिंह की एक चिट्ठी आई है जिस में उसने लिखा है कि मैं शिवरात्रि की छुट्टी में २४ फरवरी को चलकर २५ फ० को आपके पास पहूंचूंगा। और दो दिन में सब हिसाब समझा दूंगा। इस लिये आप को लिखते हैं कि आप ला० नारायणदास मुखतार को २५ तारीख तक यहां अवश्य भेज देवें कि उन के सामने सब हिसाब की सफाई हो जावे। हमने भी बखतावरसिंह के पास एक रजिस्टरी चिट्ठी आज भेज दी है कि **तुम अवश्य २५ फ० को यहां पहुंच जाओ**। सब सभासदों को नमस्ते ॥

आगरा } हस्ताक्षर
१७ फ० १८८१[३] } दयानन्द सरस्वती

---

[३] नं० ८८ पत्र (२७५) [३३९]

सेठ निर्भयराम जी आनन्दित रहो[४]।

प्रकट हो कि ३ फ० को तुम्हारे पास एक पारसल अञ्जनकी भेजी थी[५]। सो उसकी रसीद आपने अब तक नहीं भेजी। न जाने पारसल पहुँचा वा नहीं, क्योंकि इतनी देर तो कभी न करते थे। जो वह पारसल पहुँच गया हो रसीद भेज दो। नहीं तो वैसा लिखो कि उसकी तला[श] की जावे। और हमने लाला कालीचरण रामचरण को भी परसों एक चिट्ठी भेजी है[६]। और आज आपक[ो] भी लिखते हैं कि बखतावरसिंह शिवरात्रि की छुट्टी [में] यहां हिसाब समझाने आवेगा। सो आप

---

१. यह पत्र सारांश अगले पूर्ण सं० ३३७ के पत्र के अन्त में लिखा है। सम्भवतः यह पत्र भी १७ फरवरी १८८१ (फा० कृ० ५ सं० १९३७) को या उस से एक दिन पूर्व लिखा गया होगा। यह पत्र रजिस्ट्री से भेजा गया था। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था। उसी से म० मामराज जी ने दिसम्बर सन् १९२६ में इस की प्रतिलिपि की।

३. फाल्गुन कृष्ण ५ बृह० सं० १९३७। यु० मी०।

४. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था। म० मामराज जी ने दिसम्बर सन् २६ में इसकी प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १९० पर भी छपा है।

५. इस का संकेत पूर्ण संख्या ३३४ के अन्त में भी है। यु० मी०।

६. कालीचरण जी फरुखाबाद को १७ फरवरी को (पूर्ण संख्या ३३७ का) पत्र लिखा गया। इस से विदित होता कि यह पत्र १९ फरवरी को आगरा से लिखा गया था।

नार[ा]यणदास मुखतार [को] २४ फर्वरी तक यहां अवश्य भेज दीजिये । हमारी तो यही सम्मति है कि यह मामला घर ही में निमट जावे । जो वह आ जावेगा तो अच्छा है । नहीं लाचारी से अन्त को अदालत में जाना होगा । लाला कालीचरण जी ने लिखा था कि आप की ओर से नालिश न होनी चाहिये । सो हम भी यही चाहते हैं । सो आप लाला गौरीशंकर वकील से सम्मति लीजिये कि नालिश किस की ओर से हो । जो आप ही की ओर से हो तो अच्छा, क्योंकि वसीयतनामा भी आप के नाम है । और आपका धन भी छापेखाने में लगा है । प्रथम तो पंचायत में निमट जावे तो बहुत ही अच्छा है । दूसरे नहीं तो उस पर हिसाब फहमी की नालिश और जो जब भी न माने तो फोजदारी वा दीवानी में दावा किया जावे ।

और जो तुम इस का प्रबन्ध कुछ न करोगे तो ऐसी लूट मार से हमारे पास के पुस्तकादि भी कोई लूट लेगा—फिर तो हम अपने समीप कुछ न रख सकेंगे । और वेदभाष्य आदि सब काम छोड़ देंगे । केवल एक लंगोटी लगा आनन्द में विचरेंगे । अब आप लाला नारायणदास को अवश्य भेज दीजिये कि बखतावरसिंह २५ फ० को अवश्य आवेगा[१] । यह पत्र बाबू जी और लाला जगन्नाथप्रसाद जी [को भी] दिखला दीजिये । इस में विलम्ब मत कीजियेगा[२] ।

———

[१९] नं० १०९ पत्र (२७६) [३४०]

श्रीयुत लाला मूलराज जी आनन्दित रहो[३] !

प्रकट हो कि पत्र आप का २८ फ० का लिखा पहुँचा । हाल मालूम हुआ । गोकरुणानिधि पहुँचने से खातिर जमा हुई । इस का अंग्रेजी तर्जमा जलदी करके हमारे पास रवाना कर दीजिये । हम भी उसको किसी अच्छे विद्वान् अंग्रेजी वाले से सुन लेवेंगे । और जो आपने बावा दयानन्द का हाल लिखा सो बहुत अच्छा है । परन्तु जब तक वे आद्योपान्त निरुक्त [न] पढ़ लेवें तब तक अच्छी प्रकार नहीं खुल सकता । और आप जानते हैं कि हम को अवकाश बहुत कम है । और उन को १ घण्टे वा २ घण्टे अवश्य पढ़ना चाहिये । इसका हम ने यह विचार किया है, कि जो हम को अवकाश मिला तो हम, नहीं तो किसी अच्छे विद्वान से उसकी सूक्ष्म व्याख्या लिख लेवें तो बहुत अच्छा उपकारहोगा । हम को अवकाश होता तो नहीं दीखता । जब कभी अवकाश मिलेगा तब दयानन्द हमारे पास आ सकते हैं । अब हम आगरा से ८ वा ९ मार्च को चल कर १० मार्च को जयपुर पहुंचेंगे[४] । जो पत्र आदि वा गोकरुणानिधि भेजें तो वहीं भेजिये । और लाला शिवदयाल आज कल कहां हैं । और मुंशी बखतावरसिंह ने प्रेस में बहुत हानि की है । अब उस के मामले में पञ्चायत ठहर के इकरार

---

१. यहां से आगे का लेख स्वयं ऋषि के हाथ का है । पत्र पर हस्ताक्षर नहीं है । संशोधन भी ऋषि ने किया है । मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में था । म० मामराज जी ने सन् १९२६ में उसकी प्रतिलिपि की । फरुखाबाद का इतिहास. पृ० १८९ से १९० पर भी छपा है ।

२. यह पत्र १६ फरवरी १८८१ = फाल्गुण कृष्ण ५ सं० १९३७ को लिखा गया । देखो पूर्व पृष्ठ २७१ की टि० ६ । यु० मी० ।

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

४. श्री स्वामी जी जयपुर नहीं गये, परन्तु भरतपुर गए । देखो पत्र पूर्णसंख्या ३४२ (पृ० २८२) ।

नामा कागज़ स्टाम्प पर लिखा गया है। हमारे पक्ष बाबू छेदीलाल गुमाश्ते कमसरयिट और उस के पक्ष लाला आनन्दलाल मन्त्री आर्यसमाज और सरपञ्च लाला रामशरणदास रईस मेरठ। और लाला गिरिधरलाल वकील आगरा हमारे वकील ठहरे हैं। और मई मास में यह मामला निमट जावेगा।

आगरा　　　　हस्ताक्षर
३ मार्च १८८१[1]　　　　दयानन्द सरस्वती

---

[३] नं० ११६　　　　पत्र (२७७)　　　　[३४१]

पण्डित गोपालरावहरि[2] जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि आप का पुस्तक[3] हमारे पास पहुँच गया है, और हमने उसके छपवाने का निश्चय पण्डित ज्वालाप्रसाद भार्गव एडिटर सत्यप्रकाश प्रेस आगरा से किया है, और हमने दो कागज़ का नमूना आपके पास फर्रुखाबाद भेज दिया है क्योंकि बिठूर में आप का पता मालूम नहीं था। एक कागज़ १२) रीम वाला कि जो इस पर छपवाओगे तो १) के ३५ जुज़, और दूसरे ६) रीम वाले पर छपवाओगे तो १) के ४५ जुज़ मिलेंगे, और पत्र के उत्तर में देर यों हुई कि ज्वालाप्रसाद के मिलने और कागज़ देखने में समय लगा,। यहां पर लाला नारायणदास मुखतार आये थे, वे कहते थे कि आप बिठूर में हैं। और आपको कागज़ के वास्ते ३०) पहिले देने पड़ेंगे, और हम फा० शु० ९ को जयपुर जावेंगे, और आप का पुस्तक हम लाला गिरिधरलाल वकील बेलनगञ्ज आगरा को सौंप देंगे। उन्हीं से इस विषय में पत्र-व्यवहार रखिये। आप अपने लड़के का यज्ञोपवीत अच्छी प्रकार करें॥ मुन्शी बखतावरसिंह के मामले की पञ्चायत हो गई है, हमारे पक्ष बाबू छेदीलाल कमसरयिट गुमाश्ते, उस के पक्ष लाला आनन्दलाल मन्त्री आर्यसमाज और सरपञ्च लाला रामशरणदास रईस मेरठ और लाला गिरिधरलाल वकील आगरा हमारे वकील ठहरे हैं। मु० इन्द्रमणि जी का मुकदमा नम्बर पर चढ़ गया, अभी मिति नियत नहीं हुई॥

आगरा　　　　हस्ताक्षर
७ मा० १८८१[4]　　　　दयानन्द सरस्वती

---

१. फाल्गुण शुक्ल ३ बृह० सं० १९३७। यु० मी०।

२. ये गोपालरावहरि दक्षिणी ब्राह्मण थे। फरुखाबाद में स्कूलों के इन्सपैक्टर थे। यह पत्र पीले रंग के बारीक कागज पर है। म० मामराज को यह तथा एक और पत्र जो पृष्ठ १९३ पूर्ण संख्या २३९ पर छपा है, पं० गो० रा० के पुत्र श्री मुकुन्द गोपाल बद्री इन्दौर से (श्री द्वारकाप्रसाद सेवक द्वारा) नवम्बर सन् ३३ में प्राप्त हुआ था। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. संभवतः दयानन्ददिग्विजयार्क।

४. फाल्गुण शुक्ल ७ सोम, सं० १९३७। यु० मी०।

[३] उर्दू कार्ड (२७८) [३४२]

लाला रामसरनदास साहिब आनन्दित रहो[१]।

वाजेह हो कि कल यहां से रवानह होकर भरतपुर पहुँचेंगे[२]। और हमने आर्यसमाज के नियम यहां छपवाये थे[३]। वे ज्यादह नहीं। लिहाजा थोड़े आप के पास रवानह होते हैं। रसीद भरतपुर में हमारे पास रवानह कर देना। सब सभासदों को नमस्ते।

दयानन्द सरस्वती

स्वामी दयानन्द सरस्वती
आगरा
९ मार्च सन् ८१[४]।

[३] पत्र-सूचना (२७९) [३४३]

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई][५]

[७] पत्र (२८०) [३४४]

श्रीयुत करनेल एच् एस् आल्कट साहब तथा एच् पी मेडम व्लेवत्सकी जी आनन्दित रहो[६]।

(१) प्रगट हो कि मेडम व्लेवत्सकी का पत्र १७ जनवरी १८८८१ का लिखा पहुंचा, वर्तमान विदित हुआ; उसका उत्तर लिखा जाता है। मैं सब काल में एक सी बात कहता हूं।

(२) जो आपने अपना निश्चय न बदलाया होगा तो गुप्त रक्खा होगा, जब कि मूलजी ठाकरशी के साथ बात हुई थी। मैं जानता हूं उस समय आप ईश्वर को मानते थे, अब कुछ दूसरी बात पहिली बातों से विपरीत देखने में आती है जो कि आपने मेरठ में की है, और हम किसी से संसार भर में विरोध करना नहीं चाहते सिवाय उनके कि जो अधर्म और अन्याययुक्त आचरण करें।

(३) आर्यसमाज ठीक वैदिक मत पर है। उनके उद्देश में कुछ किसी प्रकार का फ़र्क नहीं है। और "भ्रातृभाव" जो कि आपका बड़ा भारी नियम है वह कभी पूरा २ नहीं बर्त्ता जा सकता, जब तक कि मज़हबी तास्सुब और द्वेष बिलकुल दूर न हो जावे। मैं जानता हूँ कि आप फिर भी आर्यसमाज के नियम विषय में भूलती हो। पहिले भी कहा गया था कि आर्यसमाज के नियम से दूसरी किसी सभा के जो नियम मिलते हैं वे उसके अनुकूल ही है, उससे विरुद्ध कैसे अनुकूल हो सकते हैं? दो बातें जो परस्पर विरुद्ध हों कैसे सत्य हो सकती हैं? यह प्रत्यक्ष है कि उन दोंनो में से एक ही सत्य होगी, अर्थात् सत्य के विरुद्ध झूठ, और झूठ के विरुद्ध सत्य सदैव होता है।

(४) और आप बार २ लिखती हैं कि "पोप" के भी ऐसे ही नियम थे, सो पोप और आर्यसमाज के नियमों में पृथ्वी, आकाश का अन्तर है। आर्यों के नियम विद्यामृत के अनुसार और

---

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. ७ मार्च के पूर्ण संख्या ३४१ (पृष्ठ २८१) के पत्र में फा० शु० ६ अर्थात् ६ मार्च को जयपुर जाने का विचार लिखा है। पुनः भरतपुर जाने का निश्चय किया होगा।

३. इस पत्र के साथ 'आर्यसमाज में दाखिल होने की दरख्वास्त' और "आर्यसमाज के असूल" का उर्दू में छपा एक कागज है।

४. फाल्गुन शुक्ल ६ बुध, स० १९३७। यु० मी०।

५. इस रजिस्टर्ड पत्र की सूचना पूर्ण संख्या ३४४ (पृष्ठ २८६) के अन्त में है। यु० मी०।

६. मासिक परोपकारी (अजमेर) कार्तिक सुदी १ सं० १६४६ से लिया गया।

पोप के नियम विद्या से विरुद्ध, स्वार्थ से भरे हुए हैं, और जो ऐसे ही विना विचारे कोई आपके नियमों को भी कह देवेगा तो आप क्या उत्तर दे सकेंगी।

(५) सन् १८७९ में करनेल आलकट साहब से साहरनपुर में हमने कह दिया था कि हमारे पास कोई अङ्गरेज़ी का पूरा २ विद्वान नहीं है, इसीलिए हमको अङ्गरेज़ी चिट्ठी के उत्तर देने में कठिनता होती है। इस कारण अङ्गरेज़ी पत्रों का उत्तर आप ही दिया करें, और जिसका उत्तर हम से चाहें उसको नागरी कराके हमारे पास भेजा करें, क्योंकि मैं एक ही भाषा का उपदेशक हूं दूसरी भाषा में कठिनता पड़ती है। जब कर्नेल आल्कट साहब जेनेरल कौंसिल में मेरे प्रतिनिधि थे तो फिर मेरा नाम लिखने में क्या आवश्यकता थी, जो चाहते वे करते।

(६) चाहे कोई हो जब तक मैं न्यायाचरण देखता हूं मेल करता हूं और जब अन्यायाचरण प्रकट होता है फिर उससे मेल नहीं करता, इस में हरिश्चन्द्र हो वा अन्य कोई हो।

(७) और कोई मुख्य बात मुझको विस्मरण नहीं हुई। और जब डिप्लोमा आया था, उसका यही प्रयोजन था कि थियोसोफिकल सुसाइटी आर्यसमाज की शाखा होना चाहती है। अब वह बात वैसी नहीं रही जैसी की तब थी, इस लेख का क्या प्रमाण होसकता है, और जब तुम्हारा डिप्लोमा आया तो हम ने उसकी पहुंच लिखी थी, न यह कि हम तुम्हारे सभासद् होगए।

(८) बस, जैसा आप दुष्टजनों को सभासद नहीं करते वैसे ही आर्यसमाज भी नहीं करता, आर्यसमाज के नियमों में देख लो कि "सबसे प्रीतिपूर्वक धर्म्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिए" यह नियम पड़ा है वा नहीं ?

(९) और मैं कोई नवीन मत चलाना नहीं चाहता; किन्तु सनातन वेदमत का प्रकाश करता हूं। जो न मानेगा उसकी हानि होगी, मेरी कुछ हानि नहीं। जैसी मुझ से आप सत्यभाव से प्रीति रखते हैं वैसे ही मैं भी रखता हूं। और आपसे क्या सब सज्जन पुरुषों से मेरी वैसी ही प्रीति है।

(१०) और परस्पर संसार की उन्नति करने में सहायक होना ही बहुत अच्छी बात है। और मैं अपनी सामर्थ्य के अनुसार वेद का उपदेश करता हूं। सिवाय उपदेशक के और मैं कुछ अधिकार नहीं चाहता। तुम मुझको कहीं सभासद् लिख देते हो, कहीं कुछ लिख देते हो; मैं कुछ बड़ाई और प्रतिष्ठा नहीं चाहता, और जो मैं चाहता हूं वह बहुत बड़ा काम है, सो आशा है कि ईश्वर की दया, और सज्जन तथा विद्वानों के सहाय से कृतकृत्य हूंगा।

अब जो कर्नेल आल्कट साहब ने लिखा था उसका उत्तर यह है कि मुझ को अवकाश बहुत कम है। जब मैं मुम्बई आऊंगा तब आप को कुछ अवकाश दूँगा, वा जब वेदभाष्य पूरा होजायगा तब अवकाश मिलेगा। अब आप आए और कार्य्य सिद्ध न हुआ तो क्या लाभ होगा। और दामोदर से कह दीजिये कि सेवकलाल कृष्णदास ने हमारी रजिस्टरी चिट्ठी का उत्तर नहीं भेजा सो उससे पूछें कि क्या कारण है। जैसा वह कहे हमको लिख भेजें।

और सबसे नमस्ते कह दीजिये। आज हम भरतपुर से जयपुर जाते हैं।

भरतपुर
१९ मा० १८८१[1]

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

---

१ चैत कृष्ण ४ शनि, सं० १९३७। यु० मी०।

[१] **उर्दू पत्र (२८१)** [३४५]

चौधरी जालिमसिंह जी आनन्दित रहो।[१]

वाज़ेअ हो कि पं० भीमसेन रुखसत पर गया था। उसने अब तक कुछ हाल नहीं लिखा और न वह आया। सो तुम इस खत के देखते ही उसका हाल लिखो कि क्या बात है। क्या उस ने हम को धोका दिया? हम उस को ऐसा नहीं समझते थे, सो तुम जल्दी लिखो। अगर उस ने धोका दिया है तो लिखो कि फिर दूसरी चिट्ठी आप को लिखें। हम आज भरतपुर से जयपुर जावेंगे। आप भी सैर करना चाहें तो आजावें॥

भरतपुर १९ मार्च सन् १८८१[२] स्वामी दयानन्द सरस्वती

---

[९] **कार्ड (२८२)** [३४६]

ओ३म

ता० २२ मार्च ८१[३]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनंदित रहो[४]

हम प्रसन्नता पूर्वक जयपुर में पहुंच के गंगापोल दरवाजे के बाहर वदनपुरा में अचरोल वाले ठाकुरों के बाग में ठहरे हैं। और आज पंडितों के विषय में जो १००) रु० वहां से आये थे, उनका हिसाब सेठ निर्भयराम की दुकान पर भेजते हैं। अब मार्च की ता० १ तक हमारे पास २)रु० बाकी रहे हैं। इस लिये आप १००) रु० की हुंडी करवा के जयपुर में हमारे पास शीघ्र भिजवा दीजिये। हम आगरे से चल के भरतपुर में १० दिन रहे। और वहां से चल के ५[५] रविवार का यहां पहुंचे। हम सब प्रकार प्रसन्न हैं। आप लोग भी होंगे। सब से हमारा नमस्ते कह देना।

दयानन्द सरस्वती

---

[४] **पत्र-सूचना (२८३)** [३४७]

[सेठ निर्भयराम, फरुखाबाद की दुकान]

पण्डितों के १००) रु० के हिसाब के सम्बन्ध में[६]।

---

१. मूलपत्र पं० विष्णुलाल जी एम० ए० बरेली निवासी के पास था। उन्हीं के पास से हमने इस की प्रतिलिपि की थी।

२. चैत्र कृष्ण ४ शनि, सं० १९३७। यु० मी०।

३. चैत्र कृष्ण ७ मंगल, सं० १९३७। यु० मी०।

४. सारा कार्ड ऋषि की अपनी लेखनी से लिखा है। जयपुर से लिखा गया है। कार्ड पर जयपुर मार्च २२ की मुहर है। पता भी ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है। पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५४२ पर थोड़ा सा अन्तिम अंश उद्धृत है। मूल कार्ड आर्यसमाज फरुखाबाद में था। सन् १९२७ में मा० मामराज ने इसकी प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ के पृ० १९१ पर भी छपा है।

५. चैत वदी ५ सं० १९३७=२० मार्च सन् १८८१।

६. इस पत्र की सूचना पूर्व संख्या ३४६ पृष्ठ (२८४) में है। यु० मी०।

[९]　　पत्र (२८४)　　[३४८]

ता० ३१ मार्च १८८० [१८८१][1]

कृपाराम स्वामी आदि आनन्दित रहो[2]।

पत्र तुम्हारा आया समाचार जाना। आगरे से भरतपुर आये और वहां से आकर यहां जयपुर में ठहरे हैं। ईश्वर विषय में एक व्याख्यान भी यहां हुआ था और भी श्यायद होगा। कलकत्ते की सभा आदि के साथ हमको लिखने छपवाने का अवकाश नहीं, वेदभाष्य का काम बहुत है। तुम को अवकाश हो लिखो छपवावो। अनुभ्रमोच्छेदन और गोकरुणानिधि छप चुके हैं, वेदभाष्य के अंक के साथ तुम्हारे पास भी पहुंचेंगे। भागलपुर, जवनपुर, काशी, मिर्जापुर आदि में मुसलमानों का उपद्रव हमने सुन लिया। मुंशी इन्द्रमणि का मुकद्दमा भी इलाहाबाद में है अभी कुछ सिद्धान्त नहीं हुआ है।

दांत की औषधी

माजूफल, मोरेठी, पपरिया कत्था, रूमी मस्तगी, नीला थोथा, ये पांच चीज बराबर अर्थात् आध २ पाव से कम न हों। नीलाथोथा को अग्नि पर फुला के थोड़ा सा जल कड़ाही में रख के बुझा ले और बुझा के शीघ्र निकाल के पांचों चीजें अलग २ पीस ले उन पांचों की बराबर आक के जड़ की छाल अर्थात् पृथिवी में से खोद के धो डाले जिस से मिट्टी कंकर न रहे। छाल को छोटी २ काट के जिस जल में नीला थोथा बुझाया है उसमें छः ही चीजें डाल के लोहे की कड़ाही में लोहे की मुसली से कूटे। जब महीन हो तब निर्वातस्थान में पीसे, जब तक अंजन के समान न हो जाय पीसता जाये पीछे किसी शीशी में भर रक्खे। दांतोन करके पीछे अंगुली से दांत और मसूरों में लगावे। इससे दांत पुष्ट रहेंगे न हलेंगे न गिरेंगे न पीड़ा होगी। सब से हमारा नमस्ते कह देना[3]।

सवाई जयपुर　　[दयानन्द सरस्वती]

---

१. सन् १८८१ चाहिए। भूल से १८८० लिखा गया है। चैत्र शुक्ल २, बृ० सं० १९३८।

२. हाथी छाप के बारीक कागज पर सारा पत्र ऋषि के ही हाथ का लिखा हुआ है।

३. मूल पत्र इस समय डा० किदारनाथ जी के पास देहरादून में है। म० मामराज ने वहीं से उसकी प्रतिलिपि ता० २८ दिसम्बर सन् १९३२ को की थी।

[इस समय यह पत्र श्री पं० अमरनाथ जी वैद्य शास्त्री देहरादून के पास है। इस पत्र की प्राप्ति श्री डा० केदारनाथ जी को कैसे हुई, उस का वर्णन श्री पं० अमरनाथजी वैद्य ने इस प्रकार किया—"यह पत्र किसी प्रकार एक भारतीय आर्य ठेकेदार बरमा देश में ले गया, जो कि वहीं रहता था। वह रोगी हो गया, उसकी चिकित्सा करने के लिये डा० केदारनाथ (देहरादूनवासी) जो सैनिक विभाग में नियुक्त थे, उसके घर गये। उनकी बैठक में टंगा हुआ यह पत्र देखा पढ़ा, तत्काल उनकी इस पत्र को प्राप्त करने की इच्छा हुई। जब रुग्ण महाशय को देख कर लौटने लगे तो उन्होंने शुल्क (फीस) देनी चाही पर डाक्टर जी ने कहा कि मैं शुल्क न लूंगा, मुझे तो मेरे गुरु जी का यह पत्र दे दो, मैं इसको फिर जहां से (देहरादून) आया वहीं ले जाऊंगा। डाक्टर जी के आग्रह को टाल न सके। डाक्टरजी पत्र प्राप्त कर सन्तुष्ट हो गये। जब वे अवसर प्राप्त कर भारत आये तो सुरक्षितरूप से पत्र साथ ले आये।

अनुमान १२ वर्ष हुए मैं डा० केदारनाथ जी को मिलने उनके घर गया, उन्होंने कहा मेरा शरीर

[२] पत्र (२८५) [३४९]

चौधरी ठाकर जालिमसिंह जी आनन्दित रहो।[१]

मेरा विचार जयपुर में १५ दिनों तक ठहरने का है। पश्चात् अजमेर जाना होगा। यहां के मनुष्यों का सुधार असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। बहुत कालमें सुधरेंगे तो सुधरेंगे, नहीं तो अधिक बिगड़ जायंगे। अब देखिये कि जैसी भीमसेन की इच्छा थी वैसा ही १५) रुपैये मावारी और१)एक रुपैये हाथ खर्च और खाने में ३) रु० से कम नहीं लगते। इस ने एक महिना कि जब तक उस का मासिक पूरा न हुआ था, तब तक काम भी अच्छा करता था। अब ठीक २ नहीं करता। ये लोग भीतर के मैले और ऊपर के शुद्ध दिखलाई देते हैं। अच्छा, जब तक बनेगा तब तक रखना होगा। बहुत अपराध करेगा तब निकाल देना पड़ेगा। देखिये मैंने इस से कहा था कि जो तेरा भाई रसोई कर सके तो लाना, नहीं[तो]आपके मार्फत रसोईया लाने का कहा था। परन्तु लोभ का मारा अपने महामूर्ख जड़ बुद्धि को ले आया[२]। आज इसको रसोई बनाते १५ दिन होचुके,कुछ भी न आया और न आगे आने की आशा है। आज भी इसने रसोई जला दी। अब आपको मैं लिखता हूं जो कोई रसोईया चतुर और धर्मात्मा आप की जान में हो तो यहां जयपुर में भेज दीजिये। और जो वहां न मिल सके तो लिखिये। फिर यहां से तजवीज हो जायगा। सब से मेरा नमस्ते कह दीजियेगा।

मि० चै० शु० ८ गुरुवार सं० १९३८, ता० ७ मार्च[३]।

[दयानन्द सरस्वती] (जयपुर)

---

[१] पत्र (२८६) [३५०]

ओ३म्[४]

चोबे कन्हैयालाल जी आनन्दित रहो नमस्ते।

विदित हो कि पत्र आप का आया, समाचार विदित हुए। आप ने प्रश्न किये सो सब हमारे पुस्तकों में उत्तर सहित लिखे हुए हैं। उन में देखने से सब बातें विदित हो सकती हैं। तुम ने प्रथम ही

अस्वस्थ्य रहता है स्वामी जी महाराज का मेरे पास एक स्मृति पत्र है जिसको मैंने दूर देश से लाकर बड़े प्रयत्न से सम्भाल रक्खा है, कहीं नष्ट न हो जावे यही चिन्ता है—आप ठीक समय पर पहुँचे। ये शब्द उन्होंने श्रद्धा प्रेम भरे हृदय से कहे और शीशे में जड़ा हुआ पत्र मुझे सौंप कर निश्चिन्त हो गये।" यु० मी०।

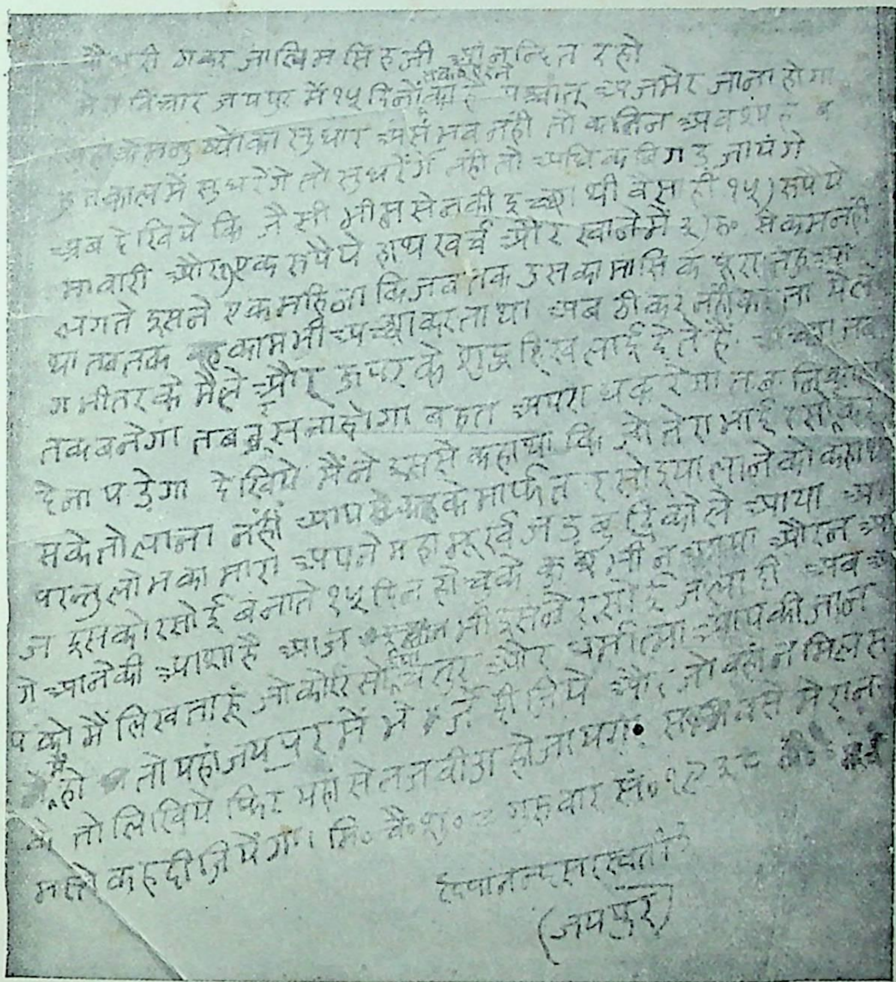
१. मूल पत्र पं० विष्णुलाल जी के पास था। सारा पत्र ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है।

२. अर्थात् अपने भाई ख्यालीराम को। ख्यालीराम लायलपुर जिला एटा का रहने वाला था।

३. ७ एप्रिल १८८१ चाहिये।

४. यह पत्र पहले म० मुन्शीराम जी के संग्रह में छपा था। इसको उन्होंने परोपकारिणी सभा के पास पड़ी हुई मूल पत्र की नकल से ही छापा था। पश्चात् मूल पत्र को चौबे कन्हैयालाल जलालाबाद वालों के भतीजे श्री यज्ञदत्त जी से रु० ११) देकर ता० ७ जनवरी सन् २७ को म० मामराज जी ने फरुखाबाद में खरीदा था। अब उसी से शुद्ध कर के छापा है। म० मामराज ता० ३ से ७ तक जलालाबाद, फतेगढ़ आदि में इसी पत्र के प्राप्त करने में लगे रहे थे। मूल पत्र मुंशी समर्थदान का लिखा हुआ है और हस्ताक्षर ऋषि के हैं। लिफाफे पर पता इस प्रकार लिखा हुआ है—

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन ।


[illegible] ठाकुर जालिमसिंह जी आनन्दित रहो
मेरा विचार जयपुर में १५ दिनों [illegible] पश्चात् अजमेर जाना होगा
[illegible] लड़कों का सुधार असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है [illegible]
[illegible] सुधरेंगे तो सुधरेंगे नहीं तो अधिक बिगड़ जायेंगे
[illegible] इच्छा थी वैसा ही १५) रुपये
अब देखिये कि जैसी भीमसेन की [illegible] और खाने में [illegible] कमती
[illegible] और एक रुपये आप खर्च और [illegible]
[illegible] इसने एक महीना [illegible] अब ठीक [illegible]
था तब तक [illegible] काम भी अच्छा करता था [illegible]
[illegible] भीतर के मैले और ऊपर के [illegible]
तक बनेगा तब [illegible] कि [illegible] भाई [illegible]
देना पड़ेगा देखिये मैंने [illegible] लाने को [illegible]
सके तो लाना नहीं [illegible] आया [illegible]
परन्तु [illegible] अपने [illegible]
[illegible] इसको रसोई बनाते १५ दिन हो चुके [illegible]
[illegible] आने की आशा है [illegible]
[illegible] को मैं लिखता हूं [illegible] और जो [illegible]
[illegible] तो यहां जयपुर में [illegible]
[illegible] तो लिखिये फिर [illegible] गुरुवार [illegible]
[illegible] कह दीजियेगा । [illegible]
दयानन्द सरस्वती
(जयपुर)

ऋषि दयानन्द सरस्वती का आद्यन्त स्वहस्तलिखित पत्र । पृ० २८६ पर मुद्रित ।

बार ये प्रश्न किये हैं इस लिए इस दफ़े तो सब के उत्तर देते हैं। परन्तु आगे हम से प्रश्न करोगे तो हम उत्तर नहीं देंगे, क्योंकि हम को काम बहुत हैं इस कारण से समय बिलकुल नहीं मिलता। उत्तर (१) संध्योपासन और गायत्र्यादि नित्यकर्म द्विजों अर्थात तीनों वर्णों के लिए एक ही हैं। तीनों वर्ण गुण कर्मों से माने जायेंगे, जन्म से नहीं। शूद्र जो विद्यादि गुणों से हीन है इस कारण से उसे संध्योपासन नहीं आसकता। इसलिए वेद के किसी मन्त्र को याद करके जपा करें।

उ० (२) कायस्थ अंबष्ठ हैं, शूद्र नहीं। इस विषय में संक्षेप से लिखा है। विस्तार पूर्वक शास्त्रों के प्रमाण देकर लिखने को समय नहीं है।

उ० (३) मुसलमानादि अन्य मत वाले वैदिक मत में आवें तो वे जिस वर्ण के गुण और कर्म युक्त हों उसी वर्ण में रह सकते हैं। विवाह और खान पानादि व्यवहार भी अपने समान वर्ण के साथ करें। आज कल के आर्य्य लोग उनके साथ उक्त व्यवहार नहीं करेंगे, इसलिये अपने लोगों में ही करें और मत वैदिक रक्खें। इस में किसी प्रकार की हानि नहीं हो सकती।

तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार संक्षेप से दिये हैं। विस्तार पूर्वक हमारे बनाये ग्रन्थों में देख लो।

ता० १६ अप्रैल[१]
सं० १८८१ ई०

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
स्थान जयपुर राजपूताना

---

[४] पत्र (२८७) [३५१]

लाला रामशरणदास जी आनन्दित रहो।[२]

हमने एक कार्ड भेजा था[३] आपके पास पहुँचा होगा।

आपने आगरे से कागज मंगवा लिये वा नहीं, क्योंकि उस कागज को आपको भी पहिले देखना चाहिये। लाला गिरधरलाल जी ९ ता० मई [१८८१][४] को तुम्हारे पास आने को लिखते हैं सो आप भी उनसे पत्र द्वारा निश्चय करलें। और उसी दिन की इतला बखतावरसिंह को भी करदें कि अमुक मिति को इस काम का आरम्भ होगा कि जिससे वह भी नियत समय पर उपस्थित हो जावे। और अब छापाखाना प्रयाग में आ गया। सब काम दुरुस्ती से चलने लगा। अब आप लाला

चौबे कन्हैयालाल ग्राम जलालाबाद परगना कन्नौज जिला फर्रुखाबाद।

मूल पत्र लिफाफे सहित हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

१. वैशाख कृष्ण २ शनि, सं० १९३८। यु० मी०।

२. यह पत्र स्वर्गीय ला० रामशरणदास जी रईस मेरठ वालों के पुराने पत्रों में से म० मामराज जी तथा लाला जी के पोते बाबू परमात्माशरण तथा श्री पुरुषोत्तमप्रसाद जी ने जुलाई सन् १९८५ में खोजा। मूल पत्र उन्हीं के यहां सुरक्षित है।

३. सम्भवतः पूर्ण संख्या ३४२ (पृष्ठ २८२) का कार्ड। यु० मी०।

४. पत्र में तिथि-संवत् कुछ नहीं है। प्रकरण तथा अनुमान से प्रतीत होता है कि वैशाख शुक्ल ५ संवत् १९३८ मंगलवार ता० ३ मई १८८१ को मेरठ भेजा गया होगा।

शादीराम को भी वहां से बुला लीजिये। क्योंकि अब पंडित सुन्दरलाल जी वहां का सब प्रबन्ध कर लेंगे। उन बिचारे ने यथाशक्ति ऐसे समय पर काम दिया। सो बहुत कुछ अच्छा किया। और हम शादी० को लिख भेजेंगे। यहां से हम कुछ दिनों में अजमेर को जावेंगे। सब से हमारा नमस्ते कह दीजिये॥ और यहां जयपुर के लोगों के भाग्य मन्द हैं। कुछ भी धर्म की उन्नति वा कहने सुनने को उद्यत नहीं होते। सन्धिविषय छप गया, अब आप लोग पढ़ने पढ़ाने का आरम्भ क्यों नहीं करते। और नामिक भी अब छपकर आता है। [द० स०] (जयपुर)

---

[३०] **पत्र (२८८)** [३५२]

ओ३म

प्रसन्नता पत्र[1]

विदित हो कि मुनशी समर्थदान मंगलदान जी के पुत्र ग्राम नेठवे ताल्लुका रामगढ़ रियासत सीकर राज जयपुर के रहने वाले हैं। इन्होंने मुंबई में हमारे वेदभाष्य कार्यालय का काम एक वर्ष तक बड़े प्रेम परिश्रम और चतुराई से किया। इन के काम देखने और ये हमारे पास भी कई दिन तक रहे, इस से हम ने निश्चय किया है कि यह पुरुष धार्मिक, निष्कपटी, सच्चा, उद्योगी, परिश्रमी, चतुर, सभ्य, सुशील, और चाल चलन का बहुत ही अच्छा और श्रेष्ठ है। इस लिये हम बहुत प्रसन्न होके लिखते हैं कि जो कोई महाशयं इनको उन्नति देंगे तो हम बहुत प्रसन्न होंगे। और हमें पूरी २ आशा है कि इनके आधीन जो कार्य होगा उसको यह अच्छे प्रकार पूर्ण कर्येगे। हम ने यह प्रसन्नता पत्र इनको बड़ी प्रसन्नता पूर्वक इस लिये दिया है कि किसी नये स्थान में ये जाय तो अजान लोगों को भी इन के सद्गुण प्रगट हों।

मिती वैशाख शुक्ल ६ हस्ताक्षर
सं० १९३८। तारीख ४ दयानन्द सरस्वती
मई सन् १८८१ स्थान जयपुर (राजपूताना)

---

[१] **पत्रांश (२८९)** [३५३]

भाई जवाहरसिंह [मन्त्री आर्यसमाज, लाहौर]।

मेडम ब्लेवेटस्की के पत्र का उलथा तुम ने भेजा था, सो आ गया। और उस का उत्तर भी हम ने मुम्बई में भेज दिया[2]।

१२ मई ८१[3]

---

१. इसकी छपी हुई प्रति आर्यसमाज फरुखाबाद में है। उसी से म० मामराज जी ने सन् १९२७ में इस की प्रतिलिपि की। मूल पत्र मु० समर्थदान के घर में होगा।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८४० पर उद्धृत। अजमेर से।

३. वैशाख शुक्ल १४ बृह०, सं० १९३८।

[१०]　　पत्र (२९०)　　[३५४]

लाला कालीचरण जी रामचरण जी आनन्दित रहो[१]।

यदुनाथ मित्र को जो तुम ने ४०) रु० मासिक पर नियत किया है सो ठीक है। परन्तु इस पाठशाला में अधिक करके संस्कृत की उन्नति पर ध्यान रहना चाहिये। और इस में केवल लड़के ही पढ़ते हैं अथवा हमारे रईस लोगों में से भी कोई पढ़ता है। और उस पाठशाला में से कोई विद्यार्थी अच्छे निकले वा नहीं, क्योंकि शाला को एक वर्ष हो चुका है। चौबे तोताराम का हाल लिखा सो जाना। उस का मिज़ाज तेज है सहन शक्ति बहुत कम है। जयपुर में हम डेढ़ मास पर्य्यन्त रहे। वहां अभी राज्य प्रबन्ध में गड़बड़ सा है। और सब सर्दार लोग तो मिले थे, परन्तु राजा अभी नहीं मिला। इस लिये कि उनके बाधक लोग बहुत हैं। वहां पर वेदधर्म के प्रकाश की बड़ी आवश्यकता है सो हमने कुछ २ वहां संस्कार भी डाला है। ईश्वर करे कुछ फल लगे। हिसाब के विषय में जो तुमने लिखा सो यह बख्तावरसिंह का गड़बड़ था। अब प्रयाग में हिसाब ठीक हो रहा है। सो सबको विदित होगा। परन्तु सीधा हिसाब तो आप लोग जानते हैं कि प्रति ग्राहक दोनों वेदों का चार वर्ष का २५।।) चाहिये। इसी हिसाब से देखकर भेज दो। और लाला निर्भयराम के पास भी हिसाब होगा। उनसे भी समझ सकते हो। आप को भी विदित करते हैं कि आर्य्यसमाज लाहौर से एक अखबार अंगरेज़ी भाषा में जारी होने वाला है। इस से यह अभिप्राय है कि उसके द्वारा वेदोक्त आर्य्य धर्म्म तथा आर्य्य समाजों की काररवाई राज प्रधान अंगरेज़ लोगों को भी विदित होती रहे। वरन विलायत वालों पर भी प्रगट होता रहेगा। इसके प्रबन्ध में आर्य्यसमाज लाहौर और मेरठ की अन्तरङ्ग सभा की ठीक २ अनुमति हो गई है। इसके नफे नुकसान में सहभागी रहेंगे। मेरी अनुमति है कि आप लोग भी इनके शामिल होओ क्योंकि इससे आमदनी और तुम्हारे धर्म्म तथा आर्य्यसमाजों की काररवाई का ठीक २ वृत्तान्त गवर्नमेण्ट तथा सम्पूर्ण अङ्गरेज़ों को विदित भी होता रहेगा, जिस्से अनेक अच्छे लाभों की आशा हो सकती है। और अनुमान होता है कि यह पत्र विलायत के बड़े २ ठिकानों में पहुंचेगा, इस से आशा है कि लाभ भी अच्छा होगा। पण्डित गोपालराबहरी ने जो एक मुदर्रिस हमारे पास भेजने को कहा था वह अभी तक नहीं आया। जिसको १५ दिन का अर्सा हो गया। सो उन से कहना कि क्या कारण है जो अभी तक नहीं आया। किमधिकम्।

वैशाख शुक्ल १४ संवत् १९३८।[२]

---

[१]　　पत्रांश (२९१)　　[३५५]

[चुरू के सेठों के सरपञ्च][३]

एक अच्छी वर्षा होने पर हम अजमेर से कहीं को रवाना हो सकेंगे। क्योंकि उदयपुर मेवाड़ की तरफ भी कुछ हमारे बुलाने का विचार हो रहा है।

---

१. म० मामराज ने मार्च सन् १९२७ में आर्यसमाज फरुखाबाद के पुराने पत्रों में से खोजा था। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।　　२. १२ मई सन् १८८१। यह पत्र अजमेर से भेजा हुआ है।

३. यह पत्रांश पूर्ण संख्या ३५६ में उद्धृत है।

[२] पत्र (२९२) [३५६]

ओम्

सेठ निर्भयराम जी आनन्दित रहो।[१]

यह पत्र आप को आवश्यक समझ कर इसलिए लिखा जाता है कि आप इस को उपसभा में सब लोगों को सुना देवें। मुंशी कालीचरण रामचरण जी के पत्र से विदित हुआ कि आप लोगों की पाठशाला में आर्य्यभाषा संस्कृत का प्रचार बहुत कम और अन्य भाषा अङ्गरेज़ी वा उर्दू फारसी अधिक पढ़ाई जाती है। इससे वह अभीष्ट जिस्के लिए यह शाला खोली गई है सिद्ध होता नहीं दीखता। वरन आपका यह हज़ारहा मुद्रा का व्यय संस्कृत की ओर से निष्फल होता भासता है। हम ने कभी परीक्षा के कागज़ात वा आज तक की पढ़ाई का फल कुछ नहीं देखा। आप लोग देखते हैं कि बहुत काल से आर्य्यावर्त में संस्कृत का अभाव हो रहा है। वरन संस्कृतरूपी मातृभाषा की जगह अङ्गरेज़ी लोगों की मातृभाषा हो चली है। अङ्गरेज़ी का प्रचार तौ जगह २ सम्राट् की ओर से जिनकी यह मातृभाषा है भले प्रकार हो रहा है। अब इस्की वृद्धि में हम तुम को इतनी आवश्यकता नहीं दीखती। और न सम्राट् के समान कुछ कर सकते हैं। हां, हमारी अति प्राचीन मातृभाषा संस्कृत जिस्का सहायक वर्तमान में कोई नहीं है। और यही व्यवस्था देखकर संस्कृत के प्रचारार्थ आप लोगों ने यह पाठशाला स्थापित की है। तौ यह भी उचित कर्तव्य अवश्य है कि सदैव पूर्व इष्ट के सिद्धि पर दृष्टि रक्खी जावै। अब इस के साधनार्थ यह होना चाहिये कि कुल पठन पाठन समय के छः घण्टों में ३ घण्टे संस्कृत, २ घण्टे अङ्गरेज़ी और १ घण्टा उर्दू फारसी पढ़ाई जाया करे। और प्रति मास संस्कृत की परीक्षा अन्य पण्डितों के द्वारा हुआ करे। और वे प्रश्नोत्तरों के कागज़ात हमारे पास भेजे जाया करें। अभी तक कुछ फल संस्कृत में इस शाला से नहीं लगा। सो इस लिये ऊपर जो कुछ लिखा गया उस्को वर्त्ताव में लाओ तो अपने अभीष्ट के सिद्धि होने की आशा कर सक्ते हैं। किमधिकं सुज्ञेषु।

आजकल हम ऐसे देश में हैं जहां पर इस ऋतु के श्रेष्ठ फल अर्थात् आम पके तौ दरकिनार कच्चे भी नहीं मिलते। उस ओर इस्की फसल कैसी हुई है। यदि वहां आम फले हों तौ एक बार मुंबई आम अथवा और प्रकार के जो तुम्हारी समझ में अच्छे हों दो सौ तीन सौ रेल द्वारा प्रबन्ध करके भेजदो। परन्तु वहां से गदर आम रवाने करना जिस्से यहां पर ठीक २ आन पहुंचें। यदि डाक गाड़ी में रख दोगे तौ शायद ठीक रहेगा। हमारे पास जयपुर के मुकाम पर चुरू के सेठों के सरपञ्च का पत्र आया कि आप यहां पधारें। और लिखा है कि सांभर के रेलघर पर रथ, बहल और ऊंट इत्यादि सवारी भेज देवें। अभी तो हमने उनको यही उत्तर लिख दिया है कि एक अच्छी वर्षा होने पर हम अजमेर से कहीं को रवाना हो सकेंगे। क्योंकि उदयपुर मेवाड़ की तरफ भी कुछ हमारे बुलाने का विचार हो रहा है। यदि उदयपुर को गये तौ वह भी आप लोगों को विदित किया जायगा।

---

१. फरुखाबाद आर्यसमाज के पुराने पत्रों में से म० मामराज ने सन् १९२७ में खोजा था। मूल पत्र म० मामराज जी के पास श्रीराम निवास (बिल्डिंग) खतौली मुजफ्फरनगर में सुरक्षित है।

शायद इन दोनों स्थानों को जाने में आप से सवारी लेने की आवश्यकता नहीं दीखती। जब जरूरत होगी आप को लिखा जायगा। पत्र का उत्तर देना। किमधिकम्।

ज्येष्ठ कृष्ण ११ सं० १९३८। ता० २३ मई १८८१ ई०।　　　　हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती (अजमेर)

---

[१६]　　　　पत्र (२९३)　　　　[३५७]

ओ३म्

लाला मूलराज जी एम० ए० आनन्दित रहो[१]।

अर्सा तीन महीने के लगभग व्यतीत हुआ कि हमने आगरे के मुकाम से प्रथम ही गोकरुणानिधि की प्रति आपके पास इस अभिप्राय से भेज दी है कि इस्का बहुत अच्छा तर्जुमा अङ्गरेजी भाषा में कर दीजिये। कि वह जल्द छप कर अङ्गरेज़ राजपुरुषों वा सामान्यों के अवलोकनार्थ विलायत तक भी भेजी जावें। जिस्से इस बड़े धर्म्म कार्य्य में फल प्राप्ति होवै। परन्तु मालूम नहीं अब तक उस्के तर्जुमे में क्यों विलम्ब हुआ। शायद आप भूल गये वा कार्य्य की बहुतायत से यह ढील हुई। ऐसे कार्य्य में आलस्य वा सुस्ती होना अच्छा नहीं। सो अब शीघ्र उक्त काम को पूर्ण करके भेज दीजिये। जयपुर में हम डेढ़ मास तक रहे। यथ[ा] शक्य अच्छा संस्कार वहां पर हमने डाल दिया है। ईश्वर चाहे वृद्धि होकर सफल होगा। अब ता० ६ मई से हम यहां अजमेर में हैं। सेठ फतेमल जी के बाग की कोठी में ठहरे हैं। प्रति दिन रात को दो घण्टे रोज व्याख्यान हो रहा है। हम सब प्रकार यहाँ आनन्द में हैं। आप अपनी कुशलता के समाचार भी दीजिए। किमधिकम् बहुज्ञेषु।

ता० २८ मई सन् १८८१ ई०। मिती ज्येष्ठ सुदी १ सं० १९३८।　　　　द० स०
(अजमेर)

---

[६]　　　　कार्ड (२९४)　　　　[३५८]

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[२]।

आप के लेखानुसार १०० आम काशी से हमारे पास आ गये। हमने तो बम्बे आम फर्रुखाबाद से भेजने को लिखा था। आपने काशी से भेजने का परिश्रम किया। आम बहुत अच्छे निकले। यहां पर तो आमों का बिलकुल अभाव है। **जहां तक बने पाठशाला के उद्देश पर कि संस्कृत की उन्नति होनी सो इस पर अच्छे प्रकार ध्यान रहे।** समाज के कार्य्य प्रेम प्रीती और उत्साह के साथ करते कराते रहें। दस दिन अभी हम यहां रहेंगे। पीछे यहां से चलते समय इत्तिला दी जायगी। मुंशी इन्द्रमणि के मु० का हाल सुन[ा] होगा।

ता० १० जून[३]।

---

१. मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. यह कार्ड हमारे संग्रह में सुरक्षित है। सन् १९२७ में लाखों पत्रों में से खोजकर म० मामराज जी लाये थे।

३. सन् १८८१ (=ज्ये० शु० १३ सं० १९३८) अजमेर से। इस पर हस्ताक्षर नहीं हैं।

[७] पत्र (२९५) [३५९]

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[1]।

आपका कार्ड आया। समाचार विदित हुए। जयपुर में कुछ थोड़ा सा संस्कार हो गया है। और अजमेर में छोटा सा आर्यसमाज नियत हुआ है। ईश्वर करे इसकी वृद्धि हो। हम तारीख २३ जून गुरुवार[2] को यहां से मसूदा को जो अजमेर से १२ वा १३ कोस है जायंगे[3]। क्योंकि वहां के राव साहब ने बड़ी प्रीतिपूर्वक निमन्त्रण किया है। वहां अधिक से अधिक १५ दिन तक रहेंगे। आम भेजें तो गादर वा कुछ कच्चे से भेजिये। जिस्से यहां पर पकते रहें। क्योंकि पहिले आम जो काशी से आये थे थोड़े काल में अकसर विगड़ गये थे। सो अब एक ही वार भेज दीजिये। क्योंकि वार वार तकलीफ होती है। **पाठशाला में संस्कृत का काम ठीक २ होना चाहिये।** जैसे मिशन स्कूलों में लड़के अपने अन्य स्वार्थ सिद्धि के लिये वाईविल सुन लेते हैं और कुछ ध्यान नहीं देते, वैसे जो संस्कृत सुन लिया तो क्या लाभ होगा। **इस पाठशाला में मुख्य संस्कृत जो मातृभाषा है उस्को ही वृद्धि देना चाहिये। वरन फ़ारसी का होना कुछ अवश्य नहीं। केवल संस्कृत और राजभाषा अंगरेजी दो ही का पठन पाठन होना अवश्य है।** सो आधे आधे समय दोनों जारी रहें। और दोनों की परीक्षा भी माहवार बड़ी सावधानी और दृढ़ नियम के साथ हुआ करे। और दोनों ही की अपेक्षा से कक्षा वा नम्बर की वृद्धि विद्यार्थियों की हुआ करे। और हम को सदैव परीक्षा पत्र भेजा करो। विशेष कर संस्कृत के विद्यार्थियों के माहवार पाठन का व्यौरा और किस कक्षा में कौन २ पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं, कितनी २ हुई, यह सब सूचना दिया करो। किमधिकम् विज्ञेषु। विशेष फिर आप को लिखेंगे।

मिति आषाढ वदी ६ सम्वत् १९३८, ता० १७ जून १८८१ ई०।

दयानन्द सरस्वती

(अजमेर)

— —

१. पहले हमने इसे बा० देवेन्द्रनाथ के संग्रह से छापा था। पश्चात् ता० २७ मार्च १९२७ को म० मामराज जी ने मूल पत्र से शुद्ध किया। मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। फरुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ के पृ० २१६ पर भी छपा है।

२. आषाढ़ वदी १२। यु० मी०।

३. आषाढ़ वदी १२ बृहस्पतिवार को ४ बजे दिन के अजमेर स्टेशन से रेल में चढ़ कर नसीराबाद पहुँचे। वहां से रथ पर चढ़ ६ बजे रात्रि को मसूदे जा विराजे। देखो, देशहितैषी, अजमेर, खण्ड १, अङ्क २, ज्येष्ठ संवत् १९३९।

[१] पत्र (२९६) [३६०]

ओ३म्

बाबू छेदीलाल जी आनन्दित रहो।

जो कागज़ात हमने आगरे में बहुत पुरुष जो कि हिसाब के जानने वालों की संमति से निश्चित किया है। "वे उड़दू में तो वहां आपके पास है। और जो उनका नक़ल नागरी हमारे पास थी," वह सब आपके पास भेजते हैं। देख विचार ठीक कर जितने उस पर बाकी निकलें हुक्म लिखिये। उस फैसले में जो जो "उसने" ख्यायानत के अपराध किये हैं वे भी लिख दीजिये। १—एक स्वामीजी से विश्वासघात करना। २—दूसरा हिसाब जैसा मैनेजर को रखना चाहिये वैसा न रखना। ३—तीसरा छापेखाने के स्वामी की आज्ञा के बिना चोरी से अन्य के पुस्तकादि छाप के उसके लाभ का गमन कर जाना। ४—हिसाब देने में झूठे छल "कर" के "अन्यथा" व्यवहार करना। ५—हिसाब "न" देने "के लिये" झूठे हीले "किया" करना। ६—हिसाब देने के विना छापेखाने से चले जाना। ७—छापेखाने से जाते समय अपनी २० गठड़ियों को मास्तर शादीराम को दिखलाये विना "लेकर" चले जाना। इत्यादि जो २ हम ने इन कागजों पर लिखा है उस को विचारिये। ये सब कागज़ात बखतावर के रजष्टर आदि से जांच के लिखे हैं। और इसकी नकल उड़दू में भी आगरे के कागज़ों में थी। उसको आप लोगों ने क्यों न देखके क्यों न फैसला कर दिया होता। अब न मुझ से और न बखतावरसिंह से पूछने की अपेक्षा करनी चाहिये। क्योंकि बख० तो ऐसा ही चाहता है कि यह मामला ऐसे ही घसड़ पचड़ हो के रह जाय। इन बखतावर के कागज़ातों के देखने से निश्चित होता है कि ८०००) रुपयों से कम गमन और हानि बख० ने नहीं की है। आगे जैसा आप लोगों के ध्यान में आवे वैसा कीजिये। मैं यह आप लोगों से कहता हूं कि इस मामले में जैसा आप करेंगे वैसा ही मुझको स्वीकार होगा। जो यह हिसाब लिखा है उस से कुछ कम डिगरी करनी चाहिये। अधिक नहीं। क्योंकि सत्य व्यवस्था होनी चाहिये। जो बख०सिंह के कर्म्म देखे जायं तो जितना उस पर दण्ड करे उतना ही थोड़ा है। परन्तु मुझ को आशा है कि आप लोग सत्य ही न्याय करेंगे। "अब जो हम ने जांच परताल कर उस के कागजात से बाकी रुपैये उस से लेने जिस २ बाब[त] में जितने २ रु० निश्चित किये नीचे लिखते हैं।"

१०६०।) "ये रु० वे हैं कि" जो मासिक हिसाब हमारे पास भेजता था। और बाद इस के शादीराम ने जो मास २ में खर्च किया उन दोनों के मिलाने से जितने उस ने अधिक खर्च किये हैं।

६९७१।।।≈) ये रुपये "वे हैं कि" जितने फर्मे मास्टर शादीराम ने अर्थात् किसी माह में १४ किसी में १५ और किसी में १६ छपवाये और उस बखतावर "सिंह" ने ७ फर्मों से अधिक किसी माह में नहीं छपवाये और काम सरकारी आदमियों से रात दिन लेता था। चोरी से दूसरों के पुस्तक छपवाता था। जैसे कि ला रिपोर्ट, उसके दाम अन्य पुस्तकों के गिने हैं।

३००) ये रुपये "वे हैं जो कि उसने" टैप आदि के जो कि छापेखाने में थे और कम सौंपे। शीशा सर्कारी, फौंडरी, टैप, और ढालने वाले भी सर्कारी थे। और कई एक चीजें वह ले गया। उनका तो पता ही नहीं। तौ भी ऊपर लिखे रु० निकलते हैं।

१४७-) "ये" रुपये "वे है कि" जो उसे सन्ध्यादि पुस्तकें सौंपी थीं और जितनी उस ने दीं "जितनी का खर्च रजष्टर में उसने लिखा है उस से जो" बाकी "रहे उन के दाम इतने" निकलते हैं ।

३५३।।।) "ये" रुपये "वे हैं कि जो" भूमिका के "पुस्तक" उसे सौंपीं थीं उस के जमा खर्च से "बाकी निकलते" हैं।

४४२-) "ये" रुपये "वे हैं कि जो" ऋग्वेद के १२८६ अं-"क उस" को दिये "थे उससे कम दिये अर्थात् जितने उसने रज[ष्ट]र में खर्च में लिखे हैं उस से बाकी के हैं।" और

४९३।।।≡) "ये" रुपये "वे हैं जो कि" यजुर्वेद के १४३७ अंकों के जमा खर्च देखने से उसी पर बाकी निकलते हैं।

सब मिलाकर—

८९६८।।।≡) रुपये होते हैं।

ये सब रुपये उसी के हाथ के कागज़ादों से उसी पर निकलते हैं। वे कागज़ आपके पास "भी" हैं। और जो उसकी नकल हमारे पास नागरी में थी वह हम भेजते हैं। इसको भी आप लोग देख लीजिये। और इस की जाच पड़ताल उन्हीं रजस्टरादि से जो आपके पास हैं कर लीजिये। और उस के मासिक का रजस्टर अंगरेज़ी में है। उसकी नकल भी फारसी में करवा के उस में रखी थी। और सब महीनों की चिट्ठियात भी माहवारी नम्बरवार हमने आगरे में करा के उन्हीं कागज़ों में रक्खी हैं। उसमें भी इस ने "जो" जमा नहीं किया है वह हमने नहीं छांटा। "उन चिट्ठियों को आप लोग वहां जाच कर लीजिये[१]। "इस से उसकी बहुत सी चोरियां पकड़ी जायंगी। आगे जो आपने थियोसोफीष्ट भेजा नोटिस देखने के लिये, सो देखा। क्या किया जाय जिनके लिये उपकार करते हैं, वे ही उलटे विरोध ही करते जाते हैं। अच्छा जो दुष्ट दुष्टता को नहीं छोडते तो श्रेष्ठ श्रेष्ठता को क्यों छोड़ें। ये का[ग]जात आप के पास इस लिये भेजे हैं कि लाला रामशरणदास जी नागरी नहीं पढ़े हैं। इनको आप देख के उन को समझा दीजिये। और सबसे मेरा आशीर्वा[द] कहियेगा। यहां वर्षा बहुत हुई है। प्रतिदिन यहां राज महल में व्याख्यान होते हैं। राजा आदि सब लोग अति प्रीति से सुनते हैं। अब जैसे बने वैसे यह मामला शीघ्र कर दीजिये। किमधिकेन व्यवहारज्ञेषु।

मि० श्रा० व० ९ मंगलवार[२]। [दयानन्द सरस्वती]

(मसूदा) जिले अजमेर।[३]

———

इसका उत्तर शीघ्र भेजियेगा।"[४]

---

१. यहां से लेकर अन्त तक श्री स्वामी जी के अपने हाथ का लिखा हुआ है। इस पत्र को अनेक स्थलों पर श्री स्वा० जी महाराज ने स्वहस्त से शोधा है। कई स्थानों पर नयी पंक्तियां भी लिखी है। उलटे (इनवर्टिड) कामों के अन्तर्गत सब लेख श्री स्वामी जी के हाथ का लिखा हुआ है।

२. १६ जुलाई १८८१। यद्यपि पत्र पर संवत् नहीं लिखा गया, तथापि प्रकरण से और मसूदा से लिखे जाने से इसी तिथि [अर्थात् सं० १९३८] का है।

३. यह पत्र उन २ नम्बर वाली चिट्ठियों तथा हिसाब आदि के लम्बे पत्रों सहित भेजा गया था। अक्टूबर सन १९२६ में मा० मामराज जी मेरठ से लाये थे। मूलपत्रादि हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४. इस पत्र से सम्बद्ध हिसाब का पूर्ण विवरण आगे पृष्ठ २९५ से २९८ पर देखें।

[१] [हिसाब के कागज़ात] [३६१]

हिसाब कलकत्ते का जो बखतावरसिंह ने किया[१]।

७५) हवाले जादोनाथ पेशगी वास्ते खरीद करने १ मन डबल ग्रेट। १ मन २८ सेर डबल पीका नागरी। २॥ मन सीसा। १५ सेर काइटेशन। साढ़े बारह सेर काडरेस्त। ता० रसीद ३० दिस० स० ७९।

---

५०) रसीद तारीख ३० दिस० १८७९

८००।=)॥। रसीद नम्बरी ६०२ पार्कर को० ता० ३ जनवरी १८८० कलकत्ता बाबत खरीद

रायल प्रेस	१	६००)
,, प्रोच सॅट	२	४॥) दर २।)
उमद[ा]बारीक कम्बल	१	३।)
कम्बल मोटा	१	४॥)
रायल रूलर फ्रेम	१	६॥।)
जाब	१	२॥)
रब कटर	१	
	१३२	९९)
	,,	१८।=)॥।
	,,	२३।)
खर्च बंधवाई		२०)

---

७०) हवाले बिहारी लाल दत्त पेशगी बाबत खरी[द] ३ मन ग्रेट प्राईमर दर ४०) मन। ता० १ जन० १८८०

२९०।)। बाबत कीमत कागज दो गठे २०×२४ पौंड कीमत २९२≡), डिलेवरी चार्ज १) कुल २९३≡) कमीशन २॥।=)॥। बाकी २९०।) ता० ३ जन० १८८०

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण १]

"यह भी रसीदें कलकत्ते की हैं। इन से भी प्रेस की चीजों का भाव आगम और खर्च विदित हो जायगा।"

२९।) बाबत रूलर मोल्ड केशसेत जान डि० कं० ता० ५ जन १८८०।

---

१. लाला छेदीलाल जी को लिखे पूर्वमुद्रित पत्र के साथ इस हिसाब का सम्बन्ध है। इस पर भी स्वामी जी ने स्वहस्त से छः टिप्पण दिये हैं।

५०।।।=) ४ रसीद जा० डि० कं० ३ जन० १८८०

२ ब्रास रूलर	६
१ तथा	२।।)।।
१ तथा वार्निश	२।।)।।
१० टिन काली स्याही नं० ३	१७।।) दर १।।।)
१० तथा	५) दर ।।)
५ इङ्गलिश बोर्डर नं० ५०	७।) ४ दर १।≡)
बोर्डर नं० ६३	६।=)।। दर १।।−)४
१ चेक नं० ११६५	१।।≡)।।
बन्धवाई आदि	२)

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण २]

"यह लेख इस लिये है कि प्रेस की हर एक चीज का भाव विदित हो सके । इससे कितनी चीजें छापेखाने में उस ने सोंपीं और कितनी उड़ा ले गया ।"

१४१।−) रसीद पोस्ट आफिस नं० १६८ ता० ९ अक्टूबर १८८० अधरचन्द्र टाइप फौंडर

१२५) टाइप फौंडर जान डिकिशन से दिलाए १० सि० १८८०

१६३१।।।≡) ४ मीजान

जो बखतावरसिंह ने कलकत्ते भेजा प्रथम स्वामी जी से लेकर १५०—०

दूसरे तथा १४८

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ३]

"इतने रुपैयों को मुझ से लेके कलकत्ते में खर्च किया बख० ने । इस से अधिक जितने कल[1] कलकत्ते में भेजे वे अभयराम चुन्नीलाल की दूकान से भेजे थे । उसने इन रुपैयों में से बहुत सी सामग्री अपने छापेखाने की है ।"

रुपया जो कि बखतावरसिंह ने कलकत्ते भेजा ।

२९ जनवरी १८८० को स्वामी जी से लेकर	३२७)
२ फरवरी १८८० को तथा	१५००)
माघ ब० ४ सं० १९३६ तथा	२९३)
	२१२०)
अप्रेल मास में उसके रजिस्टर के अनुसार	४०)
मई	१००)
जून	२००)

१. दो बार लिखा गया है ।

अगस्त	२५५१)
सितं०	५४६।-)
	११३७॥-)
कुल मीजान	३२५७॥-)

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ४]

यह वह हिसाब है कि उस ने कलकत्ते में कितने रुपैये भेजे । इन से क्या २ चीजें आईं । इनमें कि[तनी] वर्तमान हैं । कितनी खर्च हुई । और कितनी उसने छापेखाने सोंपी । जो सोंपी वे कितने दाम की हैं । कौन चीज खर्च हुई । और कितनी उसने गमन की । इसका निश्चय आप लोग करें उस से कि जो उस ने मास्तर शादीराम को उस ने जाती बखत सोंपी । उनका मूल्य का निश्चय रसीदों से कीजिये कि कौन चीज कितने मूल्य की है ।"

वहां पर ३२५७॥-) भेजा और रसीदें १६६१॥।≡) ४ की मौजूद हैं ।

और ६७७॥≈)॥। के बिल हैं ;

बिलों की रसीदें नहीं । रसीदों के बिल नहीं ।

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ५]

"इस से यह ठीक आपको विदि[त] हो जायगा कि उस ने कलकते के हिसाब में कितने रुपैये उड़ाये लिये हैं और बिल के रुपैयों की पहुंच की रसीद न होने और रसीदों के बिल न होने से जालसाजी उसकी विदित हो जायगी । और उस[की] चिट्ठियों से निश्चित है कि कलकते का हिसाब चूकता कर दिया, तो बिल का होना और रसीदों का न होना सिवाय चोरी के क्या कह सकते हैं ।"

बिल जो कि बखतावरसिंह ने किताब में चसपां किया और उनकी रसीद नहीं है ॥

१३२) बिल जान डिकि० कम्पनी तारीख २६ मई १८८०
१ बंडल कागज २० पौंड कीमत १३२॥-) डिलेवरी चार्ज ॥) कुल १३३।-) कमीशन १।-) बाकी १३२)

---

१३२) बिल जा० डि० कं० ता० ९ अग० १८८०
१ बंडल कागज कीमती १३२॥-) डिलेवरी चार्ज ॥) कुल १३३।-) कमीशन १।-) बाकी १३२)

१२६॥≡)॥। बिल जा० डि० कं० २६ जन० १८८०
१ बंडल कागज १० रिम वजनी ४८० पौंड कीमत १२७॥) मिनहा बाबत डिसकोंट १।)।
बाकी १२६≡)॥। जमा किया डिलेवरी चार्ज १॥) कुल १२६॥≡)॥।

२५३।≡)। बिल जा० डि० कं० ६ सित० १८८०, २ बंडल २० रिम वजनी ९६० पौंड दर ।)। फी पौंड कीमत २५५)
डिसकोंट २॥)॥। बाकी २५२।≡)। डि० चार्ज १) कुल २५३।≡)।

३॥) बिल बाबू ब्रजभूषणदास कम्पनी २॥) कीमत संहिता यजुः १) कीमत सर्वदर्शनसंग्रह १८ अक्ट० १८८० ।

[इस पर श्री स्वामी जी के स्वहस्त का लिखा टिप्पण ६]

"ये रसीदें (दों) का तर्जमा है । इन रसीदों में से कई एक रसीदें फाड़ भी ली है । और कितनी एक रसीदें चिपकाई भी नहीं । हिसाब कोई न कर सके इस लिये यह काम उस ने किया ।"

---

[२] पत्रांश (२९७) [३६२]

भाई जवाहरसिंह [मन्त्री आर्यसमाज, लाहौर[१]] ।

लेडी ब्लेवेटस्की के पत्र का उत्तर हमने दे दिया है । उसमें विशेष बात यही है कि हम उपदेश से तुम्हारी यथाशक्ति सहायता करते रहेंगे । और तुम्हारी सोसायटी के सभासद हैं ।

२२ जुलाई ८१[२]

---

[१] पत्रांश (२९८) [३६३]

[पं० मुन्नालाल मन्त्री आ० स० अजमेर]

१८ ता० अगस्त[३] को रायपुर [ब्यावर के निकट] जायेंगे[४] ।

---

[१] पत्र (२९९) [३६४]

मेरठ आर्य्यसमाज मन्त्री आनन्दीलाल जी आनन्दित रहो[५] ।

पत्र तुम्हारा आया समाचार विदित हुए । बड़े शोक की बात है कि बखतावरसिंह के मामला के कागजातों की सफाई कब करोगे । जो करना हो तो जैसा तुम लोगों को मालूम हो वैसा शीघ्र कर डालो । उस कागजात के बिना छापेखाने में भी बहुत हर्कत हैं[६] ।

छः सात महीने तो हो चुके फिर कब इस झगड़े को निपटाओगे । और जो के रूपसिंह डाक्तर सिमले ने रुपैये भेजे थे वे रजिष्टर में जमा कर लिये हैं वा नहीं । थियोसोफिष्ट में जो नोटिस

---

१. पं लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८४० में उद्धृत ।

२. श्रावण कृष्ण १२ शुक्र सं० १९३८ । यु० मी० ।

३. भाद्र कृष्ण ६, बृहस्पति सं० १९३८ । यु० मी० ।

४. मुन्नालाल को यह पत्र १७ अगस्त१८८१ को [भाद्र कृ० ८ बुध] मिला । संभवतः १५ या १६ [भाद्र कृ० ५ या ७ सं० १९३८] को मसूदा से लिखा गया होगा । देशहितैषी के रजिष्टर से लिया गया ।

५. म० मामराज जी ने २३ जुलाई सन् १९४५ को ला० रामशरणदास रईस मेरठ वालों के पुराने सहस्रों पत्रों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण तथा ला० श्यामलाल जी प्रधान आर्यसमाज के साथ खोजा । मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

६. कागजात के लिए देखो पूर्ण संख्या ३६१ (पृष्ठ २९५–२९८) देखें । यु० मी० ।

चतुर्भुज का छपा है। सो बुरा है। हम उस का प्रत्युत्तर छपवाना नहीं चाहते, क्योंकि वह अयोग्य और अविद्वान है। परन्तु जो तुम्हारी समझ में आवे सो तुम उसका उत्तर छपवादो। पंडित भीमसेन वहां आर्यसमाज में रखने योग्य नहीं है॥ सबसे हमारा नमस्ते कह देना। आजकल हम जिला अजमेर नयानगर अजमेरी दरवाजे तार बङ्गले में निवास करते हैं॥

आश्विन वदी ४ रविवार[1]।

[दयानन्द सरस्वती]

और थियोसोफिष्ट में जो हमारे वेदभाष्य का नोटिस छपता है उस के अन्त में शादीराम का नाम लिखा जाता है। सो अब दयाराम मेनेजर प्रयाग लिखना चाहिये। सो तुम मुम्बई थियोसोफिष्ट को लिख देना।

---

[१]　　　　　　पत्र (३००)　　　　　　[३६५]

प्रशंसा-पत्र

श्रीमन् श्रेष्ठोपमायोग्य आर्य्यसमाजस्थ प्रधान और मन्त्री आदि सभासद आनन्दित रहो—

विदित हो कि श्रीयुत द्विवेदी श्रीमाली राज मसुदा के मुख मन्त्री श्रीमान् छगनलाल जी को यह पत्र लिखके दिया जाता है इसलिए कि उक्त जन जिस किसी आर्य्यसमाज में उपस्थित होवें, तो इनका सत्कार स्वात्मवत् प्रिय बंधुवत् करना उचित है, क्योंकि ये भी वेदोक्त धर्म्माचारी और आर्य्यसमाज अजमेर के सभासद हैं और इन को संवत् १९२३ के वर्ष से जानते हैं। यह सज्जन पुरुष हैं, उस समय अजमेर में एक साहूकार के यहां इनके पिता जी मुनीम थे, तथा अपने घर और अन्यत्र भी प्रतिष्ठित थे। और ये आचार विचार तथा शास्त्र विषयों में भी समझते हैं, चाल चलन भी इनका श्रेष्ठ है, और परोपकारी धार्मिक विश्वासनीय हैं, हमने बहुत प्रजास्थ पुरुषों से परोक्ष में पूछा तो उनने कहा कि ऐसा कामदार हमने आगे कभी न देखा था। सब प्रजा इनसे प्रसन्न है। इस से हमने जाना यह इस समय भी धार्मिक जन है।

मि० आ० शु० ११[2] सोमवार संवत् १९३८।

दयानन्द सरस्वती　　　　　　मसुदा मुहर-मुहर-मुहर

---

[२]　　　　　　पत्रांश (३०१)　　　　　　[३६६]

[समाचार पत्र देशहितैषी अर्थात् पं० मुन्नालाल मन्त्री आर्यसमाज अजमेर को][3]

---

१. संवत् १६३८। ११ सितम्बर १८८१ नयानगर (ब्यावर) से मेरठ को भेजा गया।

२ आषाढ़ शु० ११ को बृहस्पतिवार है, सोमवार नहीं है। आश्विन सु० १०, ११ सम्मिलित है उस दिन सोमवार है। ३ अक्तूबर १८८१।

३. देशहितैषी के रजिस्टर से। इस के पश्चात् का मुन्नालाल जी का पत्र नं० (२६) दो पैसे वाला लिफाफा "श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज नमस्ते। आपके पास यह थियोसोफिस्ट भेजता हूँ। अपने दिवाली का उत्सव अब के पत्र द्वारा निवेदन करूंगा।" उसी रजिस्टर से, मुन्नालाल २४-१०-८१

बनेड़े के ग्राम भीलवाड़े में हमारी डाक भेजा करो।

१५ अक्टूबर ८१[१]

---

[१] पत्रांश (३०२) [३६७]

कविराज श्यामलदास[२]।

हमने चितौड़गढ़ २७ अक्तूबर[३] को पहुंचना है। आप स्थानादि का प्रबन्ध कर रखना, ताकि कष्ट न हो।

---

[१] पत्र (३०३) [३६८]

[दयाराम प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय]

[४]जो कोई नोट वा विज्ञापन शास्त्रार्थ खण्डन मण्डन और धर्माधर्म विषयों का ज्ञापक हो वह हम को दिखलाये विना कभी न छापना चाहिये। यह[५] मेरे पास भेजा सो बहुत अच्छा किया। जो दिखलाये विना छाप देते तो हम को इस के समाधान में बहुत श्रम करना पड़ता। भीमसेन जो व्याकरणादि शास्त्रों को पढ़ा है उतना ही उस का पांडित्य है, अन्यत्र यह बालक है। इस को इस बात की खबर भी नहीं है कि इस लेख से क्या २ कहां विरोध होकर क्या २ विपरीत परिणाम होंगे। इस लिये यह नोट जैसा शोध[६] के भेजा है वैसा ही छपवाना। किमधिक लेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु[७]।

---

१. कार्तिक कृ० ८ शनि सं० १९३८। यु० मी०।

२. पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ५५२ पर उद्धृत। २०—२५ अक्तूबर १८८१ के मध्य किसी दिन यह लिखा गया होगा।

३. कार्तिक शु० ५ गुरु० सं० १९३९। यु० मी०।

४. यह लेख स्वामी जी महाराज ने स्त्रैणताद्धित के 'जीविकार्थे चापण्ये' (५।३।९९) सूत्र की टिप्पणी के प्रूफ पर लिखा था। देखो मुंशीराम जी सम्पा० ऋ० द० का पत्र व्यवहार पृष्ठ ५३। यु० मी०।

५. 'यह' पद से निर्दिष्ट स्त्रैणताद्धित का वह नोट है जो भीमसेन ने लिखा था और दयाराम मैनेजर वैदिक यन्त्रालय ने स्वामी जी को देखने को भेजा था, उसे हम ने स्वामी जी के शोधे हुए नोट के नीचे छापा है। यु० मी०।

६. यह शोधा हुआ नोट आगे पूर्ण संख्या ३६९ पर छापा है। यु० मी०।

७. इस पर कोई तिथि नहीं है। स्त्रैणताद्धित का लेखन मार्गशीर्ष शुक्ल ६ सं० १९३८ (२६ नवम्बर १८८१) को समाप्त हुआ था और मुद्रण ३ दिन बाद ही समाप्त हो गया था (देखो ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास पृष्ठ १९३, १९४) अतः यह लेख मार्गशीर्ष के प्रारम्भ में लिखा गया होगा। यु० मी०।

(१)　　　　[टिप्पणी]　　　　[३६९]

*जीविका शब्द अर्थ मुख्य करके जीवनोपाय करना है। इस प्रकरण में सिवाय प्रतिकृति और मनुष्य के दूसरे की अनुवृत्ति नहीं आती। यहां प्रयोजन यह है कि जिन स्त्री पुत्र आदि सम्बन्धी वा मित्रादिकों के साथ अत्यन्त प्रेम होता है उन के वियोग में उनकी प्रतिकृति देखते और गुण कर्म तथा उपकार आदि का स्मरण करते हुए अपने चित्त में सन्तोष करते हैं। परन्तु इस प्रकरण में यह बात विचारना चाहिये कि संसार में जितने दृश्य पदार्थ हैं उन सब की प्रतिकृति होती है वा नहीं। बहुतेरे घोड़े हाथी आदि जीवों की अतिदर्शनीय मृन्मयादि की प्रतिकृतियां बना २ कर बेंचते हैं वे जीविकार्थ पण्य होते हैं। और बहुतेरे द्वीप द्वीपान्तर देश देशान्तरों में पति स्त्री पुत्रादि की प्रतिकृतियां रखते हैं परन्तु परमार्थ के साथ इस विषय का कुछ सम्बन्ध नहीं। इस सूत्र से बहुतेरे वैयाकरणों का यह अभिप्राय है कि जीविका के लिये जो पदार्थ हो और वह बेंचा न जावे तो उस अर्थ में कन प्रत्यय का लुप् हो जावे। और (लुम्मनुष्ये) इस सूत्र से मनुष्य शब्द का भी सम्बन्ध न करके ब्रह्मा आदि देवताओं की मूर्त्तियां जो कि मन्दिरों में बना २ कर रखते हैं। उन से जीविका (धनका आगमन) तो है परन्तु वे प्रतिमा बेंचने के लिये नहीं हैं, इसलिये उन्हीं का ग्रहण होना चाहिये। और इस सूत्र में महाभाष्यकार ने भी लिखा है कि जो धनार्थी लोग शिव आदि की प्रतिमा

---

* यह स्त्रैणताद्धित के "जीविकार्थे चापण्ये" सूत्र का श्री स्वामी जी महाराज द्वारा संशोधित नोट (टिप्पणी) है। स्त्रैणताद्धित में यह टिप्पणी कुछ रूपान्तर से छपी है, वह रूपान्तर किस ने किया है यह अज्ञात है। देखो मुंशीराम जी सम्पा० ऋ० द० पत्र व्यवहार पृष्ठ ५४ की टिप्पणी।

पं० भीमसेन ने जो टिप्पणी लिखकर छपवानी चाही थी और जिसे प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय ने स्वामी जी महाराज के पास देखने को भेजी थी वह इस प्रकार है—

"जीविका शब्द का अर्थ मुख्य करके किसी प्रकार का उपकार होना है। प्रतिकृति। प्रतिच्छाया प्रतिबिम्ब। प्रतिरूपक। प्रतिछन्दक। प्रतिमा। इत्यादि शब्द पर्य्यायवाची हैं। और अन्य देशीय भाषाओं में (तस्वीर) (फोटोग्राफ) भी कहते हैं। प्रयोजन यह है कि जिन स्त्री पुत्र आदि सम्बन्धी वा मित्रादिकों के साथ अत्यन्त प्रेम होता है उन के वियोग में उन के प्रतिबिम्ब देखते और गुण कर्म तथा उपकार आदि का स्मरण करते हुए अपने चित्त में सन्तोष करते हैं और इस प्रकरण में यह बात विचारना चाहिये कि संसार में जितने दृश्य पदार्थ हैं उन सब के प्रतिबिम्ब होते हैं बहुतेरे घोड़े हाथी आदि जीवों की अतिदर्शनीय मृन्मय आकृति बना २ कर बेंचते हैं वे जीविकार्थ पण्य होते हैं। और बहुतेरे द्वीप द्वीपान्तर देश देशान्तरों तथा स्थान विशेष कि जो अतिदर्शनीय हैं उन के प्रतिबिम्ब मकान आदि में यंत्रित करा रखते हैं। उन के यथार्थ स्वरूप देखने में धनादि पदार्थों का अति गौरव होता है इस लिये उन के प्रतिबिम्बों को देख समझ के प्रसन्नता हो जाती है। और उन प्रतिबिम्बों में यथार्थ स्वरूपों का सा व्यवहार भी करते हैं। और इस प्रतिबिम्ब विद्या से संसार के बहुत कार्य सिद्ध होते हैं परन्तु परमार्थ के साथ इस विषय का कुछ सम्बन्ध नहीं। इस सूत्र से बहुतेरे वैयाकरणों का यह अभिप्राय है कि जीविका के लिये जो पदार्थ हो और वह बेंचा न जावे तो उस अर्थ में कन् प्रत्यय का लुप् हो जावे। और (लुम्मनुष्ये) इस सूत्र से मनुष्य शब्द का भी सम्बन्ध यहां नहीं करते। सो ब्रह्मा आदि देवताओं की प्रतिमा जो कि मन्दिरों में बना २ कर रखते हैं। उन से जीविका (धन का आगमन) तो है परन्तु वे प्रतिमा बेंचने के लिये नहीं हैं, इस लिये उन्हीं का ग्रहण होना चाहिये। और इस सूत्र में महाभाष्यकार ने भी

बना कर बेंचते हैं वहां लुप् नहीं पावेगा। क्योंकि सूत्रकार ने अपण्य शब्द पढ़ा है कि जो बेंचने के लिये न हो। सो ठीक नहीं, क्योंकि यहां प्रतिकृति और मनुष्य शब्द हीं की अनुवृत्ति है अन्य की नहीं। देवता शब्द भी जहां चेतन व्यक्तियों के साथ सम्बद्ध होता है वहां मनुष्यों ही की संज्ञा होती है और वैदिक शब्द सब यौगिक ही हैं देवता शब्द भी वैदिक है। जो इस सूत्र में मनुष्य शब्द की अनुवृत्ति जयादित्य आदि लोगों ने नहीं की, यह उनको भ्रम है, क्योंकि वे लोग देवता शब्द को मनुष्य से व्यतिरिक्तार्थ-वाची समझते हैं परन्तु सामान्य ग्रहण होने से जो २ प्रतिकृति जीविका के लिये हो और बेंची न जावें तो उस २ सब के अभिधेय में प्रत्यय का लुप् होना चाहिये। और जहाँ कोई मनुष्य प्रतिकृतियों को दिखा वा बेंच के अपनी जीविका करता है वहां लुप् न होना चाहिए। और पूजा का अर्थ भी आदर सत्कार ही होता है सो चेतन के होने चाहिये। फिर महाभाष्यकार ने जो लिखा है कि जो इस समय पूजा के लिये है वहां लुप् होगा इस का भी यही अभिप्राय है कि जो मनुष्य की प्रतिकृति

लिखा है कि जो धनार्थी लोग शिव आदि की प्रतिमा बना कर बेंचते हैं वहां लुप् नहीं पावेगा। क्योंकि सूत्रकार ने अपण्य शब्द पढ़ा है कि जो बेंचने के लिये न हो। अस्तु वहां लुप् न हो (शिवकः) ऐसा ही प्रयोग रहे। परन्तु जो वर्तमान काल में पूजा के लिये ही हैं वहां तो लुप् हो ही जावेगा। इस महाभाष्य से भी उन्हीं देवतों की प्रतिमा सिद्ध करते हैं। इस विषय में हम लोगों का भी यह अभिप्राय नहीं है कि ब्रह्मा आदि देवता नहीं हुए और उन की प्रतिमा रखने और देखने में अधर्म्म होता है। किन्तु उन प्रतिमाओं की यथार्थ स्वरूप के समान सत्कार पूजा धूप दीप आदि से करते हैं और पूजा तथा दर्शनादि से परमार्थ सिद्धि और मुक्ति समझते हैं सो ठीक नहीं, क्योंकि श्रुति और स्मृति दोनों से यह विपरीत है कि जो विद्या और आत्मज्ञान के विना मुक्ति हो सके। हां, उन प्रतिमाओं को देख के उन लोगों के गुण कर्मों का स्मरण करके आप भी वैसे ही गुण कर्मों को धारण करें कि जिस से उत्तम कहावें। देवता शब्द भी जहां चेतन व्यक्तियों के साथ सम्बद्ध होता है वहाँ मनुष्यों की ही संज्ञा होती है और वैदिक शब्द सब यौगिक ही हैं देवता शब्द भी वैदिक है। इस सूत्र में मनुष्य शब्द की अनुवृत्ति जयादित्य आदि लोगों ने नहीं की। वे लोग देवता शब्द को मनुष्य से व्यतिरिक्त समझते हैं परन्तु सामान्य ग्रहण होने से जो २ प्रतिमा जीविका के लिये हो और बेची न जावें तो उस २ सब के अभिधेय में प्रत्यय का लुप् होना चाहिये। हस्तिकान् दर्शयति। कोई मनुष्य प्रतिबिम्बों को दिखाता फिरता अपनी जीविका करता है। बहुतेरे लोग प्रतिबिम्बों को दिखा कर ही जीविका करते हैं। वहां भी लुप् होना चाहिये यह दोष जयादित्य आदि लोगों के अभिप्राय में मनुष्य शब्द की अनुवृत्ति न करने से आता है। और पूजा का अर्थ भी आदर सत्कार ही होता है सो चेतन के होने चाहिये। फिर महाभाष्यकार ने जो लिखा है कि जो इस समय पूजा के लिये है वहाँ लुप् होगा, इसका भी यही अभिप्राय है कि जो मनुष्य की यथार्थ प्रतिकृति पूजा के लिये हैं उनसे प्रत्यय करने में तो लुप् हो जावेगा। क्योंकि अच्छे पुरुषों की जो प्रतिकृति हैं उनके बेचने में सज्जन लोग बुराई समझते हैं। उन प्रिय जनों की प्रतिमाओं को रखते और उन को देख कर संतुष्ट होते हैं। राम कृष्ण आदि भी इस संसार में एक अपूर्व पुरुष हुये हैं उन की भी यथार्थ स्वरूप की बोधक प्रतिमा कोई पुरुष राखे और उन के गुण कर्मों का स्मरण करके अपने आचरण सुधारे तो कुछ बुराई नहीं, परन्तु उन प्रतिमाओं से परमार्थ सिद्धि समझना ही अच्छा नहीं है। पाणिनि आदि ऋषि लोगों का अभिप्राय भी वेदों से विरुद्ध कभी नहीं हो सकता, इस प्रकरण को पक्षपात छोड़े वेदानुकूल सब लोग विचारें ॥"

यह टिप्पणी म० मुंशीराम जी द्वारा सम्पादित पत्र व्यवहार में पृष्ठ ५०—५३ तक छपी है।

पूजा सत्कार केलिये है उससे प्रत्यय करने में तो लुप् हो जावेगा। क्योंकि अच्छे पुरुषों की जो प्रतिकृति है उसके बेंचने में सज्जन लोग बुराई समझते हैं। **विश्वे देवा स आगत शृणुतेम ॐ हवम् ।** यह यजुर्वेद का प्रमाण है। **विद्वांॐसो हि देवाः ।** यह शतपथ ब्राह्मण का वचन है। **मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव,** यह तैत्तिरीय आरण्यक का वाक्य है। इत्यादि सब प्रमाण वचनों से विद्वद्व्यक्ति आदि का ग्रहण देव शब्द से होता है इस लिये पाणिनि आदि ऋषि लोगों का अभिप्राय भी वेदों से विरुद्ध कभी न होना चाहिये। इस प्रकरण को पक्षपात छोड़ वेदानुकूलता से सब लोग विचारें[1] ॥

---

[२] **कार्ड (३०४)** [३७०]

ता० २ नवम्बर सन् १८८१[2]
चित्तौड़ राज मेवाड़

[महाशय रूपसिंह जी के नाम[3]]।

महाशय श्रीमत् महाराज स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी यहां सुशोभित हैं। और आप का गुजरांवाले का कार्ड पहुंचा। यह आपको कुशल समाचार का पत्र भेजता हूं और आप भी अपने आनन्द मंगल का समाचार सदा भेजते रहना, जिससे आनन्द होय।

रामानन्द ब्रह्मचारी[4]

---

[१७] **पत्र (३०५)** [३७१]

११ नवम्बर सन ८१ ई०[5]
गढ़ चितोड़ राज मेवाड़

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो[6] ।

पत्र आपका पहुंचा। समाचार विदित हुआ। परंतु यहां हमारे पास कोई इंगलिश का विद्वान नहीं है। इस वास्ते यहां भाषान्तर होना असम्भव है और जब आप इतना भी पुरुषार्थ नहीं कर

---

१. यह ऋषि द्वारा संशोधित टिप्पणी म० मुन्शीरामजी द्वारा सम्पादित पत्रव्यवहार में पृष्ठ ५४—५६ तक छपी है।

२. कार्तिक शुक्ल ११ बुध, सं० १९३८। यु० मी०

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। बा० रूपसिंह जी ने सन् १९१६-१७ में यह पत्र स्वयं लाहौर में दिया था।

४. रामानन्द ब्रह्मचारी श्री स्वामी जी का लेखक था। उसने उन की ओर से ही यह तथा अगले कई पत्र अपने हस्ताक्षरों से लिखे हैं।

५. मार्गशीर्ष कृष्ण ५ शुक्र सं० १९३८। यु० मी०।

६. मूल पत्र हमारे संग्रह मे सुरक्षित है।

सकते तब आर्य्य समाज की उन्नति किस प्रकार होगी। हम चाहते थे कि किसी प्रकार आप ही इस गोकरुणानिधि पुस्तक को अंग्रेजी में करें तो बहुत ठीक होता और शीघ्र ही हो जाता, परन्तु अभी तक आप को अवकाश नहीं मिला है। किन्तु देश उन्नति के वास्ते थोड़ा अवकाश निकालना चाहिये। जब आप लोग कुछ नहीं करेंगे तब हम अकेले क्या कर सकेंगे। जो किसी प्रकार आप से तरजमा न हो सके तो हमारे पास भेज दो। जब हम मुंबई जावेंगे वहां इंगलिश के विद्वान् मिलेंगे तब अंगरेजी में करा लेवेंगे जैसा बना हो यहां भेज दो। "अब हमारा विचार मुंबई में जाने का है; क्योंकि वहां के समाज ने १५०) रुपये भी रेल के खर्च के लिये जबर्दस्ती भेज दिये है।" यहां से जब गवर्नर जनरल साहिब दर्बार करके चले जावेंगे तब हम भी मुंबई की तरफ रवाना होवेंगे। "जब वहां आने का समय आवेगा तबी आना होगा। क्योंकि काम बड़ा और काम के करने वाले और समय भी थोड़ा। आप लोगों को चाहिये कि जिस २ देश में आप लोग हैं वहां वहां का काम सम्भाल लेवें, तभी उन्नति का बाग बढ़ेगा।

मि० मार्ग० व० ६ शनि सं० १९३८[1]।" दयानन्द सरस्वती

---

[१८] पत्र (३०६) [३७२]

९ डिसम्बर सन् ८१ ई०[2]
चितौड़गढ़ राज मेवाड़।

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो[3]।

आपका पत्र आया। समाचार विदित हुआ। आपने जो गोकरुणानिधि पुस्तक को इंगलिश में भाषान्तर कर देना स्वीकार किया उससे बहुत आनन्द हुआ। क्योंकि अंगरेजी भाषा होने से अन्य देश वालों को भी लाभ पहुँचेगा। यह तो सच है कि स्वकृत से परकृत निर्बल होता है। तथापि विदेशी भी बहुधा ऐसे हैं कि जैसी इंगलिश भाषा जानते हैं वैसी अन्य भाषा नहीं जानते। और यहां के यूरोपियन अस्वीकार करेंगे तो क्या, किन्तु यूरोप देशस्थ जब इस पुस्तक को देखेंगे तो अनुमान है कि उन में से भी कई एक सहायक हों। और आप ने जो स्वजाति विषय में लिखा इस वास्ते अपनी स्वजाति का इतिहास जो परम्परा से चला आता है उसकी थोड़ी सी सूचना लिख भेजें। तब हम अच्छी प्रकार लिख भेजें। और पंजाब में जो हमने थोड़ा सा इतिहास सुना था वह भी विस्मरण हो गया है। इस में विलंब न करना चाहिये। पत्र का उत्तर मुकाम इन्दौर राज ह[ो]

---

१. १२ नवम्बर सन् १८८१। ११ नवम्बर को पत्र लेखक ने लिखा। उस दिन समाप्त नहीं किया गया। १२ को श्री स्वामी जी ने अपने हाथ से अन्तिम पंक्तियां लिख कर पत्र समाप्त किया। " " कामों के अन्दर का लेख श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है।

२. पौष कृष्ण ४ सं० १९३८। यु० मी।

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

लकर, बाबू बालाप्रसाद सपरडंट रेलवे पोलिस के नाम से अथवा मुंबई नल बाजार शबिलदास लल्लु भाई के मकान के पास सेवकलाल कृष्णदास [के] नाम से भेजना[१]।　　　　(दयानन्द सरस्वती)

———

[२]　　　　पत्र (३०७)　　　　[३७३]

॥ श्रोम् ॥

सर्दार रूपसिंह जी आनन्दित रहो[२]।

विदत हो कि पत्र आप का सन १८८१ ई० ६ छः डिसंबर का लिखा हुआ ता० १२ डिसंबर को यहां पहुंचा। पत्रस्थ समाचार विदित हुए। यहां श्री स्वामी जी महाराज की सत्कारपूर्वक श्रीमान्महाराणा उदयपुर जी ने सेवा की। और यहां के दरबार में जितने राजा महाराजा आये वे सब श्री स्वामी जी महाराज के सत्योपदेश को सुन कर बहुत प्रसन्न हुए। और एक दिन महाराणा उदयपुर भी आये थे। कोई तीन वा चार घंटे तक स्वामीजी महाराज जी का सत्संग किया और राजधर्म वा पारमार्थिक विषय में जितनी बातें महाराज जी ने उपदेश कीं वे सब बातें राजा जी के ध्यान में जम गईं। और यह माड़वाड़ वा मेवा[ड़] देश में व्याख्यान को कोई समझता ही नहीं। जितने लोग पूर्वपक्षी आये उन सब को स्वामी जी ने यथा तथा उत्तर देकर उन्हों को शंका रूपी दुःख सागर से छुड़ा दिया। अब यहां से श्रीस्वामीजी महाराज कल १४ चौदह डिसंबर के मध्याह्नोत्तर के ४ बजे रेल में सवार हो कर १६ डिसम्बर के ८ बजे इन्दौर में उतरेंगे। फिर वहां से मुंबई को पधारेंगे॥

(प्रश्न—मांस खाना बुरा वा अच्छा है)। (उत्तर) मांस खाना बहुत बुरा है और वेदादि सत्यशास्त्रों में कहीं विधान नहीं है। जो संस्कारविधि में लिखा है[३] वह दूसरों का एक देशीय मत दिखाने को लिख दिया है[४]। कुछ उस एक देशी मत होने से मांस खाना सिद्ध नहीं हो सकता। विशेष इस बा[त] को गोकरुणानिधि ग्रन्थ में देख लीजियेगा उस में इस बात को प्रश्नोत्तरपूर्वक सिद्ध कर दिया है कि मांस खाना बुरा। (प्रश्न दूसरा) मैं अङ्गरेजी पढ़ूं वा संस्कृत (उत्तर) जो कोई योग्य संस्कृत का पढ़ाने वाला मिले तो संस्कृत पढ़ा अवश्य ही चाहीये। संस्कृत के न पढ़ने का परिणाम तो तुम जानते ही हो कि हजारों ईसाई और मुसलमान होगये। जो योग्य अध्यापक न मिले तो अङ्गरेजी पढ़ते ही चले जाओ इस मं कुछ हर्ज नहीं। प्रथम मेरा नाम राजबल्लभ था। अब श्री स्वामी जीने मुझ को नैष्ठिक ब्रह्मचर्य्याश्रम की दीक्षा देकर मेरा नाम रामानन्द ब्रह्मचारी रक्खा है। और आप अपना कुशल पत्र मुंबई में इस पते पर भेजना कि (मुकाम मुंबई बालकेश्वर पर श्री स्वामी जी के पास)। हम आनन्द में हैं। श्री स्वामीजी की कृपा से व्याकरण जो कि स्वामी जी ने बनाई हैं उन में से छः पुस्तक पढ़ली हैं और सातवीं का आरम्भ होगा॥

किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु॥ सम्वत् १९३८ पौष वदी ७ मंगलवार
ता० १३ डिसम्बर सन १८८१ ई० हस्ताक्षर　　　　(रामानन्द ब्रह्मचारी)

———

१. पत्र पर उर्दू में स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी ने भी कुछ लिखा हुआ है।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. यह संस्कार विधि के प्र० सं० की ओर संकेत है। सं० १९४० में संशोधित द्वि० सं० में यह प्रकरण निकाल दिया है। यु० मी०।

४. देखो पूर्ण संख्या ८३ का विज्ञापन। यु० मी०।

[४] पत्र-सूचना (३०८) [३७४]

सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री आ० स० मुम्बई[१]।

छापने योग्य पत्र

१३ दिसम्बर १८८१[२]

चितोड़

———

[५] पत्र (३०९) [३७५]

लाला रामशरणदास जी आनन्दित रहो[३]।

विदित हो कि तुम बखतावरसिंह का मामला शीघ्र[तय]कर दो। हमने यहां अच्छे २ पुरुषों से पूछा। उनों ने यही उत्तर दिया कि जब अकरारनामा में वह हस्त[ाक्ष]र कर चुका है तो अब उसका कुछ नहीं जोर चल सकता। अर्थात् जैसा पंच लोग फैसला करेंगे वैसा ही कचहरी में स्वीकार होगा। और आप भी विचार कर लीजिये। जैसी आप लोगों की राय हो वैसा शीघ्र करना उचित है परन्तु अब वह एक प्रकार का विघ्न डालता है जिस में कि मामला फैसला न हो। अब उस से कुछ भी न पूछना और जनाना। जो आप लोगों की राय में आवे सो फैसला कर देना। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

ता० १७ जनवरी सन १८८२ ई०[४] [द० स०]

———

[१] पत्र (३१०) [३७६]

(*from* PANDIT DAYANANDA SARASWATI

to MR. JOSEPH COOK)

WALKESHWAR, BOMBAY

January 18, 1882.[५]

Sir,—In your public lectures you have affirmed—

(1) That Christianity is of Divine origin.

(2) That it is destined to overspread the earth:

(3) That no other religion is of divine origin.

In reply, I maintain that neither of these propositions is true. If you are prepared to make them good, and to ask the people of Aryavarta

१. इस पत्र के संकेत के लिए देखो म० मुंशीरामकृत पत्र व्यवहार पृ० २५४।

२. पौष कृ० ७ सं० १९३८। यु० मी०।

३. मूल पत्र हमारे सग्रह में सरक्षित है।

४. [माघ कृष्ण १३ मंगल, सं० १९३८] अक्तूबर सन् १९२६ में म० मामराजजी मेरठ से लाये थे।

५. माघ कृष्ण १४ बुध, सं० १९३८। यु० मी०।

to accept your statements without proof, I will be happy to meet you for discussion. I name next Sunday evening at 5–30, at which time I am to lecture at Framji Cowasji Institute. Or, if that should not be convenient to you, then you may name your own time and place in Bombay. As neither of us speaks the other's language, I stipulate that our respective arguments shall be translated to the other, and that a short-hand report of the same shall be signed by us both. The discussion must also be held in the presence of respectable witnesses brought by each party, of whom at least three or four shall sign the report with us; and the whole to be placed in a pamphlet form, so that the public may judge for the mselves which religion is most divine.[1]

दयानन्द सरस्वती
i.e., DAYANAND Saraswati.

[भाषानुवाद]

पण्डित दयानन्द सरस्वती की ओर से
मिस्टर जॉसेफकुक साहब के पास

बालकेश्वर बम्बई
जनवरी १८।१८८२[2]

महाशय !

आपने अपने सर्वसाधारण व्याख्यानों में निश्चय पूर्वक कथन किया है कि

(१) कृश्चिन धर्म्म ईश्वर मूलक है।

(२) यह पृथिवी भर में अवश्य ही विस्तृत हो जायगा।

(३) अन्य कोई भी धर्म्म ईश्वर मूलक नहीं है।

उत्तर में मेरा कथन है कि उक्त प्रतिज्ञाओं में से एक भी ठीक नहीं है। यदि आप उक्त प्रतिज्ञाओं को यथार्थ सिद्ध करना चाहते हैं और आर्यवर्त निवासियों को अपने कथनों को विना प्रमाण प्रस्तुत किये स्वीकृत कराना नहीं चाहते तो मैं प्रसन्नता पूर्वक आप से शास्त्रार्थ करने के लिए उद्यत रहूँगा। आगामी रविवार सन्ध्या समय साढ़े पाँच बजे जब कि मैं फ्रेमजी कावसजी इंस्टिटिउट में व्याख्यान दूँगा। शास्त्रार्थ के लिये नियत करता हूं। यदि उक्त समय आपको सुविधा का न हो तो आप अपनी इच्छानुसार कोई समय तथा बम्बई का कोई स्थान शास्त्रार्थ के लिये नियत करें। क्योंकि हम दोनों में से कोई भी एक दूसरे की भाषा नहीं बोल सक्ता अतः मैं निर्धारित करता हूं कि

---

१. यह पत्र म० मुन्शीराम जी कृत 'पत्र व्यवहार' पृ० ३००, ३०१ पर छपा है। यह वही पत्र है जो ऋषि के अभिप्रायानुसार कर्नल आल्कट ने लिखा था, परन्तु इस में most divine शब्द कर्नल ने अपनी ओर से जोड़ दिया। इसका उल्लेख आगे ऋषि के एक विज्ञापन पूर्ण संख्या ४०० पैरा ६ में आएगा।

२. माघ कृष्ण १४ बुध, सं० १९३८। यु० मी०।

मेरे तर्क आप को आप के तर्क मुझ को अनुवादित कर सुना दिए जांए और हम दोनों के कथन संक्षिप्त लेख बद्ध होकर उन पर हम दोनों के हस्ताक्षर हो जांय। आप की ओर तथा मेरी ओर से प्रतिष्ठित साक्षियों का भी शास्त्रार्थ में विद्यमान रहना आवश्यक है जिन में से तीन वा चार को उक्त संक्षिप्त लेख पर हम लोगों के साथ हस्ताक्षर भी करना पड़ेगा। उक्त शास्त्रार्थ पुस्तकाकार छप कर सर्व साधारण के सन्मुख प्रस्तुत किया जायगा, जिसे देख कर लोग अपने निश्चय कर लेंगे कि कौन सा धर्म श्रेष्ठ ईश्वरोक्त है।

[४] पत्र (३११) [३७७]

ओ३म्[1]

श्रीयुत मित्रवर आर्य्यकुलभूषक महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य इतः श्रीयुत परमहंस परिव्राजकाचार्य्य श्री स्वामी जी का आशीर्वाद। पश्चात् रामानन्द ब्रह्मचारी का अनेकधा शुभाशीर्वाद विदित हो॥

हे मित्रवर आपका कृपा पत्र २७ जनवरी का लिखा हुआ १ पहिली फर्वरी को पहुंचा। और जो आप ने ५) रुपये का मनियाडर भेजा वह भी उसी दिवस मिला। हे महाशय आपके कुशल-रूपी पत्र के अवलोकन करते ही ऐसा आह्लाद प्राप्त हुआ कि जिस को लिखने को भी अशक्य हूँ।

भो मित्र! मैं आप से विनय पूर्वक प्रार्थना करता हूं कि आप के निवेदन किये हुए पदार्थ को अति आनन्द पूर्वक स्वीकार किया। परन्तु आप को अप्रिय लगे तो मेरी अयोग्यता समझ कर अपराध क्षमा करना। सुनिये जिस समय नयेसहर[2] में आप मुझ को चिट्ठी पत्र के खर्च के वास्ते द्रव्य दे गये थे वह आप का परमार्थरूपी भार अभी मेरे पर विराजमान था। फिर बहुत शीघ्र आप ने धर्म रूपी भार निवेदन किया। मैं आप के परमार्थरूपी भार से अति लज्जित होता हूँ क्योंकि मुझ से आप का कुछ भी प्रत्यु[प]कार नहीं हो सकता। अतः मेरी प्रसन्नता तो आप के अभीष्ट सिद्धि की प्राप्ति होने से है। परमात्मा परम दयालु ईश्वर आपकी सदैव धर्मोन्नति विषय में प्रवृत्ति और अधर्म अवनति से निवृत्ति किया करे॥

अब आप के प्रश्नों का उत्तर श्री स्वामी जी की आज्ञानुसार लिखता हूं। आशा है कि प्रसन्नता पूर्वक आप स्वीकार करेंगे॥

(प्रश्न) दूसरी माता की सेवा करने का अधिकार पुत्र को पहिली माता के सदृश है वा नहीं॥ (उत्तर) जो विद्यादि शुभ गुणों से युक्त हो और शिक्षा पूर्वक पुत्र पर प्रेम रखती हो उसका अनिष्ट चिन्तन कभी न करती हो तो साक्षात् अपनी माता के समान तन मन धन से सदैव करना योग्य है। जो इस प्रकार वर्त्ताव न वर्त्ते तो इतनी पुत्र को सेवा करना योग्य है कि अन्न वस्त्रादि और अभिवादन से उस को प्रसन्न रखना, अधिक सत्कार करने योग्य नहीं॥ (प्रश्न) १२ वा १४ वर्ष की युवती कन्याओं से पुरुष विवाह कर लेते हैं। उनके साथ पुत्र को किस प्रकार वर्त्ताव वर्त्तना चाहिये और विद्यादि शुभ गुणों की शिक्षा करे वा नहीं॥ (उत्तर) यह साधारण मनुष्यों से होना अशक्य है क्योंकि स्त्री और पुरुष की परस्पर ऐसी आकर्षणता शक्ति है कि जैसे चुम्बक पत्थर की लोहे के साथ। जिस समय

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। २. अर्थात् ब्यावर में।

युवती स्त्री और युवा पुरुष की आमने सामने दृष्टि पड़ती है उसी समय मन बिगड़ जाता है। बहुधा इन्द्रियों के वेगाश्रित होके अन्यथा व्यवहार मनुष्य कर बैठते हैं [इसमें] कुछ शंका नहीं। इससे सब से होना असम्भव है। हां, जो पूर्ण विद्वान् योगाभ्यासी अर्थात् जिस की इन्द्रिय आत्मा के वस में हो तो वह कर सकता है। स्त्री को शिक्षा करने का अधिकार उसके पति ही को है।

(प्रश्न) नियोग से उत्पन्न हुए पुत्र उन माता पिताओं के साथ किस प्रकार वर्त्तें। (उत्तर) जो स्त्री अपने वास्ते नियोग से पुत्र को उत्पन्न करे वह पुत्र उस स्त्री के मृतक पति का होगा और उस के पदार्थों का दायभागी होगा। जो पुरुष अपने वास्ते नियोग से पुत्र को उत्पन्न करेगा तो वह पुत्र उस पुरुष का होगा और उसी के पदार्थों का दायभागी भी होगा। सेवा करना भी जिसका पुत्र कहावेगा उसी की तन मन धन से करना योग्य है। दोनों की नहीं कर सकता। इस प्रकार का निर्णय वेदादि सत्यशास्त्रों में विवेचन किया है। इन प्रश्नों के उत्तर तो सत्यार्थप्रकाश संस्कारविधि में देखने से निवृत्त हो सकते हैं॥

मैं बहुत प्रसन्न होता हूँ आपका बड़ा भारी यश समझता हूँ जो आप प्रश्न भेजते हैं। अब जो मेरे करने योग्य [हो] वह आप कृपा पूर्वक पत्र पर लिख भेजा करें॥ किमधिक लेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु॥ आज कल यहां गोरक्षा के विषय में व्याख्यान होते हैं। यहां कोई एक मास पर्य्यन्त स्वामी जी का निवास रहेगा। फिर जहां को जाने का विचार होगा, पत्र द्वारा मैं आप को विदित कर दूँगा और जो यहां विशेष वार्त्ता आप को लिखने योग्य होगी, वह आप को निवेदन किया करूंगा॥

शुभम् ता० ३ फरवरी सन १८८२ ई०[1]

(हस्ताक्षर रामानन्द ब्रह्मचारी)

———

[३] **पत्रांश (३१२)** [३७८]

[समाचार पत्र देशहितैषी अजमेर को[2]]

अमृतलाल[3] को अपनी समाज का सभासद कर लो।

४ फरवरी १८८२ मुम्बई[4]

दयानन्द सरस्वती

———

[१] **पत्र (३१३)** [३७९]

पण्डित सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो[5]!

विदित हो कि पत्र तुम्हारा आया। समाचार विदित हुआ। जो प्रतिमास में २० फारम

---

१. माघ शु० १५ शुक्र, सं० १९३८। यु० मी०।

२. देशहितैषी के रजिस्टर से।

३. रजिस्टर में एक टिप्पण है कि "ये जयपुर में रहते थे"।

४. फाल्गुन कृष्ण १ शनि, सं० १९३८। यु० मी०।

५. इस की छपी हुई प्रतिलिपि फरुखाबाद आर्यसमाज में थी। उसी से म० मामराज जी ने सन् १९२७ में प्रतिलिपि की।

वेदभाष्य के और १२ फारम वेदांगप्रकाशादि के छपें तो कुछ चिन्ता नहीं। परन्तु इतने से कम न छपना चाहिये। जो........................के मन्त्री ने छापा खाना..............................में होने के विषय में लिखा है यह बिलकुल बेसमझ की बात है। क्योंकि प्रथम तो जगह २ छापेखाने के होने में व्यर्थ हजारों रुपये खर्च होते हैं। और छापेखाने की प्रसिद्धि होने में भी बहुत काल लग जाता है। प्रबन्ध भी बिगड़ जाता है। और भी बहुत प्रकार की हानि हो जाती है। इस से छापाखाना प्रयाग ही में रहेगा।.....................में तो इस भाषा के जानने वाले कंपोजीटरों का भी मिलना दुर्लभ है। जो वह हमको लिखेगा तो हम उसको उत्तर दे देंगे। यह उसका लिखना बिलकुल व्यर्थ है।

....

तुम और बाबू विश्वेश्वरसिंह छापेखाने की तरफ दृष्टि रक्खोगे और भीमसेन को चेतन कर दोगे। मिति फाल्गुन वदी ३ सोमवार संवत् १९३८[1]।

(ह० दयानन्द सरस्वती)

---

[२२] **पोस्ट कार्ड (३१४)** [३८०]

ओ३म्

वाजपेई रामाधार जी आनंदित रहो[2]!

विदित हो कि आज हम ने वैदिक यंत्रालय प्रयाग मैनेजर दयाराम को लिख भेजा है सो आप का हिसाब सफा हो जायगा, अब आगे को गड़बड़ न होगा। देखिये यह परोपकार का काम है इस में सब बात के प्रबन्धकर्त्ता आप ही को रहना चाहिये, आप आपनी ओर से चाहे जिस को रक्खें परन्तु प्रधान आप ही समझे जायेंगे। अब आप इस पुराने हिसाब की सफाई करके नया हिसाब का आरंभ कीजिये फिर गड़बड़ कभी नहीं हो सकेगी। हम यहां सहर मुंबई बालकेश्वर गोशाला के बगल में ठहरे हैं। यहां गोरक्षा के विषय में व्याख्यान होते हैं॥

ता० २० फरवरी सन १८८२ ई०[3]। [दयानन्द सरस्वती]

---

[१] **पत्र-सूचना (३१५)** [३८१]

बाबू शिवनारायण जी मेरठ[4]।

२४ फरवरी १८८२ मुम्बई[5]

---

१. ६ फरवरी १८८२। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

३. फाल्गुन शुक्ल ३ सोम, सं० १९३८। इस पत्र का उत्तर म० मुंशीराम संपा० पत्रव्यवहार पृ० ३३८ पर छपा है।

४. म० मुशीराम संपा० पत्रव्यवहार पृ० ३१७ पर इस पत्र का संकेत है।

५. फाल्गुण शुक्ल ७ शुक्र, सं० १९३८। यु० मी०।

[९] पत्र (३१६) [३८२]

श्रीयुत मित्रवर आर्य्यकुल-प्रभाकर महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य इतः रामानन्द ब्रह्मचारी का यथायोग्य नमस्ते विदित हो ॥[1]

हे महाजन आप के पत्र के प्रश्नों का उत्तर श्रीयुत स्वामीजी के आज्ञानुसार लिखकर भेज दिया था[2]। आशा है कि पहुंचा होगा। अब दो पत्र गोरक्षा के विषय के भेजता हूं जिस में एक पत्र तो सही करने[3] का है जिसके ऊपर (ओ३म् और नीचे हस्ताक्षर) ऐसा चिन्ह है और दूसरा विज्ञापन पत्र[4] अर्थात् किस प्रकार महाशयों के हस्ताक्षर और मोहर होनी चाहिये इस विषय का है ॥

आशा है कि आप इस महोपकीर्त्ति को प्राप्त हो कर आर्य्यावर्त्त में सुशोभित होंगे। आप पंजाब हाथे में जहां तक आपका पुरुषार्थ चले वहां तक अपनी और सब महाशयों की सही करा कर शीघ्र स्वामी जी के पास [भेज] देंगे। इस में सही इस प्रकार करानी होगी कि जिस महाशय के मेल में जितने आर्य पुरुष हों उन सब की ओर से वह एक पुरुष अपने हस्ताक्षर कर दे कि इतने १०० इतने १००० इतने १००००० वा इतने १०००००००० करोड़ पुरुषों की ओर से मैं अमुक नामा पुरुष अपने हस्ताक्षर करता हूं। इस प्रकार सही करके पश्चात् जितने पुरुषों की ओर से उसने सही की हो उन सब के हस्ताक्षर कराके अपने पास रखले। क्योंकि जिस समय मुकद्दमा सरकार में पहुंचेगा उस समय जब सरकार पूछेगी कि इतने मनुष्यों की ओर से तुमने हस्ताक्षर किये परन्तु उनकी सही तुम्हारे पास है कि नहीं, तब दिखलाई जायगीं कि है। इस लिये सही करा कर रखनी अवश्य चाहिये ॥

मुझ को दृढ़ निश्चय है कि इस कीति के भागी आप होंगे। अब आप अपना पत्र शीघ्र भेजकर मुझ को कृतार्थ करेंगे। जो कुछ मेरे करने का काम हो कृपा पूर्वक विदित करना। आशा है कि आप कुटुम्ब के सहित आनन्द में होंगे। मैं भी ईश्वर की कृपा से आनन्द में हूं ॥

परमात्मा परम दयालु न्यायकारी सर्वान्तर्यामी जगदीश्वर आपको सदैव आनन्द में रक्खे ॥ शुभम् सम्वत् १९३८ चैत्र कृष्ण ५ शुक्र' ता० १० मार्च सन् १८८२ ई० ॥

[रामानन्द ब्रह्मचारी]

———

[२१] पत्र (३१७) [३८३]

मंत्री आर्य्यसमाज दानापुर आनन्दित रहो[5]!

मैं आप परोपकारप्रिय धार्मिक जनों को सब जगत् के उपकारार्थ गाय बैल और भैंस की हत्या के निवारणार्थ दो पत्र एक तो सही करने[3] का और दूसरा जिस के अनुसार सही करनी[4] है दो पत्र भेजता हूं। इसको आप प्रीति और उत्साह पूर्वक स्वीकार कीजिये, जिस से आप महाशय लोगों की कीर्त्ति इस संसार में सदा विराजमान रहे। इस काम को सिद्ध करने का विचार

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। २. पूर्ण संख्या ३७७ का पत्र। यु० मी०।
३. यह पूर्ण संख्या ३८७ पर छपा है। यु० मी०।
४. यह पूर्ण संख्या ३८८ पर छपा है। यु० मी०।
५. मूल पत्र आर्य्यसमाज दानापुर में सुरक्षित है।

इस प्रकार किया गया है कि २०००००० दो करोड़ से अधिक राजे महाराजे और प्रधान आदि महाशय पुरुषों की सही कराके आर्य्यावर्त्तीय श्रीमान् गवरनर जनरल साहेब बहादुर से इस विषय की की अर्जी करके उपरी लिखित गाय आदि पशुओं की हत्या को छुड़वा देना। मुझ को दृढ़ निश्चय है कि प्रसन्नता पूर्वक आप लोग इस महोपकारक कार्य्य को शीघ्र करेंगे। अधिक प्रति भेजने का प्रयोजन यह है कि जहां २ उचित समझे वहां २ भेज कर सही करा लीजिये। पुनः नीचे लिखित स्थान में रजिष्टरी कराके भेज दीजिये। लाला रामशरण रईस मंत्री आर्य्यसमाज मेरठ॥ अलमतिविस्तरेण धर्म्मिवरशिरोमणिषु॥

ता: १२ मार्च सन् १८८२ ई०[१]। (दयानन्द सरस्वती)
मुम्बई

———

[११] **पत्र (३१८)** [३८४]

ओ३म्

लाला रामचरण कालीचरण-मन्त्री आर्यसमाज फरुखाबाद[२] आनन्दित रहो।

.........................पूर्ण सं० ३८३ का पत्र।

चैत्र कृष्ण ८ सोम० संवत् १९३८[३]। [ह० दयानन्द सरस्वती]

———

[२३] **पत्र (३१९)** [३८५]

आर्य्यसमाज लखनऊ बाबू रामाधार वाजपेयी खज़ाना रलवे आनन्दित रहो[४]।

.........................पूर्ण सं० ३८३ का पत्र।

मि० चै० व० ८ सोम० सं० १९३८[३]। दयानन्द सरस्वती

———

[२] **पत्र (३२०)** [३८६]

पण्डित सुन्दर लाल असिसटेण्ट पोस्ट मास्टर जनरल प्रयाग आनन्दित रहो।

.........................पूर्ण संख्या ३८३ का पत्र[५]।

चैत्र कृष्ण ८ चन्द्रवार सं० १९३८[३]। ह० दयानन्द सरस्वती

———

१. चैत्र कृष्ण ७ रवि सं० १९३८। यु. मी.।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। इसे म० मामराज ने सन् १९२७ में आर्यसमाज फरुखाबाद के पुराने पत्रों में से खोजा था। इस मूल पत्र का फोटो पं० घासीराम जी सम्पा० जी० च० पृष्ठ ६३१ पर लगा है। तथा वेदवाणी काशी, फरवरी १९५३ के पृष्ठ १३ पर पूरा छपा है।

३. ता० १३ मार्च १८८२।

४. मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

५. यही पत्र श्री स्वामी जी ने गोरक्षार्थ सही करने वाले दूसरे पत्र (पूर्ण संख्या ३८७, ३८८) के साथ हस्ताक्षर कराने के लिये भारतवर्ष में सैकड़ों की संख्या में आर्यसमाजों तथा अन्यों को भेजा था।

[१]　　**सही करने का पत्र (३२१)**　　[३८७]

ओ३म्[१]

ऐसा कौन मनुष्य जगत् में है, जो सुख के लाभ होने में प्रसन्न और दुःख की प्राप्ति में अप्रसन्न न होता हो। जैसे दूसरे के लिये अपने उपकार में स्वयं आनन्दित होता है, वैसे ही परोपकार करने में सुखी अवश्य होना चाहिये। क्या ऐसा कोई भी विद्वान् भूगोल में था, है और होगा, जो परोपकाररूप धर्म और परहानिस्वरूप अधर्म्म के सिवाय धर्म वा अधर्म की सिद्धि कर सके। धन्य वे महाशय जन हैं, जो अपने तन, मन और धन से संसार का अधिक उपकार सिद्ध करते हैं। निन्दनीय मनुष्य वे हैं जो अपनी अज्ञानता से स्वार्थवश होकर अपने तन, मन और धन से जगत् में परहानि करके बड़े लाभ का नाश करते है। सृष्टिक्रम से ठीक २ यही निश्चय होता है कि परमेश्वर ने जो २ वस्तु बनाया है, वह वह पूर्ण उपकार लेने के लिये हैं। अल्प लाभ से महाहानि करने के अर्थ नहीं। विश्व में दो ही जीवन के मूल है, एक अन्न और दूसरा पान। इसी अभिप्राय से आर्य्यवर शिरोमणि राजे महाराजे और प्रजाजन महोपकारक गाय आदि पशुओं को न आप मारते और न किसी को मारने देते थे। अब भी इन गाय, बैल, और भैंस को मारने और मरवाने देना नहीं चाहते हैं। क्योंकि अन्न और पान की बहुताई इन्ही से होती है। इससे सब का जीवन सुख से हो सकता है। जितना राजा और प्रजा का बड़ा नुकसान इन के मारने और मरवाने से होता है, उतना अन्य किसी कर्म से नहीं। इस का निर्णय गोकरुणानिधि पुस्तक में अच्छे प्रकार प्रकट कर दिया है अर्थात् एक गाय के मारने और मरवाने से ४,२०,००० चार लाख बीस हज़ार[२] मनुष्यों के सुख की हानि होती है। इस लिए हम सब लोग स्वप्रजा की हितैषिणी श्रीमती राजराजेश्वरी क्विन् विक्टोरिया की न्याय प्रणाली में जो यह अन्याय रूप बड़े २ उपकारक गाय आदि पशुओं की हत्या होती है इस को इन के राज्य में से प्रार्थना से छुड़वा के अति प्रसन्न होना चाहते हैं। यह हम को पूरा निश्चय है कि विद्या, धर्म्म, प्रजाहित-प्रिय श्रीमती राजराजेश्वरी क्विन् महाराणी विक्टोरिया पार्लियामेण्ट सभा और सर्वोपरि प्रधान आर्य्यवर्त्तस्थ श्रीमान् गवर्नर जनरल साहिब बहादुर सम्प्रति इस बड़ी हानिकारक गाय बैल, तथा भैंस की हत्या को उत्साह और प्रसन्नता पूर्वक शीघ्र बन्द करके हम सब को परम आनन्दित करें। देखिये कि उक्त गाय आदि पशुओं के मारने और मरवाने से दूध घी और किसानों की कितनी हानि होकर राजा और प्रजा की बड़ी हानि हो गई और नित्य प्रति अधिक २ होती जाती है। पक्षपात छोड़ के जो कोई देखता है तो वह परोपकार ही को धर्म्म और पर हानि को अधर्म निश्चित जानता है। क्या विद्या का यह फल और सिद्धान्त नहीं है कि जिस २ से अधिक उपकार हो उस २ का पालन, वर्धन करना और नाश कभी न करना। परम दयालु न्यायकारी सर्वान्तर्यामी सर्वशक्तिमान् परमात्मा इस समस्त जगदुपकारक काम करने में ऐकमत्य करे॥

चुन्नीलाल प्रेस　　———　　(हस्ताक्षर)

१. गोरक्षावाले पत्रों के साथ यह सही करने वाला छापा हुआ पत्र बहुत स्थानों को भेजा गया था। मूल मुद्रित पत्र म० मामराज फरुखाबाद से लाये थे। वह हमारे संग्रह में सुरक्षित है। फरुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ पृ० १९८ पर भी छपा है।

२. इस का पूर्ण विवरण 'गो करुणानिधि' में देखें। यु० मी०।

[३१] **विज्ञापनपत्रमिदम्[1] (३२२)** [३८८]

सब आर्य पुरुषों को विदित किया जाता है कि जिस पत्र के ऊपर (ओम्) और नीचे (हस्ताक्षर) ऐसा वचन लिखा है, वही सही करने का है उस पर सही इस प्रकार करनी होगी कि जिस के स्वराज्य व देश में ब्राह्मण आदि मनुष्यों की जितनी संख्या हो उतनी संख्या लिख के अर्थात् इतने सौ, हज़ार लाख व करोड़ मनुष्यों की ओर से मैं अमुक नामा पुरुष सही करता हूं इस प्रकार एक श्रीयुत महाशय प्रधान पुरुष की सही में सर्व साधारण आर्य पुरुषों की सही आ जायगी। परन्तु जितने मनुष्यों की ओर से एक मुख्य पुरुष सही करे वह उन से सही लेके अपने पास अवश्य रक्खे। और जो मुसलमान वा ईसाई लोग इस महोपकारक विषय में दृढ़ता और प्रसन्नता से सही करना चाहें तो कर दें। मुझ को दृढ़ निश्चय है कि आप परम उदार महात्माओं के पुरुषार्थ उत्साह और प्रीति से यह सर्व उपकारक महापुण्य कीर्त्तिप्रदायक कार्य यथावत् सिद्ध हो जायगा।

चैत्र कृष्ण ९ सं० १९३९[2] तदनुसार १४ मार्च १८८२ मुंबई

दयानन्द सरस्वती

———

[१] **पत्र सूचना (३२३)** [३८९]

म० कृष्णलाल साह अल्मोड़ा[3]

गोरक्षासम्बन्धी दो पत्र

चैत्र वदी ११ बुधवार संवत् १९३८[4] मुम्बई

———

[४] **पत्रांश (३२४)** [३९०]

[समाचार पत्र देशहितैषी अजमेर को]

गोरक्षा के विषय में पत्र भेजते हैं।[5]

१६ मार्च १८८२ मुम्बई[6]

दयानन्द सरस्वती

———

१. सही करने वाले पत्रों के साथ यह विज्ञापन भी अनेक स्थानों में भेजा गया था। यु० मी०।

२. यहां सं० १९३८ चाहिये, चैत्र शुक्ल १ से नया संवत् चलता है। फरुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ पृष्ठ २०० पर भी सं० १९३९ ही छपा है। वहां अंग्रेजी तारीख २४-३-१८८२ दी है वह भी अशुद्ध है। १४ मार्च चाहिये। यु० मी०।

३. म० मुंशीराम संपा० पत्रव्यवहार पृ० ३७२ पर म० कृष्णलाल जी का पत्र ता० २६ मार्च १८८२ का है। उसी में इस पत्र का संकेत है।

४. १५ मार्च १८८२।

५. देशहितैषी के रजिस्टर में से।

६. चैत्र वदी १२ गुरु०, सं० १९३८। यु०मी०।

[६]　　　　पत्र (३२५)　　　　[३९१]

बाबू कृपाराम स्वामी आनन्दित रहो।

जो आपने ब्राह्मी ओषधी का पारसल भेजा सो पहुंचा। अब जब तक हम न लिखें तब तक मत भेजियेगा। यहां सब प्रकार आनन्द है। ३ तीन दिन के पश्चात् वार्षिक उत्सव आर्य्यसमाज का ७ सातवां होगा। दानापुर से तीन सभासद् यहां उत्सव पर आवेंगे, और आर्य्यसमाज का स्थान भी थोड़े ही दिनों में बन जायगा। सब सभासद् भी प्रसन्न हैं। वहां की जो लिखने के तुल्य बातें हों, लिखते रहना। [सब] से हमारा आशीर्वाद कहना। मि० चै० व० १३ शुक्र सं० १९३८[१]।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१२]　　　　पत्र (३२६)　　　　[३९२]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनंदित रहो[२]।

विदित हो कि कल रामानन्द के भाई त्रिलोचन ने एक पत्र भेजा है कि जिस में यह समाचार लिखा था। माता, पिता, बहुत बीमार हैं। और मैं भी बीमार हूं। यहां कोई हमको जल देने वाला भी नहीं है। इस कारण तुम श्री स्वामी जी से आज्ञा लेकर देखत पत्र के चले आओ। ऐसा शोक का समाचार लिखा था। इस बात की तुम पत्र के पहुंचते ही तलासी करना कि यह बात सच है किम्वा किसी के बहिकाने से उन्होंने लिखी अर्थात् केवल भाई के बुलाने के वास्ते। इसका ठीक २ निर्णय करके शीघ्र हमारे पास पत्र भेजो। जो ऐसा ही हो की जैसा लिखा है तो किसी एक योग्य पुरुष का प्रबन्ध करके उनके पास रख देना जो उनकी सेवा अच्छे प्रकार कर सके। और जो दवा दारू के खर्च में दो चार रुपये लगें तो दे देना। हिसाब हमारे नाम से लिख लेना। अब इसका पिता भी वहां आ गया है। इस कारण "३) रुपैये तो मा[ह]वारी इने मिलते ही हैं अब एक रु० अर्थात् ४) रुपैये मा[ह]वारी सेट निर्भयराम जी [की] दुकान दिया करे" किसी प्रकार दुःखी न होने देना जब तक अच्छे न होवें॥

एक यह गुप्त बात लिखते हैं इसको प्रकट मत करना कि जो किसी का लोकान्तर हो जाय तो जैसा संस्कारविधि में लिखा है उसके अनुसार घृत चन्दनादि से मृतक संस्कार करवा देना। जो कुछ पंद्रह बीस रुपये लगें, लगा देना, परन्तु संस्कार अच्छी प्रकार करवा देना। "सब से हमारा आशीर्वाद कहियेगा। जो गोरक्षा के विषय में पत्र वहां भेजे हैं उनको दिखला के अपनी जाति किंवा सब की सही बही में लेना। और सही करने वालों की ओर से जितनी संख्या हो उतनी लिख के पंच लोग सही उस छपे हुए पत्र पर क[र] देवें।"[३]

चैत्र कृष्ण ३० रविवार सम्वत् १९३८[४]।　　　　(दयानन्द सरस्वती)

---

१. १७ मार्च १८८२ मुम्बई।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। मार्च सन् २७ में म० मामराज ने आर्य्यसमाज फरुखाबाद के पत्रों में से खोजा था।

३. " " कामों के अन्दर का लेख श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से (लाल रंग से) लिखा है और पत्र को शोधा भी है।

४. १६ मार्च १८८२।

[१] पत्र-सूचना (३२७) [३९३]

[श्रीमान् आर्यकुलदिवाकर महाराणा सज्जनसिंह जी उदयपुराधीश]
गो रक्षा संबन्धी एक पत्र और एक छपी चिट्ठी[१]।

———

[१] पत्र (३२८) [३९४]

ओ३म्[२]

श्रीमन्महाराजाधिराजेभ्यः श्रीयुत शाहपुराख्याधीशेभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति भवदीयं च नित्यमाशासे। जब से आप और मेरा वियोग हुआ तब से अवकाश न मिलने से मैं आपको पत्र नहीं लिख सका। अब इस पत्र के पहुंचने के पश्चात् अपने कुशल क्षेम के समाचार से सुभूषित पत्र भेजियेगा। मैं भी उचित समय पर पत्र भेजा करूंगा, जो आप से और मुझ से गोरक्षा के विषय संवाद हुआ था उसके वास्ते **जो एक पत्र और एक चिट्ठी छपवाके श्रीमानार्य्यकुलदिवाकर उदयपुराधीशादि राजे** महाराजों के पास भेजे हैं वे ही श्रीमान् महाराजाधिराज आपके पास भी दो पत्र भेजते हैं, इसका प्रबन्ध ऐसा किया है कि अपने राज्य और मित्रों के राज्य में जो जो ब्राह्मणादि मनुष्य हों उनकी सही एक बही में लेके उनकी ओर से राजे महाराजे और प्रधान पुरुष उस छापे के पत्र के नीचे वा बगल में उन सही करने वालों कीं संख्या लिख के अपनी सही करे। चित्तौड़ में जो कुछ अच्छी बातें हुईं वे सब श्रीमंदनवद्य गुणोदार महाराजाधिराजों के पुरुषार्थ ही से हुई और अग्रे होगी। जो राजकुमार पाठशाला की बात हुई थी सो श्रीमदार्यकुलभास्करों ने भी करना स्वीकार कर लिया है। यहां मुम्बई में भी गोरक्षा के वास्ते सही हो रही है। सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। अलंमतिविस्तरेण महाराजाधिराजवर्य्येषु। मि० चै० शु० २ वार मंगल संवत् १९३९[३]। इस का उत्तर मुम्बई में शीघ्र लिख भेजिये। मुंबई बालकेश्वर।

(दयानन्द सरस्वती)

———

[८] पत्र-सारांश (३२९) [३९५]

[कर्नल आल्काट तथा मैडम ब्लेवेस्टकी[४]]

मेरठ में आपने एक व्याख्यान दिया था, जिस से ज्ञात हुआ कि आप लोगों को ईश्वर के अस्तित्व में सन्देह है और आप लोगों ने जो चिट्ठी अमेरिका से लिखी थी उस में अपने धर्म का नाम

१. यह पत्र १४ से २१ मार्च १८८२ के मध्य भेजा गया होगा। देखो पूर्ण संख्या ३६४। यु० मी०।

२. मूल पत्र राज कार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि पं० भगवान्स्वरूपजी ने स्वहस्त से करके ता० ६-६-२८ के अपने पत्र सहित शाहपुरा से भेजी थी।

३. २१ मार्च १८८२।

४. यह पत्राशय पं० घासीराम जी सम्पा० जी० च० परिशिष्ट २ पृष्ठ ७७३ तथा पं० लेखराम जी कृत जी० च० पृष्ठ ८४१ पर उद्धृत है। यु० मी०।

थियोसोफिस्ट लिखा था। हमने थियोसोफिस्ट शब्द के अर्थ अंग्रेजी जानने वालों से पूछे तो उन्होंने कोष को देखकर 'थियोसोफ़ी' शब्द के अर्थ ईश्वर की बुद्धिमत्ता बतलाये थे। उस से हमने आप को आस्तिक समझा था और इस कारण आप से मित्रता करने में मुझे कोई रुकावट नहीं रही थी। अब आप के व्याख्यान इस के विपरीत देखते हैं। आप से और हम से मित्रता हो चुकी है अतः कल के दिन अथवा जितना शीघ्र हो सके आप मेरे पास चले आओ वा मुझे अपने पास बुला लो, वा कोई अन्य स्थान नियत करो कि जहाँ हम दोनों मिलकर इस विषय में शास्त्रार्थ करें। यदि आप से हो सके तो हमारे मन से ईश्वर का विचार उठा दो और अपने जैसा बनालो, अन्यथा हम से हो सकेगा तो हम आप को ईश्वर का प्रमाण देंगे और आप को अपने जैसा बनावेंगे।

२१ मार्च सन् १८८२।[1]

---

[४] पत्र-सारांश (३३०) [३९६]

[मैडम ब्लेवेस्टकी[2]]

कर्नल ने हमें वचन दिया था कि हम शीघ्र ही इस विषय में शास्त्रार्थ करेंगे, परन्तु वह उसे पूरा किये बिना ही अन्यत्र चले गये। सो यदि तीन चार दिवस के भीतर आप अकेली अथवा कर्नल सहित इस बखेड़े को न निबटा लोगी तो मैं २८ मार्च सन् १८८२ मंगलवार[3] को फ्रामजी कावसजी हाल में आप के विरुद्ध वक्तृता दूँगा।

२२ मार्च १८८२।[4]

---

[३] पत्र (३३१) [३९७]

पंडित सुन्दरलाल जी आनंदित रहो[5]।

विदत हो कि आर्यसमाज लाहौर में प्रति मास अंग्रेजी [का] एक आर्यपत्र निकलता है। वहां के एडीटर ने लिखा है कि इस पत्र के बदले में आप प्रतिमास ऋग्यजुर्वेद का भाष्य भेजा करें और इसके बदले वह पत्र भेजेंगे। सो तुम लाला सांईदास के मार्फत वेदभाष्य भेज देना और वे जैसा नोटिस लिख भेजें छपने के वास्ते वैसा ही छपवा देना॥

भीमसेन अब भाषा बहुत ढीली बनाता है उसको शिक्षा कर देना कि भाषा के बनाने में ढील न हुआ करे और आख्यातिक अब कितना छप चुका है। हमने कई बातें पूछीं हैं उनका उत्तर

---

१. चैत्र शुक्ल २ मंगल, सं० १९३६। यु० मी०।

२. यह पत्राशय पं० घासीरामजी सम्पादित जी० च० परिशिष्ट २ पृष्ठ ७७४ तथा पं० लेखराम जी कृत जी० च० पृष्ठ ८४१, ८४२ पर उद्धृत। यु० मी०।

३. चैत्र शु० ६ मंगलवार सं० १९३६ सायं ६ बजे उक्त व्याख्यान दिया था। देखो ऋ० द० का जीवनचरित्र। यु० मी०।

४. चैत्र शुक्ल ३ बुध, सं० १९३६। ५. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

हमको अब तक न दिया। उनका शीघ्र प्रत्युत्तर भेजना चाहिये । मेनेजर दयाराम ने अभी त[क] हिसाब का पत्र नहीं भेजा है उससे हिसाब भिजवा देना।

मार्च ता० २३ सन् १८८२ ई०[१]

और जिन बातों के पूर्व पत्रों में उत्तर मांगा है भेज देना। इसमें विलम्ब न होना चाहिये।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[४] पत्र[२] (३३२) [३९८]

यह बात बहुत उत्तम है क्योंकि अभी कलकत्ते में इस विषय की सभा हो रही है[३]। इस लिये जहां तक बने वहां शीघ्र संस्कृत और मध्य देश की भाषा के प्रचार के वास्ते, बहुत प्रधान पुरुषों की सही[४] कराके कलकत्ते की सभा में भेज दीजिये और भिजवा दीजिये। और मेरठ और देहरादून से पूर्व २ समाजों में पत्र इस विषय के शीघ्रतर भेज दीजिये।

चै० शु० ५ शुक्र सम्वत १९३८[५]।

दयानन्द सरस्वती

(मुंबई)

---

[३२] विज्ञापनपत्रमिदम्[६] [३९९]

सब सज्जन उदार आर्य लोगों को विदित किया जाता है कि जो फीरोजपुर में अनाथाश्रम कई एक वर्षों से आर्यसमाजों ने स्थापित किया है यह बड़ा प्रशंसित और धर्म का काम है और इस में बड़े सहाय की अपेक्षा है। इस लिये आप सज्जन लोगों को उचित है कि इसका सहाय करना।

---

१. चैत्र शुक्ल ४ बृह० सं० १९३९। यु० मी०।

२. मूल पत्र मार्च सन् १९२७ में महा० मामराज जी ने फर्रुखाबाद आर्यसमाज के पत्रों में से खोजा था। अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. भारतीय स्कूलों में कौनसी भाषा पढ़ाई जावे, इस विषय पर विचारार्थ सन् १८८२ के आरम्भ में कलकत्ता में एक कमिशन बैठा था। लाहौर समाज ने उस कमिशन के प्रधान को आर्यभाषा पढ़ाई जाने के लिये पत्र लिखा था। मुलतान समाज ने भी ऐसा ही पत्र वहां भेजा था। उन दिनों मुलतान समाज के मन्त्री उत्साहमूर्ति मास्टर दयाराम थे। उन्होंने श्री स्वामी जी को १६ मार्च सन् १८८२ को लिखा कि वे सब समाजों को कलकत्ते को ऐसे पत्र लिखने के लिये प्रेरित करें। श्री स्वामी जी ने उसी पत्र की पीठ पर ऊपर मुद्रित लेख स्वहस्त से लिखकर फरूखाबाद भेजा ताकि वहां से सब समाजों में यह आन्दोलन किया जावे।

४. सही करने योग्य पत्र तथा मास्टर दयाराम जी का पत्र हमारे संग्रह में थे, वे लाहौर देशविभाजन के समय नष्ट हो गये।

५. यहां सं० १९३९ चाहिये, २४ मार्च १८८२।

६. ऋग्वेदभाष्य, अंक ३६, ३७, वैदिक यन्त्रालय, प्रयाग के मुखपृष्ठ की पीठ पर छपा। यह अंक चैत्र शुक्ल १० संवत् १९३९ तदनुसार २९ मार्च सन् १८८२ को छपा था।

क्योंकि इसके होने से आर्यलोग जिन का पालन करने वाला कोई न होवे वे ईसाई वा मुसल्मान अथवा अन्य मत में वेदोक्त सनातन धर्म से छूट के मिल जाते थे उनकी रक्षा के लिये यह अनाथ पालनार्थ सभा नियत की है। जिस प्रकार अर्थात् धन के सहाय करने से इसका दीर्घायु हो वैसे यत्न करने चाहिये ॥ ॥ अलमतिविस्तरेणौदार्य्यादिगुणयुक्तेषु ॥

ह० दयानन्द सरस्वती

---

[३३] विज्ञापन[१] [४००]

थियोसोफ़िस्टों की गोलमाल पोलपाल[२] ॥

श्री स्वामी जी ने और आर्यसमाज के लोगों ने उन के पूर्व पत्र और व्यवहारों से यह अनुमान किया था कि उन से आर्यावर्त देश का कुछ उपकार होगा । परन्तु वह अनुमान व्यर्थ हो गया—

(१) क्योंकि जो २ उन्होंने प्रथम अपनी चिट्ठियों में प्रसिद्ध लिखा था कि हमारी थियोसोफिकल सोसाइटी आर्यसमाज की शाखा हुई, उससे यह लोग बदल गये।

(२) उन्होंने कहा था कि वेदोक्त सनातन धर्म के ग्रहण और विद्यार्थी होकर संस्कृत विद्या पढ़ने को आते हैं, सो तो न किया, किन्तु अब किसी धर्म को नहीं मानते और न कुछ किसी धर्म की जिज्ञासा की, न आज तक संस्कृत विद्या पढ़ने का आरम्भ किया और न करने की आशा है ॥

(३) उन्होंने कहा था कि जो इस सोसाइटी के सभासदों से फीस आवेगी वह आर्यसमाज के लिये होगी और बहुत सी पुस्तकें भेंट की जावेंगी, वह तो कुछ भी न किया, परन्तु जो हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के पास ७००)[३] रुपये भेजे थे वह भी निगल कर बैठ रहे, पुस्तकों का दान करना तो दूर किन्तु जिन बाबू छेदीलाल और शिवनारायण आर्यसमाज मेरठ के सभासदों ने उनके सत्कार में स्थान, मान, सवारी और खान पान आदि में सैकड़ों रुपये खर्च किये, इतने पर भी एच० पी० मैडम ब्लेवटस्की और एच० एस० करनेल आलकाट साहब ने जो एक पुस्तक उनको दिया था उसके ३०) रु० झट ले लिये और लज्जित भी न हुए। इसके सिवाय सहारनपुर, अमृतसर और लाहौर आदि के आर्यसमाजों ने बहुत सा सत्कार किया वह भी उन्होंने नहीं समझा और स्वामी जी ने भी जहां तक बना इनका उपकार किया। उसको न मान कर व्यर्थ लिखते हैं कि हमने स्वामी जी का बहुत सहाय

---

१ यह विज्ञापन लगभग ३१ मार्च सन् १८८२ को मुम्बई के ओरियण्टल प्रेस में छपा था । यही विज्ञापन पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृष्ठ ८४२–८४४ पर छपा है। पण्डित जी ने इस का उर्दू अनुवाद नहीं किया। फारसी अक्षरों में भाषा मूल समान ही दी गई है। पं० लेखराम जी का पाठ अधिक शुद्ध है । आर्य धर्मेन्द्र जीवन में कुछ शब्द बदले हुए प्रतीत होते हैं । हमें मूल मुद्रित प्रति प्राप्त नहीं हो सकी।

२. सं० १९४२ (सन् १८८५) में मोहनलाल विष्णुलाल पाण्ड्या उपमन्त्री परोपकारिणी सभा द्वारा मुद्रापित **"आवेदन पत्र"** में ऋषि दयानन्द के पुस्तकसंग्रहान्तर्गत संख्या ११६ पर **"थियोसोफिकल सोसाइटी के दोषों का स्वामीजी का उत्तर"** पुस्तिका निर्दिष्ट है, वह सम्भवतः यही विज्ञापन है। यु० मी०।

३. इन सात सौ रुपयों के सम्बन्ध में श्यामजी कृष्ण वर्मा ने २४ फरवरी १८७६ को श्री स्वामी जी के नाम के पत्र में लिखा था। वह पत्र लाहौर में नष्ट हो गया।

किया, परन्तु स्वामी जी कहते हैं कि कुछ भी नहीं और जो किया हो तो प्रसिद्ध क्यों नहीं करते हैं सो कुछ भी प्रकट नहीं करते फिर कौन मान सकता है ?

(४) प्रथम इन्होंने अपने पत्रों में और यहां आकर स्वामी जी और सब के सामने ईश्वर को स्वीकार किया, फिर उस के विरुद्ध मेरठ में स्वामी जी और अनेक भद्र पुरुषों के सामने दोनों ने कहा कि हम दोनों ईश्वर को नहीं मानते। क्या यह पूर्वापर विरोध नहीं है ? तब स्वामी जी ने कहा कि तुम ईश्वर के मानने का खण्डन करो और हम मण्डन करें जो सच हो उस को मान लीजिये तब इन्होंने इस बात को भी स्वीकार न किया।

(५) जब यह आर्यावर्त देश में आने लगे तब एक समाचार पत्र (Indian Spectator) में तारीख २४ जुलाई सन ७८ ईस्वी में छपवाया था कि न हम बुधिष्ट, न हम क्रिश्चियन और न हम ब्राह्मण अर्थात् पुराण मत के मानने वाले हैं, किन्तु हम आर्यसमाजिक हैं। अब इस से विरुद्ध स्पष्ट छपवाया कि हम बहुत वर्षों से बुधिष्ट थे और अब भी हैं। क्या यह कपट और छल की बात नहीं है और जनवरी सन ८० ई० की चिट्ठी से सिद्ध होता है कि वे ईश्वर को मानते थे और आठ महीने पश्चात् उसी सन के अक्टूबर महीने में मेरठ में कहा कि हम दोनों ईश्वर को नहीं मानते। यह उसका छल नहीं तो क्या है ?

(६) यहां आकर प्रथम थियोसोफिकल सोसाइटी को आर्यसमाज की शाखा स्वीकार करके पश्चात् कहा कि मुख्य सोसाइटी न आर्यसमाज की शाखा और न आर्यसमाज मुख्य सोसाइटी की शाखा है। किन्तु जो एक दूसरे वेद की शाखा दोनों के साजे की है, इस से विरुद्ध अब छाप के प्रसिद्ध किया कि हमारी सोसाइटी कभी आर्यसमाज की शाखा नहीं हुई थी और हम आर्यसमाज से बाहर हैं। क्या यह भी उनकी विपरीति लीला नहीं है कि जब उन्हों ने बम्बई में सोसाइटी बनाई थी, उस में स्वामी जी के कहने, सुनने, लिखने बिना उनका नाम अपने मन से सभासदों में लिख लिया था। जब यह प्रथम मेरठ में मूलजी के साथ मिले थे तब स्वामी जी ने कहा था कि बिना हमारे कहे सुने तुमने सोसाइटी में हमारा नाम क्यों लिखा ? जहाँ लिखा हो काट दें। तब करनेल आलकाट साहब ने कहा कि हम इससे आगे ऐसा काम कभी न करेंगे। जहाँ लिखा है वहां से निकाल भी देंगे[1]।

फिर जब काशी में मिले, तब तक उन्होंने सोसाइटी से स्वामी जी का नाम नहीं निकाला था। तब स्वामी जी ने कड़ा पत्र लिखा कि जहां हमारा नाम लिखा हो वहां से शीघ्र निकाल दो[2]। जब इन्हों तार भेजा कि अब हम क्या लिखें तब स्वामी जी ने तार में ही उत्तर दिया कि जैसा हमने प्रथम वैदिकधर्म्म उपदेशक लिखा था, वैसा लिखो। न मैं तुम्हारी वा अन्य सभा का सभासद् हूँ, किन्तु एक वेदमार्ग को छोड़ के किसी का संगी मैं नहीं हूँ। इस पर भी जब वे शिमले में थे, तब ब्लैवस्टकी ने ऐसी असभ्यता की चिट्ठी लिखी कि जिसको कोई सभ्य स्वीकार न करेगा, क्या यह उनको योग्य था। स्वामी जी ने कभी उनको न लिखा था और न कहा था, उस पर भी इन्होंने स्वयं स्वामी जी का नाम लिख लिया था। क्या यह लज्जा की बात नहीं है ?

---

१. इस बात का संकेत पूर्ण संख्या २६६ पृष्ठ २५६ पंक्ति २६–३० में है। यु० मी०।

२. इस का संकेत भी पूर्ण संख्या २६६ पृष्ठ २५६ पंक्ति ३०, ३१ में है। यु० मी०।

(७) जो इन्होंने मेरठ में प्रतिज्ञा की थी कि आज से पीछे आर्यसमाज के सभासदों को अपनी सोसाइटी में भरती होने को कभी न कहेंगे, इसी के दो दिन पीछे जब बाबू छेदीलाल जी अम्बाले तक उनके साथ गये, तब मार्ग में बहुत समझाते गये कि आप हमारी सोसायटी के साथ हूजिये और पत्र शिमले से बाबू जी के पास भेज दिया आप सोसाइटी के सभासद हूजिये।

(८) ऐसी २ छल कपट की बातें देखकर स्वामी जी ने आर्यसमाज मेरठ के वार्षिक उत्सव में व्याख्यान दिया था कि इनकी सोसायटी में किसी वेदानुयायी को सभासद् होने की कुछ आवश्यकता नहीं, क्योंकि जैसे नियम आर्यसमाज के हैं वैसे उनकी सोसाइटी के नहीं। इस पर शिमले से मैडम ब्लैवस्टकी ने असभ्यता और झूठ की भरी हुई चिट्ठी लिखी और स्वामी जी ने भी इसका उत्तर यथायोग्य दिया[1]। इसके पश्चात् स्वामी जी ने विचारा था कि जब हम बम्बई में जावेंगे, तब उनसे सब बातों का खुलासा कर लेंगे, ऐसा ही आर्यसमाज बम्बई चाहता था। जब स्वामी जी बम्बई में पहुँचे, तब बहुत से सभासद् और करनैल आलकाट साहब भी स्टेशन पर आये थे। जब स्वामी जी स्थान पर आ पहुंचे, पश्चात् उन से स्वामी जी की बहुत सी बातें हुईं और स्वामी जी ने यह भी विदित कर दिया कि आप से और भी बहुत विषयों में बातें करनी हैं। तब उक्त साहब ने स्पष्ट उत्तर न दिया। जब कुक साहब[2] के विषय में बात चीत करने के लिये स्वामी जी के पास आये तब भी कहा कि आपका और हमारा विचार हो जाना चाहिये था। तब करनैल आलकाट साहब ने कहा कि हां करेंगे। इस पर भी स्वामी जी ने पानाचन्द आनन्दजी और राव बहादुर पं० गोपालरावहरि देशमुख द्वारा कहलाया कि आप लोग मुझ से बातचीत करने को आवैं, नहीं तो हम को प्रसिद्ध भाषण देना होगा। पानाचन्द आनन्द जी से इन्होंने पूछ के स्वामी जी से कहा कि २७ मार्च ८२[3] को करनैल आलकाट साहब बात चीत करने को आवेंगे, फिर भी न आये। बम्बई से जयपुर पहुंच कर पत्र लिखा कि मैं नहीं आ सका, परन्तु मैडम ब्लैवस्टकी आप से बातचीत कर लेंगी। वह भी नहीं आईं॥

तब स्वामी जी का भाषण आर्यसमाज और थियोसोफिकल सोसायटी के पूर्वापर-विरुद्ध अर्थात् उनकी थियोसोफिकल सोसायटी का पूर्व क्या संबन्ध था अब क्या है, इस विषय पर व्याख्यान कराने के अर्थ आर्यसमाज बम्बई ने एक दिन पूर्व नोटिस छपवा कर प्रसिद्ध कर दिया तो भी मैडम ब्लैवस्टकी ने स्वामी के पास आकर बात चीत न की, तब स्वामी जी ने भाषण दिया[4]।

इस पर अपने थियोसोफिकल पत्र में लिखते हैं कि हम से विना कहे सुने स्वामी जी ने व्याख्यान दिया। क्या यह बात उनकी झूठ नहीं थी। इसमें उनकी चिट्ठियां पढ़ पढ़ाकर सुनाइ कि जिसमें उनका पूर्वापर विरुद्ध व्यवहार प्रकाश किया और यह कहा कि ये लोग कहते हैं कुछ, और करते हैं। कुछ ऐसा कहते हैं कि हम आर्यावर्त देश की उन्नति करने के लिये आये हैं, परन्तु उन्नति के बदले उनके काम अवनति-कारक विदित होते हैं। देखो स्वामी की ने अनेक बार इस बात के करने

---

१. देखो पत्र पूर्ण संख्या २६६। यु० मी०। २. देखो पत्र पूर्ण संख्या ३७६।

३. अतः मार्च के अन्त में यह विज्ञापन छपा। [पूर्ण संख्या ३६६ का पत्र भी देखें। यु० मी०]।

४. २८ मार्च सन् १८८२=चैत्र शुक्ल ६, संवत् १९३६, मंगलवार, ६ बजे सायं व्याख्यान हुआ। यु० मी०।

से रोका कि तुम थियोसोफिस्ट समाचार में भूत, प्रेत पिशाच आदि का होना लिखते हो, यह विद्या के विरुद्ध व असम्भव है और जो बातें विद्या से विरुद्ध हैं उनको मत लिखो, क्योंकि यह समाचार इस देश और यूरोप में भी जाता है। सब लोग जान जायेंगे कि आर्यावर्त देश में ऐसी ही व्यर्थ बातों के मानने वाले हैं। इस बात को अब तक नहीं माना और पूर्व पत्रों में लिखा था कि जो आप उपदेश करेंगे सो हम मानेंगे, क्या इस बात को भी कोई सच कर सकता है।

(९) जो पत्र कुक[१] साहब को लिखा था वह करनैल आलकाट साहब ने अपने हाथ से लिखा था और स्वामी जी ने लिखवाया। इस में (Most divine) अर्थात् कौनसा धर्म अधिक सम्बन्ध ईश्वर से रखता है, यह स्वामी जी के अभिप्राय से विरुद्ध लिखा था। जब उनके गये पश्चात् स्वामी जी ने इस पत्र की नकल बचवाई तो अशुद्ध विदित हुआ, फिर इस पर स्वामी जी के पास करनैल साहब आये और तब वह शब्द कटवा दिया अर्थात् उसके स्थान में ऐसा लिखवाया कि जब आप और मुझ से संवाद होगा तब विदित हो जायगा कि कौन धर्म ईश्वर प्रणीत है और कौन सा नहीं। इतने पर भी उन्होंने वैसा ही अशुद्ध छपवाया। क्या ऐसी बात उनको कर्त्तव्य थी? देखो यह उनकी सोसायटी के नियमों में—"थियोसोफिस्ट अर्थात ईश्वर के मानने वाले, इस सोसायटी में फीस नहीं ली जाती, इस धर्म से कोई धर्म उत्तम न कहना न जानना और सदा क्रिश्चियन धर्म के विरुद्ध रहना चाहिये" जो अजन्मा किसी का बनाया नहीं, जिसने यह सब बनाया है उस ईश्वर को [न] मानना, दस २ रुपये फीस लेना और जिस धर्म का व्याख्यान देते हैं, उसी को सब से उत्तम कहने लग जाते हैं, क्या यह खुशामदी और भाटों की लीला से कम है?

अब विशेष लिखना बुद्धिमानों के सामने आवश्यक नहीं। इतने नमूने ही से सब कोई समझ लेंगे। परन्तु इस पत्र के लिखने का यही प्रयोजन है कि उन की सोसायटी और उनके साथ सम्बन्ध रखने से आर्यावर्त देश और आर्यसमाजों को सिवाय हानि के कुछ लाभ नहीं, क्योंकि इन लोगों का अन्तरीय अभिप्राय क्या है? इस को वे ही जानते होंगे। जो इन का अन्तर ही निष्कपटी होता तो ऐसा पूर्वापर विरुद्ध व्यवहार क्यों करते? जब ये भयङ्कर नास्तिक, वाचाल और स्वार्थी मनुष्य हैं तो आर्यावर्त देश और आर्यसमाजस्थ पुरुषों को उचित है कि इन से सम्बन्ध और देशोन्नति की आशा न रक्खें।

देखो और भी थोड़ा सा उनके प्रपञ्च का नमूना—प्रथम स्वामी जी का नाम लेते थे। जब स्वामी जी उनके जाल में न फंसे तो अब कोट हूमीलाल का नाम लेते हैं कि जिसको न किसी ने देखा और न पूर्व सुना था। जो कभी उसके नाम से स्वार्थ सिद्ध न होगा तो गोत्र कोटहूमीसिंह नाम शायद लेंगे। अब कहते हैं कि वह हमारे पास आता, बातें और चमत्कार दिखलाता है। देखो इनका यह फोटोग्राफ (चित्र) है, चिट्ठियां और पुष्प ऊपर से गिरते हैं, खोई हुई वस्तु निकलती हैं इत्यादि सब बातें उनकी झूठ हैं। क्योंकि दूसरी को तो जाने दो, परन्तु जब प्रथम करनैल साहब मैडम के साथ बम्बई में आये थे, तब कुछ वस्त्र आदि की चोरी हुई थी, उसके लिये बहुत सा यत्न पुलिस आदि से कराया था, उनको क्यों नहीं मंगा लिया? जब अपने पदार्थ न मंगवा सके तो शिमले की बात को सच्ची कौन विद्वान मानेगा।

---

१. इन के नाम का पत्र पूर्ण संख्या ३७६ (पृष्ठ ३०६-३०८) पर देखें।

जब स्वामी जी और मैडम से मेरठ में योग-विषय में बात हुई थी,तब कहा था कि योगशास्त्र और सांख्य की रीति से मैं योग करती हूं; तब स्वामी जी ने उनसे उस शास्त्रोक्त योग की रीति पूछी। तब कुछ भी उत्तर न देसकीं,अर्थात् जैसे बाज़ीगर तमाशा करते हैं उसी प्रकारकी इनकी भी बातें हैं,जो योग को थोड़ा भी करते हैं वह भीतर और बाहर से सरलता का व्यवहार करते हैं न कि छल और कपटयुक्त व्यवहार। जो योगविद्या को कुछ भी जानते तो ईश्वर को न मान कर भयङ्कर नास्तिक क्यों बन जाते। इन के योगविद्या के न जानने में ईश्वर का न मानना ही प्रमाण है। इस लिये यही निश्चय है कि इनकी सोसायटी और उसकी पूर्वापर विरुद्ध बातें विश्वास के योग्य नहीं हैं। इसलिये इनसे पृथक् रहना अति उत्तम है।

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः[१] ॥

[१.] पत्र (३३३) [४०१]

मन्त्री आर्यसमाज आनन्दित रहो[२]।

थियोसोफिकल सोसायटी के विषय में हम ने यह पत्र छपवाया है[३]। तुम को भेजते हैं। तुम उन को छोटी २ समाजों में भेज देना! और जब यह पत्र पहुंचे तो उस का एक व्याख्यान दे दो कि स्वामी जी ने थियोफिसटों से सम्बन्ध विच्छेद कर दिया है।

मार्च मुम्बई

[१.] पत्र (३३४) [४०२]

Bombay 8th April [1882][४]

To

Mr. Nand Kishore Singh,[५]

Dear Sir,

I gladly acknowledge the receipt of your letter of the 4th instant.

---

१. यह विज्ञापन आर्यधर्मेन्द्र-जीवन प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३४८ से ३५२ से लिया गया।

२. यह पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८४२ पर छपा है। यह पत्र थियोंसोफिसटों की गोलमाल पोलपाल के साथ सब आर्यसमाजों को भेजा गया था। २८ से ३१ मार्च तक किस तिथि को छपकर प्रकाशित हुआ।

३. अर्थात् ऊपर वाला विज्ञापन यु०मी०।

४. वैशाख कृष्ण ५ शनि, सं० १९३९। यु० मी०।

५. श्री नन्दकिशोरसिंह जी ठाकुर, मोहन मोहल्ला, काशगंज, संयुक्त प्रान्त के निवासी थे। वे जयपुर कौंसल के मन्त्री रहे। ऋषि दयानन्द सरस्वती से उन का बहुत प्रेम था। पहले उन्होंने महामहोपाध्याय

I am very glad to hear that Pandit Kaloo Ram's visit to that place was crowned with success. I am also delighted to hear that arrangements have been made for the prevention of cow slaughter in Jeypor. I very much wished that such a work would well have been done through the interference of a Raja. You have certainly well planned that no kine (or oxen or she buffalœs) would be exported from your Raja. The best plan which I would like to recommend in addition to yours, would be the following:—A census so to say, of these animals should be made—that all the cows etc., of the kingdom should be counted. So also every new animal that is born (or every one that is died) should be reported to the officer-in-charge of the business. This counting ceremony should be made after every six months or so. The reason of this is that in the night time or so it is not quite impossible for the cattle to be stolen away.

That you have established an "Arya Dharma Sabha" is certainly a very praisworthy undertaking, you have effected. I hope it will have for its object the welfare of the Aryas and and the *Unnati* of their divine and true Vedic religion. I anticipate a great benefit to the country from this Sabha of yours.

The cow affair is rapidly proceeding and with utter success. Here in Bombay two thousands of signatures are being taken in favour of the prevention of the slaughter. We mean to banish cow-slaughter not simply from our native states but we mean to apply to the parliament on that act. For this purpose, we mean to collect signatures of two crorers of people. It is also hoped that the Rajas also will be pleased to advise each other in this matter. Pandit Kaloo Ram ji also deserves a great merit in this respect

As for us we are doing quite well. The work of Veda Bhashya is going on uninterrupted and successfully. The Aryasamajists of Bombay

स्वर्गीय पण्डित शिवदत्त जी की प्रेरणा से हमारे पास पत्रों की प्रतिलिपि भेजी थी। पुनः ४ अक्तूबर १९२८ को काशगंज से अपने निम्नलिखित पत्र के साथ सब मूल पत्र भेज दिये।

"...स्वामी जी महाराज के जितने पत्र मेरे पास थे, वोह सब इस पत्र के साथ भेजता हूँ, स्वीकार कर बाधित करैं और मेरे योग्य सेवा सर्वदा लिखते रहै मेरी याद बनी रहै कि मैं अब इस संसार मैं थोड़े ही दिनों का मेहमान हूं। शुभम् ॥
नन्दकिशोरसिंह"

[इनके नाम का आषाढ़ वदी १० शनि सं० १९४० (=३० जून १८८३) का पत्र और उस की टिप्पणी भी देखें। यु० मी०।]

have bought a large piece of ground for the Samaj building, (for Rs. 6,500). And the necessary fund of money (about 12,000 or 15.000) required for the building is also ready.

We have, separately sent to you 5 printed forms with respect to the prevention of cow-slaughter which you will soon receive. All the rules and sub-rules of the Arya Samaj should be preserved in the Samaj you have successfully established. In conclusion I mean to bless you all. Be giving me the necessary information in time.

From the 5 papers we have sent you will understand our plan throughly. Kindly take the signatures of as many men in your kingdom as you can and keep them with you, We shall require them before long.[१]

[दयानन्द सरस्वती]

[भाषानुवाद]

सेवा में— बम्बई ८ अप्रेल [१८८२][२]

श्री नन्दकिशोर सिंह[३] ।

प्रिय महोदय !

मुझे आपका ४ तारीख का पत्र प्राप्त कर प्रसन्नता हुई । यह सुन कर प्रसन्नता हुई कि पण्डित कालूराम[४] का उस स्थान पर आगमन सफल रहा । मुझे यह जान कर भी प्रसन्नता हुई कि जयपुर में गोवधनिषेध का प्रबन्ध हो गया है । मेरी प्रबल इच्छा थी कि यह कार्य्य किसी राजा द्वारा होता । आपने यह अच्छी योजना बनाई है कि आपके राजा की ओर से गौओं (बैलों या भैंसों) का निर्यात नहीं होगा । आपकी योजना के साथ एक अच्छी सी योजना और जोड़ देना चाहता हूं जो इस प्रकार है—

राज्य की सब गायों आदि की गणना करा दी जाय । प्रत्येक नया पशु जो पैदा हो (या मरे) उसकी सूचना इस कार्य के लिए नियुक्त कर्मचारी के पास भेज दी जाय ।यह गणना प्रति ६ मास ७ मास बाद होनी चाहिए । इस का कारण यह है कि रात्रि आदि में असंभव नहीं कि पशु चुरा लिये जायं । आपने जो 'आर्यधर्मसभा' की स्थापना की है; वह निश्चत ही एक प्रशंसनीय कार्य है । मैं आशा करता हूं कि इस का उद्देश्य आर्यों का कल्याण और उनके ईश्वरीय तथा सत्य वैदिक धर्म की उन्नति होगा । मैं आशा करता हूं कि आपकी इस सभा से देश का बड़ा भारी लाभ होगा ।

---

१. इस पत्र का उर्दू अनुवाद पं० लेखराम कृत जीवन चरित्र पृष्ठ ८७८, ८७९ पर छपा है । [इस संस्करण में हम इस पत्र का भाषानुवाद भी नीचे दे रहे हैं ।] मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

२. वैशाख कृष्ण ५ शनि, सं० १९३९ ।यु० मी० ।

३. पृष्ठ ३२३ की टि० ५ भी देखें । यु० मी० ।

४. श्री पं० कालूराम जी के विषय में पृष्ठ ४० टि० २ देखें । यु० मी० ।

गौओं का मामला बड़ी तेजी से और सफलता से आगे बढ़ रहा है। यहां बम्बई में दो हजार हस्ताक्षर गोवध निषेध के विषय में करवाये जा रहे हैं। हम न केवल देशी राज्यों में ही गोवध बन्द कराना चाहते हैं, अपितु इस कार्य के लिए पार्लियामेण्ट से भी निवेदन करना चाहते हैं। इस कार्य के लिए हम दो करोड़ आदमियों के हस्ताक्षर चाहते हैं। मुझे यह भी आशा है कि राजा लोग परस्पर एक दूसरे को सम्मति देंगे। इस मामले में पण्डित कालूराम जी भी प्रशंसा के पात्र हैं।

जहां तक मेरा सम्बन्ध है, ठीक चल रहा है। वेदभाष्य का कार्य निर्विघ्न और सफलता पूर्वक चल रहा है। बम्बई के आर्यसमाजियों ने समाज-मन्दिर के लिए (६५००) में एक भूमि खरीदी है और मन्दिर के लिऐ अपेक्षित आवश्यक धन की राशि (१२००० से १५०००) भी है।

हमने गोवध निषेध के सम्बन्ध में छपे हुऐ ५ फार्म[१] अलग भेजे हैं जो आप को शीघ्र प्राप्त होंगे। आर्यसमाज के साथ नियम और उपनियम उस आर्यसमाज में सुरक्षित रहने चाहिए जिसकी आपने सफलता पूर्वक स्थापना की है। अन्त में मैं आप सब लोगों को आशीर्वाद देता हूं। ठीक समय पर आवश्यक सूचना देते रहियेगा।

पांच फार्मों[१] से, जो हमने भेजे हैं, आप हमारी योजना पूर्ण रूप से समझ जावेंगे। कृपया अपने राज्य में जितने हस्ताक्षर आप करा सकें कराये और उन्हें अपने पास रखिए, हमें उन की शीघ्र आवश्यकता होगी।

दयानन्द सरस्वती

---

[१९] **पत्र (३३८)** [४०३]

ओ३म्

लाला मूलराज जी एमे आनन्दित रहो।[२]

आपके दो पत्र आये। उत्तर इसीलिये नहीं भेजा कि इस बात का पत्र कोई मसूदा वालों ने हमारे पास नहीं भेजा। अब उनका पत्र आवेगा तो उस बात का जवाब आप को लिखेंगे। और आप जो उस बाबू⋯ ⋯को रखना चाहते हैं परीक्षा करली होगी कि कैसा शील स्वभाव का है। क्योंकि प्रायः⋯⋯ लोगों का स्वभाव तेज और कठोर भक्ष्याभक्ष्य में अनाचरी और लोभी भी होते हैं। और राजवाड़ों में इन बातों का बड़ा विरोध है। अब हम इस विषय का पत्र मसूदा को भेजेंगे। जो हमारे पत्र का उत्तर न आया तो आपके पास कुछ उत्तर न भेजेंगे। पश्चात् जब कभी हम मसूदे को जायंगे तब उसका विचार होगा। आप जानते हैं कि रजवाड़ों का लखोटिया ज्ञान है अर्थात् जब तक अग्नि के सामने रहैं तब तक पिघले रहते हैं। तथापि हम पत्र भेज कर खबर मंगवावेंगे। बड़े भारी शोक की बात है कि आप ने अब तक गोकरुणानिधि की अङ्गरेजी नहीं की। हमने हमें?) निरास होकर यहां मम्बई में और लोगों से अङ्गरेज़ी बनवानी पड़ी। अब आप उसमें कुछ मत बनाना। मालूम होता है कि आप के ऊपर बहुत कुछ बोझ पड़ गया, इस कारण ढीले हो गये। आप के पास गोरक्षा

---

१. गोरक्षा सम्बन्धी दो फार्म पूर्ण संख्या ३८७, ३८८ पर छपे हैं। शेष ३ फार्म कौन से छपवाये थे, यह अज्ञात है। यु० मी०।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

और थियोसोफिष्टों के पूर्वापर विरुद्धाचर[ण] करने के विषय का भी पत्र[1] पहुंचा होगा। अब इनसे सम्बन्ध तोड़ दिया है॥ सबसे हमारा नमस्ते कह दीजियेगा।

मिति वैशाख शुदी ११ शनि सम्वत् १९३९[2]।

मम्बई वालकेश्वर
[द० स०]

[१.]   पत्र (३३८)   [४०४]

लाला जीवनदास जी आनन्दित रहो[3]॥

पत्र आप का आया समाचार विदित हुआ। यहां पारसी खत पढ़ने वाले बहुत कम हैं इङ्गलिश के पाठक बहुत हैं। इस लिये जब कभी लिखें तब नागरी वा इंगरेज़ी में लिखें। इस पत्र का मतलब हम ठीक २ नहीं समझते हैं। जितना समझा है उतने का उत्तर लिखा जाता है। (सूद) शब्द का अर्थ जो रसोई करने वालों का है। यही अर्थ अन्यत्र सूत्रादि में भी है। पाककर्त्ता का कोई दृढ़ निश्चय नहीं हो सकता, क्योंकि पाचक सब वर्णों में होते हैं। अब तो इससे सनातन का व्यवहार ही प्रमाण हो सकता है। जो आप लोगों में यज्ञोपवीत होता और धरावट अर्थात् विधवा को पुनः दूसरे के घर में बैठाना नहीं होता तो शूद्र वर्ण में गणना आप लोगों की नहीं। अब यह विचारना चाहिये कि (सूद) लोग क्षत्रिय हैं अथवा वैश्य। जो राजधर्म राज्य करना आप के पुरुष शौर्यादि गुणयुक्त, युद्ध में कौशल वाले हुए हों तो क्षत्रिय और वैश्य के व्यापारादि कर्म और गुण हों तो वैश्य समझना चाहिये। अब आप लोग ही इस का निश्चय कर लीजिये।

और जो कभी (सूत) शब्द बिगड़ के सूद हो गया हो तो आप अवश्य क्षत्रिय वर्ण हैं। हम ने सुना है कि आज कल बाबू नवीनचन्द्राय लाहौर में हैं और विधवा विवाह में प्रयत्न कर रहे हैं और आर्यसमाज लाहौर भी इस बात में बाबू जी से संमत हो गया है। ये ब्रह्मसमाजी लोग भीतर और तथा बाहिर=और बात रखते हैं। इन का यह भी मतलब होता है कि जैसे हम लोग कृश्चिनों के तुल्य अपमानित हुए हैं वैसे आर्यसमाज भी हो जाय, परन्तु जो अक्षतयोनि अर्थात् जिस का पुरुषके साथ कभी संयोग न हुआ हो उस कन्या के पुनर्विवाह करने में कुछ दोष नहीं, जिस का पुरुष से संमेल हुआ हो उस का नियोग करने में अपराध नहीं। इस से विपरीत करने से शास्त्र से विरुद्ध होने से अब अथवा पश्चात् बहुत कष्ट भोगना पड़ेगा अर्थात् वर्ण बाह्य होना होवे तो भी कुछ संशय नहीं। सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा[4]।

---

१. गोरक्षा सम्बन्धी पूर्ण संख्या ३८७, ३८८। थियोसोफिस्ट सम्बन्धी पू० सं० ४००। यु० मी०।

२. ता० २९ एप्रिल सन् १८८२।

३. यह पत्र महा० मुंशीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृ० ४५८-४५९ पर छपा है। उन्होंने पत्र की प्रतिलिपि से ही छापा था।

४. हमारा अनुमान है कि पत्र मुम्बई से भेजा गया था। वहीं "फारसी खत पढ़ने वाले बहुत कम" थे। प्रतिलिपि पर हस्ताक्षर तथा तिथि नहीं थी।

[१.३] पत्र (३३७) [४०५]

ओ३म्

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो[1]।

विदित हो कि पत्र तुम्हा[रा] आया। समाचार मालूम हुए। थियोसोफिष्टों की गोलमाल पोलपाल पत्र[2] के छपवाने [में] कुछ चिंता नहीं। क्योंकि जो २ उसमें बातें लिखी हैं वे सब सच्ची हैं। अवश्य छपवा दीजिये। जो लाला रामशरणदास ने लिखा है वह ठीक है। छपवाना ही चाहिये। उसमें जो कुछ लिखा गया है वह विचार पूर्वक सच्ची बातें लिखी हैं। जो ऐसा न हो तो हम यहां व्याख्यान क्यों देते[3]। और इसको क्यों छपवाते। छपवाने में कुछ हानि नहीं, किन्तु लाभ ही है। जो यह बात गोलमाल रक्खी जाती तो आर्यावर्त्त में नास्तिक मत फैल जाता। अपने साथ इनने मेल भी इसी प्रयोजन से किया था कि हमारा प्रवेश इस देश में हो जाय। इतना इनमें अच्छा गुण है कि वेद की बड़ाई और ईसाइयों का खण्डन करते हैं। यह भी जो स्थिर रहै तो। जो यह भी कपट हो तो क्या। जो इनका प्रसिद्धि में व्यवहार हैं वह भीतर का नहीं। इनके सम्बन्ध से जो कोई बुरी बात निकलती तो वहुत धक्का आर्य्यसमाज को पहुंचता। और इन लोगों ने कई एक भोले भाले आर्य्यसमाजस्थों को बहका कर अपने सभासद कर लिये। और दश २ रुपये फी लिये। अब इनकी कपटरूपी बातों के प्रसिद्धि होने पर उनकी आंख खुली कि ओहो ये ऐसे निकले अर्थात् विचारों को पश्चात्ताप करना पड़ा। ऐसे ही अन्य लोगों को भी जोकि आर्य्यसमाज में नहीं थे। यही उन लोगों के मुख से बात निकली कि वृथा ही हमारे दश २ रुपये फी देने में गये॥ सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मई ता० १ सन् १८८२ ई०[4]।

[द० स०]

(मम्बई वालकेश्वर गोशाला)

---

[२] पत्र (३३८) [४०६]

ओ३म्

पण्डित दयाराम आनन्दित रहो[5]।

तुमने यह अंग्रेजी चिट्ठी यहां क्यों भेजी, जो कि थियोसोफिष्ट के विषय की थी। और तुमने लिखा है कि मैं भूल गया इसलिये दूसरा रजिष्टर अभी किया। यह क्या बात है? और वह रजष्टर अभी तक नहीं पहुंचा। और आज तक वेदभाष्य और मासिक हिसाब नहीं पहुंचा और यहां मम्बई में सर्वत्र आगया, यह क्या कारण है। भीमसेन से कह देना कि भाषा के पत्र जल्दी भेजदे। सीसा

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में है। उसकी प्रतिलिपि म० मामराज ने दिसम्बर सन् १९२६ में की। फरूखाबाद का इतिहास पृ० १९१ पर भी छपा है। २. पूर्ण संख्या ४०० का। यु० मी०।

३. देखो पूर्ण संख्या ३९६ (पृष्ठ ३१७) का पत्र। यु० मी०।

४. वैशाख शु० १३ सोम, सं० १९३९। यु० मी०।

५. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

सुर्मा स्याही तुम्हारे पास पहुंची वा नहीं ? पहुंच गये हों तो हर्फ ढालके जल्दी काम चलाओ । आर्य पत्र का नोटिस भेजते हैं टाइटल पेज पर छापदो । जितने पत्रे भीमसेन के पास भेजे थे, उन सब की भाषा बन चुकी वा नहीं ।

मिति जेष्ठ बदी ६ सम्वत् १९३९[1] ।

[द० स०]

---

[६] पत्र (३३९) [४०७]

ओ३म्[2]

महाशय रूपसिंह जी योग्य इतः ब्रह्मचारी रामानन्द का अनेकविध शुभाशीर्वाद विदित हो । आप का कुशलपत्र आया, समाचार विदित हुए ।

आपने जो सत्यार्थप्रकाश संस्कारविधि के विषय में लिखा, परन्तु यहां मेरे पास न होने से भेजने में अशक्य हूं । जो छापेखाने प्रयाग में होतीं तो भी मैनेजर दयाराम को लिख कर भेजवा देती और जो उस पुरुष को अत्यावश्यक हो तो आप मेरठ आर्य्यसमाज प्रधान लाला रामशरणदास जा के पास दाम भेज कर पुस्तक मंगवा लीजिये । अनुमान है कि वहां से पुस्तक आप को अवश्य मिल जांयगी । जो आपने गोरक्षार्थ पत्र के बाबत में लिखा सो हम ने जिस समय आपके पास पत्र भेजा था, उसी समय लाहोरादि स्थानों में पत्र भेज दिये थे । ऐसा आर्य्यावर्त्त के भीतर कोई देश बचा हो कि जहां दो चार स्थानों में पत्र न भेजे हों । और जहां २ की यादगारी आती जाती है वहां २ अभी भेजते जाते हैं । इस में कारण यह हुआ है कि डांक वालों ने अनर्थ किया है । जैसा इस विषय में आप का पत्र आया ऐसे ही कई एक महाशयों के पत्र आये कि पत्र पहुंचा, परन्तु गोरक्षार्थ का मेमोरियल[3] नहीं मिला । पुनः उन महाशयों के पास भेजना पड़ा । ईश्वर से ऐसी प्रार्थना करता हूं कि इस महोपकार कार्य करने में आप को अत्यन्त सहायता मिले और जो पत्रों की आपको आवश्यकता पड़े तो लिखना, भेज दूंगा । मैं एक बात आप से कहता हूं कि जो आप प्रसन्नता से स्वीकार करें तो । क्या जैसे आप पहिले घूमने के वास्ते दो मास की छुट्टी ले कर आये थे ऐसे ही आप पुनः दो एक मास की छुट्टी लेकर पंजाब हाथा, पटियाला और काश्मीर आदि अच्छे २ राजस्थानों में गोवध के नुकसान व्याख्यान द्वारा विदित कर, बड़े २ प्रधान राज पुरुष तथा राजा महाराजों की सही करावें तो बस आप आर्य्यावर्त्त में सर्वोत्तम प्रतिष्ठा और महापुण्य के भागी होंगे । यह लेख मैंने आपकी योग्यता समझ के लिखा । आशा है कि आप अपनी योग्यता को सफल करेंगे ॥ किमधिकलेखेन बुद्धिमद्वर्य्येषु ॥ अब १५ वा २० दिन में श्रीयुत स्वामी जी यात्रा करेंगे । विशेष समाचार फिर लिखूंगा ॥

---

१. ६ मई १८८२ ।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

३. पूर्ण संख्या ३८७, ३८८ । यु० मी० ।

आपका अभिवादन परम गुरु स्वामी जी को विदित कर दिया। श्री स्वामी का शुभाशीर्वाद आपको विदित हो ॥ भद्रमस्तु ॥

ज्येष्ठ वदी ९ शुक्रं सम्वत् १९३८[1] ॥

ब्रह्मचारी रामानन्द

---

[४] पत्र (३४०) [४०८]

ओ३म्

पण्डित सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो[2] !

विदित हो कि सीसा स्याही आदि दो तीन दिन हुए हैं रमाना हो गये। आज बिल्टी भी रमाना हो गई। उनसे जैसे अक्षर आपको चाहियें। वैसे ढलवा कर जल्दी काम चलाइये। श्याही बहुत सी भेजी है, तुम को आठ दश महीने को बहुत होगी। जो तुमने ज्वालाप्रसाद के विषयमें लिखा सो ठीक है। उसको बुलाकर काम सिखलादो और भीमसेन से कहो कि व्याकरण की पुस्तक शीघ्र लिखकर शुद्ध कर तैयार कर दे। लाहोर ८। ३। १८८२ ई० निम्नलिखित पुस्तक लाला बल्लभदास के पास से वैदिक यन्त्रालय प्रयाग में पहुंची। ता० १९ फरवरी सन् १८८१ को सन्दूक नग ३ में पुस्तकें बन्द करके लाहोर से मारफत रेल रवाना किया। महसूल बेरंग था। उसमें इस भांति पुस्तकें भेजी गई—

३८ जिल्द आर्याभिविनय
३० ,, वेदविरुद्धमतखंडन
३१ ,, शिक्षापत्रीध्वान्तनि०
१० ,, वेदान्तध्वान्तिनिवारण
१३११ ,, सन्ध्या भाष्य अर्थात् पंच०
२५१ ,, पोपलीला[3]
१३६ ,, जालन्धर की बहस[4]
१९ ,, वेदभाष्यभूमिका इस भांति अंक

०	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१३	१४	१५–१६
३	१	१	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१	२

१८५ ,, ऋग्वेद अंक

१	२	३	४	५	६
२८	३०	३२	३१	३१	३३

१८९ ,, यजुर्वेद अंक

१	२	३	४	५	६
३१	३३	२८	३१	३३	३३

---

१. संवत् १९३८ गुजराती है। संवत् १९३९ चाहिये। १२ मई १८८२। परन्तु उस दिन ज्येष्ठ वदी १० है। इस पत्र का लिफाफा १६ मई को कोहाट पहुंचा। उस पर ऐसी ही मोहर है।

२. मूल पत्र परोपकारिणी सभा में सुरक्षित है।

३. इस के लिये हमारा "ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास" परिशिष्ट ५, पृ० ८२-८४ देखें। यु० मी०।

४. देखो ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास पृ० १८३। यु० मी०।

३४३५ ,, आर्योद्देश्यरत्नमाला
२८ ,, सत्यार्थप्रकाश
२० ,, सत्यासत्यविचार[1]
और बहियां हिसाब की और हिसाब
ता० १३ मई सन् १८८२ ई०[2]

यजुर्वेद के भाषा के पत्रे, यजुर्वेद अंक, गोकरुणानिधि और मासिक हिसाब पहुंचा ।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[८] पत्र (३४१) [४०९]

ओ३म

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[3] ।

पत्र आप का आया, समाचार विदित हुआ। हम बहुत आनंद में हैं। आशा है कि आप लोग भी आनन्द में होंगे। यहां से हमारा विचार ज्येष्ठ शुदी पौर्णमासी के पश्चात् और आषाढ़ वदी ३० के पूर्व २ इन्दोर की ओर यात्रा करने का है। क्योंकि महाराजे इन्दोर ने मुझ को बुलाने इन्दोर से तार भेजा था। इस समय वे पहाड़ को गये। १५ वा २० दिन में इन्दोर में आ जायंगे । तब तक हम भी पहुंचेंगे। वहां से आँब भेजने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि यहां मम्बई में आपुस और पारी संज्ञक आंब बहुत उत्तम होते हैं। जो न होते तो वहां से आना अवश्य होता। यहां डेढ महीने से आंब खाया करते हैं। आज आंबरस भी बहुत सा बना ।

लाला कालीचरण से कह दीजिगेगा कि अगले महीने में भा० सु० प्र० का नोटिस[4] वेद-भाष्य पर छप जायगा ॥

सब से हमारा आशीर्वाद कह दीजियेगा ॥

ज्येष्ठ शुदी ६ मंगल सम्वत् १९३९[5] ।

[द० स०] (मम्बई)

---

[२] पत्र (३४२) [४१०]

ओ३म्

बाबू नन्दकिशोरसिंह जी आनन्दित रहो[6] —

पत्र तुम्हारा आया, समाचार विदित हुए। जो वहां शास्त्रार्थ विषय में लिखा सो आप निश्चय

---

१. लीलाधर हरिदास ठक्कर बम्बई निवासी कृत। देखो हमारा ऋ० द० ग्रन्थेतिहास परिशिष्ट ५ पृष्ठ ८४, ८५। यु० मी०।

२. ज्येष्ठ कृष्ण ११ शनि, सं० १९३९। यु० मी०।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में है। इस की प्रतिलिपि दिसम्बर सन् २६ में म० मामराज ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २१९ पर भी छपा है।

४. देखो पूर्ण संख्या ४११ (पृष्ठ ३३३)। यु० मी०। ५. २३ मई सन् १८८२ मंगलवार।

६. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। श्री स्वामी जी ने लाल रंग से कहीं २ शोधा है।

जानों वे हम से शास्त्रार्थ सन्मुख आके कभी न करेंगे। देखो दो तीन बार हम जयपुर में आये और प्रसिद्धि भी कर दी कि जिस पंडित का जिस २ विषय में शास्त्रार्थ करना हो सो सम्मुख आकर करे। परन्तु कोई भी न आया, न किसी ने शास्त्रार्थ किया। अब रहा वहां आने का, उस की यह बात है कि जो श्रीमान् महाराजा जी के हस्ताक्षर का पत्र आवेगा तो आना हो सकता है अथवा वहां जो सब में अधिक विद्वान् हो उस का रेल खर्च देकर और दो एक अच्छे उत्तम पुरुष पक्षपात रहित हों साक्षी के वास्ते जहां हम हों वहां लेकर चले आइये अथवा जहां होंगे वहां से ही अच्छे योग्य पुरुषों को साक्षी कर के जो २ शास्त्रार्थ की बातें होंगी वे सब लिखी जायंगी। पुनः पत्र द्वारा श्रीमान् महाराजा जी को विदित कर दिई जायंगी और छपवा कर भी प्रसिद्ध भी होंगी। जिससे सब लोगों को सत्यासत्य विदित हो जाय। यह राजाओं का मुख्य धर्म है कि शास्त्रार्थ कर कराके सत्यासत्य का निश्चय करना औरों को कराना। देखो बड़े शोक की बात है कि जयपुर में अनेक गिरजाघर बन गये और पादरी लोग राम कृष्णादि भद्र पुरुषों की निरन्तर निंदा करते हैं और सैकड़हों को बहका कर भ्रष्ट कर रहे हैं। उनके हटाने को पण्डित वा राजा आदि राजपुरुषों ने कुछ भी प्रयत्न न किया। और जो आप लोगों ने सत्य वेद धर्म की उन्नति होने के वास्ते समाज स्थापित किया है उसकी उन्नति होने में पण्डित आदि विघ्नकर्त्ता होते हैं। इतने ही से तुम समझ लो कि ये क्या शास्त्रार्थ करेंगे सिवाय परोक्ष में गाल बजाने के। जो कोई तुम से शास्त्रार्थ करने की बात कहे उसको तुम इतना ही उत्तर दो कि लो खर्च आने जाने का हम देते हैं, चलो हमारे साथ स्वामी जी के पास शास्त्रार्थ करने को, अथवा तुम राजा जी से प्रबन्ध कराओ स्वामी जी के बुलाने के वास्ते, हमारे बुलाने से तो आ नहीं सकते। किसी प्रधान पुरुष वा रा[जा] जी की संमति से बुलाइये और शास्त्र[ार्थ] कर सत्य का प्रतिपादन और असत्य का खण्डन कीजिये। हम तो इस में बहुत प्रसन्न हैं, जो कोई स्वामी से शास्त्रार्थ करें तो, क्योंकि हम को भी मालूम हो जायगा कि क्या सत्य है और क्या झूठ ॥

आप भद्र पुरुष लोग इस वेदोक्त सत्यधर्म के विषय में उत्साह पूर्वक दृढ़ निश्चित रहेंगे तो इस समाज की उन्नति करके संसार को फायदा पहुँचा सकोगे, अन्यथा वहां उन्नति को प्राप्त हो कर फल प्राप्ति पर्य्यन्त पहुँचना कठिन है। क्योंकि वहां बड़े २ धूर्त लोग हैं। तथापि जो मूर्ख लोग अपनी बुराई को नहीं छोड़ते तो बुद्धिमान् धर्मात्मा लोग अपनी धर्मात्मता को क्यों छोड़ कर दुःख सागर में पड़ें। देखिये—

(निंदन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु, लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगांतरे वा न्याय्यात् पथः प्रविचलंति पदं न धीराः) ॥

यह कवि का श्लोक है विचार लीजिये।

मि० ज्यै० शु० १४ बुध सं० १९३९।[१]

[दयानन्द सरस्वती]

---

१. ३१ मई १८८२। मुम्बई से जयपुर भेजा गया। यु० मी०।

[३४] **विज्ञापन**[1] [४११]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि एक भारतसुदशाप्रवर्त्तक नाम का पत्र सनातन वेदोक्त धर्म विषयक व्याख्यान नाटक तथा सत्योपदेशों से सुभूषित हो के प्रतिमास निकलता है जिस किसी को उस के ग्रहण की इच्छा हो वह लाला कालीचरण रामचरण मंत्री आर्य्यसमाज फर्रुखाबाद के पास लिख के मंगवा लेवें उस का वार्षिक मूल्य बहुत कम है अग्रिम १≡) डाक व्यय समेत पश्चात् देने से २≡) हैं और इतने पर भी विशेष यह है कि जो कुछ बचता है वह संस्कृत और देश की उन्नति में लगाया जाता है ॥

(ह० दयानन्द सरस्वती)

---

[३] **गुजराती पत्र (३४३)** [४१२]

ओ३म्[2]

आर्यसमाज मुंबई
ता० ५ मी जून १८८२[3]

मित्रवर ठाकोरदास मूलराज जोग मुंबई

यत आपे जे जेठ सूद १५[4] ने दीने श्रीमत् पंडित दयानन्द सरस्वती स्वामी ने पोस्ट काड लख्यो हतो तेना प्रत्युत्तरमां जणाववामां आवेछे के जो कोई आपना मतनो ज्ञाता तथा धर्मोपदेशक विद्वान् प्रतिज्ञा पूर्वक नियम थी शास्त्रार्थ करवाने तत्पर होय तो स्वामी जी ने शास्त्रार्थ करवाने कोई पण प्रकारे अडचण न थी, मात्र व्यवस्था घटती रेहेवी जोइये, तेथी आपनी जो सत्यासत्य निर्णय करावबानी इच्छा होय तो आपना मतनो कोई विद्वान माननीय धर्मोपदेशक साथे नक्की करी महने लखी जणावशो तो हमें तूर्त घटती व्यवस्था करी आपने विदित करशुं, परंतु ए बाबत ढील न थवी जोइए केम के स्वामी जी थोड़ा दाहाडामां जनार छेत गयवाद सघलो श्रम व्यर्थ जशे तेथी त्रण दिवसनी अंदर कृपाकरी लखी मोकलशो अने जो ए प्रकारे करवानी आपनी इच्छा न होय तो हमारे आपने दलगिरी साथे लखवुं पडेछे के स्वामी जी जे एने मली खुलासो लेवा आवेछे तेनी सांजना ५ थी ९ वागता सुधो प्रतिदिन मुलाकात लेयछे, त्यां जो आप जवा चाहो तो कृपाकरी महने लखी जणावशो तों हुं पणते वखते हाजर रहीश, हालतो अेज विनति।

हुं छु आपनों सेवक
सेवकलाल करसनदास
मंत्री आर्यसमाज मुंबई
जगजीवन कीका स्ट्रीट घर नंबर ६१

---

१. यह विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य अंक ३८, ३९ (सम्मिलित) ज्येष्ठ शुक्ल १४ सं० १९३९ (३१ मई १८८२) टाइटल पेज ४ पर छपा है। पू० सं० ४०६ के पत्र में भी इसका उल्लेख है। यु० मी०।

२. दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका, प्रथम भाग पृ० ४०-४१।

३. आषाढ़ कृ० ४ सोम सं० १९३९। यु० मी०।

४. १ जून १८८२। यु० मी०।

[१४] पत्र (३४४) [४१.३]

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो[१]।

फर्रुखाबाद

विदित हो कि प्रयाग में दयाराम मैनेजर हैं। उसने अकेले से काम बहुत होने के कारण से ठीक नहीं चल सकता। इस लिये पंडत सुन्दरलाल जी लिखते हैं कि द० रा० के पास एक सहायक और रखना चाहिये। इस लिये आपको लिखते हैं कि एक प्रामाणिक पुरुष तीन भाषा जानने वाला कि जिस का आप को बड़ा विश्वास हो वहां भेजें। ऐसा पुरुष तलाश करके आप हमको और पंडित सुन्दरलाल जी को भी [इस] विषय में लिखें। उसका मासिक १५) रु० वा २०) रु० वा जितना आप योग्य समझें करें। परन्तु काम बहुत ठीक होना चाहिये। पंडित सुन्दरलाल जी अन्डमान एक मास तक ब्रह्मा के मुल्क को जाने वाले हैं। इसलिये उनके सामने ही उस पुरुष का वहां पहुंच जाना चाहिये। वह पुरुष सदैव के लिये वहां रहना चाहिए। यह नहीं कि थोड़े दिन के लिये रहे। आपका समाज प्रयाग से निकट है। इस लिये आप लोगों में से कोई २ मा[स द]ो मास से प्रयाग जाकर देख आया करें तो ठीक प्रबन्ध रहे। परन्तु वहां जाना पं० सुन्दरलाल जी न हों तब जाना चाहिये। और जब वे हों तब कुच्छ जरूरत नहीं। सब से हमारा अशीर्वाद कहना। पत्र का उत्तर शीघ्र देना चाहिये।[२]

हस्ताक्षर

ता० ९ जून स० १८८२[३]। [दयानन्द सरस्वती]

मम्बई बालकेश्वर

———

[५] पत्र (३४५) [४१.४]

ओ३म्

पंडित सुन्दरलाल जी आनन्दित रहो[४]।

प्रयाग

विदित हो कि हम यहां से ता० १४ जून बुधवार[५] दिन सायंकाल यहां से रेल में बैठ कर बृहस्पति के दिन अनुमान १० बजे खंडवे पहुंचेंगे। अब पीछे पत्रि आदि खंडवे को भेजा करें। दूसरे मैनेजर के लिये हमने फरूखाबाद को लिख दिया है[६]। उत्तर जैसा आवेगा वैसा आप को लिखेंगे। 'अन्वयार्थ' को छपे बहुत दिन होगये हैं परन्तु उसका विज्ञापन वेदभाष्य [पर] अभी तक नहीं दिया गया है सो यह दयाराम की कितनी भूल है। अब तत्काल दिलवावो। हमने भीमसेन के शोधे भये

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में है। दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने इस की प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १६२ पर भी कुछ पाठ भेद के साथ छापा है।

२. पत्र के नीचे कुछ पंक्तियां समर्थदानजी ने अपनी ओर से लिख दी हैं।

३. आषाढ़ कृष्ण ८, शुक्र सं० १९३९।

४. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेरमें सुरक्षित है। इस पत्र का कुछ भाग दयानन्दग्रन्थमाला शताब्दी संस्करण की भूमिका पृष्ठ १८ पर भी छपा है।

५. आषाढ़ कृष्ण १४ सं० १९३९। अगले पूर्ण सं० ४१७ पृष्ठ ३३७ की टिप्पणी देखो। यु०मी०।

६. देखो पूर्ण संख्या ४१३। यु० मी०।

पुस्तक देखे तो बहुत भूल निकलती है। इससे ज्ञात होता है कि वह बड़ा गाफिल है। अब पीछे आप उसका मासिक पूरा प्रतिमास न दिया करें कुछ न्यून दिया करें अर्थात् दश वीश रुपये अपने में उसके रखने चाहिये। जिससे कि वह काम अच्छा किया करे। नीचे लिखे नाम के छः रुपयों की रसीद छाप देना गत वर्ष की:—

कवि कृश्नाराम इच्छाराम ग्राम "खरसाज" जिला सूरत ६)

नीचे लिखे धर्मार्थ छाप दो।

चोधरी जालिमसिंह ग्राम रुपधनी जिला एटा २०)

बोहरा अमरचन्द ग्राम रुपधनी जिला एटा २०)

पत्रादि सब खंडवे को भेजना।

हस्ताक्षर

ता० ११ जून सं० १८८२[1]। [दयानन्द सरस्वती]

मुम्बई बालकेश्वर

आज कल वर्षा यहां अत्यन्त होती है। जो वक्त तारीख को चलना न हुआ तो दूसरा पत्र बुधवार के दिन आपको देंगे[2]।

---

[१९] पत्र (३४६) [४१९]

ओ३म्

लाला कालीचरण जी मंत्र[ी] व रईस आनन्दित रहो[3]।

विदित हो कि एक पत्र [आप] को पहले दिया था[4]। उसमें प्रयाग में छापैखाने में मैनेजर रखने के लिए आप को लिखा था। परन्तु पीछे से यह नि[श्च]य ठहरा कि वहां समर्थदान को भेजना चाहिये। समर्थदान यहां हैं। सो यहां से प्रयाग को चले जांयगे। ये प्रयाग को मास डेढ मास तक जा[वेंगे]। इनका यह काम किया हुआ है। इनको इस काम में तजरबा हो चुका है। ये काम अच्छा चलावेंगे। इस लिये इनसे पक्काई करली है। सो अ[ब] आप मैनेजर के तलाश करने में परिश्रम न करें। जो इन से पक्काई न होती तो आप को परिश्रम करना पड़ता।

आर्य्यदर्पण में जो जगन्नाथदास ने लिखा है उसका उत्तर आप बहुत उत्तम रीति से लिखें। कुछ दबना मत। खूब टुकड़े टुकड़े उड़ादो। ऐसा न हो[गा] तो वे लोग बंध न होंगे। वह लेख केवल जगन्नाथदास का ही नहीं है। उसमें इन्द्रमणी को भी शामिल समझना चाहिये। [मु]सलमानों के

---

१. आषाढ़ कृष्ण ११ रवि० सं० १९३९ ॥

२. प्रतीत होता है श्री स्वामी जी १४ जून बुधवार को मुम्बई से नहीं चले। ला० ठाकुरदास ने ठीक १३ जून को उन्हें नोटिस दिलवाया। उसी का उत्तर १६ को श्री स्वामी जी के वकीलों ने दिया। वह उत्तर पूर्ण संख्या ४१७ (पृष्ठ ३३७-३३८) पर देखें।

३. मूल पत्र आ० स० फरुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि १८ दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज जी ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १९३ पर कुछ पाठभेद के साथ छपा है।

४. सं० ४१३ पृ० ३३४। यु० मी०।

मुकद्दमे में सहायार्थ रुपया आया था उसमें इन्द्रमणि ने क्या २ लीला की। सो तो आपको [वि]दित ही है। फिर ऐसे का क्या लिहाज़ रखना। बराबर लिखना चाहिये[1]।

हस्ताक्षर

ता० १४ जून १८८२[2]। } दयानन्द सरस्वती
मुंबई

---

[१९] पत्र (३४७) [४१९]

अ[ोम्][3]

लाला कालीचरण जी आनन्दित रहो।

लेखनीय यह है कि लाला रामचरण जी के पुत्र के देहान्त होने का हमको समाचार मिला। सो यह गृहस्थ लोगों को वास्तव में शोक का कारण है। परन्तु आप लो[ग] बुद्धिमान हैं सो धैर्य्यावलम्बन करें। क्योंकि विद्या ऐसे शोक के समय में धैर्य्यावलम्बन कराने वाली है। सुख में तो मूर्ख और विद्वान स[भी] आनन्दित रहा करते हैं। परन्तु दुःख में तो विद्वान् ही धैर्य्यावलम्बन करके शोकाकुल नहीं होते। विद्या का फल सच पूछो तो यही है। अब आप लोग सब घर के धीरजता धारण करके शोक निवृत्त करें। क्योंकि शोकाकुल रहने से अनेक प्रकार की हानियां होती हैं।

जगन्नाथदास की प्रश्नोत्तरी का खण्डन बहुत दिन हुए हम आपके पास भेज चुके हैं। उसके भेजे पीछे भा० सु० प्र० के दो अंक निकल चुके हैं। परन्तु आप ने उसको छापा नहीं। अब आप उस को शीघ्र ही छाप दें। क्योंकि ऐसे काम में ढील करने से बड़ी हानि होती है। क्योंकि पाखण्डिओं को तो होसला होता जाता है और आर्य्य लोगों के चित्तों में भ्रम का संचार होने लगता है। इस लिये आप अब इसके छापने में ढील न करें।

आप को विदित ही है कि देखो इन्द्रमणि ने उपकार का कैसा प्रत्युपकार किया है। अब देखो तो ऐसे २ नामांकित पुरुषों की ही यह दशा है तो अन्य साधारण की क्या कथा है।

हस्ताक्षर

ता० १६ जून[4] } दयानन्दसरस्वती
स० १८८२ मुम्बई

---

१. मूल पत्र के जीर्ण होने के कारण कोष्ठगत पाठ फट चुके थे।

२. आषाढ़ कृष्ण १४ बुध, सं० १९३९। यु० मी०।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज जी ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १९३ पर भी थोड़े से पाठभेद के साथ छपा है। मूल पत्र के जीर्ण होने के कारण कोष्ठगत पाठ फट चुके थे।

४. आषाढ़ शुक्ल १, शुक्रवार सं० १९३९। यु० मी०।

[४] पत्र (३४८) [४१७]

Bombay 19th June 1882.[१]

To

Messrs Smith & Frere,

Attorneys for Lala Thakar Das Moolraj[२]

Dear Sir,

Your letter of the 13th[३] instant addressed to Pandit Dayanand Suruswatee Swami has been placed in our hands and in reply we are instructed to state that the Slokes referred to by you are believed to be by our client extracts from works published by persons of great reputation among the Jains and to contain the principles of tenets of the Jain religion as propounded by several Jain philosophers.

These philosophers have no doubt differed from one another and our client in these extracts had no other intention than that of giving a general idea of the tenets of the Jain religion as propounded by their several philosophers. Our client emphatically denies that in making these extracts he had any intention of wounding and offending the religious feelings of any portion of the followers of the Jain religion.

Our client is actuated by no other desire than to seek the truth and if your client or any other persen satisfies our client that any portion of the extracts is improperly taken or is opposed to the principles of the Jain religion our client will have no objection whatever to have such portions expunged from the 2nd edition which the publisher Raja Jay-Krishnadas, C.S.I., of Mooradabad intends to publish.

Our client desires yours to refer to the notice published at the commencement of the 'Satyarth Prakash' by the publisher in which he states the objects of the publication and accepts the whole responsibility in respect of the book. The further sale and publication of the book are entirely under the control of the publisher.

Yours truly,

(Signed) PAYNE & GILBERT.

---

१. आषाढ़ शुक्ल ४ सोम, सं० १९३९। यु० मी०।

२. दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका, प्रथम भाग पृष्ठ ४४–४६ पर मुद्रित।

३. पूर्व पत्र (पूर्ण संख्या ४१४) के अनुसार स्वामी जी १४ जून को बम्बई से नहीं चले। इसी नोटिस रूपी उत्तर दिलाने के कारण पीछे चले।

[भाषानुवाद]

बम्बई १९ जून १८८२[१]

सेवा में

श्री स्मिथ और फ्रेयर

लाला ठाकुरदास मूलराज के मुख्तियार

प्रिय महोदय,

पण्डित दयानन्द सरस्वती स्वामी के पते से भेजा हुआ १३ जून का पत्र हमें प्राप्त हुआ। हमें उत्तर में यह कहने के लिए आदेश दिया गया है कि मेरे मोअक्किल का विश्वास है कि जिन श्लोकों विषय में आपने पूछा है वे जैनियों में सुप्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा प्रकाशित ग्रन्थों में से लिये गये हैं। और उनमें जैनमत के सिद्धान्त हैं, जैसा कि अनेक जैन दार्शनिकों ने प्रतिपादित किया है।

वे दार्शनिक निःसन्देह परस्पर मतभेद रखते हैं और हमारे मोअक्किल को इन उद्धरणों से अनेक दार्शनिकों द्वारा प्रतिपादित जैन धर्म के सिद्धान्तों के सामान्य परिचय देने के अतिरिक्त और कुछ अभीष्ट न था। हमारा मोअक्किल दृढ़ता पूर्वक इस बात से इन्कार कर रहा है कि इन उद्धरणों से उसे जैन धर्म के कुछ अनुयायियों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाना अभीष्ट था।

हमारा मोअक्किल सत्यान्वेषण से भिन्न किसी अन्य भावना से प्रेरित नहीं है। यदि आप का मोअक्किल या कोई अन्य पुरुष हमारे मोअक्किल को सन्तुष्ट करदे कि उद्धरण का कोई भाग अनुचित रूप से लिया गया है या जैन धर्म के सिद्धान्तों के विरुद्ध है तो हमारे मोअक्किल को उसमें कोई आपत्ति न होगी कि वह दूसरे संस्करण से जिसे प्रकाशक मुरादाबाद निवासी राजा जयकृष्णदास सी० एस० आई० प्रकाशित करना चाहते हैं ऐसे भागों को निकलवा दें।

हमारा मोअक्किल तुम्हारे मोअक्किल का ध्यान इस सूचना की ओर आकृष्ट करना चाहता है जो प्रकाशक ने सत्यार्थप्रकाश के आरम्भ में प्रकाशित कराई है जिस में वह प्रकाशक का उद्देश्य बतलाता है और पुस्तक के सम्बन्ध में सारा उत्तरदायित्व स्वीकार करता है। पुस्तक का आगामी विक्रय और प्रकाशन पूर्णरूप से प्रकाशक के अधिकार में है।

आपके

(हस्ताक्षर) पेन और गिलबर्ट

———

[१७] पत्र (३४९) [४१.८]

लाला[२] कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि हम सुख पूर्वक मम्बई से खंडुआ में आ गये हैं। यहां रा० रा० भाऊ दादा जी के बागीचे में ठहरे हैं[२]। हमने दश महीने का पंडितों के जमा खर्च का हिसाब लाला मोहनलाल

---

१. आषाढ़ शुक्ल ४ सोम, सं० १९३७। पृष्ठ ३३७ की टि० २, ३ भी देखें। यु० मी०।

२. २—२ तक का अंश पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५३८ पर उद्धृत है।

को दे दिया है। और २००) रुपये उनसे पंडितों के मध्ये लिये हैं। १४) रुपये पिछले बाकी रहे थे। सब मिलके २१४) रुपये हुए। उन में से १६०) रुपये पंडितों के मध्ये खर्च हुए। शेष ५४) रुपये रहे सो वहां लाला निर्भयराम जी के पास जमा खर्च करा देना। अनुमान है कि वह कागज भी आप के पास पहुँच गया होगा। आर्य्य प्रश्नोत्तरी को शांति के साथ इस महीने में छाप के प्रसिद्ध कर देना। उस ही के साथ आर्य्यदर्पण का उत्तर भी छाप देना॥ सब से आशीर्वाद कह देना॥ शुभमिति।

ता० २५ जून सन् १८८२ ई०[1]।

[दयानन्द सरस्वती] (खंडुआ[2])

---

[१] **पत्र-सूचना (३५०)** [४१९]

३ जुलाई १८८२ खण्डुआ[3]।

---

[२७] **पत्र (३५१)** [४२०]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो[4]।

विदित हो कि पंडित सुन्दरलाल जी जो अपनी ओर से रामनारायण वा तुम्हारे साथ प्रबन्ध कर जायेंगे तो अच्छा होगा अथवा जैसी उनकी इच्छा हो चाहे पत्र द्वारा छापाखाने का प्रबन्ध रखें वा किसी मनुष्य के द्वारा। जब तुम को अपने हाथ से कुंजी सोंप गये तो निश्चय होता है कि तुम्हारा विश्वास उनको है। अच्छा तुम जानों वे जानें। उनकी ओर से रामनारायण सहायक रहेगा। तुम अपनी ओर से चेतन रहना। और जो कुछ वहाँ विशेष व्यवस्था होगी उसको विशेश्वरसिंह जना देगा। जो इस समय भीमसेन वा ज्वालादत्त को सोंप जाते तो उन से कभी प्रबन्ध होना सम्भव नहीं था। अच्छा हुआ जो तुमको सोंप गए। अनुमान है कि जो दयाराम को लेजायेंगे तो २ वा ३ महीने में दयाराम लौट आवेगा। पंडित जी कहते हैं कि पत्र द्वारा हम यथायोग प्रबन्ध रखेंगे। यह भी ठीक है। जो तुम को प्रधान करना चाहते ठीक है तुम प्रधान हो जाओ। वहां वेद भाष्य के डेढ़ अंक के ऋग्वेद के पत्रे वहां हैं क्योंकि हम यहां मन्त्र और पत्रों की संख्या रखते हैं। केवल बैठा रहने के वास्ते जल्दी २ छाप कर पत्रों का तकादा किया करता है। और व्याकरण के पुस्तक अभी तक तैयार नहीं किये। अब भीमसैन से कह देना कि १० दिन के पश्चात् तुम को स्वामी जी के पास रतलाम में जाना

---

१. आषाढ़ शुक्ल ६ रविवार सं० १६३६। लिफाफे पर २६ जून की मोहर है।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। इसकी प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १६२६ में म० मामराज जी ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० १६५ पर भी छपा है। हम ने सारा पत्र मूल पत्र से छापा है।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५३८ पर इतनी ही सूचना है। पूर्ण संख्या ४१५ (जून १४) के पत्र में लिखा है कि मुंशी समर्थदान को वैदिक प्रेस प्रयाग में भेजने की पकाई की। यह पत्र प्रयाग को भेजा गया। [सम्भव है यह पत्र सूचना अगले पूर्ण संख्या ४२० वाले पत्र के विषय में ही हो, वह भी ३ जुलाई का ही है।]

४. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

होगा। चाहे घर होकर जाओ चाहे इधर ही से। क्योंकि जो हमारे पास रतलाम में आवेगा तो फिर उदयपुर की ओर जाने में उसको सुवीता पड़ेगा, अन्यथा २० कोश पैदल आना पड़ेगा। और उधर भीलों का भी भय है। अब वहां दो पंडित का रहना उचित नहीं। जो वहाँ रहेगा उसको यथेष्ट प्रूफ सोधना और ५ मंत्रों से कम भाषा कभी न बनेगी और जो अधिक बनावेगा उसकी योग्यता विदित होगी। अब जब तक हमारी दूसरी चिट्ठी न आवे तब तक चिट्ठी पत्र न भेजना।

ता० ३ जुलाई सन् १८८२ [दयानन्द सरस्वती]
श्रावण कृष्ण[1] २ चन्द्रवार सं० १९३९।

———

[२] पत्र (३५२) [४२१]

ओम्[2]

स्वस्ति श्रीमदनवद्यगुणगणाऽलंकृतेभ्यः श्रीयुतमहाराजाधिराजभ्यो धीरवीर श्री नाहरसिंह-वर्मभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्, शमत्रास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमेधमानमाशासे श्रीमान् महाशयों का गोकरुणायुक्त रजष्ट्री पत्र खंडुवा में पहुंचा। देख कर अति आनन्द प्राप्त हुआ। धन्य है महाशयों को कि जिनका तन मन धन सब परोपकारार्थ है। आप के सदृश आप ही हैं। महाशयों के सामने विशेष लिखना आवश्यक नहीं जो कि स्वल्प लेख से बहुत जान लेते हैं। वेदभाष्य के कार्य रहने से श्रीमानों के पास पत्र न भेज सका। जब इधर की ओर आना होगा तब प्रथम ही श्रीमानों को विदित कर दिया जायगा। अब मैं मुम्बई से चल कर खंडुआ[3]। **खडुआ से कल[4] सायं-काल इन्दौर में, अब इन्दौर से कल[5] सायंकाल की गाड़ी में बैठ कर रतलाम में पहुंच[6]** पश्चात् वहां से उदयपुर जाने का विचार है। उसी लिये कि वेद विद्यालयादि उत्तम कार्यों का प्रबन्ध हो जाय। श्रीमान् महाराजाधिराज जी जो उचित समझें इस बात पर श्रीमान् आर्य्यकुल दिवाकर महाशयों तो लिखें। जिस से पूर्वोक्त कार्य्य शीघ्र ही सिद्ध हो। जो कुछ चित्तौड़गढ़ में अच्छी बातें हुई हैं वे सब महाराजाधिराजों के प्रयत्न का फल है। एक पोपलीला[7] का पुस्तक आज भेजा है और वेदाङ्गप्रकाशादि पुस्तक मंगवाने का पता यह है (प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय प्रयाग) ऐसा लिख कर भेज दीजिये अवश्य पत्र पहुंच जायगा। जो २ पुस्तक मंगवावेंगे वे २ सब उचित समय में पहुंचते रहेंगे। जब मैं उदयपुर में पहुंचूंगा तब श्रीमान महाराजाधिराज जी को समाचार विदित कर दूँगा।

---

१. द्वितीया तृतीया सम्मिलित थी। २. मूल पत्र शाहपुरा राज में सुरक्षित है।

३. खण्डुआ आषाढ़ शुक्ल ८ सं० १९३९ (२४ जून १८८२) को पहुँचे थे। यु० मी०।

४. पत्र श्रावणवदी ४ मंगलवार (४ जुलाई १८८२) को इन्दौर से लिखा। अतः खण्डुआ से ३ जुलाई की सायं चले। यु० मी०।

५. अर्थात् ५ जुलाई १८८२ की सायं इन्दौर से चलेंगे। यु० मी०।

६. पूर्ण संख्या ४२२ के पत्र में इन्दौर से रात की दो बजे की गाड़ी से रवाना होने का निर्देश है अतः वे ६ जुलाई की प्रातः रतलाम पहुँचे होंगे। पूर्ण संख्या ४२२ (पृ०३४१) की टि० ४ भी देखो। यु०मी०।

७. इस पुस्तक के लिये देखो हमारा "ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास" परिशिष्ट ५ पृष्ठ ८२। यु०मी०।

सब सज्जनों से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। मिति श्रावण वदी ४ मंगलवार सम्वत् १९३९[1] शुभम्
(इन्दौर) ह० दयानन्द सरस्वती

———

[१] कार्ड (३५३) [४२२]

श्रीयुत पंडित शालिग्राम बाबू गदाधरप्रसादसिंह बाबू जगन्नाथजी आनन्दित रहो। विदित हो कि मैं ४ जुलाई को यहां स्वामी दयानन्द (सरस्वती) जी महाराज के चरणों में पहुंचा। आप का समाचार कहा। श्रवण कर महाराज आनन्दित हुए। और मैं नागपुर ले जाने के वास्ते आया। परन्तु स्वामी जी राजपुताना देश में जावेंगे और हुलकर महाराज यहां नहीं हैं। सर्व सभासदों से आनन्द कहना। दूसरा पत्र विस्ता[र] पूर्वक भेजूँगा। ह० आत्मानन्द सरस्वती

५ जुलाई सन् ८२[2] इन्दोर छावनी
सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। दयानन्द सरस्वती[3]

———

[७] कार्ड (३५४) [४२३]

ओ३म्[4]

श्री स्वामी जी का आशीर्वाद विदित हो। स्वस्ति श्री मित्रवर बाबू रूपसिंह कलार्क जी योग्य इतः रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते। गोरक्षा की सही पहुंची। आपने यह काम धन्यवाद देने योग्य किया। अब भी सही कराइये। जो गोरक्षार्थ [मे]मोरियल पत्र न रहे हों तो लिखना, परन्तु हस्ताक्षर अलग अक्षर स्पष्ट रहें, जिस में सुगमता से पढ़ने में आवें। यहां हमारे पास श्रीयुत महाराजाधिराज श्री नाहरसिंह जी साहपुरा मेवाड़ से ४०००[०] चाली[स] हजार मनुष्यों की सही कराके भेजी है। श्री स्वामी जी मुम्बई से चल के खंडुवा, खंडुवा से इन्दोर, अब इन्दोर से आज दो बजे रात्री[5] की गाड़ी में बैठ के रतल[ा]म को जायेंगे। वहां ८ वा १० दिन रह कर पश्चात् उदयपुर को जायेंगे॥

---

१. ४ जुलाई १८८२। यु० मी०। २. श्रावण वदी ५, बुधवार सं० १९३९। यु० मी०।

३. यह हस्ताक्षर ऋषि ने स्वहस्त से बनाया है। शेष पत्र उनके शिष्य स्वामी आत्मानन्द ने लिखा है। हम ने ता० २३–४–१९२७ को एक पत्र बिलासपुर भेजा था। उसके उत्तर में पत्र संख्या ८०, ता ११–५–१९२७ को नरसिंहपुर से मध्यदेश-विदर्भ आ० प्र० सभा के मन्त्री श्री शिवलाल जी ने यह मूल कार्ड हमें भेजा था। मूल कार्ड अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है। पं० शालिग्राम तथा बाबू जगन्नाथ प्रसाद से बिलासपुर में म० मामराज ता० २ फरवरी सन् १९४४ को मिले थे। अन्य कोई पत्र नहीं मिला।

४. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

५. इस पत्र के अनुसार ५ ता० की रात को बैठ कर ६ ता० की प्रातः स्वामी जी रतलाम पहुंचे। श्री पं० महेशप्रसाद जी ने 'महर्षि दयानन्द कब और कहां' पुस्तक में श्रावण कृष्ण ५ अर्थात् ५ जुलाई को रतलाम पहुँचना लिखा है। सो ठीक नहीं है। श्रावण ६ अर्थात् ६ जुलाई की प्रातः वे रतलाम पहुंचे थे। यु०मी०।

विशेष समाचार उदयपुर में पहुंचे के पश्चात् भेजूंगा ।। भद्रमिति ।

कल स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी इन्दोर में हमारे पास आगये ।।

ता० ५ जुलाई सन् १८८२ ई०[1] ।

रामानन्द ब्रह्मचारी (इन्दोर)

---

[१] **पत्रांश[2] (३५५)** [४२४]

………………………………………

आज हम इन्दौर से दो बजे [रात्री[3]] की गाड़ी में बैठ कर रतलाम जावेंगे । वहां से उदयपुर जाने का विचार है । श्रावण[4] वदी ५, बुद्धवार । इन्दौर ५ जुलाई ८२ ।

दयानन्द सरस्वती
इन्दौर

---

[३२] **पत्र-सूचना (३५६)** [४२५]

[मुंशी समर्थदान] भीमसेन को हमारे पास भेजो[5] ।

---

[३३] **तार-सूचना** [४२६]

[मुंशी समर्थदान] भीमसेन को हमारे पास भेजो[5] ।

---

[३४] **पत्र (३५७)** [४२७]

ओ३म्[6]

मुन्शी समर्थदान आनंदित रहो ।

विदित हो कि आज कार्ड पत्र आया, समाचार विदित हुआ । परन्तु जो तुमने प्रथम पत्र में लिखा था कि विशेष यहां का वर्तमान द्वितीय पत्र में लिखूंगा वह समाचार इस पत्र में नहीं लिखा ? क्या यह द्वितीय पत्र न था ? अथवा लिखते समय स्मरण न रहा जो कि लिखा विशेष समाचार दूसरे पत्र में लिखूंगा । अब कब दूसरा पत्र लिखा जायगा ? वह समाचार अवश्य लिखना । यंत्रालय में जो दो महीने आगे का छपा हुआ वेदभाष्य है सो अधिक २ वेदभाष्य ही के छपने से क्या लाभ होगा । और जो प्रतिमास में छपने के वास्ते वेदभाष्य ही भेजा जाय तो कई एक दिन तक वेदभाष्य ही के शोधने में व्यतीत हो जांय । पुनः आगे आगे न बनने से कहां से छपेगा । जो वेदाङ्ग-

---

१. प्रथम श्रावण कृष्ण ५ बुध, सं० १९३९ । यु० मी० ।

२. यह पत्रांश पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ५३८ पर उद्धृत ।

३. पृष्ठ ३४१, टि० ५ देखो । यु० मी० ।

४. यह शुद्ध श्रावण अर्थात् प्रथम श्रावण है ।

५. देखो अगली पूर्ण संख्या ४२७ तथा ४२८ का पत्र । यु० मी० ।

६. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है ।

प्रकाश के अक्षर नहीं हैं तो ढलवा लो। वहां शीशा रक्खा किस काम में आवेगा। और जब तक अक्षर न बन चुकें तब तक कम्पोजीटरों को छुट्टी देदो। जब अक्षर बनजावें तब बुला लेना। उन्हीं अक्षरों को ढलवाओ जिनकी आवश्यकता है। क्या फूंडरी में अक्षर नहीं ढलते हैं जो लिखते हो कि अक्षर नहीं हैं। जिस प्रकार काम अच्छे प्रकार चले उस प्रकार का प्रबन्ध सर्वदा ध्यान में रखना चाहिये।

पंडित भीमसेन के बुलाने के लिये १ तार और दो एक पत्र भेज चुके हैं[१]। उससे कह देना कि स्वामी जी के पास जावरा नवाब का जिला इन्दोर में चला आवे। और तुम वेदभाष्य और मासिक हिसाब भी यहीं जावरा में भेजदो। सर्वदा वहां का यथेष्ट समाचार लिखा करो। और जो हम लिखें उसमें ध्यान देकर काम चलाया करो।

ता: ११ जुलाई १८८२

श्रावण कृष्ण ११ मंगलवार सं० १९३९।

[दयानन्द सरस्वती] (जावरा)

———

[३९] पत्र (३५८) [४२८]

मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो[२]।

विदित हो कि जो हमने लिखा और तार भेजा था उसको याथातथ्य किया होगा। वेदाङ्गप्रकाश के छपने के लिये शीघ्र ही फुंडरी में अक्षर ढलवालो। और पूर्व पत्रों का उत्तर यथावत् विस्तार पूर्वक लिखना। विशेष हाल कल के पत्र[३] से जान लेना। अब देखो छापेखाने का प्रबन्ध, करनवास के ठाकुर शेरसिंह ने हमारे पास पत्र भेजा है। उसको तुम्हारे पास भी भेजते हैं। देखकर यथोचित प्रबन्ध करना। इसने २१) रुपये हमको मेरठ में वेदभाष्य के मध्ये दिये थे। वे रुपये टाटल पेज पर छप भी चुके[४]। भला ऐसे २ ग्राहकों को वृथा अपनी अज्ञानता से क्लेश देते हैं। इस ग्राहक के २५॥) रुपये आ चुके हैं। अब पांचवें वर्ष के ८) रुपये रहे होंगे, मंगवा लेना। जो इनके पास वेदभाष्य न जाता हो तो जहां से बंध हुआ हो वहां से उनसे पूछ कर बराबर भेजा करना। और जो जाता हो तो अच्छा है। और करनवास में ठाकुर गोपलसिंह भी वेदभाष्य लेते हैं। उनसे भी बाकी रुपये उन्हीं के द्वारा और उनके भी रुपये पांच वर्ष के अन्त तक के सब मंगवा लेना। और छापेखाने की व्यवस्था अच्छे प्रकार रखना। इति ता० १३ जुलाई सन १८८२ ई०।

श्रावण कृष्ण १३ बृहस्पतवार सं० १९३९। — दयानन्द सरस्वती, नवाब का जावरा (मालवा)

———

१. इन में से एक उस पत्र की ओर संकेत है जो ३ जुलाई १८८२ को समर्थदान को लिखा था। देखो पूर्ण संख्या ४२० का पत्र, पृष्ठ ३३६ पं० २६। तार तथा द्वितीय पत्र प्राप्त नहीं हुआ। यु० मी०।

२. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

३. पूर्ण संख्या ४२७ पृष्ठ ३४२ का पत्र। यु० मी०।

४. इस विषय में पूर्ण संख्या २६३ (पृष्ठ २१७) भी देखें। यु० मी०।

[१८] पत्र (३५९) [४२९]

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[१] !

विदित हो की लाला जगन्नाथदास मुरादाबाद की प्रश्नोत्तरी के विषय में विस्तार से लिख के ७ पृष्ठ भेजते हैं[२] । पहुंचेंगे । जिस समय पहुंचे उसी समय १००० प्रति छपवा देना । परन्तु छपवाने में विलम्ब किंचिन्मात्र भी न करना । पश्चात् तुम अपने समाचार में छपवाना । छपवाने में इतना ध्यान रखना कि जैसा लेख है वैसा ही छपवाना । कम व अधिक न करना । और इसका मूल्य)॥ आना रखना । परन्तु बाहर के मंगवाने वालों से डाक व्यय भी ले लेना । इसको शीघ्र ही छपवा के सर्वत्र प्रसिद्ध कर दो । जिस से लोगों की शंका दूर हो जाय । और उनकी बुद्धि का भी प्रकाश हो जाय कि ये गुरु और चेला किस प्रकार के हैं । और इन्होंने क्या २ विचित्र वर्त्तमान किया है । आज कल आत्मानन्द सरस्वती स्वामी जी हमारे पास हैं । इति

ता० १३ जुलाई सन् १८८२ ई० ।

[दयानन्द सरस्वती]
मालवा नवाब का जावरा

---

[९] मसीक्षा पत्र (३६०) [४३०]

श्रीयुत सम्पादक देशहितैषी महाशय मंत्री आर्य्यसमाज अजमेर समीपेषु[३] ।

प्रिय सम्पादकवर ! जो मनुष्य स्वार्थ बुद्धि छोड़ परमार्थ करने में प्रवृत्त नहीं होता उस का हृदय पूर्ण शुद्ध होना असम्भव है, चाहे वह बहुत युक्ति और गूढता अपनी कपटता को प्रसिद्ध करने में कैसा ही यत्नवान् क्यों न हो । उस का कपट कभी न कभी प्रकाशित हो ही जाता है । प्रत्यक्ष दृष्टान्त देख लो कि लाला जनन्नाथदास मुन्शी इन्द्रमणिजी के शिष्य की बनाई हुई [आर्य्य प्रश्नोत्तरी] की समालोचना करने से (बहुत से विषय उसमें सत्य और परोपकारक दीख पड़ते हैं परन्तु बहुधा विषय उस में ऐसे भी हैं कि जिनके सुनने वा पाठ करने वालों का भ्रमजाल में फंस वेदादि सत्य शास्त्रों से विरुद्ध होना सम्भव है। यह विरुद्ध विषय केवल लाला जगन्नाथदास ही के अभिप्राय से नहीं किन्तु मुन्शी इन्द्रमणि भी उन दोषयुक्त विषयों के अनुयायी प्रतीत होते हैं ।) अस्तु जो हो मुझको सत्य २ परीक्षा इस ग्रन्थ की करके दोषों का प्रकाश करना अवश्यनीय है । कारण सज्जन लोग गुण ग्रहण कर दोषों

---

१. मूल पत्र आर्य समाज फरुखाबाद में सुरक्षित है । इस की प्रतिलिपि दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने की । फर्रुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १९५ पर भी छपा है ।

२. पूर्व पूर्णसंख्या ४१६ (पृष्ठ३३६) में प्रश्नोत्तरी का उत्तर 'बहुत दिन हुए भेज चुके हैं' ऐसा लिखा है । वह उत्तर संक्षिप्त था । यह विस्तृत उत्तर है । यह इसी वाक्य के 'विस्तार से' शब्द से स्पष्ट है । यु०मी० ।

३. जब मुंशी इन्द्रमणि ने सहायता में आए हुए धन का पूर्वप्रतिज्ञा के अनुसार पूर्ण ब्योरा न न बताया और न छापा, तब श्री स्वामी जी ने उन सब से सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया । तब मुन्शी जी ने आर्य-प्रश्नोत्तरी (संवत् १९३८, आर्यदर्पण प्रेस, शाहजहांपुर) छापी । उसका उत्तर लिखवा कर श्री स्वामी जी ने भारत सु० प्रवर्तक में छपने के लिए भेजा । फरुखाबाद समाज वालों ने वह न छापा ।

अपने १६ जून के पत्र (पूर्ण संख्या ४१६) में श्री स्वामी जी ने ला० कालीचरण को लिखा—

को छोड़ दें। इतना ही नहीं, किन्तु जैसे विषयुक्त उत्तमान्न का बुद्धिमानों को त्याग करना अवश्य होता है, इसी प्रकार आर्य्य लोगों के लिये यह [आर्य्य प्रश्नोत्तरी] ग्रन्थ गुणों के साथ दोषदायक होने से श्रेष्ठ को त्याग के योग्य है। अब इसका कुछ थोड़ा सा नमूना संक्षेप से दिखलाता हूं।

[आर्य प्रश्नोत्तरी पृष्ठ २। प्रश्नोत्तर ७] परमात्मा ने सृष्टि की आदि में श्री ब्रह्माजी के हृदय में वेदों का प्रकाश किया। उन से ऋषि मुनि अस्मदादिकों को प्राप्त हुये।

[समीक्षा] यह बात प्रमाण करने योग्य नहीं, क्योंकि (अग्नेर्वै ऋग्वेदो जायते [ऽजायत ?] वायोर्यजुर्वेदः सूर्य्यात्सामवेदः) शतपथ ब्राह्मण वचन।

"अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयम्ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुःसामलक्षणम्॥"

मनुस्मृति का वचन। अब देखिये अग्नि आदि महर्षियों से ऋग्वेदादि का प्रकाश हुआ। इत्यादि ब्राह्मण वचनों के अनुसार मनुजी महाराज कहते हैं कि ब्रह्मा जी ने अग्न्यादि महर्षियों के

"प्रश्नोत्तरी का खण्डन बहुत दिन हुए हम आप के पास भेज चुके हैं। उस के पीछे भारत सु० प्र० के दो अंक निकल चुके हैं। परन्तु आप ने उस को छापा नहीं।" अर्थात् श्री स्वामी जी का यह उत्तर एप्रिल १८८२ में लिखा गया होगा।

पुनः १३ जुलाई पत्र पूर्णसंख्या ४२६ के अनुसार श्री स्वामी जी ने उसी प्रश्नोत्तरी का एक विस्तृत उत्तर छपने को भेजा।

फरुखाबाद वालों ने यह उत्तर भी न छापा। और मन्त्री आ० स० फरुखाबाद ने १४-७-८२ को एक पत्र (संख्या २७) श्री स्वामी जी की सेवा में खण्डुआ भेजा। उस का विषय "प्रश्नोत्तरी" था। पुनः मन्त्री समाज ने १६-७-८२ को एक और पत्र (सख्या ५२) श्री स्वामी जी को जावरा भेजा—

"पत्र आप का और ७ पृष्ठ आर्यप्रश्नोत्तरी के उत्तर में पहुंचे। छापने के विषय में अन्तरङ्ग सभा से यह अनुमति मिली कि नया प्रेस एक्ट में छपने छापने का विषय है।"......और जो १००० प्रति अलग छापी जावे वह भी ऊपर के कारणों से (मुझे छोड़) आप लिखें जिसके नाम से छपवाने का विचार किया जावे।"

फिर १४ अगस्त १८८२ [पूर्ण संख्या ४३४] के पत्र में श्री स्वामी जी ला० कालीचरण को लिखते हैं—

"अभी तक "आ प्रश्न०" के उत्तर नहीं छपवाये। क्या कारण है। जो प्रेस एक्ट की शंका हो तो देखत पत्र के पण्डित मुन्नालाल मन्त्री आ० स० अजमेर के पास भेज दीजिए। वे छाप देंगे।"

फिर श्री स्वामी जी ने उदयपुर से श्रावण शुक्ल ३ संवत् १९३९ [१७ अगस्त १८८२। पूर्ण संख्या ४३६] को बाबू दुर्गाप्रसाद के नाम एक पत्र लिखा। उस में भी इसी उत्तर के छापने का उल्लेख है।

२४ अगस्त १८८२ को [पूर्ण संक्या ४३७] श्री स्वामी जी पुनः लिखते हैं—

"तुमने "आ० प्र०" के उत्तर अजमेर पण्डित मुन्नालाल जी के पास भेज दिये। अच्छा किया।"

२४-८-८२ को ही मुन्नालाल सम्पादक देशहितैषी श्री स्वामी जी को अजमेर से लिखता है—

"आर्य्य प्रश्नोत्तरी के खण्डन को किसकी ओर से प्रकाश करें।"

अन्त में यह उत्तर देशहितैषी अजमेर में "उचित वक्ता" के नाम से छपा।

द्वारा वेदों की प्राप्ति की। अत एव "यो वै ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै" इस श्वेताश्वतरोपनिषद् के वचनार्थ की संगति शतपथ और मनुजी के वचन से अविरुद्ध होनी चाहिये। किन्तु परमात्मा ने चारों महर्षियों के द्वारा श्री ब्रह्मा जी को चार वेदों की प्राप्ति कराई। और अब भी जो कोई चार वेदों का पढ़ता है वही यज्ञ में ब्रह्मासन को प्राप्त और उसी का नाम ब्रह्मा भी होता है। यदि मुन्शी इन्द्रमणिजी जी और उनके शिष्य लाला जगन्नाथदास वेद और तदनुयायी ब्राह्मणादि ग्रन्थों को पढ़े होते तो ऐसे भारी भ्रम में पड़ ऐसे २ अन्यथा भाषण वा लेख क्यों करते ? इनको उचित है कि अपना हठ छोड़ सत्य का ग्रहण अवश्य करें।

[पृष्ठ ३। प्रश्नोत्तर १६] जीव वास्तविक अनन्त हैं। इस कारण ईश्वर के ज्ञान में भी अनन्त ही हैं।

[समीक्षा] जब जीव देश काल वस्तु परिछिन्न अर्थात् भिन्न २ हैं। उनको अनंत कहना मानों एक अज्ञानी का दृष्टान्त बनना है। अनन्त तो क्या, परन्तु परमेश्वर के ज्ञान में असंख्य भी नहीं हो सकते। परमेश्वर के समीप तो सब जीव वस्तुतः अतीव अल्प हैं। जीवों की तो क्या परन्तु प्रति जीव के अनेक कर्मों के भी अन्त और संख्या को परमेश्वर यथावत् जानता है। जो ऐसा न होता तो वह परब्रह्म जीव और उनके कर्मों का जैसा २ जिस २ जीव ने कर्म कीया है उन २ का फल न दे सके। जब कोई इनसे प्रश्न करे कि एक २ जीव अनन्त हैं वा सब मिल के ? जो एक २ अनंत हैं तो "य आत्मनि तिष्ठन्" इत्यादि ब्राह्मण वचन अर्थात् जो परमात्मा व्याप्य जीवों में व्यापक हो रहा है और ऐसा ही लाला जगन्नाथदास ने "पृष्ठ ५। प्रश्नोत्तर ३२" के उत्तर में लिखा है कि "जीवेश्वर का व्याप्य व्यापक सम्बंध और "पृष्ठ ४ प्र० २१" "में जीव को अणु माना है।" जीव शरीर को छोड़ दूसरे शरीर में जाता और शरीर के मध्य में रहता है। इस लिये अनंत वा असंख्य ईश्वर के ज्ञान में नहीं। किन्तु जीवों के ज्ञान में जीव असंख्य हैं। जिन लाला जगन्नाथदास वा मुन्शी इन्द्रमणिजी को अपने ग्रंथस्थ पूर्वापर विरुद्ध विषयों का ज्ञान भी नहीं है तो आगे क्या आशा होती है। इसी से इनके सब प्रपंचों का उत्तर समझ लेना शिष्टों को योग्य है।

[पृष्ठ ४ प्र० २४] "जीव के गुण वास्तव में विभु है, परन्तु बद्धावस्था में अविद्या से आच्छादित होने से परिछिन्न हैं। मुक्तावस्था में विभु हो जाते हैं।"

[समीक्षा] विभु गुण उसी के होते हैं जो द्रव्य भी विभु हो। और जिसको अणु मानते हैं क्या उसके गुण विभु कभी हो सकते हैं ? क्योंकि गुणों का आधार द्रव्य होता है। भला कोई कह सकता है कि परिछिन्न द्रव्य में विभु गुण हों। क्या गुणी एक देशी और गुण विभु हो सकते हैं ? और गुणी को छोड़ केवल गुण पृथक् भी रह सकता है ? नहीं ! नहीं !! और जो (पृष्ठ ४। प्रश्नोत्तर २१) में जीव को अणु माना है। वह भी ठीक नहीं। क्योंकि एक अणु में भी जीव रह सकता है। अर्थात् एक अणु में अनेक जीव रह सकते हैं। देखो अणु कांच वा पृथिवी आदि के मध्य में से पार नहीं जा सक्ता और जीव जा सकता है। इसीलिये जीव अणु से भी सूक्ष्म है और इसके गुण भी विभु नहीं। हां मुक्तावस्था में जिस ओर उसका ज्ञान होगा उस दूरस्थ पदार्थ को भी अपने ज्ञान से जान लेता है। नहीं तो "युगपज्ज्ञानानुत्पत्तिर्मनसो लिङ्गम्" इस न्याय शास्त्र के सूत्र का अर्थ ही नहीं घट सकेगा। जो एक क्षण में एक पदार्थ को जाने अनेक को नहीं, उसी को मन कहते हैं। वही मन

मुक्तावस्था में भी रह जाता। पुनः उसी मनरूप साधन से विभु गुण वाला जीव कैसे हो सकता है।

[पृष्ठ ४ प्रश्न २५] "जीव परतन्त्र है।"

[समीक्षा] जीव किस के आधीन है ? जो कहो कि परमेश्वर के तो जो कुछ जीव कर्म कर्ता है वह स्वतंत्रता से वा ईश्वराधीनता से ? जो ईश्वराधीनता से करता है तो जीव को पाप पुण्य का फल न होना चाहिये, किन्तु ईश्वर को होना चाहिये। जैसे सेनाध्यक्ष वा राजा की आज्ञा से कोई किसी को मारे वह अपराधी नहीं होता, अथवा किसी के मारने में लकड़ी तलवारादि शस्त्र [न] अपराधी और न दंडनीय होते हैं, वैसे ही जीवों को भी दंड न होना चाहिये। किन्तु पाप पुण्य का फल सुख दुःख ईश्वर भोगे। उस लिये जीव अपने कर्म करने में सर्वदा स्वतन्त्र और पाप का फल दुःख भोगने में ईश्वर की व्यवस्था से परतंत्र रह जाते हैं। जैसे चोर चोरी करने में स्वतंत्र और राजदंड भोगने में परतंत्र हो जाते हैं इसी प्रकार जीवों को भी जानो।

[पृष्ठ ४ प्रश्नोत्तर २८] "मुक्त जीव कर्म्मवश होकर कभी फिर संसार में नहीं आते। ईश्वरेच्छानुकूल अपनी इच्छा से केवल धर्म रक्षा करने को आते हैं।"

[समीक्षा] पाठक गण ! विचारिये यह अविद्या का प्रताप नहीं है तो और क्या है ? जो कहते हैं कि जीव संसार में कभी नहीं आते और ईश्वरेच्छानुकूल अपनी इच्छा से केवल धर्म रक्षा करने को आते भी हैं। धन्य ! भला इस पूर्वापर विरुद्धता को गुरू और चेले ने तनिक भी न समझा। विचारणीय है कि जिस का ज्ञान, सामर्थ्य, कर्म अन्त वाले है उस का फल अनन्त कैसे हो सक्ता है ? और जो मुक्ति में से जीव संसार में न आवें तो संसार का उच्छेदन अर्थात् नाश ही हो जाय। और मुक्ति के स्थान में भीड़ भड़क्का हरद्वार के मेले के समान हो जाय। और ईश्वर भी अंत वाले गुण कर्म्म का फल अनन्त देवे तो वह न्यायरहित हो जाय। और परिमित गुण कर्म स्वभाव वाले जीव अनन्त आनन्द को भोग भी नहीं सक्के। फिर यह बात वेद तथा शास्त्र से विरुद्ध भी है। देखो "**अग्नेर्नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम। स नो मह्या अदितये पुनर्दात्पितरं च दृशेयं मातरं च**" ऋग्वेद वचन—अर्थ-हम उसी सुन्दर निष्पाप परमात्मा का नाम जानते हैं और स्व-प्रकाश स्वरूप जगदीश्वर प्राप्तमोक्ष जीवों को पुनः अवधि पर संसार में माता पिता के दर्शन कराता है अर्थात् मुक्ति सुख को भुगा के पुनः संसार में जन्म देता है॥ इसी प्रकार सांख्य शास्त्र में भी लिखा है "**नात्यन्तोच्छेदः**" इत्यादि वचनों से यही सिद्ध होता है कि अत्यन्त जन्म मरण का छेदन [न] किसी का हुआ और न होगा, किन्तु समय पर पुनः जन्म लेता है। इत्यादि प्रमाणों और युक्तियों से मुक्त जीव भी पुनरावृत्ति में आते हैं।

[पृष्ठ ४ प्रश्नोत्तर ३०] "एक वृक्ष में एक ही जीव होता है न अनेक"।

[समीक्षा] जो एक वृक्ष में एक जीव होता तो प्रत्येक जीव [वृक्ष] में पृथक् २ जीव कहां से आते और किसी वृक्ष की डाली काट कर लगाने से जम जाता है उस में जीव कहां से आया, इस लिये एक वृक्ष में अनेक जीव होते हैं।

[पृष्ठ ५ प्रश्नोत्तर ३५] अनेक पूर्व जन्मों के कर्म जो ईश्वर के ज्ञान में स्थित हैं वे सञ्चित कहलाते हैं।

[समीक्षा] क्या जीव का कर्म्म जीव के ज्ञान में सञ्चित नहीं होता ? जो ऐसा न हो तो कर्म्मों के योग से पवित्रता और अपवित्रता जीव में न होवे। इस लिये जो २ अध्ययनादि कर्म जीव करते हैं उनका सञ्चय जीव ही में होता है, ईश्वर में नहीं। किन्तु ईश्वर तो केवल उन के कर्म्मों का ज्ञाता है और फल प्रदाता है।

[पृष्ठ १२-प्रश्नोत्तर ७७] "केवल देवता और शिष्ट पुरुषों के नाम पर जन्माष्टम्यादि व्रत हैं। सो ईश्वरातिरिक्त किसी देवता की उपासना कर्तव्य नहीं"।

[समीक्षा] क्या शिष्ट पुरुषों से भिन्न भी कोई देवता है ? बिना पृथिव्यादि के तेतीस और वेदमन्त्र तथा माता पिता आचार्य्य अतिथि आदि के जिन का वेदों ने पूजन अर्थात् सम्यक् सत्कार करना कहा है। क्या यह भी मनुष्यों को कर्तव्य नहीं।

[पृष्ठ १३-प्रश्नोत्तर ८२] "जो कुछ ईश्वर ने नियत किया है उस में न्यूनाधिक्य करने वाला कोई नहीं। जो बात जिस प्राणी के लिये जिस काल में जिस प्रकार से ईश्वर ने नियत की है उस से विरुद्ध कभी नहीं होती।"

[समीक्षा] क्या ब्रह्मचर्य्य और योगाभ्यासादि उत्तम कर्मों से आयु का अधिक होना और कुपथ्य से वा व्यभिचारादि से न्यून नहीं होता ? जब ईश्वर का नियत किया हुआ ही होता है तो जीव के कर्मों की अपेक्षा कुछ भी नहीं रह सकती। और जो अपेक्षा है तो केवल ईश्वर ने नियत नहीं किया किन्तु दोनों निमित्तों से होती है। जो हमारा क्रियमाण स्वतन्त्र न हो तो हम उन्नति को प्राप्त कभी नहीं हो सकते। इसीलिये हम कर्म करने में स्वतन्त्र और ईश्वर जीवों के कर्मों को यथायोग्य जानकर कर्म्मानुसार शुभाऽशुभ फल देने में स्वतन्त्र है। ऐसा माने बिना ईश्वर में वे ही दोष आ जावेंगे जो २५ वें प्रश्नोत्तर की समीक्षा में लिख आये हैं।

[पृष्ठ १३-प्रश्नोत्तर ८४] "स्वर्ग संसारांतर्गत है वा लोकान्तर ("उत्तर" स्वर्ग लोकविशेष है वहां क्षुधा पिपासा बुढ़ापा आदि दुःख नहीं है।"

[समीक्षा] क्या लोकान्तर का नाम संसार है नहीं। क्या बिना मुक्ति के वा प्रलय अथवा स्थूल शरीर के क्षुधादि की निवृत्ति हो सकती है। ऐसे विशेष स्वर्ग लोक को गुरु शिष्य देख आये होंगे। जो पूर्वमीमांसा को देखा होता तो ऐसी अन्यथा बातें क्यों लिखते। देखिये "**स एव स्वर्गः स्यात् सर्वान्प्रत्यविशिष्टत्वात्**" पूर्वमीमांसा का वचन। जो सर्वत्र अविशेष अर्थात् सुख विशेष की प्राप्ति का नाम स्वर्ग और दुःख विशेष की प्राप्ति का नाम नरक लिखा है। सब जीवों को सब संसार में प्राप्त होता है किसी विशेष लोकान्तर ही में नहीं। और जहां शरीर धारण श्वास प्रश्वास भोग वृद्धि क्षय आदि होते हैं वहां क्षुधा पिपासा और बुड्ढापन आदि क्यों नहीं ? यह सब अविद्या की बात हैं। ध्यान दीजिये वेद का कोष क्या कहता है (स्वः) साधारण नाम में है निघं १।४। "**स्वः सुखं गच्छति यस्मिन् स स्वर्गः**" जिस में सुख की प्राप्ति हो वह स्वर्ग कहाता है। परन्तु "**गौणमुख्ययोर्मध्ये मुख्ये कार्य्यं सम्प्रयत्यः**" यह व्याकरण महाभाष्यकार का वचन है। इस से यह सिद्ध होता है कि निर्मल धर्म्माऽनुष्ठानजन्य सत्य विद्यादि साधनों से सिद्ध आत्मीय और शारीरिक सुख विशेष है। उसी प्रधान सुख की प्राप्ति का नाम स्वर्ग है॥

[पृष्ठ १४- प्रश्नोत्तर ९१] सम्पूर्ण जीव वास्तव में ईश्वर के दास हैं इस कारण मनुष्यों के नाम में ईश्वर वाच्य शब्द में दास शब्द का प्रयोग करना अत्युत्तम है।"

[समीक्षा] यह शास्त्रीय व्यवहार से सर्वथा बाहर है। किन्तु केवल कपोलकल्पना मात्र ही है क्योंकि—

"शर्म्मवद् ब्राह्मणस्य स्याद् राज्ञो रक्षासमन्वितम्।
वैश्यस्य गुप्तिसंयुक्तं शूद्रस्य तु जुगुप्सितम्" ॥ मनु०

जैसे ब्राह्मण का नाम विष्णु शर्म्मा, क्षत्रिय का विष्णु वर्म्मा, वैश्य का विष्णु गुप्त और शूद्र का विष्णुदास इस प्रकार नाम रखना चाहिये। जो कोई द्विज शूद्र बनना चाहे तो अपना नाम दास शब्दान्त धर ले और जो शास्त्रोक्त विधि छोड़ मनोमुख चले उस को क्या कहना।

[पृष्ठ १६-प्रश्नोत्तर ९७] "परलोक और धर्मार्थ के फल तथा ईश्वर को न मानने वाले को नास्तिक कहते हैं।

[समीक्षा] इस में केवल इतनी ही न्यूनता हैं कि "नास्तिको वेदनिन्दकः" जो लाला जगन्नाथदास और मुन्शी इन्द्रमणि जी ने मनुस्मृति पढ़ी वा अच्छे प्रकार से देखी भी होती तो वेद निन्दक का नाम नास्तिक क्यों न लिखते, जिस से सब कुछ अर्थ आ जाता और लक्षण भी दृष्टि पड़ता।

[पृष्ठ १६-प्रश्नोत्तर ९८] "हिन्दू" शब्द संस्कृत भाषा का नहीं है, पारसी भाषा में वास्तविक अर्थ "हिन्दुस्तान" के रहने वाले का है और (काला, लुटेरा, गुलाम) "यह सांकेतिकार्थ हैं"।

(समीक्षा) वह क्या! जब संस्कृत भाषा का नहीं है तो इसका वास्तविक अर्थ कभी नहीं हो सक्ता, वास्तविक अर्थ [में] इस देश वालों का नाम (आर्य्य) और इस देश का नाम "आर्य्यावर्त्त है"। इस सत्यार्थ को छोड़ असत्यार्थ की कल्पना करनी मुझ को तो अविद्या और हठ की लीला दृष्टि पढ़ती है। जब "अर्बी" की (लुग़ात) नामक पुस्तक में लिखा है कि लुटेरे आदि का नाम हिन्दू है तो उस भाषा में वास्तविक नाम क्यों नहीं? केवल सांकेतिकार्थ क्यों? अर्थात् जो कोई आर्य्य होकर अपने हिन्दू नाम होने में आग्रह करे उन्हीं का नाम काला, लुटेरा, गुलामादि का रहो, आर्य्य का नहीं।

[पृष्ठ १६-प्रश्नोत्तर १००] पहिले कहने वाला "परमात्मा जयति" कहे और उत्तर देने वाला "जयति परमात्मा" कहे।

[समीक्षा] यह कल्पना वेदादि शास्त्रों से विरुद्ध होने के कारण सर्वथा मिथ्या ही जान पड़ती है क्योंकि "**नमस्ते रुद्र मन्यवे०। नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः**" इत्यादि यजुर्वेद वचन "**परमर्षिभ्यो नमः**" "**नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो**" इत्यादि उपनिषद् वचन, इनसे निश्चित यही सिद्धौं होता है कि परस्पर सत्कारार्थ (नमस्ते) शब्द से व्यवहार करने में वेदादि सत्य शास्त्रों का प्रमाण है और परस्पर अर्थ भी यथावत् घट जाता है जैसे (ते) तुभ्यं वा तव अर्थात् जिस को मान्य देता है उस का वाची है और (नमः) शब्द नम्रार्थ वाचक होने से नमस्कार कर्ता का बोधक है मैं तुम कू नमता हूं अर्थात् (ते) आप वा तेरा मान्य वा सत्कार करता हूं। इस में नमस्कर्त्ता और नमस्करणीय दोनों का परस्पर प्रसंग प्रकाशित होता है और यही अभिप्राय दोनों का है कि दोनों प्रसन्न रहें और जो असंबद्ध

प्रलाप अर्थात् तीसरे परमेश्वर का प्रसंग लाना है सो व्यर्थ ही है। जैसे "आम्रान्पृष्टः कोविदारानाचष्टे" किसी ने किसी से पूछा कि आम्र के वृक्ष कौन से हैं उसने उसे उत्तर दिया कि यह कचनार के वृक्ष हैं, क्या ऐसी ही यह बात नहीं है ? किसी ने ईश्वर का प्रश्न पूछा ही नहीं और न कोई परस्पर सत्कार के व्यवहार में ईश्वर प्रसंग है और कह देना कि (परमात्मा सारे उत्कर्षों के साथ विराजमान है) यह वचन हठयुक्त का नहीं है तो और क्या है ? हां जहां परमात्मा की स्तुति प्रार्थना उपासना उपदेश और व्याख्या करने का प्रसंग हो तो वहां परमात्मा के नाम का उच्चारण करना सब को उचित है। जैसा राम राम, जय गोपाल, जय श्रीकृष्णादि शब्दों से परस्पर व्यवहार करना यह हठ दुराग्रह से सम्प्रदाई लोगों ने वेदादि शास्त्रविरुद्ध मनमानी व्यर्थ कल्पना की है, उसी प्रकार से मुंशी इन्द्रमणि जी वा ला० जगन्नाथ-दास जी की युक्ति और प्रमाण से शून्य यह कल्पना दृष्टि पड़ती है। इन विषयों में मुंशी इन्द्रमणि जी और स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का सम्वाद भी पूर्व समय में हो चुका है। परन्तु मुंशी जी कब मानते हैं। विशेष क्या लिखें, शोक है कि लाला जगन्नाथदास की करतूतों को विचार अब मुझको यह कहना पड़ा कि इन दोनों महात्माओं[1] के प्रतिज्ञा से विरुद्ध करना आदि अन्यथा व्यवहारों को जो कोई सज्जन पुरुष जानना चाहै वे आर्य्य समाज मेरठ लाला रामसरनदासादि भद्र पुरुषों से पूछ देखें कि एक अन्य मार्गियों के विवाद विषय की शान्ति कारक व्यवहार प्रसंग में इन्होंने कैसा २ विपरीत व्यवहार किया, जिस को सब जानकार आर्य्य लोग जानते हैं। सत्य यह बात चली आती है कि "सब पापों का पाप लोभ है[2]" जो कोई उसी तृष्णारूपी नदी प्रवाह में बहे जाते हैं उन में पवित्र वेदोक्त आर्य्य धर्म्म की स्थिरता होनी कठिन है। अब जो मुन्शी इन्द्रमणि जी और उनके चेले लाला जगन्नाथदास, स्वामी जी और भद्र आर्य्यों की व्यर्थ निन्दा करें तो इसमें क्या आश्चर्य है ? पाठक गण ! ठीक भी तो है जब जैसे में वैसा मिले फिर क्या न्यूनता रहै। जैसे दावानल अग्नि का सहायक वायु होता है वैसे ही इन के श्री मुन्शी बखतावरसिंह जी सहायकारी बन बैठे। अब तो जितनी निन्दा आर्य्य लोगों और स्वामी की करें उतनी ही थोड़ी। चलो भाई यह भी अच्छी मंडली जुड़ी, महाशयो ! जब तक तुम्हारा पेट न भरे तब तक निन्दा करने में कसर न रखना, क्योंकि यह अवसर अच्छा मिला है। जैसे किसी कवि ने यह श्लोक कहा है सो बहुत ठीक है।

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्याय्यात् पथः प्रविचलंति पदं न धीराः ॥१॥

चाहैं कोई अपने मतलब की नीति में चतुर निन्दा करे वा स्तुति करै, चाहै लक्ष्मी प्राप्त हो वा चली जाओ, चाहे मरण आज ही हो वा वर्षान्तरों में, परन्तु जो धीर पुरुष महाशय महात्मा आप्तजन हैं वे धर्म्म मार्ग से एक पाद भी विरुद्ध अर्थात् अधर्म मार्ग में नहीं चलते हैं ॥१॥

सभ्य गणो ! यह तो आर्यों की शुभेच्छा का कारण हैं, परन्तु जो प्रथम उत्तमाचरण करके पश्चात् गड़ बड़ा जायं वे ही तो आर्य्यावर्त के हानिकारक होते हैं। परन्तु यह सदा ध्यान में रखना चाहिये कि "श्रेयांसि बहुविघ्नानि" जो इस सनातन वेदोक्त सत्य धर्म का आचरण करते हैं उस में अनेक विघ्न क्यों न होय, तदपि इस सत्य मार्ग से चलायमान न होना चाहिये। सर्वशक्तिमान जगदीश्वर परमात्मा अपनी कृपा दृष्टि से इन विघ्नों को हम से और हम को इन से सर्वदा दूर रख कर

१. अर्थात् मुंशी इन्द्रमणि और लाला जगन्नाथदास। २. लोभश्चेदगुणेन किम् ?

हम से आर्यावर्त की उन्नति कराने में सहायक रहै। इस थोड़े से लेख से सज्जन पुरुष बहुत सा जान लेंगे। अलमतिविरतरेण बुद्धिमद्वर्येषु ॥

एक उचित वक्ता

———

[८] पत्र (३६१) [४३१]

ओ३म्[१]

श्री स्वस्ति श्री परोपकारप्रिय सद्गुणविभूषित महाशय बाबू रूपसिंहाभिधेयेषु रामानन्द ब्रह्मचारिणो शतधाऽऽशिषो भूयासुस्तमां, शमिहास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमेधमानमाशासे।

महाशय! नमस्ते। आप का शुभ समाचारों से अलंकृत अनुग्रह पत्र (मालवा नवाब का जावरा) में सुशोभित हुआ। अवलोकन कर अतीव हर्षित हुआ। परमात्मा से सर्वदा यही प्रार्थना करता हूं कि आप महाशय पुरुषों की बुद्धि को परोपकार के करने में निरन्तर नियुक्त किया करे, जिस से पुनः यह आर्यावर्त्त देश अपनी पूर्वदशा को सम्प्राप्त होकर अपने मनुष्यरूपी वृक्ष में धर्म अर्थ काम और मोक्ष रूपी चतुष्टय फलों से संयुक्त होकर परमानन्द भोगे। धन्य है आप के पिता जी को जिन महाशय की ऐसी विशाल बुद्धि कि जो इस महोपकारक गोरक्षार्थ विषय को श्रवण कर अति हर्षित हुए और आप को उत्साही किया। परमात्मा करे ऐसे ही पिता सब के होवें। और आप मेरा मान्य पूर्वक आशीर्वाद भी विदित कीजियेगा। मैं नाम से विदित नहीं हूं, परन्तु उनकी ऐसी योग्यता के जानने से मुझ को अति आनन्द हुआ और ऐसे परोपकार प्रियों के नाम से विदित होने की भी चेष्टा हुई। आशा है कि आप विदित कर देंगे। दूसरा यह हर्ष हुआ कि अब आप का उद्वाह होने वाला है और आपकी योग्यता भी हुई अत्युत्तम है। आप प्रसन्नता के साथ अपना विवाह कीजिये। आप बहुत सारी बातें जानते भी हैं। तथापि मेरा मन नहीं मानता, इस कारण लिखता हूं। देखिए मूल कारण आर्य्य[ा]वर्त्त के सुधार होने का उचित समय पर विवाह का होना और सत्योपदेश। गृहाश्रम केवल भोग विलास के अर्थ नहीं, किन्तु संसार की उन्नति के अर्थ है। अर्थात् संस्कारविधि के अनुसार विवाहाऽनन्तर उचित समय पर क्रिया करना। इस आश्रम का मुख्य फल यही है कि सुन्दर, धीर, वीर, विद्यादि शुभ गुण युक्त पुत्र रूपी फल की प्राप्ति होना। विना विधि के सांगोपांग कोई भी कार्य्य सिद्ध नहीं होता। इस लिये उचित समय पर जो आप को जिज्ञासा हो पत्र द्वारा विदित करना। मैं (श्रीयुत परम पूज्य गुरु जी) से पूछ कर आप को विदित करूंगा, वैसा ही करना होगा। **आप विवाह किये के पश्चात् इस महोपकारार्थ पंजाब हाथा और काश्मीर आदि राजधानियों में जा गोरक्षा के विषय में** (गोकरुणानिधि) के अनुसार व्याख्यान देकर सही करावें तो क्या ही अत्युत्तम बात होवे कि जिसकी उपमा भी मैं देने में असमर्थ हूं। परन्तु इतना तो कह सकता हूं कि थोड़े ही श्रम से महापुण्य का संचय कर अपने मनुष्य जन्म को सफल कर लोगे। जो तुम ने सही करा के भेजी थी वह हमारे पास मुम्बई में पहुंचीं। अब जिन २ मनुष्यों की सही कराई जाय, वह प्रायः देवनागरी के अक्षरों में होनी चाहिए। और स्पष्ट अक्षर जिससे स्पष्टता से नाम बंच जावे, परन्तु जो पुरुष अप[ना] नाम किसी विद्या में न लिख सके उसका नाम सही कराने वाला पुरुष उसकी

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

सम्मति से लिख दे और एक बही के समान पत्रों को बना कर उस में सब गोरक्षाप्रिय मनुष्यों की सही करानी। पश्चात् उस ग्राम वा नगर में जो माननीय प्रतिष्ठित पुरुष हो उससे हस्ता[क्ष]र गवाही के समान सही कराने के पत्र पर इस प्रका[र क]राना कि (हमारे यहां इतने मनुष्यों की सही हुई। पश्चात् अपना नाम लिख दे) यह रीति पीछे से श्री स्वामी जी ने प्रकट की है। इस प्रकार के लेख से किन्ही को राजसम्बन्धी भय न होगा। यह डरपुकनों के लिए है। मुख्य तो विज्ञापनपत्र[1] के अनुसार सही कराना। गोरक्षार्थ आजकल भारतमित्र कलकत्ता ने पत्र छपवा के सही करा रहा है। मुंबई के लोगों ने भी बहुत सी सही कर ली और बराबर कराते जाते हैं और गुजरात आदि देशों में भी सही होती है। और स्वामी[जी] के पास मेवाड़ महाराजाधिराज नाहरसिंह जी ने ४०००[०] इतने हज़ार मनुष्यों की ओर से सही कर के भेज दी है। और मध्य देश में भी बहुत सी सही हो गई। प्रति दिवस होती जाती है। **इस महोपकारक काम में डाक वालों ने दुष्टता बहुत सी की है**[2]। क्योंकि बहुत से स्थानों को पत्र भेजे, परन्तु उन के पत्र आने से यह विदित हुआ कि उनके पास नहीं पहुंचे। देखिए आश्चर्य की बात है [(लाला रामशरणदास मेरठ के पास) **३०० पत्र रजिष्टरी करा के भेजे थे इतने पर भी उनके पास न पहुंचे, पुनः उनके पास ५० पत्र भेजे हैं**[3]। **परमात्मा कृपा करे कि ऐसे २ विघ्नकारी राक्षसों से** बचा कर इस महोपकारक कार्य की सिद्धि करने में आर्य भाइयों को सहायता देकर इस कार्य्य की सिद्धि करावे। किमधिकलेखेन परोपकारप्रियेषु। **आज वा कल परम गुरु जी उदयपुर पधारेंगे।**

रामानन्द ब्रह्मचारी

ता० २४ जुलाई १८८२ ई०[4]।

मालवा जावरा नवाब का

---

[१९] पत्र (३६२) [४३२]

(ओ३म)

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[5]।

विदित हो कि प्रथम तो तुम लिखते थे कि शीघ्र (आर्य प्रश्नोत्तरी) के विस्तारपूर्वक प्रत्युत्तर लिख के भेज दीजिये। जब भेज दिये तो अब कहते हो कि कानून बनकर आवे तो छापें। छपाने में विलम्ब करना अच्छा नहीं। जो उसमें कोई शब्द निकालने योग्य हो निकाल दीजिये। परन्तु जो २ उनके अभिप्राय के शब्द हैं उनमें कुछ न्यूनाधिक न करना॥

---

१. पूर्ण संख्या ३८८ पृष्ठ ३१४।

२. इस बात का संकेत कई पत्रों में है। बुद्धिमान् पाठकों को इस का रहस्य समझना चाहिये।

३. इतना पाठ पत्र में काट दिया गया है।

४. प्रथम श्रावण शुक्ल ६, सोम, सं० १९३९। यु० मी०।

५. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद ने सुरक्षित है। म० मामराज जी ने जनवरी सन् १९२७ में प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १६६ पर भी छपा है।

कल हम (मालवा नवाब के जावरा से चितोड़गढ़) में आ पहुंचे । यहां के हाकिम ठाकर जगन्नाथ जी ने हमारे लिये यथायोग्य प्रबन्ध किया है। अब दो एक दिन में उदयपुर जायंगे ।

अनुमान है कि चातुर्मास वहीं होगा[1] ॥

ता० २६ जुलाई सन् १८८२ ई०[2] ।

[दयानन्द सरस्वती] (चितोड़ गढ़ मेवाड़)

———

[६] पत्र-सूचना (३६३) [४३३]

[मुन्नालाल जी, मन्त्री आ० स० अजमेर]

आर्य प्रश्नोत्तरी के उत्तर देशहितैषी में छापने के विषय में[3]

१४ अगस्त १८८२[4] ।

———

[२०] पत्र (३६४) [४३४]

ओ३म्

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[5] ।

विदित हो कि आज ४ वा ५ दिन व्यतीत हुए हैं, हम उदयपुर में आके नौलखा बाग के महल में ठहरे हैं[6] । यहां सब प्रकार आनंद मंगल है। बहुत दिन हो गये हैं, अभी तक "आर्य प्रश्नोत्तरी" के उत्तर नहीं छपवाये, क्या कारण है। जो प्रेस एक्ट की शंका हो तो देखत पत्र के पण्डित मुन्नालाल मन्त्री आर्यसमाज अजमेर के पास भेज दीजिये। वे छाप देंगे। इस विषय में पत्र भी आज उन के पास भेज दिया है। जो छप चुकी हो तो शीघ्र विदित करो।

और गोरक्षार्थ कितनी सही हो चुकी। इस का भी उत्तर लिखना। इस समय (आर्य भाषा के) राजकार्य में प्रवृत्त होने के अर्थ जो मोमरियल छपे हैं[7] सो शीघ्र भेजना। और आप लोग

---

१. यह अन्तिम पंक्ति पं० लेखराम संपा० जीवन चरित पृष्ठ ५५६ पर उद्धृत है। हम ने मूल पत्र से इसे छापा है।

२. प्रथम श्रावण शुक्ल ११ बुध, सं० १९३९ । यु० मी० ।

३. इस पत्र की सूचना अगले पूर्ण संख्या ४३४ के पत्र में है। यु० मी० ।

४. द्वितीय श्रावण शुक्ल १ सोम, सं० १९३९ । यु० मी० ।

५. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। जनवरी सन् १९२७ में म० मामराज जी ने उसकी प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १९७ पर भी छपा है।

६. पत्र १४ अगस्त १८८२ का है, अतः स्वामी जी लगभग १० अगस्त को उदयपुर पहुँचे होंगे। यु० मी० ।

७. ऋषि दयानन्द की प्रेरणा से आर्य भाषा को राजकार्य में प्रवृत्त कराने के हेतु अनेक स्थानों से मेमोरियल भेजे गये थे। उन में से नमूने के रूप में आर्यसमाज मेरठ द्वारा प्रेषित मेमोरियल की प्रतिलिपि हम परिशिष्ट में छाप रहें हैं। यु० मी० ।

भी जहाँ तक हो सके गोरक्षार्थ सही और आर्यभाषा के राजकार्य में प्रवृत्त होने के अर्थ शीघ्र प्रयत्न कीजिये। और फर्रुखाबाद के आर्यसमाज तथा पाठशाला का जैसा वर्तमान हो लिखना। और हम भी जो कुछ विशेष यहां का समाचार लिखने योग्य होगा लिखेंगे।

१४ अगस्त सन् १८८२ ई०[1] [दयानन्द सरस्वती] (उदयपुर)

———

[३] पत्र (३६५) [४३५]

ओ३म्[2]

स्वस्ति श्रीमद्वर सद्गुण समूहालंकृतेभ्यो राजराजाऽधि श्रीयुत नाहरसिंहवर्म्मभ्यो दयानन्द-सरस्वती-स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमेधमानमाशासे। उदन्तु नृगिरा वेदितव्यः। विदित हो कि अब हम परमात्मा की कृपा से उदयपुर में पहुंच कर नौलखा बाग के राजमन्दिर में निवाश किया है। और एक दिन श्रीयुत आर्य्यकुल-दिवाकर भी सुशोभित हुए थे। कोई एक दो कला पर्य्यन्त अच्छे २ विषयों में चर्चा भी हुई थी। और पश्चात् जो २ लिखने योग्य वर्तमान होगा वह श्रीमान् के निवेदन किया जावेगा

श्रीमान् अपने कुशल समाचारों को विदित किया करें। प्रथम तो श्रीमान महाशयों ने करुणा पूर्वक ४०००० हजार पुरुषों की ओर से हस्ताक्षर कर पत्र मम्बापुरी में हमारे पास भेजा था, परन्तु अब इस विषय में श्रीमानों के प्रबन्ध से कितनी सही हुई हैं। जो भवान् सदृश महाशय इन महोपकारक माता पिता के समान संसार के रक्षक करुणापात्र गायादि पशुओं के दुःख निवारणार्थ प्रयत्न किया है वा करते जाते हैं, वह अवश्य सफल होकर इस आर्य्यावर्त्त की औषधि रूप होकर सब आर्यों के हृदय की अग्नि को शान्त करेगा।

किमधिकलेखेन श्रीमद्राजाधिराजबुद्धिमद्विचक्षणेषु अलमिति ॥

श्रावण[3] शुक्ल १ मंगल संवत् १९३९[4]। (उदयपुर)

[दयानन्द सरस्वती]

———

[९] पत्र (३६६) [४३६]

ओ३म्[5]

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनंदित रहो।

विदित हो कि हम मुम्बई से चलकर ठहरते ठहराते अब उदयपुर में पहुंच कर नौलखा बाग के राजमहल में निवास किया है। एक दिन श्रीयुत आर्य्यकुलदिवाकर श्री महाराणा जी पधारे थे।

---

१. द्वितीय श्रावण शु० १ सोम, सं० १९३९। यु० मी०।

२. मूल पत्र राजकार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है।

३. यह द्वितीय श्रावण है। शुक्ल १ को सोमवार था। क्या प्रतिलिपि करने वाले ने २ को १ तो नहीं पढ़ा।

४. १५ अगस्त १८८२।

५. पहले हम ने इस पत्र का लगभग आधा उत्तरभाग बंगाली बाबू श्री देवेन्द्रनाथ के संग्रह से श्री पं० घासीराम जी की कृपा से म० मामराज द्वारा अक्टूबर १९२६ में प्राप्त किया था। वह पुरानी संख्या १७३

अच्छे विषयों में वार्त्तालाप हुआ। और राजपुरुष प्रतिदिन आया जाया करते हैं। यथायोग्य प्रश्नोत्तर भी होते हैं। जो आगे विशेष वर्तमान लिखने योग्य होगा विदित करेंगे। आशा है कि आप अपना कुशल क्षेम का भी समाचार लिखेंगे।

बड़े आश्चर्य का विषय है कि पुकारते तो हैं हमारी उन्नति हो, परन्तु उन्नतिकारक विषय जब आ पड़ता है तब ऐसे निरुत्साही और भयातुर होकर चुपचाप बैठ रहते हैं। क्या ऐसी ही बातों से उन्नति होने कि आशा करते हैं। देखिये लाला कालीचरण जी ने प्रथम चिट्ठी पर चिट्ठी भेजीं और बड़ी शीघ्रता के साथ लिखा कि (मुरादाबाद वाले जगन्नाथ निर्मित प्रश्नोत्तरी के) विस्तारपूर्वक उत्तर प्रमाणों के साथ भेजिये। जब हमने वेदभाष्य के काम को छोड़ प्रमाण सहित उत्तर लिख रजष्ट्री कराके भेज दिये और उसके साथ एक पत्र भी भेजा कि शीघ्र छपवा कर प्रसिद्ध कर देओ[1]। उस शीघ्रता का फल यह हुआ कि अब दो महीने व्यतीत हुए एक अक्षर भी नहीं छपवाया। लिखा कि प्रश एकट होने वाला है। उसको देख पश्चात् छपवावेंगे। यह इनको केवल किसी के बहकाने से भ्रम मात्र हुआ है। क्योंकि जो ऐसा होता तो भारतमित्रादि पत्रों में अवश्य छपता। अथवा अन्य मनुष्यों के द्वारा भी सुनने में आता। सो केवल प्रश एकट के भ्रम होने से डर गये हैं। भला ऐसे २ सद्यः कर्त्तव्य कर्मों के करने में भ्रम मात्र से डरकर निरुत्साही हो जाना अवनति का कारण नहीं तो क्या है। इसलिये—

आप उस प्रश्नोत्तरी के उत्तरों को ले के पण्डित मुन्नालाल मन्त्री आर्य्यसमाज अजमेर के पास देखत पत्र के भेज दीजिये। अथवा जो अगले भारतसुदशाप्रवर्तक के अंक में छपने का प्रारम्भ हो गया हो तो कुछ चिन्ता नहीं। दूसरी अति शोक करने की यह बात है कि आज कल सर्वत्र **अपनी आर्यभाषा के राजकार्य में प्रवृत्ति होने के अर्थ (भाषा के प्रचारार्थ जो कमीशन हुआ है) उसमें पंजाब हाथा आदि से मेमोरीयल भेजे गये हैं।** परन्तु मध्यप्रान्त फर्रुखाबाद, कानपुर, बनारस आदि स्थानों से नहीं भेजे गये। ऐसा ज्ञात हुआ है। और गत दिवस नैनीताल की सभा की ओर से एक इसी विषय में पत्र आया था। उसके अवलोकन से निश्चय हुआ कि पश्चिमोत्तर देश से मेमोरियल नहीं गये। और हम को लिखा है कि आप इस विषय में प्रयत्न कीजिये। अब कहिये हम अकेले सर्वत्र कैसे घूम सकते हैं। जो यही एक काम हो तो कुछ चिन्ता नहीं। इस लिये आप को अति उचित है **कि मध्यदेश में सर्वत्र पत्र भेज कर बनारस आदि स्थानों से और जहां २ परिचय हो सब नगर वा ग्रामों से मेमोरियल भिजवाइये। यह काम एक के करने का नहीं। और अवसर चूके वह अवसर आना दुर्लभ है। जो यह कार्थ सिद्ध हुआ तो आशा है कि मुख्य सुधार की एक नीव पड़ जावेगी।** आप स्वयं बुद्धिमान हैं। इस लिये विशेष

के अन्तर्गत छापा गया था। फिर ला० मामराज फरूखाबाद से सन् १९२७ में मूल पत्र की प्रतिलिपि लाये। तब पहला अमुद्रित भाग संख्या २२८ के अन्तर्गत छापा गया। अब सारा पत्र मूल से मिला कर यहां छापा गया है। मूल पत्र फरुखाबाद आर्यसमाज में सुरक्षित है। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २१६ से २१८ पर किंचित शब्दभेद के साथ छपा है।

१. देखो पत्र पूर्ण संख्या ४२६।

लिखना आवश्यक नहीं। **और गोरक्षार्थ कितनी सही हुई है।** इस विषय में ध्यान देना अवश्य है। **बड़े हर्ष के ये दोनों विषय प्रकाशित हुए हैं।** इस लिये जहां लों हो सके तन मन धन से सब आर्य्यों को अति उचित है इन दोनों कार्यों के सिद्ध करने में प्रयत्न करें। वारंवार ऐसा ही निश्चय होता है कि ये दो सौभाग्यकारक अंकुर आर्यों के कल्याणार्थ उगे हैं। अब हाथ पसार न लेवे तो इस से दौर्भाग्य [की] दूसरी क्या बात होगी। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु। लाला निर्भयराम से हमारा आशीर्वाद कहियेगा।

शुद्ध श्रावण शुक्ल ३ बृहस्पति सम्वत् १९३९[1]।

[दयानन्द सरस्वती] (उदयपुर)

---

[२१] **पत्र (३६७)** [४३७]

(ओ३म्))

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[2]।

विदित रहो कि पत्र तुम्हारा आया। समाचार मालूम हुआ। **तुम ने 'आर्य प्रश्नोत्तरी' के उत्तर अजमेर पण्डित मुन्नालाल जी के पास भेज दिये। अच्छा किया। अब वे शीघ्र छाप डालेंगे।** विद्यार्थियों को निम्न लेखानुसार ग्रन्थ पढ़ना पढ़ाना चाहिये। **कि प्रथम क्रम से वेदाङ्गप्रकाश पढ़वाना।** फिर वैदिक निघण्टु। फिर पिङ्गल सूत्र। पश्चात् काव्य की रीति से मनुस्मृति। इत्यादि ग्रन्थ जब पढ़ चुकें तब आगे पूछना। और हम यहां आनन्द मंगल में हैं। आशा है कि परमेश्वर की कृपा से तुम भी कुशल युक्त होगे। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना। द्वितीय श्रावण शुदी १० गुरु संवत् १९३९[3]।

[दयानन्द सरस्वती]
[राज मेवाड़ उदयपुर]

---

१. शुद्ध श्रावण शुक्ल अर्थात् द्वितीय श्रावण का शुक्ल पक्ष। उत्तर भारतीय पञ्चाङ्गों की यह रीति है कि जिस वर्ष जो मास अधिक होता है उसे शुद्ध मास के कृष्ण पक्ष के बाद में गिनते हैं। अर्थात् प्रथम शुद्ध मास का कृष्ण पक्ष, तदनन्तर अधिक मास का शुक्ल पक्ष, तदनन्तर अधिक मास का कृष्ण पक्ष और तदनन्तर शुद्ध मास का शुक्ल पक्ष। तदनुसार १७ अगस्त सं० १८८२ को यह पत्र लिखा गया। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्य स० फरुखाबाद में सुरक्षित है। दिसम्बर सन् १९२६ में म० मामराज ने इस की प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २०० पर भी छपा है।

३. ता० २४ अगस्त १८८२।

[४] पत्र (३६८) [४३८]

ओ३म्[1]

श्रीयुत पण्डित गोपालराव जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि गोरक्षार्थ हस्ताक्षर पत्र के सहित आप का कुशल पत्र पहुंचा। पत्रस्थ समाचार के अवलोकन करने से अत्यन्त हर्ष हुआ। यहआप ने सर्वोपकारक धन्यवादार्ह पुरुषार्थ किया। परमात्मा दिन प्रति ऐसे ही कर्मों के सिद्ध करने में उत्साही करे। आशा है कि आर्यभाषा के प्रचारार्थ भी आप स्वपुरुषार्थ की प्रकटता करेंगे। हम उदयपुर पहुंच कर नौलखा बाग के राज महलों में ठहरे हैं। एक बार श्रीयुत आर्यकुल दिवाकर श्री महाराणा साहब पधारे। परस्पर प्रेम प्रीति के साथ समागम हुआ। जैसा उन का नाम है वैसे ही गुण भी देखे। इत्यादि[2]। द्वितीय श्रावण [शुदी] १२ शनि सम्वत् १९३९[3]।

(दयानन्द सरस्वती)

---

[१] पत्र-सूचना (३६९) [४३९]

श्री राव बहादुरसिंह जी मसूदा।

दुतीक श्रावण शुदी १२ [उदयपुर[4]]।

---

[२] पत्र-सूचना (३७०) [४४०]

[छगनलाल मसूदा]।

······ महाराज गजसिंह जी और उनके भाई भी व्याख्यान में आये[5]।

---

[९] पत्र-सारांश (३७१) [४४१]

[भीमसेन]

हम अपने पास तुम को २२) नकद और अन्न वस्त्र भी दिया करेंगे। और छुट्टी में भी उतना ही मासिक दे दिया जावेगा[6]।

---

१. दयानन्द दिग्विजयार्क तृतीय खण्ड पृष्ठ ७९ से उद्धृत। फरुखाबाद का इतिहास पृष्ठ २०० पर भी छपा है।

२. पत्र पूर्ण संख्या ४३५ के अनुसार १५ अगस्त तक महाराणा जी एक बार ही आए। और पुनः २६ तक नहीं मिले। २६ को मिले, देखो पत्र पूर्ण संख्या ४४२।

३. २६ अगस्त १८८२। यु० मी०।

४. पत्र के संकेत के लिये पं० चमूपति संपा० पत्रव्यवहार पृ० ७७ देखो।

५. राव बहादुरसिंह जी मसूदा ने अपने पत्र में पं० छगनलाल मसूदा के नाम आए पत्र में से यह पंक्ति लिखी है। इस पत्र की तिथि पिछले पत्र की तिथि ही अर्थात् द्वितीय श्रावण सुदी १२ होगी।

६. यह सारांश पूर्ण संख्या ४४२ में निर्दिष्ट है। तिथि अज्ञात है। यु० मी०।

[३६] पत्र (३७२) [४४२]

प्रबन्ध-कर्ता मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो[१] !

विदित हो कि ऋग्वेद के दो पृष्ठ हमने भेज दिये, पहुँचे होंगे। और यजुर्वेद के भी भेजे हैं । आज सत्यार्थप्रकाश के शुद्ध कर के ५ पृष्ठ भूमिका के और ३२ पृष्ठ प्रथम समुल्लास से भेजे हैं, पहुँचेंगे । भीमसेन के पास हमने पत्र भेज दिया और यह लिख दिया कि हम अपने पास तुझको २२) नगद और अन्न वस्त्र भी दिया करेंगे । और छुट्टी में भी उतना ही मासिक दे दिया जायगा । उसका स्वभाव है कि जब तक रुपये पास रहेंगे तब तक ऐसा ही करेगा । तुम भी उस को पत्र लिख देना, शीघ्र चला आवे ।

वहां क्या ज्वालादत्त एक फार्म के लिये भी तैयार नहीं कर सकता । वह बड़ा लिखने वाला है । ये दोनों एक से ही हैं । जैसा भूतनाथ वैसा प्रेतनाथ । इन से चतुराई के साथ काम लेना । ये काम-चोर हैं ।

निम्नलिखित पुस्तकें पहुँची

भूमिका	५	स्त्रैणस्ता	१
चांदापुर	२४	वर्णो	२
संध्या	५०	गोकरु०	५०
व्यवहा०	१०	भूमि०	२५
संस्कृत	४	अनु०	२५
संधि	१	आर्यो०	४९
नामि	१	शास्त्रा०[२]	२५
कारकी	१	गोतम०[३]	२५
सामासि	१		

आज श्रीयुत महाराणा जी इस बाग में प्रातःकाल से पधारे हैं । अब सायंकल्ल से रात्री के समय में वार्तालाप होगा । जो लिखने योग्य समाचार होगा सो लिखेंगे । यहां हम आनन्द मंगल में है । तुम वहां सब से अच्छी प्रकार काम लेना । आशा है तुम अच्छे प्रकार प्रबन्ध करोगे । और यन्त्रालयस्थों से आशीर्वाद कह देना ।

भाद्र वदी १ मंगल सम्वत् १९३९[४] । [दयानन्द सरस्वती]
(राज मेवाड़ उदयपुर)

———

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है । पहली तीन पंक्तियां Works of Maharshi Dayanand, पृ० १२६ पर भी छपी हैं ।

२. संभवतः शास्त्रार्थ जालन्धर । देखो पृष्ठ ३३० पर निर्दिष्ट 'जालन्धर की बहस' । यु० मी० ।

३. गोतम अहल्या की कथा । इसके विषय में हमारा 'ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास' पृष्ठ १२८ देखें । यु० मी० ।

४. २६ अगस्त १८८२ ।

[३१]　　　　पत्र (३७३)　　　　[४४३]

ओ३म्[१]

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि ३ सप्तंबर का लिखा हुआ अति लम्बायमान पत्र तुम्हारा पहुंचा। पत्रस्थ समाचार मालूम हुये। टैपके विषय में हमने तुमको प्रथम ही लिखा था कि मंगवालो। परन्तु तुम्हारी इस प्रकार की सम्मति हुई थी कि यहां ढलवा लेंगे। अब तुम्हारी सम्मति यह है कि यहां नहीं बन सकते अस्तु। अब तुम मुम्बई और कलकत्ता से पत्र भेज कर ठीक २ भाव का निश्चय कर लो कि मुम्बई और कलकत्ते से कितना फेर पड़ता है। और जब मंगवाओ तब बहुत विचार से मंगवाना अर्थात् बाबू विशेश्वरसिंह पंडित देवीप्रसाद और कम्पोजीटरों से पूछ और आप स्वयं देख भार कर। फिर जिस २ प्रकार के जो २ अक्षर वा मात्रा और जिन अक्षरों का अपने यहां अधिक काम पड़ता हैं उन २ को मंगवा लेना। और जो कलकत्ते से मंगवाये जायेंगे तो अच्छा होगा। क्योंकि वहां से टैप मंगवाने में फूण्डरी के सांचे भी बराबर काम में आवेंगे। और वहीं के सांचे अपने यन्त्रालय में हैं भी। इस विषय में पंडित जी की भी सम्मति कलकत्ते ही से मंगवाने की थी। प्रथम कलकत्ते से टैप मंगवाये थे। सो हम को खबर है कि कोई ४०) रुपये और कोई ५०) रुपये और कोई २ ६०) रुपये के हिसाब से आये थे। सो उन में से अच्छे २ तो बखतावर चुरा ले गया। क्योंकि पीछे तोलने से ५ऽ मन टैप घटा था।

अब सत्यार्थप्रकाश छपेगा। इस लिये भाषा के अक्षर अधिक मंगवाना चाहिये। सत्यार्थप्रकाश में संस्कृत पाठ के अक्षर भाषा से कुछ थोड़े उन्नीस बीस होने चाहियें। आजकल जो मूलमन्त्रों वा पदों में अक्षर लगते हैं वे बिलकुल कुढंगे हैं। इस लिये अब दो तीन महीने का तो वेदभाष्य छपा रक्खा ही है। तब तक आख्यातिक छपवाओ। क्योंकि आगे वेदभाष्य उत्तम अक्षरों में छपना चाहिये। और जो तुम ने टैप ढालने वाले के विषय में लिखा, ठीक है। वह दश पांच मन टैप नहीं ढाल सक्ता। किन्तु अटके समय उस का सहायक मात्र है कि जिस से काम बंध न रहे। विशेष अक्षर वह तैय्यार नहीं कर सकता। और कितना सुर्मा पड़ना चाहिये यह भी उस को ठीक २ ज्ञान नहीं है। मुम्बई और कलकत्ते के अक्षरों में कुछ बहुत भेद तो नहीं है। किन्तु मुम्बई के अक्षरों की ढाल और प्रकार की है और कलकत्ते की और प्रकार की। परन्तु कलकत्ते से मंगवाने में मुम्बई से दूना नहीं तो सवाया वा ड्योढा दाम अवश्य लगेगा। आगे जैसे तुम्हारी सम्मति हो। और जहां से मंगवाने में सोविता समझो वहां से मंगवाना उचित है। परन्तु इस बात का प्रबन्ध शीघ्र करो। अपने यन्त्रालय के अक्षरों को चलते दो वर्ष हो गये हैं। इस लिये उन में अब कुछ फेर पड़ गया है। और जिन टैपों में आख्यातिक के कम्पोज में कम पड़ते हों उन को जल्दी ढलवा लो। आर्यपत्र लहौर और देशहितैषी अजमेर जिस प्रकार का नोटिस वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपने के लिये भेजें, वैसा एक बार छाप देना। आगे सब काम बुद्धिमत्ता के साथ करना, औरों से करवाना।

ता० ८ सिप्तंवर सन् १८८२ ईस्वी　　　　[दयानन्द सरस्वती]

भाद्र कृष्णा ११ शुक्रवार सं० १९३९　　　　(उदयपुर राज मेवाड़)

---

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

[२२] पत्र (३७४) [४४४]

प्रबन्धकर्ता मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो[१]।

विदित हो कि ता० ४ सप्तम्बर लिखा हुआ पत्र तुम्हारा पहुँचा। समाचार ज्ञात हुये।

टैप के विषय में एक पत्र आज भेज चुके[२]। उसके अनुसार प्रबन्ध करना।

जो कहीं पद छूट जाता है यह भाषा बनाने वाले और शुद्ध लिखने वाले की भूल है। हम प्रायः इस बात में ध्यान नहीं देते, क्योंकि यह सहज बात है। अच्छा जहां कहीं रह जाया करे तुम देख लिया करो कि किस २ मंत्र में क्या २ छूटा। और यहां लिखके भेज दिया करो[३]।

ज्वालादत्त चाहें रात दिन काम करे, परन्तु तुम देख लिया करो कि कितना काम करता है कितना नहीं। इस को व्याकरण बनाने में देर इस लिये लगती है कि उस को व्याकरण का अभ्यास कम है। तभी बहुत सी पुस्तकें रखनी पड़ती हैं– जो इस से आख्यातिक न बन सके तो यहां भेज दो। यहां भीमसेन आ जायगा, तब उससे बनवा कर शुद्ध करके भेज देंगे।

जिन अक्षरों में वेदभाष्य की भाषा छपती है उसमें भाषा और जिन अक्षरों में पदान्वय छपता है उन में संस्कृत का पाठ छपना चाहिये[४]। और दो हज़ार कापी छपनी चाहियें। जहां २ उचित समझो वहां २ नोट देदेना। सत्यार्थप्रकाश अच्छे कागज़ और अच्छे टैप में छपवाना। जो इन अक्षरों से पुस्तक न बिगड़े तो छापने का आरम्भ करदो। और मुम्बई कलकत्ते के भाव ताउ का शीघ्र निश्चय करके जहां सोविता पड़े, माल अच्छा मिले और दाम कम लगे, वहां से मंगवा लेना। टैप के विना शीघ्र काम न चल सकेगा।

यहां कोई पांच सात बात चलाई हैं और स्वीकार भी करली है। परन्तु उनमें से अभी कोई सिद्ध नहीं हुई। इस लिये नहीं लिखा। जब उनमें से कोई भी बात सिद्ध हो जायगी, वह चाहें गुप्त हो वा प्रगट, परन्तु तुम को विदित कर देंगे। अभी तक महाराणा जी का विचार अच्छा है। आगे जैसा होगा विदित कर दिया जायगा।

पांच पत्र गोरक्षार्थ सही कराने के और पांच विज्ञापनपत्र भेजे हैं, पहुँचेंगे। न रहें तो वहीं छपा लेना। हमारे पास सही तो कई स्थानों से आई है, परन्तु संख्या हमने नहीं की। जब करेंगे तब लिखेंगे। यहां के कार्य सिद्ध हुये पश्चात् सब संख्या पूरी हो जायगी। कार्य सिद्ध्यर्थ प्रयत्न कर रहे हैं। आशा है कि परमात्मा की कृपा से पूरे हो जायेंगे।

भाद्र वदी १२ सम्वत् १९३९[५]। दयानन्द सरस्वती
उदयपुर नौलखा बाग

---

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

२. सम्भव है पूर्ण संख्या ४४३ (८ सितम्बर) वाला पत्र ही ९ सितम्बर को इस पत्र से पूर्व भेजा गया, क्योंकि उस में टाइप के विषय में विस्तार से लिखा है। यु० मी०।

३. यहां तक का पाठ आर्यधर्मेन्द्र जीवन तृतीय संस्करण के पृ० ३७० पर छपा है।

४. अर्थात् सत्यार्थ प्रकाश का। यु० मी०। ५. ९ सितम्बर १८८२।

[४८] पत्र (३७९) [४४९]

ओ३म्[1]

प्रबन्धकर्ता मुन्शी समर्थदान जी आनंदित रहो।

ता० १३ सितम्बर का लिखा हुआ पत्र तुम्हारा पहुँचा। समाचार ज्ञात हुए। दो पत्र[2] पूर्व तुम्हारे पास टैपादि के विषय में विस्तार पूर्वक लिख भेजे हैं, पहुँचे होगे। उन्हीं के अनुसार टैप आदि के विषय में शीघ्र प्रबन्ध करना॥

इस पत्र का उत्तर यह है कि जो हम प्रतिदिन एक फ़ार्म के लिये शुद्ध करके भेजा करें तो आगे वेदभाष्यादि का काम सब बंध हो जाय। अब आगे बने नहीं तो पुनः छापने के लिये कहां से भेजा जाय। और तुम भी क्या छापो। अब ४ महीने का वेदभाष्य छपा रक्खा है। इसलिये इस टैप में वेदभाष्य आगे न छापना चाहिये। क्योंकि इस के मूल अक्षर बहुत बड़े और बेडोल के हैं। जब नया टैप आ जायगा तब वेदभाष्य को अच्छे अक्षरों में छापा जायगा। हमारा विचार यह है कि ८ फार्म वेदभाष्य के और ८ अन्य वेदाङ्गप्रकाशादि के १६ फार्म से कम अपने निज पुस्तक न छपने चाहिये। और जो अधिक छापने की आवश्यकता हो शुद्धप्रति छापने के लिये यंत्रालय में उपस्थित हो उस समय एक २ फार्म भी प्रति दिन छप सकता है वा अधिक भी। क्योंकि अपना काम बढ़ाया जाय तो कुछ कम नहीं है। जो पण्डित सुन्दरलाल जी और तुम्हारी भी यही सम्मति है कि जो बाहर का काम यंत्रालय में लिया जाय तो अधिक यन्त्रालय को फाइदा हो सकता है और हानि किसी प्रकार से न होगी, तो भले ही बाहर का काम ले लो। कुछ चिन्ता नहीं। परन्तु जब हम बाहर के काम से निज पुस्तकों के छपने में वा कुछ और प्रकार से हानि होती देखेंगे तो उसी समय बाहर का काम बंध करा देंगे। इस बात में सर्वदा ध्यान रखना। और जो हम को निश्चय यह विदित हो जायगा कि बाहर के काम से यन्त्रालय को फाइदा पहुँचा और निज पुस्तकों के छपने में भी हानि न हुई देखेंगे तो दूसरे प्रेस का भी प्रबन्ध करने में यत्न किया जायगा। परन्तु किसी प्रकार की हानि होने पर नहीं।

तुम्हारे लिखने से निश्चय हुआ कि सातवें दिन आख्यातिक का एक फार्म तैयार होता है। इसका कारण मुख्य तो यह है कि **ज्वालादत्त को व्याकरण का बोध कम हैं।** और आख्यातिक प्रक्रिया भी कठिन है। इसलिये उससे यथावत न बन सकेगी। इसलिये आख्यातिक के पत्रे उससे लेकर यहां भेज दो। कल भीमसेन भी हमारे पास आ गया है। यहां शीघ्र उसको बनवा और शुद्ध करके तुम्हारे पास भेज देंगे।

थोड़े दिनों के पश्चात् और सत्यार्थप्रकाश के पत्रे शुद्ध करके भेज देंगे। तुम सत्यार्थप्रकाश के छापने का आरम्भ कर दो। काम कभी बंध मत रखो। और टूटे फूटे अक्षरों को फुंडरी में ढलवा लो। काम बंध मत रखो। और सौवर तथा पारिभाषिक के भी पत्रे बनवा कर भेजे जायेंगे। आर्य्यो० १ चादां० १ इन दो पुस्तकों के कम होने का कारण यह है कि न जाने तुम्हारे बांधने में कसर रही अथवा डाक में कुछ बिगाड़ हुआ। हमारे पास तो वहां खुला[3] और पुस्तक टूटी फूटी होकर पहुंची। उसी समय गिनी तो दो कम हुई। ये किसी ने लेली होगी। और वेदान्तिध्वान्ति तुमने

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

२. सम्भवत: पूर्ण संख्या ४४३, ४४४ के। यु० मी०।

३. अर्थात् पारसल। यु० म०।

भेजी कब, जो रसीद भेजें। जो भेजा भी हो तो यहां नहीं पहुंचा। उसने नौकरी क्यों छोड़ी। क्या उसकी इच्छा नौकरी करने की नहीं थी। हम तो यह जानते हैं कि तुम्हारे नीचे एक दूसरा सहायक चाहिये, क्योंकि तुम कहीं विशेष कारण से गये आये तो वह काम कर सके। इसलिये तुम्हारी इच्छा हो तो किसी योग्य पुरुष को रखलो।

यहां श्री महाराणा जी प्रतिदिन मिलते और समागम करते हैं। और एक मौलवी से प्रश्नोत्तर प्रतिदिन होते हैं और वे लिखे भी जाते हैं[१] सो तुम्हारे पास भेजेंगे। अभी महाराणा जी से दो एक बार एकान्त में गोरक्षार्थ सही आदि कराने के विषय में बातें चीतें हुई हैं। आशा है कि यह कार्य सिद्ध हो जायगा। इसके सिवाय जो और कोई बात होगी सो पीछे से लिखेंगे। हम सब प्रकार से आनन्द मंगल से हैं।

[भाद्र शुदी (६ ?) सम्वत् १९३९[२]।]

उदयपुर

[दयानन्द सरस्वती]

---

[६] **पत्र-सूचना (३७६)** [४४६]

[पं० सुन्दरलालजी, प्रयाग]

टाइप मंगाने की सम्मति दे दें[३]।

सं० १९३९ आश्विन वदी ६ चन्द्रवार[४]।

---

[४०] **पत्र-सूचना (३७७)** [४४७]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

कुंवर जवाहरसिंह के २२।।) भीमसेन के मार्फत पहुँचने के विषय में[५]।

---

[४१] **पत्र (३७८)** [४४८]

ओम्[६]

मुन्शी समर्थदान आनन्दित रहो।

विदित हो कि २१ सप्तम्बर का लिखा हुआ पत्र पहुँचा। समाचार ज्ञात हुए। हम तुम को इस विषय में कई बार लिख चुके हैं कि अभी वेदभाष्य की प्रति इस लिये नहीं भेजते कि वेदभाष्य के

---

१. ये प्रश्नोत्तर अक्षरशः पं० लेखरामजी कृत जीवन चरित में छपे हैं। यु० मी०।

२. १८ सि० १८८२। तिथि हमने अनुमान से लिखी है।

३. इस की सूचना अगली पूर्ण संख्या ४४८ के पत्र (पृष्ठ ३६३) में है। तथा आश्विन सुदी ३ सं० १९३९ (१५ अक्टूबर १८८२) पूर्ण संख्या ४५४ के पत्र (पृष्ठ ३६६) में भी इस का निर्देश है। यु० मी०।

४. २ अक्टूबर १८८२। यु० मी०।

५. इस की सूचना आश्विन सुदी ३(१५ अक्टूबर सन् १८८२) पूर्ण संख्या ४५४ के पत्र (पृष्ठ ३६६) में है। यु० मी०।

६. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

मूल मन्त्र तथा पद के अक्षर बेढंगे हैं। और भाषा के भी अक्षर घिस गये हैं। इस लिये बाहर के छापने के लिये हमने आज्ञा दे दी है। सो लेकर छापो। और उनसे रुपये लो। जब नये अक्षर आ जांय तब वेदभाष्य छापा जायगा।

हमने सौवर भेजा था सो छापते होंगे। और कोई ८ वा १० दिन में पारिभाषिक तैयार करा कर भेज देंगे। इस पत्र के साथ दूसरा पत्र भेजा है उस के पास विक्रिय पुस्तकों का सूचीपत्र भेज देना।

पत्र तुम्हारा दूसरा भी २९।९।८२ समय का लिखा आया। हाल जाना। इस में दो बातें हैं। एक तो अक्षर मंगाने के लिये तुमने पं० सु० जी० की सम्मति विरुद्ध लिखी। सो आज हम भी एक पत्र उन को भेज देते हैं। वे तुमको सम्मति शीघ्र देवेंगे। तुम कलकत्ते में यदुनाथ बनर्जी को लिखो कि वे अक्षर भेज देंगे। पहिले ४०) रु० मन उनके यहां से पहिले[1] आये थे। सो अब भी मिलेंगे। भाड़ा पृथक् लगेगा। और जितने मन अक्षरों की आवश्यकता हो और जो २ अक्षर जितने २ कम बढ़ चाहिये सो सब [लिखो।] उनके रुपये हम वहीं कलकत्ते में दिला देंगे। और सेवकलाल निर्भयराम को भी हम कागज़ के लिये लिख देंगे। और सत्यार्थप्रकाश के छपाने को हमारा तो यही विचार है कि नवीन टैप में छपे। जो आरम्भ न किया होय तो पीछे छापना। और आरम्भ कर भी दिया हो तो उस में संस्कृत के मूल वचन कुछ बड़े अक्षर में और भाषा छोटे में। तथा जो तुमको विचार पूर्वक नोट देना हो सो भी देते जाना।

संवत १९३९ आश्विन बदी ६ चं०[2]। [दयानन्द सरस्वती]
उदयपुर

---

[४३] पत्र (३७९) [४४९]

ओ३म्[3]

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र तुम्हारा पहुंचा, समाचार ज्ञात हुये। परन्तु उसका उत्तर जो तुमने कागजात भेजे हैं उनके पहुंचे के पश्चात् भेजेंगे। सत्यार्थप्रकाशादि किसी पुस्तक में जो नोट लिखो[4] तो उसमें किसी का नाम न लिखना। किन्तु टाइटल पेज के ऊपर तो तुम्हारा नाम रहना ही चाहिये। परन्तु ग्रन्थ के नोट पर न रहना चाहिये[5]। सरदार विष्णुसिंह जी मोहतमिम जंगलात उदयपुर के

---

१. यह पद भूल से दो बार लिखा गया। यु० मी०। २. २ अकतूबर १८८२ सोमवार।

३. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है। ४. सत्यार्थप्रकाश में नोट लिखने की स्वीकृति स्वामी जी ने पूर्ण संख्या ४४४ (पृ० ३६०) तथा ४४८ (पृष्ठ ३६३) में दी थी।

५. प्रतीत होता है कि जब सत्यार्थप्रकाश के छपे फार्म श्री स्वामी जी के पास पहुचे तो उस में नोटों पर 'स० दा०' ऐसा निर्देश देख कर श्री स्वामी जी ने समर्थदान को अपना नाम देने से रोक दिया। [इस लिए जहां जहां 'स० दा०' छप गया था, वहां वहां ऊपर से सादी चिप्पी चिपकाई गई थी। शताब्दी संस्करण से पुनः समर्थदान का नाम छप रहा है। यह ऋषि दयानन्द की सम्मति के विरुद्ध है। यु०मी०]।

पास आज तक का जितना दोनों वेदों का भाष्य आरम्भ से छपा है भेज दो और आगे को भी सदा भेजा करो। परन्तु भूमिका मत भेजना। क्योंकि वह यहां से लेली है और जैसा ऊपर लिखा है………………………[1]।

—·—

[३] **पत्रांश (३८०)** [४५०]

पं० छगनलाल [मसूदा]

………………………

[2]श्रीयुत महाराणा जी दूसरे तीसरे [दिन] समागम करते हैं। और उपदेश सुन कर बहुत से व्यसन अर्थात् दिन का सोना, रात्रि में न सोना, दिन चढ़े उठना इत्यादि बहुत बातें छोड़ दी हैं। और अच्छी २ बातों को ग्रहण करते जाते हैं।

आश्विन सु० ११ सं० १९३९। ७ अकतुबर ८२[3]। उदयपुर[4]

———

[९] **कार्ड (३८१)** [४५१]

ओ३म्[5]

सम्वत् १९३९ आश्विन वदी १४[6]।

महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते विदित हो। महाशय! कई एक पत्र आप के पास विस्तार पूर्वक समाचार लिख के भेजे[7] परन्तु प्रत्युत्तर एक का भी न मिला। इस में क्या कारण हुआ। अब पत्र देखते ही अपना विस्तार पूर्वक समाचार भेजना। श्रीयुत जगद्गुरु स्वामी जी महाराज उदयपुर में विराजमान हैं। श्रीयुत आर्य्यकुल-दिवाकर महाराणा जी अत्यन्त प्रेम से आते हैं और उपदेश सुनकर बहुत हर्षित होते हैं। कई एक बातों को छोड़दीं जो कि हानिकारक हैं। और कई एक बातें जो कि सर्व सुख दायक हैं उनको ग्रहण कर ली हैं। आशा है श्री स्वामी जी के प्रताप से यह देश भी पवित्र हो जायगा। गोरक्षार्थ यहां भी सही हो गई हैं। आशा है कि यहां के सम्बन्ध से अन्यत्र अर्थात् जोधपुराधीशों आदि राजाओं से हो जायगी। विशेष समाचार तुम्हारे पत्र आये के पश्चात् लिखूंगा।

(रामानन्द ब्रह्मचारी उदयपुर)

———

१. यहां से आगे का पत्र फटा हुआ है, अतः पूरा नहीं छप सका।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरीत पृ० ५६४ पर इतना अंश उद्धृत है।

३. सु० ११ लुप्त है। २२ या २३ अकतूबर था। ७ अकतूबर को आश्विन वदी ११ है। [तथा पूर्ण संख्या ४५१ आश्विन बदी १४ के पत्र में भी इस पत्र की बातों का संकेत होने से] यही तिथि ठीक प्रतीत होती है। जीवनचरित में कुछ भूल हुई है।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित में भूल से रायपुर छप गया है। रायपुर के स्थान में उदयपुर होना चाहिये।

५. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

६. १० अक्टूबर १८८२।

७. इस से प्रतीत होता है कि पूर्ण संख्या ४३१ (२४ जुलाई) के अनन्तर कुछ पत्र और भेजे गये थे, वे प्राप्त नहीं हुए। यु० मी०।

[९] **पत्र-सूचना (३८२)** [४५२]

[सेवकलाल, बम्बई]

कागज भेजने के सम्बन्ध में[१]।

[१.] **पत्र-सूचना (३८३)** [४५३]

[मास्टर प्राणजीवनलाल कानदास बम्बई]

सेवकलाल से पत्रों का उत्तर भिजवाने के विषय में[२]।

सं० १९३९ आश्विन सुदी ३ रवि[३]।

---

[४३] **पत्र (३८४)** [४५४]

ओम्[४]

प्रबन्धकर्त्ता मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि ७-१०-८२ नम्बर १३०५ का पत्र आया। समाचार विदित हुए। हम तुम्हारे पत्र भेजने में कुछ भी विलम्ब नहीं करते। हमने बाहर के काम लेने के लिये तुम को पत्र द्वारा आज्ञा दे दी थी। उस बात को कोई एक मास हुआ होगा[५]। तुमने कुछ भी नहीं लिखा कि अभी तक लिया वा नहीं। इसका उत्तर देना। जो एक फारम के अनुमान नित्यप्रति शोध कर तुम्हारे पास भेजा जाय तो यहां का सब काम अर्थात् वेदभाष्यादि का बनाना छूट जाय। **प्रत्युत इस काम के लिये महाराणा आदि जी से कह दिया गया कि सन्ध्या समय आया करें।** हम को कुछ भी अवकाश नहीं मिलता। अर्थात् प्रातःकाल से ११ वा १२ बजे तक वेदभाष्य बनाते हैं। पश्चात् अन्य काम शोधने आदि का। और वह काम ऐसा है कि बिना हमारे बन नहीं सकता। जो कहीं भाषा असंबध हो और अभिप्राय वा अक्षर मात्रा आदि से अशुद्ध हो उस को तुम ही शोध लिया करो। बाहर के काम के लिये बिना यहां से तुम्हारे योग्य इस समय छपवाने के लिए नहीं भेज सकते। जैसी तुम जल्दी चाहते हो ऐसा तो तब हो सके कि जब हम स्वयं छापेखाने में आकर तुम को शोध २ दिया करें और तुम छापो।

कल तुम्हारे पास ३३ पृष्ठ से ५७ पृष्ठ सत्यार्थप्रकाश के पत्रे[६] और पारिभाषिक भूमिका सहित ४३ पृष्ठ तथा जितना यहां वेदार्थयत्न[७] के अंक हैं अर्थात् २० अंक वे सब भेजेंगे। तुम

---

१. पूर्ण संख्या ४५४ (पृष्ठ ३६६) में ३,४ पत्र भेजने का उल्लेख है। ये पत्र कब कब भेजे गये, यह अज्ञात है। २. इस का निर्देश अगले पूर्ण संख्या ४५४ के पत्र में है। ३. १५ अक्टूबर १८८२।

४. शताब्दी संस्करण, भूमिका पृ० १८ पर खण्डशः मुद्रित। Works of Maharshi Dayanand पृ० १२८ पर शताब्दी संस्करण की अपेक्षा कुछ अधिक भाग मुद्रित। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित हैं। ५. देखो पूर्ण संख्या ४४५ पृ० ३६१ का पत्र। यु० मी०।

६. २६ अगस्त को ३२ पृष्ठ तक भेजे थे। देखो पत्र पूर्ण संख्या ४२०।

७. सायणकृत अथर्ववेदभाष्य के सम्पादक पण्डित बालकृष्ण शङ्कर पाण्डुरङ्ग इस ग्रन्थ वेदार्थयत्न को निकाला करते थे [इस में सायण भाष्य के आधार पर ऋग्वेद का मराठी और अंग्रेजी में अनुवाद रहता था]।

हम को यह लिखना कि सत्यार्थप्रकाश के कितने पृष्ठ एक फारम में लगते हैं। सो ब्यौरे वार से जब लिख भेजोगे तब हम यहां से अनुमान करके लिख देंगे कि सब सत्यार्थप्रकाश के इतने फ़ार्मे होंगे। हम ने तुम को कई एक बार लिखा कि वहां जो कुछ हमारी फुटकर चीज व वस्तु पड़ी हैं उस का सूची बना के भेजो। सो अभी तक नहीं भेजा। शीघ्र अब लिखके भेजना।

शोक की बात है कि **तीन चार पत्र हम भी सेवकलाल** को भेज चुके हैं। परन्तु एक का भी उत्तर न दिया। इसी प्रकार तूहमारे पत्रों के विषय में कर्ता होगा। जो तुम इस से काम चलते न देखो तो स्वतन्त्र किसी मातवर आदमी की दुकान से कागज़ आदि मंगवाने के लिये प्रबन्ध कर लो। क्योंकि अब तुम्हारे पास वहां कुल १० रीम बाकी हैं। जो शीघ्र न भेजेगा तो कागज़ के बिना काम ही बन्ध हो जायगा। जहां से टैप मिले वहां से जितना चाहो मंगवा लो। इस विषय में पंडित जी को भी हमने लिखा था कि टैप मंगवाने की तुम को आज्ञा देदें। न जाने तुम को आज्ञा दी वा नहीं। आशा है कि अवश्य वे तुम को आज्ञा देंगे। और तुम शीघ्र टैप मंगवा लो। परन्तु हम को यह लिखो कि तुम कै मन टैप मंगवाना चाहते हो और क्या खर्च पड़ेगा। इस बात का निश्चय करके लिखो। अब तुम रजिस्ट्री कराके पत्र सेवकलाल के नाम से भेजो कि जिस में उस की सही तुम्हारे पास आ सके। **हम ने भी आज एक पत्र मास्तर प्राणजीवनलाल कानदास जी के नाम से भेजा है।** क्योंकि वे उस को समझा देंगे और जिन बातों का उत्तर हमने मांगा था सो सो भी सब उसमें लिखवा भेजेंगे। हमारा आशीर्वाद जज कार्ष्टीफन साहेब को लिख भेजना। कुंवर जवाहरसिंह जी के रुपये अर्थात् २२॥‒) भीमसेन के मार्फत हमारे पास आये, सो तुमको लिखा था, वेदभाष्य में क्यों नहीं छपे। क्या अगले में छापोगे? और रजिस्टर में जमा कर लेना।

सम्वत् १९३९ आश्विन सुदी ३ रवि।[१] (उदयपुर)

[दयानन्द सरस्वती]

---

[२२] कार्ड (३८५) [४५५]

ओ३म्[२]

लाला कालीचरणदास जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि तुम **आर्य्यसमाज के पत्र में नाटक का विषय मत छापो**[३]**। यह अनुचित बात हैं। यह आर्य्यसमाज है। भडुआ समाज नहीं।** जो तुम नाटक का विषय

---

१. १५ अक्तूबर २८८४।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फरूखाबाद में सुरक्षित हैं। फरूखाबाद का इतिहास पृ० २०२ पर भी छपा है। इस की प्रतिलिपि म० मामराज ने की।

३. पूर्ण संख्या ४४१ के विज्ञापन में 'नाटक का निर्देश है। सम्भव है उसमें 'नाटक' पद ऋषि दयानन्द की सम्मति के बिना मुद्रण काल में बढ़ाया होगा। यु० मी०।

छापते हैं ऐसा करना भड़ुआपन की बात है। इस लिये ऐसा वर्त्तना उचित नहीं।

ता० १६ अकटूबर[1]। [द० स०]

---

[९] पत्रांश (३८६) [४५६]

[माई भगवती[2]......................................हरियाना, पञ्जाब]

....................तू लाहौर जा सके तो हम लाहौर आर्यसमाज को तेरे वास्ते लिखें।......

१६ अक्तूबर १८८२[3]।

---

[१०] पत्र (३८७) [४५७]

ओ३म्[4]

महाशय बाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते विदित हो—

पत्र तुम्हारा पहुंचा। कुशल समाचार ज्ञात हुए। परमात्मा की कृपा से यहां श्री परमगुरु जी आदि सब आनन्द मङ्गलयुत हैं। अनुमान है कि अब थोड़े दिनों के पश्चात् स्वामी जी की उदयपुर से अन्य स्थ[ा]न को य[ा]त्रा होगी। मेरा निज समाचार आप से मित्रता होने के कारण विदित करता हूं कि मेरे पिता जी का स्वर्गलोक हो गया है। इस करण से अब मैं घर को जाने वाला हूं। अनुमान है कि दश वा बाहर दिन के पश्चात् जाऊंगा। दूसरा प्रजोज[न] यह भी है कि मैं कुछ काल निरन्तर पढ़ना चाहता हूं। क्योंकि ब्रह्मचर्याश्रम केवल मैंने विद्या पढ़कर परोपकार करने के अर्थ लिया है और श्री परम गुरु स्वामी जी की भी पूर्ण कृपादृष्टि है। अब आप को पत्र मैं फरुखाबाद पहुंचने पर दूंगा॥

अब जो आप के प्रश्न और जो फरुखाबाद में रुपये दिया करते हो उसका उत्तर श्री गुरु जी की आज्ञा से लिखता हूं। आप निश्चय समझना॥

१—रुपयों के विषय में स्वामी जी ने यह आज्ञा दी कि रुपये फरुखाबाद में ही भेजना चाहिये। और हमारे पास जितना रुपया पंडितों के मासिक में लगता है वह फरुखाबद ही से लगा करता है। अभी हाल में २००) रुपये मुम्बई में मंगवाये थे। तुम कुछ संदेह मत करो। वहां से जब २ हम चाहते हैं, मंगवा लेते हैं। इस लिये तुम वहीं भेजना॥

प्रश्नों का उत्तर—धर्म कार्य के करने में जो पिता आदि किसी प्रकार का विघ्न करें तो उनकी ऐसी बात सर्वथा अमन्तव्य है। हां, पुत्र को उचित है कि माता पिता चाहे कैसे ही दुष्टाचारी क्यों न

---

१. सन् १८८२ [आश्विन सुदी ४, सोम सं० १९३९]। पत्र की मोहर पर उदयपुर से पत्र का चलना लिखा है।

२. इस ने बम्बई में श्री स्वामी जी के दर्शन किये थे। देखो पं० देवेन्द्रनाथ संक० जी० च० पृष्ठ ३४७। यु० मी०।

३. यह पत्रांश और इस का संकेत म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ४५०-५२ पर है। [आश्विन सुदी ४ सं० १९३९।]

४. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

हों उनकी अन्न वस्त्र से सेवा अवश्य ही करनी चाहिये । जो वे पुत्र की सेवा न चाहें तो ऐसा करना उचित है कि जिस समय पुत्र अपने माता पिता को दुःखी देखे, उस सम[य] विना पूछे गाछे सेवा करना उस को चाहिये ॥

२—चाहे कोई निन्दा वा स्तुति करे वा न करे तो भी धर्म जो कि सत्य भाषणादि है नहीं छोड़ना । क्योंकि लौकिक जि[त]ने मनुष्य हैं उन से मित्रता यहीं काम में आती है परन्तु परलोक में धर्म्म के विना दूसरा सहायक मित्र कोई भी नहीं है । देखिये इस विषय में एक श्लोक लिखे देता हूं । आप कण्ठस्थ कर लेना --

(निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥)

इसका अभिप्राय यह है कि संसार में चाहे कोई निन्दा करे वा स्तुति, लक्ष्मी अर्थात् धनादि पदार्थों की प्राप्ति हो चाहे अप्राप्ति, और मरण चाहे इसी समय हो वा कालान्तर में, परन्तु धीर पुरुष ऐसी २ विपत पर भी धर्मरूपी मार्ग नहीं छोड़ते । इस का फल यह है कि जो पुरुष ऐसा दृढ़निश्चय-युक्त धर्म पथ में स्थिर होता है उस के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों की प्राप्ति होती है ॥

स्त्री का पढ़ाना अत्युत्तम है, यथेष्ट पढ़ाओ । और संस्कारविधि के अनुसार गर्भाधान संस्कार [कर]के पुत्रोत्पत्ति करना ॥

हे प्रिय ! अब मैं अपनी ओर से इतना विशेष लिखता हूं कि तुम अपनी स्त्री को इस मन्त्र को शुद्ध बतला देना—

(ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव यद्भद्रं तन्न आसुव) यजु० अ० ३० मं० ३

इस का अर्थ भूमिका[1] में देख के सुना देना । इस समय पिता जी के देवलोक हो जाने के कारण विशेष आप को नहीं लिख सका, परन्तु जब २ आप को कुछ प्रष्टव्य हुआ करे, आप अवश्य लिखा करें । मैं उत्तर देने में आलस्य न करूंगा ॥

कार्त्तिक शुदी १ सम्वत् १९३९[2] ॥ (रामानन्द ब्रह्मचारी)
उदयपुर

---

[१] यजुर्वेदभाष्य समाप्ति की सूचना [४५८]

मार्ग कृष्ण १ शनिवार सं० १९३९[3] में समाप्त किया[4] ।

---

१. अर्थात् ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका । यु० मी० । २. ११ नवम्बर १८८२ ।

३. २५ नवम्बर १८८२ । यु० मी० ।

४. यह सूचना मुद्रित यजुर्वेद भाष्य के अंक ११६, १७७ (सम्मिलित) के पृष्ठ १२६० के अन्त में छपी है । इस विषय का मुंशी समर्थदान प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय प्रयाग का निम्न विज्ञापन भी दर्शनीय है—

[१] महाराणा श्री सज्जनसिंह जी उदयपुर की दिनचर्या के लिये नियम[1] [४५९]

तत्

जब न्यायस्थान पर जावे तब सब प्रजास्थ वादी प्रतिवादी साक्षी राजपुरुष सम्प्रेक्षक आदि मनुष्यों को प्रसन्नवदन कृपादृष्टि से आनन्दित करे। दक्षिण हाथ उठा कर सब को स्वास्थ्य अभयदान देकर न्यायासन पर बैठ सर्वव्यापक यथावत् न्यायकारी अन्तर्यामी को मन से नेत्रोन्मीलन करके प्रार्थना करे कि हे परमेश्वर आप की कृपादृष्टि हो जिस से मैं चाहता हूं कि कभी काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोकादि के वश हो के अन्याय न करूं। ऐसा अनुग्रह आप भी कीजिये। परन्तु इस बात को सदा ध्यान में रक्खे कि सब कामादि और अन्याय में फसाने वाला लोभ हैं। उस को अपने से और आप उस से सदा दूर रहे। उस समय न किसी का शत्रु और न किसी का मित्र तथा उदासीन बने। किन्तु समदृष्टि कि जैसा पक्षपात छोड़ परमेश्वर वा आप्तपुरुष सब के साथ वर्तता है वैसें वर्त्ते। प्रत्येक सप्ताह में गुरुवार के [दिन] ऋणादानादि में विवाद अर्थात् दिवानी का न्याय करे। और रविवार के दिन साहसिकों का अर्थात् फहोजदारी का न्याय करे। जब अर्थी वा प्रत्यर्थी अथवा साक्षी जो कुछ स्वभाव से बोले उस पर अतीव ध्यान देकर विचार करे। और उनको कठिन से कठिन शपथ करावे। सब साक्षियों को पृथक् २ रक्खे। सीखावट की साक्षी को न माने। और यह भी जना देवे कि मिथ्या बोलने, मानने और करने वाले को इस जन्म और परजन्म में सुख व प्रतिष्ठा नहीं होती। और देखो थोड़े से जीवन में धर्मात्मा अर्थात् सत्यवादी सत्यमानी सत्यकारी मनुष्य धर्मार्थ काम मोक्ष फलों को प्राप्त होता और मिथ्यावादी, मिथ्यामानी अनृतकारी सर्वदा दुःख को प्राप्त होता है। इस लिये किसी को आत्मा और परमेश्वर के मिथ्याभाषणादि से शत्रु न बनना चाहिये। जैसा कुछ तुम्हारे आत्मा में हो वैसा ही जीभ से बोलो। जब वे कुछ भाषण करें वह सब लिपिबध होवे। और उन के नेत्र तथा मुखाकृति की ओर देख कर भीतर के आशय को पहिचाने। यदि कोई बड़ा ढीठ अथवा प्राड्विवाक अर्थात् बारिष्टर वा वकील जो कुछ परस्पर प्रश्नोत्तर करें उस पर ध्यान दे कर सुने तथा लिखे। यदि जहां २ पूछ उचित हो पूछे। बीच में अन्य २ सम्वाद करके वक्र वा सरलता से प्रश्न करे। यदि इतने पर भी सत्यासत्य का निर्णय न हो तो उन पर विश्वास न कर के जहां वह विरुद्ध कार्य हुआ हो वहां के सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष और स्त्रियों की साक्षी में स्त्री जनों से पूछ कर

"सब सज्जनों को विदित हो कि श्री स्वामी जी महाराज ने यजुर्वेदभाष्य बना कर पूरा कर लिया है और ईश्वर की कृपा से ऋग्वेदभाष्य भी इसी प्रकारं शीघ्र पूरा होगा.......................।"

देखो ऋग्वेदभाष्य माघ कृष्ण सं० १९३६ अंक ४६, ४७ (सम्मिलित) के अन्त में।

यजुर्वेदभाष्य का मुद्रण वैशाख शुक्ल ११ शनिवार १९४६ में समाप्त हुआ था। देखो यजुर्वेदभाष्य अङ्क ११६, ११७ (सम्मिलित) पृष्ठ १२६० के अन्त में

इस विषय में जो अधिक देखना चाहें वे हमारे "ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास" नामक ग्रन्थ में (पृष्ठ १०४–१०८) देखें। यु० मी०।

१. पूर्ण संख्या ४६० (पृष्ठ ३७५) के पत्र में इस दिनचर्या का उल्लेख है। पं० चमूपति जी सम्पा० पत्रव्यवहार पृष्ठ १४८–१६२ तक छपी है। उस में दो तीन शब्द अशुद्ध हैं। हमने म० मामराज जी की की हुई प्रतिलिपि से छापा है। मूल लेख ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में था।

निश्चय करे परन्तु स्त्रियों से राणी पूंछे। अथवा यदि पड़दे में रक्खे तो बड़े प्रबन्ध से रख के पूछे कि वहां उस के बदले दूसरी स्त्री न बोले। यदि सामने होवे तो न कोई उस पर दृष्टि डाले न हास्य करे और न डरावे। इतने पर भी सत्यासत्य का निर्णय न हो तो गुप्त में उन को बात करते सुन अथवा धार्मिक आप्तजन दूतों के द्वारा निश्चय करे। पश्चात् जो अपराधी हो उसको यथायोग्य दण्ड दे कर हरावे। और अनपराधी का मान्य कर जितावे। जो हारे उस पर ताना न मारे। किन्तु ऐसा कहे कि देखो भाई मैं तुमसे ऐसे काम करने की आशा नहीं करता था। तुमने ऐसे कुल वा ऐसे के पुत्र हो कर ऐसा अनुचित काम किया। इस पर मुझ को बड़ा शोक है। हे भद्र यदि तू ऐसा काम न करता तो ऐसे दण्ड को प्राप्त क्यों होता। यदि कोई धूर्त वा आतुर बुरा शब्द बोले वा कुचेष्टा करे, सह लेना। परन्तु अपने शरीर की रक्षा सब प्रकार से करना। और सब की मानसी वा बाह्य चेष्टा को जानते रहना। चाहे कोई कितनी ही प्रार्थना करे वा क्रोड रुपैये भी दे कर अन्याय कराया चाहै तो भी कभी अन्याय न करे। यही राजा के प्रताप, कीर्ति, श्री और राज्य बढ़ाने वाला कर्म है। यदि भूमि धन धरावट सीमा आदि जितने विवाद लेख वचन से हों अथवा साहस मारपीट कुवचन आदि से दूसरे को पीडा वा हानि पहुंचावें उनका भी न्याय यथोचित करे। जैसा मनुस्मृति के अष्टम और नवमाध्याय में न्याय व्यवस्था १८ प्रकारों में लिखी है यथायोग्य करे। ये सब काम मध्यान्होत्तर चार बजे तक कर के कुछ ४५ पल अर्थात् १५ मिनट तक स्वस्थ होकर जिन के साथ मिलके राज प्रबन्धार्थ विचार करना चाहिये ५। सवा बजे तक प्रजास्थ जनों से बात करे। पश्चात् यदि प्रातःकाल १० बजे भोजन किया हो और उष्णकाल हो तो शौच आदि से निवृत्त हो कर ६ छः बजे तक भोजनादि से निवृत्त होकर जहां का शुद्ध वायु शुद्ध देश एकान्त हो पैदल घूमने को जाय। यदि चलने में असमर्थ हो तो सवारी पर बैठ कर घूमे। परन्तु यदि शीतकाल हो तो परमेश्वर की उपासना के पश्चात् भोजन करे। अर्थात् उष्णकाल में आठ बजे पर्यन्त भोजन के पश्चात् घूमना उपासना करनी उचित है। और शीतकाल में भी ५ बजे से सात बजे तक भ्रमण उपासना से निवृत्त हो कर साड़े सात बजे तक भोजन कर ले[1]। पश्चात् ४५ पल अर्थात् १५ मिनट पर्यन्त किसी से न बोले। किन्तु हस्त मुख प्रक्षालन कर लघुशंका से निवृत्त हो ताम्बूल भक्षण कर शतपद घूम के किंचित् उत्तान, दक्षिण और वाम प्रार्श्व से लोट कर उठ बैठे। तत्पश्चात् अर्थात् पौने आठ बजे से नौ बजे तक दूत द्वारा स्वदेश स्वनगर परदेश पर-राज्य के समाचार जो कि अपने और दूसरे के सम्बंध में हो, सुने। और उसे स्वकार्यसिद्धि के लिये आज्ञा भी देवे। नौ से दश बजे तक आय व्यय आदि का वृत्तान्त सुन कर अगले दिन के लिये यथोचित प्रबन्ध करे। पश्चात् आध घण्टे में इष्ट मित्र वा मन्त्री आदि से जो कि उस समय उपस्थित हो प्रसन्नतापूर्वक विदा कर के साढ़े दश बजे शयन करे। यदि उष्णकाल हो तो १० बजे तक इन सब कामों से निवृत्त हो शयन करे। शयन एकान्त में करे। और उसी समय परमेश्वर को इस लिये धन्यवाद देना कि हे परमेश्वर आपकी कृपा से गत अहोरात्र जैसा आनन्द पूर्वक बीता वैसे ही अग्रस्थ अहोरात्र भी आनन्द पूर्वक व्यतीत होवे। दो दिन[2] में पूर्वोक्त दो काम

---

१. तुलना करो सत्यार्थप्रकाश चतुर्थ समुलास प्रथम संस्करण। यु० मी०।

२. अर्थात् गुरुवार, रविवार। देखो पृष्ठ ३६६। यु० मी०।

करने[1]। मंगल के दिन किसी राजपुरुष ने वा अन्य राज्य से प्रजास्थ वा राज जन पीड़ित हुए हों उनकी बातें और तीन दिन अर्थात् बुध शुक्र और शनैश्चर में सब राज्य की उन्नति और स्वास्थ्य के लिये प्रबन्धार्थ अकेले वा मुख्य धार्मिक स्वराज्य भक्त मंत्रियों के साथ विचार करना चाहिये।

विशेष नियम।

१—जब पति और पत्नि समक्ष हों प्रसन्नता पूर्वक नमस्ते कर जिस २ प्रकार दोनों में प्रेम बढ़े वैसा व्यवहार करें। विरुद्ध कभी नहीं।

२—ऋतुदान के पश्चात् किंचित् ठहर स्नान कर शालव मिश्री केशर आदि सुगन्धियुक्त परीपक्व दुग्ध शीतल यथारुचि पी के ताम्बूल भक्षण कर मुख प्रक्षालन कर के पृथक् २ शयन करें॥

३—दोनों सदा विद्या धर्म प्रजासुख के लिये तन मन धन से प्रयत्न किया करें॥

४—किसी वेद विद्या युक्ति विरुद्ध मतमतान्तर के झगड़े में दोनों कभी न फंसे। किन्तु पक्षपात रहित न्यायाचरण वेदोक्त धर्महीं का आचरण करें और करावें।

५—अपने वा पराये राज्य में जहां तक शक्य हो किसी मत वाले की बहकावट से विद्यायुक्ति विरुद्ध मत में किसी को न फंसने देवें। यदि कोई समझाने पर न माने जो कूप में गिरना ही चाहे तो उसका अभाग्य समझना चाहिये॥

६—जब बुरे बुराई नहीं छोडते तो भले भलाई क्यों छोड़ें।

७—सदा सनातन वेद शास्त्र आर्य राज राजपुरुषों की नीति पर निश्चित रह कर इनकी उन्नति तन मन धन से सदा किया करें। **इनसे विरुद्ध भाषाओं की प्रवृत्ति वा उन्नति न करे वा करावे। किन्तु जितना दूसरे राज्य के सम्बन्ध में यदि वे इस भाषा को न समझ सकें उतने ही के लिये उन भाषाओं का यत्न रक्खे, जो वह प्रबल राज्य हो।**

८—कभी बिना विचारे लिखे नियत काल के आज्ञा न देवे। पश्चात् जैसी जितने समय में कार्यसिद्धि करने की आज्ञा दी हो वह यथावत् नियमित समय में पूरी हुई वा नहीं उस पर ध्यान सदा रक्खे।

९—जो यथोक्त समय में आज्ञा को यथावत् प्रीति से पूरी करे उस का सत्कार करना पारितोषिक देना और उस की उन्नति करना अति योग्य है। और जो यथोचित न करें उस का अपमान दण्ड और ह्रास किये बिना कभी न छोड़े।

१०—विना योग्यता वा परीक्षा के किसी को बड़ा वा छोटा अधिकार न देवे। किन्तु जो धर्मात्मता से उस कार्य के करने में समर्थ हो उसी के आधीन वह कार्य सिद्ध करे वा करे वा करावे। दरिद्र वा लोभी को प्रारम्भ में बड़ा अधिकार भी न देवे। और कुटुम्ब सम्बन्धी परस्पर मित्रों को भी एक अधिकार में न रक्खे।

११—सदा वेदोक्त धर्मावलम्बी अधिकारियों पर अन्य मतावलम्बियों को अधिकार न देवे। किन्तु जिस २ कार्य में न्याय वा (उपदा) अर्थात् रिश्वत खाने का सम्बन्ध हो उन को छोड़ अन्य गौणाधिकारों में वैदिक धर्मावलम्बियों से कार्य सिद्ध न हो सके, रक्खे।

---

१. सोमवार का निर्देश यहां छूट गया है। यु० मी०

१२—जो प्रीतिपूर्वक धर्मात्मता से ३० वर्ष तक राज कार्य करे उन को आधी नौकरी जब तक वे जीवें देवे। यदि संग्रामादि में जिसका मृत्यु हुआ हो उसकी स्त्री पुत्रों को भी उसी प्रकार देवे। यावत् उनके पुत्र समर्थ न हों। जब समर्थ हों तब उनके पुत्रों को यथायोग्य अधिकार देवे। परन्तु उस की स्त्री को योग क्षेमार्थ यथोचित जब तक व[ह] जिये सदा दिया करे। यदि वह पांच रुपये मासिक पाता हो पूरा देवे। पुत्रों के समर्थ हुए पर स्त्री को आधा देवे।

१३—सब के लड़के लड़कियों को ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्या दान दिलावे।

१४—न्यून से न्यून सोलहवें वर्ष कन्या और २५वें वर्ष लड़के का स्वयम्वर विवाह होने देवे, पूर्व नहीं।

१५—अपनी सत्ता शक्ति को यथासम्भव बढ़ाता जावे, न्यून न होने देवे।

१६—अपने अंश को न छोड़े और पराये अंश का स्वीकार कभी न करे।

१७—संग्राम में जो सेनास्थ पुरुष जीत में शत्रुओं के पदार्थ पावें उन में से १६वां भाग आप लेवे। और समुदाय के जीते हुये पदार्थों में से १६वां भाग चाहे कितने ही क्रोड़ों रु० क्यों न हों सेना को अवश्य देवे। १५वां भाग आप रक्खे।

१८—युद्ध में जो शत्रु घायल हो उस की रक्षा ओषधी अवश्य करे। स्त्री, बालक, वृद्ध, आतुर, भीरु, शरणागत पर शस्त्र कभी न चलावे।

१९—हारे हुए शत्रु की अप्रतिष्ठा कभी न करे, किन्तु उस का यथायोग्य मान्य रक्खे। परन्तु उस को छोड़ कर स्वतन्त्रता कदाचित् न देवे।

२०— सदा प्रयत्न से अलब्ध के लाभ की इच्छा, लब्ध की सम्हाल से रक्षा, रक्षित की व्य[ाजा]दि से वृद्धि और बढ़े हुए पदार्थों का व्यय विद्या धर्म राज्य की वृद्धि इन[के] प्रचार [और] अनाथों के पालनादि शुभ व्यवहारों में करे।

२१.—सर्वदा सन्तानों की शिक्षा में धन का व्यय करे, किन्तु विवाह, मृत्यु आदि में न करे।

२२—सदा दासी वेश्यागमन हास्य नृत्य भांड चारण आदि के मिथ्या स्तुति कराने आदि व्यवहार से पृथक् रहे। और अन्य को भी ऐसे प्रसंगों से सदा बचाया करे।

२३—सदा पूर्ण युवाऽवस्था में अर्थात् २५ वर्ष के उपरान्त हृद्य स्व[स]दृश्य एक स्त्री से विवाह करे और उसी से सदा ऋतुगामी रहे। यदि प्रमाद से अनेक स्त्री हों तो भी उन के साथ पक्षपात छोड़ नियमित समय में एक सा वर्त्ते।

२४—उन में परस्पर द्वेष उत्पन्न न होने दें। किन्तु सब को तुल्य अन्न वस्त्राभूषण सम्भाषणादि प्रेम व्यवहार तुल्य रक्खे और प्रेम रखवावे।

२५—उन स्त्रियों को योग्य है कि एक के पुत्र होने में सब अपने को पुत्रवती समझें। तथा सब भाई भी एक के पुत्र होने में अपने को पुत्रवन्त मानें।

२६—राजा और राज्ञी का जिस २ कर्म से पति पत्नी में और प्रजा में परस्पर प्रेम बढ़े उस २ का सेवन और विपरीत का सर्वथा त्याग करे।

२७—सुपरीक्षित दूत द्वारा राज्य और राजपुरुषों की सुचेष्टा और कुचेष्टा से अपने को अभिज्ञ रक्खे। जिस २ यत्न से उन की कुचेष्टा छूटें और सुचेष्टा बढ़े, वैसा यत्न सदा किया करे।

२८—अपराध में प्रजा से राजपुरुषों पर अधिक दण्ड होना चाहिये । क्योंकि बकरी के प्रमाद रोकने से सिंह का प्रमाद रोकने में अधि[क] प्रयत्न होना उचित है।

२९—जैसे राजा और कृषीवलादि प्रजा सुखी रहे वैसा कर-प्रबन्ध प्रजा में करे । और उन्हीं कृषीवलादि को सब राज्य के सुख का मूल कारण समझ उन से पितावत् वर्तें।

३०—जहा (साम) मेल (दाम)[1] कुछ दे (भेद) तोड़ फोड़ से शत्रु वश में न आवें वहीं दण्ड प्रचरित करना चाहिये।

३१—किसी धर्मात्मा से विरोध वा लड़ाई करना न चाहे और दुष्ट से विरोध वा लड़ाई निःशंक करे।

३२—सब काम धार्मिक सभ्यों के बहुपक्षानुसार नियत करे। और वह आज्ञा जो कि प्रजा के साथ सम्बन्ध रखती हो, सब में प्रजा की संमति लेवे और सर्वत्र [प्र]सिद्ध करके गुण दोष समझे। पश्चात् गुणाढ्य नियमों को नियत और दोषयुक्तों का त्याग करे।

३३—अपना वा अपने कुटुम्ब का नित्य नैमित्तिक व्यय भी नियमपूर्वक करे।

३४—जिस किसी को मासिक धन वा भूमि धर्मार्थ अथवा गुणानुसार कुछ भी देवे वह यावत् माननीय जीवे वा अन्यथा न वर्ते तावत् वह दान रहे पश्चात् नहीं।

३५—यदि पूर्वजों ने इस से विपरीताशय लेखपूर्वक किया हो और उस के कुलोत्पन्न वैसे न वर्तते हों तो भी वह दिया न दिया हो जावे। क्योंकि वह जिस समय दिया जाता है वह उत्तम काम के लिये होता है।

३६—परन्तु धर्मार्थादि के लिये जो दिया हो उस के भोक्ता अन्याय से वर्तते हों तो भी उस अंश को राजांश में न मिलावे, किन्तु कुकर्मी से छुड़ा योग्य धर्मात्मा को उस का अधिकारी करे। यदि वह भी प्रमादी हो तो पूर्वोक्त प्रकार उस से भी लेके अन्य योग्य को, यदि उसी के कुल में योग्य न हो तो देवे।

३७—यदि उन के सन्तान पितरों से अधिक योग्य हों तो उन को अयोग्य के अंश में से अधिकांश देवे और अधिक प्रतिष्ठा करे।

३८ यदि न्यायाधीश ही प्रमादी होकर अन्याय किया चाहे तो उन को राज्य और प्रजा के धार्मिक प्रधान पुरुष समझावें कि आप अन्याय मत कीजिये। यदि न मानें तो उस को पदच्युत करके जो उसी के कुल में निकट सम्बन्ध से न्यायास्पद के योग्य पुरुष हो उस को न्यायाधिकारी करें। परन्तु यह काम पक्षपात रहितता से होना उचित है। क्योंकि राज्य और विद्या, तथा धर्म की वृद्धि और अधर्म की हानि के लिये सब प्रतिष्ठा है प्रमाद के अर्थ नहीं।

३९—सब राज्य के आय में से दशांश धर्मादि के लिये नियत रक्खे। उस से वेदविद्या धर्म

---

१. संस्कृत का शुद्ध शब्द दान है। राजधर्म प्रकरण में साम दान दण्ड और भेद इन चार उपायों का उल्लेख है। हिन्दी भाषा में साम के साहचर्य्य से दान का दाम बन गया है। इस पर विशेष टिप्पणी ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेद भाष्य के हमारे द्वारा हुए भाषानुवाद भाग १ पृ० ७० पर देखें। यह ग्रन्थ भी श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित हुआ है।

सुशिक्षा की वृद्धि के लिए अध्यापक और उपदेशक प्रचिरित करें। आपत् काल में राज्य और अनाथों की रक्षा भी उसी धन से करे।

४०—और राज्य से आय के नवांशों में से दो भाग स्थिर कोश, दो अंश राजकुल, तीन अंश सेना विभाग, एक अंश स्थानविशेष और एक अंश शिल्प विद्या की उन्नति में लगावे।

४१—राज का कार्य एक पर निर्भर न रक्खे। किन्तु राजपुरुष और प्रजा पुरुष की अनुमति के अनुकूल प्रचलित करें।

४२—जो राजासन पर नियत हो उस का किंचित् भी अपमान कोई मन कर्म वचन से न करे। किन्तु जो जिस पर प्रधान हो चाहे उस से अप्रधान किसी गुण में अधिक भी क्यों न हो तथापि परमेश्वर से द्वितीय स्थान में माननीय राजा और स्वामीवत् माननीय अपने २ प्रधान को मानें।

४३—अधिष्ठाता लोग राजाज्ञा को अपने प्राण से भी अधिक मानें, चाहे कोई कैसा ही सम्बन्धी वा मित्र क्यों न हो। परन्तु जब राजाज्ञा भंग वा उस में आलस्य करे तब वह शत्रुवत् दण्डनीय हो जावे।

४४—प्रथम सब प्रयत्न से विचार कर सर्वहित समझ के आज्ञा देनी चाहिये। पश्चात् उस को पूरी करने में पूरा ध्यान और पुरुषार्थ रक्खे।

४५—अपने आत्मा वा शरीर को राजा वा अधिकारी न समझें, किन्तु राजनीति ही को राजा और राज्यधिकारिणी मानें।

४६—इस को निर्दोष और चलाने के लिये एक राजसमाज, दूसरा विद्यासमाज और तीसरा धर्मसमाज नियत करे।

४७—इन समाजों में राजपुरुष और प्रजापुरुष नियत रहें। राजपुरुष राजोन्नति और प्रजापुरुष प्रजा की वृद्धि में प्रयत्न किया करें। और तीनों समाजों के विचारानुकूल नये नियम प्रचरित किये जावें।

४८—जो २ आज्ञा इन समाजों से निश्चित हो कर प्रचरित की जायें उनका उलंघन कोई भी न करे। यदि करे तो वह सब का अमाननीय और दण्डनीय [हो]।

४९—सदा वेदादिशास्त्र मनुस्मृति के सप्तम, अष्टम और नवम अध्याय, महाभारत के राजधर्म, आपत्धर्म और विदुरप्रजागर विदुर नीति के शब्दार्थ सम्बन्ध और कर्त्तव्य को सब राजपुरुष जान के तदनुकूल वर्त्तें। और इनके प्रचार में सदा प्रयत्न किया करें।

५०—जो २ सामयिक नियम और उपनियम नियत करना होवे तो पूर्वोक्त समाज और वेदादिशास्त्रों के अनुसार निश्चित करें और करावें।

५१—यह निश्चय है कि जैसा शील आचरण उत्साह और पुरुषार्थ प्रधान पुरुष करता है वैसा ही इतरजन वर्तते हैं। इसलिये प्रधान पुरुषों को अत्यावश्यक है कि सदा अधर्मयुक्त कर्मों को छोड़ कर न्याय रूप धर्मकृत्यों में वर्त्ता करें। क्योंकि जो २ धर्म वा अधर्म प्रधानपुरुष दृष्टान्त से इतर जनों में प्रवर्तमान होता है उस का मुख्यनिमित्त प्रधान हो कर फल भागी होता है। इस लिये मुख्य पुरुषों को बहुत विचार से वर्तना चाहिये।

———

[७] कार्ड (३८८) [४६०]

ओ३म्[१]

बाबू कृपाराम जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि पत्र तुम्हारा पहुंचा। समाचार ज्ञात हुए। और जो तुमने ५०००[०] पचास हज़ार की सही कराके मेरठ भेज दी, सो अच्छा किया। और ब्राह्मी औषधी सेर भर का पारसल कर के उदयपुर में भेज दो। यहां उदयपुर का समाचार अतीव प्रशंसनीय है। और सुनकर सब को आनन्द भी होगा। श्रीमान् आर्य्यकुल-दिवाकर महाराणा जी बहुत योग्य हैं। उन्होंने हमारे उपदेशानुसार[२] अपनी दिनचर्य्या, राजकार्य्य और धर्मकृत्य भी करना आरम्भ कर दिया है। प्रातः सायं काल सात बजे मेरे पास नित्य प्रति आया करते हैं। कभी २ रात्रि को मैं शम्भु-विलास महिल में जाया कर्ता हूं। प्रातः काल कुछ योग वा राजनीति की शिक्षा होती है। और सायंकाल दर्शन शास्त्रों के उपयोगी विषय पढ़ते हैं। उनके साथ बहुत से भाई बेटे तथा अमात्यवर्ग भी पढ़ते हैं। और सब अच्छी बातें हैं। आगे जो २ उत्तम बात होने वाली हैं, होंगी, तो सबको प्रसिद्ध कर दी जायंगी।

सं० १९३९ मार्गशीर्ष वदि ५, ता० २९ नवम्बर [१८८२]।

दयानन्द सरस्वती

---

[१०] पत्र (३८९) [४६१]

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[३]।

विदित हो कि बहुत दिनों से अवकाश नहीं होने के कारण पत्र नहीं लिखा। अब कुछ प्रसंग से लिखते हैं। यहां का वर्त्तमान बहुत अच्छा है। जो लिखने लगे तो एक पुस्तक बन जावे। सो पीछे सूक्ष्मता से आप को विदित कर देंगे। परन्तु यही समझ लेना कि समाचार बहुत ही अच्छा है। जब आप सुनेंगे प्रसन्न तो अवश्य हो जावेंगे। और हर साल आप शीत काल में घूमने को जाते थे। यदि आप की इच्छा हो तो यहां हम कम से कम १५ दिन रहेंगे। आप आवें तो यहां का वर्त्तमान भी सब विदित हो जावेगा। और श्री महा[रा]णा जी तथा अन्य राजपुरुषों से भी आप का मेल मिलाप हो जावेगा। सो यदि आप आवें तो १५ दिन के भीतर ही विचार करना चाहिये। सो जो आप के आने का पत्र यहां आवेगा, तब चितौड़गढ़ रेल से यहां तक आने के लिये सवारी का प्रबन्ध भी हम कर देंगे। और लाला कालीचरण जी से कह दीजिये कि

---

१. मूल पत्र पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार की भगिनी के पास गुरुकुल कांगड़ी में है। उस से सन् ३३ में म० मामराज ने शुद्ध किया। पहले मेरठ से आई प्रतिलिपि से छापा गया था।

२. पूर्ण संख्या ४५६ पर छपी दिनचर्य्यानुसार। यु० मी०।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। म० मामराज ने इस की प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २१९-२० पर भी कुछ पाठ भेद के साथ छपा है।

उनका पत्र हमारे पास आया। हमारा अभिप्राय यह नहीं था कि ६००) वा ३००) तुमको देने पड़ेंगे। किन्तु लिखने वाले की भूल है। हमारा अभिप्राय यह है कि २००) रु० कम से कम देना चाहिये कि जिस से ३ फारम का नवीन टाईप मंगा लिया जा[वे]। और ६००) रुपये के विषय में यह अभिप्राय है कि जो समाजों के समाचारपत्रादि सब पुस्तक छपने लगेंगे, तो दूसरा प्रेस मंगवाने के लिये जिन २ के पुस्तक छपेंगे सब से रु० लिये जायेंगे। और निकाल भी दिये जायेंगे। अब भारतसुदशाप्रवर्तक [में] पं० लक्ष्मीदत्त जी से लिखाना चाहिये। **वे संस्कृतयुक्त अच्छा विषय लिखेंगे। और नाटक का विषय तो नाम मात्र भी नहीं आना चाहिये।** जो अच्छा विषय भी लिखना हो वह प्रश्नोत्तर वा अन्य प्रकार से लिखा जावे। नाटक [नाम] तमाशे का है। क्योंकि तुम्हारे नाटक को [लिखा] देख के लखनऊ के समाज में नाटक का व्याख्यान ही होने लगा। **जब हमने मने किया तो कहने लगे कि अपने फरूखाबाद समाज [के] पत्र में नाटक क्यों छपता है[1]। यह नाटक से बिगाड़ का उदाहरण है। और पाठशाला में संस्कृत पढ़ के कितने विद्यार्थी समर्थ हुए। अथवा अंगरेजी फारसी में ही व्यथ धन जाता है, सो लिखो। जो व्यर्थ ही हो तो क्यों पाठशाला रक्खी जाय।** सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मि० मार्ग वदी १४ शनिवार सं० १९३९[2]।

यह रुक्का सेठ निर्भयराम जी को देके १२) रु० मंगवा कर हर्जु कहार के लड़के रामदीन को दिला देना। और वहां के मुनीम से कहना कि रु० देने में देर न करे[3]।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[४४] **पत्र-सूचना (३९०)** [४६२]

[मुंशी समर्थदान जी………]

गत महिने कितने फार्म छपे। आख्यातिक और पारिभाषिक भेजो[4]।

---

[२] **पत्र (३९१)** [४६३]

श्रीयुत लाला श्यामसुन्दर जी अनन्दित रहो[5]—

कुछ दिन हुये कि एक रजिष्टरी पत्र आर्यसमाज मुरादाबाद की ओर से आया था। उस में यह विषय था कि जो देशहितैषी में प्रश्नोत्तरी के विषय में छपा है सो किस की ओर से है।

---

१. १० सितम्बर सन् १८८२ को लखनऊ आर्यसमाज के मन्त्री श्री हरनामप्रसाद जी ने एक पत्र श्री स्वामीजी को लिखा। उस में नाटक का उल्लेख है। देखो म० मुंशीराम संपादित पत्रव्यवहार पृ० ३५०। [पृष्ठ ३६६ पूर्ण संख्या ४५५ का पत्र तथा टि० ३ भी देखें।]

२. ६ दिसम्बर १८८२।

३. यह सारा पत्र ऋषि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की अपनी लेखनी का लिखा हुआ है।

४. इस पत्र की सूचना मार्गशीर्ष शु० १० मंगल १९३९ (=१९ दिसम्बर १८८२) के पत्र में है। यु० मी०।

५. मूल पत्र आर्यसमाज मुरादाबाद में सुरक्षित है।

आप की सम्मति से है वा नहीं। उस का यही उत्तर है कि वह किसी की ओर से छपा हो, अच्छा है। क्योंकि प्रश्नोत्तरी में जितने विरुद्ध विषय लिखे गये थे उनके सत्यासत्य निर्णय के लिए उन का उत्तर छपना योग्य था। और मैं भी उस प्रश्नोत्तरी के विरुद्ध विषय के उत्तर में सम्मत हूं, क्योंकि जो ऐसा न हो तो जिसके मन में जैसा आवे वैसी ही बात लिख कर चला देवे। सब मनुष्यों को यही उचित है कि सत्यासत्य का निर्णय कर करा के सत्य को मानना, मिथ्या को छोड़ देना। अब इस का उत्तर दीजिये कि जो १००) रुपये वैदिक यन्त्रालय के सहाय में आर्यसमाज मुरादाबाद से आये थे, उस के देने की प्रतिज्ञा तीसरे वर्ष की पूर्ति तक थी। सो आगामी वैशाख की पूर्ति में तीसरा वर्ष पूरा होगा। सो वैशाख तक जहां २ से जितने २ रुपये आये हैं, दिये जांयगे। अब उस में यह प्रतिज्ञा थी कि व्याज के बदले १०) रु० के पुस्तक और मूल रुपये भी दिये जांयगे। सो किस प्रकार किस के पास भेजा जाय। समाज से सम्मति ले कर लिखिये। और १०) रु० के कौन पुस्तक लेना है सो भी लिखना। यहां का समाचार बहुत अच्छा है, पीछे लिखेंगे। और हमारा आशीर्वाद सब से कह दीजिये।

सं० १९३९ मार्ग शु० ७ रविवार[1]। (दयानन्द सरस्वती)

———

[२] **पत्र-सूचना (३९२)** [४६४]

[माई भगवती…………हरियाना पंजाब[2]]

हमारा उत्तर लिखने का अवकाश नहीं। सत्यार्थप्रकाश और भूमिका[3] में लिखा है।

१७ दिसम्बर १८८२[4]।

———

[४९] **पत्र (३९३)** [४६५]

ओ३म्[5]

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो—

पत्र तुम्हारा आया समाचार विदित हुआ। अब तुम बहुत शीघ्र नया टैप मंगाओ, नहीं तो सत्यार्थप्रकाशादि सब पुस्तक बिगड़ जायेंगे। चाहे दोनों ओर से मंगाओ, पर शीघ्र मंगाओ। हम लिख चुके हैं कि गत महीने में कितने फर्मे छपे और आख्यातिक तथा पारिभाषिक आदि पुस्तक मंगाये हैं, क्यों नहीं भेजे वा उत्तर दिया? अब शीघ्र भेजो। और कोश के विषय में जो तुमने लिखा सो हम ऐसा कोश नहीं बनाते हैं कि सब कोशों से सब शब्दों का संग्रह करते हों। किन्तु उणादि के ऊपर अनुकूल सुगम संस्कृत में वृत्ति बनाई है। उसके प्रत्ययों के प्रसंग में जो अन्य

---

१. १७ दिसम्बर १८८२।

२. इस पत्र का संकेत म० मुंशीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृ० ४५३–४५७ पर है।

३. अर्थात् ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका। यु० मी०।

४. मार्गशीर्ष शुक्ल ७ रविवार, सं० १६३६। यु० मी०।

५. आर्यधर्मेन्द्र जीवन तृतीय संस्करण पृ० ३७० पर मुद्रित। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

शब्द आये हैं वे भी लिख दिये हैं। सो बन के तो तैयार हो गया है। सूचीपत्र बाकी है। निघण्टु सूचीपत्र के सहित तुम्हारे पास भेज दिया है। और निरुक्त तथा ब्राह्मणों के प्रसिद्ध शब्दों की संक्षिप्त सूची भी बनाकर भेजेंगे। सो निघण्टु की सूची के अन्त में छपवाना। और ज्वालादत्त के पास भाषा बनाने के लिये अब भेजें वा ऐसा ही रक्खोगे। ५ भूमिका और सत्यार्थप्रकाश के फ़ारम भेजे थे सो पहुंच गये। परन्तु सत्यार्थप्रकाश अक्षरों के घिस जाने से अच्छा नहीं छपता।

मि० मार्ग शुदी १० मंगल १९३९[1]।

दयानन्द सरस्वती।

---

[३] पत्र (३९४) [३६६]

श्रीयुत लाला श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो[2]।

पत्र आप का आया समाचार विदित हुआ। ऐसे जो आर्यसमाज के नियमों से विरुद्ध व्याख्यान होते हैं तो उन को रोक दीजिये। यदि रोकने से न मानें तो दूसरे स्थान में करें। और मेरी निन्दा करते हों उस पर कुछ ध्यान न देना चाहिये, क्योंकि निन्दक निन्दा ही किया करते हैं और क्षमावान् क्षमा ही करते हैं। ऐसों की निन्दा से क्या हो सकता है। इन मुन्शी इन्द्रमणि तथा जगन्नाथदास का हाल मुझ से भी अधिक आप जानते ही हैं, क्योंकि सहवासी विजानीयात् चरित्रं सहवासिनाम्। सो जैसे इन में गुण कर्म हैं वैसा करते हैं, करो। अब एक नई बात की है कि विज्ञापन के तौर पर लिख के छपवा के जहां तहां भेजा है कि जो धन मेरे मुकद्दमा के लिये आया था उस के मालिक स्वामी जी तथा लाला रामशरणदास जी बन बैठे। देखो कैसी मिथ्या बात है। ऐसी २ बातों के प्रसिद्ध करने से इन की ही फजियत होगी। और जगन्नाथदास आदि को समाज का सभासद नहीं, किन्तु कलंक समझना चाहिये। ऐसे लोगों से कुछ सुधार की आशा नहीं होती कि जो पहिले अच्छे जान पड़ें और पीछे से बिगड़ जांय। अब इन की सब बातें खुलेंगी तब कोई भी इन का विश्वास न करेगा। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना। सं० १९३९ पौष वदी १२ शनिवार[3]।

(दयानन्द सरस्वती)

---

[११] पत्र (३९५) [४६७]

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[4]।

विदित हो कि इस पत्र के भेजने का मुख्य प्रयोजन यही है कि जो यात्रा करने का प्रथम विचार किया था कि १५ दिन के पश्चात् यहां से अन्यत्र की यात्रा करेंगे[5], उस में श्रीयुत आर्य्यकुल

---

१. १६ दिसम्बर १८८२। २. मूल पत्र आर्यसमाज मुरादाबाद में सुरक्षित है।
३. ६ जनवरी १८८३। ४. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।
५. इस का संकेत दुर्गाप्रसाद जी को लिखे गये पूर्ण संख्या ४६१ के पत्र पृष्ठ ३७५ में है। यु० मी०।

दिवाकर उदयपुराधीशों के अत्याग्रह से अब माघ शुक्ल १५ पर्यन्त रहना होगा। छः शास्त्रों का विषय तो पढ़ा दिया है। अब मुख्य जो राजनीति का विषय है उस के लिये मनुस्मृति के ७वें अध्याय से ९वें तक पढ़ावेंगे। यदि अब आप आना चाहें तो हम को पत्र लिखो। जब हमारा पत्र तुम्हारे पास पहुंच जावे कि अब चलो, सवारी भेज दी है तब वहां से चलना चाहिये। और यदि अब न आया चाहो तो जब रेल[1] पर पहुंचेंगे तब आपको खबर देंगे। उस समय मिलना हो जायगा। पंडित लक्ष्मीदत्त आदि सभासदों से हमारा आशीर्वाद कहियेगा। शुभम्।

पौष वदी १४ सं० १९३९[2]।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[७] पत्र (३९६) [४६८]

श्रीयुत देशहितैषी सम्पादक समीपेषु। मान्यवर नमस्ते[3]।

विदित होय कि एक पत्र मुन्शी इन्द्रमणि जी के विज्ञापनरूप मेरे पास आया। इसका उत्तर बहुत लम्बा है। परन्तु इस समय इस पत्र के थोड़े से उत्तर को आप अपने पत्र में स्थान देकर मुझ को कृतार्थ कीजिये। यदि मुन्शी इन्द्रमणि जी अपने लेखानुसार सच्चे हों तो उस व्यवहार में अन्यत्र से जितना आय व्यय हुआ हो आपके पत्र (दे० हि०) में छपवा के प्रसिद्ध करें। और इसी प्रकार लाला रामशरनदास जी भी। जिस के देखने से सज्जन लोगों को स्वयं सत्यासत्य का विचार हो जायगा, अर्थात् समझ लेंगे। और उसी हिसाब के नींचे यह भी लिखा हो कि जिस २ भद्र आर्यजन ने मुन्शी जी और मुसलमान मुरादाबाद के झगड़े में जितने रुपये जिस २ के पास भेजे होयं और जिस २ की रसीद भी उन के पास हो नाम लेख पूर्वक वह २ देशहितैषी पत्र सम्पादक के पास भेजें। और उस २ के पत्र को आप अपने पत्र में छपा कर प्रसिद्ध कर दिया करें। जिस से सत्य और असत्य सब साम्हने प्रकाशित हो जाय। इस में सत्य तो यह है कि मुन्शी जी जो झूठा अपराध स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और लाला रामशरणदास रहीस मेरठ के ऊपर आरोपित करते हैं, वह सब अपराध मुन्शी जी का है। क्योंकि जब मुन्शी जी पर मैजिस्टरेट मुरादाबाद ने ५००) रु० दण्ड किये थे उसके पश्चात् मुन्शी जी मेरठ में आये (जहां उस समय स्वामी जी भी उपस्थित थे) और कहा कि यह विवाद सब वेदमतानुयाइयों के ऊपर समझना चाहिये, न केवल मुझपर[4]। इस पर स्वामी जी और अन्य सब सज्जनों ने कहा कि यह ठीक है। क्योंकि मुन्शी जी ने वेदमत की रक्षा

---

१. अर्थात् ऐसे स्थान पर जहां रेल है। यु० मी०। २. ८ जनवरी सन् १८८३ सोम।

३. मासिक पत्र देशहितैषी अजमेर मास माघ सं० १९३९ के अंक १० खण्ड १ के पृष्ठ २८-३६ से लिया गया। रजिस्टर देशहितैषी अजमेर में इस का संकेत है। श्री मुन्नालाल ने ३-१-१८८३ को श्री स्वामी जी को "मुंशी इन्द्रमणि के विज्ञापन का खण्डन" लिखने के लिये पत्र लिखा। उसी के उत्तर में यह खण्डन श्री स्वामी जी ने लिख कर भेजा। [पूर्ण संख्या ४६६ के पत्र के 'अब इन की सब बातें खुलेंगी' शब्दों का संकेत सम्भवतः इसी उत्तर की ओर है।]

४. बाबू दुर्गाप्रसाद, फरुखाबाद को २५ अगस्त सन् १८८० के पत्र में मुं० इन्द्रमन जी लिखते हैं—"चूंकि वह काम धर्म का है, इस में सब आर्यों को कोशिश करनी चाहिए।"

के लिये इतना बड़ा परिश्रम किया है। इसलिये इस समय इस मामले में सब वैदिकों को सहाय करना उचित है। इस पर सब की यही सम्मति हुई कि इस बात के लिये एक सभा नियत हो और चन्दा इकट्ठा करे। जिस से उस के आय व्यय का हिसाब वह सभा रक्खे। और मुन्शी जी को उस में से इतना धन दिया जाय कि जितना खरच होना उचित होय। अन्त को यह सभा मेरठ में नियत हुई। और मुन्शी जी से कहा कि जो कोई आप के पास रुपये भेजे उन को आप भी इस सभा के कोषाध्यक्ष लाला रामशरणदास जी के पास भेज दिया करें[१]। और उस के आय व्यय की परताल (जांच) यह सभा किया करे और हिसाब भी लेवे। इन सब बातों को मुन्शी जी ने भी स्वीकार स्वामी जी आदि के सन्मुख किया था। और यह भी उसी समय निश्चय हुआ था कि सिवाय उस सभा के सभासद के दूसरे से उस धन का आय व्यय वा संख्या प्रसिद्ध तब तक न करनी चाहिये कि जब तक यह कार्य पूरा न हो जाय। यदि चंदे का धन कम आवे और खर्च अधिक करना होय तो किसी योग्य धनाढ्य पुरुष से सभा उधार लेकर कार्य्य करे। इसी लिये लाला रामशरणदास जी ने जमा धन की संख्या मुन्शी जी को नहीं बतलाई थी। क्योंकि सभाकी आज्ञा बतलाने की नहीं थी। इस गुण को मुंशी जी ने दोष समझा। धन्य है मुंशी जी की बुद्धिमत्ता को। इससे सब सज्जन लोग समझ सक्ते हैं कि यह मुंशी जी को संख्या न बतलाने में लाला रामशरणदास जी का दोष है वा इस पर क्रोधित होकर यथा तथा कुवाच्य कहने लिखने में मुंशी इन्द्रमणि जी का। इस विपरीत व्यवहार का कारण यह विदित होता है कि जब इधर उधर से बहुत धन मुन्शी जी के पास आने लगा तब लोभ के वश में होकर जो पूर्वक्त नियम अर्थात् जितना धन मुंशी जी के पास आवे वह मेरठ सभा के कोषाध्यक्ष लाला रामशरणदास जी के पास तो भेजना दूर रहा, किन्तु जब लाला रामशरणदास जी ने कई वार पत्र भेज कर हिसाब मांगा तो मुन्शी जी ने मौन साध के हिसाब नहीं दिया। तब लाला रामशरणदास जी को निश्चय हुआ कि मुन्शी जी के मन में कुछ अन्य आशय है। इस बात के निश्चयार्थ लाला श्यामसुन्दर रहीस मुरादाबाद के पास लाला रामशरणदास जी ने पत्र भेजा कि मुन्शी जी से हिसाब पूछ कर मेरे पास भेजो। उनको भी मुन्शी जी ने हिसाब नहीं दिया, किन्तु इस सर्ववैदिक मत के रक्षार्थ धन को अपना निज धन ही समझ लिया। जब से लाला रामशरणदास जी ने मुंशी जी को धन देना बन्द किया और स्वामी जी को पत्र द्वारा विदित किया तब स्वामी जी ने उत्तर दिया कि इस समय इस बात के होने से कार्य्य में विघ्न होगा, कार्य होने दीजिये। और ६००) रु० जो मांगते हैं दे दीजिये। तब उन्होंने दे दिये। और इस से अधिक धन मुंशी जी को कितना दिया और कितना लाला रामशरणदास जी के पास जमा रहा यह बात हिसाब छपने से सब को प्रसिद्ध हो जायगी। और स्वामी जी ने उक्त लाला श्यामसुन्दर कोठी वाले रहीस मुरादाबाद के पास पत्र भेजा कि मुन्शी जी से हिसाब लेकर लाला रामशरण-दास जी के पास भिजवा दीजिये। उन्होंने उत्तर दिया कि मुंशी जी हिसाब तो नहीं बतलाते, किन्तु इस विषय में पूछा जाता है तो कुछ भी नहीं कहते। धन्य रे धन, तेरे में बड़ी आकर्षण शक्ति है, कि तू बड़ों २ को भी धर्म से डिगा कर नीचे गिरा देता है। जब देहरेदून से आते समय मेरठ के

---

१. अपने ६ सितम्बर १८८० के पत्र में मुन्शी जी बाबू दुर्गाप्रसाद को पुनः लिखते हैं—"चंदा सब जगह का स्वामी जी के पास जमा हो रहा है। बवक्त जरूरत आजावेगा।"

स्टेशन पर लाला रामशरणदासादि से मेल हुआ तब मुन्शी जी के विषय की बात सुन बड़ा आश्चर्य मान के उन से (स्वामी जी ने) कहा कि मैं कोयल[1] इसी लिये ठहरके वहां मुन्शी जी को बुला कर समझा दूंगा। स्वामी जी ने कोयल में आकर मुन्शी जी को बुलाने के लिये तार दिया। उस के उत्तर में मुन्शी जी ने तार में खबर दी कि मैं बीमार हूँ। नारायणदास प्रयाग को गया है। अर्थात् मैं नहीं आ सकता। पश्चात् स्वामी जी ने आगरे में आकर मुन्शी जी के पास पत्र भेजा कि यदि यह बात सत्य है तो इस में आप की बड़ी निन्दा होगी। आप यहां शीघ्र आइये। मुन्शी जी ने बहुत क्रोधित होकर असभ्यता की बातें जो कि उनके लिखने के योग्य न थीं लाला रामशरणदास जी की निन्दापूर्वक बहुत सी लिखी। और यह भी उस पत्र में लिखा कि आप लाला रामशरणदास जी से हिसाब मंगवाइये। स्वामी जी ने तब लाला रामशरणदास जी को लिखा कि आप हिसाब लिख कर मेरे पास यहां भेज दीजिये। जब मैं आप के हिसाब को मुन्शीजी को दिखला दूंगा तब वे भी अपना हिसाब देंगे। इस के थोड़े ही दिनों के पश्चात् मुन्शी जी तथा लाला जगन्नाथदास जी आदि मथुरा होते हुए आगरे में स्वामी जी के पास आए। जब स्वामी जी ने उन से कहा कि हिसाब लाए हो या नहीं, तब मुन्शी जी ने कहा कि हां लाये हैं। परन्तु पहले लाला रामशरणदास जी का हिसाब मंगा लो तब हम भी दिखा देंगे। तब स्वामी जी ने कहा कि जब आप के पास हिसाब है तो क्यों नहीं दिखलाते। तब पुनः मुन्शी जी और लाला जगन्नाथदास जी ने कहा कि उन का हिसाब आने दीजिये तब दिखलावेंगे। पाठकगणों! परमेश्वर की कृपा और लाला रामशरणदास जी सच्चाई से दूसरे ही दिन मेरठ से हिसाब आ गया। स्वामी जी ने मुन्शी जी तथा लाला जगन्नाथदास जी को दिखला दिया। पश्चात् स्वामी जी ने कहा कि अब तुम दिखलाओ। तब मुन्शी जी के कहने से लाला जगन्नाथदास जी ने बैग को हाथ लगाया। इधर उधर हाथ फेर कर कहा कि वह हिसाब का कागज़ तो मैं मुरादाबाद ही में भूल आया। सभ्यगणों! देखो। क्या मिली हुई गुरु चेले की भक्ति है। तब स्वामी जी ने कहा कि जितना आप को स्मरण होय उतना ही कण्ठ से लिखवाइये। तब मुन्शी जी लिखवाने लगे। अनुमान है कि २०००) दो हज़ार तक का हिसाब तो लिखवाया। और कहने लगे कि अब मुझे याद नहीं है। हम मुरादाबाद पहुंच कर शीघ्र हिसाब भेज देंगे। सो आज तक नहीं भेजा। अब आप लोग इन बातों से विचार लेंय कि मुन्शी जी सच्चे हैं वा लाला रामशरणदासजी।

तब मुन्शी जी और लाला जगन्नाथ जी व्यर्थ वितंडावाद करने लगे। और कहा कि जो २५०) रु० लाला बल्लभदास जी ने भेजे थे सो इस हिसाब में जमा क्यों नहीं। तब स्वामी जी ने कहा कि वे रुपये तो गुरदासपुर में मेरे नाम आये थे। मैंने लाला रामसरणदास जी को दिये थे। न जाने उन्होंने जमा क्यों नहीं किये। इस का समाचार मैं लिख कर मंगवा दूँगा। स्वामी जी ने उसी दिन लाला रामसरनदास जी को पत्र लिख उत्तर मंगवाया। तब उन्हों ने लिखा कि यह मेरे मुन्शी की भूल से लाहौर के रुपयों के साथ गुरदासपुर के भी २५०) रु० जमा लिखे गये हैं। अर्थात् जिस दिन १५०) रु० लाहौर समाज से आये थे। उसी दिन २५०) के नोट आपने भी दिये

---

१. कोयल—अलीगढ़ का नाम है। कोयल अर्थात् अलीगढ़ जाने का वृत्त पं० लेखराम, पं० घासीराम, स्वामी सत्यानन्द आदि किसी ने नहीं लिखा। इस लेख से निश्चत हो जाता है कि श्री स्वामी जी कुछ दिन कोयल में रहे।

थे। भूल से ४००) रु० लाहौर समाज के नाम माज किये गये हैं। अब मुन्शी जी इस का निश्चय करें वा करावें। अर्थात् इन २५०) रु० के सिवाय किसी ने स्वामी जी के पास रुपया नहीं भेजा। यदि भेजा ही तो जिस के पास स्वामीजी के हस्ताक्षर रसीद होगी, भले ही प्रसिद्ध से छपवा देवे। किन्तु स्वामी जी की कुछ इस में विपरीत बात हो तो स्वामी जी प्रतिज्ञा पूर्वक कहते हैं कि सिवाय २५०) रुपयों के मेरे पास एक कौड़ी किसी की नहीं आई। क्योंकि जो कोई स्वामी जी से पूछता वा पत्र भेजता था तो स्वामी जी यही उत्तर देते थे कि जो भेजना हो सो लाला रामशरणदास जी के पास मेरठ सभा को भेजो। क्योंकि उसी सभा के आधीन यह सब प्रवन्ध है। इस उत्तम प्रवन्ध को तोड़ने वाले मुन्शीजी हैं, कि जिन्होंने भारतमित्रादि समाचारों में अपना मतलब सिद्ध करने के लिए ग्रंड बंड छपवा कर स्वप्रयोजन सिद्ध किया। और अपनी प्रशंसा पर बट्टा लगाया। शोक है कि यह धन बुरी बला है, जो बड़े २ चतुरों को भी फंसा लेती है। उसी दिन स्वामी जी ने मुन्शी जी से कहा कि हिसाब ठीक २ मेरठ सभा में भेज दीजिये। जो एक नियम हुआ है उसका तोड़ना अच्छा नहीं। आप पूर्वकृत नियमानुसार वर्तिये, जिस से प्रीतिपूर्वक सब सहायक रहें। इसी में अच्छा है। विरोध होना अच्छा नहीं। तब तो मुन्शी जी और लाला जगन्नाथदास जी दोनों क्रोधाविष्ट होकर कहने लगे कि हम से हिसाब लेने वाला कौन है। इस के मालिक हम हैं। हमारे पर यह सब मामला चला है। हमारे नाम चन्दा आता है। जो आता है हमारा ही है। और लाला जगन्नाथदास जी बोले कि यदि आप से कोई वैदिक यन्त्रालय का हिसाब पूछे, क्या आप देंगे ? स्वामी जी ने कहा कल्ल लेने आज ही लो। यहां कोई बात गुप्त नहीं। किन्तु जब कोई आर्य्य समाज का प्रतिष्ठित सभासद् हिसाब लेना चाहे उसको कोई अटकाव नहीं है। तब स्वामी जी ने मुन्शी जी को एकांत में ले जाके समझाया कि ऐसी बात करना आप को उचित नहीं हैं। एक तो वह बात थी जो मेरठ में आपने कही थी कि यह सब वैदिक धर्म वालों का मामला है। मेरा अकेले का नहीं और इस से विरुद्ध आज की बात है कि मेरे ही अकेले का मामला आदि है। सुनिये मुन्शी जी यदि मैं आप को पहले से ऐसा जानता तो आपके साथ एक क्षण मात्र भी न ठहरता और आप का कुछ भी समर्थ नहीं था कि अकेले इस प्रकार का सहाय प्राप्त कर सकते। अस्तु मैं तो उसी बात को समझता हूं कि यह सब वैदिकमतानुयायियों के साथ की बात है। तब तो मुन्शी जी कुछ शान्त हुए। तब स्वामी जी ने कहा कि अब शेष कार्य्य आप सिद्ध कीजिये। और प्रयाग में एक दो पुरुषों का नाम लिखवाया कि उन की सम्मति से सब काम कीजियेगा। और मुरादाबाद पहुंच के हिसाब मेरठ में शीघ्र भेज दीजियेगा। मुन्शी जी ने कहा कि जाते ही भेज दूँगा। सो भी न किया और न हिसाब भेजा। करते और भेजते तब, जब उन के मन में शुद्ध भाव होता। किंतु वहां प्रयाग में भी गुप्त व्यय कर कराके जैसा कि मुरादाबाद जजी में व्यय व्यवस्था हुई थी वैसे ही प्रयाग से करा अपनी नीयत का फल पा कर चले आये। फिर भी न जाने किस २ सज्जन पुरुष के पुरुषार्थ से श्रीमान् गवर्नर जनरल साहब बहादुर से प्रार्थना करके १००) रु० का दण्ड भी माफ़ कराया गया। यदि अब भी मुन्शी जी अपनी बात को सच्चा करना चाहें तो उस मुसलमानों के साथ के मामले में जहां २ से जितना २ धन जिस २ ने भेजा उनका नाम ठिकानादि सहित लिख और जितना २ जिस २ कार्य में व्यय हुआ हो प्रसिद्ध सब समाचारों में छपवादें। और जितना धन उस मामले के विषय में व्यय से शेष रहा हो उसको मेरठ सभा में भेज देवें।

क्योंकि जो मेरठ सभा का वह निश्चित हुआ था कि यदि मुंशी जी के मामले से चन्दे का धन बचे तो उसका क्या किया जाय। इस पर सब की यही सम्मति हुई थी कि उस धन को ॥) आने व्याज में किसी धनाढ्य के पास रक्खा जाय और जब २ अन्य मतावलबियों के साथ वैदिक आर्यों का विवाद राजन्याय घर में चले तब उसी में इसका व्यय किया जाय अन्यत्र नहीं। क्योंकि यह धन इसी बात के लिए इकट्ठा किया जाता है। और जैसा आज मुंशी जी पर कष्ट पड़ा है सम्भव है कि अन्य पर भी कभी न कभी आ पड़े। इस लिए इस धन की स्थिरता और उन्नति सदा करते जाना चाहिये। परन्तु पाठकगणो इस महोपकारक कार्य को मुंशीजी के लोभ ने बढ़ने न दिया। अब बुद्धिमान् लोग विचार कर लेवें कि कि इस में स्वामी जी और लाला रामशरणदास जी का अन्यथा व्यवहार है वा मुन्शी इन्द्रमणि जी का। अधिक लिखना बुद्धिमानों के साम्हने आवश्यक नहीं। क्योंकि प्राज्ञ जन थोड़े ही लेख से बहुत समझ लेते हैं। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु।

निधिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे पौषमासे सिते दले।
प्रतिपत् सौम्यवारे हि पत्रमेतदलेखिषम् ॥१॥

सम्वत् १९३९ पौष शुक्ले १ बुधवासरे[1] ॥

वही आप का परम मित्र
उचित वक्ता[2]

---

[६] पत्र-सूचना (३९७) [४६९]

[सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री आर्यसमाज मुम्बई[3]]

घड़ी भेजो। गोरक्षा की सही के कागज भेजो। समाजस्थान का सब हिसाब भेजो। विट्ठल का लेना देना चुका दो।

१७ जनवरी १८८३[4]।

---

[१२] पत्र-सारांश (३९८) [४७०]

[श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी, फरुखाबाद]

कहार और रसोइया तथा शोधक और कोषाध्यक्ष के लिए[5]।

---

१. १० जनवरी सन् १८८३।
२. देखो पृ० ३७६ की टिप्पणी ३। यु० मी०।
३. इस पत्र का संकेत और अभिप्राय म० मुन्शीरामकृत पत्र व्यवहार पृ० २६८ पर है।
४. पौष शुक्ल ६, सं० १९३९, बुधवार। यु० मी०।
५. इस पत्र का संकेत ४ मार्च १८८३ (=फा० व० १० सं० १९३९) के पत्र में (पृष्ठ ३९१) है। यु०मी०

[४६] पत्र (३९९) [४७१]

ओ३म्[1]

मुंशी समर्थदान जी आनन्दित रहो—

विदित हो कि कई एक पत्र भेज चुके हैं[2]। एक का भी प्रत्युत्तर नहीं मिला, क्या कारण है? तुम्हारा शरीर तो स्वस्थ है? जैसा हो वैसा शीघ्र लिखो। और भेजे हुए पत्रों का भी उत्तर भेजना। **आज अत्यन्त अयोग्यता के कारण भीमसेन को सब दिन के लिए निकाल दिया है।** उसको मुख न लगाना। लिखे लिखावे तो कुछ ध्यान न देना॥

मार्ग वदी ५ रवि[3]।

उदयपुर। दयानन्द सरस्वती

———

[२] पत्र-सूचना (४००) [४७२]

[आनन्दीलाल जी (?) मन्त्री आ० स० मेरठ]

गुरुदासपुर के १५०) रु० के सम्बन्ध में[4]।

———

[३] पत्रांश (४०१) [४७३]

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर[5]]

हम मद्रास्यों को भूल रहे हैं। उधर जाना उत्तम होगा।

१७ फरवरी १८८३ से पहले।

———

[४] पत्रांश (४०२) [४७४]

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर[5]]।

एक अन्तरङ्ग मन्त्री शाहपुरा राज्य के लिए चाहिये। एक ओवरसियर भी चाहिए। "यह देश के हित का काम है।…… जिन के भाग्य होंगे वह आयेंगे।"

१७ फरवरी से पहले।

———

१. आर्यधर्मेन्द्रजीवन तृतीय संस्करण, पृ० ३७६ पर मुद्रित। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित होगा।

२. इस से पूर्व का मार्ग शु० १० सं० १९३९ (=१६ दिस० १८८२) का पत्र पृष्ठ ३७७, ३७८ पर छप चुका है। उस के बाद के पत्रों की ओर यह संकेत है। ये पत्र प्राप्त नहीं हुए। यु० मी०।

३. २८ जनवरी १८८२। आर्यधर्मेन्द्र में भूल से 'मार्ग' लिखा है, [मार्ग वदी ५ को बुधवार था। मार्ग शु० ५ को शुक्रवार। अत यहां] **माघ** चाहिये।

४. आर्यसमाज मेरठ के रजिस्टर (जो लाहौर में नष्ट हो गया) में अन्तरङ्ग सभा १५ फरवरी १८८३ के विषय में लिखा है।

"श्री स्वामी जी महाराज का खत पेश होकर तजवीज हुई कि गुरदासपुर समाज के १५०) रुपये की बाबत खबर मंगानी चाहिये"। यह पत्र जनवरी १८८३ के अन्त में उदयपुर से भेजा गया होगा। यु० मी०।

५. इस पत्र का संकेत म० मुन्शीराम सम्पा० पत्र व्यवहार पृ० ११६ पर है।

[१.१]　　　　कार्ड (४०३)　　　　[४७५]

ओ३म्

आर्यवर श्री बाबू रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का आशीर्वाद विदित हो। जगदीश की कृपा से यहां सब प्रकार आनंद मंगल है। आशा है कि तुम्हारे यहां भी सब प्रकार से कुशलता होगी। अब श्रीयुत जगद्गुरु श्री स्वामी जी यहां उदयपुर से फाल्गुन शुदी[१] ७ गुरु० सम्वत् १९३९ को यात्रा अजमेर की ओर करेंगे, सो जानना। आगे जहां जाके निवास करेंगे सो तुम को लिखूंगा। बहुत दिनों से तुम ने अपना कुशल पत्र नहीं दिया। इस में क्या कारण हुआ। अब आप इस पत्र के पहुंचते ही अपना कुशल पत्र भेजना। क्या मैंने एक बार तुम को लिखा था कि मैं श्री गुरु जी के पास से जाने वाला हूं, इस बात से न भेजा हो। परन्तु जिस बात के न होने से मैं जाना चाहता था अर्थात् पठन [न] होने से[२] सो दयानिधि गुरु जी ने मेरे पढ़ने के लिये आधा दिन दे दिया है। सो बड़ा पढ़ना होता है। अब अष्टाध्यायी के ५ अध्याय कंठ हो गये हैं। ६ अध्याय पढ़ता हूं। श्री गुरु जी का आशीर्वाद विदित हो॥

मिति माघ शुदी १२ रवि० सं० १९३९[३]।

रामानन्द ब्रह्मचारी उदयपुर।

[१.]　　　　पत्रांश (४०४)　　　　[४७६]

[डी० रे० ए० राजा पाकसा कापनिया वालनवा मालापति मदुरा-लङ्का]

मुझे यह जनकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप लंका के एक प्रतिष्ठित परिवार के हैं[४]।

२७ फरवरी [सन १८८३]।

[१.२]　　　　पत्र-सारांश (४०५)　　　　[४७७]

[श्री बाबू दुर्गाप्रसाद जी फरुखाबाद]

रामनाथ कौन है, क्या पढ़ा है और नागरी लिखना जानता है वा नहीं। और हमारे साथ कब रहा है। कौन वर्ण है। कहां का रहने वाला है और मुरादाबाद वाले के लिये लिखा था कि जब तक बड़ा हानिकारक अपराध न करे न निकाला जायगा। सो भी आप के आधीन निकालना वा रखना होगा[५]।

---

१. "बदी" चाहिये। १ मार्च १८८३ को चले। देखो पत्र पूर्ण संख्या ४८० (पृष्ठ ३९०)।

२. इसका संकेत पूर्ण संख्या ४५७ के पत्र में 'दूसरा प्रयोजन' के अन्तर्गत है। यु०मी०।

३. १८ फरवरी सन् १८८३। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४. देखो मास्टर लक्ष्मण जी सम्पादित उर्दू जी० चरित परिशिष्ट पृष्ठ २७९ (यहां पत्र संख्या अशुद्ध छपी है २९३ चाहिये)। यु० मी०।

५. यह सारांश ४ मार्च १८८३ (=फा० व० १० सं० १९३९) पूर्ण संख्या ४८२ के पत्र में निर्दिष्ट है।

[२] **स्वीकार-पत्र**[1] [४७८]

॥ श्रीरामजी ॥

परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिकृत स्वीकारपत्र की प्रति ॥

राजकीय
मुद्रा

आज्ञा (राज्ये श्रीमहद्राजसभा) संख्या २९०

आज यह स्वीकारपत्र श्रीमान् श्री १०८ श्रीजी धीरवीर चिरप्रतापी विराजमानराज्ये श्रीमहद्राजसभा के सम्मुख स्वामीजी श्री दयानन्दसरस्वतीजी ने सर्वरीत्या अङ्गीकार किया अत एवः—

आज्ञा हुई—

कि प्रथम प्रति तो इस स्वीकारपत्र की स्वामीजी श्री दयानन्दसरस्वतीजी को राज्ये श्री महद्राजसभा के हस्ताक्षरी और मुद्राङ्कित दी जावे और दूसरी प्रति उक्त सभा के पत्रालय में रहे और एक एक प्रति इसकी राज यन्त्रालय में मुद्रित होकर इस स्वीकारपत्र में लिखे सब सभासदों के पास उन के ज्ञातार्थ और इसके नियमानुसार वर्तने के लिये भेजी जाये, संवत् १९३९ फाल्गुन शुक्ला[2] ५ मङ्गलवार तदनुसार ता० २७ फेब्रुएरी सन् १८८३ ई० ।

हस्ताक्षर महाराणा सज्जनसिंहस्य

(श्रीमेदपाटेश्वर और राज्ये श्रीमहद्राजसभापति)

——:०:——

राज्ये श्रीमहद्राजसभा के सभासदों के हस्ताक्षर—

१ राव तख्तसिंह बेदले
२ राव रत्नसिंह पारसोली
३ द० महाराज गजसिंह का
४ द० महाराज रायसिंह का
५ हस्ताक्षर मामा बख्तावरसिंहस्य
६ द० राणावत उदयसिंह
७ हस्ताक्षर ठाकुर मनोहरसिंह
८ हस्ताक्षर कविराज श्यामलदासस्य
९ हस्ताक्षर सहीवाला अर्ज्जुनसिंह का
१० दा० रा० पन्नालाल
११ ह० पुरोहित पद्मनाथस्य
१२ जा० मुकुन्दलाल
१३ ह० मोहनलाल पण्ड्या

---

१. प्रथम स्वीकार पत्र की रजिस्ट्री १० अगस्त १८८० (=श्रावण शु० ४ मङ्गलवार सं० १९३७) के दिन मेरठ में हुई थी । वह पूर्ण संख्या २६४ पृष्ठ २१७–२२० पर छपा है । यह दूसरा तथा अन्तिम स्वीकार पत्र है । मूल राजयन्त्रालय उदयपुर में मुद्रित स्वीकार पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है ।

२. यहां भूल से "कृष्णा" के स्थान में 'शुक्ला' छपा है । कृष्णा ५ चाहिये । क्योंकि २७ फरवरी को फाल्गुन कृष्णा ५ मङ्गलवार था । फाल्गुन शुक्ला ५ को भी मङ्गलवार था, परन्तु उस दिन तारीख १३ मार्च थी । अगले फाल्गुन वदी १० (पूर्ण संख्या ४८०, पृष्ठ ३६०) के पत्र से भी इस भूल पर प्रकाश पड़ता है उस में लिखा है—"हम उदयपुर से फाल्गुन वदी ७ गुरुवार के दिन…… चले । गत पञ्चमी मङ्गलवार के दिन सायंकाल ७ बजे……स्वीकारपत्र………श्रीमानों के हस्ताक्षर और राजकीय मोहर लगा कर……" । यु०मी० ।

स्वीकारपत्र ॥

मैं स्वामी दयानन्दसरस्वती निम्नलिखित नियमानुसार त्रयोविंशति सज्जन आर्य्यपुरुषों की सभा को वस्त्र, पुस्तक, धन और यन्त्रालय आदि अपने सर्वस्व का अधिकार देता हूं और उस को परोपकार सुकार्य में लगाने के लिये अधिष्ठाता करके यह पत्र लिखे देता हूं कि समय पर कार्यकारी हो। जो यह एक सभा कि जिसका नाम परोपकारिणीसभा है उस के निम्नलिखित त्रयोविंशति सज्जन पुरुष सभासद् हैं उन में से इस सभा के सभापतिः—

१ श्रीमन्महाराजाधिराज महीमहेन्द्र यावदार्य्यकुलदिवाकर महाराणा जी श्री १०८ श्रीसज्जन-सिंहजी वर्म्मा धीरवीर जी० सी० एस० आई० उदयपुराधीश हैं, उदयपुर राज मेवाड़।

२ उपसभापति लाला मूलराज एम० ए० एक्स्ट्रा एसिस्टेण्ट कमिश्नर प्रधान आर्य्यसमाज लाहौर जन्मस्थान लुधियाना।

३ मन्त्री श्रीयुत कविराज श्यामलदासजी उदयपुर राज मेवाड़।

४ मन्त्री लाला रामशरणदास रईस उपप्रधान आर्य्यसमाज मेरठ।

५ उपमन्त्री पण्ड्या मोहनलाल विष्णुलालजी निवास उदयपुर जन्मभूमि मथुरा।

सभासद्।

नाम	स्थान
१ श्रीमन्महाराजाधिराज श्री नाहरसिंहजी वर्मा	शाहपुरा राज मेवाड़
२ श्रीमत् राव तख्तसिंहजी वर्म्मा	बेदला राज मेवाड़
३ श्रीमत् राज्य राणा श्रीफतहसिंहजी वर्म्मा	देलवाड़ा राज मेवाड़
४ श्रीमत् रावत अर्जुनसिंहजी वर्मा	आसींद राज मेवाड़
५ श्रीमत् महाराज श्रीगजसिंहजी वर्म्मा	उदयपुर मेवाड़
६ श्रीमत् राव श्री बहादुरसिंहजी वर्म्मा	मसूदा जिले अजमेर
७ रावबहादुर पं० सुन्दरलाल सुपरेंटेंडेंट वर्कशोप और प्रेस	अलीगढ़ आगरा
८ राजा जयकृष्णदास सी० एस० आई० डिपुटी-कलक्टर बिजनौर	मुरादाबाद
९ बाबू दुर्गाप्रसाद कोशाध्यक्ष आर्य्यसमाज व रईस	फर्रुखाबाद
१० लाला जगन्नाथप्रसाद रईस	फर्रुखाबाद
११ सेठ निर्भयराम प्रधान आर्य्यसमाज फर्रुखाबाद	विसाऊ राजपूताना
१२ लाला कालीचरण रामचरण मन्त्री आर्यसमाज	फर्रुखाबाद
१३ बाबू छेदीलाल गुमाश्ते कमसर्यट छावनी मुरार	कानपुर
१४ लाला साईंदास मन्त्री आर्य्यसमाज	लाहौर
१५ बाबू माधवदास मन्त्री आर्य्यसमाज	दानापुर
१६ रावबहादुर रा० रा० पण्डित गोपालराव हरि देशमुख मेम्बर कौन्सिल गवर्नर बम्बई और प्रधान आर्य्यसमाज बम्बई	पूना
१७ राव बहादुर रा० रा० महादेव गोविन्द रान्डे जज्ज	पूना
१८ पं० श्यामजीकृष्ण वर्म्मा प्रोफेसर संस्कृत यूनीवरसिटी आक्सफोर्ड लंडन	बम्बई

नियम ।

१ उक्त सभा जैसे कि वर्त्तमानकाल वा आपत्काल में नियमानुसार मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा करके सर्वहितकारी कार्य में लगाती है, वैसे मेरे पश्चात् अर्थात् मेरे मृत्यु के पीछे भी लगाया करे:—

प्रथम-वेद और वेदाङ्गादि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने कराने पढ़ने पढ़ाने सुनने सुनाने छापने छपवाने आदि में ॥

द्वितीय-वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशकमंडली नियत करके देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में भेज कर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में॥

तृतीय-आर्यावर्त्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण पोषण और सुशिक्षा में व्यय करे और करावे ॥

२ जैसे मेरी विद्यमानता में यह सभा सब प्रबन्ध करती है वैसे मेरे पश्चात् भी तीसरे वा छठे महीने किसी सभासद् को वैदिक यन्त्रालय का हिसाब किताब समझने और पड़तालने के लिये भेजा करे और वह सभासद् जाकर समस्त आय व्यय और संचय आदि की जांच पड़ताल करे और उनके तले अपने हस्ताक्षर लिखदे और उस विषय का एक २ पत्र प्रति सभासद् के पास भेजे और उसके प्रबन्ध में कुछ हानि लाभ देखे उस की सूचना अपने भी परामर्श सहित प्रत्येक सभासद् के पास लिख भेजे, पश्चात् प्रत्येक सभासद को उचित है कि अपनी २ सम्मति सभापति के पास लिख कर भेजदे और सभापति सब की सम्मति से यथोचित प्रबन्ध करे और कोई सभासद् इस विषय में आलस्य अथवा अन्यथा व्यवहार न करे ॥

३ इस सभा को उचित है किन्तु अत्यावश्यक है कि जैसा यह परमधर्म और परमार्थ का कार्य है उसको वैसा ही उत्साह, पुरुषार्थ, गम्भीरता और उदारता से करे ॥

४ मेरे पीछे उक्त त्रयोविंशति आर्यजनों की सभा सर्वथा मेरे स्थानापन्न समझी जाय अर्थात् जो अधिकार मुझे अपने सर्वस्व का है वही अधिकार सभा को है और रहे। यदि उक्त सभासदों में से कोई इन नियमों से विरुद्ध स्वार्थ के वश होकर वा कोई अन्य जन अपना अधिकार जतावे तो वह सर्वथा मिथ्या समझा जाय।

५ जैसे इस सभा को अपने सामर्थ्य के अनुसार वर्त्तमान समय में मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा और उन्नति करने का अधिकार है वैसे ही मेरे मृतक शरीर के संस्कार करने कराने का भी अधिकार है अर्थात् जब मेरा देह छूटे तो न उस को गाड़ने, न जल में बहाने, न जङ्गल में फेंकने दे, केवल चन्दन की चिता बनावे और जो यह सम्भव न हो तो दो मन चन्दन, चार मन घी, पांच सेर कपूर, ढाई सेर अगर तगर और दश मन काष्ठ लेकर वेदानुकूल जैसे कि संस्कारविधि में लिखा है वेदी बनाकर तदुक्त वेदमन्त्रों से होम करके भस्म करे इस से भिन्न कुछ भी वेदविरुद्ध क्रिया न करे और जो सभाजन उपस्थित न हों तो जो कोई समय पर उपस्थित हो, वही पूर्वोक्त क्रिया कर दे और जितना धन उसमें लगे उतना सभा से ले ले और सभा उसको दे दे ॥

६ अपनी विद्यमानता में और मेरे पश्चात् यह सभा चाहे जिस सभासद् को पृथक् कर के उसका प्रतिनिधि किसी अन्य योग्य सामाजिक आर्यपुरुष को नियत कर सकती है, परन्तु कोई सभासद्

सभा से तब तक पृथक् न किया जाय, जब तक उसके कार्य में अन्यथा व्यवहार न पाया जाय ॥

७ मेरे सदृश यह सभा सदैव स्वीकारपत्र की व्याख्या वा उस के नियम और प्रतिज्ञाओं के पालन वा किसी सभासद् के पृथक् और उस के स्थान में अन्य सभासद् के नियत करने वा मेरे विपत् और आपत्काल के निवारण करने के उपाय और यत्न में वह उद्योग करै, जो समस्त सभासदों की सम्मति से निश्चय और निर्णय पाया वा पावे और जो सम्मति में परस्पर विरोध हो तो बहुपक्षानुसार प्रबन्ध करे और सभापति की सम्मति को सदैव द्विगुण जाने ॥

८ किसी समय भी यह सभा तीन से अधिक सभासदों को अपराध की परीक्षा कर पृथक् न कर सके, जब तक पहिले तीन के प्रतिनिधि नियत न करले ॥

९ यदि सभा में से कोई पुरुष मर जाय वा पूर्वोक्त नियमों और वेदोक्त धर्मों को त्याग कर विरुद्ध चलने लगे तो इस सभा के सभापति को उचित है कि सब सभासदों की संमति से पृथक् करके उसके स्थान में किसी अन्य योग्य वेदोक्त धर्मयुक्त आर्य पुरुष को नियत करदे, परन्तु जब तक नित्यकार्य के अनन्तर नवीनकार्य का आरम्भ न हो ।

१० इस सभा को सर्वथा प्रबन्ध करने और नवीनयुक्ति निकालने का अधिकार है, परन्तु जो सभा को अपने परामर्श और विचार पर पूरा २ निश्चय और विश्वास न हो, पत्र द्वारा समय नियत करके संपूर्ण आर्यसमाजों से सम्मति ले ले और बहुपक्षानुसार उचित प्रबन्ध करे ॥

११ प्रबन्ध न्यूनाधिक करना वा स्वीकार वा अस्वीकार करना वा किसी सभासद् को पृथक् वा नियत करना वा आय व्यय और संचय का जांच पड़ताल करना आदि लाभ हानि सब सभासदों को वार्षिक वा षाण्मासिक पत्र द्वारा सभापति छपवा कर विदित करै ॥

१२ इस स्वीकार पत्र सम्बन्धी कोई झगड़ा टंटा सामयिक राज्याधिकारियों की कचहरी में निवेदन न किया जाय । यह सभा अपने आप न्यायव्यवस्था करले, परन्तु जो अपनी सामर्थ्य से बाहर हो तो राज्यगृह में निवेदन करके अपना कार्य सिद्ध करले ॥

१३ यदि मैं अपने जीते जी किसी योग्य आर्य्यजन को पारितोषिक अर्थात् पेनशन देना चाहूं और उसकी लिखित पढ़त कराके रजिस्टरी करा दूँ तो सभा को उचित है कि उसको माने और दे।

१४ किसी विशेष लाभ उन्नति परोपकार और सर्वहितकारी कार्य के वश मुझे और मेरे पीछे सभा को पूर्वोक्त नियमों के न्यूनाधिक करने का सर्वथा सदैव अधिकार है ॥

ह० दयानन्दसरस्वती

---

[९] **पत्र-सूचना (४०६)** [४७९]

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]

वैदिक यन्त्रालय के सहाय में लाहौर समाज से कितना रुपया गया था[१] ।

लगभग ४ मार्च १८८३ । [चितौड़गढ़]

---

१. इस पत्र का संकेत म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० १२६ पर है । वह पत्र १६ मार्च को लिखा गया । उक्त पत्रानुसार ८ दिन पहले श्री स्वामी जी का पत्र आ चुका था ।

[४७] पत्र (४०७) [४८०]

ओ३म्[1]

मुन्शी समर्थदानजी आनन्दित रहो—

हम उदयपुर से फाल्गुन बदी ७ गुरुवार के दिन घड़ी रात से राज की चार घोड़े की डाक बग्गी में चल के शाम के ५ बजे नीमाहेड़े पहुंकर ९ बजे रात के चित्तौड़ में पहुंच गये, रेल में बैठकर। यहां तीन दिन ठहरेंगे। पश्चात् जहां जायेंगे तुम को खबर देंगे। अब उदयपुर का वर्त्तमान लिखते हैं। जब से हम उदयपुर में पहुंचे उस दिन से बहुत आनन्दित रहे। और नित्य प्रीति श्रीमान् महाशयों की बढ़ती ही गई। मनुस्मृति के सप्तम, अष्टम, नवम पर्यन्त राजधर्म सब याथातथ्य पढ़ लिये। अन्य बहुत से महाभारतस्थ विदुरप्रजागर तथा ६ शास्त्रों के मुख्य २ विषय और चलते वक्त थोड़ा सा व्याकरण का विषय और अन्वय की रीति भी पढ़ ली। जैसा कि राजाओं को सत्यप्रतिज्ञ और पुरुषपरीक्षक और गुणज्ञ तथा स्वगुण स्वदोष के मानने वाले होने चाहियें, वैसे श्रीमान् महाशयार्य्यकुलदिवाकरों को मैंने देखा। बहुत से राजा मुझ से मिले, परन्तु जैसी प्रसन्नता मेरी और उदयपुराधीश की परस्पर रही और आगे के लिये भी दृढ़ रहेगी, वैसी अन्य से बहुत न्यून सम्भावना है। अब जिस समाचार को तुम पूछा करते थे वह निम्नलिखित जानो। संस्कृत के अपने जो कि वेदाङ्गप्रकाशादि हैं उन का प्रचार राजकीय पाठशाला तथा चारणों की पाठशाला में कर दिया है।

वो जो प्रसिद्ध वा रहस्य[2] में राजधर्म, ईश्वर तथा वैदिकधर्म प्रचार, और शरीर, राजनीति आदि विषयों में उपदेश मैंने किया है उस का आचरण बहुत सा कर लिया और करने की प्रतिज्ञा भी की है।

गत पञ्चमी मङ्गलवार के दिन[3] सायंकाल ७ बजे बड़े २ सर्दार तथा कामदारों की सभा बुला के स्वीकारपत्र जो कि मेरठ में हम ने रजिस्टर कराया था, उस में से एच० एच० कर्नल आलकाट साहब, तथा एच० पी० ब्लैवस्टकी, मुन्शी इन्द्रमणी को पृथक् कर दिये, और डाक्टर बिहारीलाल जी का शरीर छूट गया, इन के ठिकाने में अन्य [चार तथा] पांच सभासद् और बढ़ा दिये अर्थात् प्रथम अठारह थे, अब तेईस हो गये। उन में से सभापति श्रीमान् आर्य्यकुलदिवाकर श्रीयुत महाराणा जी और उपसभापति लाला मूलराज एम० ए०, मन्त्री कविराज श्यामलदास जी आदि नियत हुए हैं। उस की एक प्रति श्रीमानों के हस्ताक्षर और राजकीय मोहर लगा कर सब ने माननीय प्रतिष्ठित माना है। यह बात महा लाभदायक और बहुत बड़ा काम देगी। अब सरकारी राज में भी इस की रजिस्टरी करा लें, सो रजवाड़ों में और अंगरेजी राज में भी बड़ा माननीय होगा।

१. आर्यधर्मेन्द्रजीवन तृतीय संस्करण. पृष्ठ ३७१, ३७२ से लिया गया। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

२. क्या रहस्य शब्द से अभिप्राय पूर्ण संख्या ४५६ पृष्ठ३६६-३७५ पर मुद्रित दिनचर्य्या से है ? यु०मी०

३. यह पत्र फाल्गुन वदी, १० का है, अतः यहां गत पञ्चमी मङ्गलवार से अभिप्राय फाल्गुन वदी ५ (२७ फरवरी १८८३) से है। पूर्ण संख्या ४७८ (पृष्ठ ३८६–३८९) पर जो स्वीकारपत्र छपा है, उसमें फाल्गुन शुक्ला ५ मङ्गलवार (२७ फरवरी) लिखा है, वह अशुद्ध है। यह इस पत्र से भी व्यक्त है। यहां पृष्ठ ३८६ की टि० २ भी देखें। यु०मी०।

और राजकीय यन्त्रालय उदयपुर में छपकर सभासदों के पास एक २ प्रति पहुंचेगी। और ज़ियादह छपेंगी तो अन्य योग्य पुरुषों के पास भेज दी जायंगी। यह तुम्हारे पास इस लिये भेजते हैं कि अपने परामर्श, अनुमति और महाराणा जी को धन्यवाद लेखपूर्वक-पत्र अन्त में, और आदि में, यह स्वीकारपत्र अच्छे काग़ज़ पर और अच्छे टैप में छपवा कर योग्य २ वेदभाष्य के ग्राहक और भारतमित्रादि समाचारपत्र और मुख्य २ पुस्तकालय में भेजदो। और जब छप चुकेगा तब हम भी लिखेंगे कि फलाने २ के पास भेजदो।

और एक पत्र हमारे पास आने वाला है कि उस को एक अच्छे कागज पर छाप कर तुम को सब आर्य्यसमाजों के पास भेजना होगा। और वे श्रीमान् महाराणा जी के पास भेज देंगे। और कुछ २ अपने आनन्द प्रदर्शक बातें लिख कर भेजेंगे तो अच्छा होगा।

बारह सौ रुपये कलदार धर्मार्थ वेदभाष्य के सहाय में, एक दुशाला मुझको, तथा पांच सौ रुपये कलदार आर्य्यसमाज फीरोजपुर के अनाथाश्रम के लिये, और सौ रुपये कलदार वहां जो लड़कियां कसीदा का काम करती हैं उनको पारितोषिक के लिये, और सौ रुपये कलदार और साधारण दुशाला रामानन्द ब्रह्मचारी को दिया। अर्थात् उन्नीस सौ कलदार रुपये और दो वस्त्र प्रदान किये।

इन बारह सौ रुपयों को उन्हीं के पास रक्खे हैं। इस प्रयोजन के लिये कि इस मुख्यस्थान से प्रधान वैदिकधर्म प्रचार होवे और उस को पूर्ण सहाय मिले। इस का नाम वैदिकनिधि रक्खा है। और मेरे नाम से स्थापित हुआ, ऐसा खाता राजकोष में और महद्राजसभा में लिखित हो गया। इत्यादि सब उत्तम बातें वहां की यात्रा से हुईं जिस को तुम सुन कर बड़े आनन्दित होगे। इस लिए प्रथम तुम को लिखा। इस के आगे जो २ वर्त्तमान होगा तुम को लिखा जायगा। और गोरक्षा में भी पूरा सहाय निश्चत मिलेगा।

चितौड़गढ़
मि० फाल्गुन वदी १० रविवार सं० १९३९
तदनुसार ता० ४ मार्च सन् १८८३ } (दयानन्द सरस्वती)

---

[३] **पत्र-सूचना (४०८)** [४८१]

[मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]
लाहौर समाचार भेजने के विषय में[1]।

---

[१४] **पत्र (४०९)** [४८२]

ओ३म्[2]

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि कहार रसोइया तथा शोधक और कोषाध्यक्ष के लिये आप को लिखा था।

---

१. इस का संकेत अगले पूर्ण संख्या ४८२ के पत्र में है। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। म० मामराज जी ने सन् १९२७ में मूल पत्र से शुद्ध किया। इस से पहले हमने बा० देवेन्द्रनाथ वाली प्रतिलिपि से छापा था। फरुखाबाद का इतिहास पृष्ठ २२०-२२१ पर कुछ पाठ भेद के साथ छपा है।

उस का उत्तर आपने लिखा कि ४ दिन के पश्चात् इसका निश्चित उत्तर भेजेंगे। सो वह आज तक नहीं आया। बीच में पण्डित लक्ष्मीदत्त जी ने उत्तर दिया था कि आप बरेली को गये हैं। हम ने आप के पत्र का उत्तर लिखा था कि वह रामनाथ कौन है क्या पढ़ा है। और नागरी लिख[ना] जानता है वा नहीं। और हमारे साथ कब रहा था। कौन वर्ण है। कहां का रहने वाला[है]। और मुरादाबाद वाले के लिये लिखा था कि जब तक बड़ा हानिकारक अपराध न करे, न निकाला जायगा। सो भी आप के आधीन निकालना वा रखना होगा। सो आज पर्यन्त उस [का] उत्तर नहीं आया। सो शीघ्र भेज दीजिये। और दोनों पुरुषों [को] वैदिक यन्त्रालय में भेजने के लिए पूर्ण यत्न कीजिये। क्योंकि अकेले समर्थदान से वहां का काम नहीं चल सकता। आप के लिखे प्रमाण आर्यसमाज लाहौर [के] मन्त्री के पास सब समाचार भेज दिया।

और हम आज चित्तौड़गढ़ में हैं[1]। आगामी फाल्गुन वदी चतुर्दशी गुरुवार के दिन राजस्थान शाहपुर मेवाड़ को जाकर यथारुचि वहां ठहरेंगे।

अब उदयपुर का वृत्तान्त सुनो। हम वहां बहुत आनन्द में रहे। नित्य प्रति श्रीमान् महाराणा जी की ओर से सेवा उत्तम रीति से होती रही। किसी दिन को छोड़ सब दिन तीन चार वा पांच घंटे तक मुझ से मिल कर प्रेम पूर्वक सत्संग किया करते थे। केवल सुनने मात्र नहीं, किन्तु उसका धारण और आचरण भी करते और कराते हैं। छः शास्त्रों का मुख्य २ विषय, मनुस्मृति के राजधर्म्म विषयक तीनों अध्याय, विदुरप्रजागर आदि के उपदेश के योग्य श्लोक, थोड़ा सा व्याकरण का विषय और थोड़ी सी अन्वय की रीति श्रीमानों ने मुझ से पढ़ी। और राजधर्म्म में तत्पर थे। और विशेष कर अब पूर्ण रीति से हुये। वेश्या आदि का नृत्य दर्शनादि नहीं सा निर्मूल कर दिया। स्वीकारपत्र जिसको वसीयतनामा कहते हैं वह उदयपुर में श्रीमानों ने स्वीकृत स्वमुद्रांकित स्वहस्ताक्षर स्वभूषित कर के उस[में] लिखी हुई सभा के उदयपुराधीश सभापति हुये हैं। उस का विशेष समाचार तुम को छपने पर विदित होगा। एक मान्य पत्र[2] मुझको दिया है। और रु० १२००) कल्दार वेदभाष्य के सहायार्थ और एक दुशाला और एक साधारण दुशाला और रु० १००) कल्दार रामानन्द ब्रह्मचारी को। तथा ५००) रु० कल्दार फीरोजपुर आर्य्यसमाज के अनाथालय को। और रु० १००) कल्दार उस में कसीदा करने वाली लड़कियों को पारितोषिक प्रदान किये। वैदिकधर्म्म पर प्रथम ही रुचि थी। अब विशेष कर हुई। जैसे श्रीमान् आर्यकुलदिवाकर सुशीलता सत्यता कृतज्ञता सुसभ्यता पुरुषज्ञानतादि शुभगुण कर्म स्वभावयुक्त मैंने देखे वैसे बहुत विरले होंगे। अब हम इस वक्त चित्तौड़ में हैं। फाल्गुन वदी चतुर्दशी गुरुवार के दिन राजधानी शाहपुरा राज्य मेवाड़ जाकर ठहरेंगे। जो कुछ पत्रादि भेजो तो इसी पते से भेजना, फक्त।

ता० ४।३।८३ ई०। मि० फा० व० १० सं० १९३९। [दयानन्द सरस्वती]

———

१. यहां तक का अंश पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृष्ठ ५६७ पर उद्धृत हैं।

२. [यह मान्य पत्र यजुर्वेदभाष्य के ४८वें अङ्क के टाइटल पेज पर छपा है। इसे हम परिशिष्ट में दे रहें हैं।] यह मूल मान्यपत्र कविराजा श्यामलदास के संग्रह में था। अब ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में सुरक्षित है।

ऋषि दयानन्द सरस्वती का महाराणा सज्जनसिंह (उदयपुर) को पढ़ाना

ओ३म्

श्रीयुत चौधरी आलमसिंहजी आनंदित रहो
विदित हो कि हम उदयपुर से फाल्गुन बदि ७ सप्त
मी के दिन चित्तौड़ में आन पहुंचे और अब यहां
से फाल्गुन बदी त्रियोदशी के दिन शाम की रेल
में बैठकर चतुर्दशी के दिन शाहपुरा को राज
मेवाड़ ज़िला अजमेर को जो कि बड़ी रूपाहेली
से ८ कोश है जायगे और जो आप ज़रूरत हो तो
इसी पते से देना – आगे हाल यह कि एक
स्वीकार पत्र राज उदयपुर में मुद्राङ्कित स्वीकृत
हुआ और उसके अधीपती श्री मानदिवाकर
हुए हैं बाकी सब सभासद जब उपस्थित होगा वि-
दित होगा और एक मान्य पत्र भी दिया है और
र छः शास्त्रों का मुख्य २ विषय और मनुस्मृ
ति का राजधर्म तथा विदुर प्रजागरादि के श्लो-
क कुछ व्याकरण और अन्वय की रीति भी श्री-
मानों ने मुझ से पढ़ी – और रु० १२००) कल्दार
और एक दुशाला वेदभाष्य के सहायार्थ औ
र एक साधारन दुशाला और रु० १००) कल्दार
रामानंद ब्रह्मचारी को और ५००) रु० कल्दार
फीरोजपुर के अनाथाश्रम के लिये और रु०
३००) कल्दार उसी में दस्तखत करने वाली कुछ
डियों को पारितोषिक प्रदान किया

मिती फाल्गुन बदी १२ संवत् १९३९ तदनुसार
तारीख ६ मार्च सन् १८८३ ई०

(हस्ताक्षर)

दयानन्दसरस्वती

(इस मूल पत्र को म० मामराज जी ने ता० १५-४-२७ को प्राप्त किया)

[२] पत्र (४१०) [४८३]

सर्व आर्य्यसमाजस्थ प्रधानादि आनंदित रहो[1]।

विदित हो कि स्वामी सहजानन्द सरस्वती उपदेशक, इसने संन्यासाश्रम धारण भी मुझ से किया है, आता है। इसको जब तक वहां रहे अन्न स्थानादि, और जब एक समाज से दूसरे समाज को जाय तब रेल के भाड़े आदि से सत्कार किया करना। जिस समाज से दूसरे समाज को जाना चाहे उस समाज का मन्त्री दूसरे समाज के मन्त्री के पास पत्र भेज देवे कि वह स्टेशन पर आके निवास स्थान को ले जावे।

मिती फाल्गुन बदी १२ मंगल सम्वत् १९३९[2]।

ह० दयानन्द सरस्वती
चित्तौड़-मेवाड़।

---

[३] पत्र (४११) [४८४]

ओ३म्

श्रीयुत चौधरी जालमसिंह जी आनंदित रहो[3]।

विदित हो कि हम उदयपुर से फाल्गुन वदि ७ सप्तमी के दिन चित्तौड़ में आन पहुंचे। और अब यहां से फाल्गुन वदि त्रयोदशी के दिन शाम की रेल में बैठकर चतुर्दशी के दिन शाहपुरा राज मेवाड़ ज़िला अजमेर को जो कि बड़ी रूपाहेली से ८ कोश है, जांयगे। और जो कागज़ दो तो इसी पते से देना। आगे हाल यह कि एक स्वीकारपत्र राज उदयपुर में मुद्राङ्कित स्वीकृत हुआ। और उसके अधिपति श्रीमान् दिवाकर हुए हैं। बाकी सब सभासद। जब छपेगा विदित होगा। और एक मान्यपत्र भी दिया है। और छः शास्त्रों का मुख्य २ विषय जौर मनुस्मृति का राजधर्म्म तथा विदुर-प्रजागरादि के श्लोक कुछ व्याकरण और अन्वय की रीति भी श्रीमानों ने मुझ से पढ़ी। और रु० १२००) कल्दार और एक दुशाला वेदभाष्य के सहायार्थ और एक साधारण दुशाला और रु० १००) कलदार रामानन्द ब्रह्मचारी को और ५००) रु० कल्दार फीरोजपुर के अनाथाश्रम के लिये और रु० १००) कल्दार उसी में कसीदा करने वाली लड़कियों को पारितोषिक प्रदान किया।

मिती फाल्गुन वदि १२ सम्वत् १९३९।

तदनुसार तारीख ६ मार्च सन् १८८३ ई०

(हस्ताक्षर)
[दयानन्द सरस्वती]

---

१. भारतसुदशाप्रवर्तक फरवरी १८८४ पृ० १८ से लिया गया। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २०१ पर भी छपा है।

२. ता० ६ मार्च सन् १८८३।

३. इस मूल पत्र को रूपधनी वाले चौ० जालिमसिंह के भाई के पौत्र चौ० गजराजसिंह से मास्टर बद्रीप्रसाद जी ले गये थे। उसे अहीर क्षत्री स्कूल शिकोहाबाद के उक्त मास्टर से म० मामराज जी ता० १५ अप्रैल सन् १९२७ को लाये थे। मूल पत्र म० मामराज जी के पास श्रीराम निवास (बिल्डिङ्ग) खतौली में सुरक्षित है।

[३] पत्रांश (४१.२) [४८५]

श्रीयुत पण्डित कालुराम शर्मादिभ्यो दयानन्दसरस्वती-स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां, शमिहास्ति तत्र भवदीयञ्च नित्यमाशास्महे। आपने धर्म जिज्ञासा की, उसका उत्तर यह है कि इस विषय में जो सत्यार्थप्रकाशादि मद्रचित ग्रन्थ हैं उन में मन्तव्यामन्तव्यादि सर्व धर्म विषय लिखा हुआ है उसी रीति से कार्य्य करो[१] इत्यादि ………

[लगभग १७ मार्च सन् १८८३[२]।]

---

[४८] सूचना (१) [४८६]

[मुं० समर्थदान वैदिक यन्त्रालय, प्रयाग]

जैसा इस को शोध के भेजते हैं। वैसा पुनः कम्पोज करके छपवादो और जो कहीं शोधने में भूल रह गई हो तो तुम वहाँ शोध लेना, जिससे मांसभक्षण का अभिप्राय कुछ भी न रहे। बाकी सब पत्रों के उत्तर कल[३] भेजेंगे और अगले अंक के पत्रे तथा थोड़े से सत्यार्थप्रकाश के पत्रे भी भेजेंगे[४]।

[मिति फाल्गुन शु० ९ शनि सं० १९३९]

---

[४९] पत्र (४१.३) [४८७]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

तुम्हारी तारीख बारा मार्च की लिखी हुई चिट्ठी आई। समाचार विदित हुआ।

(१) शुद्धि पत्र और टाटल पेज भले ही बना छाप कर ग्राहकों के पास भेज देना और छापे खाने में भी जिल्दें बंधवाने का लिखा सो अच्छा। परन्तु थोड़ी, जियादह नहीं।

(२) तुम को इस बात का ज्ञान नहीं। तुम इस बात को नहीं जानते कि हम को कितना काम करना पड़ता है कि एक क्षण मात्र भी अवकाश नहीं मिलता। देखो इसका दृष्टान्त कि तुम्हारे पत्र का उत्तर रात्री के ९ बजे लिखते हैं।

और इसके पद की गणना रामानन्द तथा दूसरे पंडित के हाथ गिणवाये थे। कोई पद रह गया होगा। अब हम अपने सामने पद गिन गिनवा लेंगे और अगले अंक के पत्रे और कुछ सत्यार्थप्रकाश के पत्रे उस के साथ भेजे जायेंगे।

(३) हिसाब हमारे पास आने से सब बात का प्रबन्ध हम भी आगे २ करते हैं। इसलिये जो तुमने उचित समय पर मासिक हिसाब भेजना लिखा सो बहुत अच्छी बात है। और द्रव्य के

---

१. स्वामी कालूराम जी शर्मा स्वर्गवासी के जीवन चरित पृ० २६ पर इतना अंश उद्धृत है।

२. तिथि सर्वथा अनुमानित है। ३. देखो पूर्ण संख्या ४८७ का पत्र। यु० मी०।

४. यह लेख श्री स्वामी जी ने यजुर्वेदभाष्य के १३ वें अध्याय की प्रेस कापी के पृष्ठ ४५६ के दूसरी ओर (पीठ पर) अपने हाथ से लिखा है। यह लेख १७ मार्च १८८३ (=फा० शु० ९ सं० १९३९) को लिख कर भेजा था। देखो अगला पूर्ण संख्या ४८७ के पत्र का ८ वां अंश (अन्तिम पैरा ग्राफ पृष्ठ ३९६)। इस का संबन्ध उक्त पत्र के अन्तिम अंश से भी है। उसके साथ मिला कर पढ़े। यु० मी०।

विषय में जो तुम को लिखा है सो तुम्हारे अविश्वास कारक नहीं है। एक उपदेश रूप है। देखो तुम हम और अन्य भद्र लोग मुन्शी इन्द्रमणि जी को कैसा अच्छा समझते थे। परन्तु वह तभी तक रहा जब तक कि उनके सामने धन न आया। और तुम्हारे विषय में अविश्वास का हेतु प्रत्यक्ष कोई नहीं हुआ है। इस से तुम उल्टा मत समझो। इसका यह मर्म और अर्थापत्ति नहीं है कि तुमने अप्रत्यक्ष बुरा काम किया है। वह लेख इस अभिप्राय से है कि जिसका उत्तरकाल में भी कभी ठोकर खाना न पड़े। देख २ कर पग जमा कर चलना चाहिये। क्या बालक वा विद्यार्थी अथवा शिष्य को मिथ्या भाषणादि के अप्रत्यक्ष में भी तू मिथ्या भाषण चोरी जारी विश्वासघात आदि दुष्ट कर्म मत करना, उपदेश नहीं होता। इसका प्रयोजन यह है कि जैसा आचरण भूत वा वर्तमान में शुद्ध था, वा है, वैसा ही रहना उचित है। भला हरिश्चन्द्र और बखतावरसिंह का दृष्टान्त तुम में घटता वा संभावना होती तो मैं और सेवकलाल कृष्णदास आदि वैदिक यंत्रालय के प्रबन्ध करने को तुम को कभी न कहते। क्या तुमने हमारे और सेवकलाल कृष्णदास जी के कहने ही से इस काम को स्वीकार किया है परोपकार की दृष्टि से नहीं। शोक है कि सूधी बात को तुम उल्टी समझ गये। यदि तुम्हारे काम की पवित्रता की परीक्षा मुझको व सेवकलाल को न होती तो पुनः इस काम में तुमको नियुक्त ही क्यों करते। यदि तुम इस काम के योग्य न होते तो इतना बड़ा काम और जिस में विशेष माल का काम है, स्वाधीन क्यों करते। तुम को हम वा सेवकलालादि हरिश्चन्द्र बख्तावरसिंह वा मुन्शी इन्द्रमणि सरीखा नहीं समझते। तुम को उत्तम पुरुष समझते हैं परन्तु—

सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते[1]

क्या हमारे पास बुरे ही मनुष्यों का निर्वाह है। ऐसी तुम्हारी बातों का जो कि कभी २ लड़कपन की कर बैठते और समझ लेते हो इन बातों पर ध्यान करूं वा करूंगा तो क्या इस परोपकार के काम से संशयापन्न हो पृथक् हो जा नहीं सकता। मुझ को इतना बड़ा परिश्रम निन्दा अपमान उठा कर कौन सा स्वप्रयोजन सिद्ध करना चाहता हूं। यदि तुम लोग जैसा कि अब उदासीनता की बातें लिखी हैं लिखोगे वा करोगे तो सब संसार की हानि का अपराध तुम्हारे पर होगा और मैंने जो उपकार करना निश्चित किया है जहां तक बन सकेगा आमरण तक करूंहीगा पुनर्जन्मान्तर में भी। जब तक इस पत्र को देख कर तुम्हारा पत्र परोपकार अर्थात् स्वदेशोपकार करने में दृढ़ता पूर्वक पत्र हमारे पास न आवेगा तब तक हमारे उपदेश रूप लेख को अपनी अल्प बुद्धि से उल्टा समझ गये हो, जाना जायगा। इस लिये पत्र देखते ही उसी लेख का यह तात्पर्य समझ कर प्रत्युत्तर शीघ्र भेजना।

(४) मान्यपत्र उन के साथ भेजने में रामानंद भूल गया था। पीछे से भेजा है, पहुंचा होगा। और ऋग्वेद तथा सत्यार्थप्रकाश वो(के) भी पत्रे परसों भेजे जायंगे। क्योंकि कल रविवार है रजिस्ट्री नहीं हो सकती। जब २ मासिक हिसाब भेजो तब २ इतने फार्म निज के और इतने बाहर के इस महीने में छपे यह भी साथ ही [लिख कर] भेजा करो।

(५) यहां शाहपुरे में श्रीयुत महाराजाधिराज व्याकरण का विषय पढ़ कर कल मनुस्मृति के

१. गीता अ० २ श्लोक ३४। यु० मी०।

सप्तमाध्याय राजधर्म के पढ़ने का आरम्भ करेंगे। और बड़े बुद्धिमान तथा राजनीति प्रजा पालन में तत्पर साहसी उत्साही और बड़े बुद्धिमान् हैं। सेवा भी बहुत प्रीति और अच्छी प्रकार से करते हैं।

(६) भीमसेन को तुमने जैसा [बक]वृत्ति समझा है, वैसा ही हम बकवृत्ति और मारजारलिंगी समझते हैं। वैसा ही उस से विलक्षण दंभी क्रोधी हठी और स्वार्थसाधनतत्पर ज्वालादत्त भी है। अब उसको निकाल देना वा न निकाल देना, तुमने क्या निश्चय किया है। मेरी समझ में भीमसेन का छोटा भाई ज्वालादत्त है। यदि उसको निकाल दोगे तो भी कुछ बडी हानि न होगी। क्योंकि यह कभी मन लगा कर काम न करेगा और उसकी ऐसी दृष्टि कच्ची है कि शोधने में अशुद्ध अवश्य कर देगा।

(७) और जो कुछ श्रीयुत आर्यकुलदिवाकर महाराणा जी के विषय में धन्यवाद का लेख लिखो सो अच्छा ही लिखोगे। मोहनलाल विष्णुलाल जी ने चलते समय कहा था कि धन्यवाद विषय का पत्र लिखकर भेजने को कहा था। यदि दो चार दिन में आया तो तुम्हारे पास भेज दूंगे। तुम जानते हो राजकृत्य की शीतलता को कि जैसा मेरे वहां रहने में शीघ्रता होती थी वैसी कब हो सकती है। जो कुछ होगा सो धीरे २ और अच्छा होगा। और तुमने कमीशन का क्या नियम किया है। क्या जैसा सुचिपत्र में छपवाया है वही है वा अन्य कोई। जो तुमने छपवाये हैं वेही ठीक है । वैसा ही हम भी लोगों से उपदेश करेंगे। और उस भीमसेन कीहुई हानि कुछ भी नहीं हो सकती उसका उत्तर तुम लिख भेजो कि जब तक स्वामी जी की आज्ञा वा इच्छा तुमको कहीं रखने वा वा भाषा बनवाने की नहीं होती, तब तक कुछ भी नहीं हो सकता। अब उस ने उदयपुर में जो भाषा बनाई है, सोधी गई तो कई एक के अर्थ में पदार्थ छोड़ दिया। कई एक पद अन्वय के छोड़ दिये। और कई एक पद आगे पीछे भी कर दिये गये हैं। और उस का कार्ड बुक पोस्ट के साथ तुम्हारे पास भेजेंगे।

(८) हमने आज ४७ मंत्र से लेकर ५२ मन्त्र तक के पत्रे शोध कर आज आये और आज ही रजिस्ट्री करा के भेज दिये हैं। उन में से जहां २ मांस खाने का विषय [था] काट दिया और उचित अर्थ कर दिया है। परन्तु राजा और राजपुर्षों को हानिकारक सिंहादि जांगल पशुओं को मारना तो रहने ही दिया है, क्योंकि उन मन्त्रों में अनुदिशामि। आरण्यम्। तेन। तन्वम्। पुष्यस्व। आदि पदों के अर्थ के अनुरोध से राजपुरुषों को उनका मरना तो अवश्य ही सिद्ध होता है। तथा युक्ति से भी सिद्ध है, क्योंकि यदि डाकू चोर आदिकों को भी राजधर्म में मारना उचित है तौ वैसे प्रजा के हानिकारक पशुओं को मारने में राजाओं को कुछ भी अपराध नहीं हो सकता। यदि ये न मारे जांय तो प्रजा के खेती आदि के नाश से बड़ी ही हानि होवे इत्यादि। यदि शीघ्रता से शोधने में मांस खाने में कोई रह गया हो तौ उसको तुम कटवा देना और उचित धरवा देना[1]। और

---

१. यजुर्वेद १३। ४७-५१ मन्त्रों में हानिकर पशुओं के मारने का उल्लेख है। उन से भूल कर भी कोई मांस खाने का विधान न मान ले, इस लिए श्री स्वामी जी ने समर्थदान की प्रार्थना पर सारा प्रकरण अति स्पष्ट करके प्रूफ भेजा। इसी विषय का संकेत समर्थदान ने अपने १३-७ १८८३ के पत्र में किया।

[इस विषय में पूर्ण संख्या ४८६ पर छपी ऋषि के हाथ की यजुर्वेद भाष्य अ० १३ की प्रेस कापी के पृष्ठ ४५६ पर लिखी सूचना भी पढ़े। यु० मी०]

उन्हीं पत्रों को शोधा है कि जिस से तुम्हारा कंपोज सब व्यर्थ न जाय किन्तु उसके बराबर सही करवा कर ग्राहकों के पास भेजदो। अब आगे वेदभाष्य के पत्रे उचित समय पर सदा भेजे जायेंगे। और मुम्बई से टैप आने का क्या समाचार है। तीन महीने तो हो गये होंगे। उनसे तकादा करो कि शीघ्र टैप भेज देवें।

मिति फा० शु० ९ शनिचर सं०[1]।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र-सूचना (४१४) [४८८]

[पं० मोहनलाल विष्णुलाल पण्डिया—उपमंत्री परोपकारिणी सभा[2]।]

रुपयों का फरक क्यों पड़ रहा है। १९००) रु० थे, अथवा २०००) रु०। यहां राजाधिराज ने मनुस्मृति का पढ़ना आरम्भ कर दिया है।

फा० शु० १०, १९३८[3]।

दयानन्द सरस्वती

---

[६] पत्रांश (४१५) [४८९]

[भाई जवाहरसिंह मंत्री आर्यसमाज लाहौर]

......"जो तुमने इतनी बड़ी चिट्ठी आर्यभाषा में लिखी, यही हमने तुम्हारी शुद्धी जानी[4]।"

लगभग २३ मार्च १८८३।

---

[१] पत्र (४१६) [४९०]

(ओ३म्)

श्रीयुत बिहारीलाल जी आनन्दित रहो[5]।

धर्म्मजीवन और मित्रविलास आदि पत्रों का झूठ बकना ही रात दिन काम है। और जैपुर गजट वाला भी उनके सदृश ही बुद्धि रखता होगा। आगे जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो। जैसी सम्मति लाहौर और मेरठ वाले दें, वैसी करो। तुम जानते थे कि स्वामी जी जोधपुर में गये ही नहीं, फिर तुम को शोक कैसे हुआ। और हमारे लिये ऐसे सैकडों मनुष्य बका करते हैं, कि

---

१. १७ मार्च १८८३।

२. इस का संकेत पं० चमूपतिकृत ऋषि दयानन्द का पत्रव्यवहार द्वितीय भाग पृ० ६ पर है।

३. संवत् १९३९ चाहिए। १८ मार्च रवि० १८८३।

४. ऋषि के पत्र से इतना लेख—भाई जवाहरसिंह ने अपने पत्र ता० १८ अप्रैल १८८३ बुधवार, में उद्धृत किया है। देखो म० मुन्शीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृ० १२५। श्री स्वामी जी का पत्र भाई जवाहरसिंह के १६ मार्च १८८३ के पत्र के उत्तर में लिखा गया होगा। उस पत्र में भाई जवाहरसिंह जी ने लिखा है—

"मुझे हिन्दी लिखनी नहीं आती... ... .प्रन्तू जैसे आई वैसे लिख दी।" देखो म० मुंशी पत्रव्यवहार पृ० १२६।

५. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

जैसे मित्रविलास और धर्म्मजीवन आदि पत्रों के मांसहारी काश्मीरी ब्राह्मण आदि लाहोर में बका करते हैं। सब से हमारा आशीर्वाद कह दीजीयेगा।

मिती चै० व० ५ बुधवार सं० १९३९[1]।

(शाहपुरा)

(हस्ताक्षर) [दयानन्द सरस्वती]

---

[४] **पत्र (४१७)** [४९१]

ओ३म

श्रीयुत चौधरी जालिमसिंह जी आनन्दित रहो[2]।

जब वह स्वीकारपत्र छपेगा तब एक कापी तुम्हारे पास भेज देंगे। भीमसेन को न हम अपने पास वा न अन्यत्र कुछ काम देना चाहते हैं। वह काम करने में अयोग्य और वह स्वभाव का भी बहुत बुरा आदमी है। हम उस के विषय में पहले भी लिख चुके हैं। और वह न किसी आर्य्यसमाज में रहने के योग्य है। यदि कहीं जायगा बुरे हवाल निकाला जायगा। अन्यत्र जहां उस की इच्छा हो जाये, चाहे न जाये, उसकी खुशी। परन्तु हम उसको कहीं नौकर वा काम कराना नहीं चाहते। यह सब एक ज्ञात बद्री ब्राह्मण सिकन्दरपुर के सदृश हैं। चाहे इनके ऊपर कितनी दया करो वे कृतघ्न[ता]ही करते जाते हैं। जब से वह गया है तब से जो पुरुष हमारे पास हैं, आनन्द में रहते हैं। यदि वह होता तो न जाने अब तक कौन जाता, कौन रहता केवल वह दम्भी और मिथ्याचारी है। यदि बद्री ब्राह्मण का विष देने का कर्म प्रसिद्ध हो गया है तो उस को जैलखाने में भेज दिया वा नहीं। ठीक साबूती हो तो उस को अवश्य जैलखाने में भिजवा देना चाहिये। जिस से दूसरा भी कोई ब्राह्मण ऐसे काम करने की इच्छा न करे। बड़ा शोक है उस बद्री दुष्ट पर कि जिसकी आप लोगों ने हजारह रुपये की सेवा की और उसका फल उस कुपात्र ने प्राण लेना चाहा था। हम यहां राजधानी शाहपुरा राज मेवाड़ ज़िले अजमेर में ठहरे हैं। कुछ एक आध महीना यहां रहेंगे। सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मि० चै० व० ५ बुधवार सं० १९३९[3]।

(शाहपुरा)

(हस्ताक्षर) [दयानन्द सरस्वती]

---

[१] **पत्र सूचना (४१८)** [४९२]

[लीलाधर हरिदास मुम्बई[4]]

१. सेवक लाल ने घड़ी क्यों नहीं भेजी।

---

१. २८ मार्च सन् १८८३।

२. मूल पत्र पं० विष्णुलाल जी एम० ए० बरेली के पास था। उस की प्रतिलिपि हमने वहाँ से की थी।

३. २८ मार्च १८८३।

४. इस पत्र का संकेत म० मुंशीरामकृत पत्र व्यवहार पृ० २६७, पर है।

२. समर्थदान ने जो टाईप मंगवाया। उसका क्या उत्तर है।

३. आर्यसमाज मन्दिर का काम कैसा हो रहा है।

चैत्र वदी १०[1]।

दयानन्द सरस्वती
शाहपुरा

---

[१] पत्र (४१९) [४९३]

॥ ओ३म् ॥

वारट श्रीकृशन जी आनन्दित रहो[2]!

विदित होकि पत्र आपका आया समाचार विदित हुए। **संस्कृतवाक्यप्रबोध के विषय में जो तुमने लिखा सो छापेवालों की भूल से छप गया है। वहां—(एकत्रैकाङ्गुष्ठ एकत्र चतुरंगुलयः) ऐसा चाहिये, सो सुधार लीजिये[3] ॥**

यदि श्रीमान्महाशयों से निवेदन करके कविराज जी के पास जोधपुर से उक्त कार्य्य कराने के लिए जयपुर जाने के आने की आज्ञा पहुंच जाय तो अत्युत्तम है। और यह भी निवेदन करना कि पत्र द्वारा श्रीमानों की दिनचर्या और शरीर कुशलता की सत्य २ सूचना मुझको हुआ करे तो अच्छी बात है। क्योंकि उसको सुनना मैं अवश्य चाहता हूं। और फतहकरण उदयपुर में है वा कविराज जी के साथ जोधपुर गये हैं। फतहकरण का नाम (विजयकरण) हो सकता है वा नहीं। क्योंकि (फतह) शब्द फारसी का है और उसका अर्थ विजय है इसलिए (विजयकरण) नाम होना उचित है।

और जो तुमने महाराजाधिराज की चिट्ठी के साथ एक चिट्ठी भेजी थी कि जिस में लिखा था १००) सौ रुपये स्वामी जी के नौकरों को अर्पित किये लिखा था और उस समय यही मैं ने और आप लोगों ने भी सुना होगा कि ५००) रुपये अनाथाश्रम और कसीदा करने वाली कन्याओं के पारितोषिक देते हैं। ज[ब] पण्ड्या जी की चिट्ठी आई, उस पर हमने पूंछा कि ६००) रुपये भेजने चाहिये,

---

१. संवत् १९३९। २ एप्रिल, १८८३ सोमवार।

२. मूल पत्र श्री कृष्ण जी के पुत्र ठाकुर किशोरसिंह बारहट के संग्रह में सुरक्षित है। पं० चमूपति संपा० पत्रव्यवहार पृष्ठ १६५ से लिया।

३. प्रथम संस्करण में 'मुष्टिबन्धने एकत्राङ्गुष्ठः, एकत्र पञ्चाङ्गुलयो भवन्ति' ऐसा छपा था। भाषा में भी यही अशुद्धि थी। यह अशुद्ध पाठ वैदिकयन्त्रालय के छपे संस्कृतवाक्यप्रबोध के १०वें संस्करण तक छपता रहा। ११वें संस्करण में हम लोगों ने शुद्ध किया। संस्कृतवाक्यप्रबोध के छपने में इस प्रकार की कुछ भूलें और भी हो गईं थी। उन के विषय में पूर्ण संख्या २६५ (पृष्ठ २२१) का पत्र भी देखें। काशी के पण्डितों ने इस पर अपने अज्ञान से कुछ झूठे आक्षेप किये थे। उन में से कुछ आक्षेपों का समाधान पूर्ण संख्या २६६ (पृष्ठ २२२) पर छपे लेख में किया है। यु० मी०।

सातसे कहां से भेजे। उस पर उन्होंने उत्तर दिया कि हमारे पास राजसे ७००) रुपये आये, सो ६९२) रुपये भेजे और ८) रुपये मनियाडर और रजिष्टरी कराई दिये। यह क्या बात है। हम तो ६००) रुपये सब मिल कर फिरोजपुर के लिये श्रीमानों ने दिये हैं, ऐसा सर्वत्र लिख चुके हैं यदि इस में १००) भूल से चले गये हों वा सातसे ही प्रदान किये गये हों, जैसा हुआ हो वैसी निश्चित बात लिखो। जिस से हम पुनः जैसा हो वैसा सर्वत्र लिखदें।

और श्रीमानों की दिनचर्य्या का विषय ठीकर लिखा करो। गोलमाल मत किया करो। और यहां सब प्रकार से आनन्द मंगल है। और सब महाशय भद्र जनों से मेरा आशीर्वाद कहियेगा।

चैत्र कृष्ण १० सोम संवत् १९३९[1]।

[दयानन्द सरस्वती]
शाहपुरा राज मेवाड़

---

[७] **पत्र-सूचना (४२०)** [४९४]

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर[2]]

हमारे पत्रस्थ दो बातों का उत्तर तुम ने नहीं दिया। एक तो लाला मूलराज के भाई······।

चैत्र शुक्ल ३ मंगल[3]

---

[१] **पत्र-सूचना (४२१)** [४९५]

[ठाकुर रघुनाथसिंह जी[4]]

---

[२] **पत्र (४२२)** [४९६]

ओ३म्

श्रीयुत बिहारीलाल जी आनन्दित रहो[5]।

पत्र तुम्हारा आज आया समाचार विदित हुआ। आप लोग धर्म में दृढ़ रहिये कि जिस का फल आनन्द ही होगा। जो बात श्रीयुत ठाकुर रघुनाथसिंह जी तथा श्रीयुत गोविन्दसिंह जी ने सत्य धर्म रक्षार्थ की है यदि यह ऐसी ही है तो उन को अनेक धन्यवाद देना चाहिये। तुम्हारे लिखे अनुसर ठाकुर रघुनाथसिंह जी के पास हमने पत्र भेज दिया है। और उस के साथ जो श्रीमान् आर्य्यकुल-दिवाकर महाराणा जी ने हम को मान्यपत्र दिया है और जो हमने स्वीकारपत्र उदयपुर में रजिष्टर

---

१. २ एप्रिल १८८३।

२. इस पत्र का संकेत म० मुंशीरामसम्पा० पत्रव्यवहार पृ० १३० पर है। वहां श्री स्वामी जी के इतने शब्द उद्धृत किए गए हैं।

३. सं० १९४०। १० अप्रैल १८८३।

४. इस की सूचना अगले पूर्ण संख्या ४९६ के पत्र (पृष्ठ ४००) में है।

५. मूल पत्र ठाकुर नन्दकिशोरसिंह ने भेजा था। अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

कराया है उन की एक २ नकल आज तुम्हारे पास भेजते हैं। कुछ चिन्ता मत करो। जिन का सहाय धर्म है उसी का सहाय परमेश्वर है। जब बुरे बुराई न छोड़ें, तो भले भलाई क्यों छोड़ें। और सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मि० चै० शु० ९ रविवार संवत् १९४०[1]। (शाहपुरा)

(हस्ताक्षर) [दयानन्द सरस्वती]

-----

[३६] ॥ विज्ञापन[2] ॥ [४९७]

विदित हो कि जो विक्रम संवत् १९३७ तदनुसार सन १८८० में मुं० इन्द्रमणि जी रहीस मुरादाबाद का मुसलमानों से विवाद हो कर मुन्शी जी पर ५००) रु० मेजिस्ट्रेट मुरादाबाद ने जुर्माना किया। तब उस पर आर्य्यजनों ने उस मामले को अपना समझ सहाय की थी। वह मामला तभी हो चुका था। परन्तु मेरठ में उस समय इस के लिये यह नियम नियत किया गया था कि मुन्शी जी के मुकदमे में से जितना धन बचे वह अच्छे प्रतिष्ठित सहूकार के यहां ॥) व्याज पर रक्खा जाय। जब कभी ऐसा ही किसी अन्य वैदिक धर्म्मावलम्बी आर्य्य का अन्य मतवादियों से धर्म विषय का विवाद हो के कचहरी में मुकदमा जाय और वह असमर्थ होय तो इन्हीं रुपयों से उस की सहाय की जाय। इस नियम को मुनशी जी ने भी स्वामी दयानन्दसरस्वती जी आदि के सम्मुख मेरठ में स्वीकार कर लिया था। परन्तु शोक का विषय है कि उक्त मुनशी जी ने ऐसे उत्तम नियम को तोड़ अब हिसाब नहीं देते[3]। और उलटा चोर कोतवाल को दाण्डे इस के सदृश लाला रामशरणदास रईस मेरठ और स्वामी दयानन्दसरस्वती जी पर मिथ्या दोषारोपण करते हैं। इस कारण मेरठ आर्यसमाज के आय व्यय का हिसाब प्रकाश करना पड़ा। जिस्से मिथ्या भ्रम जैसा मुनशी जी को हुआ वैसा किसी अन्य सज्जन आर्य्य पुरुष को न होय। और मुं० इन्द्रमणि जी का सत्यासत्य इस हिसाब और मुनशी जी के विज्ञापन को देख कर सब पर प्रगट हो जायगा। मुनशी जी लिखते हैं कि बहुत आर्य्यजनों ने मेरे मुकदमे की सहाय में मेरठ समाज और स्वामी दयानन्दसरस्वती जी के पास धन भेजा था। "उसमें केवल ६००) रु० मेरे पास पहुंचे। बाकी उनके पास रहे।" परन्तु इस मेरठ के मिती वार क्रमानुसार हिसाब देखने से निश्चय होता है कि मुनशी जी के पास उन्हीं के मामले में ९६३।॥≈)॥। मेरठ समाज से पहुंचे हैं। न जाने मुनशी जी ने ६००) रु० क्यों अपने विज्ञापन द्वारा प्रकाश किये। इस बात से तो मुनशीजी की असत्यता प्रगट होती है। यदि मुनशीजी का कथन सत्य है तो इन रुपयों के सिवाय लाला रामशरणदास वा स्वामी जी के पास किसी ने और रुपये भेजे होंय, और उन के पास उन की हस्ताक्षरी सहित रसीद होय, शीघ्र प्रकाश करैं अथवा करवावें, क्योंकि सांच को आंच कहां। और जो मुंशी जी ने हिसाब के छपवाने में ढच पच की वा और ही कुछ राग गाने लगे तो यह उन के लिये पूरा कलङ्क है। इस के निवारणार्थ उनको अवश्य चाहिये कि जब २ जितना २ खर्च हुआ है

---

१. १५ एप्रिल १८८३।

२. मासिक पत्र देशहितैषी, अजमेर, ज्येष्ठ १९४०, पृ० १–५ पर मुद्रित।

३. यह हिसाब मुन्शी जी ने अन्त तक न दिया।

यथावत् मिती वार छपवा देवें। और शेष धन आर्य्यसमाज मेरठ में सर्वोपकारार्थ भेज दें। पूर्व स्वीकृत नियम को भी सत्य करें तो बहुत अच्छी बात है। नहीं तो रुपये गये हुये आ भी जाते हैं, परन्तु धर्म्मयुक्त कीर्ति गई हुई कभी नहीं आती।

॥ संभावितस्य चाकीर्त्तिर्मरणादतिरिच्यते। [गीता २।] ॥

सत्पुरुष को मरण से अपकीर्त्ति बहुत बुरी समझनी चाहिये। यदि हमारे आर्य्यजनों, विशेष उपदेशकों का आरम्भ से मृत्यु तक एकसा सत्याचरण रहे तो देश की बड़ी उन्नति हो। सर्वशक्तिमान परमात्मा आर्य्यावर्त्त देश पर कृपा करे जिस से हमारे आर्य्यावर्त्तीय उपदेशक अपने किये हुये उत्तम उपदेश को लोभादि दोषों से कलंकित न करके आद्योपान्त पर्य्यन्त शुभाचरण से देश की सुदशा बढ़ाया करें। (अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु।)

॥ एति जीवन्तमानन्दः। [महाभाष्य १। ३।१.२]॥

विक्रमी संवत् १९३७ तदनुसार सन् १८८० ई।

नकल हिसाब जो कि मेरठ के समाज और मुन्शी इन्द्रमणि जी के विषय का है।

(आमदनी)	(खर्च)
३५०) मार्फत आर्य्यसमाज लहौर यह तफसील लाहौर के रुपयों की है कि	।)॥ रजष्ट्री मुनशी इन्द्रमणि साहब के पास भेजी ता० ७ अगस्त सन् १८८०
३०) आर्य्यसमाज मुलतान	३००) हवालय मु० इन्द्रमणि मार्फत लाला० श्यामसुन्दर रईस मुरादाबाद ता० ७ अगस्त सन १८८०
१००) आर्य्यसमाज झेलम	
११५) आर्य्यसमाज लाहौर	
१०५) मेम्बरान वियास	११।) किराया रेलगाड़ी मेरठ से मुरादाबाद तक ४ आदमियों का तारीख १४ अगस्त १८८०।
५०) आर्य्यसमाज अमृतसर	
१००) आर्य्यसमाज रुड़की	
१००) आर्यसमाज फरूखाबाद	६) किराया रेल बरेली से मेरठ और बरेली से मुरादाबाद तक।
२३३॥≡) आर्यसमाज फीरोज़पुर	
१५०॥−) आर्यसमाज गुर्दासपुर	।−) ला० शादीराम के खत का महसूल जो इलाहाबाद से आया।
२४५॥) आर्यसमाज मेरठ। इस रकम में मेरठ शहर के	

और मेरठ के जिला तीन चार महापुरुषों का जो समाज के मेम्बर नहीं हैं चन्दा शामिल है दीया हुआ।

११) लाला केवलकृष्ण

१३८॥) लाला रकुनराय व लाला मुरलीधर ओरंगाबाद से।

१३६।।।) पांड़े रामदीन सेकिंड मास्टर दारजिलिंग।

———

१५१६) संख्या सम्पूर्ण एक हज़ार पांच सौ सोलह रुपये।

॥) किराया गाड़ी जो हुल साहेब बैरिस्टर के पास मेरठ में जाते समय दिया गया १४।८।८०।

२३) मुकद्दमे पहिले में खर्च हुआ मुकाम मुरादाबाद इस का हाल मु० जी को मालूम है।

१७≡)। खर्च रवानगी मेरठ से इलाहाबाद तक ता० ६ सितम्बर सन १८८०।

३००) वज़रिये नोट के मुंशी जी के पास भेगे गए।

।–) खत रजिस्टरी महसूल डाक सहित।

३००) वज़रिये हुंडी के मुन्शी जी के पास भेजे गये।

१॥) हुंडियावन दिये गये ता० ३०।१०।८०।

३॥) किराया रेल भंडू नोकर मेरठ से अलीगढ़ तक मय वापिस और खुराक के।

–) मु० इन्द्रमणि सा० के खत का महसूल

———

९६३॥।=)॥ संख्या सम्पूर्ण।

उक्त बाकी ५५२–)। रु० का व्योरा इस प्राकार से है।

११) आर्यसमाज मुलतान	आर्यसमाज मुलतान के लिखने अनुसार उपदेशक मंडली के धन में जमा किया गया।
३६।≡) आर्यसमाज जेलम	३६।≡) आ० स० जेलम के लेखानुसार वापिस किये गए।
४१।।।=) आर्यसमाज लाहौर	४१।।।=) आ० स० लाहौर तथा
३८।) मेम्बरान वियास	३८।) तथा तथा तथा।
१८।) आर्यसमाज अमृतसर	१८।) अमृतसर आ० स० के लेखानुसार

	आर्यसमाज जेहलम को भेजे गये।
३६।≡) आर्यसमाज रुड़की	३६।≡) आ० सा० रुड़की के लेखानुसार उपदेशक मंडली धनमें जमा किये गये।
३६।≡) आर्यसमाज फरूखाबाद	३६।≡) आ० सा० फरूखाबाद के लेखानुसार किसी उचित कार्य में खर्च करने के लिये यहां जमा हैं।
८५-)। आर्यसमाज फीरोजपुर	८५-)। आ० सा० फीरोजपुर के लेखानुसार वापिस भेजे गये।
५४॥=) आर्यसमाज गुरदासपुर	५४॥=) आ० सा० गुरदासपुर के तथा तथा।
८९॥) आर्यसमाज मेरठ	८९॥) आ० सा० मेरठ के विचार अनुसार अंतरंग सभा के वापिस लिये गये।
४-) लाला केवलकृष्ण	४-) लाला केवलकृष्ण के जवाब न आने से मेरठ समाज में जमा हैं।
५०≡) लाला रकुनराय वा ला० मुर्लीधर	५०≡) ला० रकुनराय वा ला० मुर्लीधर के पास रजिष्ट्री खत भेजा था परंतु खत पता न लगने से लौट आया इस लिये इन के रुपये यहां जमा हैं।
४९।।।=) पांडे रामदीन मास्टर	४९।।।=) पं० रामदीन मा० के लेखानुसार इस रुपये की उनके पास पुस्तकें भेज गईं॥

———

५५२-)। संपूर्ण संख्या

पाठक गण! अब देखिये यह अपराध भी मुं० इन्द्रमणि जी पर हुआ, कि यदि मुन्शी जी पूर्व स्वीकृत नियमानुसार वर्तते तो उक्त ५५२-)। ये रुपये भी सर्वोपकार आर्य्यधर्म रक्षा में लगते। और आर्य्यसमाज मेरठ मुन्शी जी के अन्यथा व्यवहार पर शोक करके हिस्सेवार वैदिकधर्म रक्षणार्थ धन को पुनः दाताओं के पास क्यों फेर देते। जैसे थोड़े से उदार आर्यों ने वैदिक धर्मोपदेशक मंडली के लिये अपना २ भाग दे दिया वैसे सब धन आर्य्यावर्त देशोन्नति में लगता तो कितनी अच्छी बात होती। परन्तु ऐसी २ तुच्छ बातों से देशहितैषी महाशय जन देशोन्नति करने में उदासीन न हों, किन्तु जब बुरे बुराई नहीं छोड़ते तो भले भलाई क्यों छोड़ें[1]।

द० दयानन्द सरस्वती

———

१. पं० लेखरामकृत जीवन चरित पृ० ८१६ से ८२२ तक छपा। पं० जी ने भारतमित्र कलकत्ता २६-४-१८८३ से लिया। भारतमित्र के लेखानुसार "शाहपुरा" से भेजा गया।

[९०]　　　　**पत्र-सारांश (४२३)**　　　　[४९८]

[मुंशी समर्थदान वै० य० प्रयाग]

जब तक ईश्वरानन्द पढ़ता रहे उसे ५) रु० मासिक मिलता रहे[1]।

---

[२३]　　　　**पत्र (४२४)**　　　　[४९९]

ओ३म्[2]

श्रीयुत लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

पत्र तुम्हारा महादेव पंडित के पत्र के साथ आया। समाचार विदित हुआ। समाज का उत्सव अच्छी प्रकार हो गया, यह बहुत सौभाग्य की बात हुई। जो महादेव पण्डित के विषय में जो तुमने कुछ अनुमान किया सो हमको नहीं दीखता। यह पण्डित धनार्थी है धर्मार्मी नहीं। क्योंकि इसका पत्र इस बात की सिद्धी करता है। जैसा कि कानपुर में एक पंडित को रक्खा था और पश्चात् खराब निकला। इन लोगों का विश्वास हमारे हृदय में तभी होगा कि जब उनका वर्तमान प्रत्यक्ष वा परोक्ष में एक सा देखा जाय। इस पत्र के साथ मान्यपत्र की नकल भेजते हैं। मेरठ से आया हुआ मुंशी इन्द्रमणि का हिसाब[3] इस लिये नहीं भेजते कि तुम को प्रेस एक्ट के मिथ्या भ्रम ने भ्रान्त कर रक्खा है। अथवा मुंशी इन्द्रमणि से किसी प्रकार का सम्बन्ध होगा। अस्तु जो हो। तुम्हारा प्रबन्ध भी पाठशाला विषयक अच्छा नहीं है। अब कई बार हमने लिखा कि पंडित लक्ष्मीदत्त जी के आने के पश्चात् वा पहले संस्कृत में कौन २ ग्रंथ का किस २ ने वा कितनों ने पढ़ा वा पढ़ते हैं। उसका समाचार कुछ भी नहीं लिखा। इस से विदित होता है कि **तुम्हारी पाठशाला में अलिफ बे और कैट बैट का धर्मार है जो कि आर्य्यसमाजों को विशेष कर्तव्य नहीं है।** और इसके साथ पंडितों का हिसाब भेजते हैं देखलो। तुम अपने हिसाब से मिला लो। और आगे रु० शाहपुरा राज मेवाड़ के पते से मेरे पास भेज दो। और सब से बाबू जी आदि से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मि० वै० व० ३ सं० १९४०[4]।　　　　(हस्ताक्षर[5])

---

[९१]　　　　**पत्र-सूचना (४२५)**　　　　[५००]

[मुंशी समर्थदान वै० य० प्रयाग[6]]

पत्रों का उत्तर·········। [वै० कृ० ३ सं० १९४० (२५ अप्रेल १८८३)]

---

१. यह अंश पं० देवेन्द्रनाथ संकलित जीवन चरित पृष्ठ ६८८ में निर्दिष्ट है। यु० मी०।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। म० मामराज जी ने जनवरी सन् १९२७ में प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २०२-२०३ पर कुछ पाठ भेद के साथ छपा है। इस पत्र का उत्तर देखो म० मुंशीरामसम्पा० पत्रव्यवहार पृ० ३२५।

३. पिछली पूर्ण संख्या ४६७ पर मुद्रित। यु० मी०।　　४. २५ एप्रिल, बुध, सन् १८८३।

५. इस पत्र पर ऋषि के हस्ताक्षर नहीं हैं। सारा पत्र लेखक के ही हाथ का है। ऋषि का एक भी अक्षर नहीं है। इस लेखक के लिखे और भी कई पत्र हैं।

६. इस की सूचना अगले पूर्ण संख्या ५०१ में है। यु० मी०।

[९२] पत्र (४२६) [९०१]

ओ३म्[1]

मुंशी समर्थदान जी आनन्दित रहो !

तुम्हारे सब पत्रों का उत्तर और पुस्तक के बंडल के विषय का पत्र कल तक भेज चुके हैं। आज एक विशेष समाचार के लिये लिखते हैं। जो तुम को पंड्या जी ने उदयपुर का वर्तमान न छापने के विषय में लिखा था उस को सुनकर हमने उदयपुर को लिखा था कि इस को छपवावें वा नहीं। वहां से उत्तर आया कि निसंक छपवा दीजिये। सो इन के छपवाने में विलम्ब न कीजिये। इस लिये अब स्वीकारपत्र, मान्यपत्र और धन्यवादपत्र उत्तम कागज़ पर छपवा कर सब समाजों में और जहां उचित समझो भेज दो। अर्थात् जहां २ लाइब्रेरी वा उत्तम समाचार पत्रों में भी भेज दो। और हमारे पास भी उसकी १०० नक़ल भेज दो। और टाइटल पेज पर भी उदयपुर का वर्तमान छपवा दो।

और गनेशदास और कम्पनी तारघर के नीचे चांदनी चौक के उत्तर नई सड़क बनारस के पास से हम पुस्तक अनेक वार मंगवाते हैं। और उनका व्यवहार वैदिक यन्त्रालय के साथ है। और कुछ कमीशन तुम भी उनको देते होगे और वो भी तुम को देता होगा। तुम उस को एक चिट्ठी भेज दो कि स्वामी जी जो २ पुस्तकें मंगवावें भेज दिया करो और हमारे हिसाब में लिख लो क्योंकि उसका कमीशन वैदिक यन्त्रालय में रहा करे। अभी हम २१।।।=) आने के पुस्तक मंगवा चुके हैं जिस का हाल तुमको लिख दिया। और दो एक दिन में ५०) रु० या ६०) रु० के पुस्तक श्रीयुत महाराजाधिराज हमारे द्वारा मंगवावेंगे। और गनेशदास का व्यवहार शुद्ध है क्योंकि हमने उसकी दुकान से हजारों रुपये की पुस्तकें ली हैं। और कमीशन भी कुछ देता था, हमको ठीक याद नहीं। तुम ने तो उस से कमीशन का खुलासा कर लिया होगा। यदि न करा हो तो अब कर लेना। पूर्व पत्रों का उत्तर और इस का उत्तर शीघ्र लिखना।

आज तुम्हारा २३-३[2] का पत्र पहुंचा समाचार विदित हुये। ईश्वरानन्द वहां पहुँच गया, अच्छा हुआ। और रामनाथ को तुम ने लौटा दिया होगा, अच्छा किया। जैसा तुम ने उस का सूची पत्र बनवाया है उसको बहुत जल्दी छपवाओ। यजुर्वेद के पत्रे भेज दिये हैं पहुंचे होंगे। ऋग्वेद के भी अब भेजने वाले हैं। परन्तु यह समझो कि यजुर्वेद भेजा है मई महीने का। और जो यह ऋग्वेद का भेजेंगे जून का है। अब हम आगे यजुर्वेद के पत्रे जुलाई की ५वीं तारीख तक पहुँचेंगे। बीच में भले ही तुम जब आधा जून हो हमको स्मरण देना। वैसे ही आगे को भी भेजा करेंगे।

मुम्बई से आज लीलाधर हरिदास[3] का पत्र आया है। उस में लिखा है कि टैप ढल रहे हैं। बहुत अच्छी वात है।

---

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा में सुरक्षित है।

२. २३-४ चाहिये। यह पत्र २६ अप्रेल को लिखा गया। यु० मी०।

३. लीलाधर हरिदास रचित 'सत्यासत्यविचार' नामक पुस्तिका का उल्लेख पूर्व ३३१ पृष्ठ पर आया है। विशेष हमारे 'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास' ग्रन्थ के परिशिष्ट पृष्ठ ८४, ८५ पर देखें। यु० मी०।

अब जो तुम ने ज्वालादत्त के लिये भाषा बनाने के विषय में लिखा उसके ये नियम हैं। यदि स्वीकार करेगा तो रक्खेंगे, नहीं तो नहीं।

(१) यदि वह १७) रुपये ही अपना मासिक रखना चाहे तो १६ मन्त्र की भाषा प्रतिदिन बनानी पड़ेगी, चाहे वह गायत्री छन्द हो चाहे उत्कृति[1] अर्थात् छोटे बड़े मन्त्र सब गिनती में आवेंगे।

(२) अक्षर स्पष्ट और चित्त लगाकर सुन्दर भाषा बनानी होगी।

(३) जो तुमने प्रयाग में नौकर रखा है, वह हमारी पुस्तकें सहर्ष प्रूफ सोधे देवे। और जहां उस को संदेह पड़े ज्वालादत्त से पूछ ले। और शिवदयाल को ईश्वरानन्द भी कुछ सहाय दिया करेगा। अन्त का प्रूफ जिस पर छापने की आज्ञा दी जाती है वह एक बार ज्वालादत्त और शिवदयाल देख लिया करें। उसके सिवाय ज्वालादत्त को कुछ न करना होगा, किन्तु भाषा ही बनाना होगा।

(४) यदि उस पर उसकी प्रसन्नता न हो तो घर को चला जाय। यदि घर में रह कर भाषा बनाना चाहे तो उसको ८) रु० माहवारी देवें और १२ मन्त्र की भाषा प्रतिदिन बना दिया करे। बाकी अपना घर का काम किया करे। डाक और कागज का खर्च हमारा होगा। और यंत्रालय में अच्छी भाषा और कुछ अधिक करेगा तो उसका मासिक यथायोग्य बढ़ा दिया जायगा।

(५) यदि वह कहे कि इतनी भाषा मुझ से नहीं बनाई जाती तो उसका कहना व्यर्थ है। क्योंकि जब **हम दो घंटे वा अढ़ाई घंटे अथवा तीन घंटे में २४ गायत्री मंत्र, १२ त्रिष्टुप् और १० जगती छंद का भाष्य सुखपूर्वक बना लेते हैं** तो उस से अधिक समय और परिश्रम कभी नहीं लग सकता। इन दोनों बातों पर उसकी प्रसन्नता न हो तो हम को भी उस पर कुछ प्रसन्नता नहीं। यदि वह घमण्ड करके चला जायगा तो ऐसी जीविका कहीं नहीं मिलेगी और दुःख पावेगा। और हमारी कुछ भी हानि नहीं, क्योंकि हम तो दूसरे को रखके भाषा बनवा लेंगे। और उसके सिवाय पश्चात्ताप के कुछ भी हाथ न लगेगा। घर पै जाके दशगात्रादि मृतक कर्म कराके मुर्दाविधान खाया करेगा। यह सब बातें तुम उसको समझा दो। पश्चात् जैसा हो वैसा हमको १० दिन [के] भीतर शीघ्र उत्तर लिखा भेजो। पीछे हम भाषा बनाने के लिये पत्र भेजेंगे, पूर्व नहीं।

ईश्वरानन्द को हम ने जैपुर भेजा था। उस ने उस का वर्तमान कुछ नहीं लिखा। सो क्या बात है। सो उस से पूछ कर लिख देना।

मि० वै० कृष्णा ४ सं० १९४०[2]।

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र (४२७) [५०२]

ओ३म्[3]

स्वामी ईश्वरानन्दजी आनन्दित रहो।

१—सब यन्त्रालय के पदार्थ और नौकरों पर दृष्टि रखना कि नियमानुसार सब काम होते हैं वा नहीं।

---

१. गायत्री छन्द २४ अक्षरों का होता है और उत्कृति १०४ का। यु० मी०।

२. २६ एप्रिल, १८८३। ३. म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ १७–१८ पर मुद्रित।

२—जब कभी जिस किसी का व्यतिक्रम देखे तो जो शिक्षा करने से सुधर सक्ता हो तो वहीं सुधार देना, न माने तो हम को लिखना।

३—प्रति अष्टवारे वहां का वर्त्तमान पत्र द्वारा हम को भेजा करना और यथाशक्ति जो कोई पुस्तक छपे उसको दूसरे के साथ मिलकर वा स्वयं शोधा करना।

४—और जब कभी तुज को व्यतिक्रम विदित हो, तब, वा जब हम लिखें तब अपने सामने डाक खुलवाना और पुस्तकालय तथा धन, कोश और अन्य पदार्थों की सम्हाल से यथावत् रक्षा करना।

५—यावत् प्रबन्धकर्त्ता का व्यतिक्रम कोई विदित न हो तब तक उसके साथ मिलकर उसको सहायता देना और प्रीति प्रेम से यन्त्रालय की उन्नति करते रहना। ५) रुपये मासिक प्रतिमास यन्त्रालय से मिला करेंगे। उन से खान पानादि उचित व्यवहार करना। और जब कभी अधिक व्यय की इच्छा हो तब हम को लिखना।

६—सदा व्याकरण पढ़ने में परिश्रम किया करना और नियत समय पर यन्त्रालय का भी काम किया करना।

७—शरीर का संरक्षण, प्रातः व्यायाम, भ्रमण, सदा शास्त्रों का चिन्तन करना और जब तक तेरे स्थान में दूसरा निज पुरुष न आवे तब तक कहीं न जाना। धर्म से घर के समान काम किया करना। वैदिकयन्त्रालय से वेदाङ्गप्रकाश के पुस्तक लेकर पढ़ा करना[1]।

(हस्ताक्षर) दयानन्द सरस्वती[2]
शाहपुरा राज मेवाड़ राजपूताना।

---

[४] पत्र (४२८) [५०३]

ओ३म्

श्रीयुत श्रीमान् महाशय आनन्दित रहो!

यहां जो नहर आपके खुदाई जाती है वह ३ फुट ऊपर ३ फुट नीचे और ३ फुट चौड़ी खुदायी जाती है सो मेरी समझ में ३ फुट चौड़ी ४ फुट ऊपर और दो फुट नीचे रहना बहुत अच्छा है। इस का विशेष गुण आपको श्याम को समझा दूँगा। इत्यलम्।

वैशाख कृष्ण ४ गुरु सं० १९३९[3]।

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती[4]]

---

१. इस में तिथि नहीं है अनुमान से यहां धरा है। वै० शु० ३ सं० १९४० (=९ मई १८८३) के पत्र में ईश्वरानन्द का अन्यत्र चला जाना लिखा है। अतः यह पत्र उस से पूर्व का है। यु० मी०।

२. म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ १८ पर हस्ताक्षर नहीं है। यु० मी०।

३ सम्वत् १९४० चाहिए। २६ एप्रिल १८८३।

४. जिस समय स्वामी जी शाहपुरा में विराजते थे, उस समय वहां नहर की खुदाई हो रही थी। उसे

[८] पत्रांश (४२९) [५०४]

[भाई जवाहरसिंह मन्त्री आर्यसमाज लाहौर]

………………………………

मुझ को निश्चय है कि आप के आने से यहां बड़ा आनन्द और उन्नति होगी[1]।…………

———

[४] पत्रांश (४३०) [५०५]

[पं० छगनलाल द्विवेदी मसूदा]

………………………………

अब जब कभी हम मसूदे में आवें[गे] तब श्री दरबार को और तुम को छः शास्त्र के मुख्य मुख्य विषय और मनुस्मृति के तीन अध्याय पढ़ाना चाहते हैं। उस समय वहीं रहना हो और निरन्तर पढ़ाना हो तो एक आध महीने में सब हो जावेंगे। इसका उत्तर लिखना। और यहां के श्री महाराजाधिराज ने मनुस्मृति का सप्तमाध्याय पढ़ लिया है। दो दिन योगशास्त्र अभ्यास करने के लिए पढ़ कर कल अष्टमाध्याय का आरम्भ करेंगे।…………………………

शाहपुरा

[वैशाख वदी ७ संवत् १९३९ से कुछ दिन पहले लिखा गया[2]।]

———

[३] पत्र (४३१) [५०६]

ओ३म्[3]

बाबू नन्दकिशोर जी आनन्दित रहो!

आज जैपुर समाज से पत्र आया। उसके पहले भी आया था और आपने जिस पण्डित के लिए विज्ञापन दिया है इत्यादि से आप के समाज का समाचार हम जान कर यह पत्र लिखते हैं कि

देखकर अपने रहने के स्थान से ही स्वामी जी ने श्री दर्बार के पास यह पत्र भेजा था। मूल पत्र राजकार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित हैं।

१. भाई जवाहरसिंह ने ऊपर मुद्रित अंश रद्दे बुतलान पृ० ६८ पर छापा है। दयानन्द चरित दर्पण पृ० २७२ पर इतना लेख अधिक है—

भाई जवाहरसिंह जी आनन्दित रहो।

आप का पत्र पाया विशेष आनन्द हुआ। आप रियासत जोधपुर में अवश्य आओ मुझ को निश्चय ……………। नहीं कह सकते कि इतना अंश मुंशी जीयालाल जैनी ने कहां से लिया। इन पंक्तियों वाला पत्र जोधपुर बुलाने के लिए नहीं था। भाई जवाहरसिंह का अभिप्राय है कि शाहपुरा बुलाने के लिए था।

२. पं० चमूपति जी सम्पादित ऋषि दयानन्द का पत्रव्यवहार, द्वितीय भाग, संवत् १९९२, पृ० ५३ पर पं० छगनलाल के उत्तर में उद्धृत। पं० छगनलाल का उत्तरपत्र वै० व० ७ अर्थात् २६ एप्रिल १८८३ सोम का लिखा हुआ है। संवत् १९३९ भूल से लिखा गया है। चाहिये संवत् १९४०।

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

उस पण्डित का क्या नाम है। यदि वह जैसा तुम ने विज्ञापन दिया है वैसा ही है तो उन पण्डित जी को यहां शाहपुरा में हमारे पास भेज दीजिये। हम उन की परीक्षा करके तुम्हारे लिखे प्रमाणे २०) रु० से कम माहवारी न करके किसी योग्य स्थान पै रख देंगे, वा उतने ही माहवारी पर हम अपने ही पास रख लेंगे। एक वार यहां हमारे पास भेज दो।

द्वितीय यह बात है कि कल तुम्हारे पास जो स्वीकारपत्र उदयपुर राज यन्त्रालय में छपा है और जो एक मान्य पत्र श्रीमान् आर्यकुलदिवाकरों ने मुझे दिया है उन दोनों की दो २ नकल तुम्हारे पास भेजते हैं। उन में से एक २ नकल तो तुम अपनी लायब्रेरी में रखना और एक २ नकल आर्य्यधर्म सभा जयपुर के समाज में देना। इन दोनों बातों का उत्तर नागरी में लिखकर भेजना। इस बात से मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि आपकी सभा निर्विघ्नता से सदा बढ़ती है। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर सब मनुष्यों पर कृपा करे कि सब की आत्मा असत्य अधर्म व्यवहार से छूट कर सत्य धर्म व्यवहार में प्रवृत्त रहे। सब आर्यसमाज में मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा—

मि वै० कृ० ७ सं० १९४०। तदनुसार ता० २९ अपरेल सन् १८८३ ई०।

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र (४३२) [५०७]

ओ३म्[1]

श्रीयुत रावराजा श्रीमान् तेजसिंह जी आनन्दित रहो—

श्रीमान् का पत्र संवत् १९४० वैशाख वदी ३ रविवार का लिखा मेरे पास वैशाख वदी ८ सोमवार को पहुंचा। जिस के साथ मुंशी दामोदरदास जी का भी पत्र था। वांच कर बड़ा ही आनंद हुआ। मैं आनन्द पूर्वक जोधपुर आने का निमन्त्रण स्वीकार करता हूं। और श्रीमान् महाशय महोदय जोधपुराधीशों, श्रीमान् महाराजे श्री प्रतापसिंह जी तथा आपको अनेक धन्यवाद देता हूं कि जिन आप लोगों ने मेरे वहां जोधपुर में आने के लिए प्रीति प्रकाश की। अब मुझ को दृढ़ निश्चय इस बात से हुआ कि अब आर्यावर्त की उन्नति होने का समय आया है। जब श्रीमान् जोधपुराधीश आदि की वैदिक सत्य धर्म और सनातन राजनीति पर प्रीति हुई है। पुनः हम लोगों के सौभाग्य के उदय होने में कुछ सन्देह नहीं। और इस बात से परम आनन्द हुआ कि जो मुंशी दामोदरदास जी ने आप की उन्नति होने का विषय लिखा। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर से मैं प्रार्थना करता हूं कि आप लोगों की उन्नति कृपा कटाक्ष से सदा किया करें। और स्वदेशोन्नति में आप सब लोगों को दृढोत्साही कर के आप लोगों के द्वारा सब आर्य्यावर्त देश की बढ़ती कराके इस महापुण्य कीर्ति के भागी आप लोगों को करे।

(१) मैं आज से १० दश वा १५ पन्द्रह दिन में दूसरी चिट्ठी आप को लिखूंगा कि जिस में पाली के स्टेशन से जोधपुर आने में जितनी वा जैसी सवारी भेजनी, व जो २ उचित प्रबन्ध होना योग्य होगा लिखूंगा। उसी के अनुसार प्रबन्ध आप कर देवेंगे।

---

१. रावराजा तेजसिंह जी के पास था।

(२) यहां श्रीमान् महारा[जा]धिराज मनुस्मृति का राजधर्म पढ़ रहे हैं। सात आठ दिन में पूरा हो जायगा। और ५. पांच सात दिन, एक राज में और दूसरा पुण्डरीक जी के यहां अग्निहोम का प्रारम्भ होगा उस में उचित उपदेश वा विधि बतलाने में लगेंगे।

(३) मैं अनुमान करता हूं कि गत दिन आप का पत्र शहापुराधीशों को दिखलाया । उस से अनुमान होता है कि जोधपुर में शीघ्र आने में सम्मति कठिनता से देंगे । सम्मति शीघ्र होने के लिये यह उपाय है कि जब मेरा दूसरा पत्र आपके पास आवे तभी आप किसी दूसरे पुरुष को यहां भेज देवें। वे कहेंगे और पश्चात् मैं भी विशेष कहूंगा तो आशा है कि मान जावेंगे, क्योंकि शहापुराधीश बड़े बुद्धिमान हैं। इस में आप २० दिन के भीतर समय का विलम्ब है कि इसी समय में मेरा पत्र वहां आता और वहां से योग्यपुरुष का यहां आना मेरी सम्मति है । अधिक विलम्ब होना मैं भी उचित नहीं समझता।

(४) मैं जैसा सत्यधर्म की उन्नति और स्वदेश का उपकार होने में प्रसन्न होता हूं वैसा किसी अन्य बात पर नहीं। क्योंकि यही मनुष्य जन्म, विद्वान्, राजा वा धनाढ्य पुरुष होने का मुख्य फल है, जिस को कि आप लोग तन मन धन और पुरुषार्थ से करना चाहते हैं । और यह आप लोगों ही का कर्तव्य कर्म है। अब परमेश्वर ने चाहा तो थोड़े ही समय में मैं और आप लोग समक्ष होकर जोधपुर में आनन्दोन्नति करने में प्रवर्तमान होंगे। मेरी ओर से महाराजे श्री प्रतापसिंह आदि से आशीर्वाद कह दिजियेगा। अलमतिविस्तरेण।

वैशाख वदी ९ भौम संवत् १९४०[१] ।

दयानन्द सरस्वती
शापुरा राज मेवाड़

———

[२]　　　　पत्र (४३३)　　　　[५०८]

ओ३म्[२]

श्रीयुत कविराज श्यामलदास जी आनन्दित रहो।

विदित हो कि बहुत दिन हुए वहां के समाचार विदित होने में। अब आप श्रीमानों और आप के लिखने योग्य वर्तमान लिख भेजिये जिस्से विदित हो कि उन डाक्टरों के कृत्य से क्या गुण हुआ। और क्या क्या हो रहा है। आगे कैसा अनुमान होता है। इसमें डाक्टर लोग भी यही पथ्य कहेंगे कि ब्रह्मचारी रहना, घोड़े पर न चढ़ना तथा मांसाहारादि [का] एक वर्ष वा ६ छः महीने अथवा ४ चार महीने तक पथ्य भी यथावत् रखना होगा।

(२) आपके लेखानुसार उदयपुर का वर्तमान छापने के लिये वैदिक यन्त्रालय प्रयागादि में आज्ञा दे दी है। थोड़े ही दिन में छप के प्रसिद्ध हो जायगा ।

---

१. १ मई १८८३ ।

२. मूल पत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में है। पं० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ १८१-१८२ पर भी छपा है।

(३) एक नूतन वर्तमान यह है कि श्रीमान् जोधपुराधीशोंकी आज्ञा से श्रीयुत महाराजे प्रतापसिंह जी तथा श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जी और बाहारट अमरदान जी आदि ने मुझको शीघ्र जोधपुर में बुलाने के लिये पत्र भेजा है। सो गत दिन मेरे पास यहां शाहपुरा में पहुंचा है। इसमें आप सर्वाधीशों से पूछ कर अनुमति लिख भेजिये कि यहां क्या होना उचित है। मैंने उसको इस प्रकार का पत्र भेजा है कि जब मेरा द्वितीय पत्र आप लोगों के पास पहुंच जाय तभी पाली के स्टेशन से जोधपुर तक सवारी आदि का प्रबन्ध कर दीजियेगा। मैंने यह विचारा कि जब उदयपुर से प्रत्युत्तर आजायगा तभी जोधपुर में जाने के लिये नियत समय की सूचना तुम को लिख दी जायगी।

श्रीयुत महाराज राजाधिराज जी का पढ़ना रह जायगा। मनुस्मृति के तो ३ अध्याय हो जावेंगे किन्तु शास्त्रों का विषय रह जायगा। तथापि श्रीमानों की अनुमति से जाना होगा। पांच छः दिनों में मनु का ९ वां अध्याय पूरा हो जायगा। और ८ दिनों में अग्निहोत्र का विधि भी हो जायगा। यहां सदा के लिये दो अग्निहोत्र हुआ करेंगे। एक राज में और द्वितीय पुंडरीक जी के यहां। आप जोधपुर में अभी होकर आये हैं। इस लिये आप भी मुझ को लिखिये। और जो उचित हो तो जिस किसी को जोधपुर में लिखना। अखिलेशों की संमति हो सो भी यहां लिख भेजिये। जो ५१ नियम[1] राजनीति के लिखकर श्रीमानों को दिये थे उसकी १ नकल हमारे पास अवश्य भेज दीजियेगा और सब मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मि० वै० कृ० ९ सोमवार सम्वत् १९४०[2]।

[दयानन्द सरस्वती]
(शाहपुरा)

---

[५] पत्र (४३४) [५०९]

पण्डित गोपालरावहरि जी आनंदित रहो।

आज एक साधू का पत्र मेरे पास आया[3]। वह आप के पास भेजता हूं। साधु का लेख सत्य है। परन्तु आपने चित्तौड़ सम्बन्धी इतिहास में न जाने कहां से क्या सुन सुना कर लिख दिया। उस काल उस स्थान में मेरा उदयपुराधीश से केवल तीन ही बार समागम हुआ। आप ने प्रतिदिन दो बार होता रहा, लिखा है। आप जानते हैं कि मुझे ऐसे कामों के परिशोधन का अवकाश नहीं। यद्यपि आप सत्यप्रिय और शुद्ध-भाव भावित ही हैं और इसी हित-चित्त से उपकारक काम कर रहे हैं, परन्तु जब आपको मेरा इतिहास ठीक २ विदित नहीं, तो उसके लिखने में कभी साहस मत करो।

१. ये ५१ नियम पूर्ण सं० ४५६ (पृष्ठ ३६६-३७४) पर छपे हैं।

२. ३ मई सन् १८८३।

३. साधु जी का पत्र तथा पं० गोपालरावहरि का २७-४-८३ का उत्तर दोनों म० मुन्शीरामसम्पा० पत्रव्यवहार पृ० ३३३-३३७ पर छपे हैं।

क्योंकि थोड़ा सा भी असत्य हो जाने से सम्पूर्ण निर्दोषकृत्य बिगड़ जाता है। ऐसा निश्चय रक्खो। और इस पत्र का उत्तर शीघ्र भेजो।

वैशाख शुक्ल २ सम्वत् १९३९[1]। स्थान शाहपुरा[2]।

(दयानन्द सरस्वती)

---

[९३] पत्र (४३६) [९१०]

(ओ३म्)

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो—[3]

१—पत्र तुम्हारा आया वर्त्तमान विदित हुआ। जैनियों की पुस्तक का बंडल प्राप्त होने से निश्चय हुआ।

२—ईश्वरानन्द कहीं अन्यत्र चला गया है। वह बड़ा चंचल है। बहुत लोगों के कहने से हमने दीक्षा दी और तुम लोग भी प्रसन्न हुए, परन्तु प्रसन्नता का काम करे जब ठीक है।

३—कम्पोजीटर के निकालने से बहुत हानि हुई। परन्तु जैसे बने उन सब को जो कि पूर्व थे रख लो। किसी का ।।) आना किसी का १) रुपया अधिक बढ़ाकर रखलो। क्योंकि **वेदाङ्गप्रकाश और सत्यार्थप्रकाश बहुत जल्द छपना चाहिये।**

४—तुमको हम निश्चित कहते हैं कि बाहर का काम किसी का मत छापो। सत्यार्थप्रकाश और वेदाङ्गप्रकाश के छपने में देर होने का कारण बाहर का काम है। और देशहितैषी और भारतसुदशाप्रवर्त्तक और प्रयाग-समाचार सब का छापना बन्द कर दो। और उनको लिख दो कि तुम्हारी इच्छा हो जहां छपवाओ। क्योंकि हमने पहिले ही लिखा था कि जब हमारे निज काम में हर्कत होगी उसी वक्त हम बन्द कर देंगे। सो हर्कत बहुत होती है। क्योंकि यह यन्त्रालय रोजगार के वास्ते नहीं है, केवल सत्यशास्त्रों को छापकर प्रसिद्ध करने के लिये है, न कि व्यापार के लिये। यहां छापने को बहुत है जितना चाहो उतना छापो। इन समाचार आदि के छापने में समय खोना कुछ उचित नहीं। हम को आशा है कि तुम भी इस बात को प्रसन्न[4] कर लोगे क्योंकि तुम को प्रसन्न[4] करना अवश्य है। और पण्डित जी की यही प्रसन्नता है।

५—तुम्हारे कल के पत्र में पुस्तकों का बंडल लिखा हुआ नहीं आया है। आवेगा तब देख करके मान्यपत्र पर यदि तुम्हारा लेख मानने योग्य होगा तो रहने देंगे, नहीं तो नहीं। और वैदिकनिधि

---

१. संवत् १९४० चाहिये। ८ मई १८८३। तिथि की भी भूल हो सकती है। ६ एप्रिल भी सम्भव है।

२. दयानन्ददिग्वि० तृतीय खण्ड से लिया गया। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २०१ से २०२ पर भी छपा है।

३. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित होगा। हमने आर्यधर्मेन्द्र जीवन चरित पृ० ३७३ से लिया है।

४. ऋषि दयानन्द 'पसन्द' शब्द के स्थान में सर्वत्र संस्कृत 'प्रसन्न' शब्द का व्यवहार करते हैं। यु० मी०।

के विषय में तुमने लिखा सो ठीक है। क्योंकि उन्हीं लोगों के दस्तखत से छपना ठीक है। और धन्यवादपत्र तथा मान्यपत्र पर प्रयागसमाज के प्रधान और मन्त्री के दस्तखत होना चाहिये।

६—ऋग्वेद के पत्रे १५७८ से लेके १६९७ तक पण्डित ज्वालादत्त को भाषा बनाने के लिये देदेना। और उसने १६ मन्त्र की भाषा प्रतिदिन बनाना स्वीकार किया है सो बराबर बनाया करे।

मि० वै० शु० ३ सं० १९४०[1]।

ह० दयानन्द सरस्वती

---

[२] पत्र (४३६) [५११]

ओ३म्

श्रीयुत मान्यवर रावराजा तेजसिंह जी आनन्दित रहो[2]।

आज पूर्वप्रेषित पत्रस्थ पूर्वकृत प्रतिज्ञानुसार आज से दसवें दिन पत्र लिख कर आपके पास भेजा था[3]—मुझको निश्चय है कि आपने श्रीमान् प्रतापसिंह जी तथा श्रीयुत केसरीसिंह जी की सम्मति मेरे बुलाने में अवश्य ले ली होगी। और इन महाशयों के द्वारा श्रीयुत महोदय महाशय जोधपुराधीशों की भी अनुमति स्वीकृत करके लिखी होगी। अब आप के पूर्वलिखित पत्रस्थ प्रीति, उत्साह और परोपकार दृष्टि के अनुरोध से आपको मैं लिखता हूं कि यदि आप लोगों की ऐसी ही इच्छा है कि मुझको शीघ्र जोधपुर में बुलाना अंगीकृत है तो मैं भी आप महाशयों की इच्छानुकूल लिखता हूं कि इस पत्र के पहुंचने की मिती से आगे पांच दिन के भीतर पाली में सवारी के लिए दो रथ और एक सैज गाड़ी, दो ऊंठ और एक हाथी और पुस्तकादि भार के लिए एक सवारी और दो सवार और आठ सिपाहियों का एक पहरा, पहरे के लिए भिजवा दीजिए। हमारे पास १० तथा १२ आदमियों से अधिक नहीं।

और सवारी के साथ एक बुद्धिमान् पुरुष आना चाहिए कि जो पाली में सवारी रख, रेल में बैठ के मेरे पास शाहपुर में आ जाय। परन्तु वह रूपाहेली के स्टेशन पर उतरे। और दो दिन पहले शाहपुर में पत्र द्वारा खबर भेजदे कि जिस से शाहपुर से सवारी उन के लिए स्टेशन पर उपस्थित रहे कि वे रेल से उतर, सवारी में बैठ, शाहपुरा में आनन्दपूर्वक चला आवे। आप का भेजा हुआ माननीय पुरुष शाहपुरे में जिस दिन आवेगा उस से दो तीन दिन में यहां से यात्रा कर उचित समय पाली में पहुंचेंगे। जोगपुर में आके अत्यानन्दपूर्वक मैं आप लोगों से मिलूंगा। आगे मेरे ठहरने के लिए जहां तक हो सके बगीचे में स्थान होना चाहिये। न वह नगर से अति दूर, न अति निकट। जल वायु जहां का शुद्ध और एक मील से अधिक दूर और आध मील से कम दूर न हो। और पूर्वोक्त ऊंटों में एक सवारी का सांडिया और दूसरा साधारण। जब हम पाली में पहुंचेंगे तब उस को एक चिट्ठी इस बात की कि जिस स्थान में मेरा ठहरना हो, क्या २ सामग्री उपस्थित करनी होगी, पत्र

---

१. ६ मई १८८३

२. मूल पत्र जोधपुर में रावराजा जी के पास सुरक्षित थे, हमें वहीं से प्रतिलिपियां आई थीं।

३. पूर्ण संख्या ५०७ का पत्र।

लिख कर उस सांडिये सवार के हाथ आप के पास भेजी जाय, एक दिन पूर्व ही। जिस के अनुसार आप उस स्थान में बिछौना आदि का यथावत् प्रबन्ध कर दीजियेगा। इस का उत्तर शीघ्र भेजिये और सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मिती वैशाख शु० ४ गुरुवार[1]।

[दयानन्द सरस्वती]

———

[६]   पत्र-सूचना (४३७)   [५१२]

[पं० सुन्दरलाल जी, प्रयाग]

वैदिक यन्त्रालय के हिसाब की व्यवस्था के लिए[2]।

———

[२४]   पत्र (४३८)   [५१३]

ओ३म्[3]

श्रीयुत कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।

पत्र तुम्हारा २-५-८३ का लिखा हमारे पास सहित ३००) की हुँडी के आया। मैं भी जानता हूं वैदिक यन्त्रालय का हिसाब गड़बड़ है। परन्तु अब पण्डित सुन्दरलाल जी का आदमी गया है। वह हिसाब किताब लिखा करेगा। इस से आशा है कि सुधर जायगा। यदि न सुधरेगा तो जैसी आप लोगों की सम्मति—यही कि एक सराफी पढ़ा हुआ अच्छा प्रामाणिक आदमी आप लोगों की सम्मति से लिया जायगा। इस के विये आज मैंने पण्डित सुन्दरलाल जी को लिखा है। उन की सम्मति आने पर मैं लिखूंगा। अथवा परवारा पण्डित सुन्दरलाल जी तुम को लिखेंगे। लाला सेवाराम जी तथा बाबू जी आदि को मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। और एक यह फोटोग्राफ[4] तथा छोटा सा पत्र[5] रामानन्द को दे दीजियेगा। और पाठशाला के कक्षा विषय में अवकाश पाकर लिखूंगा और यहां का समाचार भी।

शाहपुरा

मि० वै० शु० ४ सं० १९४०[6]।

(दयानन्द सरस्वती)

———

१. १० मई १८८३।

२. इस का संकेत अगले पूर्ण संख्या ५१३ के पत्र में है। यु० मी०।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। इस की प्रतिलिपि जनवरी सन् २७ में म० मामराज जी ने की। फरुखाबाद का इतिहास पृष्ठ २०३-४ पर भी छपा है।

४. यह फोटो श्री स्वामी जी तथा रामानन्द का एक साथ खिंचा हुआ है।

५. यह अगली पूर्ण संख्या ५१४ पर छपा है। यु० मी०।

६. १० मई बृहस्पति सन् १८८३।

[१] पत्र (४३९) [६१४]

ओ३म्[१]

रामानन्द आनन्दित रहो।

तेरे लिखे प्रमाणे प्रतिकृति भेजी जाती है[२]। कोई कहार अच्छा मिले तो लेते आना। तेरे ३०) रु० के लिए १०) १५) २०) तक देंगे। १०) जमा रहेंगे। दुकान को लिख दिया। जब आवश्यक होगा तब दे देंगे। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मि० वै० शु० ४ सं० [१९४०। १० मई] १८८३

[दयानन्द सरस्वती]
शाहपुरा

———

[२] पत्र (४४०) [६१६]

ओ३म्[३]

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो।

निम्नलिखित वर्तमान पंडित बालमुकुन्द तथा देवीप्रसाद को भी सुना कर कार्य्य कीजिये। हम को मुन्शी समर्थदान ने लिखा था कि बाहर का काम भी छपना चाहिये। उस पर हम ने ऐसी अनुमति दी कि हमारे काम में हर्ज होगी तो हम उसी वक्त बाहर का काम बन्द कर देंगे। अब देखो कि एक सप्ताह में तो प्रयागसमाचार छपता है। और मासिक ये दो ले लिये। और आठ फारम वेदभाष्य का छपता है। और यह सब मिल कर महीने में १० फारम तथा १२ यह हो जाते होंगे। इस हिसाब से २० तो हो गये। अब कहो सत्यार्थप्रकाशादि कैसे छपे। इस लिये हम चाहते हैं कि बाहर का काम जब तक दूसरा प्रेस न लिया जाय तब तक न छपाया जाय। क्योंकि यह छापाखाना केवल सत्यशास्त्र के प्रचार के लिए किया गया, रोजगार के लिये नहीं। यद्यपि समर्थदान की मनसा छापेखाने की उन्नति करने पर हो कि बाहर के काम से कुछ सहाय होगा तथापि अपने निज पुस्तकों के छपने में हानिकारक को हम नहीं छपवा सकते। इस लिये मुन्शी समर्थदान को हमने लिखा है और तुम भी उन को समझा दो कि नोटिस देदें। पंडित सुन्दरलाल जी की भी यही सम्मति होगी

---

१. मूल पत्र म० मामराज जी के पास श्रीराम निवास (त्रिलिङ्ग) खातौली (जिला मुजफ्फरनगर, यू० पी०) में सुरक्षित है।

२. यह पत्र तथा प्रतिकृति अर्थात् रामानन्द के साथ खिंचा हुआ अपना फोटो मन्त्री आर्यसमाज फरुखाबाद के द्वारा भेजा गया था। म० मामराज जी ने सन् १९२७ में वहां से प्रतिकृति तथा पत्र प्राप्त किया। इस पर रामानन्द का नोट इस प्रकार है—

"इस पत्र को जब कभी काम पड़े प्रवर्तक में छाप दीजिये कृपा होगी। रा० न०।

३. मूल पत्र श्री नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन ।



ऋषि दयानन्द सरस्वती और उनका लेखक ब्रह्मचारी रामानन्द ।
इस चित्र का संकेत पृ० ४१६ पर मुद्रित रामानन्द को लिखे गए पत्र में है ।

अर्थात् बाहर का काम बिलकुल बन्द किया जाय। कारण कि समाचार चाहे जहां छपेगा, उनकी कुछ हानि नहीं होगी। और अपने पुस्तक अन्यत्र नहीं छप सकते। और हम ने इस से कहा था जब इस प्रतिज्ञा पर कहा था। चाहे चिट्ठी भी हमारी इसी के पास होगी, भले ही देख लो। यदि तुम प्रयागसमाचार लो तो रात में वा अनध्याय में तथा सत्य शास्त्रों के छपने का समय बचा कर अन्य समय में कि जिस में इन शास्त्रों के छपने में विघ्न न हो, लिखा था। सो अब समर्थदान को कह दो कि १५ दिन पहिले नोटिस दे दो प्रयागसमाचार वाले को और महीने पहले देशहितैषी आदि को। और बाहर की छपवाई किसी की मत लो। जब बाहर की छपवाई लेने का समय आवेगा तब हमहीं कह देंगे, अब बाहर का काम जो कुछ आवे तो ले लो। एक तो प्रेस है, उस में अपना छपना बहुत है। इस से बाहर की छपवाई लेनी अवश्य नहीं। और सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

और तुम तीन और समर्थदान मिल कर एक सभा करो कि जिस से कोई व्यवस्था नई करनी वा पुरानी हटानी हो तो विचार करके हम को और पंडित जी को लिखा करो। और जो मुन्शी समर्थदान ने मान्यपत्र के साथ छापा है[1], सो अच्छा है। क्योंकि इतने लेख के बिना मान्यपत्र का अर्थ लोगों के समझ में नहीं आता। इतना लेख अवश्य होना था।

मि० वै० शु० ४ सं० १९४०[2]।

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]
शाहपुरा

———

[३] पत्र (४४१) [५१६]

ओ३म्

श्रीयुत कविराज श्यामलदास जी आनन्दित रहो[3]।

मेरे पत्र का उत्तर वारहट किश्न जी के हस्ते शाहपुराधीशों के द्वारा पहुँचा। बांच कर आनन्द हुआ। और इस बात से परम आनन्द हुआ कि श्रीमानों का शरीर आरोग्य होता आता है। निश्चय है कि परमेश्वर की कृपा से अब आरोग्य हो जायगा। और इसी द्वारा देस मेदपाट और त[द्]द्वारा आर्यावर्त देशकी उन्नति की भी आशा है।

(१) जो जोधपुर से पत्र आया था वह रावराजा तेजसिंह का था। और उस में यह लिखा था कि तेजसिंह जी ने प्रतापसिंह जी से कहा और प्रतापसिंह जी ने श्रीमान जोधपुराधीशों से और जोधपुराधीशों ने प्रत्युत्तर दिया कि स्वामी जी को शीघ्र बुलवाओ। और मुझ से पूछा कि किस स्टेशन से और कितनी सवारी और कितने आदमी आप के साथ हैं, कितनी सवारी भेजें इत्यादि। और असल पत्र रावराजा तेजसिंह जी का आप के पास भेजता हूं। बांच कर लौटा दीजिये। और

---

१. मान्यपत्र यजुर्वेद भाष्य अंक ४८, ४९ (सम्मिलित) के टाइट पेज ३ पर छपा है। उस के ऊपर मुन्शी समर्थदान ने तीन पंक्तियाँ स्पष्टीकरण के लिये लिखी हैं। सम्भवतः उसी की ओर यह संकेत है। हम उसे परिशिष्ट में दे रहे हैं। यु० मी०। २. १० मई १८८३।

३. मूल पत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में सुरक्षित है। पं० चमूपति सम्पा० पत्रव्यवहार पृष्ठ १८३-१८४ पर छपा है।

मैंने पहले पत्र में लिखा था कि दस दिन पीछे हम एक पत्र जोधपुर को आप के पास भेज देंगे । सो आज भेजा है[1] । उस में यह लिखा हैं कि हमारे साथ अधिक से अधिक १० तथा १२ आदमी होंगे। और उनके लिए २ रथ एक सिकरम और मेरे लिए एक सिकरम अच्छी इत्यादि लिख दिया है। अब उन का और आप का प्रत्युत्तर आने पर जैसा होगा वैसा विचार किया जायगा। और अब श्रीमानों की सम्मति लेकर वहां का वर्तमान लिखा कीजिये । और आप अपने नेत्रों की ओषधी शीघ्र कीजिये।

मिती वैशाख शुक्ल ४ सं० १०४०[2]।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[४] पत्र (४४२) [५१७]

ओ३म्

श्रीयुत लाला श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो।

मुन्शी इन्द्रमणी जी और लाला जगन्नाथदास समाज में रहने के योग्य नहीं हैं । क्योंकि केवल मेरी निन्दा करने से मेरा वह कुछ नहीं बिगाड़ सकते, परन्तु जो देश की उन्नति और उन्नत्यर्थ समाज के उद्देश हैं, उन से इन का आचरण विरुद्ध है। अब देखिए इन का सच और झूठ मुसलमानों के साथ मामले में प्रसिद्ध हो गया है। अब वे कितना ही उद्योग करें, परन्तु वह उन के लिये सफल न होगा। इस लिये मुंशी इन्द्रमणि जी का सभापति और लाला जगन्नाथदास का पुस्तकाध्यक्ष रहना अयोग्य है। क्योंकि मैंने प्रथम इन दोनों के पास प्रयाग से पण्डित सुन्दरलाल जी की मारफत बहुत से पुस्तक रक्षा और विक्रायार्थ भेजे थे। उन का हिसाब आज तक उन्होंने नहीं दिया है। सिवाय अपने मतलब सिद्ध करने के लिये, देशोन्नति का नाममात्र कह के, स्वप्रोजन[सिद्ध] करने के अन्य कुछ भी नहीं दीख पड़ता। हां प्रथम यत्किंचित था, सो लोभादि दोष ने अब नष्ट कर दिया। इसलिये जो उन का संगी हो उन के साथ जाने दो। और बाकी समाज उन से अलग कर लीजिये। और रजिष्टर तथा समाज का धन उन को कभी मत दीजिये । यदि कोई दूसरा समाज होता तो लाला जगन्नाथदास को 'इस समाज पर धिक्कार है' कहते समय पर ही हाथ पकड़ धक्का देकर बाहर निकाल दिया जाता। और उसी वक्त उस का नाम कट जाता। ऐसे दुष्ट भाषण करने वाले पुरुषों का समाज में रहना परम दूषण है। देखो मुम्बई समाज ने ऐसी बातों से बाबू हरिश्चन्द्र चिंतामणि को प्रधान पद से शीघ्र च्युत कर दिया। ऐसा ही अनेक समाजों में हुआ है । इसी से समाज की उन्नति है।

बस आप अपने स्थान पर समाज किया कीजिये और समाज के नियमों पर दृढ रहिये। और उन से अलग आप और जो समाज के हितैषी आर्यावर्त देश की उन्नति चाहें वे भी आपके साथी हों। और जो उनके संगी होवें उनके साथ जावें। और अन्य समाज के सभासद के आने की वहाँ अवश्यकता क्यों समझते हैं। क्या आप समाज के सभासद नहीं हैं। आप ही जो कि लिखने में बातें नहीं आतीं

---

१. यह पत्र पूर्ण संख्या ५११ पर छपा है । यु०मी०।

२. १० मई १८८३ ।

समाज की ओर से अन्तरंग सभा में प्रसिद्ध कर दीजिये । और ४७) रु० समाज के जमा और रजिष्टर पुस्तक उन को न देने में जो कुछ वे आप की निन्दा करेंगे उस से आप को कुछ भी हानि नहीं हो सकती । और आप निश्शंक कह दीजिये कि हम मुन्शी इन्द्रमणी जी और लाला जगन्नाथ दास को सभा के अधिकारी वा सभासद रखना नहीं चाहते । न इनके साथ हम, वा हमारे साथ वे रहें । और न इनके संग देश की उन्नति हो सकती है । इसलिये हम आज से समाज का कार्य स्वतन्त्र होकर इन दोनों महात्माओं से पृथक् करते हैं । और उसी समय से पृथक् हो जाइये । बहुत से मुरादाबाद [के] रईसों ने प्रथम ही मुझ से कहा था कि जैसा मुन्शी इन्द्रमणीजी को आप जानते हैं वैसे नहीं हैं, सो ऐसा ही हुआ । और इसी लिये मैंने स्वीकारपत्र अर्थात् वसीयतनामा में से मुन्शीजी को पृथक् कर दिया[1] । उन का सच और झूठ इतने ही नमूने से समझ लो कि जो उन्हों ने विज्ञापन दिया था कि हमारे पास मेरठ समाज से मामले के सहाय में केवल ६००) रु० ही आये और मेरठ समाज के हिसाब से ९३३॥।=)॥।[2] पहुंचे हैं । यह महा झूठ नहीं तो क्या है ? इस लिये सज्जनों को विदित कराता हूं कि यदि आर्य्यावर्त्त देश की उन्नति चाहो तो मुन्शी इन्द्रमणी जी और लाला जगन्नाथदास के अन्यथा आचरण से पृथक् हो के देशोन्नति किया करो । इनके समाज में मेल से सिवाय हानि के दूसरा कुछ भी नहीं है । सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर अपनी कृपा कटाक्ष से देशोन्नति दृढ़ोत्साही कटिबद्ध करें कि जिस से मुन्शी इन्द्रमणीजी तथा लाला जगन्नाथदास के किये हुए विघ्न आप लोगों को निरुत्साही न करें और तन मन धन से देशोन्नति में तत्पर रक्खे । (अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु) ।

मि० वै० शु० ६ सं० १९४०[3] । शाहपुरा राज्य मेवाड़ [दयानन्द सरस्वती]

---

[२] कार्ड (४४३) [५१८]

ओ३म्[4]

ठाकुर शेरसिंह जी आनन्दित रहो ।

कार्ड तुम्हारा आया, समाचार विदित हुआ । आजकल गर्मी बहुत होती है । तुमको यात्रा में कष्ट उठाना पड़ेगा । यदि ऐसी ही इच्छा हो तो रात्रि २ में रेल में बैठ दिन में ठहर २ के अजमेर पहुंच रूपाहेली के स्टेशन उतर के हमारे पास चले आओ । रूपाहेली से शाहपुरा ८ कोश है । यदि

---

१. प्रथम स्वीकार पत्र में मुं० इन्द्रमणि का नाम रखा था । देखो पूर्ण संख्या २६४ पृष्ठ २१८ । द्वितीय स्वीकार पत्र (पूर्ण संख्या ४७८) में हटा दिया । यु० मी० ।

२. इस पत्र की जो नकल हमें प्राप्त हुई थी, उस में ६३॥।=)॥। लिखे थे, परन्तु समस्त पुरातन लेखों में ६६३॥।=)॥। देख कर हम ने वैसा ही कर दिया है । यह स्पष्ट ही नकल करने वाले का दोष है । पुनः म० मामराज जी के मूल पत्र से मिलाने पर मूल पत्र में ६३६॥।=)॥। है । [पूर्ण संख्या ४६७ पर जो हिसाब छपा है उस में (पृष्ठ ४०३ पर) योग ६३६॥।=)॥। ही है ।]

३. १२ मई १८८३ ।

४. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है । जनवरी सन् १९२७ में म० मामराज जी ने इसकी प्रतिलिपी की । फरुखाबाद का इतिहास पृ० २०४ पर भी छपा हैं ।

तुम तीन दिन पहले हमारे पास पत्र वा तार भेज दोगे तो सवारी तुम्हारे वास्ते यहां से आ जायगी जिस से तुम सुखपूर्वक यहाँ पहुंच जाओगे। परन्तु थोड़े दिन के लिये हमारे पास न आना चाहिये। कम से कम २० तथा ३० दिन तक जरूर रहना चाहिए। ठाकुर गोपालसिंह जी आदि को मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। परमात्मा की कृपा से हम आनन्द में हैं। आशा है कि तुम भी आनन्द में होगे।

वै० शु० ७ सं० १९४० रविवार[१]।

[दयानन्द सरस्वती[२]]

———

[३] पत्र (४४४) [५१९]

ओ३म्

श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जी आनन्दित रहो[३]—

मुन्शी दामोदरदास जी का ता० २७ [१७?[४]] मई का लिखा पत्र हमारे पास पहुंचा, समाचार विदित हुआ। उन के पास इस लिये नहीं भेजा कि वह भागासे होगा। आपने पाली में सवारी आदी मुन्शी दामोदरदास[५] और बारहट अमर्दान जी को भेजा और पाली में सवारी छोड़कर शाहपुरा में आने की आज्ञा दी। एक डेरा भिजवाया और मेरे रहने के लिये बाग में बंगला नियत किया। बहुत अच्छी बाती की। यह पुरुषार्थ सब आप ही लोगों का है। इसलिये श्रीमान् योधपुराधीश महाराजा, श्रीमान् प्रतापसिंह जी, श्रीयुत महाराजा भतीजा फतेसिंह जी और आप आदि को अति प्रीति से आशीर्वाद और बहुत धन्यवाद देता हूं। इस को स्वीकार कीजिये। और यहां श्रीयुत महाराजाधिराज शाहपुराधीशों ने रुपाहेली स्टेशन पर ता० २६ मई के दिन आप के भेजे हुए पुरुषों के लिए सवारी उपस्थित कर देना स्वीकार कर लिया है। सो उसी तारीख को वह सवारी पहुंच जायगी। और जब आपके भेजे पुरुष यहाँ पहुंचेंगें तत्पश्चात् मैं भी यहां से चल कर उचित समय पर जोधपुर पहुंच के आप लोगों से अत्यानन्दपूर्वक मिलूंगा। और मैं इसी बात से प्रसन्न हूं कि जो मुझ से आप लोगों का यत्किंचित उपकार हो और आप लोग मुझ से आनन्दपूर्वक उपकार ग्रहण करें। क्योंकि जो कुछ अपने आर्य्यावर्त देश की उन्नति है सो सब आप ही लोगों के द्वारा अवश्य हो रही है और होगी। अन्य किसी के द्वारा नहीं। क्योंकि यथा राजा तथा प्रजा—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः। स यत्प्रमाण कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥१॥

[गीता ३। २१]

राजा और राजपुरुषों के सत्य धर्मयुक्त उत्तम पुरुषार्थ ही से सब को सब प्रकार के आनन्द

---

१. १३ मई १८८३।

२. इस पर पता ऋषि के हाथ का लिखा हुआ इस प्रकार है—रामानन्द ब्रह्मचारी के हस्ते लाला कालीचरण रामचरण मन्त्री आर्य्यसमाज फर्रुखाबाद की मार्फत पहुँचे"। [इस कार्ड पर शाहपुरा डाक घर की मोहर १३ मई १८८३ की है]।

३. मूल पत्र रावराजा तेजसिंह के पास था।

४. १६ ता० का पत्र है अतः १७ ता० चाहिये। यु० मी०।

५. पृष्ठ ४२१ की टि० ४ भी देखें। यु० मी०।

प्राप्त होते हैं। अलमति विस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु॥ अन्य सब सज्जनों से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। और पाली में हाकिम के नाम ऐसा तार भेज दिया है कि ता० २६ मई को रूपाहेली के स्टेशन पर सवारी उपस्थित होगी।

मि० वै० सु० १३ सोमवार सम्वत् १९४०[1]।

[दयानन्द सरस्वती]
शाहपुरा

---

[४] ओषधि-पत्र (४४५) [५२०]

[श्रीयुत कविराज श्यामलदास जी]

ओषधि संबन्धी[2]।

---

[५] पत्र (४४६) [५२१]

ओ३म्[3]

श्रीयुत कविराज श्यामलदास जी आनन्दित रहो।

आप के नेत्र निरोग होगये कि नहीं। किश्न जी बारहट के हस्ताक्षर आपकी चिट्ठी युक्त श्रीमानार्यकुलदिवाकरों के शरीर की अरोग्यता सुन बड़ा आनन्द हुआ। आप लोगों ने अपने शरीरों को अपने हाथ से ऐसा घास फूस सा बना रक्खा है कि किसी न किसी रोग को छोड़ कर थोड़े ही समय अरुग्ण रहते हैं। शरीर की आरोग्यता से धर्मार्थ काम मोक्ष यथावत् सिद्ध कर सकते हैं।

एक यह समाचार विदित होवे कि आज ३ दिन हुये मुझ को लेने के लिये जोधपुर से आदमी आगये हैं[4]। और मैं भी परसूं अर्थात् जेष्ठ वदि ४ शनिवार[5] के दिन यहां से जोधपुर की ओर चलूंगा। और उचित समय वहां पहुंच कर आप को वहां का सब समाचार लिखूंगा। यह समाचार श्रीमानों से भी कह दीजियेगा। और श्रीयुत कविराज मुरारिदान जी तथा उदयपुरस्थ भद्र लोगों से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा और पूर्व मत्प्रेरित पत्रस्थौषधी थोड़े दिन सेवन कर देख

---

१. १६ मई १८८३।

२. इस पत्र का संकेत अगले पूर्ण संख्या ५२१ के पत्र में है। यु० मी०।

३. पं० चमूपति सम्पा० पत्र व्यवहार पृष्ठ १८५-१८६ पर मुद्रित।

४. मुन्शी दामोदरदास रायजादा सिंगी नारनौली, बाबू दुर्गाप्रसाद जी फरुखाबाद निवासी को लिखते हैं—

"…………हस्बुलहुक्म जुनाब मौसूफ [श्री स्वामी जी] के माय सब सवारियों के कमतरीन माय मित्र अमरदान जी जोधपुर से रवाना होकर स्वामी साहब को शाहपुरा से लेकर जोधपुर में आए। चुनाचे जब से अकसर वक्त व्याख्यान हुआ है। वरना ५ बजे से १० बजे रात तक सवाल व जवाब होते रहते हे।"

५. २६ मई १८८३। यु० मी०।

लीजिये। यदि गुण दीखे तो अधिक सेवन कीजिये। निश्चय है कि आप ओषधी का सेवन न्यून न करते रहेंगे।

मि० जे० कृ० २ सं० १९४०[1]।

हस्ताक्षर
शाहपुरा
[दयानन्द सरस्वती]

---

[५] पत्र (४४७) [५२२]

श्रीयुत मान्यवरेष्विदन् निवेदनं[2]।

विदित हो कि हमारा असबाब और आदमी प्रातःकाल दो घड़ी वा तीन घड़ी दिन चढ़े यहां से चल देवें।

एक पुस्तकादि भार के लिये गाड़ी, कि जिस के बैल १ घण्टे कोश चलने वाले होवें और सिंवी साई। जैसा कि पहिले सिगी जी ने मुर्दार बैल भेजे थे वैसा न होना चाहिये। मैं इन बैलों को यहां चलाकर देख लूंगा।

एक सर्कारी रथ और एक सर्कारी तांगा, यदि पुस्तकों के लिये सैज गाड़ी कि जिससे मेह आदि जल पानी का बचाव होवै। ऐसा हो तो बहुत अच्छा है। और बग्गी की डाक आपने बैठा ही दी होगी। और एक पहरा यहां का साथ चला जायगा। और पुस्तकों की गाड़ी के साथ एक वा दो मोम जामे भी चाहिये कि जिस से मेह पानी का बचाव हो सके[3]।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[६] पत्र (४४८) [५२३]

[4]श्रीयुताऽर्याऽनवद्य-शुभगुणगणाऽलंकृतेभ्यः श्रीमन्महाराजराजाधिराजेभ्यो दयानन्दसरस्वती-स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां, शमिहास्ति, तत्र भवदीयं च नित्यमेधमानमाशासे।

विदित हो कि हम कुशलता पूर्वक कल संध्या के समय में अजमेर में पहुच गये। और पुस्तकादि के सहित आज सब आदमी प्रातःकाल पहुंच गये हैं। विशेष विदित किया जाता है कि शाहपुरा से चल कर जहां घोड़ा बदलता है, उससे आगे दो ग्राम छोड़ के जो रूपाहेली का भोजरांस ग्राम है वह एक कोश रह गया। तब बड़े वेग से आंधी और पानी आया। वहां एक घंटा तक भीगते रहे। जब आंधी और पानी बन्द हुआ तब भोजरांस ग्राम

---

१. २४ मई १८८३।

२. मूल पत्र शाहपुरा राज में सुरक्षित है।

३. संभवतः ज्येष्ठ वदी ३ सं० १९४० अर्थात् २५ मई सन् १८८३।

४. मूल पत्र शाहपुरा राज में सुरक्षित है।

जो कि रूपाहेली का है उस में पहुंचे। वहां प्रथम ही मुझ को लेने के लिये रूपाहेली के ठाकुर उस ग्राम में आ ठहरे थे। उन के रात्रि में वहां रहने से मेरे ठहरने और घोड़े आदि के रहने के लिये सब प्रबन्ध उन्होंने कर दिया। और दूसरे दिन मध्याह्न में भोजन कर मध्याह्न समय में अर्थात् गाड़ी के छूटते ही समय पहुंचा। वहां से बरल[1] के स्टेशन पर पहुंचा। देखा तो वहां न कोई सिपाई और न कोई गाड़ीमान उपस्थित था। इस लिये अजमेर को तार देकर सुधा अजमेर में पहुंचा। आज यहां से आधी रात के समय पाली का टिकट लेकर पाली को जावेंगे।

राज के मुख्य दो अंग हैं कि अच्छे काम करने वालों को पारितोषिक और बुरे काम के करने वाले को दण्ड देना। जो दूसरी चौकी अर्थात् घरटे में घोड़ों के साथ सवार भेजा था, वह घोड़ों को छोड़ अपने घर का रास्ता लेकर चला आया। और एक मशालची गाड़ियों के साथ भेजा था सो न जाने कहाँ शाहपुरा में छिप रहा। उस का मुख भी नहीं देखा। यदि दोनों बग्घी के साथ सवार होते तो इतना कष्ट न उठाना पड़ता। इस लिये उन को शक्त दण्ड हो तो सब चेतन हो जावेंगे। नहीं राजाज्ञा को कुछ भी नहीं समझेंगे। आगे जैसी आप की इच्छा हो वैसा कीजिये। सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा[2]।

ज्ये० व० ६ सोम १९४०[3]।

[दयानन्द सरस्वती] अजमेर

मैं शीघ्रता के कारण मेरे साथ ४ सिपाई थे। उन को ४) ग्यार [उपहार ?] संध्या और २) जो वहां सिपाई रहे थे उनको देना चाहता था [न दे सका]।

---

[२] पत्रांश (४४९) [५२४]

[राव बहादुरसिंह जी मसूदा]

……रूपाहेली के स्टेशन से पीरली का ही टिकट लिया था। इसीलिये कि मसूदा को अवश्य ही जाना होगा। परन्तु वहां सवारी मौजूद नहीं पाई। तब अजमेर को आना हो गया। अब फिर इधर आना होगा, तब मसूदे आना होगा[4]।

[२८ मई[5] १८८३ को अजमेर से लिखा गया।]

दयानन्द सरस्वती

---

१. अर्थात् पीरली स्टेशन। यहीं उतर कर मसूदा जाना था। देखो पूर्ण संख्या ५२४ का पत्र। यु०मी०।

२. इस पत्र का उत्तर पं० चमूपतिसम्पा० पत्रव्यवहार पृ० १९, २० पर छपा है।

३. २८ मई १८८३।

४. इतना अंश राव बहादुरसिंह जी के पत्र में उद्धृत है। हम ने उस की थोड़ी सी भाषा बदली है। राजस्थानी प्रयोग के स्थान में भाषा प्रयोग किया है। राव जी का पत्र सं० १९३९ ज्येष्ठाब्द ८ का है। यहां संवत् १९४० चाहिए। ज्येष्ठ वदी ८ को २९ मई थी। राव जी का पत्र पं० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ७५ पर छपा है। पीरली तथा बरल का एक ही स्टेशन होगा।

५. पूर्ण संख्या ५२३ के पत्रानुसार २७ मई की संध्या को अजमेर पहुँचे और उसी पत्रानुसार तथा श्री पं० लेखराम जी के जीवन चरित पृष्ठ ५७२ के अनुसार २८ की रात में पाली के लिये रवाना हुए, अतः यह पत्र २८ मई (=ज्येष्ठ कृष्ण ६) को ही लिखा गया। यु० मी०।

[९४] पत्र (४५०) [५२५]

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो[१]।

हम ज्येष्ठ वदि ४ शनिवार[२] के दिन शाहपुरे से चलकर ज्येष्ठ वदि १० गुरुवार[३] के दिन जोधपुर पहुंचकर फ़ैजुल्लाखांजी के बाग़ में ठहरे हैं[४]। वेदभाष्य के टाइटलपेज पर जोधपुर का नोटिस छाप देना। और देशहितैषी को भी हमने कह दिया है कि वैदिकयन्त्रालय को मत भेजो और प्रयागसमाचार भी बन्द करदो। यदि बन्द न करोगे तो हम दंड कर देंगे, क्योंकि बहुत वक्त हम लिख चुके हैं। सभा में जो बाहर के काम के छपने की अनुमति हो तो स्वीकार न किया जावे। ये निम्नलिखित समाचार वेदभाष्य के टाइटलपेज पर छाप देना। श्रीयुत महाराज राजाधिराज श्रीमान नाहरसिंह जी वर्मा ने ३०) रु० माहवारी सदा के लिये ज्येष्ठ वदी ४ शनिवार के दिन से वैदिकधर्म उपदेशकों के लिये देना स्वीकार कर लिया है। और २००) रुपये चित्तौड़ी कि जिसके १५०) कलदार होते हैं वेदभाष्य के सहाय में प्रदान किए। और मनुस्मृति के सप्तम तथा अष्टम, नवमाध्याय जो कि राजधर्मविधायक है पढ़कर योगशास्त्र, वैशेषिक और न्यायशास्त्र के मुख्य विषय भी पढ़ चुके। परन्तु न्यायशास्त्र, कुछ कम रह गया, जोधपुर को शीघ्र आने से। और हम लिख चुके हैं कि वेदभाष्य के ग्राहकों का रजिस्टर जो कि तुम्हारे पास वर्त्तमान है नक़ल करके भेजदो और टाइप शीघ्र मंगवाओ। और यदि १५०) रु० सेवकलाल कृष्णदास ने नहीं दिये हों तो तुम्हारे पास से भेजदो और टाइप शीघ्र मंगवाओ। इसके लिये हम पण्डित जी को लिख देंगे। वह इस बात में तुमको कुछ नहीं कहेंगे। और तुम भी लिख देना कि स्वामी जी की आज्ञा से हमने भेजे हैं। और रामानन्द के कहने से विदित हुआ कि लखनऊ का कम्पोजीटर दुष्ट है। ऐसे आदमियों को यन्त्रालय में नहीं रहने देना चाहिये। और यह पत्र बाबू विश्वेश्वर सिंह जी को भी सुना देना। और जो छापने को सत्यार्थप्रकाश हैं उस को १ मास पहिले हमको लिख भेजोगे, तब ठीक समय पर तुम्हारे पास पत्र पहुंचेंगे। और यहां का विशेष समाचार आगे लिखा जायगा।

मि० ज्येष्ठ वदि १० सं० १९४०[३]।
जोधपुर। ह० (दयानन्द सरस्वती)

---

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।

२. २६ मई १८८३।

३. ३१ मई १८८३।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित्र पृ० ८६० पर लिखा है कि २७ मई को पाली पहुंचे और २९ मई को जोधपुर पहुंचे [यह भूल है। इस पत्रानुसार ३१ मई की प्रातः जोधपुर पहुँचे]। उसी जीवनचरित में पृ० ५७२ पर लिखा है कि २८ मई को [रात्रि के] १२ बजे अजमेर स्टेशन से चले। यह पूर्वापर-विरोध पं० लेखराम जी के ग्रन्थ के सम्पादक की असावधानी से हुआ है। पं० घासीराम जी [पृ० ६६३] २९ मई को अजमेर से चलना लिखते हैं [वह भी पूर्व पत्र पूर्ण संख्या ५२३ के अनुसार अशुद्ध है।]

[६] पत्रांश (४५१) [५२६]

[भाई जवाहरसिंह ··· ··· ··· ···शाहपुरा]।

···

निश्चय है कि आप अपने काम पर तत्पर रहेंगे। और श्रीमान् महाराजाधिराज को अति आनन्दित करेंगे। और अपने पुरुषार्थ स्वाभाविक सद्गुणों और उत्तम कामों से अपनी कीर्ति को बढ़ावेंगे[१]।······

मिति ज्येष्ठ कृष्ण १० [सं० १९४०। ३१ मई] सन् १८८३ जोधपुर।

———

[७] पत्र (४५२) [५२७]

ओ३म्[२]

श्रीयुत महाराज राजाधिराज श्रीनाहरसिंह जी आनंदित रहो।

विदित हो कि जेष्ठ वदी ४ शनिवार[३] के दिन शाहपुरा से चल कर जेष्ठ वदी १० गुरुवार[४] के प्रातःकाल योधपुर में आनन्दपूर्वक पहुंच गये। और पहुंच के कुछ देर से श्रीयुत महाराजा प्रतापसिंह जी और श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जो आदि भद्रजन प्रीतिपूर्वक मिले। और हम यहां फैजुल्लाखां जी के बाग में ठहरे हैं। और जो आप पत्रादि लिखें सो इसी बाग के पते से लिखना। यह बाग और इसमें मकान तथा जलवायु भी अच्छा है, सो जानना। और जो आपने २००) रु० चित्तौड़ी कोंचमान के हस्ते भेजे, सो पहुंचे। यहां का जो विशेष समाचार होगा, सो लिखा जायगा। और आप भी वहां का जो विशेष समाचार हो सो लिखियेगा। बूंदी से पत्र[५] का प्रत्युत्तर आया वा नहीं[६]।

[दयानन्द सरस्वती]

(राज मारवाड़ योधपुर)

———

[८] पत्रांश (४५३) [५२८]

[पं० मुन्नालाल सं० देशहि० अजमेर]

··· ···हम जोधपुर बहुत उत्तम प्रकार से पहुंच गये[७]।··· ···

२ जून ८३[८]। जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

———

१. यह पत्र भाई जवाहरसिंह के नाम लिखा गया था। भाई जवाहरसिंह जी ने ऊपर मुद्रित अंश "रद्दे बुतलान" पृ० ६८ पर छापा है।

२. मूल पत्र राजकार्यालय शहापुरा में सुरक्षित है।

३. सं० १९४०। २६ मई १८८३। यु० मी०।

४. सं० १९४०। ३१ मई १८८३। यु० मी०।

५. संभवतः गोरक्षार्थ लिखे गये पत्र का। यु० मी०।

६. संभवतः ३१ मई अथवा १ जून १८८३।

७. देशहितैषी के रजिस्टर से।

८. ज्येष्ठ कृष्ण १२ सं० १९४०। यु० मी०।

[३६] **विज्ञापन**[1] [५२९]

ओ३म् नमः सच्चिदानन्दादिलक्षणाय परमेश्वराय

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि श्रीयुत परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ज्येष्ठ वदी १० गुरुवार[2] के प्रातः समय योधपुर में आके फैजुलाखां जी के बाग में ठहरे हैं। जो कोई उन से मिलना चाहै, वह सायंकाल के ५ बजे से रात्रि के १० बजे तक आनन्दपूर्वक मिल के सभ्यता के साथ बात चीत करे वा सुने। उक्त स्वामी जी सन्ध्या के बजे से ६ बजे से ८ बजे तक फैजुल्लाखां जी के बाग में सनातन वेदादि सत्यशास्त्रोक्त विषयों में ज्येष्ठ वदी १३ रविवार सम्वत् १९४० के दिन से वक्तृत्व करेंगे। जिन महाशयों को श्रवण करने की इच्छा हो वे पूर्वोक्त स्थान और समय पर उपस्थित हो कर सभा को सुशोभित करें। सब विषयों के सुनने के पश्चात् यदि किसी विषय में सन्देह रह जाय तो वह उस में आनन्दपूर्वक प्रश्नोत्तर कर लेवे। सुनने और प्रश्नोत्तर होने के पश्चात् सज्जनों को यही योग्य है कि सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करके स्वयं सदा आनंदित होकर सब को आनन्दित किया करें।

मिति ज्येष्ठ वदी १२ शनि सम्वत् १९४०[3]।

---

[५५] **पत्र-सारांश (४५४)** [५३०]

[मुंशी समर्थदान, वै० य० प्रयाग]

यदि बाहर का काम बन्द न करोगे तो हम तुम पर दण्ड कर देंगे[4]।

[ज्येष्ठ कृष्ण ३० मंगल १९४० (=५ जून १८८३)]

---

[५] **पत्र (४५५)** [५३१]

ओ३म्[5]

श्रीयुत प्रधान दुर्गाचरणादि तथा श्रीयुत साहू श्यामसुन्दर जी आनन्दित रहो।

कार्ड आप का आया, समाचार विदित हुआ। जो प्रधान और पुस्तकाध्यक्ष जो कि आर्य्य-समाजों के उद्देशों के विघ्न थे, पृथक् कर दिये गये। बहुत अच्छी बात हुई। अब आप का समाज उन्नतिशील होगा। और यही बात देशहितैषी और भारतसुदशाप्रवर्त्तक तथा मेरठ और लाहौर के

---

१. यह विज्ञापन जोधपुर में दिया गया था। पीले चिकने देशी कागज पर लिथो में काली स्याही से छपा हुआ है। इस की मुद्रित प्रति श्री० महावीरसिंह जी गहलौत एम० ए० रिसर्चस्कालर मेड़ती दरवाजा जोधपुर के संग्रह में सुरक्षित है। उस की प्रतिलिपि प्रो० महेशप्रसाद जी मौलवी आलिम फाजिल हिन्दू युनिवर्सिटी बनारस द्वारा ता० ३ मई १९४५ को हमें प्राप्त हुई।

२. ३१ मई १८८३। पं० लेखरामकृत जीवनचरित में २६ मई को जोधपुर पहुंचना लिखा है। यह भूल है।

३. २ जून १८८३।

४. इस सारांश की सूचना अगले पूर्ण संख्या ५३२ के पत्र में है। यु० मी०।

५. मूल पत्र आर्यसमाज मुरादाबाद में सुरक्षित था। यह पत्र पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८२३ पर भी छपा है।

समाज के पत्रों में छपवा दीजिये। और आगे को कोई समाज के उद्देशों से विरुद्ध आचरण, भाषण करे, उस को एक दो वार समझा दीजिये। और न समझे तो इसी प्रकार पृथक् करते रहिये। और अब वैदिक यन्त्रालय में आप के समाज के १००) रु० लगे हैं। और १०) के पुस्तक वैदिक यन्त्रालय से मंगवा लीजिये। अथवा ११०) रु० ही के पुस्तक मंगवा लीजिये। और सब सभासदों से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मि० ज्ये० शु० १ सं० १९४० बुद्धवार जोधपुर[1]।

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]

---

[३] पत्र (४५६) [५३२]

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो[2]।

विदित हो कि हम कई वार मुन्शी समर्थदान को लिख चुके हैं कि बाहर का छापना बिलकुल बन्द करदो। परन्तु उस ने अब तक बन्द नहीं किया। इस लिये तुम उस को समझा दो कि बाहर का काम कभी न छापे। यदि बन्द न करेगा तो हम उस पर दण्ड कर देंगे। इस प्रकार की चिट्ठी परसों हम ने उस को लिख दी। और उस को दण्ड भरना पड़ेगा। इस को बाहर का काम छापने का उस को क्या प्रयोजन है। और तुम समर्थदान को सहायता देते हो, इसमें हमारी बड़ी प्रसन्नता है। और तुम पिन्शिन कब लोगे। जब तुम पिन्शिन लोगे तब तुम्हारी नौकरी शीघ्र वैदिक यन्त्रालय में हो जायगी। और सब यन्त्रालय की भी खबरदारी रक्खा करो। और लिखने के योग्य समाचार हम को तत्काल लिखा करो। और कितनी हानि निघंटु उणादिगण और धातुपाठ सत्यार्थप्रकाश के छपने से बन्द हो रहा है। अब शीघ्र तुम पिन्शिन लो और शीघ्र यन्त्रालय में आ जाओ। जब तुम यन्त्रालय में आकर काम करोगे तभी काम ठीक बनेगा। और देख लो कि मुम्बई (से टाइप) मंगवाने में समर्थदान का हठ था। नहीं तो पंडित जी ने कहा था कि हम कलकत्ते से लेते आवेंगे। इसने कहा कि नहीं, मुंबई का संगावेंगे। अब न ही मुंबई का आया, न कलकत्ते का। बहुत हानि हो रही है। और मुंबई से मंगाना भी नहीं है। २५०)[3] रु० ऐसे आदमी के पास भेजा है कि जिस का ठोर न ठिकाना। इन सब बातों का उत्तर शीघ्र भेज दो। यहां बहुत आनन्द हो रहा है। विशेष समाचार आगे लिखा जायगा। और तुम वहां का समाचार सदा लिखा करो। और यह समर्थदान अपनी चिट्ठी में कभी तुम्हारा नमस्ते भी नहीं लिखता। यह क्या बात है। और सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

मि० ज्ये० सु० २ सं १९४० गुरुवार[4] जोधपुर राज मारवाड़।

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]

---

१. ६ जून १८८३। २. मूल पत्र श्री नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

३. पूर्ण संख्या ५२५ के पत्र में १५०) रु० भेजने का उल्लेख है। यु० मी०।

४. ७ जून १८८३।

[८] पत्र (४५७) [५३३]

ओ३म्[1]

श्रीमदनवद्यगुणगणालंकृत मान्यवरमहाशय शाहपुराधीश आनन्दित रहो।

निश्चय है कि जवाहिरसिंह जी शाहपुरा में पहुंच गये होंगे। और आज रुड़की से एक पत्र आया है सो आप के पास भेजा जाता है। सबओवरसीअर भी थोड़े ही समय में आप के पास पहुंचेगा। आप के लिखे अनुसार उदयपुर को लिख दिया जायगा। आपने जो पत्र भेजा था सो पहुंचवाय दिया गया है[2]। यहां का वर्तमान यह है कि आज कल विशेष कर प्रजाजनों की भीड़ भाड़ सायं समय उपदेश सुनने और प्रश्नोत्तर[3] करने के लिये होती है। आगे विशेष समाचार जो कुछ होगा लिखा जायगा। बूंदी से कुछ पत्रोत्तर आया वा नहीं। **अग्निहोत्र की शाला और कुंडादि बन गये होंगे। क्षात्रशाला का आरम्भ हो गया होगा।** और विशेष समाचार हो सो लिखियेगा। और यह रुड़की का पत्र वांच कर जवाहरसिंह जी को दे दीजियेगा।

मि० जेष्ठ शु० ५ सं० १९४० रविवार[4]।

जोधपुर राज मारवाड़

{ दयानन्द सरस्वती }

[९] पत्रांश (४५८) [५३४]

[लालजी बैजनाथ मुम्बई………]

…………………… ………

चालीस रुपये मनीआर्डर द्वारा भेजते हैं। विठल भाणा ब्राह्मण को देकर रसीद ले कर भेज दो। ………समाज मन्दिर का काम कैसा चल रहा है[5]।

ज्येष्ठ शुद्ध ७ संवत् १९४०[6]।

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर

---

१. मूल पत्र राजकार्यालय शहापुरा में सुरक्षित है।

२. यह पत्र राजाधिराज ने अपनी भूआ अजबजी के नाम का ता० ५ जून १८८३ के पत्र के साथ श्री स्वामी जी को जोधपुर में भेजा था। इसका संकेत पं० चमूपतिसंपा०पत्रव्यवहार पृ० १६ पर है।

३ देखो पूर्ण संख्या ५२७ पृष्ठ ४२५ तथा इसी पृष्ठ की टि० ५। यु०मी०।

४. १० जून सन् ८३।

५. यह पत्रांश लालजी वैजनाथ के एक पत्र के आधार पर हम ने बनाया है। तिथि उसी पत्र में है और संवत् उस से पहले पत्र के आधार से लिखा है। संभवतः बिठल ब्राह्मण कुछ काल तक श्री स्वामीजी के पास नौकरी करता रहा। लालजी के ये दोनों पत्र म० मुन्शीरामसंपा० पत्रव्यवहार पृ० २८१–२८३ पर देखो।

६. १२ जून १८८३ मंगलवार।

[२९]　　पत्र (४५९)　　[५३५]

ओ३म्[1]

मंत्री आर्य्यसमाज फरक्काबाद लाला रामचरण कालीचरण जी आनंदित रहो।

विदित हो कि रामानन्द ब्रह्मचारी की माता मुहल्ला नुनिहाई साह बिहारीलाल जी की हवेली के पिछवाड़े जो कि लाला बलदेवदास ने मकान मोल लेकर इसके पिता शंकरानन्द जी को धर्मार्थ दिया, उस में रहती है। यदि जब कभी उस का शरीर छूट जाय तो उसके अन्त्येष्टि कर्म के लिये ५०) पचाश रुपये लाला निर्भयराम जी की कोठी से लेलेना और हमारे हिसाब में लिखा देना। और उन रुपयों से घृत और सुगंध्यादि पदार्थों को लेकर जैसा विधान षोडश संस्कारविधि के पुस्तक में लिखा है उसके अनुसार मृतक कर्म करा देना। और इस काम के कराने में किसी प्रकार आलस्य न करना। और इस बात को प्रत्येक सभासद को विदित कर देना, जिससे समय पर सहायक होवें।

ज्येष्ठ शुक्ल ९ बृहस्पति संवत् १९४०[2]।

राज मारवाड़ योधपुर।　　[दयानन्द सरस्वती]

निम्नलेखानुसार मृतकसंस्कार करने के लिये घृतादि पदार्थ लिये जावेंगे।

२५) पच्चीस रुपये का अच्छा घृत।

१०) दश रुपये का सफेद सुगंधि वाला चंदन।

५) अगर तगर और कपूर आदि सुगन्धित वस्तु।

५) वस्त्रादि लिये जावेंगे।

५) और पांच रुपये की पलास अर्थात् ढाख की लकड़ी अथवा आंब की, और संस्कारविधि के लेखानुसार वेदी बनानी होगी।

उक्त लेखानुसार ५०) रुपये केवल दाहकर्म में खर्च होने चाहियें।

———

[१]　　पत्रांश (४६०)　　[५३६]

[पं० मुन्नालाल सं० देशहि० तथा मन्त्री आर्यस० अजमेर[3]]

……… पं० सुखदेव, पं० दामोदर और शालिगराम कहां हैं[4]।………

१५ जून ८३। जोधपुर[5]　　दयानन्द सरस्वती

———

१. मूल पत्र आर्यसमाज फरुखाबाद में सुरक्षित है। सन् १९२७ में म० मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की। फरुखाबाद का इतिहास पृ० २०५ पर भी छपा है।

इसी पत्र की दूसरी प्रतिलिपि रामानन्द ब्रह्मचारी की पुस्तकों आदि में (अतरोली स्टेशन के निकट रायपुर ग्राम) से ता० १८ सितम्बर सन् १९२८ की रात्रि के तीन बजे तक खोजने पर मिली थी। उन के भ्राता त्रिलोचनदेव की आज्ञा से मा० मामराज जी ले आये। वह उन के पास श्रीरामनिवास (बिल्डिङ्ग) खातौली में सुरक्षित है।

२. १४ जून १८८३।

३. देश हि० के रजिस्टर से।

४. यह अभिप्रायमात्र हैं। इस का उत्तर १७-६-८३ का महात्मा मुंशीराम संकलित पत्र व्यवहार पृ० १६६-१६६ पर छपा है।

५. ज्येष्ठ शुक्ल १० शुक्र, सं० १९४०। यु० मी०।

[४] पत्र (४६१) [५३७]
(५)

[बाबू विश्वेश्वरसिंह[१] ....]
............खलादेना। और मुझ को दृढ़ निश्चय है कि मुंशी समर्थदान और तुम दोनों मिल कर यन्त्रालय का काम अच्छी प्रका[र]रखोगे। और सब से मेरा आशीर्वाद कह देना। (अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु)। और पंडित सुन्दरलाल जी की भी सम्मति नये काम में सदा लिया करोगे जैसी कि मेरी। और यह दोनों पत्र तुम्हारे पास भेजते हैं जो कि शाहपुरे की है। किसी समाचार में छपवा देना।

मि० ज्ये० शु० १२ सं० १९४०[२]।

जोधपुर राजमारवाड़ (दयानन्द सरस्वती)

---

[१] पत्र (४६२) [५३८]

ओ३म्

श्रीयुत माननीयवर शूरवीर महाराजे श्रीप्रतापसिंह जी आनन्दित रहो[३] !

यह पत्र बाबा साहब को भी दृष्टिगोचर करा दीजियेगा।

(१) मुझ को इस बात का बहुत शोक होता है कि श्रीमान योधपुराधीश आलस्य आदि में वर्तमान, आप और बाबा साहब दोनों रोगयुक्त शरीर वाले हैं। अब कहिये इस राज का कि जिस में १६००००० सोलह लाख से कुछ ऊपर मनुष्य बसते हैं। उन की रक्षा और कल्याण का बड़ा भार आप लोग उठा रहे हैं। सुधार और विगाड़ भी आप ही तीनों महाशयों पर निर्भर है। तथापि आप लोग अपने शरीर का अरोग्य, संरक्षण और आयु बढ़ाने का काम पर बहुत कम ध्यान देते हैं। यह कितनी बड़ी शोचनीय बात है। मैं चाहता हूं कि आप लोग अपनी दिनचर्य्या मुझ से सुन के सुधार लेवें। जिस से मारवाड़ तो क्या अपने आर्य्यावर्त देश भर का कल्याण करने में आप लोग प्रसिद्ध होवें। आप जैसे योग्य पुरुष जगत् में बहुत कम जन्मते हैं और जन्म के भी बहुत कम चिरंजीवी शतायु होते हैं। इस के हुए बिना देश का सुधार कभी नहीं होता। उत्तम पुरुष जितना अधिक जीवे उतनी ही देश की उन्नति होती है। इस पर ध्यान आप लोगों को अवश्य देना चाहिये। आगे जैसी आप लोगों की इच्छा हो वैसे कीजिये।

(२) आगे जो यह सुना जाता है कि आगामी सोमवार के दिन यहां के लालजी आदि की मेरे साथ बात चीत होने वाली है[४]। उस में आप की सम्मति है वा नहीं। यदि सम्मति है तो सायं-

---

१. यह पत्र बाबू विश्वेश्वरसिंह जी के पास प्रयाग को भेजा गया था। पत्र के पहले ४ पृष्ठ लुप्त हैं। मूल पत्र श्री नारायणस्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है। २ १७ जून १८८३।

३. मूल पत्र राव राजा तेजसिंह जी के पास था।

४. आषाढ़ वदी ५, संवत् १९३९ (४०? सोमवार) को रायजादा सांगी (अग्रवाल वैश्य) नारनौली दामोदरदास जयपुर से राजा दुर्गाप्रसाद, फरुखाबाद को लिखता है—"पुराण पढ़ने वालों ने मुबाहिसा का आज का रोज मुकरर किया था। मगर हस्ब कयास वक्त में आया। यानी जुनाब महाराजा श्रीप्रतापसिंह साहब बहादुर प्राइम मिनिस्टर आज तशरीफ लाकर फरमाया कि अभी तो मुबाहिसा नहीं किया चाहते।"

काल के सात बजे से साढ़े आठ बजे तक सभा में बराबर उपस्थित होंगे वा नहीं। जो आप और बाबा साहब उचित समय सभा में उपस्थित न रहेंगे तो मैं भी इन स्वार्थी, देश के बिगाड़ने वाले पुरुषों के साथ वाद करने के लिए उपस्थित न होऊंगा। कारण यह कि उन में सभ्यता की रीति बहुत कम देखने में आती है। और पक्षपात भी अधिकतर है। एक आप को छोड़ कर अन्य पुरुष भी समय पर सभा में निष्पक्षपाती होकर सत्य बोलने वाला अब तक मेरी दृष्टि में नहीं आया है। इस से आप का उस सभा में उपस्थित रहना अत्यन्त उचित समझता हूं।

(३) यदि सोमवार को शास्त्रार्थ कराने की इच्छा हो तो कल सायंकाल ७ बजे से साढ़े आठ बजे तक उस के नियम एक दिन पहले बन जाने अवश्य चाहियें कि जिस से दूसरे दिन बराबर शास्त्रार्थ चले। इस लिये लालजी को कल सायंकाल बुलवा लेना चाहिये। और आप भी सभा में उपस्थित हों कि सब के सामने पक्षपात रहित नियम नियत लिखित हो जावें।

(४) इस पोप लीला की निवृत्ति करके यहां से अन्यत्र यात्रा करने का मेरा विचार है। अनुमान है कि बाबा साहब ने आप से कह भी दिया होगा।

इन उपरि लिखित सब बातों का उत्तर लेखपूर्वक आज सायंकाल तक मेरे पास भिजवा देवें। अलमति विस्तरेण महामान्यवर्य्येषु।

मि० आ० व० ३ शनि सं० १९४०[1]।

दयानन्द सरस्वती

---

[१०] **पत्रांश (४६३)** [५३९]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर[2]]

............दामोदर शास्त्री[3] को भेजदो।

२४ जून १८८३। जोधपुर[4]

दयानन्द सरस्वती

---

१. २३ जून १८८३। पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३४ पर इसी पत्र का (१) का अंश छपा है। वहां आश्विन वदी ३ शनिवार अथवा २२ सितम्बर १८८३ छपा है। यह भूल है। आश्विन वदी ३ को शनिवार नहीं था, बुधवार था। और २२ सितम्बर को वदी ६ है। वस्तुतः 'आ' से यहां आषाढ़ अभिप्रेत है।

२. देशहि० के रजिस्टर से। इस का उत्तर ३-७-८३ का म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १६६-१७२ पर छपा है।

३. दामोदर शास्त्री हरिश्चन्द्र मोहनचन्द्रिका के सम्पादक थे। देखो देशहितैषी वैशाख १९४०।

४. आषाढ़ कृष्ण ४ रवि, सं० १९४०। यु० मी०।

[१२] **कार्ड (४६४)** [५४०]

ओ३म्[१]

श्रीयुत महाशय श्री रूपसिंह जी योग्य रामानन्द ब्रह्मचारी का नमस्ते विज्ञात हो। आगे परमात्मा की कृपा से श्री जगत्गुरु जी के सहित सब लोग आनन्द में हैं। आशा है कि आप भी सकुटुम्ब आनन्द मंगल में होंगे। यह आप का पत्र कई महीनों के पश्चात् आया। मैं तो निरास हो गया था कि अब रूपसिंह जी मुझ को भूल गये हैं। परन्तु अब इस तुम्हारे पत्र से पूर्ण निश्चय हो गया कि किसी कार्य विशेष से अपना कुशल पत्र आप न भेज सके। वर्त्तमान समय में श्री स्वामी जी राज देश मारवाड़ योधपुर में फैजुल्लाखां जी के बाग में ठहरे हैं। यहां के प्रजापुरुष प्रतिदिन आते हैं। दो एक बार व्याख्यान भी हुए। बहुत से श्री स्वामी जी के अनुकूल हैं और यहां के योधपुराधीश भी दो चार दिन के पश्चात् श्री स्वामी जी से मिलने को आने वाले हैं। और महाराजा जी के भाई महाराजा राजाधिराज श्री प्रतापसिंह जी आते जाते हैं। उपदेश सुन कर बहुत प्रसन्न हुए हैं। विशेष समाचार पश्चात् लिखूंगा। तुम पत्र के देखते ही अपना विस्तारपूर्वक कुशल समाचार का पत्र शीघ्र लिख भेजना।

आषाढ़ वदी ५ सोम संवत् १९४[०][२]

रामानन्द ब्रह्मचारी राजमारवाड़ योधपुर

---

[५६] **पत्र (४६५)** [५४१]

ओ३म

मुन्शी समर्थदान जी आनदित रहो [३]।

पत्र तुम्हारा आया, समाचार विदित हुआ। हमारे आशय को तुम नहीं समझते हो। इस लिये एक बात को बहुत बार लिखनी पड़ती। यह समझो कि वेदभाष्य माहवारी ही निकले ऐसा विशेष नेम कभी न रहा है। किन्तु १२ बारह अंक पहुंचने से वर्ष पूरा माना जाता है। इस लिए जब तक टेप न आवे वेदभाष्य का छापना ठीक नहीं। किन्तु आवश्यक सत्यार्थप्रकाश और धातुपाठ का छापना है, उसको तुमने रोक रखा। यह बड़ी हानि का काम है। इस लिए चाहे वेदभाष्य एक आध महीना बन्द रहे, पर उनका छपजाना अत्यावश्यक है। और अन्य पत्र भेजे हैं। उनका उत्तर शीघ्र भेजो। और जो तुमने पुस्तकें भेजीं, सो वेदभाष्य के सहित पहुंच गई। और यह पत्र बाबू विशेश्वरसिंह जी को भी सुना देना। और उनको मेरा आशीर्वाद भी कह देना। पं०ज्वालादत्त ने ८दिन में ५० मन्त्र की भाषा बनाई। कुछ भी नहीं बनाई। काम न करने के लिए चाहे १० अर्जियां दो। हम जानते हैं कि ये सब काम न करने की बातें हैं। हम निश्चय कर कहते हैं कि तुम इसका काम यथातथ्या निकालो। ज्वालादत्त जो भाषा बनाता है, ऐसा नहीं हो कि कहीं पोपलीला घुसेड़ डाले।

---

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. २५ जून १८८३।

३. शताब्दी संस्करण पृष्ठ १७ पर इसका थोड़ा सा अंश छपा है। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

जैसी हमारी संस्कृत है उस के अनुकूल [करे] और कुछ न करे। पण्डित शिवदयाल को काम हो तो रहने में कुछ हर्कत नहीं।

पुंडरीक शिवशर्मा छीतरदत्त जी से दाम नहीं लिए गये हैं। सर्दार मेहरसिंह जी के पास ≡) आने के पुस्तक और भेजदो। उन्होंने ५॥) रु० जिल्द सहित के दिये थे। वेद के मन्त्रों का क्रम तो अच्छा है, परन्तु लागत बढ़ जायगा और कागज भी बहुत खर्च होगा। और अपने कोई समाज होगा तो उसको १०) रु० सेकड़े से अधिक कमीशन नहीं मिलेगा। सत्यार्थप्रकाश शोध कर भेजदें[गे] और जोधपुर का हाल आगे लिखेंगे। निर्णयसागर से १५०)[1] की रसीद आ गई। अच्छा हुआ। अब टेप शीघ्र मंगवालो। जो पहले ही रुपये निर्णयसागर में भेज देते तो इतने दिन क्यों रहते। संस्कार-विधि बना सोधकर भेज देंगे।

मिति अ० ब० ६ सं० १९४० मंगलवार[2]।

हस्ताक्षर
[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़ मरुस्थल

[१.९] उर्दू पत्र (४६६) [५४२]

बाबू दुर्गाप्रसाद जी[3]

हस्ब-उल-ईमाए [आज्ञा] जुनाब स्वामी दयानन्द सरस्वती साहब आप को यहां की कैफियत से इत्तिला देता हूं। चुनाचे २६ जून सन् हज़ा को महाराजा महाराजाधिराज राजराजेश्वर वालिए मुल्क मारवाड़ जुनाब स्वामी साहब मौसूफ के दर्शन करने को भैय्या फैजउल्लाखां साहब के बाग में तशरीफ लाए[4] और २५ रु० और पांच अशरफी नजर गुजरानी। और चन्द लमहा तक महाराजा मौसूफ बख्याल अदब स्वामी साहब कुर्सी नशीनी से बसद अज्जरूए इनकार फरमाते रहे। मगर जुनाब स्वामी साहब ने जब दूसरी तीसरी मर्तबा फरमाया, तब मजबूरन जनाब मौसूफ के रोबरू कुर्सी नशीन होकर गुफतगू आगाज़ की और नौह बनौह की गुफतगू अनकरीब दो घण्टे के ६ बजे शाम से ८ बजे शाम के करते रहे। और बसद बशाशत यानी खुशदिली तशरीफ लेगए। और नीज वाएदा फरमा गए कि अब आप की खिदमत में हाजिर होता रहूंगा। चुनाचे महाराजा

---

१. पृष्ठ ४२७ की टि० ३ भी देखें। यु० मी०। २. २६ जून १८८३।

३. यह पत्र राजा दुर्गाप्रसाद के पत्रों में से म० मामराज जी सन् १९२७ में लाए थे। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० २६० और इस अंश में उन के अनुवादक स्वामी सत्यानन्द (दूसरा संस्करण पृ० ५०२) और पं० घासीराम (पृ० ६९४) लिखते हैं कि २९ मई सन् १८८३ को श्री स्वामी जी जोधपुर पहुंचे। उसके ठीक सतारहवें दिन [१५ जून] महाराज यशवन्तसिंहजी उन से मिलते आए। ये दोनों बातें अशुद्ध हैं। इस पत्र से ज्ञात होता है कि महाराज जोधपुर २६ जून को श्री स्वामी जी से मिले। यही बात श्री स्वामी जी के राजाधिराज शाहपुरा नरेश को लिखे गए एक अगले पत्र (पूर्णसंख्या ५४५) से भी ज्ञात होती है। उस पत्र में श्री स्वामी जी लिखते हैं कि "मिति आषाढ़ वदि ७ मंगलवार के दिन सर्वाधीश महाराजा जोधपुराधीश पधारे थे।" मंगलवार

मौसूफ की ऐन खवाहिश दिली है कि स्वामी साहिब की हदायत यहां बखूबी ले ली जावे। मुकाम जोधपुर।

तारीख २७ जून सन ८३[1]।

कमतरीन रायजादा सिंगी नारनौली दामोदरदास[2]
बर मकान जनाब जयकिशनदास
अज़ जानिब जुनाब स्वामी साहब आनन्दित रहो पहुंचे।

---

[९] पत्र (४६७) [५४३]

ओ३म्

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो[3]।

मुन्शी समर्थदान को कह देना कि ५० मन्त्र की भाषा का बण्डल भेजा, सो पहुंच गया। अब देखो ज्वालादत्त की बेसमझ का नमूना। हमने यह लिखा था कि जो भाषा बनाने का कागज दूसरे पृष्ठ पर हो और मन्त्र पदार्थ अन्वय भावार्थ दूसरे पर हो। जब ऐसा हो तो भाषा बनाने में विलम्ब होता है। क्योंकि हर वार पत्र उलटाने में देर होती है। और बिना पदार्थ अन्वय देखे भाषा नहीं बन सकती। इस लिये लिखा था कि उसी के सामने कि जिधर की ओर मन्त्र है उसी के सामने नीचे की ओर कागज चेप कर भाषा बनाने से शीघ्र बन सकती है। सो ज्वालादत्त ने उलटा समझ कर सोलह मन्त्र की भाषा दो दो वार लिख दी। यदि ऐसा न करता तो ८ दिन में ७० मन्त्र की भाषा आती। अब देखा जायगा कि अब के अठवाड़े में कितने मन्त्र की भाषा भेजता है। और समर्थदान ने लिखा है कि कुछ ज्वालादत्त नई भाषा बनाता है। यदि वह हमारे संस्कृत और अभिप्राय के अनुकूल हो, तो ठीक है। नहीं तो जो पोपलीला की भाषा बना कर वहां ही छपवा दे और हम को मालूम न हो, पश्चात् प्रसिद्ध होने से कोलाहल होगा, तो क्या होगा। हां, अब तक तो इसने कुछ नहीं किया है। परन्तु सम्भव है कि कुछ गड़ बड़ करे, तो हो सकता है। इस लिये जो कुछ वो बनावे उसको समर्थदान देखले। जैसा कि **अब की भाषा में एक गोल माल शब्द (देवता) लिख दिया था। सो यह हमारे दृष्टिगोचर होने से शुद्ध होगई। यदि वहां ऐसी छप गई तो बड़ी हानि का काम है।** इस लिये ऐसा न होना चाहिये। और हमने कई वार समर्थदान को लिखा है कि धातुपाठ, गणपाठ, उणादिगण, निघण्टु का सूचीपत्र छपना बाकी है। सो तो नहीं छापते और वेदभाष्य २ करते हैं। छापना वेदभाष्य का महीनों पर नहीं है, किन्तु बारह अंक ग्राहकों

को ही २६ जून पड़ती है। इस पत्र में आषाढ़ बदी १० लुप्त है। विज्ञापन पूर्ण संख्या ५२६ और पत्रपूर्ण संख्या ५२५, ५२७ के अनुसार ३१ मई प्रातःकाल को श्री स्वामी जी जोधपुर पहुंचे और पूर्ण संख्या ५४२, ५४५, के अनुसार २६ जून को प्रथम वार महाराज उन से मिले।

१. आषाढ़ कृष्ण ७ बुध, सं० १६४०। यु० मी०।

२. इसी मुन्शी दामोदरदास के पत्र का संकेत पूर्ण सं० ५०७ में देखें।

३. मूल पत्र श्री० नारायणस्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

के पास पहुंचने पर वर्ष माना जाता है। इस लिये इस में थोड़ा बहुत विलम्ब हो तो कुछ चिन्ता नहीं। किंतु धातुपाठ आदि और सत्यार्थप्रकाश छपने में विलम्ब होना नहीं चाहिये। सो जब लिखा है तब अब तो वेदभाष्य छपता है, यह उत्तर देता है। तुम भी ऐसी सम्मति उनको दो कि जिस में यह ४ पुस्तक शीघ्र छप जायें। अब वेदभाष्य के टाइटल पेज पर किसी ग्राहक का रुपया नहीं लिखा। सो क्या रुपया नहीं आया है वा अन्य कुछ है। इन सब बातों का उत्तर समर्थदान से पूछ कर शीघ्र भेजो[1]।

मि० आ० व० ९ शुक्रवार सम्वत् १९४०[2]।

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर मारवाड़

---

[४] पत्र (४६८) [५४४]

ओ३म्

बाबू नन्दकिशोरसिंह जी आनन्दित रहो[3]—

विदित हो कि तुह्मारे तीन चार पत्र हमारे पास आये। उनका उत्तर समय पर इस लिये नहीं लिख सके [कि]इस समय वेदभाष्य का अधिक काम कर रहे हैं। तुम ने उदयपुर से ले कर शाहपुरा तक कई पत्र इस विषय में भेजे कि जब आप की यात्रा करने में दश पन्द्रह दिन शेष रहें, तब हम को विदित करना। इस बात का अभिप्राय जो होगा वह तुम जानते ही होगे और कुछ लिखा भी था।

यहां के श्रीयुत महाराजे योधपुराधीश और महाराजे प्रतापसिंह जी तथा रावराजा तेजसिंह जी आदि ने प्रीति के साथ पाली में सवारी भेज कर मुझ को बुलाया। अब यहां श्री योधपुराधीश तथा म[हा]राजे प्रतापसिंह जी आदि प्रेम प्रीति के साथ समागम करते है। और दो एक व्याख्यान भी दिये। और प्रतिदिन राजपुरुष तथा प्रजापुरुष आते जाते हैं। यथाबुद्धि पूछते हैं। हम यहां फैजुल्लाखां जी के बाग में ठहरे हैं। और जो विशेष लिखने योग्य होगी सो पश्चात् तुम को लिख के विदित करेंगे। और जो अं[ग]रेजी में बायबिल का पूर्वापर विरुद्ध आयतें लिखी हैं। उस की देवनागरी ठीक २ कराके शीघ्र योधपुर में हमारे पास भेज देना[4]। सब से हमारा आशिष कह देना।

---

१. इस पत्र को कई स्थानों पर श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से शोधा है।

२ ३० जून १८८३।

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४. इन्हीं दिनों अमेरिका से "सेल्फ कण्ट्रेडिक्शनस् आफ दी बाइबिल" नामक अंग्रेजी पुस्तक प्रकाशित हुई थी। उसी के देवनागरी अनुवाद की ओर यह संकेत है। बाबू नन्दकिशोरसिंह ने ७ तथा २४ जुलाई के पत्रों में इस के भाषानुवाद के विषय में लिखा है। देखो म० मुंशीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृष्ठ ९८-१००। बाबू नन्दकिशोरसिंह द्वारा अनूदित तथा छपी हुई उक्त पुस्तक का प्र०सं० वैदिक पुस्तकालय (सं० ३१५।२००) अजमेर में तथा द्वि० सं० आर्यसाहित्य मण्डल अजमेर में है। इस विषय में विशेष हमारे "ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास" पृष्ठ ४१, ४२ में देखें। यु० मी०।

आषाढ़ वदी १० शनि[1] संवत् १९४० } लिखने योग्य वहां का जो समाचार हो सो भी लिखना[2]।

[दयानन्द सरस्वती] राज मारवाड़ योधपुर

---

[९] पत्र (४६९) [५४५]

ओ३म्

श्रीयुत मान्यवर श्रीमहाराजाधिराज शाहपुरेश आनन्दित रहो[3]।

मैंने दो पत्र आप के पास भेजे[4]। उस का उत्तर भी आज तक नहीं आया। एक ५०) रु० का मनी आर्डर[5] भेजा था, जो कि शाहपुरे के डाकखाने का था, रजिस्ट्री कराके भेजा था। उस की रसीद आज तक नहीं आयी। इस लिये वहां के डाकखाने से रु० लेकर हुंडी कराकर यहां मेरे नाम भेज दीजिये। और रसीद भी और जो छीतरदत्त जी भी वेदभाष्य के रुपये दें, तो इसी के साथ भेज देवें, क्योंकि वेदभाष्य उन के पास पहुंच गया है। और छा(त्रा)त्रशाला का आरम्भ हुआ कि नहीं। अग्निहोत्र का आरम्भ हो गया, यह बहुत अच्छी बात हुई। मिति आषाढ वदी ७ मंगलवार के दिन सर्वाधीश महाराजा जोधपुराधीश पधारे थे[6]। दो घंटे तक बात चीत कर और उपदेश सुन कर और प्रसन्न होकर पीछे पधार गये, और महाराजा प्रतापसिंह जी तथा रावराजा तेजसिंह जी नित्य आया करते हैं। जैसा चाहिये वैसा तो बन्दोबस्त नहीं है, परन्तु ठीक २ है। और ज्वाहरसिंह जी का वर्तमान आपने कुछ नहीं लिखा। और जो बात आपके पूर्व प्रतिज्ञात पत्र से कुछ विरुद्धाचरण हो सो भी मुझ को लिखिये। और सब को मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मि० आ० व० १ सं० १९४०[7]। जोधपुर राज मारवाड़। [दयानन्द सरस्वती]

---

[९] पत्रांश (४७०) [५४६]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर[8]]

.........काशीस्थ पं० से पत्रव्यवहार से पूछो कि मासिककितने तक आ सकता है।

४ जुलाई १८८३[9]। जोधपुर दयानन्द सरस्वती

---

१. वदी ११ लिखकर १० की गई है। [वस्तुतः ११ चाहिये। १० लुप्त है] ३० जून १८८३।

२. इस पत्र का उत्तर ठा० नन्दकिशोरसिंह ने मिती आषाढ़ शुक्ल ३ शनि सं० १९४० को दिया। देखो म० मुन्शीरामसम्पा० पत्रव्यवहार पृष्ठ ६७।

३. मूल पत्र शाहपुरा राज्य में सुरक्षित है।

४. यह संकेत पूर्ण संख्या ५२७, ५३३ के पत्रों की ओर है। यु० मी०।

५. सम्भवतः 'पोस्टल आर्डर'। क्योंकि अगला लेख उसी के सम्बन्ध में सम्भव है; मनियार्डर के सम्बन्ध में नहीं। यु० मी०।

६. २६ जून १८८३। देखो पत्र पूर्ण संख्या ५४२। [वस्तुत यहां आषाढ़ वदी ६ चाहिये।]

७. ३० जून शनिवार १८८३।

८. देशहितैषी के रजिस्टर से।

९. आषाढ कृष्ण ३०, बुध सं० २६४०। यु० मी०।

[१०]　　पत्र (४७१)　　[५४७]

ओ३म्[१]

श्रीयुत माननीयवर शुभगुणगणालंकृत श्रीमहाराजाराजाधिराज श्री शाहपुराधीश आनन्दित रहो ।

विदित हो कि हम ने ५०) रुप्या का मनियाडर[२] भेज्या था । सो रुपया ५०) काका साब सबलसिंह जी के हाथ आ पहुंचा । और अग्निहोत्र का आरम्भ हो गया, सुन के अत्यन्त आनन्द हुआ। और छात्रशाला का आरम्भ होगा सुनेंगे जब अत्यन्त आनन्द होगा ।

सम्वत् १९४० मि० असाढ शुक्ल ४ रवि[३] ।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१]　　पत्रांश (४७२)　　[५४८]

[ठाकुर सबलसिंह जी]

अब कुछ दिन यहां ठहरेंगे । तुम्हारे साथ नहीं चलेंगे[४] ।

---

[२]　　पत्रांश (४७३)　　[५४९]

[श्रीयुत बारट किशनसिंह जी]

पुरोहित उदयलाल को पूछ के लिखो । तुम्हारे पास घड़ी आई की नहीं[५] ।

---

[२]　　पारसल　　[५५०]

ईसाई मुसलमान मत के खण्डन विषयक दो पुस्तक[६] ।

आषाढ़ शुक्ल १४ सं० १९४०[७] (१९ जुलाई १८८३)।

---

[३]　　पत्र (४७४)　　[५५१]

श्रीयुत वार्ट किसनसिंह जी आनन्दित रहो[८] ।

पत्र आप का आया समाचार विदित हुआ । श्रीमान् महाशयों के शरीर की अरोग्यता की

---

१. पं० चमूपतिजी सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ ३८ पर छपा है । वहीं से लिया गया है ।

२. देखो पूर्व पृष्ठ ४३६ की टि० ४ । यु० मी० ।　　३. ८ जुलाई १८८३ ।

४. इस का संकेत पूर्ण संख्या ५५१ के पत्र (पृष्ठ ४३६) में है । यु० मी०

५. इस पत्रांश का संकेत पूर्ण संख्या ५५१ के पत्र (पृष्ठ ४३८) में है । यु० मी० ।

६. इस पारसल का उल्लेख पूर्ण संख्या ५५१ के पत्र (पृष्ठ ४३८) तथा पूर्ण संख्या ५६० (पृष्ठ ४४६ में है । यु० मी० ।

७. पूर्ण संख्या ५५१ पृष्ठ ४३८ के आधार पर । यु० मी० ।

८. पं० चमूपति सम्पा० पत्रव्यवहार पृष्ठ १७५-१७७ पर छपा । मूल पत्र ठा० किशोरसिंह जी के पास है ।

बात सुन कर अत्यानन्द हुआ। और जो सर्वाधीशों की अनुमति से लिखा है सो ठीक है। अब मैं ने इस का सद्यः उपाय यह निश्चय किया है कि ईसाई वा मुसलमानों के मत का खण्डन थोड़ा सा कल की डाक में तुम्हारे पास रजिष्टरी कराके रवाना किया है। उसको वहां यन्त्रालय में १००० वा १०००० छपवा कर ५०० वा १००० उदयपुर में बांट देनी चाहियें। और बाकी देश में ठिकाने २ पर वा अच्छे चतुर स्कूल के माष्टर और तालबिलमों को देनी उचित हैं। और वहां राज में दो चार पांच सात पण्डित निकमे बैठे रहते हैं।

उन को यह खण्डन देकर बाजार में जहां कि वे खड़े हों वहां जाकर इन्हीं प्रश्नों में से प्रश्नोत्तर करें। और पण्डित अर्थात्—उपदेशक जिन नियमों पर चाहा है वैसा मिलना और उस का इन बातों को स्वीकार करना कठिन पड़ेगा। क्योंकि ईसाई वा मुसलमान लोग तीर्थ मूर्ति मन्दिर इन तीनों बातों पर खण्डन चलाते हैं। यदि जो इन तीनों को स्वीकार करेगा, वह उनके सामने कुछ न कर सकेगा। क्योंकि वे ईसाई मुसलमान लोग इन्हीं के दृष्टान्त दिया करते हैं। और ये बातें वेद शास्त्र से सिद्ध तो क्या, परन्तु युक्तिसिद्ध भी नहीं हो सकती। इस से चाहे वह भीतर मानता भी हो तो परन्तु उनके सामने तीर्थ मूर्ति मन्दिर और चौथा पुराण, पांचवां माहात्म्य, छवां व्रत, सातवाँ कण्ठी तिलक, आठवां कोई संप्रदायानुकूल और नवां अवतार आदि सिवाय वैदिक मत के जब तक नहीं मानेगा तब तक उनका खण्डन न कर सकेगा। इस लिये यह बात अशक्य होगी। इस कारण उस उपदेशक को समझा दिया जाय कि जब उन के सामने चर्चा की जाय तब जो इन ९ बातों पर शंका अर्थात् तर्क ईसाई लोग करें तब उस समय वह कह दें कि इन बातों को हम नहीं मानते। हम तो केवल एक सच्चिदानन्द परमात्मा को मानते हैं। तभी उन का विजय कर सकेगा। और जो कोई आर्यसमाज से विद्वान् आवेगा, वह इन प्रतिज्ञाओं को स्वीकार नहीं करेगा। क्योंकि जब तक आप निर्दोष मत को नहीं मानता, स्वयं दोषी होता है। तब तक दूसरे दोषयुक्त मतों को कभी नहीं काट सकेगा। इस लिए उपदेशक तो शुद्ध ही होना चाहिये। और जैसा श्रीमानों का देशकालानुकूल अभिप्राय है उस अभिप्राय कीत से जो उपाय पूर्व मैंने लिखा है, सो ठीक है। यदि जो मैंने लिखा है कि इन नौं बातों का जो खण्डन करेगा तो उन के सामने मानेगा भी नहीं। तभी यह बात पार पड़ेगी। और श्रीमानों का अभिप्राय भी इसी प्रकार सिद्ध होगा। यदि किसी को बुलाने ही की इच्छा हो तो वह नौ बातों को स्वीकार न करे। और अंगरेज ईसाइयों को २५०००० ढाई लाख रुपये देते हैं तो हम लोगों में सहायक क्यों न हो? और मिथ्या मत का खण्डन और सत्य मत का प्रचार होना, इस से उत्तम धर्म और क्या होगा।

मिति आ० सु० १५ संवत् १९४०[1]।

मेरा यहां से किस स्थान में जाना होगा, जु अब तक निश्चय नहीं किया। और यहां रहने का भी कोई निश्चय समय नहीं है। अनुमान है कुछ यहां रहना होगा। यहां का सुधार कुछ थोड़ा सा हुआ है और बहुत सा बाकी है। संपूर्ण परमात्मा की कृपा से हो सक्ता है। क्योंकि कई प्रकार के रोग लगे हैं। औषधी सेवन और पथ्य बहुत कम हैं। इस का विस्तार पश्चात् लिखा जायगा। ठाकर

१. २० जुलाई १८८३।

सबल सिंह जी को यही जवाब दिया है कि अब कुछ दिन यहां ठहरेंगे। पश्चात् तुम्हारे साथ नहीं (कहीं?) चलेंगे। और हमने एक कार्ड में तुम को लिखा था। पुरोहित उदयलाल को पूछ के लिखो तुम्हारे पास घड़ी[1] आई कि नहीं। इसका उत्तर हमारे पास अब तक नहीं आया है। और घड़ी तुम्हारे पास एक आई वा दो। जो एक आई तो कुछ चिन्ता नहीं। और जो दो आई हों तो एक हमारे पास भेज दो।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[१] पत्र (४७६) [५५२]

ओ३म्

श्रीयुत भारतमित्र सम्पादक महाशय निकटे निवेदनम्[2]।

महाशय, आप के संवत् १९४० आषाढ़ शुदी ८ गुरवार[3] के छपे हुए पत्र में किसी ने वेद पर आक्षेपपत्र छपवाया है। उस लेखक का अभिप्राय यही विदित होता है कि वेद ईश्वर की वाणी और अभ्रांत नहीं है। परन्तु इस प्रश्न के करने वाले ने प्रश्नमात्र ही किया है। अपनी प्रतिज्ञा को सत्य करने के लिये कोई विशेष हेतु नहीं लिखा। अर्थात् उत्तर उस बात का होता है जो किसी वेदवचन मूल पर भ्रांतपन दिखलाता तो उस का उत्तर उसी समय दिया जाता। जैसे कोई कहे कि यह १०००) एक हज़ार रुपयों की थेली सच्ची नहीं। दूसरे ने उस से पूछा क्या मैं तुम्हारे कहने मात्र ही से थेली को झूठी मान सकता हूं। जब तक तुम झूठा रुपया इस में से एक भी निकाल के सिद्ध नहीं कर देते, तब तक मैं थेली को झूठा नहीं मानूंगा। वैसा ही मिष्टर ए० ओ० ह्यूम साहेब और जिस ने आप के पत्र में छपाया है इन दोनों महाशयों का लेख है। यहां उनको योग्य था और है कि किसी एक वा अनेक मन्त्रों को अपने अभिप्राय के अर्थ सहित वेद, अध्याय, मन्त्र, संख्यापूर्वक लिख कर पश्चात् कहते कि वेद ईश्वर की वाणी और अभ्रांत नहीं हैं, तो प्रत्युत्तर के योग्य प्रश्न होता। अब भी यदि उत्तर जानने की इच्छा हो तो इसी प्रकार करें, नहीं तो कुछ भी नहीं है। किन्तु इस में इतनी बात तो समाधान देने के किसी प्रकार योग्य है कि वेदों में मतभेद क्यों हैं। अब देखिये यह भी इनकी गोलमाल बात है। क्योंकि वेदों में किस ठिकाने और किन मन्त्रों में किस प्रकार के मतभेद हैं, हां, विद्याभेद से कथन का भेद होना तो उचित ही है। जैसे व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष, वैद्यक, राजविद्या, गान, शिल्प और पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त की अनेक विद्याओं की मूल विद्या वेदों में हैं। इन के संकेत शब्दार्थ और सम्बन्ध भिन्न २ हैं। जैसे व्याकरण विद्या से ज्योतिष विद्यादि के संकेत, परिभाषा और पदार्थ विज्ञान पृथक् २ होते हैं, वैसे इन सब विद्याओं के वाचक अर्थात् प्रकाशक

---

१. इस घड़ी का संकेत पूर्ण संख्या ४६२ (पृ० ३६८) की पत्र-सूचना में है। यु० मी०।

२. मूल पत्र म० मामराज जी ने फरवरी १९२७ में फरुखाबाद के पत्रों में से खोजा। अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है। इस पत्र पर "भारतमित्र" काटकर "भारतसुदशाप्रवर्तक" बनाया हुआ है।

३. १२ जुलाई १८८३। यह अंक कमलनयन शर्मा ने स्वामी जी के पास उत्तर लिखने के लिये भेजा था। देखो म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ १७३। यु० मी०।

मन्त्र भी पृथक् २ अर्थ के प्रतिपादक हैं। यदि इन्हीं को मतभेद कहते हैं तो प्रश्नकर्त्ता का कथन असंगत है। और जो दूसरे प्रकार के मतभेद मानते हैं तो उन का कथन सर्वथा अशुद्ध है। इसलिये प्रश्नकर्त्ताओं को उचित है कि पूर्वोक्त प्रकार से चारों वेदों में से जो कोई एक मन्त्र भी भ्रांत प्रतीत होवे, वह आप के पत्र में मिष्टर ए० ओ० ह्यूम साहेब छपवावें। उन का उत्तर भी आप ही के पत्र में उचित समय पर छपवा दिया जायगा। और उन को वेद के निर्भ्रान्त होने के जानने की पक्की जिज्ञासा हो तो मेरी बनाई ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका को देख लेवें। यदि उन के पास न हो तो वैदिकयन्त्रालय प्रयाग से मंगा कर देखें। और जो उन को आर्यभाषा का पूरा ज्ञान न हो तो किसी सत्यवक्ता दुभाषिये पुरुष से सुनें। इस पर जो उन को शंका रह जाय तो मुझ से समक्ष मिल के जितनी शंका हों उन सब का यथावत् समाधान लेवें। क्योंकि पत्रों से शंका समाधान होने में विलम्ब होता और अधिक अवकाश की भी अपेक्षा है। और मुझ को वेदभाष्य बनाने के काम से अवकाश न मिलने के कारण विशेष प्रश्नोत्तर करने का समय नहीं है। और जो उन्हों ने यह लिखा कि स्वामी जी ईश्वर वा ईश्वर की प्रेरणायुक्त हों तो उनका भाष्य निर्भ्रम हो सके। मैं ईश्वर नहीं, किन्तु ईश्वर का उपासक हूँ। परन्तु वेद मनुष्यों के हितार्थ परमात्मा ने प्रकाशित किये हैं। इस अभिप्राय से कि यहां तक मनुष्यों की विद्या और बुद्धि पहुंच सकेगी और इतने तक कार्य मनुष्य कर सकेंगे। इस लिये यावत् मेरी बुद्धि और विद्या है तावत् निष्पक्षपात होकर वेदों का अर्थ प्रकाशित करता हूं। और वह अर्थ सब सज्जनों के दृष्टिगोचर हुआ है, होता है और होगा भी। यदि कहीं भ्रांति हो तो उक्त सहेब प्रकाशित करें। बड़े शोक की बात है कि आज पर्यन्त एक भी दोष वेदभाष्य में से कोई भी नहीं निकाल सका है फिर भी इन का भ्रम दूर नहीं हुआ। ऐसी निर्मूल शंका कोई भी किया करे, इस से कुछ भी हानि नहीं हो सकती। और सत्यार्थ होने ही से वेदों का निर्भ्रान्तत्व यथावत् सिद्ध है। यदि इस मेरे बनाए भाष्य में मिस्टर ए० ओ० ह्यूम साहेब को भ्रम हो तो इस में से भ्रांतिमत्त्व किसी मन्त्र के भाष्य द्वारा आप के पत्र में छपा देवें। मैं उत्तर भी आप ही के पत्र द्वारा देऊंगा[1]। और जो थियोसोफिष्ट के अध्यक्ष ऐसी बातें करें, इस में क्या आश्चर्य है? क्योंकि वे अनीश्वरवादी बौद्धमतातलंवी हो कर भूत, प्रेत और चुटकलों के मानने वाले हैं। बड़े शोक की बात है। कि सर्वथा विद्यासिद्ध परमात्मा को न मान कर भूत, प्रेत, मृतकों में फस कर और भोले मनुष्यों को फसा अपने को सुधारने वाले मानना यह कितनी बड़ी अनुचित बात है। इन को तो नास्तिकमत जो कि ईश्वर को न मानना है वही प्रिय लगता है। परन्तु इस में इतनी ही न्यूनता है कि भूत प्रेतों ने इन को घेर लिया। सच है जो सत्य ईश्वर को छोड़ेंगे वे मिथ्या भ्रम जाल भूत प्रेतों और वन्ध्यापुत्रवत्कुतु हूंबीलालसिंह (?) आदि में क्यों न फसेंगे। बहुत से समाचारों में छपवाते हैं कि इतने हजार मनुष्यों को मिष्टर एच० ए० करनेल ओलकाट साहब ने रोग रहित किया। यदि यह बात सच हो तो मुझ को क्यों नहीं दिखलाते और मनवाते। और मेरे सामने कि जिसको मैं कहूँ उस एक को भी नीरोग कर दें तो मैं थियोसोफिष्टों के अध्यक्ष को धन्यवाद देऊं। इस में मुझ को निश्चय है कि जैसे एक थियोसोफीष्ट दंभ के मारे लाहौर में अपनी अंगुली कटवा के अंग भंग हो गया, कहीं ऐसी गति मेरे सामने इनकी न हो जावे। और करामात कुछ भी काम न आवेगी। प्रसिद्धी से कहता हूं कि यदि उन में कुछ भी अलौकिक शक्ति वा योगविद्या

१. इस से अगला लेख सम्पादक भारतमित्र ने नहीं छापा। देखो पत्र पूर्ण संख्या ४३३ का आरम्भ।

हो तो मुझ को दिखलावें। मैंने जहां तक इन की लीला सिद्धि और योगविषयक देखी है वह मानने के योग नहीं थी। अब क्या नई विद्या कहीं से सीख आए? मुझ को तो यह विषय निकम्मा आडम्बर रूप दीखता है। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु।

मिति श्रावण वदी ४ संवत् १९४०। दयानन्द सरस्वती[1]
तदनुसार २३ जुलाई सन् १८८३। जोधपुर।

---

[११] पत्र (४७६) [५५३]

श्रीयुत भारतसुदशाप्रवर्तक सम्पादक महाशय निकटे निवेदनम्[2]।

[पूर्ण संख्या ५५२ का पत्र]

---

[१२] पत्र (४७७) [५५४]

श्रीमान् देशहितैषी सम्पादक महाशय निकटे निवेदनम्[3]।

[पूर्ण संख्या ५५२ का पत्र]

---

[१३] पत्रांश (४७८) [५५५]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर]

.........पत्र छापने को भेजते हैं[4]।.........

२५ जुलाई १८८३[5] जोधपुर। दयानन्द सरस्वती

---

[१५] कार्ड (४७९) [५५६]

ओम् जोधपुर

श्रावण वदी १० रवि सं० १९४०[6]।

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

आपने १२५ आम भेजे सो पहुंचे। उन में से ८०) आम अच्छे रहे और बाकी बिगड़ गये।

---

१. यह भारतमित्रसम्पादक के नाम का पत्र मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ ६८-७३ पर छपा है। इस में हस्ताक्षर और तिथि नहीं है। अगले भारतसुदशाप्रवर्तक और देशहितैषी वाले में है।

२. देखो पूर्व पृष्ठ ४३१ की टिप्पणी १ तथा पूर्ण संख्या ५५६ के पत्र का अन्त। यु० मी०।

३. देशहितैषी के सम्पादक और आर्यसमाज अजमेर के मन्त्री कमलनयन शर्मा को यह पत्र २५-७-८३ को भेजा गया। देखो कमलनयन शर्मा का २६-७-८३ का पत्र, म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ १७४ पर।

इस विषय में अगला पूर्णसंख्या ५५५ का पत्र और उस का नोट भी देखें। यु० मी०।

४. देशहि० के रजिस्टर से। पूर्णसंख्या ५५२ वाला पत्र।

इस का उत्तर २८-७-८३ को लिखा गया। वह म० मुन्शीरामकृत पत्रव्यवहार पृ० १७४ पर छपा है। उस में लिखा है—"मिष्टर ए० यू० होम (ह्यूम) साहब के कथन का खण्डन जो आपने देशहि० में छपने को भेजा है सो पहुँचा।......कमलनयन"

५. श्रावण कृष्ण ६ बुध सं० १९४०। यु० मी०।

६. २९ जुलाई १८८३।

परन्तु आम बहुत अच्छे थे। और उदयपुर और साहपुरे की रसीद के लिये लिख भेजेंगे, पहुंच जायंगी। आप अपने २००) रुपये लेके बाकी रुपये लाला निर्भैराम की दूकान पर जमा करा दीजिए। क्योंकि आज कल वैदिक यन्त्रालय की दशा जब से समर्थदान आया है तब से अच्छी है। और पण्डित सुन्दरलाल प्रबन्ध भी अच्छा करते हैं। यहां का समाचार अच्छा है, पश्चात् लिखेंगे।

लाला कालीचरण जी के पास मिष्टर ऐ० ओ ह्यूम साहब के प्रश्नोत्तर का पत्र छापने के लिए भेजा है, पहुंचा होगा[1]।

सब से हमारा आशीर्वाद कह देना[2]।

[दयानन्द सरस्वती]

---

[४] पत्र (४८०) [५५७]

ओ३म्

श्रीयुत बहारट किसन जी आनन्दित रहो[3]—

कार्ड तुमारा आया, समाचार विदित हुआ। हमने मुसलमान और ईसाई के मतविषयक दो पुस्तक रजष्टरी कराके भेजे थे, अवश्य पहुंचे होंगे। उसका उत्तर अब तक क्यों नहीं भेजा। पहुंचे वा नहीं। और उस के साथ एक पत्र भेजा था[4]। वह पहुंचा होगा। सर्वाधीशों के दृष्टिगोचर भी कराया होगा। अब मेरी चिट्ठि और वे दोनों पुस्तक पहुँचने के पश्चात् क्या निश्चय किया गया। क्या जो मैंने लिखा वही ठीक माना गया वा कुछ विचारांतर किया। इन सब बातों का उत्तर शीघ्र भेजना। यहां का समाचार पश्चात् लिखेंगे।

और जो एक पत्र लाहौर का श्रीमानों के अवलोकन और संमत्यर्थ भेजा था, उस का क्या विचार ठहरा। जो कि लाला साईंदास प्रधान आर्यसमाज लाहौर ने भेजा था। उस का भी उत्तर श्रीमानों से पूछ के भेजो। तथा श्रीमान् महाशयों के आरोग्यता का वर्तमान और वर्षा का भी वर्तमान लिखो।

और जैकर्ण जी से कहना कि तुमारे पिता जी की मित्रता श्रीमान योधपुराधीश प्रतापसिंह जी और रावराजा तेजसिंह जी से अच्छी प्रकार करा दी है[5]। और पूर्व जो उन के हृदय में भ्रांति थी वह भी निकाल दी। और श्रीमानों से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

संवत् १९४० मिति श्रावण वदी ११[6]।

[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़

---

१. देखो पूर्ण संख्या ५५३ का पत्र तथा पृष्ठ ४४१ की टि० २। यु० मी०।

२. मूल कार्ड हमारे संग्रह में सुरक्षित है। म० मामराज जी ने आर्यसमाज फरुखाबाद के पत्रों में फरवरी सन् १९२७ में खोजा।

३. मूल पत्र ठाकुर किशोरसिंह के संग्रह में सुरक्षित था।

४. पूर्ण संख्या ५५१ का पृष्ठ ४३७ पर छपा।

५. इस बात का उल्लेख श्री जयकर्ण जी के पत्र में है। देखो म० मुन्शीराम सम्पादित पत्र व्यवहार पृ० १०७।

६. ३० जुलाई १८८३।

[१] पत्र (४८१) [५५८]

ओ३म्[1]

स्वस्ति श्रीमद्राजराजेश्वर महाराजाऽधिराजवर्य्येभ्यः श्रीमद्योधपुराऽधिपतिभ्यो मत्प्रेरिता आशिषः सन्तु।

(गुप्तसमाचार)

पुरुषाः सुलभा राजन् सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥ १ ॥[2]

हे धृतराष्ट्र इस जगह में बहुत पुरुष सुलभ अर्थात् सुख से प्राप्त होते हैं जो सदा दूसरे की खुशामद की बातें करके अपना मत(ल)ब सिद्ध करते। परन्तु सुनने में अप्रिय और परिणाम में कल्याणकारी वचन का उपदेष्टा और सुनने वाला ये दोनों पुरुष अति दुर्लभ हैं। १।

यथा योधृषु वर्त्तमानो जयः पराजयश्च राजनि व्यपदिष्यते। महाभाष्य[3]—

जैसे सेना की हार वा जीत राजा की ही हार और जीत मानी जाती है वैसा ही श्रीमानों को अवश्य चाहिये।

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम्।
परिणामे विषमिव तद्राजसमुदाहृतम्॥ गीता [१८। ३८][4]

जो विषय और इन्द्रियों के संयोग से आदि में अमृतरूप सुख प्रतीत होता है, वही परिणाम अर्थात् पश्चात् विष के तुल्य होकर महादुःखदायक हो जाता है।

आप स्वयं बुद्धिमान् हैं। इतने ही से बहुत समझ लेंगे। सौभाग्य की बात है कि आप में अनेक प्रशंसनीय शुभगुण आरोग्य और राज्यैश्वर्य्य सम्पन्नता वर्त्तमान है। परन्तु शोक की बात है कि बात है कि ऐसे आप बुद्धिमान् होके नीचे लिखी हुई थोड़ी सी बातों में न जाने क्योंकर प्रवर्त्तमान रहते हैं। वे ये हैं—यदि आप मद्यपान, वेश्यासंग, पतंग उड़ाना, घुड़दौड़ आदि द्यूत नहीं छोड़ते और राज्यपालन कर्म में कम से कम छः घंटा परिश्रम और महालक्ष्मीरूप राजकन्या स्वपत्नियों से अधिक प्रेम नहीं करते हैं इत्यादि शोचनीय बातें आप में हैं। आप निश्चय समझिये कि जितने आप के आधीन-पुरुष कीर्ति वा निन्दा का काम करेंगे, वह सब आप की ही पर गिने जायेंगे। यदि आप स्वयं मद्यपानादि में प्रवृत्त न हों तो क्या कोई भी इन में आपको प्रवृत्त कर सकता है। जो स्वार्थी खुशामदी हैं वे तो सदा यही चाहते हैं कि राजा प्रमाद में लगें तो हमारे सब प्रयोजन सिद्ध हो जायें। परन्तु संसार में इन का नाम कोई भी न लेगा, किन्तु—

---

१. पं० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ ९८ पर छपा है। मूल लेख कई स्थानों पर श्री स्वामी जी का शोधा हुआ है। मूल पत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में सुरक्षित है। प्रतीत होता है कि इसी की शोधित प्रतिलिपि महाराज योधपुर को भेजी गई होगी।

२. महाभारत उद्योगपर्व अ० ३६, श्लोक १५, विदुर का उपदेश। वहां 'सुलभाः पुरुषा राजन्' पाठ है।

३. महाभाष्य में यह पाठ नहीं है। योग व्यासभाष्य १।२४ में इस प्रकार पाठहै—"यथा जयः पराजयो वा योधृषुवर्तमान स्वामिनि व्यपदिश्यते"। यु० मी०।

४. गीता में 'तत्सुखं राजसं स्मृतम्' पाठ है। यु० मी०।

(प्रधानाप्रधानयोः प्रधानं कार्य्ये संप्रत्ययः) महाभाष्य[१]—

भलाई और बुराई प्रधान पुरुष के साथ लगती है, गौण अर्थात् अप्रधान के साथ नहीं।

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ गीता [३ । २१] ॥

जैसा अच्छा वा बुरा आचरण श्रेष्ठ पुरुष कर्त्ता है वैसा ही इतरजन करने लग जाते हैं। और जिसका प्रमाण उत्तम पुरुष कर्त्ता है उसी का प्रमाण सब लोग करने लगते हैं। अर्थात् (यथा राजा तथा प्रजाः) जैसा राजा होता है वैसी ही प्रजा भी होती है। इस लिये प्रधान पुरुष बहुत विचार से उत्तम आचरण करे कि जिससे उसको संसार के बिगड़ने का अपराध न लगे। बुद्धिमानों के सामने विशेष लेख करना उचित नहीं होता।

अब मुझको यह बड़ा सन्देह है कि जो आप जैसे दीर्घजीवी न्यायकारी राजा बने रहें तो सब प्रजा का कल्याण होवे। और जो मद्यपानादि कर्म हैं वे अवश्य आयु, बुद्धि, बल, पराक्रम, आरोग्यता, कीर्ति, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष तथा प्रजा के पुत्रवत्पालना करने में परम विघ्नकारी हैं। इस लिये मुझको निश्चय है कि आप मद्यपानादि दुष्कर्मों से पृथक् होके अपने समीपस्थों का भी यथावत् कल्याण करेंगे। (इसका उत्तर आप जैसी इच्छा हो वैसे दीजिये। मैं कड़ा उत्तर दूंगा तो स्वामी जी अप्रसन्न हो जायेंगे ऐसा ध्यान मत कीजिये। मुझको निश्चय है कि आप निष्कपट और सत्यवादी हैं। इस पर जैसा विचार होगा उत्तर यथावत् शीघ्र लिखेंगे। यद्यपि यह प्रथम ही पत्र आपके समीप भेजा जाता है तदपि यदि आगे आवश्यकता होगी तो मैं और आप जब समक्ष न हो सकेंगे, तब पत्रों ही से यथोचित बात होंगी। जैसा मैं आवश्यक कार्य करने वा पत्र के उत्तर देने में क्षण मात्र विलंब नहीं कर्ता, वैसे श्रीमान भी करेंगे)। यदि आप ही पूर्वोक्त निषिद्ध कर्म करने और विहित न करने में प्रवृत्त रहेंगे तो अन्य पुरुष सब आपके दृष्टान्त से वर्त्तेंगे। जब तक मनुष्य के हाथ में सर्वाधिकार, आरोग्यता, उत्तम संग, शुभगुण कर्म स्वभाव होता है तब तक कोई भी विघ्न सुखनाशक नहीं खड़ा होता। विघ्नों का निवारण बुद्धिमान प्रथम ही करते हैं कि जब तक वे प्राप्त न हों। नहीं तो बुद्धिमान् और निर्बुद्धि में दूसरा क्या भेद है। निर्बुद्धि लोग विघ्न के पूर्व कुछ भी ध्यान नहीं देते और विघ्न आये पश्चात् गभरा भी जाते हैं। विद्वान लोग वैसे नहीं होते।

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् ॥ गीता [१८।३७]—

जो ब्रह्मचर्यादि कर्मों का आचरण आदि में विषतुल्य दुःख प्रतीत होता है वही पश्चात् अमृत के सदृश विदित होता है। वही आत्मा और बुद्धि को प्रसन्न करने वाला सुख है कि जो विद्या सुविचार सत्संग और योगाभ्यासादि उत्तम कर्मों से प्राप्त होता है।

जामयो यानि गेहानि शपन्त्यप्रतिपूजिताः।
तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः ॥१॥ मनुस्मृतौ [३।५८]।

जो विवाहित स्त्रियां पति माता पिता बन्धु और देवर आदि से दुःखित होके जिन घर वालों को शाप देती हैं वे जैसे किसी कुटुम्ब भर को विष देके मारने से एक बार सब के सब मर जाते

१, महाभाष्य में 'प्रधाने कार्यसम्प्रत्ययात्' (२।१।१) इतना ही पाठ है। यहां शुद्ध पाठ 'प्राधनाप्रधानयोः प्रधाने कार्यसंप्रत्ययः' चाहिये। पारिभाषिक (परि० ८५) में यही पाठ है। यु० मी०।

हैं वैसे उनके पति आदि सब ओर से नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं। और

संतुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम् ॥१॥ मनुस्मृतौ [३।६०]

अर्थ०—जिस कुल में स्त्री से पति और पति से स्त्री अच्छे प्रकार प्रसन्न रहती है उस कुल में निश्चय कल्याण अर्थात् आनन्द बढ़ता है ॥१॥

देखिये जैसे किसी की स्त्री उपपति अर्थात् दूसरे पुरुष से प्रसिद्ध वा अप्रसिद्ध प्रीति करे तो उस के पति को कितना बड़ा क्लेश होता है। इसी प्रकार पति के परस्त्री वा वेश्या-गमन से पत्नी को महा दुःख होता है। और वह उनका क्लेश कुटंब भर का नाशक और उनकी प्रसन्नता सब कुटंब को आनन्द देने वाली है। इस लिए आप अपने अमूल्य समय मद्य वेश्या-संग आदि में न लगा के न्याय धर्म से प्रजापालनादि शुभ कर्मों में व्यय करके धन्यवादार्थ सर्वत्र सत्कीर्ति हूजिये।

किमधिकलेखेन महामान्यवर्यतमेषु[1]।

---

[२] पत्र (४८२) [५५९]

ओ३म्

श्रीयुत मनोहरदास खत्री सम्पादक भारतमित्र आनन्दित रहो।

आप ने मेरे भेजे पत्र को प्रसन्नतापूर्वक छाप दिया, उसका उपकार मानता हूं। परन्तु शेष विषय[2] भी छापने योग्य जानकर मैंने लिखा था, क्योंकि इस पूर्वपक्ष के सम्बन्धी थियोसोफिकल सुसायटी के प्रधान हैं। इस लिए यह विषय लिखा था। और मैं आप को सुहृदभाव से लिखता हूं कि यदि आप अपने भारतमित्र समाचार की विद्वानों में प्रतिष्ठा चाहें तो करनल ओलकाट आदि के करामात वा मिसमिरेजम से अनेकों रोग निवारण आदि नितान्त मिथ्या विषय कभी न छापें। नहीं तो समाचार की प्रतिष्ठा नष्ट हो जायगी। अब थोड़े समय में करनेल ओलकाट लाहौर गये थे। उन का रोगनिवारणादि सामर्थ्य अत्यन्त झूठ बड़े बड़े बुद्धिमान् लाहौर निवासियों ने निश्चित करके लिखा कि इन का यह सब ऊपर का ढोंग है। और जितना व्यवहार बाहर वा भीतर का थियासोफिस्टों का मैं जानता हूं, इतना आर्य्यावर्त्तीय लोगों में बहुत थोड़े लोग जानते हैं। जब इन लोगों ने झूठ दांभिक मिथ्या छल व्यवहारों में मेरी सम्मति लेनी चाही, मैंने नहीं दी, तभी से वे अपना प्रपंच पृथक् करने लगे। और मैं उन से पृथक् हो गया। अस्तु, थोड़े ही लेख से आप बहुत समझ लेंगे।

एक [पत्र] श्रीकृष्ण खत्री ने ता० २८वीं जुलाई सन् १८८३ को लिखकर हमारे पास भेजा है। और उन्हों ने बहुत से सनातन आर्यधर्म के प्रयोजनादि विषयों में आर्य पंचांग बनाने के लिये मुझ से सहायता चाहते हैं तथा आर्यसमाजों से भी। जिस पत्र पर लेख किया है वह पत्र भारतमित्र कार्यालय का है। इस लिए मैं आप से पूछता हूं कि उक्त महाशय किस प्रकार के गुण, कर्म, स्वभाव वाले हैं। और जैसा उन ने लिखा है कि इस में भारतमित्र सम्पादक की भी विशेष सहानुभूति है आप इन को योग्य समझते हैं। यदि इस कार्य के योग्य समझते हों तो इस पत्र को देखते ही मुझ

---

१. अनुमानतः जुलाई सन् १८८३ का अन्त।

२. देखो पत्र पूर्ण संख्या ५५२ पृ० ४४० पर टि० १।

को प्रत्युत्तर लिखिये। तत्पश्चात् आर्यसमाजों को उचित होगा, लिखा जायगा। और जो एक पत्र बहुत दिन हुये मैंने लिखा था[1], जिस में गोरक्षार्थ अर्जी देने का मसोदा वहां के वकील बारिस्टरों से पूंछ के आप लिखें, उस का क्या हुआ, अब उस में अधिक विलम्ब करना उचित मैं नहीं समझता। यहां जोधपुर का समाचार पश्चात् लिखा जायगा[2]।

———

[५] पत्र (४८३) [५६०]

ओम्

श्रीयुत बहारट किसन जी आनन्दित रहो[3]।

पत्र आप का आया, समाचार विदित हुआ। यह पत्र सर्वाधीशों के दृष्टिगोचर करा देना।

१—मेरी भी यह मनसा नहीं है न थी कि पादरियों के सामने शास्त्रार्थ ही किया जाय। किन्तु जिस से कोई अपनी प्रजा का पुरुष उन के मभत्र में न फसे वैसा उपदेश किया जाय। इस लिये वे छोटे २ खंडन जो कि मैं ने भेजे हैं[4] वे छपवा के योग्य २ पुरुषों को चाहे वे पंडित हों वा बुद्धिमान् हों, बांट कर प्रचार करने से उन के फन्दे में कोई भी न फसेगा। आप से आप बहुत से उपदेशक उसी राज्य के पुरुष हो जांयगे। इस का बांटना विशेष कर सरदार, हाकम, भूमिये, थाने वा अच्छे २ गामों में अथवा जहां कहीं कोई बुद्धिमान् हो इस को देखकर उन ईसाइयों को हटा दे सकेंगे। और यदि श्रीमानों के नियमानुसार उपदेश कहीं करना हो तो वहां राज के नौकर बहुत से पण्डित हैं जिस को योग्य समझें उस को यह दोनों पुस्तक दे के उपदेशक कर देवें।

२—जैसा श्रीमान् महाशयों ने लिखा है, वैसा उपदेशक आर्यसमाज से आने में असक्य नहीं है। किन्तु जो उस पत्र में नियम लिखे हैं उन के अनुसार और ईसाई आदि का खंडन होना असक्य है। क्योंकि जब तक उपदेशक झूठ मत को मानेगा और दूसरे झूठ मत के खंडन में प्रवृत्त होगा, कुछ भी न कर सकेगा। जब तक मनुष्य स्वयं झूठी बातों का त्याग करके सत्य बातों में निश्चित प्रवृत्त नहीं होता, तब तक वह अलौकिक शक्ति परमात्मा की ओर से नहीं मिलती। और न दृढ़ोत्साही वह हो सकता है। यावत् इन ईसाई आदि के सामने वैदिक मतानुसार ईश्वर धर्म आदि को नहीं मानता और मूर्तिपूजा आदि को मानता है, तब तक वह जायगा खंडन करने को, आप ही खंडित हो रहेगा। जैसे कोई किसी को दुर्व्यसन छुड़ाने का उपदेश करता और आप उसी दुर्व्यसन में फंसा है उस का उपदेश कोई भी न मानेगा। इस लिए असक्यता लिखी थी। नहीं तो पण्डित तो क्या किन्तु एक कोई साधारण उपदेशक भी आर्यसमाज का आवे तो इन का कुछ भी बल न चले। इस लिए जो उपाय मैंने उन के निवारण के लिये लिखा है वह अच्छा है। परन्तु ईसाई आदि के सामने

१. यह पत्र प्राप्त नहीं हुआ। यु० मी०।

२. अगस्त के आरम्भ में लिखा गया। म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ७८ पर छपा है।

३. मूल पत्र ठा० किशोरसिंह जी के संग्रह में है।

४. देखो पूर्ण संख्या ५५१ का पत्र (पृष्ठ ४३८ पर)। यु० मी०।

जब कभी बात चीत हो, तब उस को अति उचित है कि उस समय मूर्ति और पुराण आदि का पक्ष छोड़ ही के बोले, तभी कृतकारी होगा।

३—यहां जयकरण के पिता नाथूराम जी का श्रीमान् जोधपुराधीश महाराजे प्रतापसिंह जी और बाबा साहब से कहकर मैंने मिलाप करा, इनकी ओर से जो शंका थी सो दूर करा दी है[1]। अब तीनों महाशय उनसे प्रसन्न हैं। और अब श्रीमान् योधपुराधीश भी कुछ २ मेरे उपदेश सुनने में प्रवृत्त हुए हैं। अनुमान है कि कुछ सुधार हो। परन्तु अब तक मद्यपानदि दुष्कर्मों से कुछ कम हटे हैं। आज तक लोगों ने बहुत सी बहकावट की थी, परन्तु (सत्यमेव जयति नानृतम्। सत्येन पन्था विततो देवयानः। नास्ति सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम्[2] ॥ सत्ये नास्ति भयं क्वचित्।) सत्य के सामने झूठ कभी नहीं ठहर सकता। महाराज का स्वभाव अत्युत्तम है, परन्तु संगदोष ने कुछ का कुछ स्वभाव को कर रक्खा है। अब तक मद्यपान वेश्यासंग खेल हांसी ठट्ठा छुकरपन संपूर्ण नहीं छूटे हैं। परमेश्वर अंतर्यामी पूर्ण कृपा करें, जिससे ये महाशय अपने राजधर्म में प्रवृत्त हो प्रजा को पुत्रवत् न्याय से पालन कर कीर्तिमान् होवें। महाराजे प्रतापसिंह जी और बाबा साहब भी अति प्रसन्न हैं। जो यह यहां मेरा आना, इन लोगों का मेरी ओर इतना प्रेम होना, सब आर्यकुलदिवाकरों के प्रताप से हुआ है, ऐसा मैं समझता हूं। जैपुर का कृत्य[3] शीघ्र करा लेना चाहिये। श्रीमानों के शरीर की आरोग्यता सुनकर बड़ा आनन्द हुआ। सबसे मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। और इस पत्र का उत्तर शीघ्र देना।

मि० श्रावण शुक्ल ३ रविवार सम्वत् १९४०[4]।

ठाक[र] सबलसिंह जी अब यहीं हैं।

[दयानन्द सरस्वती]

। जोधपुर मारवाड़ ।

---

[३] पत्र (४८४) [५६१]

ओ३म्[5]

श्रीयुत भारतमित्र संपादक समीपेषु।

महाशय, आप के संवत् १९४० मिति श्रावण शुदी ६ गुरुवार[6] के दिन के छपे हुए पत्र में जो विविध समाचार के दूसरे कोष्ठ में यह छपा है कि मुसलमानों के मझब का मूल अथर्ववेद है, सो बात [असत्य] है। क्योंकि उस के नाम निशान का एक अक्षर अथर्ववेद में नहीं है। जो शब्द

---

१. इस विषय में पूर्ण संख्या ५५७ का पत्र (पृष्ठ ४४२) भी देखें। यु० मी०।

२. ये ही वचन सत्यार्थप्रकाश के अन्त में स्वमन्तव्यामन्तव्य के आरम्भ में दिये गए हैं। प्रतीत होता है कि उन्हीं दोनों सत्यार्थप्रकाश का वह अन्तिम प्रकरण भी शोधा गया था।

३. सम्भवतः गोरक्षा सम्बन्धी। यु० मी०।

४. ५ अगस्त १८८३ रविवार। परन्तु उस दिन शुक्ल २ है।

५. म० मुन्शीराम सम्पादित पत्र व्यवहार पृ० ७३-७४ से लिया।

६. ६ अगस्त बृहस्पति, १८८३। यु० मी०।

कर्तृम अल्लोपनिषद् नामक जो कि मुसलमानों की पादशाही के समय किसी थोड़ा सा संस्कृत और अरबी फ़ारसी के पढ़ने वाले ने छोटा सा ग्रन्थ बनाया है वह वेद, व्याकरण, निरुक्त के नियमानुसार शब्द अर्थ और संबंध के अनुकूल नहीं है। और अल्ला, रसूल, अकबर आदि शब्द चारों वेदों में नहीं है। किन्तु जो अथर्ववेद का गोपथ ब्राह्मण है, उस में भी यह उपनिषद् तो क्या किन्तु पूर्वोक्त शब्दमात्र भी नहीं है। पुनः जो कोई इस बात का दावा करता है, वह अथर्ववेद की संहिता जो कि बीस काण्डों से पूर्ण है, अथवा उसके गोपथ ब्राह्मण में एक शब्द भी दिखला देवे, वह कभी नहीं दिखला सकेगा[1]। यदि ऐसा होता तो उस पुरुष का कहना भी सत्य होता। अन्यथाकथन सच क्योंकर हो सकता है? कहां राजा भोज कहां गांगा तेली? वेदों के आगे यह ग्रन्थ ऐसा है कि जैसे अमूल्य रत्न के सामने भूड़ा। यही एक बात नई नहीं है। किन्तु स्वार्थी लोगों ने वेदों के नाम पर ऐसे २ निकम्मे बहुत से ग्रन्थ बनाये हैं जिन का मिथ्यात्व वेद के देखने से यथावत् विदित होता है। यदि बालादत्त शर्मा हेडमास्टर रियास्त टिहरी गढवाल की इच्छा………जाने वा शास्त्रार्थ करने की इच्छा हो तो इस बात के लिये यहां सब दिशाओं के दरवाजे खुले हैं। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्य्येषु[2]।

———

[१४] पत्रांश (४८९) [५६२]

[कमलनयन मन्त्री आर्य स० अजमेर[3]]

बालकराम वाजपई कौन है[4]।

१० अगस्त १८८३[5] जोधपुर।

दयानन्द सरस्वती

———

१. अज्ञानी लोगों की इस मूर्खता को देख कर ही श्री स्वामी जी ने सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास के अन्त में इस अल्लोपनिषद् की कड़ी समीक्षा की। प्रतीत होता है कि वर्तमान सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास की प्रेस कापी भी उसी समय संशोधित हो रही थी। उसी के अन्त में इस के मिथ्यात्व का भी खण्डन कर दिया गया।

[इस विषय में हमारा 'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास' ग्रन्थ भी पृ० ३२, ३३ देखें। यु० मी०]

२. अगस्त १८८३ के उत्तरार्ध में लिखा गया प्रतीत होता है। [इस पर म० मुन्शीराम जी का नोट इस प्रकार है–"इस पत्र के अन्त में महर्षि दयानन्द का हस्ताक्षर नहीं है और न इस से पूर्व पृ० ५३२–५३३ पर मुद्रित पत्र पर उन का हस्ताक्षर है। परन्तु इन दोनों पत्रों के साथ एक और सादा कागज नत्थी है, जिस पर लिखा हुआ है "भारतमित्र कलकत्ते वाले के नाम जो पत्रादि स्वामी जी की ओर से लिखे गये उनकी प्रती"]

३. देशहि० के रजिस्टर से। इस सम्बन्ध का पत्र म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १७५, १७७ पर छपा है।

४. यह अभिप्राय मात्र है। ५. श्रा० शु० ७ शुक्र, सं० १९४०।

[२] पत्र (४८६) [५६३]

ओ३म्

श्रीयुत महिमहेन्द्र महामान्यार्यकुलदिवाकर आनन्दित रहो।

श्रीमानों को विदित हो कि मैं जोधपुर में भाद्र पौर्णमासी[1] तक रहना चाहता हूँ। पश्चात् कहां जाना होगा, इस का निश्चय अब तक नहीं किया है। जब निश्चय हो जायगा तब श्रीमानों को विदित कर दिया जायगा।

महाराजे प्रतापसिंह जी और रावराजा तेजसिंह जी उदयपुर में श्रीमन्महोदयों को मिलने के लिए आने को कहते थे। अनुमान है कि पूने से वहीं आवेंगे। यदि आवें तो अच्छे प्रकार आप शिक्षा करेंगे। इस में कहना वा लिखना क्या है। किन्तु **आर्यराजोत्कर्ष, वैदिकधर्म की उन्नति** करने आदि का उपदेश यथायोग्य कीजियेगा। कुछ ओषधि लिखके भेजी जाती हैं[2]। इन को यथायोग्य उपयोग में लावें।

॥ उपदेश ॥

१—कभी साहित्य जो नायका आदि भ्रष्ट रीति है उस का स्मरण श्रवण और वैसे गणेशपुरी से मनुष्यों का संग भी कभी मत कीजियेगा। और न मद्यपान, न वेश्या का दर्शन, नृत्यगान आदि प्रसंग करना।

२—जैसी दिनचर्या[3] मैं लिख आया हूं उस से विपरीत आचरण न कभी करना। किन्तु वही रात्रि के प्रातः ४ चार बजे उठना। दिन और रात में १० बजे[4] भोजन करना, दिन में निद्रा न लेनी और रात्रि में १०, १०॥ साढ़े दश वा ११ बजे तक शयन सदा कीजियेगा।

३—सदा छः घण्टे तक समय राजकार्य में लगाया कीजियेगा। और जब कभी राजकार्य से अवकाश मिले, तभी व्याकरणादि शास्त्र और मनुस्मृति के ३ अध्यायों का अभ्यास कीजियेगा। और व्यर्थ समय एक क्षणमात्र भी मत गमाइयेगा। जैसा कि सतरंज, हास्य और विनोद आदि में मूर्ख लोग अपना अमूल्य समय खोते हैं—वैसा करना सर्वथा अनुचित है।

४—प्रातः समय योगाभ्यास की रीति से ध्यान करना! और नाम लेना आदि पुरोहित के आधीन कर दीजियेगा, जिस से ध्यान करने और राज्यपालन में समय यथोचित श्रीमानों को मिले। बुद्धि, बल, पराक्रम, आयु, प्रताप बढ़ता रहे।

---

१. १६ सितम्बर १८७३। २. इन औषधों का संकेत बारहट कृष्णसिंह जी के पत्र में है—

"और येक पत्र आप का श्रीमान् के पास आया था जिस में सर्प, बिच्छू, ज्वर, विसम ज्वर, मन्दाग्नि बुद्धिवर्धक आदि परीक्षित औषधिएं लिखी थीं।.......................सम्वत् १९४० आश्विन कृष्ण १० तारीख २६ सितम्बर"। देखो प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ११७।

एक औषधिपत्र का निर्देश आश्विन वदी ११ बृहस्पतिवार सं० १९४० (२७ सितम्बर १८८३) के पत्र के आदि और अन्त में भी है। उसे हम उक्त पत्र के आगे ही छापेंगे। हमारा विचार है कि यहां भी उसी औषधिपत्र से अभिप्राय है, क्योंकि उस में भी बारहट किशनसिंह जी द्वारा लिखित सर्प, बिच्छू, ज्वर, विषम ज्वर आदि सभी की औषधियां हैं। यु० मी०। ३. दिनचर्या के ५१ नियम, देखो पूर्ण संख्या ४५६।

४. यहां पाठ अशुद्ध है। 'दिन में १० और रात में ६ बजे' ऐसा चाहिये। देखो पृष्ठ ३७०। यु०मी०।

५—निरामय महोत्सव[१] में निम्नलिखित कार्य अवश्य कीजियेगा। एक वेदमन्त्रों से होम। दूसरा १२५०००) सवा लाख रुपये छात्रशाला और २५०००) पच्चीस हजार रुपये स्वराज्य में अनाथ, वृद्ध, विधवा और रोगियों के पालन के लिये। और १००००) मेवाड़ में वैदिकधर्म-प्रचार और प्राचीन आर्षग्रन्थों के छपवाने [तथा] प्रदान करने के लिये। और २०००००) दो लाख वहां के क्षत्रिय सरदारों से लेकर छात्रशाला स्थापन शीघ्र कीजियेगा। इस में ऐसा समझिये कि जानो एक गवर्नर जनरल साहेब और आये थे।

६—सदा बलवान् और राजपुरुषों से सताए हुओं की पुकार यदि भोजन पर भी बैठे हो तो भोजन को भी छोड़ के उनकी बात सुननी और यथोचित उन का न्याय करना। ऐसा न होवे कि निर्बल अनाथ लोग बलवान् और राजपुरुषों से पीड़ित होके रुदन करें और उन का अश्रुपात भूमी पर गिरे कि जिस से सर्वनाश हो जावे। और इन की रक्षा से सब प्रकार की उन्नति अर्थात् शरीरारोग्य आयुवृद्धि धनवृद्धि राजवृद्धि धर्मवृद्धि और प्रतापवृद्धि को सदा करते रहिये।

७—अब परमात्मा की कृपा से महाशयों का शरीर निरामय हुआ है। अब इस को वीर्यरक्षणादि से सदा रोग रहित रखियेगा कि जिस से ऐहिक और पारमार्थिक सुख की सिद्धि करना सुगम होवे। और श्रीमानों के दीर्घायु होने से स्वराज्य और समस्त आर्यावर्त देश का सौभाग्य बढ़े।

८—कभी सत्य बात के करने और झूठ बात के छोड़ने में भय न करें, किन्तु युक्तिपूर्वक इस बात को पूरी करें। और अपने राज्य में २५ वर्ष का पुरुष और १६ सोलह वर्ष की कन्या का विवाह करने के लिये दृढ़तापूर्वक आज्ञा दीजिए[२]। कुमार और कुमारी का यह समय सनातन आर्ष ग्रन्थस्थ विद्याओं के ग्रहण करने में व्यतीत होवे, जिस से सब मनुष्यजाति की सत्य उन्नति होवे।

९—एक विवाह से अधिक दूसरा भी विवाह कोई न करने पावे। परन्तु यह विवाह दोनों की प्रसन्नतापूर्वक होवे, जिस से अत्युत्तम सन्तान उत्पन्न हों।

१०—स्वराज्य और प[र]राज्य का जो चिकीर्षित और अच्छे बुरे काम होते हैं उन को दूत द्वारा यथावत् जान कर दुष्ट कार्यकर्त्ताओं को दण्ड और उत्तम कार्य करने हारों का सत्कार यथायोग्य कीजिये, जिस से उत्तम कार्य बढ़ें और दुष्ट कर्म घट जायें।

११—जो जितना अपराध करे, उसी को उतना दण्ड और जो जितना अच्छा काम करे, उस को उतना ही पारितोषिक देना, अधिक वा न्यून नहीं, चाहे माता पिता भी क्यों न हों।

१२—जैसा कुत्तों पर अन्याय अर्थात् एक के हड़के होने और अपराध करने में सब जाति को दण्ड देना अन्याय है, इस के लिये जितना धन व्यय इस प्रबन्ध में होता है उतने धन से जितनों से

---

१. बार्हट कृष्णसिंह जी अपने श्रावण शुक्ल २ सम्वत् १६४० (५ अगस्त १८८३) के पत्र में इस महोत्सव के होने की सूचना श्री स्वामी जी को दे रहे हैं। देखो प० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ११५। प्रतीत होता है कि श्री स्वामी जी का ऊपर मुद्रित पत्र महाराणा उदयपुर को १० से १५ अगस्त तक किसी तिथि को लिखा गया होगा।

२. श्री स्वामी जी का लगभग यही अभिप्राय चिरकाल के पश्चात् भारत की सरकार ने परोपकारिणी सभा के मन्त्री महोदय श्री हरविलास सारदा जी द्वारा प्रस्तावित-सारदा एक्ट के नाम से प्रचलित किया।

प्रबन्ध हो सके उतने पुरुष हड़के कुत्ते को मारने के लिए नौकर रखिये। वे रात दिन इसी कार्य करने में तत्पर रहें। और बिना अपराधियों को दण्ड मत दिलाइये।

१३—अब दशहरा निकट आया। उस में अनपराधी भैंसे बकरों का प्राण न लेकर उस के स्थान में सिरनी मिठाई मोहनभोग लपसी आदी [की] बलि प्रदान कीजिए। और क्षत्रियों को जो कि शस्त्र चलाना जानते हैं उन के उत्साह शौर्य धैर्य बल और पराक्रम की परीक्षा करने के लिये जंगली सुअरों को वा सिंह को प्रथम पकड़ा रख के उस दिन मैदान में छोड़ शस्त्रप्रहार करने की आज्ञा दीजिये। इन को विदित तो होवे कि शस्त्र चलाना ऐसा होता है।

१४—आरोग्य और अधिक वर्षा होने के निए एक वर्ष में १००००) दश हजार रुपये के घृतादि का जिस रीति से होम हुवा था उसी रीति से प्रति वर्ष होम कराइये। परन्तु उन में से ५०००) पांच हजार रुपयों के सुगन्धित घृत मोहनभोग का होम वर्षा ही में कि जिस दिन वर्षा का आरद्रा नक्षत्र लगे उस दिन से लेके विजयदशमी तक चारों वेदों के ब्राह्मणों का वरण करा एक सुपरीक्षित धार्मिक पुरुष उन पर रख के होम कराइयेगा।

सब से मेरा आशीर्वाद कहियेगा। और इस लेख को यथावत् सफल कीजियेगा। और इस का प्रत्युत्तर शीघ्र भिजवा दीजिए। किमधिकलेखेन महामान्यवर्येतमेषु।

१५—अब कविराज जी आ गए होंगे[1]। गोरक्षा के अर्थ अर्जी शीघ्र देनी चाहिए। जितनी आशा लार्ड रिपन साहेब के ही समय में इस कार्य की सिद्धी होने की है उतनी दूसरे गवर्नर के समय में अनुमित नहीं हैं। इस कार्य कि सिद्धी करने का यत्न शीघ्र होना चाहिए, ऐसी सब आर्यवरों की सम्मति है तथा मेरी भी यही सम्मति है कि यह कार्य अब शीघ्र होना चाहिए, क्योंकि शुभ कार्य करने में विलम्ब होना उचित नहीं। जितनी शीघ्रता हो उतना ही अच्छा है।

रहस्य नियम

१—स्वयंवर विवाह के पश्चात् कम से कम एक महीने और अधिक से अधिक ३ महीने तक ऋतुदान से पूर्व ब्रह्मचर्य सेवन पूर्वक पत्नी और पति भोजन का प्रबन्ध रक्खें। अर्थात् अति शीत, अत्युष्ण, अतिरुक्ष, मादक द्रव्यों का भोजन पान छोड़ तरोष्ण मध्यस्थ गुण युक्त दुग्ध मिष्ट सुगन्ध तण्डुल गोधूम मूंग उड़द दधि सद्योघृत सुसंस्कृत सुगन्धियुक्त बुद्धिवर्धक हृद्य पदार्थों का भोजन पान किया करें कि जब तक ऋतुदान समय न आवे।

२—ऋतुकाल प्रतिमास षोड़श रात्रि पर्यन्त होता है। उन में से रजोदर्शन दिन को लेके चतुर्थ दिन पर्यन्त स्पर्श दर्शन भी परस्पर न करें। जब पांचवें दिन शुद्ध हो जावे तब यदि पुत्रेच्छा हो तो समाङ्क अर्थात् छठीं आठवीं दशवी द्वादशी चतुर्दशी और सोलहवीं रात्रि ऋतुदान के लिए उत्तम हैं। और जो कन्योत्पत्ति की इच्छा हो तो पांचवी सातवीं नवमी एकादशी त्रयोदशी और पंचदशी

---

१. संख्या १५ का लेख मासिक पत्र आर्य, भाग १३ अक ६ जनवरी १९३२ पृ० ३८६ पर छपा था। पीछे से यह अंश खोया गया। पं० चमूपति जी के आर्य पत्रस्थ लेखानुसार इतना अंश ऋषि ने स्वहस्त से एक कागज के टुकड़े पर लिखा हुआ था। पत्रव्यवहार में यह अंश नहीं छपा। म० मामराज जी ने सम्वत् १९९० में ठा० किशोरसिंह जी के संग्रह की प्रतिलिपि की थी। अतः हमारे पास और आर्य में यह लेख सुरक्षित रहा।

तिथि[१] प्रशस्त हैं। परन्तु इन्हीं शोलह रात्रियों में दोनों पक्ष की अष्टमी चतुर्दशी पौर्णमासी और अमावास्या तिथि आवे तो उस रात्रि में भी ऋतुदान न देना चाहिये।

३—जिस रात्रि में शरीर चित्त आत्मा प्रसन्न हो उसी में १० बजे के उपरान्त २ बजे से पूर्व ऋतु दान देके पश्चात् किंचित ठहर स्नान कर शालम मिश्री और केशर आदि सुगन्धियुक्त परिपक्व दूध शीतल यथारुचि पी के तांबूल भक्षण कर मुख प्रक्षाल[न] करके पृथक् २ शयन करें।

४—यदि पत्नी विदुषी चतुर हो तो उसी समय गर्भस्थित हुआ वा न हुआ जान लेवेगी। नहीं तो जब पुनः द्वितीय मास में रजस्वला न हो तब जानना कि गर्भ रहा। उस समय से आगे यावत् बालक के जन्म होने के पश्चात् दो महीने अर्थात् वर्ष व्यतीत न हो तब तक दोनों सिवाय सुभाषणादि व्यवहार के मध्य में समागम (न) करें किन्तु पति पत्नी पूर्वोक्त प्रकार युक्ताहारविहार करते हुए ब्रह्मचारी रहें, जिस से अग्रिम सन्तान भी उत्तम होवें।

५—दोनों मन कर्म वचन से व्यभिचार अर्थात् अन्य स्त्री अन्य पुरुष से समागम छोड़ पातिव्रत्य और स्त्रीव्रत रह के धर्मार्थकाममोक्षों को सिद्ध करके आनन्दित और दीर्घायु होवें।

यदि इतने पर भी गर्भ स्थित न हो तो पत्नी एक यति वा बाल चान्द्रायण अर्थात् मध्यान्हदि[न] में नित्य प्रति तीन २ तोले या ३६ मासे का एक ग्रास एकान्न के आठ ग्रास खावे। एक महीने अर्थात् पौर्णमासी से द्वितीय पौर्णमासी, अमावस्या से २[री] अमावस्या और संक्रान्ति से २[री] संक्रान्ति तक व्रत करे। नित्य होम और भूमि शयन करे और पति ब्रह्मचारी होकर वीर्य को रक्षा वृद्धि करे। पुनः पूर्वोक्त समय और रीति से वीर्य स्थापन करें तो संभव है कि सन्तानोत्पत्ति होवे[२]।

---

[५७] पत्र (४८७) [५६४]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

कल ऋग्वेद के पृष्ठ १७६८ से पृष्ठ १८०९ तक का पाकट रजस्टरी कराके भेजा है, पहुंचेगा। यदि उनमें से पांच ५ वा १० दश मन्त्र शिवदयाल को भाषा बनाने के लिए दे देना और पत्र में लिख देना कि फलाने मन्त्र से फलाने मंत्र तक शिवदयाल की बनाई भाषा है। परन्तु उन्हीं मंत्रों की भाषा की जिन की शिवदयाल बनावे ज्वालादत्त से भी बनवा के भेजना। अच्छी भाषा बनावेगा तो उनके पास भी भाषा बनवाया करेंगे। अब तक किसी का सूची छपकर तैयार हुआ वा नहीं। और आज कल क्या छपता है। सत्यार्थप्रकाश छपता है वा और कुछ। प्रयाग समाचार का छपना दो सप्ताह के लिए था, पश्चात् बन्द हो ही गया होगा। अब टेप आने में कितनी देर है। जहां तक जल्दी आवे तो अच्छा है। बीच २ में उनको चिट्ठी भेजकर तकादा किया करो। और कलकत्ते में जो छोटे टेप हैं जिन में भाषा छपती है वे बहुत अच्छे छपते हैं। यदि उनमें से भी दो चार फर्म[ों] के टेप आ जाय

१. तिथि से अभिप्राय रजोदर्शन काल से गिनी गई रात्रि से है। जैसा पूर्व वाक्य में लिखा है। यु० मी

२. यह पत्र १०–१५ अगस्त के मध्य में लिखा गया। देखो पृष्ठ ४५० टि० १। यु० मी०।

तो अच्छा है। जो हमने तुम्हारे निजपत्र[1] के उत्तर में पत्र भेजा है[2] उसके सकारण हेतु लिख कर शीघ्र भेजो।

मिति श्रावण सुदि १२ सं० १९४०[3]।

[दयानन्द सरस्वती[4]]
जोधपुर राज मारवाड़

---

[६] पत्र (४८८) [५६५]

ओम्

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो[5]।

उस बात का स्मरण होगा कि जो तुम ने काशी में मुझ से कहा था कि आप यंत्रालय कीजिये, दो एक वर्ष में पेंशन लेलूंगा, पश्चात् वैदिक यंत्रालय का ही काम करूंगा। क्योंकि यह आर्यावर्त देश भर का उपकार है। अब भी वही निश्चय है वा कोई दूसरा हो गया है। प्रयाग समाचार छपना बंद हो गया वा नहीं। क्योंकि दो सप्ताह की प्रतिज्ञा थी। कभी की हो चुकी है। बन्द कर ही दिया होगा। टेप आने की अवधी हो चुकी वा नहीं। अब कब तक आवेगा।

और हमें आज मुन्शी समर्थदान जी को भी लिखा है कि जिन अक्षरों में भाषा छपती है वे कलकत्ते के[6] टेप बहुत अच्छे हैं। यदि वे भी कुछ मंगवाये जांय तो ठीक है वा नहीं ? और वहां किसी वकील से पूछ निश्चय कर लिखना कि मुन्शी बख्तावरसिंह पर नालिश की जाय [तो] प्रयाग में हो सकती है वा नहीं। क्योंकि दो ही ठिकाने हो सकती है। एक जहां बात हुई हो वहां और दूसरे जहां मुद्द (इलेह) होवे। जब वह बात हुई थी तब यंत्रालय काशी में था, अब प्रयाग में है। सो किसी अच्छे वकील से पूछ के लिखो। और यह भी पूछ के लिखो कि नालिश फौजदारी में करना चाहिये वा दीवानी में। मेरी समझ में और अन्य वकीलों की भी सम्मति है कि दीवानी में करना अच्छा है। सब से मेरा आशीर्वाद कह देना।

इन सब बातों का प्रत्युत्तर लिखो। श्राव० सु० १२ सं० १९४०[7]।

(दयानन्द सरस्वती)
जोधपुर राज मारवाड़

---

१. समर्थदान का निजपत्र १३-७-८३ को श्री स्वामी जी को भेजा गया। उस में अनार्य नौकरों का विषय है। २. यह पत्र प्राप्त नहीं हुआ। यु० मी०।

३. १५ अगस्त १८८३। ४. इस पत्र का मुन्शी समर्थदान का २०-८-८३ का लिखा उत्तर म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ४६३ पर छपा है।

५. मूल पत्र श्री नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

६. सम्भवतः यहां ६ के स्थान में 'छोटे' चाहिये। देखो पूर्व पृष्ठ ४५२ की अन्तिम दो पंक्तियां। यु० मी०।

७. १५ अगस्त १८८३।

[१] पत्र (४८९) [५६६]

ओम्[1]

ठाकुर नन्दकिशोर जी आनन्दित रहो—

पत्र तुम्हारा श्रावण सुदी १० का लिखा आया, समाचार विदित हुआ। मुन्शी गंगाप्रसाद बुद्धिमान् दृढोत्साही निर्भय धार्मिक निःशंक था। ऐसे पुरुष का मृत्यु सुन कर जो कि उन को जानते थे, शोक किस को न होगा—

(एति जीवन्तमानन्दः) यह महाभाष्यकार [२।३।१२] का वचन है, कि जीते हुए पुरुष को आनन्द प्राप्त होता है। इस लिये अशोचनीय बात पर शोक करना किसी को उचित नहीं। जो एक अशक्य बात है उस के शोक में वर्तमान और भविष्यत् में हानि के सिवाय दूसरा कुछ भी फल नहीं होता। अस्तु जो हुआ सो हुआ। रहे को सम्भालो। और बड़े प्रयत्न प्रीति और दृढ़ोत्साह से आर्यावर्त देश के परम हितकारक सभा के उद्देशों को अपने तन मन धन से पूरे करने के लिये सर्वदा उद्यत रहो। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर सब बातें अच्छी करेगा। (सत्यमेव जयति नानृतम्।) सत्य ही सर्वदा विजयी होता है, झूठ कभी नहीं। इस लिये सर्वदा सत्य की उन्नति में सब जने उद्यत रहें। सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मिती श्रावण शुक्ला १४ शुक्रे संवत् १९४०[2]। [दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़

---

[२] पत्र-सूचना (४९०) [५६७]

[श्रीमद्राजराजेश्वर महाराजाधिराज जोधपुरेश आनन्दित रहो[3]]

---

[५८] पत्र (४९१) [५६८]

ओ३म्[4]

भादवा वदी १—४०[5]

(१)

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो।

धातुपाठ का सुचि जैसा हम ने भेजा है वैसा ही छाप दो। उस से बड़ा लाभ है। और गोवध का उपाय हो रहा है। निश्चय है कि लार्ड रिपन साहिब के समय ही में यह काम किया जायगा। और इसके फार्म नये छापने की कुछ आवश्यकता नहीं, क्योंकि हमारे पास बहुत पड़े हैं। तुम को चाहिये तो मंगवा लो। और तुम ग्राहकों का रजष्टर क्यों नहीं भेजते। क्या अब तक मिलान नहीं हुआ। शीघ्र भेज दो। मुन्शी इन्द्रमणी जी [ने] जो बी दिया है वह टाइटल पेज पर छप गया है। उस में देख लो। यदि अधिक निकले तो ले लो। न दे तो उस के नाम पर धूल डालो। यह वर्तमान महीने की १५ तारीख के पत्र का उत्तर हुआ।

---

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। २. १७ अगस्त १८८३।
३. इस के लिये पूर्ण संख्या ५६६ का पत्र और पृष्ठ ४६३ की टि० ३ देखें। यु० मी०
४. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है। ५. १६ अगस्त १८८३।

और ऊपर लिखा ज्वालादत्त हमारे पास पन्द्रह दिन पहले पत्र क्यों नहीं भेजता, जो कि पत्र[1] हम बराबर भेज दें। और अब यह भाषा भी अच्छी नहीं बनाता, जैसी कि पहले बनाता था। जैसी कि प्रति दिन उन्नति करनी चाहिये, यह प्रति [दिन] गिरता जाता है। अब के भाषा में कई पद छोड़ दिये हैं। कहीं अपनी ग्रामणी भाषा लिख देता है। और (च) का अर्थ भी, और करना चाहिये। यह (भी) कर देता है[2]।

अब १४ अगष्ट के पत्र का उत्तर। श्रीमान् महाराणा जी ने धन्यवाद पत्र के प्रत्युत्तर में लिखा सो बहुत अच्छी बात हुई। जो २ छपता जाय सो २ बराबर हमारे [पास] भेजते जाओ। सत्यार्थप्रकाश में जो कोई ऐसा अनुचित शब्द[3] हो निकाल कर जो हमारे आशय से विरुद्ध न हो वह शब्द उस के स्थान में धरना और हम को लिख कर सुचित करना कि यह २ शब्द धरे हैं। साहपुरे का जो वर्तमान हुआ था सो तुम्हारे पास लिख भेजा था। और मान्यपत्र की नकल भेज देंगे। और संस्कृत में जो पत्र आया है उस साधु को हम नहीं जानते कि वह कैसा है। और पहले तुम्हारे निज पत्र के विषय में लिखा था[4] उस का उत्तर भेजो। और ग्राहकों का रजष्टर भेजो तथा जो २ पुस्तक छपे सो २ शीघ्र भेजो। और प्रयागसमाचार बन्द हो गया वा नहीं। और भूपालसिंह का भी जो कुछ आया है वह सब टाइटल पेज पर छपवा दिया गया है।

मिति भाद्रपद वदी १ सं० १९४०[5]।

दयानन्द सरस्वती[6]।
जोधपुर राज मारवाड़

[१.] **पोस्ट कार्ड (४९२)** [८६९]

[बालकराम वाजपेई अजमेर]

..................क्या २ पढ़े हो और लेख कैसा है।..................

भाद्रपद कृष्ण ५ सं० १९४०[7]।

---

१. यहां 'पत्रे' पाठ चाहिये। अभिप्राय वेदभाष्य के भाषा बनाने वाले पत्रों से है। यु० मी०।

२. इन बातों का उत्तर ज्वालादत्त ने भाद्र कृष्ण ६ सं० १९४० के पत्र में दिया है। देखो म० मुन्शीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृष्ठ ४१९ से ४२२। यु० मी०।

३. इस का उत्तर उक्त मुन्शी जी ने ता० २४-८-८३ को पत्र नं० ६३७ द्वारा दिया है। उसमें **अनुचित** शब्द का अभिप्राय **कड़ा** लिखा है। म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ४६६-६८ पर छपा है।

४. इस का संकेत पूर्ण संख्या ५६४ पृष्ठ ४५३ पं० १ में भी है। यु० मी०।

५. १६ अगस्त १८८३।

६. इस पत्र का थोड़ा भाग दयानन्द ग्रन्थमाला भूमिका-पृ० १७ पर भी छपा।

७. २३ अगस्त १८८३, गुरुवार। इस पत्र का संकेत म० मुन्शीरामसम्पा० पत्रव्यवहार पृ० २२० पर है।

[५९.] **पत्र (४९३)** [५७०]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो[१]।

इसके पूर्व तुम्हारे दोनों पत्रों का उत्तर भेज चुके हैं[२]। और जो गणपाठ के १० पुस्तक और उसके साथ भाषा भेजी सो पहुँचेगी। तुम थोड़ी सी भाषा देख लिया करो। यह ज्वालादत्त तो विक्षिप्त पुरुष है। इस का ध्यान सदा मासिक बढ़ाने पर रहता है, काम बढ़ाने पर नहीं। यदपि मैंने सब पुस्तक गणपाठ का नहीं देखा, परन्तु भुमिका के पहले पृष्ठ में दृष्टी पड़ी तो दूर २ के स्थान में (दर २) अशुद्ध छपा है। ऐसी भाषा को तुम भी देख सकते हो। और अब यह भाषा भी अच्छी नहीं बनाता, किन्तु घास सी काटता है। इस के नमूने के लिये एक पत्र भेजते हैं जिस की उसने भाषा बनाई है। और बड़ी भूल करी है कि जिस का पदार्थ है कुछ, और भाषा कुछ बनाई है। और भावार्थ संस्कृत के अनुसार और पूरी भाषा भी नहीं बनाई है। तुम प्रत्यक्ष देख लो और उसके सामने दिखला दो। और छः मन्त्र की भाषा भी रोज नहीं बनाता। और उस पर भी यह हाल है। यदि यह प्रीति और परिश्रम से काम करता तो इस की उन्नती और हमारी प्रीति क्यों न होती। और अब भी जो अच्छा काम करेगा तो उसके लिये अच्छा होगा। यह तो एक नमूना भेजते हैं। थोड़े दिन के पश्चात् पुराणे बहुत से पत्र इसके भाषा बनाये भेजेंगे। उस में इस के दोष सैंकड़ों दीख पड़ेंगे। बाबू विशेश्वरसिंह ने भी इस के लिये लिखा था कि इस के तीन रुपये मासिक बढ़ा दिया जाय, परन्तु यह काम भी करे। ऐसे पुरुष हमारे सामने ही काम दे सकते हैं। और यह भी है कि ऐसे पुरुष हमारे पास रह नहीं सकते। यह पत्र बाबू विशेश्वरसिंह जी को भी दिखला देना। और इस विषय में तुम दोनों जने सम्मिति करके लिखो, वैसा किया जाय। इस से जो एक साधारण पुरुष जिस की दृष्टी सच्ची हो वह भी इस से अच्छा छपवा सकता है। और एक तुम को यह लिखते हैं कि जैसा कागज गणपाठ में लगाया है वैसा ही सब साधारण पुस्तकों में लगाया करोगे तो आगे जाकर खर्च की तंगी पड़ जायगी। इस से जैसा प्रथम लगता था, उसी प्रकार का लगाना चाहिये। न अति उत्तम और न अति उत्कृष्ट [निकृष्ट ?]। और धातुपाठ तथा निघण्टु उणादिगण की सुचि भी बराबर उस के साथ छपे। और जो तुम पत्र लिखते हो उस में एक महीने में इतने फार्म फलाने २ पुस्तक के छपे, अवश्य लिखा करो। और आज कल वेदभाष्य भी नहीं छपता। सत्यार्थप्रकाश के पत्रे भी शीघ्र २ नहीं मंगाते हो, जितना कि हम अनुमान करते हैं। इस लिये हर महीनों के फर्मों का हिसाब लिखा करो। बाहर का काम कुछ भी मत लो। हमारे पास छपने को बहुत सी पुस्तकें हैं तुम छापते २ थक जाओगे, तो भी न चुकेगा।

ऋग्वेद का चौथा अष्टक भी पूरा हो गया। पांचवे अष्टक का एक अध्याय कल पूरा होगा और छटा मंडल आज पूरा हो गया। परमेश्वर की कृपा से १वर्ष में सब

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा में सुरक्षित है।

२. १४ और १५ अगस्त के पत्रों का उत्तर पूर्ण संख्या ५६७ के पत्र में दिया है। यु० मी०।

ऋग्वेदभाष्य पूरा हो जायगा[1]। और एक वा डेढ़ वर्ष साम, और अथर्व में लगेगा । और अब के संस्कारविधि बहुत अच्छी बनाई गई है। और अमावस्या तक बन चुकेगी[2]।

और हम ने कब कहा था कि निघण्टु व्याकरण के पुस्तकों में गिना जाय। वह वेदाङ्गप्रकाश में गिना जायगा। क्योंकि निघण्टु मूल और निरुक्त व्याख्यान [वेदाङ्ग] है। इसलिये वेदाङ्गप्रकाश में अवश्य गिणना होगा। और पठन पाठन की व्यवस्था में जो इस का संख्यांक हो वही टाइटल पेज और भूमिका के एक पृष्ठ में धरना।

मिती भाद्र बदी ५ सं० ४०[3]।

[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़।

---

[६०] **पत्र सूचना (४९४)** [५७१]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो[4]!

पत्र तुम्हारा २९ अगस्त का लिखा आया, समाचार विदित हुआ। और जो तुमने रजिष्टर और दोनों की भाषा और सभा का कृत्य भेजा सो पहुंचा। इस भाषा को देखकर जैसा होगा वैसा लिखा जायगा। बाबू विशेश्वरसिंह सुख से यन्त्रालय में रहैं, उनका घर है। **आज यहां से २४८ से लेके २७८[5] तक सत्यार्थप्रकाश** और १८१० से लेके १८९५ तक ऋग्वेद के पत्रे भाषा बनाने के

---

१. यह पत्र भाद्र बदी ५ सं० १९४० (२१ अगस्त १८८३) को लिखा गया था। इस के २ मास ६ दिन पश्चात् (कार्तिक बदी ३० सं० १९४०=३० अक्तूबर १८८३) श्री स्वामी जी महाराज ने भौतिक शरीर छोड़ा। मृत्यु से पूर्व वे ऋग्वेद अष्टक ५ अ० ५ वर्ग ४ मंत्र २ (मं० ७ सू० ६२ मं० २) तक भाष्य कर पाये थे। देखो हमारा "ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास" परिशिष्ट १ पृ० ४-६ पर रामानन्द ब्रह्मचारी का पत्र। यह पत्र इस ग्रन्थ के अन्त में भी परिशिष्ट में दे रहें। यु० मी०

२. संस्कारविधि का संशोधन आषाढ़ वदी १३ रविवार संवत् १९४० को प्रारम्भ हुआ और लगभग दो मास में समाप्त हुआ। [इस विषय में ऋ०द० के ग्रन्थों का इतिहास पृष्ठ ८४-८६ तक देखें। यु०मी०]

३. २३ अगस्त १८८३। दयानन्द ग्रन्थमाला शताब्दी संस्करण भूमिका पृ० १७, १८ पर इस पत्र का किंचित् अंश मुद्रित हुआ है। वहां भाद्र बदी ६ छपा है। यह अशुद्ध है। मु० समर्थदान के उत्तर में इस पत्र की तिथि भाद्र बदी ५ ही लिखी है। इस का उत्तर मुन्शी समर्थदान जी ने ता० २७-८-८३ पत्र नं० ६४६ द्वारा दिया। सत्यार्थप्रकाश के ३२० पृ० तक छपने की सूचना इसी पत्र में है। देखो म० मुन्शीरामसम्पा० पत्रव्यवहार पृ० ४६६-७२।

४. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

५. अगले आश्विन वदी १ सं० १९४० (=१७ सितम्बर १८८३) के पत्र में पृष्ठ २७२ से ३१६ तक भेजना लिखा है। यु० मी०।

लिये भेजे हैं । पहुँचने पर ज्वालादत्त को दे देना और रसीद भेज देना । प्रथम सत्यार्थप्रकाश के पत्रे २५० तक तुम्हारे पास भेजे थे और तीन पृष्ठ रामसनेही के विषय के पश्चात् धरे हैं । सो ४८-४९-५० अंक घटे हैं । तुमको भ्रम न हो । परन्तु इतना अवश्य करना कि जो वहां २५० पृष्ठ हैं उसके अंत और २४८ पृष्ठ के आदि की संगति तुम मिला देना । और २५१ के पृष्ठ के आदि और जो अब २५० वा भेजा है उस की सभी संगति मिला लेना । और ग्यारह समुल्लास की समाप्ति तक सब पत्रे भेज दिये हैं[1] । **और इसके अन्त में महाराजे युधिष्ठिर से लेके यशपाल तक आर्य राजाओं की वंशावली पीछे से लिखी है ।** और उसके पृष्ठों के अंक ठीक २ हैं । वैसे ही छाप देना ।

और प्रथम तुम जो काम अकेले करते थे उसके लिए अब तीन हो, सो उगाही और तकाजे में आलस्य नहीं करना, परन्तु स्मरणार्थ लिखा है । और जो ठाकुर भूपालसिंह ६ अंक विना मूल्य ले गये हैं और तुम्हारे नोटिस के पहुँचने पर तुमको इतना भी नहीं की[2] फिर उनका मूल्य न देना वा तुम न लो तो नियम टूटता है । और उन्होंने जो २ रुपये जब २ दिये हैं, टाटल पेज पर बराबर छप गये हैं । उस से अधिक न दिये न छपे हैं । और अगष्ट महीने में कितने फार्म छपे सो लिख भेजो । यहां वर्षा हो रही है और दो तीन दिन से यहां वर्षा अच्छी होती है । अनुमान है कि यह प्रयाग आदि में भी हुई होगी । सब से हमारा आशीर्वाद कह देना ।

भाद्र वदी ३० सम्वत् १९४०[3] ।

[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर (मारवाड़)

मैनेजर भारतमित्र श्रीकृष्ण खत्री ने एक आर्य पंचांग नामक ग्रन्थ बनाना चाहा है । उस में आर्यधर्म के प्रयोजन, जिस २ स्थान पर समाज है, जिस दिन आरंभ हुआ, और जिस दिन वार्षिक उत्सव होता है, और मंत्री का नाम उसमें लिखाना चाहते हैं । सो हमने तुम्हारा नाम लिख दिया है । यदि वह तुम्हारे पास पत्र भेजे तो जहां तक तुम जानते हो पूर्वोक्त विषयों में सहाय देना । और जो उन्होंने समाजस्थ पुरुषों की संख्या और हमारा इतिहास भी लिखना चाहा है, सो तो अब इस समय उनको नहीं मिल सकता । और समाजस्थ पुरुषों की संख्या बतलाने में कुछ लाभ नहीं । इसलिये पूर्वोक्त विषयों में जो सहाय मांगे तो दे देना, क्योंकि वह प्रसिद्ध समाचार का सम्पादक है और उसकी प्रीति भी अधिक दीखती है, चाहैं स्वार्थ वा परमार्थ से[4] ।

———

१. यहां तक का भाग Works of Maharshi Dayanand पृ० १२९ पर छपा है ।

२. यहां कुछ पाठ खण्डित प्रतीत होता है । यु० मी० ।

३. १ सितम्बर १८८३ ।

४. इस पत्र का हस्ताक्षर के पश्चात् का भाग हमारे सम्पादित प्रथम भाग में संख्या ४६ पर छपा था । अब परोपकारिणी सभा से सारा पत्र प्राप्त हुआ है ।

[३] पत्र (४९५) [५७२]

ओ३म्

श्रीयुत विहारीलाल जी आनन्दित रहो[१]।

विदित हो कि भाद्र कृष्ण १२ द्वादशी बुधवार के दिन का लिखा तुमारा पत्र आया, समाचार विदित हुआ।

इस विषय के नियम

१—वहां पं० गौरीशंकर जी का १ प्रथम माहवारी मासिक क्या था—और जब राज में नौकरी थी तब क्या मासिक था। जब अंगरेज में नौकरी थी तब क्या मासिक नियत था।

२—और अब कितना मासिक उन को देना चाहिये और कितने मासिक में उन का निर्वाह हो सकेगा।

३—और जितना मासिक उन को देना होगा, जिस में तुम कितना दोगे और कितने महीने वे अन्यत्र घूमेंगे और कितने महीने वहां रखना चाहते हो।

४—और जब वे बाहर घूमेंगे, वह रेल का भाड़ा और खाने पीने का खरच समाज से मिलेगा। और जैपुर में रहेंगे तो अपना मासिक में से खावेंगे। जब बाहर घूमेंगे तब समाज से रेल का भाड़ा खाने पीने का खरच मिलेगा।

५—इस में हमारा विचार यह है कि ८ आठ महीने बाहर घूमें और ४ चार महीने जैपुर में रहा करें। इस में तुमारी क्या सम्मति है। इन सब का प्रत्युत्तर शीघ्र भेजो। जब भेजोगे उस के पश्चात् हम उसका प्रबन्ध ठीक २ करेंगे। और हम अपनी सम्मति भी लिखेंगे। पश्चात् और इस प्रबन्ध के समय के प्रथम पं० गौरीशंकर जी को २०।१५ दिन हम अपने पास बुलावेंगे, जब कि जोधपुर से अजमेर को आवेंगे। इस लिये इस पत्र का उत्तर पं० गौरीशंकर से और सभासदों से सम्मति लेकर शीघ्र भेजो[२]। और सब से मेरा आशीर्वाद कह देना।

यहां का समाचार पश्चात् लिखेंगे। और यहां वर्षा बहुत अच्छी हो गई और हो रही है।

संवत् १९४[०] मि० भा० शु० १[३]। [दयानन्द सरस्वती]

जोधपुर राज मारवाड़

———

[७] पत्र (४९६) [५७३]

ओ३म्

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनन्दित रहो[४]—

बख्तावरसिंह के समय के रजिस्टर सब प्रयाग में हैं। और चिट्ठी पत्र तथा हिसाब किताब

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. इस पत्र का उत्तर श्यामसुन्दरलाल जी मंत्री वैदिकधर्म सबाई जयपुर ने दिया—देखो म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १०२—१०६।

३. २ सितम्बर १८८३।

४. मूल पत्र श्री नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

कुछ मेरठ में भी है। यदि अब तक न आया हो तो मंत्री आर्य समाज मेरठ बाबू आनन्दीलाल से मंगा कर वकीलों को दिखला देओ। और प्रबन्ध शीघ्र करो। कलकत्ते के टेप कितने मंगाना चाहते हो। और उसके कितने रुपये मन लगेंगे। जब कि प्रथम आये थे तब ४०) रुपये मन के दाम लगे थे। विषय का सब हाल लिखो। यदि मुंबई के टेपों से कार्य निकल सके तो फिर मंगाना कुछ आवश्यक नहीं।

और यह जो सभा का प्रबन्ध हुआ है सो बहुत अच्छा है। एक को अधिकार देने में खराबी होती है। और एक को अधिकार न देना। इस सभा में तुम लोग तथा सुन्दरलाल जी और हमारी भी पूर्ण सम्मति है। इस लिए जो प्रबन्ध इसका तुम विचारते हो वही हमने विचारा है। क्योंकि स्वतन्त्र अधिकार देने में हानि ही हानि होती है। और लाभ कुछ भी नहीं होता। और तुमने लिखा कि धन के कार्य में किसी को स्वतन्त्रता न देनी चाहिये, वह सच है। क्योंकि धन के काम में स्वतन्त्रता से लाखों आदमियों में से कोई ही रह सकता है। और यहां धन का ही केवल काम नहीं, किन्तु पुस्तकों का ही बड़ा भारी माल है। जैसे हरिश्चन्द्र ने और बख्तावरसिंह ने चोरी से वेदभाष्य के ग्राहक कर लिये थे। और छापेखाने में भी हम को प्रसिद्धि करता था १००० हजार और छपवाता था २००० तथा १५०० डेढ़ हजार। और बाहर का चोरी से छपवा लेना। उस का हिसाब कुछ न देना। यदि दिया तो हिसाब में लिया १०० सौ और लिखा २० बीस। इत्यादि बहुत प्रकार के छापेखाने में काम रहते हैं। दो मनुष्यों को जो तुम सभा में बढ़ाना चाहो, हमारी ओर से बढ़ा दो। और पंडित जी की भी सम्मति लेलो। और तुम प्रसन्नता से यन्त्रालय में रहो, तुमारा घर है। और मुन्शी समर्थदान ने भी हम को लिख भेजा है, वह भी तुमारे रहने से राजी है।

जो पिछला रुपया बाकी है उसका तगादा करना विचारा है, सो अच्छी बात है। परन्तु मैं शोक करता हूँ कि जिस काम में मुंशी समर्थदान अकेले रहते थे, तब वसूल और तगादा भी होता था। और जब से पं० शिवदयाल और रामचन्द्र रक्खे हैं, तो भी तगादा और वसूल अच्छा नहीं होता। यह अपने देश का अभाग्य है, क्योंकि जितने अधिक होंगे, उतना विरोध करेंगे। और काम ठीक २ नहीं करते। इस लिये इन तीनों को समझा दो कि अपना २ काम प्रीति और उत्साह से करें। विशेष कर पं० शिवदयाल और रामचन्द्र को समझाना। समर्थदान तो समझा ही हुआ है। इस कमेटी के विषय में कोई निन्दा लिखे, हम कभी नहीं सुनेंगे। हां, जो कुछ हमको लिखितव्य होगा, सो पं० सुन्दरलाल जी को लिखा करेंगे। ऐसा विचार मत रक्खो कि इस प्रेस से मैं कुछ न लूं। क्या घर के माल में से घर के आदमी यथोचित नहीं लेते। जो काम धार्मिक उत्तम मनुष्य से बनता है, वह धन से कभी नहीं होता। जो तुम से यन्त्रालय की उन्नति होगी, वह निश्चय है कि लाखों रुपये खर्च करने से भी न होगी। क्योंकि सब पदार्थ संसार में सुलभ हैं, परन्तु शुद्ध मनुष्य का मिलना दुर्लभ है। क्या तुम इस द्रव्य को बुरा और अधर्म का समझते हो, जो नहीं लेओ। यह सब उत्तर लिखो। बड़ों २ और छोटों २ का कुछ नियम नहीं है। यह तो अपने आत्मा के साथ है। क्योंकि बड़े २ तो बिगड़ कर तेल के बड़े हो जायं और छोटे २ सुधर कर बड़े हो जाते हैं।

अब बाकी का तगादा कर जहां तक हो सके धन इकट्ठा करो। और पश्चात् २०००) का सामग्री मंगवाओ। यदि उस में कुछ न्यूनता होगी, तो हम दे देंगे। यदि यह सब प्रबन्ध हो जाय तो पेन्शन ले कर यहीं तुम रहना। और जो मासिक पाते हो वही यहां मिले। और १०) रुपये वे भी

लिये जायं तो उस में से प्रति मास बचाते २ बहुत सा धन हो जायगा। और यह निश्चय है कि जहां २ जिस २ की उन्नति हुई है वह सब सभा ही से हुई है। इस लिए इस की भी उन्नति सभा ही से होगी—इस से यह बहुत अच्छा प्रबन्ध है। और सबसे हमारा आशीर्वाद कह देना। यहां वर्षा बहुत हुई और हो रही है। निश्चय है कि वहां भी हुई होगी।

मिति भाद्र सुदी २ संवत् १९४०[1]।

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़

---

[८] पत्र (४९७) [८७४]

ओ३म्

चौधरी जालिमसिंह जी आनन्दित रहो[2]।

भीमसेन के दो पत्र आजकल हमारे पास यहां आये हैं। विदित होता है कि धक्का खाने पर इस को कुछ बुद्धि आई है। अब आप लिखिये कि जब से यह वहां आया, तब से उसका वर्त्तमान पोपलीला का हुआ वा अच्छा। इस लिखने का प्रयोजन यह है कि फिर भी वह हमारे पास नौकरी करना चाहता है। और हम को उस के पूर्व चरित्रों से पूरा विश्वास नहीं होता कि यह जैसा लिखता है कि अब मैं सब बात समझ गया। आप से विरोध कभी नहीं करूंगा। आप की सब बातों में मेरा दृढ़ विश्वास हो गया, अब मैं आप की आज्ञानुसार सदा चलूंगा इत्यादि। परन्तु वह छोकरबुद्धि है। यदि उस को रखलें पुनः अनुचित काम करे, निकालना हो तो अच्छी बात नहीं। अब आप लिखिये इस में आप की क्या सम्मति है। क्योंकि मैंने उस के बहुत से उलटे चरित्र देखे हैं। और इस में अच्छे भी गुण हैं परन्तु बुरे गुण ऐसे प्रबल हैं कि अच्छे गुणों को मात कर देते हैं। यदि परमेश्वर की कृपा से उस का स्वभाव सुधर गया हो तो बहुत अच्छी बात है। परन्तु जब तक इस पत्र का उत्तर आप भेजेंगे तिस पश्चात् मेरी जैसी सम्मति होगी, वैसी आप को और भीमसेन को लिख दूँगा। देखिये कि बदरी[3] आप को और मुझ को कैसा भलामानस दीखता था। और कैसा दुष्ट निकला। इस लिए उत्तम धार्मिक पुरुषार्थी मनुष्य का सहसा मिलना असम्भव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है। बड़े भाग्य और परमेश्वर की कृपा से उत्तम पुरुष को उत्तम पुरुष मिलता है। सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा। मुझ को निश्चय है कि आप पक्षपात रहित यथार्थ लिखेंगे।

मिति भाद्र शुदी ४ संवत् १९४०[4]।

दयानन्द सरस्वती[5]
जोधपुर राज मारवाड़

---

१. ३ सितम्बर १८८३।

२. मूल पत्र श्री विष्णुलाल एम० ए० के पास बरेली में था। वहीं से हम ने इस की प्रतिलिपि ली।

३. बदरी के विषय में पूर्ण संख्या ४६१ पृष्ठ ३६८ देखें। यु० मी०।

४. ५ सितम्बर १८८३।

५. इस पत्र का उत्तर देखो म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ६४, ६५ पर।

[१५] **पत्रांश (४९८)** [५७५]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर[१]]

ईसाई स्त्री के विषय में लिख रहे हैं[२]।

सितम्बर १८८३। जोधपुर दयानन्द सरस्वती

———

[१६] **पत्रांश (४९९)** [५७६]

[पं० मुन्नालाल जी, अजमेर]

………आप ने मन्त्री का पद क्यों त्याग किया। क्या फिर इसे ग्रहण नहीं कर सकते।…

७ सितम्बर १८८३ से पूर्व[३]।

दयानन्द सरस्वती

———

[१७] **पत्र (५००)** [५७७]

ओ३म्[४]

श्रीमन्माननीयवर श्रीयुत महाराज राजाधिराज शाहपुरेश आनन्दित रहो।

रजिस्ट्री पत्र आप का गत दिन आया, समाचार विदित हुआ। सरदार जवाहरसिंह जी के विषय में आपकी जैसी इच्छा हो वैसा कीजिये। मैंने भी उनको कई वार मासिक के गड़ वड़ न करने के विषय में लिखा था कि ऐसा न करना चाहिये, परन्तु ऐसा ही हुआ। इस में [१][५] एक बात विचारणीय है कि सरदार जवाहरसिंह जी मेरे सम्बन्ध से बुलाये आए हैं। यह प्रथम कार्य हुआ है। यह [आगे] आप लोगों और जिसको [मैं] बुलाना चाहूंगा उन दोनों को अविश्वास का कारण होगा। अस्तु जैसा हुआ वैसा ही हो। और छात्रशाला का उद्योग निष्फल हुआ, यह शोक की बात है। यहां [७] सात दिन से वर्षा होती है सब मारवाड़ में। फिर भी होने का संभव हैं। और अकाल का नाम उड़ गया। यहां सब प्रकार से प्रसन्नता है। यहां का समाचार पश्चात् लिखेंगे।

छीतरदत्त जी आदि और स० जवाहरसिंह जी को भी मेरा आशीर्वाद कहियेगा। वहां वर्षा हुई वा नहीं। सो समाचार लिखियेगा।

[दयानन्द सरस्वती]

सं० १९४० मि० भादवा शु० ५ गुरु दिन[६]।

———

१. देशहि० के रजिस्टर से।

२. यह स्त्री सीताबाई थी। पहले ईसाई थी, फिर अजमेर समाज ने शुद्ध की। इस के विषय के पत्र म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार में पृ० १८८–१८९, तथा १९३–१९५ तक है।

३. यह पंक्ति पं० मुन्नालाल जी के लम्बे पत्र से हम ने बनाई हैं। देखो म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १८०–१८८।

४. मूल पत्र राजकार्यालय शाहपुरा में सुरक्षित है।

५. शाहपुरा से हमारे पास आई मूल पत्र की प्रतिलिपि में यह अंक नहीं है।

६. यह तिथि पं० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ३९ में नहीं है। वह उस प्रतिलिपिमात्र से छापा गया है, जो ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में थी। ६ सितम्बर १८८३।

[१.२] पत्रांश (५०१) [५७८]

[श्रीयुत महाराजाधिराज शाहपुरेश·········][1]

··

सब बातें संसार में मिल जाती हैं, परन्तु ऐसे मनुष्य का मिलना असम्भव नहीं तो अति कठिन तो अवश्य है।·································

मिति भाद्रपद सुदी ६ बृहस्पतिवार संवत् १९४०[2]।

———

[३] पत्र (५०२) [५७९]

ओम्

॥ प्रसिद्ध समाचार ॥

श्रीमद्राजराजेश्वर महाराजाधिराज श्री जोधपुरेश आनन्दित रहो।

अब मैं यहां बीस पच्चीस दिन रहना चाहता हूं, यदि कोई नैमित्तिक प्रतिबन्ध न होगा। मैंने यह समझा है कि यहां आकर आपका धन व्यय व्यर्थ कराया, क्योंकि मुझ से आप का उपकार कुछ भी नहीं हुआ। और आप की ओर से मेरी सेवा यथोचित होती रही। जब श्रीमान् गुण-ज्ञाता हैं इसी लिये जब २ मुझ को अवकाश मिलता है तब २ पत्र द्वारा कुछ निवेदन कर देता हूं। उस मेरे निवेदन को देख सुन कर आप प्रसन्न होते हैं, इसी लिये तीसरी बार लेख करने के लिये मुझ को समय मिला[3]।

१—जैसा राजकार्य आजकल आप कर रहे हैं वैसा ही यावत् शरीर रहे तावत् करते रहियेगा। इस को जहां तक हो सके वहां तक अधिक २ करते जावें, कभी न छोड़ें। क्योंकि न्याय से राज्य का पालन करना ही आप लोगों का परम धर्म है।

२—आप आपने पुत्र जो कि महाराजकुमार हैं, उन को खाने पीने आदि से संकोचित मत रखियेगा। सदा पात्र भर गाय के दूध में मासा भर सोंठ को मिला छान थोड़ा सा गरम कर ठंढा करके ब्राह्मी औषधी के साथ पिलवाते रहिये, जिस से महाराजकुमार के बुद्धि बल पराक्रम आयु और विद्या बढ़ती रहे।

३—जो एक रत्न आप के बन्धु महाराजे प्रतापसिंह जी हैं, उन को कभी राज्कार्य से पृथक् मत कीजियेगा। क्योंकि ऐसा पुरुष आप और राज का हितैषी दूसरा कोई नहीं दीखता।

---

१. यह पत्र राजाधिराज श्री शाहपुराधीश को लिखा गया होगा। भाई जवाहरसिंह उन दिनों श्री शाहपुराधीश के प्राईवेट सैक्रेटरी थे। प्रतीत होता है, नौकरी छोड़ते समय वह इस पत्र की नकल अपने साथ ले आए। ऊपर मुद्रित अंश भाई जवाहरसिंह ने "रद्दे बुतलान" के पृ० ६८, ६९ पर छापा है।

२. ६ सितम्बर १८८३। शाहपुराधीश ही के नाम का इसी तिथि का पत्र पूर्ण सं० ५७७ पर छपा है। उसमें यह अंश नहीं है। कदाचित् यह दूसरा पत्र होगा। अथवा क्या भाई जवाहरसिंह ने इसे स्वयं बना लिया? यु०मी०

३. पहला पत्र पूर्ण संख्या ५५८ पर छपा है। यह तीसरा पत्र है। दूसरा पत्र प्राप्त नहीं हो सका।

४—इस देश में वर्षा प्रायः न्यून होती है। इस के लिये यदि मेरे कहे अनुसार एक २ वर्ष में १००००) दश हजार रुपयों का घृतादि का नित्यप्रति और वर्षा काल में चार महीने तक अधिक होम करावेंगे वैसे प्रति वर्ष होता रहै तो सम्भव है कि देश में रोग न्यून और वर्षा अधिक हुआ करै।

५—आप में औदार्यादि प्रशंसनीय बहुत गुण हैं। इन को यदि राजनीति में प्रवर्त रक्खें तो देश का सौभाग्य और श्रीमन्महाशयों की पृथिवी भर में उत्तम कीर्ति फैल जावे।

॥ गुप्त समाचार ॥

१—जो २ श्रीमानों के प्रशंसनीय गुण कर्म स्वभाव हैं उन के कलंक नीचे लिखे हुए काम हैं।

२—एक वेश्या से जो कि नन्नी कहाती हैं। उस से प्रेम। उसका अधिक संग और अनेक पत्नियों से न्यून प्रेम रखना आप जैसे महाराजों को सर्वथा अयोग्य हैं।

३—जैसे हड़के कुत्ते के दांत वा लाल लगने से उस का दोष छूटना अति कठिन है। वैसे ही वेश्या मद्यपान चौपड़ कनकौवे आदि में व्यर्थ काल खोना और खुशामदी लोगों का संग राजाओं के लिये महा विघ्नकारक, धन आयु कीर्ति और राज्य के नाश करने वाले होते हैं। मुझ को बड़ा आश्चर्य है कि आप बड़े बुद्धिमान् और शौर्यादि गुण युक्त होकर इन से पृथक् क्यों नहीं होते।

४—जैसे आप नन्नी रंडी के घर को जाते, उस की माता आदि रोगिणी को देखते हैं और जैसे एक किसी अपने नौकर मुसलमान के लड़के के विवाह में घोड़े की लगाम पकड़ के पैदल चले थे, वैसा निन्दाकारक काम करना आपको शोभा कभी नहीं देता। किन्तु इन के बदले जैसे महता विजयसिंह जी बिमार थे, जाकर देखते और जो अपने मारवाड़ के सरदार और बेटे हैं जो कि राजा और राज्य की उन्नती चाहने वाले हों उन के पुत्रों के विवाह में पैदल चलना आदि करते रहैं तो सर्वदा प्रशंसा लाभ और उन्नती होती रहै।

५—जब २ मैं किसी के मुख से अथवा समाचार पत्रों में आप लोगों की निन्दा सुनता या देखता हूं तब २ मुझ को बड़ा शोक होता है। यदि आप लोग ऐसे निन्दा के काम न करें तो क्यों निन्दा होवे। हम लोगों को अंगरेज आदि के सामने शरमिन्दा क्यों होना पड़े। बड़े महाराज जो कि श्रीमानों के पिता जी थे, यदि वे बहुविवाह पासवान् और वेश्या आदि को न रखते तो आप लोग भी कभी ऐसा काम न करते। ऐसे ही जैसे आप लोगों का व्यवहार महाराजकुमार आदि देखेंगे इनहीं में झुकेंगे। क्योंकि मनुष्य को दूसरे का गुण लेना कठिन और दोष लेना सहज है।

६—आप महाराजकुमार की शिक्षा के लिये किसी मुसलमान वा ईसाई को मत रखियेगा। नहीं तो महाराजकुमार भी इन के दोष सीख लेंगे। और आप के सनातन राजनीति को न सीखेंगे। न वेदोक्त धर्म की ओर उनकी निष्ठा होगी। क्योंकि बाल्यावस्था में जैसा उपदेश होता है वही दृढ़ हो जाता है। उस का छूटना दुर्घट है।

७—महाराजकुमार के संस्कार सब वेदोक्त कराइयेगा। २५ वर्ष तक ब्रह्मचारी रख के प्रथम देवनगरी भाषा और पुनः संस्कृत विद्या जो कि सनातन आर्ष ग्रन्थ हैं

जिनके पढ़ने में परिश्रम और समय कम होवे और महालाभ प्राप्त हो, इन दोनों को पढ़े। पश्चात् यदि समय हो तो अंग्रेरेजी भी, जो कि ग्रामर और फिलासफी के ग्रन्थ हैं पढ़ाने चाहियें।

८—जैसे आपने गणेशपुरी[1] आदि जो कि केवल बुरी चाल चलन सिखलाने हारे हैं उनका दुराचार देखके उन का सदा त्याग रक्खा है, वैसे वेश्या आदि मीठे ठगों से भी पृथक् आप क्यों नहीं रहते। जैसे मुसलमान और ईसाई आदि के टोपी पैजामा मुंडे जूते कोट पतलून टोपी आदि के धारण से आप अपने उत्तम विचार से पृथक् रहे हैं, वैसे ही हजारह गुणों में वेश्यासंग आदि में आप अपने अमूल्य समय को मत खोवें। आप का शरीर ऐसे क्षुद्र काम और विषयासक्ति और आराम के लिये नहीं है, किन्तु बड़े परिश्रम न्याय पुरुषार्थ से लाखह मनुष्यों के हितार्थ आप लोंगों का शरीर है। देखिये आप मनुस्मृति के सप्तम अष्टम और नवम अध्यायों में कि राजाओं के लिये क्या २ कर्तव्य और अकर्तव्य लिखा है। मुझ को निश्चय है कि आप इन कड़ी और कल्याणकारक बातों को सुन कर प्रसन्न होंगे। अलमतिविस्तरेण महामान्यवर्येषु[2]।

———

[६] पत्र (५०३) [५८०]

ओम्

श्रीयुत बहारट कृष्ण जी आनन्दित रहो[3]।

जयकर्ण जोधपुर में आये। उन से वहां का सब वर्त्तमान सुन के अत्यानन्द हुआ। परन्तु थोड़ी सी बातें लिखता हूं। अब निम्नलिखित बातें श्रीमान् महाशयों के दृष्टिगोचर करा देना। अन्य किसी को नहीं।

१—प्रातः काल का भ्रमण करना सदैव हुआ करे। उसमें विच्छेद कभी न किया जाय।

२—भोजन का जो समय दिनचर्या[4] में १० दश बजे से लेके ११ ग्यारह बजे के पूर्व २ करना लिखा है, वैसा ही सदा रखना चाहिये।

३—सभा में बैठ कर जैसे दिनचर्या[4] में लिखा है वैसे बराबर न्याय करना चाहिये। उस में आलस्य कुछ भी न हो।

---

१. गणेशपुरी शाक्त मतानुयायी तथा नन्ही रंडी का गुरु था, और विष सम्बन्धी षड्यन्त्र में भी सम्मिलित था।

२. अनुमान से ८ सितम्बर १८८३ को यह पत्र भेजा गया होगा। मूल पत्र की प्रतिलिपि ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में थी। उसे ऋषि ने स्वहस्त से शोधा हुआ है। उसी से म० मामराज जी ने ३० दिसम्बर १९३२ को गुरुकुल काङ्गड़ी में जाकर प्रतिलिपि की। पं० चमूपति जी सम्पादित पत्रव्यवहार के पृ० ६२-६७ तक भी छपा है।

३. मूल पत्र ठाकुर किशोसिंह जी के संग्रह में था। इस की लिपि को ऋषि ने स्वहस्त से शोधा है। उस की प्रतिलिपि म० मामराज जी ने ५ जनवरी १९३३ को की। पं० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १२२-१२३ तथा १७३ पर भी छपा है।

४. दिनचर्या पूर्ण संख्या ४५६ पृष्ठ ३६६-३७४ पर छपी है। यु० मी०।

४—जो उस रोग को निःशेष होने में श्रीमानों को कुछ भी सन्देह रहा हो तो जो इन्दोर के डाकतर साहब का विचार किया है वह उत्तम है। वह डाकतर अनुमान से विदित होता है कि अच्छा है। परन्तु ओषधी करते समय जो उन के नीचे डाकतर गणपतराव जी और डाकतर भवानीसिंह जी भी दोनों साथ रहें।

५—मुझ को निश्चय है कि यदि सर्वाधीश वाल्टर साहब से इस बात की संमति के लिये पूछेंगे तो वे संमति अवश्य दे देंगे। पूछने की रीति यह है—(अब ओषध हो गया और रोग भी निवृत्त हो गया, परन्तु इस की परीक्षा के लिये अर्थात् अब यह रोग निशेष हो गया वा नहीं, इन्दोर के डाकतर को बुलाकर परीक्षा कराना मैं चाहता हूं। इस में आप की क्या अनुमति है)। पूछते ही वे संमति दे देंगे। जब उन की संमति हो जाय तब उसी समय उस डाकतर साहिब गणपतराव और कविराज जी को उदयपुर में शीघ्र बुला लेना चाहिये।

६—यदि अब तक किंचित् उस रोग के निःशेष होने में शंका है तो उस का पथ्य थोड़ा समय पूर्ण रीति से रखना चाहिये, विशेष कर ब्रह्मचर्य। और आगे के लिये भी सदा ऋतुगामी रहैं कि जिस से न कोई रोग आवै। और निरन्तर धर्मार्थ काम मोक्ष राजकार्य की उन्नति होकर आर्यावर्त देश की उन्न[ति] होकर सदा आनन्द बढ़ता रहे। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की कृपा से ऐसा ही होवे।

भाद्रपद शुक्ला ८ संवत् १९४०[1]।

———

[१७] पत्रांश (५०४) [५८१]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर[2]]

……एक कहार ५५०) का असबाब लेकर भाग गया[3]।

१३ सितम्बर ८३[4]। जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

———

[१८] पत्राभिप्राय (५०५) [५८२]

[कमलनयन मन्त्री आ० स० अजमेर[5]]

सीता स्त्री के विषय में लिखते हैं[6]।

१५ सितम्बर १८८३[7]। जोधपुर

दयानन्द सरस्वती

———

१. १० सितम्बर १८८३। जोधपुर से उदयपुर भेजा गया।

२. देशहितैषी के रजिस्टर से।

३. यह अभिप्राय मात्र है। इस पत्र का कमलनयन जी का २५-६-८३ का उत्तर म० मुन्शीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृष्ठ १६१-१६३ तक छपा है।

४. भाद्र शुक्ल ११ सं० १९४०। यु० मी०। ५. देशहि० के रजिस्टर से।

६. देखो म० मुन्शीराम सम्पा० पत्रव्यवहार पृ० १६३, १६५। इस स्त्री के शुद्ध होने पर अजमेर के ईसाइयों में बहुत विप्लव हुआ था। पूर्ण सं० ५७५ की सूचना भी देखें। ७. भाद्र शु० १३ सं० १९४०। यु०मी०।

[८]　　　　पत्र (५०६)　　　　[५८३]

॥ ओ३म् ॥

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनंदित रहो[१] !

तुमने लिखा सो ठीक है। इस में चार समाज जो कि प्रयाग के निकट हैं उन से इस बात का नियम कराना चाहिये। हां, मेरठ समाज कुछ उन तीन समाजों से दूर है। तथापि रेल से कुछ दूर नहीं। एक फरक्काबाद, दूसरा मेरठ, तीसरा दानापुर और चौथा लखनऊ। इन चार समाजों के मन्त्रियों को इस हमारे पत्र की नकल के साथ लिख भेजो। दो वर्ष में एक वार पारी आवेगी। क्योंकि छः २ महीने के पश्चात् किसी चार समाजों में से जिसकी पारी हो, वहां से धार्मिक उत्तम पुरुष आया करें। वह अन्तरङ्ग सभा की सम्मति से आवे। और वह हिसाब में [भी ?] अच्छी तरह से समझता हो। तथापि धार्मिक और देशोन्नति में प्रीति रखने वाला हो। चाहे समाज धर्मार्थ वैदिक यन्त्रालय का कितना ही सहाय करे और वास्तव में समाजों ही के प्रताप से वैदिक यन्त्रालय बना है तथापि समाज से जो कोई पुरुष आवे उसके आने जाने और जब तक वहां रहे तबतक खाने पीने का खरच भी वैदिक यन्त्रालय से दिया जाय। और वर्ष २ में वैदिक यन्त्रालय का आय व्यय और पुस्तकों का जमा खर्च भी एक छोटे से पुस्तकाकार में छप के स्वीकार पत्र के [साथ] सब सभासदों और सब आर्यसमाजों में भी भेजा जावे। इस से बहुत अच्छी बात रहेगी। और जो कुछ हिसाब में गलती दीखे, वह वैदिक यन्त्रालय की प्रबन्धकर्तृ प्रयाग सभा को तद्द्वारा मुझको और पंडित सुन्दरलाल जी को और उन चार समाजों को विदित किया जाय। उसका उचित प्रबन्ध करने के लिये प्रयाग की सभा को अपनी सम्मति पूर्वक मैं वा अन्य सब लिख भेजें। और वह सभा यथावत् प्रबन्ध किया करे। इससे निश्चय है कि प्रबन्ध अच्छे प्रकार चलेगा। और मुन्शी समर्थदान के २७ सत्ताईस तारीख अगष्ठ का उत्तर यही है कि उन्होंने कापी मांगी है और भीमसेन के पत्र की नकल भेजी थी और कापी आज ही भेजते। आज रविवार है रजिस्ट्री नहीं होती। इसलिये कल भेजेंगे।

मिति भाद्र सुदी १५ रविवार सम्वत् १९४०[२]।
जोधपुर राज मारवाड़।

दयानन्द सरस्वती

---

[६१]　　　　पत्र (५०७)　　　　[५८४]

ओ३म्

मुंशी समर्थदान जी आनन्दित रहो[३] !

आर्यराज वंशावली के पत्र तुमने भेजे सो पहुंचे। उसी समय हम सत्यार्थप्रकाश १२

---

१. यह पत्र फर्रुखाबाद का इतिहास नामक ग्रन्थ के पृ० २०४ पर भी छपी हुई प्रतिलिपि से छापा गया है। मूल पत्र श्री० नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२. १६ सितम्बर १८८३।

३. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा। हमने यह पत्र आर्यधर्मेन्द्र जीवन से लेकर छापा है।

समुल्लास को भेजना चाहते थे। इस लिये हम शोध नहीं सके। और तुम इसका जोड़मात्र शोध लेना। जो राजाओं के आयु के वर्ष, मास, दिन हैं उन को वैसे ही रखना। क्योंकि अन्य पुस्तक से भी हमने इसको मिलाया है जो कि यहां जोधपुर में एक मुन्शी के पास था। और इसके साथ मोहन-चन्द्रिका १९-२० किरण भेजते हैं। परन्तु यह भी अशुद्ध छपा है। इसलिए नीचे और ऊपर के जो जोड़ हैं वही शुद्ध कर लेना, आयु के वर्ष, मास, दिन नहीं। दिन वैसे ही रहने देना, जैसे कि हैं। २७२[1] से ले के ३१९ तक १२ समुल्लास सत्यार्थप्रकाश का छापने के लिये भेजते हैं। जो जोधपुर के मुन्शी की पुस्तक से मिलाई है वह भी भेजते हैं।

मिती आ० वदी १ सं० १९४०[2]।

जोधपुर राज मारवाड़ [दयानन्द सरस्वती]

---

[६] पत्र (५०८) [५८५]

ओ३म्

चौधरी जालिम सिंह जी आनन्दित रहो[3]।

पत्र आपका आया, समाचार विदित हुआ। आप के लिखने अनुसार उस का अपराध क्षमा करके बुला लेंगे वा कहीं अन्यत्र भेज देंगे[4]। परन्तु उस को आप भी समझा देना। और एक कहार की हम को जरूरी है। यदि मिल सके तो लिखिये। और आज भीमसेन के पास भी पत्र भेज दिया है। और अब हम यहां से शीघ्र अन्यत्र जावेंगे। और जब निश्चित जाने का दिन होगा तब आप के पास पत्र भेज देंगे[5]॥

सम्वत् १९४० मि० आश्विन कृ० ४ गुरुवार[6]—।

[दयानन्द सरस्वती]

जोधपुर राजा मारवाड़।

---

[१७] पत्र (५०९) [५८६]

ओ३म

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो[7]।

विदित हो कि आप को मैंने बहुत बहुत बार कहार के लिये लिखा था। तुम ने कुछ ध्यान

---

१. पूर्ण संख्या ५७१ (पृष्ठ ४५७) के पत्र में २७८ तक पृष्ठ भेजने का उल्लेख है। तदनुसार यहां २७९ चाहिये। यु० मी०।

२. १७ सितम्बर १८८३, सोमवार।

३. इस पत्र की प्रतिलिपि हम ने बरेली से ली।

४. भीमसेन को।

५. ये पत्र इस पते पर भेजे गये थे। चौधरी जालिमसिंह जी ग्राम रूपधनी, जिले एटा थाने धूमरी एटा०। इन पत्रों के उत्तर देखिये, म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ ६२-६५।

६. २० सितम्बर १८८३।

७. मूल पत्र लिफाफे सहित हमारे संग्रह में सुरक्षित है। सन् १९२७ में म० मामराज फरुखाबाद से खोज कर लाये थे।

नहीं दिया। उस का फल यह हुआ कि एक जाट जिले भरतपुर से दो कोश पूर्व की ओर ग्राम विरोना साहबराम पोजदार का बेटा और कुन्दन का छोटा भाई कल्लू नाम वाला शाहपुरे में ऐसे ही रख लिया था। वह चोरी कर के भाग गया है[1]। यदि भरतपुर में आप का विशेष संबन्ध हो तो उस के द्वारा उस चोर का निश्चय करवायिये! और फिर भी लिखते हैं कि कोई कहार तलाश करके भेजोगे तो अच्छा होगा।

१—आवश्यक बात जिस पर आप को अवश्य ध्यान देना है सो यह कि जो कुछ नगद रुपये मेरे पास वा वैदिक यंत्रालय में वर्तमान खर्च से अधिक रहे। वह आप लोग निम्नलिखित छः महाशयों की सभा के प्रबन्ध में रहें। और जब २ उस में से खर्च करने का आवश्यक होवे तब २ मैं वा वैदिक यन्त्रालय के लिये वहीं से खर्च के लिए जाया करे। और इस धन को ॥) सैकड़े व्याज पर जहां कि आप लोगों की सभा की और मेरी सम्मति हो, वहीं रखा जावे। यदि आप लोग निम्नलिखित सब सभासद उचित समझें तो सेठ निर्भैराम जी के दुकान में जमा रहे। और वे ॥) आना सैकड़े व्याज भी देते हैं। परन्तु इस की सम्भाल [करने वाला] सभा की ओर से एक मन्त्री और एक प्रधान होवे। और सभा उस धन की रक्षा और उन्नती में सदा ध्यान रक्खे। क्योंकि मैं अपने पास शिवाय एक महीना भर के खर्च के अधिक नहीं रखना चाहता। जो अधिक हो वह सभा की सम्मति से लाला निर्भयराम जी के यहां जमा हुवा करे और खरच भी वहां ही से उठा करे। **जब तक तो मेरा शरीर है तब तक तो कुछ चिन्ता नहीं, परन्तु पश्चात् आप लोगों को अर्थात् सभा को परमार्थ के लिये बड़ा पुरुषार्थ करना होगा।** कि जिस से आर्यावर्त की उन्नति में ये सब पदार्थ लगा करें। और मेरे पश्चात् जो स्वीकारपत्र में प्रधान और सभासद हैं वे सब इस सभा के सभासद गिने जायंगे। और उसी स्वीकार पत्र के नियम के अनुसार व्यय भी किया जायगा।

॥ सभा का नाम ॥

आर्यहितैषिणी—

इस के सभासद

१—एक आप

२—दूसरा लाला जगन्नाथप्रसाद

३—लाला निर्भयराम

४—लाला कालीचरण

५—राव बहादुर पं० सुन्दरलाल

६—बाबू आनन्दीलाल मंत्री आर्यसमाज मेरठ

७—सातवां मैं।

इस सभा का दूसरा काम यह भी रहे कि छटे २ महीने कोई प्रतिष्ठित सभासद वा कोई योग्य पुरुष सभा की सम्मति से भेजा जावे। वह वैदिक यंत्रालय के धन पुस्तक आदि की जांच पड़ताल करे। उस का सब हिसाब छोटे पुस्तकाकार में छपवा के स्वीकारपत्र के सभापति आदि और मुख्य २ समाज के पास भेज दिया जावे। और मध्य में भी वैदिक यन्त्रालय की सभा से जो कि सात

१. देखो पूर्ण संख्या ५८० का पत्र। यु० मी०।

पुरुषों की वहां नियत हुई है पत्र द्वारा भी पूछ सके। इसके विना देखिये अभी च० ४००—५००) रुपयों की हानि हुई है। और कुछ इधर उधर से ११५) और ३००) मैंने अपने हाथ से लाला रामसरणदास मेरठ में जमा किये थे, वे गड़बड़ में रहे। इसी प्रकार ऐसे बहुत से व्यवहार हैं कि जिन के लिये यह सभा का प्रबन्ध होना आवश्यक है। और शरीर सब के अनित्य हैं। इस से यह काम शीघ्र होना चाहिये। पत्र पहुंचते ही इस का प्रत्युत्तर लिखें, क्योंकि मैं यहां से अब शीघ्र जाने वाला हूं। परन्तु पांच ५ दिन पहले एक पत्र और भेजूंगा। यदि इतने में उत्तर यहां आ जाय तो अच्छा है। और सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

मिति आश्विन कृष्ण ४ सं० १९४०[1]।

[दयानन्द सरस्वती]
जोधपुर राज मारवाड़

———

[१९] पत्र (५१०) [५८७]

[कमलनयन मन्त्री आ० स० अजमेर]
कहार की चोरी के विषय में[2]।
२१ सितम्बर १८८३। जोधपुर[3]

ह० दयानन्द सरस्वती

———

[४] पत्र-सूचना (५११) [५८८]

[श्रीमान् महाराजा जोधपुराधीश[4]]
आश्विन वदी ७ रविवार, सं० १९४०[5]।

———

[२] पत्र-सूचना (५१२) [५८९]

[श्री महाराज प्रतापसिंह जी[4]]
आश्विन वदी ७ रविवार, सं० १९४०[5]।

———

[४] पत्र-सूचना (५१३) [५९०]

[रावराजा तेजसिंह जी[4]]
आश्विन वदी ७ रविवार, सं० १९४०[5]।

———

१. २० सितम्बर १८८३। २. देशहि० के रजिस्टर से। [इस विषय की एक पत्र-सूचना पूर्ण संख्या ५८० पर छपी है, उसी विषय में यह दूसरी पत्र-सूचना है।]

३. आश्विन कृष्ण ५ शुक्र, सं० १९४०। यु० मी०।

४. इस पत्र की सूचना आश्विन वदी १३ शनि सं० १९४० (२२ सित० १८८३) को रावराज तेजसिंह के नाम लिखे पूर्ण संख्या ५९६ के पत्र में है। यु० मी०। ५. २३ सितम्बर १८८३। यु० मी०।

[६२] पत्र (५१४) [५९१]

ओ३म्

मुंशी समर्थदान जी आनन्दित रहो[1]।

आज संस्कारविधि के पृष्ठ १ से ले के ४७ तक भेजते हैं। सम्भाल के छपवाना। और एक तीन पत्र का एक पत्र है। वह जिस प्रकार जोड़ा है उसी प्रकार छपेगा। वह गड़बड़ न हो, इस लिए जोड़ा है। इसीलिए तीनों का एक अंक रक्खा। और हम ने भीतर प्रतीक के अंक पृष्ठांक अर्थात् फलाना मंत्र वा फलाने कर्म फलाने पृष्ठ में करना, अपने लिखे पृष्ठों के अनुसार अंक लिखे हैं। परन्तु लिखे और छपे एक से पृष्ठांक नहीं होंगे। इसलिये छपे पृष्ठों के अनुसार वे पृष्ठांक बना लेने। और विषय सूचीपत्र भी छपे पीछे बनेगा। और एक सामग्री सूचीपत्र अर्थात् फलाने संस्कार में फलानी फलानी सामग्री संग्रह की जायगी, जैसा कि इस संस्कारविधि में लिखा है। और अवकाश मिला तो सामग्री सूचीपत्र तो हम ही यहां से लिख भेजेंगे। अब हम यहां से अमावस्या[2] के दिन रवाना हो के आश्विन सुदी ४ चौथ[3] को मसूदे में पहुंच जायंगे, यदि वर्षा का प्रतिबन्ध नहीं हुआ। और जो प्रतिबन्ध हुआ तो तुमको चिट्ठी लिख देंगे। और सत्यार्थप्रकाश जो कि १३ समुल्लास ईसाइयों के विषय में है वह यहां से चले पूर्व अथवा मसूदे पहुंचते समय भेज देंगे। और मुम्बई से टैप आया वा नहीं। और यदि नहीं आया तो प्रत्युत्तर भी आया वा नहीं।

मिति आश्विन बदी ८ सोमवार सम्वत् १९४०[4]।

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़।

---

[६] पत्र (५१५) [५९२]

ओ३म्

ठाकुर नन्दकिशोरसिंह जी आनन्दित रहो[5]।

पत्र आपका सभा की ओर से पंडित नंदकिशोर जी[6] के विषय का मिति भा० सु० ९ लिखा आया, समाचार विदित हुआ। पत्र के उत्तर में विलंब इस लिये हुआ कि कुछ समाजों का अभिप्राय विचारणीय विशेष था, इस लिये शीघ्रोत्तर नहीं दिया गया। इतने में आर्य स० अजमेर की जैसी संमति आई है कि उक्त पंडित जी को सब समाजों के उपदेशक नियत करना चाहिये, वैसी ही सब समाजों की संमति निश्चय जानों। मेरी भी संमति यही है कि किसी एक समाज पर इनके मासिक का भार नहीं दिया जायगा। और यदि तुमारी सभा में उनके सहाय करने का समय (सामर्थ्य?) न हो तो कुछ चिंता

---

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा में होगा। २. १ अक्टूबर १८८३। यु० मी०।

३. ५ अक्टूबर १८८३। यु० मी०। ४. २४ सितम्बर १८८३।

५. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

६. भाद्र सुदी ६ के जिस पत्र की ओर संकेत है उसमें पण्डित का नाम गौरीशंकर लिखा है। इस पत्र के अन्त में भी गौरीशंकर नाम है। अतः यहां 'पण्डित गौरीशंकर जी' पाठ चाहिये। यु० मी०।

नहीं। तुमारे समाज को इतना ही भार रहेगा कि जिस समय जैपुर से अन्य समाज को पंडित जी जायेंगे तब रेल का खरच दूसरे समा[ज] तक का देना होगा। और जिस २ समाज में जायेंगे और जितने दिन रहना होगा, व्याख्यान देंगे और सभासदों को उचित समय में पढावेंगे भी, और मासिक इनका २०) रुपये रहेगा। क्योंकि २ महीने तक अपने घर का खरच खायेंगे। दश महीने घूमने में उन का खरच खाने पीने में समाज की ओर का लगेगा। इनके मासिक में से कुछ खरच न होगा किन्तु २२०) रुपये उन के घर के खर्च के लिये समझना चाहिये। और एक वर्ष में दो महीने की छुट्टी अर्थात् तुम्हारे समाज में और अपने घर में रह के उपदेश वा पढ़ाया करें। छुट्टी चाहे तो दो महीने की इकट्ठी ले ले अथवा छः २ महीने में एक २ महीने की। और इनके मासिक के लिये ऐसा प्रबन्ध किया जायगा कि प्रति मास उनके घर पे २०) रुपये पहुंचा करेंगे। चाहे किसी समाज की ओर से जाय वा हमारे पास से। इस का प्रबन्ध हम कर देंगे, जैसा उचित समझेंगे। फिर इसमें कुछ शंका न रहेगी। जिस समाज से जिस समाज तक जाना होगा, वह समाज रेल का व्यय और मार्ग में खाने पीने का भी वही समाज दे दिया करेगा। इतना खरच उठाने में समाज कोई भी निर्बल नहीं है, प्रत्युत सैंकड़ों रुपयों का खरच यदि ऐसे २ दश पंडित भी हों तो भी समाज प्रबन्ध कर सकते हैं, परन्तु जब समाज स्वयं समझ लेवेंगे कि पंडित जी एक वर्ष में सब समाजों में एक फेरा लगा आवेंगे। पश्चात् चाहे छोटे से छोटा समाज क्यों न हो, इन का सत्य उत्साह और वक्तृत्व ऐसा है कि बड़े प्रसन्नता के साथ इनका खरच उठा लेंगे। और यदि ऐसे २ पंडित और जैसे स्वामी सहजानन्द तथा आत्मानन्द सरस्वती जहां जाते हैं वहां प्राचीन समाज को आनन्द और नूतन समाज नित्य होते जाते हैं। उपदेशक मंडली के लिये मेरठ समाज तथा लाहौर समाज ने भी कुछ धन संचय किया है और महाराज राजाधिराज शाहपुरेश ने भी ३०) माहवारी नियत किये हैं, परन्तु उस में यह नियम किया गया है कि दो उपदेशक हमारी ओर से रक्खे जायं। चाहे १५) १५) के दो चाहे एक २०) का वा १ एक १०) का रक्खा जावे। यह नियम भी पालन करना आवश्यक है। इस लिये इस पत्र को देखते ही इन सब बातों का स्वीकार हो तो प्रत्युत्तर शीघ्र भेजो। अब हम जहां से संवत् १९४० आश्विन बदी ३० अमावश्या[1] के दिन चलके आश्विन सुदी ४ चौथ को अर्थात् ५ अकतूबर सन् १८८३ को मसूदे पहुंच जायंगे। यदि पंडित जी को स्वीकार होगा तो मसूदे में उन को बुला लेंगे। और सब समाजों में विदित कर दिया जायगा कि पं० गौरीशंकर जी को वैदिक मत का उपदेशक नियत किया है। उस के सब नियमपूर्वक हो जायगा और दो महीने जैपुर के समाज में रहेंगे। उन दो महीनों के दश १०) रुपये जैपुर का समाज दिया करे अर्थात् उन का २५) पच्चीस रुपये महावारी बना रहेगा। सब से हमारा आशीर्वाद कह दीजियेगा।

संवत् १९४० मिति आ० बदी ८[2]।

[दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़।

———

१. १ अक्तूबर १८८३। यु० मी०।

२. २४ सितम्बर १८८३।

[३]　　पत्र सूचना (५१६)　　[५९३]

[श्री बहादुरसिंह जी रावसाहब मसूदा]

मसूदा पहुंचने कि सूचना तथा प्रबन्ध विषय में[1]।

आश्विन वदी ८ सोमवार सं १९४०[2]

[५]　　पत्र (५१७)　　[५९४]

ओ३म्[3]

श्रीयुत शास्त्री छगनलाल जी तथा वृ[द्धिचन्द जी] आनन्दित रहो।

आज एक रजिस्ट्री पत्र श्री [राव साहब के] पास भी भेजा है। निश्चय है कि समय पर दोनों पहुंच जायेगा। आप को विदित किया जाता है कि हम यहां से संवत् १९४० आश्विन वदी ३० अम्मावस्या सोमवार के दिन अर्थात् अक्टूबर तारीख १ को इहां जोधपुर से चलकर बुद्ध अर्थात् आश्विन सुदी २ तदनुसार अक्टूबर तारीख ३ को मुम्बई से नयेनगर[4] को रात्री में मेल आती है उसी में आयेंगे। नयेनगर के स्टेशन पर उतरेंगे। इस लिये आप लोग नयेनगर को प्रतिपदा के दिन एक रथ, एक एक्का और एक असबाब की गाड़ी और जो हाथी अच्छा चलता हो तो हाथी भी भेज देना। और यदि हाथी भेजो तो एक्का मत भेजना। और घाटी के नीचे कि जहां तक बग्गी आती है वहां बग्गी भेज देना। [पहले] का सा प्रबन्ध न हो[5]। किन्तु रेल आने के स[मय से] घंटा दो घंटा पहले से सवारी आके रतु ……… और साथ दो सवार और दो चार आदमी पहरे वाले भेज देना। हम नयेनगर से सीधे मसूदे चले जावेंगे। और जिस मकान में हमारा ठहरना हो वह भी शुद्ध कर और सब सामग्री कर रखना। और दो चतुर पुरुष सवारी के साथ नयेनगर में भेजना। उन में से एक सवारी के पास रहे कि जो उक्त मिति को मुम्बई से आने वाली रेल के समय स्टेशन पर सवारी ले के खड़ा रहे। और एक ……………मुंगु की तत की[6] रेल में नयेनगर से रात्री की रेल में बैठा और प्रातः काल खार्ची[7] स्टेशन पर आके स्टेशन मास्टर जो जोधपुर के सरदारमल मास्टर का भाई है उनसे कहदे कि आज स्वामी जी आवेंगे। और उन को लेने के लिये [हम आये हैं।] इतना कहते ही उनको प्रीति में रख लेगा।……………………वाके दिन उपस्थित रखो।　　[दयानन्द सरस्वती]

मिति आश्विन वदी ९ सोमवार संवत् १९४०[8]।　　जोधपुर राज मारवाड़[9]

---

१. इस पत्र की सूचना अगले पूर्ण सख्या ५९४ के पत्र में है। यु० मी०।

२. २४ सितम्बर १८८३। यह पत्र रजिस्ट्री से भेजा गया था। यु० मी०।

३. मूल पत्र अथवा उसकी प्रतिलिपि परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

४. नयेनगर अर्थात् ब्यावर। यु० मी०।

५. शाहपुरा से लौटते समय मसूदा जाने का निश्चय था। परन्तु प्रबन्ध की अव्यवस्था के कारण बरल (बीरल) स्टेशन पर कोई सवारी नहीं पहुँची (देखो पूर्ण सं० ५२३, ५२४) उसी की ओर यह संकेत है।

६. संभवतः 'मुंबई की तरफ की'। यु० मी०।　　७. खार्ची अर्थात् मारवाड़ जंक्शन। यु० मी०।

८. २४ सितम्बर १८८३। वदी ८ चाहिये वदी ९ को मंगलवार और २५ सि० है।

९. कोष्ठों और बिन्दुओं वाला स्थान फट चुका है। इस पत्र का उत्तर पं० छगनलाल ने आश्विन कृष्णा ११ संवत् १९४० को दिया। देखो पं० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० ६७।

[१] पत्र (५१८) [६९५]

अजमेर

मास्तर झालावाड़ के राजराणा जी[1]

झालावाड़ के अतालीक जो भाग गये उसका हाल संक्षेप से झालावाड़ से समाचार मंगवाया था सो हाल यह है कि लफटंट लौंग[2] साहेब ३।। साड़े तीन वर्ष तक अतालीक रहे। जीती खर्च वा अजमेर खर्च श्री राजराणा साहेब बहादुर का अताली[क] के सपुर्द रहता था किन्तु नित्यप्रति के व्यय के लिए नगद रुपैये १७०००) राज की उसके पास था और रुपये १२०००) सेठ मूलचन्द्रजी वा गणे[श]दास आदि साहुकारों का पहिले से लेना था। और रुपये २०००) हजार का जेवर श्री राजराणा साहेब का जो उसी रात धावाई हरलाल की मार्फत वास्ते देखने के मंगाया, यह सब लेकर अकेला रात की रेल में अजमेर से चला गया। साहव लोगों का कहना है कि उसका पता नहीं है कि कहां गया और अब वह कहां है।

उपदेश[3]

१—सदा पक्षपात छोड़ के अभ………के साम्ने उपदान लेने की चेष्टा कभी न करनी चाहिये।

२—सेना में सुरक्षित अधिष्ठाता आर्य जनो को रखना।

३—छात्रशाला।

४—हास्य और वेश्यानृत्य पासवान् आदि से समागम कभी न करना।

५—आबू एजंट और सीमा के व्यवहार में को गोल पासवान् स्वार्थी राजद्रोही मूर्ख को न रखना, किन्तु बड़े विद्वान् धार्मिकों को रक्खे।

६—सर्वदा उद्युक्त आलस्य रहित [रहो] दीर्घसूत्री कभी न हो।

७—कभी अर्थी प्रत्यर्थी से लोभादि में फंस कर अन्याय न करे न करावे। यदि जिसका सत्य न्याय हो वह बिना प्रसंग भेंट करे तो भी उन से कहे कि न्याय करना हमारा निज काम है, इतने [पर] भी प्रसन्नता से देवें तो लेवे।

८—वेदविरोधी की जाल से प्रजा को बचावे।

९—सदा ऋतुगामी स्वदाररत हो, इस से भिन्नों को मा बहिन और कन्या के सदृश माने।

---

१. मूल लेख ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में था, उसमें तिथि आदि नहीं लिखी है। पं० चमूपति जी सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १४४ पर छपा है।

२. लौंग साहब का कुछ वृत्तान्त पं० कमलनयन शर्मा मन्त्री आर्यसमाज अजमेर ने अपने पत्र ता० १७ जून १८८३ में श्री स्वामी जी को लिखा है। म० मुन्शीराम सम्पादित पत्रव्य० पृ० १६६ पर देखें।

३. यह उपदेश श्री स्वामी जी ने पेन्सिल से लिखा है। प्रतीत होता है कि यह पहले पत्र (झालावाड़ वाले) के साथ सम्बद्ध है। मूल लेख ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में था। म० मामराज जी ने ता० ३ जनवरी सन् १९३३ में प्रतिलिपि की। हमने उसी से शुद्ध छापा है। पं० चमूपति जी सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १४५-१४७ पर कुछ अशुद्ध छपा है।

१०—शरीर राज्य ऐश्वर्य विद्या धर्म को सर्वदा बढ़ा[या करे]

११—वेश्यागामी दुर्व्यसनी, दुष्ट-व्यसनों का संग कभी न करे। सदा भ्रमण के लिए एक पुरुष और दूत

१२—धर्मार्थोपरि

१३—गोविषय

१४—छापाखानादि

१५—किसी को अपना भेद, कोई अपना छिद्र न जाने।

१६—जो धर्मदाय वा पारितोषिक दिया हो, जिस लिये उसका उसी के अर्थ नियुक्त रखना

१७—किसी की अर्जी सुन कर निष्फल न करनी, किन्तु उसका यथावत् विचार करके जीत हार तय करना ही चाहिये।

१८—सरदार और पण्डित व्रजनाथ वा अन्य कोई योग्य पुरुषों को सीमा प्रबंध[क] करना चाहिये।

१९—जितनी पृथ्वी स्वराज्य की दूसरे राज्य में दबी है, उस के लिए अपील शीघ्र अवश्य होनी चाहिये।

---

[७] पत्र (५१९) [५९६]

ओ३म्

श्रीयुत बहारट किसन जी आनन्दित रहो[1]।

अब हम यहां जोधपुर से सम्वत् १९४० मिति आश्विन वदी ३० अमावस्या सोमवार को अर्थात् सन् १८८३ तारीख १ अकतूबर को रवाना होके जिले अजमेर राज मसूदा—में तारीख ४ अक्तूबर आश्विन शुदि ३ तृतीया वृहस्पतिवार को पहुंचेंगे। और यही समाचार कविराज श्यामलदास जी को भी लिख भेजा है[2]। और यहां का समाचार बहुत सा आप को पहुंच भी गया होगा। और पश्चात् मसूदे से लिखेंगे। और इस पत्र का उत्तर ठिकाना मसूदा जिले अजमेर राजपूताने में भेजियेगा।

मि[ति] आश्विन वदि १० बुध सम्वत् १९४०[3]। [दयानन्द सरस्वती]

जोधपुर राज मारवाड़

---

[८] पत्र (५२०) [५९७]

॥ ओ३म् ॥

श्रीयुत कविराज श्यामलदास जी आनन्दित रहो[4]—

अब हम यहां जोधपुर से संवत् १९४० मिति आश्विन वदी ३० अमावस्या सोमवार को

---

१. मूल पत्र ठाकुर किशोरसिंह जी के संग्रह में था। पं० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १७८ से लिया गया। २. देखो पूर्ण संख्या ५१७ का पत्र। यु०मी०। ३. ता० २६ सितम्बर १८८३।

४. मूल पत्र ठाकुर किशोरसिंह के संग्रह में था। पं० चमूपति सम्पादित पत्रव्यवहार प० ४१ पर छपा है।

अर्थात् सन १८८३ तारीख १ अक्तूबर को रवाना होके जिले अजमेर राज मसूदा में तारीख ४ अक्तूबर आश्विन सुदि ३ तृतीया बृहस्पतिवार को पहुँचेंगे। और यही समाचार श्रीमानों के पास भी बाहरट किसन जी के द्वारा भेज दिया है[१]। और यहां का समाचार आप को भी बहुत सा पहुँच गया होगा। और पश्चात् मसूदे से लिखेंगे। और (जयपत्तनस्य कार्यस्मरणं वर्तते न वास्मिन्कार्यसिद्धिकरणे विलंबो नैव कर्तव्य इति।) और नेत्र अरुग्ण हो गये वा नंही? क्या श्रीमान् भी चित्तौड़गढ़ में पधारेंगे वा नहीं। और इस पत्र का उत्तर ठिकाना मसूदा जिले अजमेर राजपूताने में भेजियेगा—

मिति आश्विन वदी १० सम्वत् १९४०[२]।

[————————]
जोधपुर राज मारवाड़

———

[२०] **पत्रांश (५२१)** [५९८]

[कमलनयन मन्त्री आर्यसमाज अजमेर[३]]

पहली अकटूबर को जोधपुर से मसूदे जावेंगे।

२७ सितम्बर १८८३[४]। जोधपुर दयानन्द सरस्वती

———

[५] **पत्र (५२२)** [५९९]

ओ३म्[५]

श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जी आनन्दित रहो!

(१) यहां ओषधी का एक पत्र जिस में चोंतिस ओषधियां हैं,[६] जिस में से कई परीक्षित हैं, सो भेजते हैं। आप सम्भाल लीजिये और जो किसी में शंका रहे तो पूछ लीजिये।

(२) आज सन्ध्या को उसी पूर्वोक्त काम के लिए मुन्शी जी को भेज दीजिए।

(३) एक चमड़े की बेग जो कि उस चोर ने दो ठिकाने से काट दी है, यदि किसी कारीगर से एक दिन में सुधरवा दें तो आप के पास भेज देवें। परन्तु विलम्ब एक दिन के सिवाय न हो तो, अर्थात् शनिवार को अवश्य मिल जाय। यदि ऐसा न हो सके तो आगे बनवा लेंगे।

(४) यहां से पाली तक सवारी का प्रबन्ध जैसा आप ने किया हो वैसा किसी पुरुष द्वारा वा पत्र लेख से मुझ को आज विदित कर दें। सवारी का प्रबन्ध ऐसा होना चाहिये कि जैसे पहिले और तो सब सवारी ठीक थी, परन्तु असबाब की गाड़ी के बैल बिगार के थे, बहुत पीछे रह जाती थी।

---

१. देखो पूर्ण संख्या ५६६ का पत्र। यु० मी०।

२. २६ सितम्बर सन् १८८३। ३. देशहि० के रजिस्टर से।

४. आश्विन वदी ११ बृहस्पतिवार सं० १९४०।

५. मूल पत्र रावराजा जी के पास था। वहीं से इस की प्रतिलिपि प्राप्त हुई।

६. यह ओषधिपत्र हम अगली पूर्ण संख्या ६०० पर छाप रहे हैं। इस विषय में पृष्ठ ४७७ की टि० २, ३ भी देखें। यु०मी०।

अब के ऐसा न होना चाहिये, किन्तु सवारी और असबाब की गाड़ी बराबर चलें और बैल अच्छे जुतवाने चाहियें कि सवारी के बराबर चले जायें।

(५) अमरदान जी के मुख से सुना कि महाराजे प्रतापसिंह जी ने अमरदान जी से कहा कि हम बारह घण्टों में पाली को पहुंचा देंगे सो आप पूछ के उत्तर लिखिये कि वह क्या सवारी होगी।

(६) जो मेरे साथ के मनुष्य और पुस्तकादि असबाब जावेंगे, उस के साथ आप के सुपरीक्षित दो सवार और एक वा दो मेरे साथ। तथा असबाब के साथ पहरा अच्छा भेजना चाहिये। जैसा कि आप के पूना जाने के पश्चात् मुरदावली और एक दो अच्छे सिपाही का पहरा यहां बिना आठ दिन की बदली के रक्खा था, उस का प्रतिफल चोरी हुआ, इसलिए पहरा और सवार [ऐसा] भेजना चाहिए, जो की होशियारी से पाली तक अच्छे प्रकार पहुंचाए। यह मैंने आपको स्मरण दिलाने के लिए लिखा है। निश्चय है कि आप स्वयं अच्छा प्रबन्ध करेंगे। इन सब बातों का प्रत्युत्तर आज ही मेरे पास भेज दीजिए॥

(७) और जो सन्ध्या का अनुवाद अंग्रेजी का गुटका आप ले गए थे, वह भिजवा ही दीजिए। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु।

मिति आश्विन वदी ११ बृहस्पतिवार सम्वत् १९४०[1]।

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राजमारवाड़

यह ओषधियों का खरड़ा[2] श्रीमान् योधपुराधीश और महाराजे प्रतापसिंह जी को भी दिखला देना।

---

[१] [ओषधि-पत्र[3]] [६००]

१ सर्प्पोषधी—जमालगोटे की गिरि को नींबू के रस में एक दिन रात भिगोय, पुनः एक दिन रात सुखावे। इस रीति २१ इक्कीस पुट अर्थात् बयालीस दिन रात में करके रख ले, जब किसी को सांप

---

१. २७ सितम्बर १८८३।

२. इस पत्र की प्रतिलिपि ठाकुर किशोरसिंह के संग्रह में थी। उसी से पं० चमूपति जी ने पृ० १०३-४ तक यह पत्र छापा है। उस में तेतीस ओषधियों का ही उल्लेख हैं। हस्ताक्षर से नीचे का लेख तथा तिथि उस में नहीं है। [परन्तु रावराजा तेजसिंह जी से हमें प्राप्त हुई प्रतिलिपि में ३४ ओषधियों का निर्देश है। ये ३४ ओषधियां हम अगली पूर्ण संख्या ६०० में छाप रहे हैं। यु० मी०]।

३. इन ३४ ओषधियों के पत्र का उल्लेख पिछले पूर्ण संख्या ५९९ के पत्र के आदि और अन्त में है। एक ओषधि पत्र का निर्देश पूर्ण संख्या ५६३ (पृ० ४४६) में भी है। उस के विषय में पृष्ठ ४४६ की टिप्पणी संख्या २ भी देखें। पं० मोहनलाल विष्णुलाल पाण्ड्या उपमन्त्री परोपकारिणी सभा द्वारा संवत् १९४२ (सन् १८८५) में मुद्रापित **'आवेदन पत्र'** में श्री स्वामी जी महाराज की संगृहीत पुस्तक सूची की संख्या ८१ पर भी **"औषधियों का यादि पत्र स्वामी जी के लिखे हुये"** निर्दिष्ट है, सम्भव है वह इसी की प्रतिलिपि हो। यु० मी०।

काटै तब पत्थर पर घिस के जिस जगह काटा हो लगादे, यदि मूर्छित हो गया हो तो सलाई से थोड़ा सा आंख के ऊपर लगादे और त्रिफला के जल को उपस्थित रक्खे, मूर्छा उतर जाने पर त्रिफला के जल से आंखें धोवे, वैसे कई दिन धोवै, त्रिफला को रात्रि के समय मट्टी के पात्र में भिगोवे और कण्ठ तक ठण्डा जल पिला कै दो चार बार कय करावै, तो सर्प के विष से बच जाय ॥१॥

२ **द्वितीय औषधी**—जिस किसी को सांप काटे, उस को तुरन्त ही एक रीठा कुछ पानी में घिस कर पिलाना चाहिये, तुरन्त ही विष जाता रहैगा ॥२॥

३ **तथा तृतीय**—नीवगिलोय को वांट के पीवै, यदि मूर्छा आगइ हो तो जहां तक हो सकै वहां तक पिचकारी से नीबगिलोय को पेट में पहुंचावै, तो वह बच जाय, ॥३॥

४ **ओषध गोहरे के विष की**—दोनामरवा पैसे भर पानीं में पीस कर मिला दे, यदि मूर्छित होय गया हो तो पिचकारी से पेट में पहुँचावे, तो अच्छा हो जाय ॥४॥

५ **बाला की ओषधी**—छः मासे आक का दूध और बारह मासे गुड़, दोनों को मिलाकर टिकड़ी कर के एक दो अथवा तीन बार बाले पर लगा दे तो बाला जाय ॥५॥

६ **हड़के कुत्ते की औषधी**—सपेद तिल का तेल और आकरा दूध बराबर मिला के कुत्ता के काटे हुए घाव में लगादे, इस से अच्छा हो जायगा ॥६॥

७ **तथा द्वितीय ओषधी**—पुराना घृत धतूरे के बीज और आक का दूध अथवा घृत आक का दूध और गुड इनको जल में पीसकर घाव में लगा देने से अच्छा हो जाता है ॥७॥

८ **वीर्य पुष्ट होने का साधन**—सूखे आंवलों को कूट छान उसके बराबर मिश्रि मिला कर गौ के दूध के साथ प्रातः सायं १) तोले भर की फकी लेवे तो प्रमेह आदि के रोग जायं ॥८॥

९ **पेटपीडा की औषधी**—सोंठ, सुहागा, हींग इनको बराबर लेकर सहजने की छाल अर्क में घोट कर गोली बांध लेवै, एक गोली गर्म जल के साथ खिला देवै तो पेट पीडा जाय ॥९॥

१० **रुधिर शोधक की औषधी**—फिटकड़ी के फूले कर पीस कै उस को १ मासे वा जितनी पचे अथवा जो रुचि होवै तो पाव भर छास। अथवा जितनी छास की रुचि हो उतनी में मिलाय कर पीवै, तो सब प्रकार की रुधिर विकार व्याधी छूट जावै तथा खांसी बवासीर आदि में भी गुण करे ॥१०॥

११ **मुत्रकृछ्र और पथरी की औषधी-अपरिचितः**—एक लाल मिरच मीठा छास में आठ पहर भिजो कर निकाल लेवे फिर उस छास को फेंक और दूसरी छास में पीस कर जितनी छास पीवै की इच्छा हो उतनी में छान कर पीवै, इसी प्रकार दूसरे दिन दो मिरची और तीसरे दिन तीन, ऐसे ही सात दिन तक चढ़ता उतरता जाय। इस समय खट्टा, गुड़, तेल और नोंन को न खाय तो मुत्रकृछ्र और पथरी रोग छुट जाय ॥११॥

१२ **गर्भस्राव की सम्भावित औषधी**—जड़ सहित दूब एक पैसे भर ११ काली मिरचों को पीस छान के ७ सात दिन गर्भाधान के पूर्व और सात दिन गर्भाधान के पश्चात् तथा चौथे महीने में भी ७ दिन पीवै तो गर्भस्रवित न हो ॥१२॥

१३ **काली फुनसी का औषध**—काली फुनसी पर सोने की शलाका का चारों ओर दाह देवै तो वह अच्छा होय ॥१३॥

१४ गर्भस्थिरौषधी—शंखावली को दूध में पका के जब दूध ठंडा हो जावै, तब स्त्री पीव और गर्भ-स्थापन समय स्त्री को शंखावली पीस के सुंगावै तो गर्भस्थित होवै और बडवा पीपल की जटा को पांच दिन तक पीस के पिलावै तो भी गर्भस्थिति हो जाय ।।१४।।

१५ जो सुजाक से सुजाक हो जाता है उसकी परिच्छित्त्यौषधी—सुदर्शन के पत्तों का अर्क निकाल उस की पिचकारी भर लगावै और पत्तों को पीस कर घाव पर लगा देवे तो सात रोज में व्रण सूख जावे और उसी के पत्ते को ६ छः मासे मिश्री के साथ जो षा[खा]वै तो इक्कीस दिन के परंत सुजाक वै फिर कभी नहीं होवै ।।१५।।

१६ तथा द्वितीय—नीबु को लेकर दो फांक बना उन में चावल [भर] फिटकडी पीस कै भर रात कौ औस में रख दे और सात दिन तक चूसने में सुजाक जाता रहै ।।१६।।

१७ प्रमेह का औषध—वंबूल की फली पत्ती गोंद छाल और गूदा सब चीज बराबर ले पीस कर पूर्व रख ले फिर बराबर की मिश्री के साथ मिलाकर तोले १) तोले भर खा ऊपर से ऽ।। आध सेर दूध में ऽ।। आध सेर जल और सक्कर मिला पीवै तो अठारह प्रकार का प्रमेह जाय ।।१७।।

१८ पुनस्तथा—गुलखैर के फूल को पीस सहत मिलाय पानी में छान ठंडाई बना ४१ दिन तक पीवै तो वीर्य पुष्ट हो जाय ।।१८।।

१९ रक्तविकार की औषधी—दो पैसे भर महंदी और मधु मिला पीस के खावै और यत्न से भोजन ऐसी चीजों [का] न करे कि जिनसे रुधिर न वधे, तथा चने की रोटी अरहर की दाल चावल आदि खावै और........सेवन करे तो रक्त विकार जाय ।।१९।।

२० उन्माद की औषधी—दो वैसे भर मुलहटी को सहत में मिला के ७ दिन खाय और दाल चावल कढी आदि खावै तो उन्माद जाता रहै ।।२०।।

२१ उपदंश की औषधी—आँवले दूध वा सहत के साथ १) तोले भर खावै तो उपदंश जाय ।।२१।।

२२ जीर्ण ज्वर की औषधी—खूबकला १) तोला भर रात को पानी में भिगो दे प्रातः काल मिश्री के साथ सर्वत बना कर पीवै और घी न खाय और घी की जगह बादाम का रोगन खावै तो २१ दिन में जीर्ण ज्वर जाय, परन्तु बासा पानी में न्हाता रहै ।।२२।।

२३ पुष्टिकार औषध—ऽ१ सेर भर पियाज के छिलके उतार छोटे २ टुकड़े कर कोरे बर्तन में सहत के साथ भिगोदे फिर १५ दिन तक भूमि में गाड़ दे, निकाल कर पश्चात् तोले १) भर नित्य खावै तो पुष्टि प्राप्त हो जाय ।।२३।।

२४ जमींकन्द के बनाने की रीती—सेर भर जमींकन्द को शुद्ध करकै ऽ= आध पाव अदरख के साथ उबाल मसाले डाल शाक बना ले ।।२४।।

२५ पेट की शूल की औषधी—एकर २ तोले १) भर पीयाज का रस अधरख का रस और सहत इन तीनों को मिला कर दिन में तीन समय पीवै तो शूल रोग जाय ।।२५।।

२६ पसली के दरद की औषध—पुराना महुवा ऽ। पाव भर ले कूट कपड़े में बांध दो घड़ी के पश्चात् पुनः उसी की रोटी बना के ४ प्रहर बंधा रहने दे तो पसली की पीड़ा जाय ।।२६।।

२७ [तथा]—सांभर का सींग घिस कर पसली पर लगा के कंडे से सेक करै तो पसली का दर्द जाता रहै ।।२७।।

२८ आंखों का सुरमा—सुरमे की डली को नीव के वृक्ष में २१ दिन तक रखदे, पुनः निकाल

भंगरे के रस में छोटी इलाईची डाल खूब पीस के रख ले, उस को नेत्रों में लगाने से वर्षों तक की दूखती आँखें शुद्ध हो जाय ॥२८॥

२९ दांतों का मंजन—मौलसिरी की छाल पीसकर प्रातःकाल दंतधावन करै और रोज अपामार्ग का भी दन्तधाव करे तो दांत न हिलै ॥२९॥

३० तथा—माँजूफल मुहलेटी सफेद कत्था[1] रूमी मंस्तगी नीला थोथा पांचों चीजां बराबर ले और नीले थोथे को अंगारों पर खील कर लोहे की कड़ाही में थोड़ा सा जल डाल के बुझा लेवे, पुनः पांचों को पीस और इनके बराबर आक की जड़ की छाल लेकर छवों चीज लोहे की कढाई में लोहे के मूसल से पीसे, जब अंजन के बराबर [महीन] हो जाय तब सीसी में ले रखे। जब दातन करै तब अंगुली से मसोढु पर लगा कर थोड़ी देर ठहरैकर पश्चात् कुरला कपै, दांत पीड़ा हिलने आदि छूट कर दांत दृढ हो जायें ॥३०॥

३१ श्याम केशकारक तेल—पलाश के वृक्ष के नीचे जो बीच की जड़ हो उस को मूसला कहते हैं उसके नीचे खाँडा खुदवाकर आधीजड काट नीचे खाली जगह में एक वर्तन कली कराया हुआ रख दे ऊपर से ढकना लगा इस प्रमाण छेद बीच में रहने दे कि जिस से मूसले की जड़ ठीक बैठ जाय, पुनः उस के चारों ओर मट्टी चुन कर और ऊपर से मट्टी डाल फिर वृक्षों के चारों ओर कंडों की आच लगादे। जितना अर्क उस पात्र में निकल आवै, उतना ही सरसों का कडुआ तेल मिला के कढाई में ओटावै जब तेल आधा रह जाय तब कढ़ाई को उतार कर उस में माजूफल एक १ मासे भर, १) तोले भर लोहे का रेतन और १ मासे भर नीला थोथा, ये सब चीजें पीसकर तेल में मिलाय सीसे में भर के रख दे फिर उस को रात के समय वालों के लगा ऊपर से पान लपेट कै सो जावैं तो प्रातः काल तक श्याम केश हो जांय ॥३१॥

३२ तृतीय[क] ज्वर की औषधी—६ मासे भर फटकड़ी गर्म जल में जब दो (दूसरी ?) पारी का समय आवै तब पीसकर पी जाय और पारीतक भोजन न करै तो तृतीय[क] ज्वर जाय ॥३२॥

३३ दाद की औषधी—गंधक राई राल कच्चा तेलीया सुहागा ये चारों चीज बराबर लेकर पृथक् पृथक् पीसकर चारों को मिला खरल में प्रहर १२ खरल कर्के जब एकजी हो जांय तब बेर के समान गोली करकै सुखा ले। फिर गोली को चिकने पत्थर पर पानी में घिस के दाद को खुजला कर लगादे तो दाद बिलकुल जाता रहै ॥३३॥

३४ बीछू की ओषधी—जब किसी को बीछू काटै तब लून को पीस १ पात्र में रख दें और दूसरे पात्र में जल रखे। अंगुली के अग्र भाग से जल स्पर्श करके उस से पीसा हुआ लून लगा के जहां बीछू काटा हो उस पर फोरे फोरे हाथ से मले। पुनः इसी प्रकार बार धार करने से थोड़ी ही देर में बीछू झट उतर जाता है। जब डंक पर कुछ जलता रहता है उस पर दो पैसे भर लून को थोड़े से जल में घोल के उस में रूई भिजो के डंक पर बांध देवे तो नीद आ जायेगी[2]। और डंक पर से भी पीड़ा मिट जायेगी ॥३४॥

---

१. इस दन्त मञ्जन का निर्देश पूर्ण संख्या ३४८ (पृष्ठ २८५) के पत्र में भी है वहां 'पपरिया' कत्था लिखा है। २. यहां से आगे का लेख श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है और ३४वीं ओषधि के पाठ को स्वहस्त से शोधा है। यह ओषधी पत्र म० मामराजजी से प्राप्त हुआ। मूल पत्र उन के संग्रह में सुरक्षित है। यु० मी०।

[६४]　　　　पत्र (५२३)　　　　[६०१]

ओ३म्

मुन्शी समर्थदान जी आनन्दित रहो[1]।

एक भूमिका का पृष्ठ और ३२० से लेके ३४४ तक तौरेत और जबूर का विषय सत्यार्थप्रकाश का भेजते हैं। सम्भाल लेना। आश्विन वदी ८ सोमवार सम्वत् १९४० को संस्कार विधि के पृष्ठ १ से लेके ४७ तक भेजे हैं[2] पहुंचे होंगे और पहुंचने पर रसीद भेज देना। बाकी तुम्हारे पत्रों के उत्तर वा समाचार पश्चात् लिखेंगे।

मिति आश्विन (वदी) १३ शनि सम्वत् १९४०[3]।

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़

———

[६]　　　　पत्र (५२४)　　　　[६०२]

ओ३म्

श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जी आनन्दित रहो[4]

अब तक सवारी का आपने क्या प्रबन्ध किया? इसका हाल अब तक मैंने कुछ भी नहीं पाया। यदि आप से डाक का बन्दोबस्त न हो सके तो चार सवारी और बढ़ा देनी होंगी। २ साढ़ियें[5], एक बढ़ा रथ कि जिसमें मैं अच्छी तरह बैठ के जासकूं और एक रथ, अथवा हाथी, अथवा जितनी सवारी आती समय थीं उतनी ही होंगी, तब निर्वाह होगा; क्योंकि आज हारद्वार के पास के दो आदमी और आगए हैं। सब की गिनती यह है।

अर्थात् सब सवारी इस प्रकार से करेंगे तो अच्छा होगा। तीन रथ, एक सेजगाड़ी १ दो ऊंट २, और एक हाथी १, अथवा ४ चौथा रथ, एक पहरा जिस में छः जवान और सतवां हवलदार. और दो सवार। इसी प्रकार का पत्र मैंने आप के पास भेजा था[6]। और तीन पत्र गत रविवार के दिन जिन को आज सात दिन हुए कमरदान के हाथ भेजे थे वे भी पहुंचे होंगे, जिन में से एक श्रीमान् जोधपुराधीश, दूसरा महाराजे प्रतापसिंह जी और तीसरा आप के पास। यह इस लिए आप को चिताया था कि आप सहज में प्रबन्ध करलें। और जब मुन्शी दामोदरदास आवे तब इन का प्रबन्ध सब करा दीजिये। और कल ४ बजे सन्ध्या के मेरे पास उपरिलिखित सवारी आदि आजायें कि जिन को मैं देख लूं, पश्चात् विदित किया जाय। क्योंकि परसों यहां से यात्रा अवश्य होगी।

१. आर्यधर्मेन्द्रजीवन से लिया। मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में होगा।
२. देखो पूर्ण संख्या ५९० का पत्र यु० मी०।
३. २९ सितम्बर १८८३।
४. मूल पत्र रावराजा तेजसिंह के पास जोधपुर में था।
५. अर्थात् सवारी का ऊंट।
६. देखो पूर्ण संख्या ५९८ का पत्र।

और यह पत्र महाराजे प्रतापसिंह जी को भी सुना दीजिए। अलमतिविस्तरेण माननीयवरेषु ॥

मिती आश्विन वदी १३ शनी सं० १९४०।[1]

दयानन्द सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़

---

[६] पत्रांश (५२५) [६०३]

पं० छगनलाल द्विवेदी मसूदा··· ··· ···

·································

आश्विन वदी १३ को[2] वर्षा बहुत [हुई]। इस कारण अभी ८-७ दिन नहीं आना होगा। और आने के पहले सूचना की जायगी।[3]

[संभवतः ३० सितम्बर=आश्विन वदी १४]

---

[२१] पत्रांश (५२६) [६०४]

[कमलनयन मन्त्री आर्यस० अजमेर][4]

रजिस्ट्री चिट्ठी के विषय में।

१ अक्तूबर १८८३ जोधपुर[5]

दयानन्द सरस्वती

---

१. २६ सितम्बर १८८३।

२. २६ सितम्बर १८८३।

३. पं० छगनलाल के आश्विन सुदी ४, संवत् १९४० अर्थात् ५ अक्तूबर सन् १८८३ के पत्र में निर्दिष्ट। [यह पत्र पं० चमूपति जी सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ ६८ पर छपा है।]

४. देशहि० के रजिस्टर से।

५. आश्विन वदी ३० सोम सं० १९४०।

[१] **मनिआर्डर फार्मांश** [६०५]

ऋषि दयानन्द सरस्वती के अन्तिम हस्ताक्षर[२]

Acknowledgment.

No. 307 Date 9/10/ 1883.

For Rs. 13 As. 6

SIGNALURE OF THE PAYEE } दयानन्द सरस्वती

Date of delivery ता० ११ अक्तूबर 188 [3]

THIS ACKNOWLEDGMETT WILL BE SIGNED EIGTHER BY THE PAYEE OR F THE OFFICE OF DELIVERY, AND WILL BE REтURNED TO THE RECFIPT FOR MONEQ PAID BUT AN OWLEDGMET ONEY ORDER OBTAINED THE

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य-वैदिकधर्मपुनःसंस्थापक-वेदोद्धारकआर्षग्रन्थप्रचारक-नवभारतनिर्मातॄणां
परमराजनीतिज्ञ-सहिष्णुप्रवरश्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिनां प्रशिष्येण
श्रीयोगि—लक्ष्मणानन्दस्वामिनां शिष्येण
अमृतसरवास्तव्यश्रीचन्दनलालात्मजेन
इतिहासविद्भगवद्दत्तेन
खतौलीनिवासिस्त्रीयशिष्यमामराजसहायेन संगृह्य
सम्पादितः
[युधिष्ठिरमीमांसकेन परिबृंहितश्च]
ऋषिदयानन्दसरस्वतीपत्रविज्ञापनादिसंग्रहः
समाप्तः

१. मनिआर्डर फार्म का यह टुकड़ा महाशय मामराज जी ने रायबहादुर पं० सुन्दरलाल जी (पोस्ट मास्टर जनरल) प्रबन्धकर्ता वैदिक यन्त्रालय के पुत्र पं० देवीप्रसाद जी दीक्षित आगरे वालों से ता० २५ अप्रैल सन् १९२७ को बड़े यत्न से प्राप्त किया था । इस टुकड़े का ब्लाक चित्र पं० घासीराम एम. ए. सम्पादित ऋषि के जीवनचरित में लगवा दिया गया था ।

२. ऋषि के उपरोक्त हस्ताक्षर मनिआर्डर फार्म के टुकड़े पर हैं । यह मनिआर्डर उनके शिष्य स्वामी ईश्वरानन्द सरस्वती ने नगर पानीपत से पुस्तकों के लिए जोधपुर भेजा था। देखो म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० २६ ।

* परिशिष्ट (१) *

[मूल ग्रन्थ मुद्रण के अनन्तर संगृहीत पत्र-विज्ञापन-पारसल सूचना आदि]

[संग्रहीता-युधिष्ठिर मीमांसक]

[१] आ कृष्णेन (यजु० ३३।४३) का अर्थ[1] [६०६]

(आकृष्णेन) आकर्षणात्मना (रजसा) रजोरूपेण रजतस्वरूपेण वा (रथेन) रमणीयेन (देवः) द्योतनात्मकः (सविता) प्रसवकर्त्ता वृष्ट्यादेः (मर्त्यम्) मर्त्यलोकम् (अमृतम्) औषध्यादिरसं (निवेशयन्) प्रवेशयन (भुवनानि पश्यन्) दर्शयन् (याति) रूपादिकं विभक्तं प्रापयतीत्यर्थः (हिरण्ययेन) ज्योतिर्मयेन ।

(सविता) सर्वस्य जगत उत्पादकः (देवः) सर्वस्य प्रकाशकः (मर्त्यम्) मर्त्यलोकस्थान मनुष्यान् (अमृतम्) सत्योपदेशरूपं (निवेशयन्) प्रवेशयन् सर्वाणि (भुवनानि) सर्वज्ञतया (पश्यन्) सन् (आकृष्णेन) सर्वस्याकर्षणस्वरूपेण परमाणूनां धारणेन वा (रथेन) रमणीयेनानन्दस्वरूपेण वर्तमानः सन् (याति) धर्मात्मनः स्वान् भक्तान् सकामान् प्रापयतीत्यर्थः ।

सं० १९३१ पौष वदी षष्ठी[2] बुधवार, ७ काल (घण्टा) ४० मिनट[3] सही सम्मतिरत्र दयानन्द-सरस्वतीस्वामिनः[4] ।

[१] आक्षेप खण्डन सूचना [६०७]

विष्णु शास्त्री के आक्षेप का खण्डन ।[5]

---

१. यह मन्त्रव्याख्या पं० देवेन्द्रनाथजी संकलित जीवनचरित्र पृ० ३२३ पर छपी है ।

२. यह गुजराती पंचांगानुसार है । उत्तरभारतीय पंचाङ्गानुसार माघ वदी ६, तदनुसार २७ जनवरी १८७५ ।

३. यह समय सायंकाल का है ।

४. इस मन्त्रार्थ का संकेत पूर्ण संख्या १४ के पत्र (पृष्ठ २६ पं० २) में इस प्रकार है—"आकृष्णेनेति, मन्त्र के अर्थ, हमारा उन के पर निश्चय के अर्थ पत्र भेजा होगा ।" इसे **पूर्ण संख्या १३ के आगे** जोड़ें ।

५. इस का निर्देश पूर्ण संख्या १४ के पत्र (पृष्ठ २६ पं० १३) में है—इस का "खण्डन सभा में हमने सब को सुना दिया तथा **लिख भी दिया**", तथा पूर्ण संख्या १५ के पत्र (पृष्ठ २७ पं० ३) में भी—"उस का

[१] पत्र-सूचना (५२७) [६०८]

[पञ्जाब गवर्नमेन्ट-लाहौर][1]

सरकार धन से [मेरे वेदभाष्य की] सहायता करे और वह सरकारी कालेजों में पढ़ाया जावे।

१२ मई १८७७ [ज्येष्ठ कृष्ण १४ सं १९३४]

---

[१३] पारसल-सूचना[2] (३) [६०९]

[पं० गोपालराव हरि देशमुख]

वेदभाष्य का नमूना[3]

२८ नवम्बर १८७७ [मार्गशीर्ष कृष्ण ८ सं० १९३४]

---

[१४] पत्र-सूचना (५२८) [६१०]

[पं० गोपालराव हरि देशमुख][4]

१२ दिसम्बर १८७७ [मार्ग० शु० ७ बुधवार १९३४]

---

[२२] पारसल-सूचना (४) [६११]

[बाबू माधोलाल जी दानापुर]

आर्यसमाज के दस नियमों की दो प्रतियां।[5]

३१ मार्च १८७८ [चैत्र कृष्ण १३ सं० १९३४]

---

[२३] पारसल-सूचना (५) [६१२]

[बाबू माधोलाल जी दानापुर]

आर्यसमाज के उपनियमों की एक प्रति।[6]

१ अप्रैल १८७८ [चैत्र कृष्ण १४ सं० १९३४]

प्रत्युत्तर करके उसके पास भेजा था, परन्तु उसने नहीं छापा", मिलता है। यतः इसका उल्लेख पूर्ण संख्या १४ में है, अतः इसे **पूर्ण संख्या १३ से आगे** जोड़े गये पूर्ण संख्या ६०६ से आगे जोड़ें।

१. इसकी सूचना श्री पं० देवेन्द्रनाथ संकलित जीवन चरित्र पृष्ठ ४१४ में तथा इसी ग्रन्थ के पृष्ठ ५४ की टिप्पणी की अन्तिम पंक्ति तथा पृष्ठ ५५ की टिप्पणी की पंक्ति १, २ में है। इसे **पूर्ण संख्या ३९ से आगे** जोड़ें।

२. यहां पारसल शब्द से पारसल पैकेट बुक पोस्ट आदि सब का सामान्य ग्रहण समझना चाहिये।

३. इस का उल्लेख पूर्ण संख्या ५४ के प्रारम्भ में है। इसे **पूर्ण संख्या ५४ के आगे** जोड़ें।

४. इस पत्र की सूचना पूर्ण संख्या ५६ में है। इसे **पूर्ण संख्या ५५ से आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना पूर्ण संख्या ७७ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ७६ के आगे** जोड़ें।

६. इस की सूचना पूर्ण संख्या ७७ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ७७ के आगे** जोड़ें।

[१३] **पत्र-सारांश (५२९)** [६१३]

[पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा]

[विदेश जाने से पूर्व] जो हमारे पास रह कर वेद और शास्त्र के मुख्य मुख्य विषय देख लेते तो अच्छा होता।[१]

पत्र-सूचना (५३०, ५३१) [६१४, ६१५]

दो पत्र इङ्गलैण्ड भेजे गये।[२]

---

[२०] **पत्रांश (५३२)** [६१६]

[ला० मूलराज जी एम० ए०]

अमरीका वाले बराबर वेद को मानते हैं और उसकी शिक्षा के इच्छुक हैं।[३]

२७ जुलाई १८७८ [श्रा० व० १३ सं० १९३५]

---

[२१] **पारसल-सूचना (६)** [६१७]

[लाला मूलराज जी एम० ए०]

अमरीका की चिट्ठियां भेजी गईं।[४]

४ अगस्त १८७८[४] [श्रा० शु० ६ सं०१९३५]

---

[१] **पत्र-सारांश (५३३)** [६१८]

[ठाकुर मुकुन्दसिंह जी]

जो रुपया तुम्हारे पास है, वह हमारे पास भेज दो।[५]

---

१. इस का निर्देश पूर्ण संख्या ८२ के पत्र में है इसे **पूर्ण संख्या ७९ के आगे** जोड़ें। इस विषय का उल्लेख ऋषि दयानन्द ने पूर्ण संख्या ३६ के पं० गोपालराव हरि देशमुख के पत्र में भी किया है।

२. इन की सूचना इसी ग्रन्थ के पृष्ठ १०१ पंक्ति ३० में है। ये दोनों पत्र किस को लिखे गये, यह अज्ञात है। इन्हें **पूर्ण संख्या ८५ के आगे** जोड़ें।

३. यह पत्रांश और तारीख श्री पं० घासीराम जी सम्पा० जीवन चरित पृष्ठ ७६६ में उद्धृत है। इसे **पूर्ण संख्या ८६ के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना और तारीख का निर्देश पूर्ण संख्या ८८ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ८७ के आगे** जोड़ें।

५. यह आशय पूर्ण संख्या ८६ के पत्र में उल्लिखित है। वहां 'कई बार लिख चुके' ऐसा निर्देश है। उन में से एक पत्र की सूचना यहां बना कर दी है। तिथि का यत्किंचित् संकेत नहीं है। पुनरपि हमारे विचार में इसे **पूर्ण संख्या ८८ के आगे** जोड़ना उचित होगा।

[२४] **रसीद (३)** [६१९]

[बाबू माधोलाल जी, दानापुर]

१०।≈)।। दस रुपये साढ़े छ आने प्राप्त हुए।[१]

---

[६] **पत्र-सारांश (५३४)** [६२०]

[बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणि बम्बई]

दो वेदभाष्यभूमिका बाबू माधोलाल दानापुर के पास भेज दो।[२]

१३ सितम्बर १८७८[१] [आश्विन कृ० २ सं० १९३५]

---

[७] **पत्र-सारांश (५३५)** [६२१]

[प्रबन्धक वेदभाष्य कार्यालय बम्बई]

७ ऋग्वेद और ६ यजुर्वेद रामाधार वाजपेयी लखनऊ को भेज दो।[३]

[८,९] **पत्र-सारांश (५३६, ५३७)** [६२२, ६२३]

[बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणि बम्बई]

पं० श्याम जी कृष्ण वर्मा को वेदभाष्य का काम सौंप दो।[४]

---

[९] **पत्र-सारांश (५३८)** [६२४]

[श्री कर्नैल आलकाट साहब]

यहां आर्यावर्त में भी बहुत से मनुष्य आर्यसमाज के नियमों को स्वीकार नहीं करते, थोड़े से करते हैं, तो वहां [अमरीका में] वैसी बात होने में क्या आश्चर्य है। इसलिये जो मनुष्य अपनी प्रसन्नता से आर्यसमाज के नियमों को मानें वे वेद मतानुयायी और जो न मानें वे केवल सोसाइटी के सभासद रहें। उन का अलग हो जाना अच्छा नहीं।[५]

---

१. इस की सूचना पूर्ण संख्या १०२ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या १०१ के आगे** जोड़ें।

२. यह आशय हम ने पूर्ण संख्या १०२ के अनुसार बनाया है। तारीख का निर्देश भी इसी पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या १०१ के आगे** जोड़ी गई रसीद (पूर्ण संख्या ६१९) से आगे जोड़ें।

३. यह सारांश पूर्ण संख्या ११६ तथा १२१ के आधार पर बनाया है। इसे **पूर्ण संख्या ११५ के आगे** जोड़ें।

४. पूर्ण संख्या १२५ के पत्र में २७ अक्तूबर १८७८ से पूर्व पं० श्यामजी को वेदभाष्य का काम सौंपने के लिये ३ चिट्ठियां लिखने का निर्देश है। उन में से १ चिट्ठी ता० २२ अक्तूबर को लिखी गई। देखो पूर्ण संख्या ११८, ११९ पृष्ठ ११५ टि० १। शेष दो पत्रों की तिथियां अज्ञात हैं। उन्हें **पूर्ण संख्या ११८ से पूर्व** ही कहीं जोड़ना युक्त होगा।

५. यह सारांश पूर्ण संख्या २५६ के विज्ञापन (पृष्ठ २०६ पं० २८ से पृष्ठ २०७ पं० ३ तक) में

[१९] पत्र-सारांश (५३९) [६२५]

[पं० गोपालराव हरि देशमुख]

बम्बई जाकर अपने सामने हरिश्चन्द्र चिन्तामणि से वेदभाष्य का सब काम पं० श्याम जी कृष्णवर्मा को सौंपवा दो।[1]

२० नवम्बर (या उस से पूर्व) १८७८।

---

[२०] पारसल-सूचना (७) [६२६]

[पं० श्याम जी कृष्ण वर्मा बम्बई]

जिन ग्राहकों ने चन्दा नहीं दिया उनका सूचीपत्र।[2]

२० नवम्बर ७८

---

[२१] पत्र-सारांश (५४०) [६२७]

[पं० श्याम जी कृष्ण वर्मा बम्बई]

वेदभाष्य का चौथा अंक क्यों नहीं निकला।[3]

---

[१] पत्र-सूचना (५४१) [६२८]

[पीटर डैविडसन स्काटलैण्ड][4]

निर्दिष्ट है। बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने यह पत्र कर्नैल आलकाट को न्यूयार्क नहीं भेजा, यह भी पृष्ठ २०७ पं० ४, ५ से व्यक्त है। यह पत्र सम्भवतः अक्टूबर १८७८ के अन्त में भेजा गया था। इसे **पूर्ण संख्या १२८ के गे** जोड़ें।

१. वह आशय हमने पूर्ण संख्या १३४ के आधार पर बनाया है। इसे **पूर्ण संख्या १३३ के अनन्तर** जोड़ें।

२. इस सूचीपत्र के भेजने का निर्देश पूर्ण संख्या १३४ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या १३४ के आगे** जोड़ें।

३. इस आशय के पत्र की सूचना पूर्ण संख्या १३८ के पत्र में है। इस से पूर्व का जो पत्र उपलब्ध है, वह ११ सितम्बर १८७८ का है (पू० सं० १३५)। यह इस के अनन्तर लिखा गया था। इसे **पूर्ण संख्या १३७ के आगे** जोड़ें।

४. इस पत्र की सूचना पूर्ण संख्या १७९ के पत्र में है। यह पत्र अंग्रेजी में लिखा गया था। इसे पूर्ण संख्या १७९ के आगे जोड़ें।

[४] **पत्र-सारांश (५४२)** [६२९]

[केशवलाल निर्भयराम सूरत]

संस्कारविधि का हिसाब ठीक नहीं।[१]

———

[१] **जन्मचरित्र** [६३०]

मैनेजर वेदभाष्य बम्बई को भेजा।[२]

२७ अगस्त १८७९

———

[२९] **पत्र-सारांश (५४३)** [६३१]

[बाबू माधोलाल जी दानापुर]

हम हरिहर क्षेत्र के मेले में जावेंगे, डेरे आदि का प्रबन्ध करना।[३]

शाहजहांपुर।

———

[३७] **विज्ञापन-सूचना** [६३२]

[दानापुर में पहुंचने और व्याख्यान देने के सम्बन्ध में][४]

———

[३८] **विज्ञापन-सूचना** [६३३]

[बंगाली टोला (काशी) स्कूल में २० दिसम्बर १८७९ को व्याख्यान देने के सम्बन्ध में।][५]

———

[१०] **पत्र-सारांश (५४४)** [६३४]

[करनैल आलकाट, मैडम ब्लेवेस्तकी]

मैं सिवाय वेदोक्त सनातन आर्यावर्तीय धर्म के अन्य सुसाइटी समाज वा सभा के नियमों को न स्वीकार करता था, न करता हूँ, न करूंगा। क्योंकि यह बात मेरे आत्मा की दृढ़तर है, शरीर प्राण भी जायें तो भी इस धर्म से विरुद्ध कभी नहीं हो सकता।

---

१. इस आशय के पत्र की सूचना १६ मार्च १८८० के पत्र (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २८७) में है। वहां इसे ८ मास पूर्व का कहा है। अगले ५ अप्रेल के पत्र (वही, पृष्ठ २८७) में १० मास पीछे पत्र आना लिखा है। अतः सम्भव है यह अगस्त १८७६ में लिखा गया होगा। इसे पूर्ण संख्या १८१ के आगे जोड़ें।

२. इस का उल्लेख पूर्ण संख्या १८३ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या १८३ के आगे** जोड़ें।

३. इस पत्र का संकेत मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४२७ पर छपे बिना तिथि के पत्र में है। उक्त पत्रानुसार यह पत्र शाहजहांपुर से भेजा गया था। अतः इसे **पूर्ण संख्या १८९ के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पूर्ण संख्या १९३ के पत्र में है। उस में लिखा है—"विज्ञापन तुमने छपवा लेना, नमूना भेजते है।" इसे **पूर्ण संख्या १९३ के आगे** जोड़ें।

५. इस विज्ञापन की सूचना पं० घासीराम जी सम्पादित जीवन चरित पृष्ठ ५९४ में उपलब्ध होती है। इसे **पूर्ण संख्या २०६ के आगे** जोड़ें।

मेरा नाम आप ने अपनी इच्छा से जहां कहीं [थियोसोफिकल सोसाइटी के] सभासदों में लिखा हो काट दीजिये।[1]

---

[११] **तार आशय (४)** [६३५]

[करनैल आलकाट]

जैसा हमने प्रथम वैदिक धर्म उपदेशक लिखा था वैसा लिखो।[2]

---

[३९] **विज्ञापन-सूचना** [६३६]

[वैदिक यन्त्रालय सम्बन्धी][3]

---

[४०] **विज्ञापन-सूचना** [६३७]

[काशी से वैशाख कृष्ण ११ सं० १९३७[4] को चले जाने के सम्बन्ध में][5]

---

१. ये दोनों भाग पूर्ण संख्या २६६ के पत्र में (पृष्ठ २५६ पर) पृथक् पृथक् स्थानों में उद्धृत हैं। ये दोनों अंश एक ही पत्र के हैं या भिन्न भिन्न के, यह अज्ञात हैं। हमारे विचार में ये अंश एक ही पत्र के हैं। यह पत्र काशी से बम्बई को लिखा गया था। पूर्ण संख्या ४०० के विज्ञापन (पृष्ठ ३२०) में भी इस पत्र का संकेत है। इसे **पूर्ण संख्या २१६ के आगे** जोड़ें।

२. करनैल आलकाट आदि ने श्री स्वामी जी महाराज का नाम विना स्वीकृति के ही थियोसोफिकल सोसाइटी के सभासदों में लिख लिया था। जब श्री स्वामी जी महाराज ने इस के विरोध में कड़ा पत्र लिखा 'जहां हमारा नाम लिखा हो वहां से शीघ्र निकाल दो' (इस का संकेत पूर्ण संख्या ६३४ के पत्र की ओर है)। तब करनैल आलकाट ने तार द्वारा पूछा कि हम आप के लिये क्या लिखें। उस के उत्तर में ऊपर वाला तार दिया गया। देखो पूर्ण संख्या ४०० का विज्ञापन, पृष्ठ ३२०। इसे **पूर्ण संख्या २२१ के आगे** जोड़ें।

३. इसकी सूचना पूर्णसंख्या २२२ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २२१ के आगे जोड़े गये तार (पूर्ण संख्या ६३५) के आगे** जोड़ें। वेदभाष्य और वैदिक यन्त्रालय नाम बदलाने के सम्बन्ध में एक विज्ञापन यजुर्वेदभाष्य अंक १३ के अन्त में छपा है, वह इस प्रकार है—

"(१) सब सज्जनों को विदित हो कि मुंबई में १३ अंक तक छपने का था सो छप चुका, अब पीछे सब काम काशी अर्थात् बनारस में रहेगा। १२वें अंक में काशी के यन्त्रालय का नाम "आर्य प्रकाश" छपा था उस के बदले "वैदिक" यन्त्रालय नाम रक्खा गया है। इसलिये अब पीछे वेद सम्बन्धी पत्रव्यवहार मुम्बई और बाहर के सब लोगों को मुनशी बख्तावरसिंह जी प्रबन्धकर्ता "वैदिक" यन्त्रालय काशी से करना चाहिये। मुम्बई से इस का कुछ काम नहीं।"

पूर्ण संख्या २२२ में निर्दिष्ट विज्ञापन यहीं है या अन्य, यह अज्ञात है। इस विज्ञापन से यह स्पष्ट है कि ऋषि ने जो प्रेस चालू किया था उस का नाम " वैदिक " इतना ही था (दो बार वैदिक पद को विशिष्ट निर्देशक चिह्नों " " के मध्य में छापा है)। यन्त्रालय पद तो प्रेस का पर्यायवाची है।

४. ता० ५ मई सन् १८८०।

५. इस विज्ञापन की सूचना श्री पं० घासीराम जी सम्पा० जीवन चरित पृष्ठ ६०६ में है। इसे **पूर्ण संख्या २३० के आगे** जोड़ें।

[४,५] पत्र-सूचना (५४५,५४६) [६३८,६३९]

[ज्वालादत्त को बुलाने के विषय में दो पत्र][1]

———

[३१] पत्र-सूचना (५४७) [६४०]

[मुंशी बख्तावरसिंह काशी][2]

वैशाख कृष्ण १४ सं० १९३७ [८ मई १८८०]।

———

[३२] पत्र-सारांश (५४८) [६४१]

[मुंशी बख्तावरसिंह काशी]

पं० रामाधार वाजपेयी (लखनऊ) के पास जो जो पुस्तकें वे लिखें, भेज दिया करो।[3]

———

[३३] पारसल-सूचना (८) [६४२]

[मुंशी बख्तावरसिंह काशी]

राजा शिवप्रसाद का उत्तर=भ्रमोच्छेदन पुस्तक भेजा।[4]

आषाढ़ कृ० २ सं० १९३७।

———

[८] पत्र-सारांश (५४९) [६४३]

[पं० सुन्दरलाल जी, प्रयाग]

२५०) रु० छपने की भूल अगले अंक में ठीक कर दी जायेगी।[5]

———

१. आर्यसमाज फर्रुखाबाद के १७-५-१८८० के पत्र में ज्वालादत्त को बुलाने के लिए ३ तीन पत्र पहुँचने का उल्लेख है (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३६५, ३६६) तीन में से एक सूचना हम पूर्ण संख्या २३८ पर छाप चुके हैं। उसी के आस पास दो पत्रों की सूचना और जोड़नी चाहिये।

२. इस पत्र और तिथि की सूचना पूर्ण संख्या २३२ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २३२ के आगे** जोड़ें।

३. इस आशय की सूचना पूर्ण संख्या २३६ के पत्र में है। लखनऊ से भेजा हुआ जो पत्र पूर्ण संख्या २३३ पर छपा है, उस में यह उल्लेख नहीं है। संख्या २३३ के पत्र में वैशाख कृष्ण १४ को एक पत्र भेजने का उल्लेख है। सम्भव है उस में यह उल्लेख हो, या यह पत्र वै० कृ० १४ से पूर्व किसी दिन लिखा गया हो। इसे पूर्ण संख्या **२३२ के आगे जोड़े गये (पूर्ण संख्या ६४०) पत्र से आगे** जोड़ें।

४. इस रजिस्टर्ड पारसल के भेजने का तथा तिथि का उल्लेख पूर्ण संख्या २३७ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २३७ के आगे** जोड़ें।

५. इस आशय के पत्र की सूचना पूर्ण संख्या २४७ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २४७ के आगे** जोड़ें।

[३४] **पारसल-सूचना (९)** [६४४]

[मुंशी बख्तावरसिंह, काशी]

ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के पत्रों का पारसल।[1]

आषाढ़ सुदी १२, सोमवार सं० १९३७।

---

[१] **पत्र-सूचना (५५०)** [६४५]

फर्रुखाबाद को।[2]

---

[३५] **पारसल-सूचना (१०)** [६४६]

[मुन्शी बख्तावरसिंह, काशी]

ऋग्वेद और यजुर्वेदभाष्य के पत्रों का पारसल।[3]

सम्भवतः श्रावण वदी २ सं० १९३७।

---

[१] **पत्र-सूचना (५५१)** [६४७]

....................................।

कुजरांवाले पत्र का उत्तर।[4]

---

[३६] **पारसल-सूचना (११)** [६४८]

[मुन्शी बख्तावरसिंह, काशी]

ऋग्वेदभाष्य के पत्रे ३०८—३२३, यजुर्वेदभाष्य के ३०६—३२० तक।[5]

श्रावण वदी २ सं० १९३७ [२४ जुलाई १८८०]

[३७,३८] **पत्र-सारांश (५५२,५५३)** [६४९,६५०]

[मुन्शी बख्तावरसिंह, काशी]

अनाथ के पालन अर्थात् लावारस के लिये ५०० सौ रुपैये बाबू दुर्गाप्रसाद जी ने दिये। १०) हम ने।[6]

---

१. इस पारसल और तिथि का उल्लेख पूर्ण संख्या २४८ के पत्र में है। इसे पूर्ण संख्या **२४७ के आगे जोड़े गये (पूर्ण संख्या ६४३) पत्र के आगे** जोड़ें।

२. यह पत्र किस को तथा किस कार्य के लिए लिखा गया, यह अज्ञात है। इस की सूचना पूर्ण संख्या २५१ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २५० के आगे** जोड़ें।

३. इस पारसल तथा तिथि की सूचना पूर्ण संख्या २५१ में है। इसे **पू० सं० २५१ के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पूर्ण संख्या २५३ में है। इसे **पूर्ण संख्या २५२ से आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना पूर्ण संख्या २५३ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २५३ के आगे** जोड़ें।

६. पूर्ण संख्या २६० के अन्त में 'हम ये बात तीन बखत लिख चुके हैं' ऐसा उल्लेख है एक पत्र पूर्ण संख्या २५१ पर छपा है। वह प्रथम पत्र प्रतीत होता है। अगले दो पत्र प्राप्त नहीं हो सके। इन्हें **पूर्ण संख्या २५४ के आस पास** जोड़ें।

[३९] **पत्र-सारांश (५५४)** [६५१]

[मुन्शी बख्तावरसिंह, काशी]

ठाकुर बलवन्तसिंह जिला बुलन्दशहर परगणे शिकारपुर ग्राम चन्दोख वाले के २५) बाबत वेदभाष्य के हमारे पास जमा हुए।[१]

———

[२२] **पत्र-सूचना (५५५)** [६५२]

[लाला मूलराज जी]

मुन्शी इन्द्रमणि सम्बन्धी उर्दू पत्र अंग्रेजी अनुवाद के लिये।[२]

———

[१६,१७] **पत्र-सूचना (५५६,५५७)** [६५३,६५४]

[गोपालराव हरिदेशमुख][३]

[गोविन्द रानडे][३]

———

[८] **पत्र-सूचना (५५८)** [६५५]

[स्वामी कृपाराम जी]

पत्र का उत्तर।[४]

———

[२] **पत्र-सूचना (५५२)** [६५६]

[बलदेवसिंह][५]

———

१. इस आशय वाले पत्र का उल्लेख पूर्ण संख्या २६१ के पत्र में है। वहां लिखा है—'...... जमा हुए इस का हाल पिछले पत्र में लिख चुके हैं।' इस से पूर्व का जो पत्र पूर्ण संख्या २६० पर छपा है वह श्रा० वदी ३० सं० १९३७ (५ अगस्त १८८०) का है, उस में यह प्रसङ्ग नहीं है। अतः यह कोई दूसरा पत्र रहा होगा। इसे **पूर्ण संख्या २६० के आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना पूर्ण संख्या २६२ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २६० के आगे जोड़े गये (पूर्ण संख्या ६५१) पत्र से आगे** जोड़ें।

३. इन दोनों पत्रों की सूचना मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २४७ में हैं। ये संभवत: स्वीकारपत्र (वसीयतनामे) के सम्बन्ध में रहे होंगे (१६ अगस्त १८८० को रजिस्ट्री कराये स्वीकारपत्र पूर्ण संख्या २६४ में इन दोनों महानुभावों का नाम है।) इन दोनों पत्रों के उत्तर देने की सूचना वहीं पृष्ठ २४६ में है। इन्हें **पूर्ण संख्या २६६ के आगे जोड़ना** चाहिये।

४. इस पत्र की सूचना पूर्ण संख्या २७० के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २६९ से आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना पूर्ण संख्या २७० के पत्र में है। यह पत्र श्री स्वामी कृपाराम जी के पूर्ण संख्या ६५५ के पत्र के साथ भेजा गया था, यह भी पू० सं० २७० के पत्र से ही व्यक्त है। इसे **पूर्ण संख्या २६९ से आगे जोड़े गये (पूर्ण संख्या ६५५) पत्र से आगे** जोड़ें।

[४०] **पारसल-सूचना (१२)** [६५७]

[मुन्शी बख्तावरसिंह, काशी]

वसीयतनामा भेजा।[1]

भाद्र सुदी १२ सं० १९३७ [१५ सितम्बर १८८०]

---

[४१] **पत्र-सूचना (५६०)** [६५८]

[मुन्शी बख्तावरसिंह, काशी]

पं० श्यामजी कृष्णवर्मा के पास आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय इङ्गलैण्ड पुस्तकें भेजने के विषय में।[2]

---

[२३] **पारसल-सूचना (१३)** [६५९]

[लाला मूलराज जी]

वसीयतनामे का।[3]

---

[७] **पारसल-सूचना (१४)** [६६०]

[पं० भीमसेन (?) काशी]

वेदभाष्य के पत्रे (?)[4]

---

[८] **पारसल-सूचना (१५)** [६६१]

[पं० भीमसेन (?) काशी]

यजुर्वेदभाष्य के २० पृष्ठ।[5]

---

१. वसीयतनामा भेजने का तथा उक्त तिथि का उल्लेख पूर्ण संख्या २७८ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २७७ के आगे** जोड़ें।

२. इस पत्र की सूचना पूर्ण संख्या २७६ के पत्र के अन्त में है। इसे **पूर्ण संख्या २७८ के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना पूर्ण संख्या २८१ के पत्र में है। मुन्शी बख्तावरसिंह को वसीयतनामा भाद्र सुदी १२ सं० १९३७ (१५ दिस० १८८०) को भेजा था (देखो पू० सं० २७७)। सम्भव है लाला मूलराज को भी उसी के आस पास भेजा गया होगा। अतः इसे **पूर्ण संख्या २७८ के आगे जोड़े गये (पू० सं० ६५८) पत्र के आगे** जोड़ें।

४. पूर्ण संख्या २८२ के पत्र में रजिस्ट्री भेजने का उल्लेख है। यहां पाठ त्रुटित है। हमने वेदभाष्य के पत्रे भेजने का अनुमान किया है। यह पारसल मुन्शी बख्तावरसिंह के नाम भी भेजा जा सकता है। इसे **पूर्ण संख्या २८१ के आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना पूर्ण संख्या २८२ के पत्र में है। यह सम्भवत: आश्विन शु० १ सं० १९३७ (५ अक्टू० १८८०) को या उस के एक दो दिन पीछे भेजा गया होगा। इसे **पूर्ण संख्या २८२ के आगे** जोड़ें।

[६] **पत्र-सूचना (५६१)** [६६२]

[लाला रामशरणदासजी, मेरठ]

वैदिक यन्त्रालय काशी के कार्य की सहायता के लिये किसी पुरुष को भेजने के विषय में।[१]

———

[२६] **पत्र-सूचना (५६२)** [६६३]

[लाला कालीचरण रामचरणजी फर्रुखाबाद]

वैदिक यन्त्रालय काशी के कार्य की सहायता के लिये किसी पुरुष को भेजने के विषय में।[२]

———

[६] **पत्र-सूचना (५६३)** [६६४]

[सेठ निर्भयराम जी, फर्रुखाबाद]

रुपयों के हिसाब के विषय में।[३]

———

[७] **पत्र-सारांश (५६४)** [६६५]

[लाला रामशरणदासजी मेरठ]

मुन्शी बख्तावरसिंह के हिसाब के पत्र काशी भेज दो।[४]

———

[८] **पत्र-सारांश (५६५)** [६६६]

[लाला रामशरणदास जी, मेरठ]

इस समय इस (=हिसाब की) बात के होने से कार्य में विघ्न होगा, कार्य होने दीजिये और ६००) रु० जो मांगते है, दे दीजिये।[५]

———

१. इस की सूचना पूर्ण संख्या २८४ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २८३ के आगे** जोड़ें। यद्यपि पूर्ण संख्या २८४ में केवल मेरठ पत्र भेजने का उल्लेख है तथापि पू० सं० २८७ में काशी आदमी भेजने का भी उल्लेख है। हमने दोनों पत्रों को मिला कर उक्त विषय बनाया है।

२. इस पत्र के फर्रुखाबाद भेजने की सूचना पूर्ण संख्या २८४ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २८३ के आगे जोड़े गये (पू० सं० ६६२) पत्र के आगे** जोड़ें। अगले पूर्ण संख्या २८६ के लाला कालीचरण के पत्र में काशी भेजे गये व्यक्ति के सम्बन्ध में उल्लेख है। अतः यह पत्र लाला कालीचरण को ही भेजा गया होगा।

३. इस की सूचना पूर्ण संख्या २८४ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २८३ के आगे जोड़े गये (पू० सं० ६६२ ६६३) पत्र के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पूर्ण संख्या ३१६ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या २८६ के आगे** जोड़ें। विशेष देखो पृष्ठ २६५ की टि० २ का कोष्ठान्तर्गत परिवर्धित पाठ (संशोधन पत्र में)।

५. यह सारांश पूर्ण संख्या ४६८ के पत्र में (पृष्ठ ३८० पर) उद्धृत है। यह पत्र १७ अक्टूबर से २१ नवम्बर के मध्य किसी तारीख को लिखा गया होगा। इसे **पूर्ण संख्या २९१ से आगे** जोड़ें।

[६] **पत्र-सारांश (५६६)** [६६७]

[लाला श्यामसुन्दरदास जी रईस, मुरादाबाद]

मुन्शी [इन्द्रमणि] जी से हिसाब लेकर लाला रामशरणदास जी के पास भिजवा दीजिये।[1]

———

[७,८] **पत्र-सूचना (५६७, ५६८)** [६६८,६६९]

[सेवकलाल कृष्णदास][2]

———

[९] **पत्र-सारांश (५६९]** [६७०]

[पं० ज्वालादत्त]

व्याकरण में नवीन रचना की कुछ आवश्यकता नहीं।[3]

———

[४१] **विज्ञापन**[4] [६७१]

श्रीयुत स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अब परमात्मा की कृपा से संस्कृत विद्या के पुनरुद्धार और मनुष्यों के उपकार के लिये सर्वशिष्ट माननीय पाणिनीय व्याकरण अष्टाध्यायी जो कि पढ़ने वालों को अति कठिन थी, उस की व्याख्या महाभाष्यस्थ अत्यन्तोपयोगी वचन तथा उदाहरण और प्रत्युदाहरण सहित सुगम भाषा करके अनेक भागों में बनवाई है उन में से प्रथम भाग यह सन्धि विषय जिस में वर्णों का मेल है और विकार आदि होने से कौन २ पद कैसे २ हो जाते हैं, छप गया है। मूल्य ।।) बाहर के मंगाने वालों को डाक महसूल सहित ।।)।। देने होंगे।

---

१. यह सारांश पूर्ण संख्या ४६८ के पत्र में (पृष्ठ ३८० पर) उद्धृत है। यह पत्र १७ अक्टूबर से २१ अक्टूबर के मध्य किसी तारीख को लिखा गया होगा। इसे **पूर्ण संख्या २९१ के आगे जोड़े गये (पूर्ण संख्या ६६६) पत्र से आगे** जोड़ें।

२. इन दो पत्रों की सूचना ३ दिसम्बर १८८० के गोपालराव हरि देशमुख तथा सेवकलाल कृष्णदास के पत्रों में है। देखो मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २४६, २५०। इन में से एक पत्र में सम्भवतः थियोसोफिकल सोसाइटी में विना स्वीकृति के लिखे गये अपने (स्वामी दयानन्द के) नाम काटने का उल्लेख होगा। यह गोपालराव हरि देशमुख के इस पत्र (वही पृष्ठ २४६) तथा मार्गशीर्ष वदी ६ सं० १९३७ (२३ नवम्बर १८८०) को मैडम ब्लेवेस्तकी के नाम लिखे गये (पू० सं० २९६ पृष्ठ २५६) पत्र को मिलाकर पढ़ने से ज्ञात होता है। इसलिये इन्हें **पूर्ण संख्या २९८ के आगे** जोड़ें।

३. इस अभिप्राय के कई पत्र लिखने का संकेत पूर्ण संख्या ३१२ के पत्र में उपलब्ध होता है। यहां एक पत्र-सारांश बना कर रक्खा है। इसे **पूर्ण संख्या ३०३ के आगे** जोड़ें।

४. यह सन्धिविषय के आवरण पत्र (टाइटल पेज) के द्वितीय पृष्ठ पर छपा है। इसे **पूर्ण संख्या ३०८ से आगे** जोड़ें।

जो सज्जन लिया चाहें मुझ से इस पते पर पत्रव्यवहार करें।

लाला शादीराम[1]

प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यन्त्रालय लक्ष्मी कुण्ड बनारस

---

[७] पत्र-सूचना (५७०) [६७२]

[पं० ज्वालादत्त, काशी][2]

---

[७] पारसल-सूचना [६७३]

[प्रबन्धकर्त्ता वै० य०, काशी]

यजुर्वेद भाष्य के पत्रे।[3]

---

[८] शुद्धि अशुद्धि पत्र-सूचना (१) [६७४]

[पं० ज्वालादत्त, काशी]

शुद्धि अशुद्धि के चार पांच पत्रे नमूने के तौर पर।[4]

---

[९] पारसल-सूचना [६७५]

[पं० ज्वालादत्त (?) काशी]

[नामिक के] १८ पृष्ठ।[5]

---

१. यद्यपि इस विज्ञापन पर लाला शादीराम के हस्ताक्षर हैं, तथापि पूर्ण संख्या ३०६ के पत्र के "जो नोटिस सन्धिविषय पर छपेगा सो आप के पास रवाना करते है, सो छाप देना" लेख से स्पष्ट है कि यह ऋषि दयानन्द का लिखवाया हुआ है। अत एव हम ने इसे यहां छापा है।

२. इस पत्र की सूचना १८ दिसम्बर १८८० (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४१२) के पत्र में है। इसे सम्भव है पूर्ण संख्या ३०६ वाले शादीराम के पत्र के साथ भेजा होगा। अतः इसे **पूर्ण संख्या ३०९ के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना १८ दिसम्बर १८८० के पत्र (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४१२) में है। इसे **पूर्ण संख्या ३०९ के आगे जोड़े गये (पू० सं० ६७३) पत्र से आगे** जोड़ें।

४. पं० ज्वालादत्त के शोधे हुए वेदभाष्य के शुद्धि अशुद्धि पत्र नमूने के तौर पर भेजे गये थे। देखो पूर्ण संख्या ३१२ का पत्र। इसे **पूर्ण संख्या ३११ के आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना पौ० शु० १० (सं० १९३७=१० जनवरी १८८०) के पं० ज्वालादत्त के पत्र (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४१७) में है। इसे **पूर्ण संख्या ३१३ के आगे** जोड़ें।

[८] पत्र-सारांश (५७१) [६७६]

[लाला शादीराम जी, काशी]

मुन्शी बख्तावरसिंह के हिसाब के रजिस्टर भेजो ।[१]

---

[१०] पत्र-सूचना (५७२) [६७७]

[पं० ज्वालादत्त, काशी]

अशुद्धियों के सम्बन्ध में ।[२]

---

[२७] पत्र-सारांश (५७३) [६७८]

[लाला कालीचरण रामचरणजी, फर्रुखाबाद]

१००) पण्डितों के बाबत हमारे पास भेज दो ।[३]

---

[८] पत्र-सारांश (५७४) [६७९]

[लाला रामशरणदासजी, मेरठ]

मुन्शी इन्द्रमणि का हिसाब लिखकर मेरे पास यहां भेज दीजिये ।[४]

---

[९] पारसल-सूचना (१८) [६८०]

[प्रबन्धकर्त्ता वै० य०, काशी]

यजुर्वेदभाष्य अ० ७ के पत्रे ।[५]

---

[९] पत्र-सारांश (५७५) [६८१]

[लाला रामशरणदासजी, मेरठ]

२५० रु० लाला बल्लभदास गुरुदासपुर के भेजे जमा क्यों नहीं किये ।[६]

---

१. इसकी सूचना पूर्ण संख्या ३३४ के पत्र (पृष्ठ २७६ पं० २०) में है। इसे **पूर्ण संख्या ३१३ के आगे जोड़ी गई (पूर्ण संख्या ६७५) पारसल सूचना से आगे** जोड़ें। तिथि का निर्देश न होने से हमने अनुमान से जोड़ा है।

२. इस की सूचना पौष शु० १० (सं० १९३७=१० जनवरी १८८०) के पं० ज्वालादत्त के पत्र (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४१८) में है। इसे **पूर्ण संख्या ३१५ के आगे** जोड़ें।

३. इस आशय के पत्र की सूचना पूर्ण संख्या ३१७ में है। इसे **पूर्ण संख्या ३१५ के** आगे जोड़ें।

४. इस की सूचना पूर्ण संख्या ४६८ के पत्र में (पृष्ठ ३८१ पर) है। इसे **पूर्ण संख्या ३१६ के आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना १६ जनवरी १८८१ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ३१८ के आगे** जोड़ें।

६. इस की सूचना पूर्ण संख्या ४६८ के पत्र में (पृष्ठ ३८१ पर) उपलब्ध होती है। इसे **पूर्ण संख्या ३२४ के आगे** जोड़ें।

[१०] **पारसल-सूचना (१९)** [६८२]

[लाला शादीरामजी, काशी]

रजिस्टर रवाना किया।[1]

---

[११] **पारसल-सूचना (२०)** [६८३]

[लाला शादीरामजी, काशी]

ऋग्वेद [भाष्य] के वरक १२३० सफे से १५२१ तक।[2]

---

[१२] **शुद्धि अशुद्धि का नमूना (२)** [६८४]

[लाला शादीराम जी, काशी]

ऋग्वेद व नामिक की शुद्धि अशुद्धि नमूने के तौर पर।[3]

---

[६] **पत्र-सूचना (५७६)** [६८५]

[पं० गोपालराव हरि, फर्रुखाबाद]

कागज का नमूना १२) रु० रिम तथा ६ रु० रिम का।[4]

---

[१०] **पारसल-सूचना (२१)** [६८६]

[लाला रामशरणदासजी, मेरठ]

आर्यसमाज के थोड़े से नियम।[5]

---

[१०] **पारसल-सूचना (२२)** [६८७]

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]

पुस्तकों का।[6]

---

१. इस की सूचना पूर्ण संख्या ३५५ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या** ३२४ के आगे जोड़े गये **(पूर्ण सं० ६८१) पत्र के आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना पूर्ण संख्या ३३० के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ३३० के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना पूर्ण संख्या ३३३ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ३३३ के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पूर्ण संख्या ३४१ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ३४० के आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना पूर्ण संख्या ३४२ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ३४२ के आगे** जोड़ें।

६. इस की सूचना १६ सितम्बर १८८१ के सेवकलाल के पत्र में है (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृ० १५४)। इसे **पूर्ण संख्या ३६३ के आगे** जोड़ें।

[३] **पारसल-सूचना (२३)** [६८८]

[पं० दयाराम, काशी]

पारसल पुस्तकों की ।[1]

---

[४] **पारसल-सूचना (२४)** [६८९]

[पं० दयाराम, काशी]

१. ऋग्वेद भाष्य पृष्ठ ८१३—८५० तक ।[2]

२. यजुर्वेदभाष्य अ० १२ के पृष्ठ ।

३. अन्वयार्थ की प्रेस कापी ।

---

[५] **पत्र-सूचना (५७७)** [६९०]

[पं० दयाराम, काशी]

पुस्तकें भेजने के विषय में ।[3]

---

[६] **पत्र-सारांश (५७८)** [६९१]

[पं० दयाराम काशी]

ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य की भाषा कितनी हुई ।[4]

[७-९] **पत्र-सारांश (५७९-५८१)** [६९२-६९४]

[पं० दयाराम, काशी][5]

१—भीमसेन के विषय में ।

२—स्त्रैणतद्धित छपे १।। मास हो गया, भेजा क्यों नहीं ?

३—आख्यातिक कितना छपा ?

४—कृदन्त को आख्यातिक के अन्त में छापना ।

५—पुस्तकें इन्दौर भेजो ।

६—महाराणा सज्जनसिंह द्वारा चित्तौड़ में किये गये सत्कार का वर्णन ।

---

१. इस की सूचना आश्विन शु० ६ सं० १९३८ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४० पं० १,२)। इसे **पूर्ण संख्या ३६४ के आगे** जोड़ें ।

२. इस की सूचना मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४०, ५६ में है । हमारे विचार में दोनों संकेत एक ही पारसल के हैं । इसे पूर्ण संख्या ३६४ के आगे बढ़ाई (पूर्ण संख्या ६८८) पारसल सूचना से आगे जोड़ें ।

३. इस की सूचना मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३९ में है । इसे पूर्ण संख्या ३६४ के आगे बढ़ाई पू० सं० ६८८, ६८९) पारसल सूचना के आगे जोड़ें ।

४. इस की सूचना ३ नवम्बर १८८१ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ५९) । इसे पूर्ण संख्या ३६८ के आगे जोड़ें । उपर्युक्त विषय हमने पत्रानुसार बनाया है ।

५. मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ५८ पर पं० भीमसेन के पत्र में १ एक, और पृष्ठ ६० पर पं० सुन्दरलाल के पत्र में २ दो पत्र और १ एक कार्ड आना लिखा है । ये दोनों पत्र पौष कृष्ण ११ सं० १९३८

[१०] **विज्ञापन (?) सूचना** [६९५]

[पं० दयाराम, काशी]

महाराजे उदयपुर का इश्तिहार ।[१]

---

[११] **पत्र-सूचना (५८२)** [६९६]

[पं० दयाराम, काशी]

१—पुस्तकें तथा वेद भाष्य कितने पौण्ड के कागज़ पर छपता है ।

२—दो वर्ष का पुस्तकों का हिसाब भेजो ।[२]

---

[७] **पत्र-सूचना (५८३)** [६९७]

[कविराज श्यामलदास जी]

उदयपुराधीशों के गोरक्षा निमित्त हस्ताक्षर कराने के विषय में ।[३]

---

[८] **पारसल-सूचना (२५)** [६९८]

[कविराज श्यामलदास जी]

गोरक्षा सम्बन्धी हस्ताक्षर कराने के पत्र ।[४]

---

[१२] **पत्र-सूचना (५८४)** [६९९]

[पं० दयाराम, काशी]

बीस २ पुस्तकें भेजने के सम्बन्ध में ।[५]

(१८ दिसम्बर १८८१) के हैं । अतः इन्हें **पूर्ण संख्या ३७१ के आगे** जोड़ें । पत्रोक्त विषय उक्त दोनों पत्रों के अनुसार बनाया है ।

१. इस के भेजने की सूचना मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ६३ से मिलती है । इसे **पूर्ण संख्या ३७६ से आगे** जोड़ना चाहिये ।

२. इस का संकेत मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ६२ में छपे १ फरवरी १८८२ के पत्र में है । इसे **पूर्ण सं० ३७६ के आगे जोड़ी गई (पू० सं० ६९५) विज्ञापन सूचना के आगे** जोड़ें । यह विषय पत्रानुसार हमने बनाया ।

३. यह आशय फाल्गुण कृ० ७ शुक्रवार सं० १९३८ (१० फरवरी १८८२) के पत्र में है (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४३) । इ से **पूर्ण सं० ३७८ के आगे** जोड़ना चाहिये ।

४. इस की सूचना भी फा० कृ० शुक्र सं० १९३८ (१० फर० १८८२) के पत्र में मिलती है । (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४३) इसे **पूर्ण सं० ३७८ से आगे जोड़े गये (पू० सं० ६९५) पत्र के आगे** जोड़ें ।

५. इस की सूचना पं० भीमसेन के २७ जनवरी १८८२ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४३, ४४) । इसे **पूर्ण सं० ३७२ से आगे** जोड़ें ।

[१३] पत्र-सूचना (५८५) [७००]

[पं० दयाराम, काशी]

१—रामाधार वाजपेयी का हिसाब भेजने के सम्बन्ध में ।

२—दस २ पुस्तकें भेजने के सम्बन्ध में ।[1]

२० फरवरी १८८२ ।[2]

---

[४] पत्र-सूचना (५८६) [७०१]

[सम्पादक भारतमित्र, कलकत्ता] ।

गोरक्षा सम्बन्धी दो पत्र ।[3]

---

[१५] पारसल-सूचना (२६) [७०२]

[लाला रामशरणदास जी, मेरठ]

३०० गोरक्षा सम्बन्धी पत्र ।[4]

---

[२४] पारसल-सूचना (२७) [७०३]

[लाला मूलराज जी एम० ए०]

गोरक्षा सम्बन्धी फार्म और थियोसोफिस्टों के सम्बन्ध का विज्ञापन ।[5]

---

[९] पत्र-सूचना (५८७) [७०४]

[पं० सुन्दरलाल जी, प्रयाग][6]

---

१. इस के प्रथमांश की सूचना पूर्ण संख्या ३८० के पत्र में है और उत्तरांश की २७ जनवरी १८८२ के पं० भीमसेन के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० ४२, ४३, ४४)। ये दोनों अंश एक पत्र में ही थे या पृथक् पृथक् में, यह अज्ञात है । इसे **पूर्ण सं० ३७९ से आगे जोड़े गये (पू० सं० ६९९) पत्र से आगे** जोड़ें ।

२. इस तारीख की सूचना पूर्ण संख्या ३८० के अनुसार दी है।

३. इस की सूचना मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० में पृष्ठ ६६ पर छपे मनोहरदास क्षत्रिय अवैतनिक कार्यसम्पादक भारतमित्र कालकत्ता के पत्र में है। इसे **पूर्ण सं० ३९० से आगे** जोड़ें । गोरक्षा सम्बन्धी दोनों पत्र पू० सं० ३८७, ३८८ पर छपे हैं।

४. इस की सूचना पूर्ण सं० ४३१ में है । इसे **पूर्ण सं० ३९४ के आगे** जोड़ें ।

५. इस की सूचना पू० सं० ४०३ के पत्र में है । इसे **पूर्ण सं० ४०१ के आगे** जोड़ें। गोरक्षा सम्बन्धी फार्म पू० सं० ३८७, ३८८ पर तथा थियोसोफिष्ट सम्बन्धी पूर्ण सं० ४०० पर छापा है ।

६. १ जून १८८२ के पत्र में कई पत्र आने का उल्लेख है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४२३)। इसी पत्र में पृष्ठ ४२४ पर १३ मई १८८२ के पू० सं० ४०८ के पत्र की बातों का उल्लेख है। अन्य पत्र १३ मई से पूर्व आये होंगे। अतः इसे **पूर्ण सं० ४०१ के आगे** जोड़ें।

[२४] **पत्र-सूचना (५८८)** [७०५]

[पं० रामाधार वाजपेयी, लखनऊ]

थियोसोफिस्टों के सम्बन्ध में।[१]

---

[७] **पारसल-सूचना (२८)** [७०६]

[श्री नन्दकिशोरसिंहजी, जयपुर]

गो रक्षा सम्बन्धी ५ फार्म।[२]

---

[१४] **पारसल-सूचना (२९)** [७०७]

[पं० दयाराम, काशी]

यजुर्वेद भाष्य अ० १४ के पृष्ठ ४१६ से ४४७ तक।[३]

---

[२८] **पारसल-सूचना (३०)** [७०८]

[लाला कालीचरण जी, फर्रुखाबाद]

जगन्नाथ की प्रश्नोत्तरी का खण्डन।[४]

---

[१०] **पत्र-सूचना (५८९)** [७०९]

[पं० भीमसेन, काशी]

काम सावधानता से करने के विषय में।[५]

---

१. इस पत्र की सूचना रामाधार वाजपेयी के अज्ञात तिथि के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३४०)। पू० सं० ४०० तथा ४०१ और मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३४० से ३६७ तक छपे पत्रों को मिला कर पढ़ने से ज्ञात होता है कि यह पत्र ऋषि दयानन्द ने अप्रेल मास के आरम्भ में लिखा होगा। इसे **पूर्ण सं० ४०२ के आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना पू० सं० ४०२ के पत्र में है। इसे **पूर्ण सं० ४०२ के आगे जोड़े गये (पूर्ण सं० ७०५ पत्र से आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना ४ मई १८८२ के पं० भीमसेन के पत्र में है (मुन्शी सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४६, ४७)। इसे **पू० सं० ४०२ से आगे जोड़ी गई (पू० सं० ७०६) पारसल सूचना से आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पू० सं० ४१६ के पत्र में है। इसी पत्र में यह भी लिखा है—'बहुत दिन हुए भेज चुके हैं, उस के पीछे भारत सुदशाप्रवर्तक (मासिक) के दो अंक निकल चुके' इससे प्रतीत होता है कि यह खण्डन अप्रेल के आरम्भ में भेजा गया होगा। इसे **पू० सं० ४०२ के आगे जोड़ी गई (पू० सं० ७०७) पारसल सूचना से आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना ४ मई १८८२ के भीमसेन के पत्र में हैं (मुन्शी सम्पा० पत्रव्य० ४६)। इसे **पू० सं० ४०२ के आगे जोड़ी गई (पू० सं० ७०८) पारसल सूचना के आगे** जोड़ें।

[१०] **पत्र-सूचना (५९०)** [७१०]

[पं० सुन्दरलाल जी, प्रयाग]

सीसा भेजने के प्रबन्धविषय में ।[1]

---

[१] **पत्र-सारांश (५९१)** [७११]

[खाडेराव पाण्डुरंग, खण्डवा]

हम बम्बई से आते हुए खण्डवा ठहरेंगे, स्थान का प्रबन्ध करें ।[2]

[२] **पत्र-सारांश (५९२)** [७१२]

[खाडेराव पाण्डुरंग, खण्डवा]

१४ जून को चलकर १५ जून को खण्डुआ नहीं पहुंच रहे ।[3]

---

[३] **पत्र-सूचना (५९३)** [७१३]

[खाडेराव पाण्डुरंग, खण्डवा][4]

---

[६५] **पत्र-सारांश (५९४)** [७१४]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

टाइप मंगवा लो ।[5]

---

१. इस की सूचना मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४६ पर है । वहां दो पत्रों का उल्लेख है । उन में से एक पूर्ण संख्या ३६७ पर छप चुका है । दूसरे पत्र की सूचना १० मई १८८२ के पत्र में है । अतः यह पत्र मई के प्रथम सप्ताह में लिखा गया होगा । इसे **पूर्ण संख्या ४०५ के आगे** जोड़ें ।

२. इस की सूचना १७ जून १८८२ के खाडेराव के पत्र में है (मुंशी०सम्पा०पत्रव्य० पृष्ठ २६४) । इसी में ४ दिन पहले इस पत्र का उत्तर देना लिखा है । अतः यह पत्र सम्भवतः १० या ११ जून को बम्बई से भेजा गया होगा । इसी पत्र में १६ जून को खण्डवा पहुँचने की सूचना भी रही होगी (तुलना करो पूर्ण संख्या ४१४ के पत्र के साथ) । उपर्युक्त आशय हमने प्रकरणानुसार बनाया है । इसे **पूर्ण संख्या ४१३ के आगे** जोड़ें ।

३. इस पत्र की साक्षात् सूचना कहीं प्राप्त नहीं है, परन्तु १७ जून १८८२ के खाडेराव के पत्र (मुंशी सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २६४) से विदित होता है कि उन के पास स्वामी महाराज का १३ या १४ जून का लिखा पत्र अवश्य पहुँचा होगा, जिस में उक्त सूचना रही होगी । इसे **पूर्ण संख्या ४१४ के आगे** जोड़ें ।

४. इस पत्र की सूचना खाडेराव के जिस पत्र में है उस पर २७ जून १८८२ छपा है (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ५६३) । उसमें खण्डवा में ठहरने के लिए स्थान के प्रबन्ध की सूचना दी है, परन्तु स्वामी जी महाराज २४ जून को खण्डवा पहुँच गये थे, अतः पत्र में लेखक या मुद्रक दोष से २० का २७ बन गया होगा । सम्भवतः इसमें बम्बई से चलने की सूचना दी होगी और यह पत्र १८ या १९ जून को लिखा गया होगा । इसे **पूर्ण संख्या ४१६ के आगे** जोड़ें ।

५. इस की सूचना पूर्ण संख्या ४४३ के पत्र में है । मुंशी समर्थदान जब से वैदिक यन्त्रालय प्रयाग के प्रबन्धकर्ता होकर गये, तब से इस पत्र तक श्री स्वामी जी महाराज के भेजे हुए ६ पत्र (पूर्ण संख्या ४२०,

[१३] **पारसल-सूचना (३१)** [७१५]

[श्री महाराजाधिराज नाहरसिंह वर्मा, शाहपुरा]

पोपलीला नामक पुस्तक।[1]

श्रावण वदी ४ मंगल सं० १९३९ [४ जुलाई १८८२]

---

[९९] **पारसल-सूचना (३२)** [७१६]

[लाला कालीचरण जी, फर्रुखाबाद]

जगन्नाथदास की प्रश्नोत्तरी के उत्तर के ७ पृष्ठ।[2]

---

[३] **पत्र-सारांश (५९५)** [७१७]

[श्री महाराणा सज्जनसिंह जी, उदयपुर]

हम उदयपुर आ रहे हैं, सवारी का प्रबन्ध कर दें।[3]

---

[४] **तार-सूचना (४)** [७१८]

[श्री महाराणा सज्जनसिंहजी, उदयपुर]

सवारी के प्रबन्ध के विषय में।[4]

४२५, ४२६, ४२७, ४२८, ४४२) पूर्व छप चुके हैं, उन में टाइप मंगवाने का उल्लेख नहीं है। पूर्ण संख्या ४२७ में मुंशी समर्थदान के पत्र (जिस का इस पत्र में निर्देश है) उत्तर में स्वामी जी ने टाइप ढलवाने की स्वीकृति दी है। इस से प्रतीत होता है कि यह पत्र उस से पूर्व लिखा गया होगा। अतः इसे **पूर्ण संख्या ४२० या ४२१ के आगे** जोड़ें।

१. इसकी सूचना तथा तिथि का निर्देश पूर्ण संख्या ४२२ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ४२२ के आगे** जोड़ें। पोपलीला पुस्तक के विषय में हमारा 'ऋ० द० के ग्रन्थों का इतिहास' परिशिष्ट ५ पृष्ठ ८२ देखें।

२. इस की सूचना पूर्ण संख्या ४२८ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ४२९ के आगे** जोड़ें।

३. यह आशय हमने कविराज श्यामलदास के सं० १९३९ श्रावण कृ० १० (२५ जुलाई १८८२) के पत्र (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४४) तथा पं० देवेन्द्रनाथ संकलित जीवन चरित पृष्ठ ६६८ के आधार पर बनाया है। ऋषि दयानन्द रतलाम में श्रावण कृष्ण ६–८ (६–८ जुलाई), जावरा श्रा० कृ० ८ से श्रा० शु० ९ (८–२४ जुलाई) तक ठहरे थे, और श्रा० शु० १० (२५ जुलाई) को चित्तौड़ पहुँचे थे। जीवन चरित में रतलाम से पत्र भेजने का उल्लेख है (पृष्ठ ६६८), परन्तु कविराज श्यामलदास ने लिखा है—'समय बहुत कम रह गया है।' इस से प्रतीत होता है कि स्वामी जी ने पत्र रतलाम से न भेजकर जावरा से २० जुलाई के लगभग भेजा होगा। अतः इसे **पूर्ण संख्या ४३० के आगे** जोड़ना चाहिये।

४. इस की सूचना कविराज श्यामलदास के श्रा० कृ० १० सं० १९३९ (२५ जुलाई १८८२) के पत्र में है। (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृ० ४४)। यह तार सम्भवतः जावरा से २३ या २४ जुलाई को दिया होगा। इसे पूर्ण संख्या **४३० से आगे जोड़े गये (पू० सं० ७१७) पत्र से आगे** जोड़ें।

[१] पत्र-सूचना (९९६) [७१९]

[राजराणा फतेसिंह जी, देलवाड़ा][1]

[अधिक] श्रावण कृष्ण १२ सं० १९३९।[2]

———

[६६] पारसल-सूचना (३३) [७२०]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

ऋग्वेदभाष्य के दो पृष्ठ और यजुर्वेद भाष्य के पत्रे।[3]

———

[६७] पारसल-सूचना (३४) [७२१]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

सत्यार्थप्रकाश भूमिका पृष्ठ ५ तथा प्रथम समुल्लास के ३२ पृष्ठ।[4]

भाद्र वदी १ मंगल सं० १९३९ [२९ अगस्त १८८२]

———

[६८] पारसल-सूचना (३५) [७२२]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

गोरक्षा सही के पत्र तथा ५ विज्ञापन पत्र।[5]

———

[६९] पारसल-सूचना (३६) [७२३]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

सौवर का हस्तलेख।[6]

———

१. इस पत्र की सूचना राजराणा श्री फतेहसिंह के सं० १९३९ अधिक श्रावण सुदी ४ के पत्र में है (चमू० सम्पा० पत्रव्य० ११६)। इसे **पूर्ण संख्या ४३२ के आगे** जोड़ें। ये ही राजराणा महाराणा सज्जनसिंह जी के अनन्तर उदयपुर की गद्दी पर बैठे।

२. इस तिथि का संकेत भी राजराणा के पत्र में ही है। १० अगस्त १८८२।

३. इस की सूचना पू० सं० ४४२ के पत्र में है। इसे **पू० सं० ४४१ के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पूर्ण संख्या ४४२ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ४४२ के आगे** जोड़ें।

५. इस का निर्देश पूर्ण संख्या ४४४ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ४४४ के आगे** जोड़ें।

६. इस की सूचना पूर्ण संख्या ४४८ के पत्र में है। सौवर के अन्त में ग्रन्थ रचना काल भाद्र शु० १३ सं० १९३९ लिखा है। उसके दो तीन दिन पीछे प्रेस में भेजा गया होगा। अतः इसे **पूर्ण संख्या ४४४ के आगे** जोड़ें। इस ग्रन्थ के विषय में विशेष ऋ० द० ग्रन्थोतिहास में देखें।

[११,१२] **पत्र-सूचना (५९७,५९८)** [७२४,७२५]

[सेवकलाल कृष्णलाल, बम्बई][1]

---

[७०] **पारसल-सूचना (३७)** [७२६]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

१. सत्यार्थप्रकाश के ३३ पृष्ठ से ५७ पृष्ठ तक।[2]

२. पारिभाषिक भूमिका सहित ४३ पृष्ठ।

३. वेदार्थयत्न के २० अंक।

सं० १९३९ आश्विन सुदी ४ सोम (१६ अक्टूबर १८८२)

पत्राशय-सूचना (५९९) [७२७]

[………आर्य समाज, लखनऊ]

समाज में नाटक प्रहसन आदि करना अनुचित है।[3]

---

[३०] **पत्र-सूचना (६००)** [७२८]

[लाला कालीचरण जी, फर्रुखाबाद]

वैदिक यन्त्रालय के लिये रुपयों के सम्बन्ध में।[4]

---

[७१] **पारसल-सूचना (३८)** [७२९]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

निघण्टु सूचीपत्र सहित।[5]

---

१. सेवकलाल बम्बई के नाम ३,४ पत्र लिखने का उल्लेख पूर्ण संख्या ४५४ के पत्र में है। तदनुसार एक पत्र की सूचना पूर्ण संख्या ५५२ पर लगा चुके हैं। शेष दो को **पूर्ण संख्या ४४८ के आगे** जोड़ें।

२. इन को भेजने की, तथा उक्त तिथि की सूचना पूर्ण संख्या ४५४ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ४५४ के आगे** जोड़ें।

३. इस पत्र का संकेत २८ अक्तूबर १८८२ के पत्र (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३४५) में है। ऋषि दयानन्द ने यह पत्र सम्भवतः १६ अक्तूबर के आस पास लिखा होगा। इसी विषय का एक पत्र १६ अक्तूबर को ऋ० द० ने लाला कालीचरण जी फर्रुखाबाद वालों को लिखा था। देखो पूर्ण संख्या ४५५। इसे **पूर्ण संख्या ४५४ आगे जोड़ी गई (पूर्ण संख्या ७२६) पारसल सूचना के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना बाबू दुर्गाप्रसाद जी को लिखे गये पूर्ण संख्या ४६१ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ४५७ के आगे** जोड़ें।

५. इसकी सूचना पूर्ण संख्या ४६५ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ४६४ के आगे** जोड़ें।

विशेष वक्तव्य—निघण्टु के अन्त में संशोधन काल इस प्रकार लिखा है—"निधिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे

[१३] **पत्राशय-सूचना (६०१)** [७३०]

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]

पुरोहित उदयलाल के लिये घड़ी भेजो, गोरक्षा की सही के कागज भी।[1]

---

[२] **पत्राशय-सूचना (६०२)** [७३१]

[लालजी वैजनाथ, बम्बई]

विट्ठल रसोइया का वेतन दिलवा दो।[2]

---

[१४] **मनिआर्डर-सूचना (१)** [७३२]

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]

२५) रु० घड़ी के लिये।[3]

---

[७२] **पत्र-सूचना (६०३)** [७३३]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग][4]

मार्गशीर्ष सिते दले। चतुर्थ्यां गुरुवारेऽयं निघण्टुः शोधितो मया॥"

'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास' नामक ग्रन्थ में पृष्ठ १७३ पर अनवधानता वश 'चतुर्दश्यां गुरुवारेऽयं' पाठ छपा है और उसी के आधार पर आगे जो पृष्ठ १७३ की २९, ३० पंक्तियां तथा पृष्ठ १७४ की १–४ पंक्तियां लिखी गई हैं उन्हें पाठक महानुभाव काट दें।

१. इस की सूचना ६ जनवरी १८८३ के पत्र में है। यह आशय मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २६७, २६८, को मिलाकर बनाया है। इसे **पूर्ण संख्या ४६५ के आगे** जोड़ें।

२. इन के नाम का एक पत्र पूर्ण संख्या २२ पर छपा है। इस पत्र की सूचना २० जनवरी १८८३ के पत्र में है (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २७२)। इन रुपयों को देने के लिए १ जून की अन्तरंग सभा ने निश्चय किया, परन्तु २५ जून तक नहीं दिये गये (वही पत्रव्य० पृष्ठ २७७)। इसी बीच में लालजी का २९ मई का पत्र ऋ० द० को मिला, जिस में ४०) रु० का मनियार्डर भेजने को लिखा था (वही, पृष्ठ २८१)। तदनुसार ऋ० द० ने अपने पास से ज्येष्ठ शु० ७ सं० १९४० (१२ जून १८८३) को ४०) रुपये भेजे। देखो पूर्ण संख्या ५३४ का पत्र। इसे **पूर्ण संख्या ४६७ के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना २० जनवरी १८८३ के पत्र में है (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २६६)। इसे **(पूर्ण संख्या ४६८ के आगे** जोड़ें। इन रुपयों की घड़ी १२ जून को भेजी गई। २३ रु० घड़ी में लगे थे (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २७४)।

४. पूर्ण संख्या ४७१ के मार्ग वदी ५ [माघ वदी ५–देखो पृष्ठ ३८४ की टि० ३] सं० १९३९ के पत्र में कई पत्र लिखने का संकेत है। इस से पूर्व मार्ग शु० १० का पत्र पूर्ण संख्या ४६५ पर छपा है उस के अनन्तर न्यूनातिन्यून दो पत्र अवश्य लिखे गये होंगे। इसे **पूर्ण संख्या ४६९ के आगे** जोड़ें।

[१.२] पत्र-सूचना (६०४) [७३४]

[लाला रामशरणदास, मेरठ]

(इन्द्रमणि के विज्ञापन के साथ)[१]

---

[९] आशीःपत्र-सूचना (६०५) [७३५]

[श्री महाराणा सज्जनसिंह जी, उदयपुर]

पुत्र जन्म पर शुभाशीः ।[२]

[सम्भवतः माघ शु० २ शुक्र सं० १९३९][३]

[१.४] पत्र-सारांश (६०६) [७३६]

[भाई जवाहरसिंह जी]

दो स्त्रियां ऐसी चाहियें जो पतिवाली, शुद्धाचरण वाली, कसीदा और पढ़ाना जानने वाली हों ।[४]

१७ फरवरी १८८३ से पूर्व ।

[१.] पत्र-सूचना (६०७) [७३७]

[जोशीलालजी कल्याणजी][५]

[१.४] पत्र-सारांश (६०८) [७३८]

[श्री शाहपुराधीश नाहरसिंह जी वर्मा]

हम उदयपुर से चलकर चित्तौड़ पहुंच गये हैं ।[६]

---

१. इस पत्र की सूचना २१ जनवरी १८८३ के पत्र में है (मुन्शी सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३२०) । इसे **पूर्ण संख्या ४६९ के आगे जोड़ी गई पूर्ण (संख्या ७३३) पत्रसूचना से आगे** जोड़ें ।

२. इस आशीःपत्र का उल्लेख महाराणा के सं० १९३९ माघ शु० २ भृगुवार के पत्र में है (चमू० सम्पा० पत्रव्य पृष्ठ १३२) । इसे **पूर्ण संख्या ४७२ के आगे** जोड़ें ।

३. यह तिथि अनुमान से लिखी है । ९ फरवरी १८८३ ।

४. इस का संकेत मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ११६ पर है । इसे **पूर्ण संख्या ४७३ के आगे** जोड़ें ।

५. इस पत्र की सूचना मुंशी सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २६५ पर है । इसी पत्र के अनुसार चैत्र सुद १२ से चार मास पूर्व उक्त महाशय कानपुर गये थे और वहां से जो पत्र ऋ० द० को लिखा था उसी के उत्तर में उक्त पत्र ऋ० द० ने लिखा था । अतः इसे **पूर्ण संख्या ४७४ के आगे** जोड़ें ।

६. यह सारांश शाहपुराधीश के पत्रानुसार बनाया गया है । शाहपुराधीश के पत्र में फाल्गुण बुद २ लिखा है (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २८) वहां फाल्गुण वदी १२ चाहिये । चित्तौड़गढ़ ऋ० द० फा० वदी ७ की रात को पहुंचे थे (देखो पूर्ण संख्या ४८०) । इसे **पूर्ण संख्या ४८२ के आगे** जोड़ें ।

[१] **पत्र-सूचना (६०९)** [७३९]

[विश्वनाथ, जयपुर][1]

४ मार्च १८८३।

[१] **पत्र-सूचना (६१०)** [६४०]

[गणेशदास एण्ड कम्पनी तारघर के नीचे बनारस]

पुस्तकें मंगवाने के विषय में।[2]

[७३] **पारसल-सूचना (३९)** [७४१]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

यजुर्वेदभाष्य अ० १३ मन्त्र ४७-५१ की पुनः शोधित प्रस कापी।[3]

फाल्गुन शु० ९ शनि सं० १९३९। १७ मार्च १८८३।

[२] **पत्र-सारांश (६११)** [७४२]

[पं० मोहनलाल विष्णुलाल पाण्डया, उदयपुर]

मेरे पास ब्रह्मानन्द पहुंचा।[4]

[९] **पत्र-सारांश (६१२)** [७४३]

[कविराज श्यामलदास जी, उदयपुर]

१. गोरक्षार्थ जयपुर गये या नहीं।[5]

२. जोधपुर में सही हुई या नहीं।

३. उदयपुर का वृत्तान्त छपवाया जावे या नहीं।

४. ठा० भवानीसिंह के विषय में,

---

१. इस की सूचना के लिये देखो मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २२२। इसे **पूर्ण संख्या ४८३ के आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५०१ के पत्र में है। वहां लिखा है—"अभी हम २१॥।≈) के पुस्तक मंगवा चुके हैं"। इसे **पूर्ण संख्या ४८४ के आगे** जोड़ें।

३. यह पूर्ण संख्या ४८६ तथा ४८७ के आधार पर लिखी है और तिथि का निर्देश ४८७ के अनुसार किया है। इसे **पूर्ण संख्या ४८६ के आगे** जोड़ें।

४. इस पत्र की सूचना २७ मार्च १८८३ के पत्र में है (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ११)। अत यह पत्र २० या २१ मार्च को लिखा गया होगा। इसे **पूर्ण संख्या ४८८ के आगे** जोड़ें।

५. इस पत्र तथा, इन विषयों की सूचना बारहट किशनसिंह के चैत्र शु० १४ शनिवार सं० १९४० के पत्र में है (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ११०, १११)। तथा ऋ० द० के पूर्ण संख्या ५०१, ५०८ में भी इसका संकेत है। इसे **पूर्ण संख्या ४९४ के आगे** जोड़ें।

[२२] **पत्र-सारांश (६१३)** [७४४]

[कमलनयन शर्मा, अजमेर]

दामोदर शास्त्री से पूछ कर लिखो कि कितने रुपयों पर हमारे पास आ सकता है।[1]

---

[७५] **पत्रांश-सूचना (६१४)** ७४५]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

हमने २१।।।≈) की पुस्तकें गणेशदास एण्ड कम्पनी तारघर के नीचे बनारस से मंगवाई हैं।[2]

---

[३१] **पत्र-सूचना (६१५)** [७४६]

[लाला कालीचरण जी, फरुखाबाद]

पण्डितों के हिसाब का पत्र।[3]

वै० वदी ३ सं० १९४० [२५ अप्रैल १८८३]

---

[७५] **पारसल-सूचना (४०)** [७४७]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

यजुर्वेद के मई के अंक के लिये भेजे गये पत्रे।[4]

---

[८] **पारसल-सूचना (४१)** [७४८]

[बाबू नन्दकिशोर जी, जयपुर]

१. स्वीकारपत्र दो प्रति।[5]

२. मान्यपत्र दो प्रति।

वै० कृ० ७ सं० १९४० [२९ अप्रैल १८८३]

---

[२] **पत्र-सूचना (६१६)** [७४९]

[गणेशदास एण्ड कम्पनी तारघर के नीचे काशी]

पुस्तकें मंगवाने के विषय में।[6]

---

१. यह अभिप्राय पं० शुकदेव के १७ अप्रैल १८८३ के पत्रानुसार बनाया है। मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २००। इसे पूर्ण संख्या ४९४ के आगे जोड़ें।

२. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५०१ के पत्र में है। इसे पूर्ण संख्या ४६६ के आगे जोड़ें।

३ इस की सूचना पूर्ण संख्या ४६६ के पत्र के अन्त में है। इसे पूर्ण संख्या ४९९ से आगे जोड़ें।

४. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५०१ के पत्र में है। इसे पूर्ण संख्या ५०० से आगे जोड़ें।

५. इस की भावी सूचना पूर्ण संख्या ५०१ के पत्र में है। इसे पूर्ण संख्या ५०६ के आगे जोड़ें।

६. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५०६ के पत्र में है। इसे पूर्ण सं० ५०६ से आगे जोड़ी गई (पूर्ण सं० ७४८) पारसल सूचना के आगे जोड़ें।

[७६] **पारसल-सूचना (४२)** [७५०]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]
ऋग्वेदभाष्य के पत्रे १५२२ से लेके १५७७ तक।[1]

———

[७७] **पारसल-सूचना (४३)** [७५१]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]
ऋग्वेदभाष्य के पत्रे पृष्ठ १५७८ से लेके १६९७ तक।[2]

———

[१] **तार-सारांश (५)** [७५२]

[पाली (जोधपुर) के हाकिम]
ता० २६ मई को रूपाहेली स्टेशन पर सवारी उपस्थित होगी।[3]

———

[२३] **तार-सूचना (६)** [७५३]

[कमलनयन शर्मा (?) अजमेर]
अजमेर पहुंचने की सूचना।[4]

———

[२४] **कार्ड-सूचना (६१७)** [७५४]

[कमलनयन शर्मा, मन्त्री आर्य समाज अजमेर]
लोंग साहब के जाने के विषय में।[5]

———

१. पृष्ठ १५२१ तक भेजने का उल्लेख पूर्ण संख्या ३३० के पत्र (पूर्ण संख्या ६८३ भी देखो) में है। पृष्ठ १५७८ से अगले पृष्ठ भेजने का निर्देश पूर्ण संख्या ५१० के पत्र (पूर्ण संख्या ७४६भी देखो) में है। मध्य के पृष्ठ १५२२ से १५७७ तक के पत्रे कब भेजे गये इसका साक्षात् उल्लेख नहीं मिलता। हमारे विचार में इसे **पूर्ण सं० ४७५ के आगे** जोड़ना चाहिये।

२. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५१० के पत्र में है। इसे **पूर्ण सं० ५०९ के आगे** जोड़ें। पूर्ण संख्या ५०१ में भी इन पत्रों के भविष्य में भेजने का संकेत है।

३. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५१६ के अन्त में है। इसे **पू० सं० ५१८ के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५२३ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ५२२ के आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना मुन्नालाल के ७ जून के ८३ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ १६४, १६५)। इस के विषय में पूर्ण संख्या ५६५ का पत्र भी देखें। इसे **पर्ण संख्या५२८ के आगे** जोड़ें।

[१९] **पत्र-सूचना (६१८)** [७५५]

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]
घड़ी के विषय में ।[1]

---

[१४] **पत्र-सारांश (६१९)** [७५६]

[बाबू दुर्गाप्रसाद, फर्रुखाबाद]
हम जोधपुर पहुंच गये हैं, अच्छे आम भेजो ।[2]

---

[३] **मनियार्डर-सूचना (२)** [७५७]

[लालजी बैजनाथ, मुम्बई]
४०) रु० बिट्ठलभाणा के लिये ।[3]

---

[१५] **पत्र-सूचना (६२०)** [७५८]

[भाई जवाहरसिंह, शाहपुरा][4]

---

[१६] **पत्र-सूचना (६२१)** [७५९]

[भाई जवाहरसिंह, शाहपुरा]
१. भत्ते के विषय में ।[5]
२. भोजन अलग बनाने के विषय में ।

---

१. इस की सूचना २५ जून १८८३ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २७४) पत्रानुसार घड़ी १२ जून को भेजी जा चुकी थी । अतः यह पत्र जून के प्रारम्भ में लिखा गया होगा । इसे **पूर्ण सं० ५२८ के आगे** जोड़ें ।

२. इस की सूचना ७ जून १८८३ के पत्र में है । (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३२१) । इस विषय में पूर्ण संख्या ५५६ का पत्र भी देखें । इसे **पूर्ण सं० ५२९ के आगे** जोड़ें ।

३. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५३४ के पत्र में है । **पूर्ण सं० ५३४ के आगे** जोड़ें ।

४. इस की सूचना १० जून १८८३ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ १४४) । इसे **पूर्ण संख्या ५३६ के आगे** जोड़ें ।

५. इस की सूचना आषाढ़ वदी ५ सं० १९४० (२५ जून १८८३) के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ १४१) । इसे **पूर्ण संख्या ५३७ के आगे** जोड़ें ।

[६] पत्र-सूचना (६२२) [७६०]

[श्री महाराणा सज्जनसिंह जी, उदयपुर ।[१]

———

[७] पत्राशय-सूचना (६२३) [७६१]

[श्री मनोहरदास खत्री, सम्पादक भारतमित्र, कलकत्ता]

गोरक्षार्थ अरजी देने का मसौदा वहां के वकील बारिस्टरों से पूछ के आप लिखें ।[२]

———

[१०] पत्र-सूचना (६२४) [७६२]

[कविराज श्यामलदास जी]

आषाढ़ वदी ११ सं० १९४० [३० जून शनि १८८३] ।[३]

———

[४] पत्राशय-सूचना (६२५) [७६३]

[लालजी बैजनाथ मुम्बई]

बिट्ठलभाणा को भेज दो ।[४]

———

[८] कार्ड-सारांश (६२६) [७६४]

[बारहट किशनसिहजी, उदयपुर][५]

पुरोहित उदयलाल से पूछ के लिखो कि तुम्हारे पास घड़ी[६] आई कि नहीं ।

सम्भवतः १६ या १७ जुलाई १८८३ ।[७]

———

१. इस की सूचना बारहट किशनसिंह के आषाढ़ शु० ७ सं० १९३९ (!, १९४०) के पत्र में है (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ १०७)। इसे **पूर्ण सं० ५४१ के आगे** जोड़ें ।

२. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५५६ के पत्र में है । वहां लिखा **है**—'एक पत्र बहुत दिन हुए लिखा था…………'। अतः इसे **पू० सं० ५४१ के आगे जोड़ी गई (पू० सं० ७६०) पत्र-सूचना के आगे** जोड़ना युक्त होगा ।

३. इस तिथि के पत्र का उल्लेख श्रावण शु० ५ [सं० १९४०] के पत्र में है (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४६)। इसे **पूर्ण संख्या ५४५ के आगे** जोड़ें ।

४. इस पत्र की सूचना मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २८५ पर है । सेवकलाल ने २५ जून के पत्र में लिखा था कि विट्ठलभाणा आप के पास आना चाहता है (वही, पत्रव्य० पृष्ठ २७८) । सम्भवतः इस पत्र के मिलने के बाद ऋ० द० ने जुलाई के प्रारम्भ में लालजी बैजनाथ को उक्त पत्र लिखा होगा । अतः इसे **पूर्ण सं० ५४५ के आगे** जोड़ें ।

५. इस पत्र का संकेत पूर्ण संख्या ५५१ के अन्त में है । इसे **पूर्ण संख्या ५४७ के आगे** जोड़ें ।

६. इस घड़ी के विषय में पं० गोपालराव हरि देशमुख के पत्र (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २४१–२४५) दर्शनीय हैं ।

७. पं० गोपालराव हरि देशमुख का १३ जुलाई का पत्र है, जिस में घड़ी का उल्लेख है, यह ऋ० द० को १६ या १७ जुलाई को मिला होगा और उसी दिन पत्र लिखा होगा ।

[१८] **पत्र-सूचना (६२७)** [७६५]

[पं० गोपालराव हरि देशमुख][1]

---

[१] **पत्र-सूचना (६२८)** [७६६]

[स्वामी सहजानन्द सरस्वती][2]

---

[२] **पत्र-सूचना (६२९)** [७६७]

[स्वामी ईश्वरानन्द][3]

---

[१९] **पत्र-सूचना (६३०)** [७६८]

[पं० गोपालराव हरि देशमुख।
घड़ी पहुंची। घड़ी के मूल्य के विषय में...... ..... ।[4]
श्रावण वदी १० सं० १९४०।[5]

---

[१७] **पत्र-सूचना (६३१)** [७६९]

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]
घड़ी पहुंचने के विषय में।[6]

---

१. इस पत्र की सूचना ७ अगस्त १८८३ के पत्र में है (मुन्शी सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २४४)। इस में दो पत्र पहुंचने का उल्लेख है। तदनुसार एक पत्र-सूचना यहां जोड़ी है और एक आगे पूर्ण संख्या ७६८ पर। इसे **पूर्ण संख्या ५४७ के आगे जोड़े गये (पृ० सं० ७६४) पत्र से आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना २९ जुलाई १८८३ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३४)। इसे **पूर्ण संख्या ५५१ के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना श्रा० वदी ८ सं० १९४० के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ १४)। अतः यह श्रावण कृष्ण पक्ष के प्रारम्भ में लिखा गया होगा। इसे **पूर्ण संख्या ५५१ के आगे जोड़ी गई (पृ० सं० ७६६) पत्र-सूचना के आगे** जोड़ें।

४. इस पत्र की सूचना ७ अगस्त १८८३ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २४४, २४५)। पूर्ण संख्या ७६५ की टिप्पणी भी देखें।

५. इस तिथि की सूचना भी ७ अगस्त के पत्र में ही है वहां लिखा है—"आपका श्रावण वद्य १० का पत्र है सो आषाढ़ वद्य १० होना चाहिये।" इस समय ऋ० द० जोधपुर में थे, इसलिये उन्होंने उत्तर भारतीय पञ्चाङ्ग के अनुसार श्रावण वद्य १० ठीक लिखा था। परन्तु गोपालराव हरि देशमुख ने गुजराती पञ्चाङ्ग के अनुसार श्रावण वद्य १० को अशुद्ध समझा और आषाढ़ वद्य १० होना चाहिये, ऐसा लिखा। दोनों रूप से यह पत्र २९ जुलाई १८८३ का है। इस लिये इसे **पूर्ण संख्या ५५६ के आगे** जोड़ना चाहिये।

६. इस की सूचना पं० गोपालराव हरि देशमुख के ७ अगस्त १८८३ के पत्र में है (मुंशी० सम्पा०

[७] **पत्र-सूचना (६३२)** [७७०]

[छगनलाल द्विवेदी, मसूदा राज्य]

पारस्कर गृह्य की भाष्य सहित पुस्तक कहीं से ढूंढ कर भेजो।[१]

---

[२] **पत्र-सूचना (६३३)** [७७१]

[स्वामी सहजानन्द सरस्वती][२]

---

[७८] **पारसल-सूचना (४४)** [७७२]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

मन्त्रों के भाष्य के पत्रे।[३] [सम्भवतः ऋग्वेद भाष्य पृष्ठ १६९८ से १७६६ तक]

---

[७९] **पारसल-सूचना (४५)** [७७३]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

धातुपाठ की सूची।[४]

---

[१] **पत्र-सूचना (६३४)** [७७४]

[रमादत्त त्रिपाठी, नैनीताल]

'विश्वारूपाणि' मन्त्र यजुर्वेद अ० १२ का तीसरा है। तुम क्या करते हो··· ······।[५]

पत्रव्य० पृष्ठ २४४)। यह पत्र भी सम्भवतः गोपालराव हरि देशमुख को लिखे गये पूर्ण संख्या ७६८ के पत्र के साथ ही लिखा गया होगा। इसे **पूर्ण संख्या ५५६ से आगे जोड़े गये(पू०सं० ७६८) पत्र के** गे जोड़ें।

१. यह आशय पं० छगनलाल के श्रा० शु० १५ सं० १९४० के संस्कृत पत्रानुसार बनाया है (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २२२)। इन दिनों ऋ० द० संस्कार विधि का संशोधन कर रहे थे, उसी के लिये पारस्कर गृह्य सूत्र की आवश्यकता हुई होगी। इसे **पूर्ण संख्या ५५७ के आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना १२ अगस्त १८८३ के पत्र में है (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३५)। इसे **पूर्ण संख्या ५५९ से आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना १५ अगस्त १८८३ के पत्र में है (मुंशी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४३२)। सम्भवतः ये पत्रे ऋग्वेद भाष्य के पृष्ठ १६९८ से १७६७ तक के होंगे। क्योंकि पृष्ठ १६९७ तक भेजने का निर्देश पूर्ण संख्या ७५१ में हो चुका। पृष्ठ १७६८ से आगे का उल्लेख पूर्ण संख्या ७७७ में होगा। इसे **पूर्ण संख्या ५६० के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना १५ अगस्त १८८३ के पत्र में है (मुन्शी सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४६०) इसे **पूर्ण संख्या ५६० से आगे जोड़ी गई (पू० सं० ७७२) पारसल-सूचना के आगे** जोड़ें।

५. इस पत्र का संकेत २० अगस्त १८८३ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ३७६)। रमादत्त ने इस मन्त्र का अर्थ भी पूछा था। देखो वही पत्र ३७६। अतः ऋ० द० ने इस मन्त्र का अर्थ भी लिख कर अवश्य भेजा होगा। इसे **पूर्ण संख्या ५६२ के आगे** जोड़ें।

[८०] पत्र-सूचना (६३५) [७७५]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]
समर्थदान के निज पत्र का उत्तर।[1]

---

[१] पत्र-सारांश (६३६) [७७६]

[बिहारीलाल............]
कविराज श्यामलदास जी का समाचार लिखो।[2]

---

[८१] पारसल-सूचना (४६) [७७७]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]
ऋग्वेद भाष्य के पृष्ठ १७६८ से १८०९ तक।[3]
श्रावण सुदि ११ सं० १९४० [१४ अगस्त १८८३]

---

[१७] पत्र-सूचना (६३७) [७७८]

[भाई जवाहरसिंह, शाहपुरा]
मासिक के हिसाब में गड़बड़ मत किया करो।[4]

---

[२] पत्र-सूचना (६३८) [७७९]

[पं० शुकदेव जी, अजमेर]
पं० शिवकुमार जी[5] (काशी) के लिखे हुए पण्डितों के विषय में।[6]

---

१. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५६४, ५६८ में है। इसे **पूर्ण संख्या ५६३ के आगे** जोड़ें।

२. इस का संकेत मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २२६ में है। कविराज श्यामलदास सं० १९४० के श्रावण और भाद्र मासों में दो बार आंखों की चिकित्सा कराने इन्दौर गये थे (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृ० ४६, ४८)। उसी समय यह पत्र लिखा गया होगा। इसे **पूर्ण संख्या ५६३ से आगे जोड़ी गई (पू० सं० ७७५) पत्र-सूचना से आगे** जोड़ें।

३. इस पत्र और तिथि की सूचना पूर्ण संख्या ५६४ के पत्र में है। **पूर्ण संख्या ५६३ से आगे जोड़े गये (पू० सं० ७७६) पत्र के आगे** जोड़ें।

४. पूर्ण संख्या ५७७ के पत्र में इस विषय के कई पत्र लिखने का उल्लेख है। हम यहां एक पत्र-सूचना दे रहे हैं। इसे **पूर्ण संख्या ५६५ के आगे** जोड़ें (यह अनुमानिक है)।

५. पं० शिवकुमार शास्त्री काशी का संस्कृत पत्र मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ २०६-२१० पर छपा है। इस में ऋ० द० के पास रहने योग्य दो पण्डितों का उल्लेख है। ये पं० शिवकुमार जी अपने समय के काशी के विशिष्ट विद्वान् माने जाते थे। इन की विद्वत्ता की धाक अभी तक काशी पण्डित मण्डली पर जमी हुई है।

६. इस का उल्लेख १९ सितम्बर १८८३ के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृ० २१२)। इसे **पूर्ण संख्या ५६९ से आगे** जोड़ें।

[८२] अशुद्ध भाषा का नमूना (३) [७८०]

[मुन्शी समथदान, प्रयाग]

ज्वालादत्त के द्वारा बनाई गई अशुद्ध भाषा का नमूना।[1]

---

[११] पत्र-सूचना (६३९) [७८६]

[कविराज श्यामलदास जी]

गोरक्षा के सम्बन्ध में महाराजा हुलकर को करने के विषय में।[2]

भाद्र सुदी ९ सं० १९४० [२६ अगस्त १८८३]

---

[२०] पत्र-सूचना (६४०) [७८२]

[पं० गोपालराव हरि देशमुख][3]

---

[८३] पारसल-सूचना (४७) [७८३]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

१. सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ २४८ से २७८ तक[4]

२. ऋग्वेद भाष्य पृष्ठ १८१० से १८९५ तक।

भाद्र सुदी ३० सं० १९४० [१ सितम्बर १८८३]।

---

[१] पत्र-सूचना (६४१) [७८४]

[···········झालावाड़]

झालावाड़ के अतालीक (लफटेण्ट लौंग) का हाल लिखो।[5]

---

१. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५७० के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ५७० के आगे** जोड़ें।

२. इस पत्र और तिथि की सूचना भाद्र शु० ६ सं० १९४० के पत्र में हैं (चमू० सम्पा० पत्रव्य० पृष्ठ ४८)। इसे **पूर्ण संख्या ५७० के आगे जोड़े गये (पू० सं० ७८०) नमूने के आगे** जोड़ें। उपर्युक्त विषय हमने कविराज जी के पत्रानुसार बनाया है।

३. इस पत्र की सूचना सं० १९४० श्रावण वद्य १३ (दक्षिण पञ्चाङ्गानुसार, उत्तर भारतीय भाद्र वद्य १३=३० अगस्त १८८३) के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृ० २४३)। इसे पूर्ण संख्या ५७० के आगे जोड़ी गई (पू० सं० ७८१) पत्र-सूचना के आगे जोड़ें।

४. इस पत्र की तथा तिथि की सूचना पू० सं० ५७१ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ५७० से आगे जोड़ी गई (पूर्ण संख्या ७८२) पत्र-सूचना के आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना पूर्ण संख्या ५६५ के पत्र से प्राप्त होती है। इसे अनुमानतः **पूर्ण संख्या २७२ के आगे** जोड़ें।

[१] **पत्र-सूचना (६४२)** [७८५]

[पं० भागराम, अजमेर]

चोरी के विषय में।[१]

सम्भवत: १३ सितम्बर[२] १८८३ जोधपुर।

———

[४] **पत्र-सूचना (६४३)** [७८६]

[लाला साईंदास जी, लाहौर][३]

———

[८३] **पारसल-सूचना (४८)** [७८७]

[मुंशी समर्थदान, प्रयाग]

१. आर्यराज-वंशावली के पत्रे।[४]

२. सत्यार्थप्रकाश के पृष्ठ २७२[५] से लेकर ३१९ तक १२वाँ समुल्लास।

आश्विन वदी १ सं० १९४० [१७ सितम्बर १८८३]

———

[११] **पत्र-सूचना (६४४)** [७८८]

[पं० भीमसेन ....][६]

आश्विन कृष्ण ४ सं० १९४०।

———

[८४] **पारसल-सूचना (४९)** [७८९]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]

संस्कारविधि के पृष्ठ १ से लेके ४७ तक।[७]

आश्विन वदी ८ सोमवार, सं० १९४० [२४ सितम्बर १८८३]

———

१. इस की सूचना २५ सितम्बर १८८३ के कमलनयन शर्मा के पत्र में है (मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य पृष्ठ १६१। इसे पूर्ण संख्या ५८१ के आगे जोड़ें।

२. चोरी १२ और १३ सितम्बर की मध्य की रात में हुई थी।

३. इस पत्र का संकेत मुन्शी० सम्पा० पत्रव्य० पृ० १५६ में है। इसे पूर्ण संख्या ५८३ के आगे जोड़ें।

४. इस पारसल और तिथि की सूचना पूर्ण संख्या ५८३ तथा ५८४ के पत्र में है। इसे पूर्ण संख्या ५८४ के आगे जोड़ें।

५. इस विषय में पृष्ठ ४६८ की टि० १ देखें।

६. इस तिथि को पत्र भेजने की सूचना पूर्ण संख्या ५८५ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ५८५ के आगे** जोड़ें।

७. इस पारसल तथा तिथि की सूचना पूर्ण संख्या ५९१ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ५९१ के आगे** जोड़ें।

[८९] **पारसल-सूचना (९०)** [७९०]

[मुन्शी समर्थदान, प्रयाग]
सत्यार्थप्रकाश १ पृष्ठ भूमिका,[१] पृष्ठ ३२० से लेके ३४४ तक [तेरहवां समुल्लास][२]
आश्विन (वदी) १३ शनि सं० १९४० [२९ सित० १८८३]

---

[१] **पत्र-सूचना (६४९)** [७९१]

[मथुरादास, मियांमीर][३]

---

[१] **पत्र-सूचना (६४६)** [७९२]

[श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी विरजानन्द जी सरस्वती, मथुरा]
शङ्कासमाधानार्थ।[४]
आगरा।

---

[२] **पत्र-सूचना (६४७)** [७९३]

[श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी विरजानन्द जी सरस्वती, मथुरा]
शङ्कासमाधानार्थ।[५]
ग्वालियर।

---

[१] **उत्तर-पत्र-सूचना (१)** [७९४]

[स्वामी गोपालानन्द परमहंस, जयपुर]
प्रश्न का उत्तर।[६]

---

१. अर्थात् तेरहवें समुल्लास की अनुभूमिका।

२. इस पारसल तथा तिथि की सूचना पूर्ण संख्या ६०१ के पत्र में है। इसे **पूर्ण संख्या ६०१ के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना मथुरादास के बिना तिथि के पत्र में है। (मुंशी० सम्पा० पत्रपत्रव्य० पृष्ठ ३०५ तिथि का कथंचित् भी ज्ञान हो न सकने के कारण इसे यहां रक्खा है।

४. ऋषि दयानन्द सरस्वती ने स्वयं स्वलिखित जीवन चरित (पृष्ठ ४४) में आगरा से अनेक पत्र लिखने का निर्देश किया है। पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ७२ में भी निर्देश मिलता है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व** जोड़ें।

५. ऋषि दयानन्द सरस्वती ने स्वयं स्वलिखित जीवन चरित (पृष्ठ ४४) में ग्वालियर से अनेक पत्र भेजने का उल्लेख किया है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़ी गई पू० सं० ७९२ की पत्र-सूचना से आगे** जोड़ें।

६. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ७८ में मिलती है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़ी गई पू० सं० ७९३ की पत्र-सूचना से आगे** जोड़ें।

[१] **प्रश्न-पत्र-सूचना (२)** [७९५]

जयपुर के पण्डितों के पास १४ प्रश्न लिखकर भेजे।[१]

[इन में दो निम्न प्रश्न थे—]

१—कल्म च किं भवति ?

२—येन कर्मणा सर्वे धातवः सकर्मकाः, किं तत् कर्म ?

———

[१] **उत्तर-प्रश्न-पत्र-सूचना (३)** [७९६]

[जतीजी जैन साधु, जयपुर]

जती जी के ८ प्रश्नों का उत्तर तथा जैन मत पर ८ प्रश्न।[२]

———

[१] **पत्र-सूचना (६४८)** [७९७]

[रामसनेहियों के महन्त, अजमेर]

रामसनेहियों के मत खण्डन विषयक पत्र।[३]

———

[१] **भागवत-अशुद्धिपत्र-सूचना (१)** [७९८]

[पण्डितवर्ग, अजमेर]

तीन चार पत्रों में भागवत की अशुद्धियों का निर्देश।[४]

———

[२] **पत्र-सूचना (६४९)** [७९९]

[ठाकुर रणजीतसिंह, अचरौल (जयपुर)][५]

हरिद्वार।

———

१. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ७८ में है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़ी गई पू० सं० की ७९४ उत्तरपत्र-सूचना से आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ७९ में है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़ी गई पू० सं० ७९५ की पत्र-सूचना से आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ९२ में है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़ी गई पू० सं० ७९६ की सूचना के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ९४ में है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़ी गई पू० सं० ७९७ की पत्र-सूचना के आगे** जोड़ें।

५. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ १०१ में है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़े गये पू० सं० ७९८ के अशुद्धिपत्र-सूचना के आगे** जोड़ें।

[३] **पत्र-सूचना (६५०)** [८००]

[अङ्गद शास्त्री, पीलीभीत]

उत्तर में लम्बा पत्र ।[१]

---

[१] **पत्र-सारांश (६५१)** [८०१]

[चिदानन्द साधु, सोरों]

तुम मेरे समीप आओ वा मुझे अपने पास बुलाओ और शास्त्रार्थ करलो ।[२]

---

[४] **पत्र-सूचना (६५२)** [८०२]

[अङ्गदशास्त्री पीलीभीत वाले, अम्बागढ़]

पत्र का उत्तर ।[३]

---

[१] **उत्तर-पत्र-सूचना (४)** [८०३]

[पं० जगन्नाथ बरेलीवाले, अम्बागढ़]

प्रश्न के उत्तर में ।[४]

---

[१] **पत्रोत्तर-सूचना (६५३)** [८०४]

[समागत पत्रों के उत्तर][५]

अलीगढ़ ।

---

[१] **उत्तर-पत्र-सूचना (५)** [८०५]

[नीलकण्ठ शास्त्री, प्रयाग]

अग्निर्वै देवानामवमः—विषयक उत्तर ।[६]

---

१. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ११५ में है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़ी गई पू० सं० ७९९ की पत्र सूचना के आग** जोड़ें।

२. उस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ १२० में है। इसे **पूर्ण संख्या १ से पूर्व जोड़ी गई पू० सं० ८०० की पत्र सूचना के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ १२२ में है। इसे **पूर्ण संख्या १ के पूर्व जोड़े गये पूर्ण संख्या ८०१ के पत्र-सारांश के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० चरित्र पृष्ठ १२२ में है। इसे **पूर्ण संख्या १ के पूर्व जोड़ी गई पूर्ण संख्या ८०२ की पत्र-सूचना के आगे** जोड़ें।

५. यह सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ २५७ में है। इसे **पूर्ण संख्या ४ के आगे** जोड़ें।

६. यह सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ २७८ में है। इसे **पूर्ण संख्या ८ से आगे** जोड़ें।

[१] **पत्र-सारांश (६५४)** [८०६]

[व्यास जी जयकृष्ण वैद्य]

मेरी इच्छा बम्बई व्याख्यान देने की हुई है।[1]

---

[२] **पत्र-सारांश (६५५)** [८०७]

[व्यासजी जयकृष्ण वैद्य तथा धर्मशी भाई, बम्बई]

हम अपने सुविधानुसार आवेंगे, और अपने आने की आप लोगों को सूचना दे देंगे।[2]

---

[३] **तार-सूचना (७)** [८०८]

[व्यासजी जयकृष्ण वैद्य तथा धर्मशी भाई, बम्बई]

बम्बई पहुंचने की।[3]

---

[४२] **विज्ञापन-सारांश**[4] [८०९]

स्वामी जी प्रत्यक्षादि प्रमाण मानते हैं, चारों वेद संहिताओं का (परिशिष्ट भाग को छोड़कर) प्रामाण्य स्वीकार करते हैं। उन के मन्तव्य वही हैं जो वेदप्रतिपादित हैं। ब्राह्मण ग्रन्थ, शिक्षा आदि वेदाङ्ग के ग्रन्थ, पूर्व मीमांसा, उत्तर मीमांसा आदि वेद के उपाङ्ग, मनुस्मृति का प्रमाण वहीं तक स्वीकार करते हैं जहां तक वह वेद के अनुकूल है, वाल्मीकिकृत रामायण और महाभारत को इतिहास ग्रन्थ समझते हैं। पुराण उपपुराण तन्त्र ग्रन्थ, याज्ञवल्क्यादि स्मृतियों का प्रामाण्य मानना तो क्या, उन में कुछ भी श्रद्धा नहीं करते, जगदुत्पत्ति जैसी वेद में लिखी है वैसी ही मानते हैं, जब से सृष्टि का क्रम हुआ उस काल की कोई संख्या नहीं (अर्थात् प्रवाह रूप से अनादि है) शाखाओं में जिन कर्मों का करना लिखा है, वह वेदानुकूल हों तो करने चाहिये, परन्तु वेदोक्त विधि सब को माननी चाहिये। वैष्णव, स्वामी नारायण आदि सम्प्रदायों का वेद विरुद्ध होने के कारण खण्डन करते हैं। ईश्वर सर्व शक्तिमान् अन्तर्यामी निरवयव परिपूर्ण और न्यायकारी है, उस का जन्म मरण कभी नहीं होता है, जिस का जन्म मरण होता है, वह ईश्वर ही हो नहीं सकता।

पूर्णानन्द सन्यासी

---

१. यह अंश पं० दामोदर सुन्दरदास कृत "मुंबई आर्यसमाज जो इतिहास" की प्रस्तावना के पृष्ठ "छ" पर गुजराती में उद्धृत है। इसे **पूर्ण सं० ११ के आगे** जोड़ें।

२. यह अंश पं० देवेन्द्रनाथ संकलित जीवन चरित्र पृष्ठ २८६ पर उद्धृत है। इसे **पूर्ण संख्या ११ के आगे जोड़े गये पू० सं० ८०६ के पत्र-सारांश के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ २८६ पर है। **पूर्ण संख्या ११ से आगे जोड़े गये पू० संख्या ८०७ के पत्र-सारांश के आगे** जोड़ें।

४. यह सारांश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ २८७ पर निर्दिष्ट है। वह विज्ञापन ऋषि दयानन्द की अनुमति से स्वामी पूर्णानन्द ने दिया था। अतः एव हमने इसे यहां छापा है। इसे **पूर्ण संख्या ११ से आगे बढ़ाई गई पू० सं० ८०८ की तार सूचना के आगे** जोड़ें।

[१] उत्तर-पत्र-सूचना (६) [८१०]

[जैन साधु, बम्बई]

याजुष मन्त्र पर किये गये कटाक्ष के उत्तर में।[१]

---

[४३] विज्ञापन-सूचना [८११]

हम अमुक ग्रन्थ प्रामाणिक और अमुक ग्रन्थ अप्रामाणिक मानते हैं विषयक।[२]

---

[४४] विज्ञापन-सूचना [८१२]

पण्डितों को शास्त्रार्थ के लिये आह्वान विषयक।[३]

---

[४५] विज्ञापन-अंश [८१३]

अपने पण्डितों को एकत्र करके सत्यासत्य के निर्णय करने का यह अत्यन्त उपयुक्त अवसर है।[४]

---

[१] पत्र-सारांश (६५६) [८१४]

[मुन्शी प्यारेलाल, चांदापुर]

यदि शास्त्रार्थ कम से कम दो सप्ताह तक हो तो हम आ सकते हैं।[५]

---

[२] पत्र-सारांश (६५७) [८१५]

[मुन्शी प्यारेलाल, चांदापुर]

हम १५ मार्च को चांदापुर पहुंच जायेंगे।[६]

---

१. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ३३१ में है। **पूर्ण संख्या १४ के आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ३४८ में है। इसे **पूर्ण संख्या १६ के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ३७५ में है। इसे **पूर्ण संख्या २२ के आगे** जोड़ें।

४. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ३८५ में है। इसे **पूर्ण संख्या २६ के आगे** जोड़ें।

५. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ३६१ में है। इसे **पूर्ण सं० २८ के आगे** जोड़ें।

६. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ३६२ में है। इसे **पूर्ण संख्या २९ के आगे** जोड़ें।

[१] पत्र-सारांश (६५८) [८१६]

[लेफ्टिनेण्ट गवर्नर, पञ्जाब]

मैं आप से मिलने के लिये प्रतीक्षा कर रहा हूं।[1]

१४ (?) मई[2] १८७७

---

[१] पत्र-सारांश (६५९) [८१७]

[जवाहर व प्रभुदयाल खत्री, रावलपिण्डी]

आप संस्कृतज्ञ नहीं है, इस से उत्तर नहीं भेजते। इससे स्वयं रावलपिण्डी आकर उत्तर देंगे।[3]

---

[१] पत्र-सारांश (६६०) [८१८]

[स्वामी सम्पद्गिरि, रावलपिण्डी]

'इमं मे गंगे यमुने सरस्वती' मन्त्र में गंगा यमुना आदि नदियों के नाम नहीं हैं, प्रत्युत शरीर की नाड़ी विशेष के हैं।[4]

---

[१] पत्र-सारांश(६६१) [८१९]

[·········मुलतान]

अभी कुछ दिन लाहौर ठहरेंगे, तत्पश्चात् मुलतान आवेंगे।[5]

---

[४६] विज्ञापन-सूचना [८२०]

पण्डितों को शास्त्रार्थ के लिये आह्वानार्थ।[6]

---

१. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ४१४ में है। इसे **पू० सं० ३३ के आगे** जोड़ें।

२. उक्त जीवन चरित्र में १४ मई लिखा है, वह अशुद्ध है। १२ मई को लेफ्टिनेण्ट गवर्नर पंजाब के निजी मन्त्री मि० जे० ग्रिफिथ ने १२ मई के पत्र में श्री स्वामी जी को १४ मई को १० बजे मिलने की सूचना दी थी (देखो यही ग्रन्थ, पृष्ठ ५४ टि० २)। अतः यह पत्र ८–१० मई के लगभग लिखा गया होगा।

३. यह निर्देश पं० देवेन्द्र नाथ सं० जी० च० पृष्ठ ४४७ पर है। **पूर्ण संख्या ४९ के आगे** जोड़ें।

४. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ४४६ पर है। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के ग्रन्थ प्रामाण्याप्रामाण्य विषय में भी लिखा **है**—"इडापिङ्गलासुषुम्णाकूर्मनाड्यादीनां गङ्गादिसंज्ञास्तीति" संस्क० ३ पृष्ठ ३१५)। इसी पत्र के साथ ऋषि दयानन्द ने संपद्गिरि की संस्कृत की अशुद्धियां भी लिखकर भेजी थीं। इसे **पूर्ण संख्या ५२ के आगे** जोड़ें।

५. यह निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ४६७ पर है। इसे **पूर्ण संख्या ७२ के आगे** जोड़ें।

६. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ४७३ पर है। इसे **पूर्ण संख्या ७२ के आगे जोड़े गये पू० सं० ८१९ के पत्र-सारांश के आगे** जोड़ें।

[१] **पत्र-सारांश (६६२)** [८२१]

[.........रुड़की]

अभी हमारा विचार अन्यत्र जाने का है, अतः हम नहीं कह सकते रुड़की कब आना होगा। जब सम्भव होगा, हम सूचना देंगे।[1]

---

[२] **पत्र-सारांश (६६३)** [८२२]

[.........रुड़की]

हमने पूर्वोक्त स्थान पर जाने का विचार शिथिल कर दिया है। यदि हमारा इस समय रुड़की आना अनुचित हो तो सूचित कीजियेगा। अन्यथा हम समझेंगे आप लोगों को हमारे आने में विरोध नहीं है।[2]

---

[४७] **विज्ञापन-सूचना** [८२३]

मौलवी मुहम्मद कासिम (रुड़की) के विज्ञापन के उत्तर में।[3]

---

[२] **पत्र-सूचना (६६४)** [८२४]

[मौलवी मुहम्मद कासिम, रुड़की]

मौलवी के पत्र के उत्तर में रजिस्टर्ड पत्र।[4]

११ अगस्त ११७८।

---

[३] **पत्र-सारांश (६६५)** [८२५]

[मौलवी मुहम्मद कासिम, रुड़की]

दर्शकों की संख्या शास्त्रार्थ का स्थान, शास्त्रार्थ का समय, और उस का लिखा जाना, कर्नल मानसल और कप्तान स्टुअार्ट के सामने निश्चित हो गये थे, अब आप इन से असहमति प्रकट करते हैं। किसी बात का निर्णय करके उस से फिरना बुद्धिमानों का काम नहीं है। मैं निर्णीत विषय से नहीं हट सकता।[5]

१३ अगस्त १८७८

---

१. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ४८१ पर है। इसे **पूर्ण संख्या ८३ से आगे** जोड़ें।

२. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ४८१ पर है। इसे **पूर्ण संख्या ८४ से आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ४८६ में है। इसे **पूर्ण संख्या ८२ से आगे** जोड़ें। यह विज्ञापन ऋषि दयानन्द की अनुमति से दिया गया था।

४. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ४८६ में है। इसे **पूर्ण संख्या ९५ के आगे बढ़ाई गई पूर्ण संख्या ८२३ की विज्ञापन-सूचना से आगे** जोड़ें।

५. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ४८७ पर में है। इसे **पूर्ण संख्या ९२ से आगे बढ़ाई गई पू० सं० ८२४ की पत्र-सूचना से आगे** जोड़ें।

[४,५] **पत्र-सूचना (६६६, ६६७)** [८२६-८२७]

[मौलवी मुहम्मद कासिम, रुड़की]

उत्तर में दो पत्र।[१]

सम्भवत: १७ अगस्त १८७८।

---

[६] **पत्र-सारांश (६६८)** [८२८]

[मौलवी अब्दुल्ला, मेरठ]

शास्त्रार्थ लेखबद्ध होगा। आप शहर व छावनी के प्रतिष्ठित रईसों द्वारा लिखित पढ़त कीजिये मुझे कोई आपत्ति नहीं।[२]

---

[२] **पत्र-सूचना (६६९)** [८२९]

ला० किशनसहाय मेरठ के पत्रों के उत्तर में।[३]

१६ सितम्बर १८७८।

---

[३] **पत्रांश (६७०)** [८३०]

[ला० किशनसहाय, मेरठ]

[शास्त्रार्थ के प्रस्तावित नियम][४]

१—उभय पक्ष से निम्नलिखित १२ सज्जन सभा के प्रबन्धक नियत किये जायं, यदि वह स्वीकार करें।

[यहां १२ सज्जनों के नाम थे]

२—इन में से एक सज्जन और यदि सम्भव हो तो मातहत जज साहब प्रबन्धक सभा के सभापति नियत किये जावें।

३—प्रबन्धकों के अतिरिक्त उपस्थित जन की संख्या हर ओर से पचास-पचास से अधिक न हो तो अच्छा है।

४—उपस्थित होने वालों की जो संख्या नियत की जावे उतने ही टिकट छपवाकर आधे आधे हर एक पक्ष को दिये जावें।

---

१. इन की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ४८८ में है। इन्हें **पूर्ण संख्या ९३ से** आगे जोड़ें।

२. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ४६८ में है। इसे **पूर्ण संख्या १०२ से** आगे जोड़ें।

३. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ३ ४६८ पर है। इसे **पूर्ण संख्या १०२ के** आगे जोड़ें।

४. ये नियम पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ४६८ से ५०० तक उद्धृत है। इसे **पूर्ण संख्या १०२ से आगे जोड़ी गई पू० सं० ८२९ की पत्र-सूचना के आगे** जोड़ें।

५—हर एक पक्ष अपनी ओर के उपस्थित मनुष्यों को नियम में रक्खे और सब प्रकार से उन का उत्तर दाता रहे।

६—हर एक पक्ष की ओर के योग्य पण्डितों की संख्या दस दस से अधिक न हो, कम का अधिकार है।

७—उभय पक्ष में से केवल एक ही पण्डित सभा में भाषण करे अर्थात् एक ओर से स्वामी दयानन्द सरस्वती और दूसरी ओर से पण्डित श्रीगोपाल।

८—इस सभा में हर विषय का खण्डन मण्डन वेदों के प्रमाण ही से किया जावे।

९—वेदमन्त्रों के अर्थों के निश्चय के लिये ब्रह्मा जी से जैमिनि जी तक के ग्रन्थों की, जिन्हें दोनों पक्ष मानते हैं, साक्षी देनी होगी, जिन का व्यौरा इस प्रकार है—

ऐतरेय, शतपथ, साम, गोपथ, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त निघण्टु, छन्द, ज्योतिष, पूर्व मीमांसा, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, अर्थवेद आदि।

१०—विदित रहे कि ऐतरेय से लेकर अर्थवेदादि पर्यन्त उपर्युक्त ग्रन्थ ही साक्षी और प्रमाण होंगे। परन्तु इन में भी यदि कोई वाक्य वेदविरुद्ध होगा तो दोनों पक्ष उसे न मानेंगे।

११—उभय पक्ष को वेदों तथा प्रत्यक्षादि प्रमाणों, सृष्टि क्रम और सत्य धर्म से युक्त भाषण करना तथा मानना होगा।

१२—इस सभा में जो व्यक्ति किसी पक्ष का पक्षपात और रागप्रदर्शन करे उसे सहस्र ब्रह्महत्या का पाप होगा।

१३—यतः बहुत बड़ी बात केवल एक पाषाणादि मूर्तिपूजा ही है, इस लिये इस सभा में मूर्तिपूजा का खण्डन और मण्डन होगा और यदि वेदों की रीति से पण्डित जी पाषाणादि मूर्तिपूजन का मण्डन कर देवें तो पण्डित जी की सब बातें भी सच्ची समझी जायेंगी और स्वामी जी मूर्तिपूजन का खण्डन छोड़कर मूर्तिपूजन स्वीकार कर लेवेंगे। और जो स्वामी जी वेदों के प्रमाण से पाषाणादि मूर्तिपूजन खण्डन कर देवें तो स्वामी जी की और बातें भी सच्ची समझी जायेंगी और पण्डित जी उसी समय से मूर्तिपूजन छोड़ कर मूर्तिपूजन का खण्डन स्वीकार कर लेवें। ऐसा ही उभय पक्ष को स्वीकार करना होगा।

१४—उभय पक्ष से प्रश्नोत्तर लिखित होने चाहिये अर्थात् हर एक प्रश्न मौखिक किया जावे और तत्क्षण लिखा दिया जावे। बल्कि जहां तक सम्भव हो वक्ता का एक एक शब्द लिखा जावे।

हर एक प्रश्न के लिये पांच मिनट और हर एक उत्तर के लिये पन्द्रह मिनट नियत हों और नियत समय की कमी का अधिकार है, परन्तु अधिक समय का नहीं।

१५—सभा में स्वामी जी पण्डित जी तथा अन्य पुरुषों की ओर से आपस में कोई कठोर भाषण न हो, प्रत्युत अत्यन्त सभ्यता और नम्रता से सत्यासत्य का निश्चय करें।

१६—सभा का समय ६ बजे सायंकाल से नौ बजे रात्रि तक रहे तो उत्तम है।

१७— प्रश्नोत्तर के लिखने के लिये तीन लेखक नियत होने चाहियें और प्रत्येक लेख मिलाने के पश्चात् प्रतिदिन दोनों पक्षों के हस्ताक्षर होकर एक एक प्रति हर पक्ष को दी जावे और एक प्रति

बक्स में बन्द करके उस पर उभयपक्ष और सभापति का ताला लगा कर सभापति के पास रहे ताकि लेखों में कुछ न्यूनाधिक न होने पावे और आवश्यकता के समय काम आवे।

१८—सभास्थल सब प्रबन्धकों की सम्मति के अनुसार नियत होगा।

१९—जम्मू और काशी आदि स्थानों के पण्डितों की सम्मति के ऊपर इस सभा के निर्णय का निर्भर न होना चाहिये, क्योंकि ये स्थान मूर्तिपूजा के घर हैं। और वहां इस विषय में पण्डितों से शास्त्रार्थ भी हो चुका है। इस लिये उपर्युक्त वेद शास्त्रादि जिन में हर विषय की विशद व्याख्या की गई है मध्यस्थ साक्षी के लिये पर्याप्त हैं। हां यह अधिकार है कि यदि दूसरे पक्ष को कुछ सन्देह व संशय हो तो आज १७ तारीख सितम्बर १८७८ से दो दिन के भीतर उपर्युक्त स्थानों वा अन्य जगह से उस पण्डित से जो उस की सम्मति में उत्तम और श्रेष्ठ हो आने जाने के विषय में तार द्वारा बात चीत करके स्थिर करले वा प्रबन्ध करले और आज से छ दिन के भीतर अर्थात् २२ सितम्बर रविवार के दिन तक उसे यहां बुला लेवे। यदि दूसरे पक्ष की ओर से इस अन्तर में उचित प्रबन्ध न हो वा विरुद्ध कार्यवाही हो तो उस पक्ष की सब बातें कच्ची और आधार शून्य समझी जायेंगी। यदि स्वामी जी इस अन्तर में कहीं चले जावें वा इस लेख से बद्ध न रहें तो उनकी बात कच्ची और आधार शून्य समझी जायेगी।

२०—दोनों पक्ष को वह सब पुस्तकें जिन का वह प्रमाण दे, सभा के समय अपने साथ लानी चाहियें। उभय पक्ष को बिना असली पुस्तकों के मौखिक साक्षी स्वीकार न होगी।

लिखा हुआ १७ सितम्बर सन् १८७८ का।

---

[४] पत्र-सारांश (६७१) [८३०]

[लाला किशनसहाय जी, मेरठ]

आप को वेदों से अनभिज्ञ पण्डितों के कहने से ऐसा लिखना उचित न था। उत्तम हो यदि आप उचित समझें तो मैं दो विद्यार्थियों को आपके यहां सभा में भेज दूँ और वह यदि आप अनुमति दें तो आपके पण्डितों से वेद के विषय में कुछ प्रश्न करें, तब आप को पण्डितों की व्यवस्था ज्ञात हो जायेगी। यदि आप को यह स्वीकार न हो तो आप कृपापूर्वक मेरे निवास स्थान पर अर्थात् बाबू छेदीलाल के गृह पर पधारें और सब शङ्काओं को निवृत्त कर लेवें।[1]

---

[८६] पत्र-सारांश (६७२) [८३१]

[मुंशी समर्थदान, अजमेर]

[अजमेर आना स्वीकार है] आप निवास स्थान आदि का प्रबन्ध कर लेवें। हम दिल्ली के कार्य

१. इस पत्र-सारांश का उल्लेख पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५०१ पर है। यह पत्र ऋ० द० के १८ सितम्बर १८७८ पूर्ण संख्या १०३ पर छपे पत्र के उत्तर में ला० किशनसहाय का जो पत्र आया था, उस के उत्तर में लिखा गया था। अतः यह सम्भवतः २० सितम्बर को लिखा गया होगा। इसे **पूर्ण संख्या १०६ के आगे** जोड़ें।

से निवृत्त होकर अजमेर आवेंगे। और आने से पूर्व पत्र द्वारा सूचना देंगे और रेल पर सवार होते समय तार देंगे।[1]

---

[४८] **विज्ञापन-सूचना** [८३२]

पादरी ग्रे से शास्त्रार्थ की सूचना के विषय में।[2]

---

[१] **पत्र-सूचना (६७३)** [८३३]

[पं० सुखदेवप्रसाद, नसीराबाद]

नसीराबाद आने की स्वीकृति।[3]

---

[१] **पत्राशय-सूचना (६७४)** [८३४]

[रिवाड़ी के पण्डितों के नाम]

हमारे निवास स्थान पर ही आकर बात चीत कर लो।[4]

---

[१] **पत्र-सारांश (६७५)** [८३५]

[.........आर्यसमाज, अमृतसर]

इस का अपराध हम ने क्षमा कर दिया। इसे पुनः आर्यसमाज में प्रविष्ट कर लो।[5]

---

[११] **पत्राशय (६७६)** [८३६]

[कर्नल आलकाट, मैडम ब्लेवेस्तकी]

आप लोग हरिद्वार न आवें।[6]

---

१. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५०५ पर है। इसे **पूर्ण सं० ११३ के आगे** जोड़ें।

२. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ५०६ पर है। इसे **पू० सं० १३४ के आगे** जोड़ें।

३. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५१५ में है। इसे **पूर्ण संख्या १३५ के आगे** जोड़ें।

४. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ५१८ में है। इसे **पूर्ण संख्या १३६ से आगे** जोड़ें।

५. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ५२५ में है। यह पत्र ला० रामशरणदास मेरठ वालों को कह कर लिखवाया था। इसे **पूर्ण संख्या १४८ से आगे** जोड़ें।

६. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५४३ में है। इसे **पूर्ण संख्या १५८ के आगे** जोड़ें।

[१२] पत्राशय (६७७) [८३७]

[कर्नल आलकाट, मैडम ब्लेवेस्तकी]

आप [देहरादून] न आवें, हम स्वयं ही सहारनपुर आते हैं।[1]

———

[१] प्रश्नों के उत्तर (७) [८३८]

[फर्रुखाबाद के पौराणिक पण्डितों के २५ प्रश्नों के उत्तर][2]

———

[१] प्रश्न तथा उत्तर (८) [८३९]

[श्री सिद्धकरण जी जैन साधु, मसूदा][3]

प्रश्न १—मुख पर पट्टी क्यों बांधते हो ?

प्रश्न २—उष्ण जल क्यों पीते हो ?

प्रश्न ३—जल की एक बून्द में, जिस का अन्त है, अनन्त जीव कैसे बतलाते हो ?

[सम्भावित उत्तरों का साथ ही निराकरण]

प्रश्न १ के उत्तर में यदि यह कहा जाये कि पट्टी बांधने से जीव कम मरेंगे तो यह ठीक नहीं, क्योंकि जीव अमर है। (२) यदि कहो कि ऐसा करने से जीवों को कष्ट कम होगा, सो यह भी नहीं बनता क्योंकि मुख पर पट्टी बांधने से मुख के भीतर का वायु अधिक उष्ण होकर उन्हें अधिक कष्ट पहुँचायेगा। जैसे गृहद्वार बन्द करने से अन्दर का वायु अधिक गर्म हो जाता है। (३) मुख का उष्ण वायु रुक कर नासिका द्वारा अधिक वेग से निकलेगा और इस से जीवों को अधिक पीड़ा होगी। नलकी द्वारा फूंक लगाने से वायु अधिक वेग से बाहर निकलता है। (४) उच्चारण में भी दोष आता है। निरनुनासिक अक्षर सानुनासिक हो जाते हैं। (५) अन्दर का वायु अधिक दुर्गन्ध युक्त हो जाता

१. इस का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५४३ में है। इसे **पूर्ण संख्या १६४ के** आगे जोड़ें।

२. फर्रुखाबाद के १४ पण्डितों के हस्ताक्षरों से २५ प्रश्न धर्मसभा की ओर से ऋषि दयानन्द के पास भेजे गये। ऋषि दयानन्द ने पत्र पाते ही ११ अक्टूबर को उन के उत्तर लिखवा दिये। वे उत्तर ता० १२ अक्टूबर को आर्यसमाज में पढ़े जाकर धर्मसभा में भेजे गये (देखो फर्रुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १२६)। इन्हें **पूर्ण संख्या १९२ के आगे** जोड़ें।

ये प्रश्न और उत्तर 'फर्रुखाबाद का इतिहास' पृ० १२६—१३४ तथा पं० देवेन्द्रनाथ सं० जीवन चरित में पृ० ५६२-५७८ तक छपे हैं। श्री पं० लेखराम जी द्वारा सं० जी० च० में भी ये उत्तर छपे हैं, उन में कुछ अन्तर है। पाठक महानुभाव वहीं देखें। हमें इन उत्तरों के कतिपय अंशों में सन्देह है, विशेष कर ९वें प्रश्न के उत्तर में। सम्भव है, आर्यसमाज द्वारा उत्तर भेजते समय कुछ परिवर्तन किया गया हो। अत एव हम इन्हें यहां नहीं दे रहे।

३. निम्न प्रश्न और उन के सम्भावित उत्तरों का निराकरण पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ६४२ ६४३ तक उद्धृत हैं। इन्हें **पूण संख्या ३५९ से आगे** जोड़ें।

है। मुख पर पट्टी बांधने और मुखप्रक्षालन न करने, दन्तधावन और स्नान कम करने से दुर्गन्ध अधिक बढ़ती है और उस से रोग की उत्पत्ति होती है, जिस से बुद्धि और पुरुषार्थ नष्ट होते हैं। अतः दुर्गन्ध बढ़ाने वाला अधिक पापी होता है।

दूसरे प्रश्न के सम्बन्ध में—ठंडे जल को गर्म करने में जीव रंध कर जल में घुल जाते हैं। अतः गर्म जल से जीव अधिक कष्ट पाते हैं। यदि तुम कहो कि हम जल स्वयं गर्म नहीं करते, दूसरे गर्म करते हैं, अतः हम पापी नहीं। यह भी ठीक नहीं, क्योंकि यदि आप गर्म जल न पीवें तो वह जल क्यों गर्म करते। फिर जल गर्म करने के लिये अग्नि जलाने और उस से भाफ उड़ने में जीव मरते हैं।

तीसरे प्रश्न के सम्बन्ध में—बूंद चाहे पैसा बराबर बड़ा हो वा अधिक, उस का अन्त होता है, फिर उस में अनन्त जीव कैसे रह सकते हैं। यह सर्वथा बुद्धि के विरुद्ध है।

श्रावण कृष्ण २ सं० १९३८=१३ जुलाई १८८१।[1]

---

[२] प्रत्युत्तर-सारांश (९) [८४०]

[श्री सिद्धकरणजी जैन साधु, मसूदा][2]

बाहर का वायु ही सब प्राणियों का जीवन हेतु है और बिना उस के अग्नि भी नहीं जल सकती। ओट करने से यह दूसरे मार्ग से अति वेग से निकल कर प्राणियों से संयुक्त होगा और प्राणी कष्ट पायेंगे। और ओट करने से तो उष्णता बढ़ेगी, घटेगी नहीं। यदि चारों ओर से खुला होगा तो शीघ्र ठण्डी हो जायेगी। यदि किसी बर्तन में जल गर्म किया जाये और उसे बिलकुल बन्द कर दिया जाये तो भाफ बड़े जोर से निकल कर बर्तन को तोड़ डालेगी। ऐसे ही उसे आधा वा चौथाई बन्द करने से गर्मी अधिक बढ़ती है। यदि अग्नि से ही जीव मरते हैं तो विद्युतरूप अग्नि से जो सर्वत्र फैली हुई है जीव क्यों नहीं मर जाते? आप जीवों को अजर अमर भी मानते हैं और उन का मरना भी मानते हैं। बड़े मनुष्यों से बातें करते समय मुंह पर पल्ला लगाने का वह प्रयोजन नहीं, जो आप लिखते हैं। उस का प्रयोजन यह है कि बहुधा उन से ऐसी बातें करनी होती हैं जिन्हें गुप्त रखना अभीष्ट होता है। अतः मुख पर पल्ला इस लिये लगाते हैं कि शब्द फैले नहीं और उसे दूसरे न सुन सकें, तथा यह भी कि खुले मुख बातें करने से शब्द फैल कर ठीक सुनाई भी न देगा। यदि आप का हेतु ठीक है तो फिर केवल बड़े मनुष्यों से बातें करते समय ही आप को मुख पर पल्ला लगाना चाहिये। छोटे मनुष्यों के सम्मुख मुख पर पट्टी क्यों बांधे रहते हो, तथा अपने शिष्यों के सम्मुख भी ऐसा क्यों करते हो? फिर बड़े मनुष्य भी पल्ला लगा कर बातें नहीं करते? क्या उन का थूक छोटे मनुष्यों पर नहीं पड़ता वा उन तक श्वास की दुर्गन्धि पहुंचना अच्छा समझते हो? क्या बड़े मनुष्यों के मुंह में कस्तूरी घुली होती है? हम कागज स्याही को वेद नहीं समझते। वह तो जड़ वस्तु है, जिन्हें सुगन्ध दुर्गन्ध, आर्द्र

---

१. इस तिथि का निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ६४२ पर है।

२. सिद्धकरण जी ने पूर्ण संख्या ८३६ के ३ प्रश्नों में से केवल १ प्रश्न का उत्तर १६ जुलाई १८८१ को दिया। उस का यह प्रत्युत्तर उसी समय दिया गया। इसे **पूर्ण संख्या ३५९ से आगे बढ़ाये गये (पूर्ण संख्या ८३९) प्रश्नोत्तर से आगे** जोड़ें।

शुष्क को कुछ ज्ञान नहीं। हम तो शब्दार्थ सम्बन्ध को वेद समझते हैं। क्या जैनियों के धर्म पुस्तक बनाने वालों ने उन्हें मुख पर पट्टी बांध कर लिखा था? हम तो वेदों को खुले मुख से उच्चारण करना उत्तम समझते हैं क्योंकि इस से उच्चारण स्पष्ट और शुद्ध होता और मुख पर पट्टी बांधने से अस्पष्ट और अशुद्ध, जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं।[१] जब आप से नगर के बाहर भेंट हुई थी तब तो आप ने हम से निःसंकोच बातें की थी, यद्यपि हम मुंह पर पट्टी वा पल्ला नहीं लगाये हुये थे। फिर शास्त्रार्थ करने में आपने यह अड़चन क्यों लगाई कि जब तक हम मुख पर पट्टी न बांधेंगे तब तक हम आप से शास्त्रविचार न करेंगे। १६ जुलाई १८८१।

---

[१८] **पत्र-सारांश (६७८)** [८२१]

[सेवकलाल कृष्णदास, बम्बई]

अथर्ववेद की टीका और ऋषि देवता छन्द की पुस्तकें ढूंढ कर भेजो।[२]

---

[४९] **विज्ञापन-सारांश**[३] [८४२]

[हम] प्रातः काल ८ बजे से सायं काल के ५ बजे तक किसी से न मिलेंगे। ५ बजे से रात्रि पर्यन्त मिल सकेंगे।

---

[१] **पत्रांश (६७९)** [८४३]

[प्राणजी दास बम्बई]

श्यामजी को पत्र लिखकर यह खबर मंगवा लीजिये कि बाबू हरिश्चन्द्र इङ्गलैण्ड में कौन सी जगह पर हैं।[४]

---

[५] **पत्र-सारांश (६८०)** [८४४]

[केशवलाल निर्भय राम, बम्बई]

संस्कार विधि का रुपया जल्दी वापस करेंगे[५]।

---

१. यह संकेत पूर्ण संख्या ८३६, पृष्ठ ५३२ पंक्ति २१ के 'उच्चारण में भी दोष आता है, निरनुनासिक अक्षर सानुनासिक हो जाते हैं' लेख की ओर है।

२. यह सारांश हमने सेवकलाल कृष्णदास के २० जनवरी १८८३ के पत्र के अनुसार बनाया है (देखो मुन्शी० सं० पत्रव्य० पृष्ठ २६६)। इसे **पूर्ण संख्या ४६८ के आगे जोड़ी गई (पू० सं० ७३२) की मनियार्डर-सूचना के आगे** जोड़ें।

३. यह सारांश पं० देवेन्द्रनाथ संकलित जी० च० पृ० ६६० में उदधृत है। इसे **पूर्ण संख्या ३९० से आगे** जोड़ें। हम ने अनुमान से यहां रक्खा है।

४. इस पत्र का संकेत प्राणजीदास काहनदास के ता० २६ जून सन् १८७९ के श्यामजी कृष्णवर्मा के नाम लिखे पत्र में है। प्राणजीदास का (प्रतिलिपि किया) पत्र स्वर्गीय श्री पं० महेशप्रसादजी मौलवी आलिम फाजिल के संग्रह से श्री मामराज जी ने २० फरवरी १९५५ को काशी में प्राप्त किया। अब उनके संग्रह में सुरक्षित है। प्राणजीदास का यह पत्र मुन्शी समर्थदान ने पूर्ण संख्या १७७ पर छपे अपने पत्र के साथ श्यामजी को इङ्गलैण्ड भेजा था। इसे **पूर्ण संख्या १७४ के आगे** जोड़ें।

५. टिप्पणी ४ देखो।

ऋषि दयानन्द सरस्वती के पत्र और विज्ञापन।



पत्र-संग्रह में हमारे सहायक ऋषि-भक्त महाशय मामराज जी।

रामस्वरूप आर्य
४, ढीपीटोला किला
बरेली